प्रस्तावना ॥

सृजन पालन आदि कर्त्ता ईश्वर ने इस स्थूल सूक्ष्म कारण एवं पञ्च तत्वमय इन्द्रियादि सहित इस मनुष्य शरीर को उत्पन्न किया और इसमें इस शरीर द्वारा उपयुक्त यहां तक शक्ति दे दी है कि यही मनुष्य इह लौकिक धर्म अर्थ काम और पार लौकिक मोक्ष को भी सिद्ध कर सक्ता है परन्तु इन सबों का मुख्य कारण आरोग्यता है । जिस शरीर में आरोग्यता नहीं होती वह समस्त भूमण्डल का राजा होने पर और चौशठ कला विद्या निधान रहने पर भी उपरोक्त चारो पदार्थों से वञ्चित रहता है । हाय वह आरोग्यता जैसी कि अब चाहिये कहीं नहीं दिखलाई देती । पुरा काल में इसी भूमण्डल के मध्य में आरोग्य प्रभाव से कैसे २ वीर पुरुष और वेदोपवेद के आद्योपान्त वेत्ता अनेक महर्षि हुये हैं कि जिनकी विख्यात अब तक सब मनुष्यों के हृदयस्थ हो रहा है । थोड़ेही रोज हुये कि इसी मध्य प्रदेश में आल्हा ऊदल दयाराम आदिक अति बलवान और श्रीधर आदिक कैसे विद्वान हुये हैं कि जिनका शतांश भी आज कल के मनुष्यों में होना दुष्कर है, वर्तमान में ही देखिये हम लोगों की अपेक्षा इस समय इङ्गलैण्ड के लोग इसी दिन चर्य्या रात्रि चर्य्या के उत्तम आचरण से कैसे २ काम कर रहे हैं कि जिनके केवल यंत्र विद्याओं को देख कर एक दूसरे ब्रह्मा का अवतार मानना पड़ता है । इस से सब से प्रथम इस आरोग्यता पर सब को ध्यान देना अवश्य चाहिये । यद्यपि लोग रिष्ट पुष्ट और अपने काम काज में लिपटे हुये दिखाई देते हैं ले किन प्रायः देखने में यही आता है कि लोग मिथ्याहार विहारादि द्वारा रोगाकुल हो हजार में चाहे दो चार पूर्ण आयु को प्राप्त होते हों बाकी सब अकाल ही में मृत्यु को प्राप्त होते हैं। वेद में भी प्रमाण है कि मनुष्य शत जीवी हैं परंच विकर्म के प्रभाव (सांसारिक बुरे आचरण) से शीघ्रही काल वश होते हैं । यह वेद का कथन प्रत्यक्ष देखने में आता है कि देवा

आज कल मनुष्य तुच्छ २ रोगों से अकस्मात् शीघ्र मर जाते हैं। तथा तीस ३० चालीस ४० वर्ष भर में ही वृद्ध हो जाते हैं। कहां तक कहैं कि दशै वर्ष की अवस्था से बाल पकना शुरू हो जाता है। यहां तब देखने में आता है कि पांच सात वर्ष के बालक मूत्र कृच्छ्रादिक रोगों से पीड़ित हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि आगे के लोगोंका खाना पीना चलना फिरना स्त्री प्रसङ्गादिक जितने कर्महैं सब ठीक तौर परथे आज कल क्यों नहीं हैं वैद्यक शास्त्र के न जानने से। वैद्यक विद्या केवल वैद्यों ही के लिये नहीं हैं बल्कि सर्व साधारण के स्मरण रखने के योग्य है।

सर्व साधारण में यह विद्या प्रायः लुप्त क्यों हो गई है कारण यह है कि जब से यह देश अत्याचारी यवनों के हाथ में आकर उत्पीड़ित होने लगा और समस्त वेद वेदाङ्ग यावत् हिन्दू शास्त्र थे वे सब भस्मी भूत हो कर प्रदेश मात्र में म्लेच्छ विद्या फैल गई और प्रजा मात्र को असहन कष्ट प्राप्त होने लग गया तभी से यहां के लोगों का शारीरिक और मानसिक बल क्रम से घटते घटते जो कुछ रहा सहा वह भी अङ्गरेजी राज्य के गुणानुसार खाना पीना रीति नीति प्रवर्तित होने से मनुष्य प्रकृति में बहुत कुछ हेर फेर हो इस महोपकारी विद्या का लोपही हो गया।

अतीव आक्षेप का विषय इस पर है कि अब तमाम भारत वर्ष अस्वास्थ्य कर क्यों हो गया है और इसका प्रतीकार भी किसी प्रकार हो सक्ता है इस बात की कोई खोज खबर नहीं लेता हे कौन, यह सबों को दृढ़ निश्चय हो गया है कि जब तब इस वैद्य विद्या में राजा ध्यान नहीं देगा उन्नति होना असंभव है॥

पर हम यही कह सक्ते हैं कि इस विद्या का जीर्णोद्धार चाहे जय हो समाज ही करैगी। इस लिये विशेष कर पहिले हम आयुर्वेदीय चिकित्सक जन समाज से ही सविनय प्रार्थना करते हैं कि आप लोग क्यों घोर निद्रा में सो रहे हैं क्या आप लोगों के कर्ण में रोगाक्रान्त दुःखियों

देश वाले आज तक नहीं कर सकते। हाय, यह वही आयुर्वेद है कि जो इस समय प्रायः लुप्त दशा पर भी इस देश के अनेक चिकित्सक बिना काटेही क्षार सूत्र प्रलेप पट्टी अथवा पिचकारी किम्वा अन्य कोई औषध भर कर अनायास घाव अच्छा कर देते हैं। ऐसे बहुत व्रण देखे गयेहैं कि जिन्हें डाक्तर लोग पुलटिस देकर नहीं पका सके देशी वैद्यों ने एकही प्रलेप के द्वारा उसे गला दिया है। शरीर में ऐसे बहुतसे स्थानहैं कि जहां शस्त्र प्रयोग अत्यन्त कठिन और दुखदाई है डाक्तर लोग सेवाय शस्त्र प्रयोग के पीव और रक्त कदापि नहीं गिरा सक्ते परन्तु एतद्देशीय उत्तम चिकित्सक गण औषध के द्वारा ऐसी युक्ति करते हैं कि चमड़ा फट कर आपसे आप पीव और रक्त निकल आता है। ऐसे भी बहुत व्रण तथा शोथ देखे गये हैं कि डाक्तरों ने बहुत दिनों तक अनेक चेष्टा की पर वे नहीं वैठे और आयुर्वेदोक्त प्रलेप द्वारा झट पट वैठ गये हैं। व्रण शोधन और रोपण के लिये आयुः शील गुणोंपेत पण्डित गण ऐसे २ तैल और घृत निकाल गये हैं कि जिनके द्वारा भगन्दर नाड़ी व्रण और दुष्ट व्रण अच्छा हो जाता है। अपची गण्डमाला आदि रोगों के अच्छा करने में आज तक आयुर्वेदोक्त चिकित्सकों की बराबरी कोई नहीं कर सका॥

वात रोग, कुष्ट रोग, जीर्णज्वर प्रभृति रोगों पर आयुर्वेदोक्त केवल तैल जैसा उत्कृष्ट है वैसी उत्तम औषध दूसरे किसी चिकित्सक के मत में नहीं पाया जाता रक्तातिसार आदि रोगों में हमारे देश की औषधियां वेल सुगन्ध वाला कुरैया नागरमोथा आदि जैसी गुण कारिणी हैं विदेशी दवाइयों में ऐसी कोई नहीं है यह बात बहुत ठीक और मेटेरियामेडिका एवं फारमा कोपिया आदि किताबों से स्पष्ट है कि इस देश में आय कर डाक्तर लोग भी एतद्देशीय औषधियों का अनुकरण पूर्वक काम में लाने लगे तथापि हमारे शास्त्रोक्त कुटजावलेह, कुटज पुटपाक की चमत्कारी को नहीं पाते। ग्रहणी उदर आदिक रोगों में प्रत्यक्ष देखा जाता है कि देशी वैद्य लोग परपटी दुग्ध वटी मानमंड प्रभृतिके द्वारा जितने रोगी आरोग्य कर सक्ते हैं, उतना डाक्तरों से होना असम्भव है॥

इसपत्रका मुख्यप्रयोजन क्याहै ॥

व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणञ्च ॥

आध्यात्मिक (ज्वरादि रोगों से क्लेश) आधि भौतिक (सर्पादि दुष्ट जन्तुओं से क्लेश) आधि दैविक (मन इन्द्रियादिकों से क्लेश) रोग युक्त पुरुषों को रोग से परिमोक्ष करना तथा आरोग्य जन की रक्षा। इस वास्ते हम सब मनुष्यों के उपकार के लिये लघु बृहत्सिद्धान्त ग्रन्थों की सम्मति से एवं श्रेष्ठ प्राचीन वैद्यों के निश्चित किये हुये अभिप्रायों से, अनुमान से, प्रत्यक्ष से, वर्तमान पृथ्वी जल वायु के गुणानुसार देह पालन, आयुस्संरक्षण धात्री शिक्षा, बाल रक्षा, स्त्री पुरुष व्यवहार, खाद्याऽखाद्य आचार व्यवहारादि अनेक शरीरोप योगी पदार्थों का वर्णन आरोग्य दर्पण पत्र द्वारा प्रकाश करना आरंभ किया है आशा है, कि इस पत्र के अनुसार चलने से जैसे की आगे के लोग पुरुषार्थी पराक्रमी और विद्वान होते थे अब भी होने लगें। आज हम बड़े आनन्द के साथ मनुष्यों के उन मङ्गल कारी कार्यों को प्रकाश करते हैं जो कि सब से प्रथम मनुष्यों के कर्त्तव्य हैं ॥

शौच ॥

शौच दो प्रकार है एक बाह्य दूसरा आभ्यन्तर मृत्तिका और जलसे हस्त पादादि धोना बाह्यशौच है और काम क्रोध लोभ मोहादिक से रहित होना आभ्यन्तर शौचहै। अतएव मनुष्यको शरीर रक्षार्थ यह दोनों शौच करना अवश्य है। सबको उचित है कि सूर्योदय के पूर्वही उठ ईश्वर की प्रार्थना कर अपने कर्तव्यकार्य को विचार कर तब शौच अर्थात् दिशा को जावे परन्तु सोकर उठ तभी जाना नहीं किन्तु दश मिंट ठहर के तब जाय जिससे दस्त खुलासा आवे। दस्त लानेके लिये किसी प्रकार की आदत न

डालनी चाहिये जैसा कि लोग दस्त आनेके पहिले तमाकू खातेहैं या पीतेहैं या दस्तावरचीज खा लेतेहैं इन सबोंके अभ्यास से स्वयं मलप्रवाह की जो शक्तिहै वह जाती रहतीहै । यह भी याद रखनेके योग्यहै कि दस्त जाने के लिये दिशा फिरतेसमय बहुत ताकत न दे क्योंकि धातु गर्म निर्बल हो इसी वक्त पेशाब के रास्ते से ढरक आता है । इस्से दस्त में और भी कब्जियत आ जाती है । कारण यह है कि जितना ही धातु क्षीण होगी उतना ही अग्नि मन्द और दस्त में कबजियत आवेगी । जब देखे की पेट बहुत भारी है और कई रोज से दस्त खुलासा नहीं हुये तब सोते समय कोई ऐसा मुलायम रेचन द्रव्य खा ले कि जिस्से सवेरे खुलासा दस्त आ जाय इसी हेतु बहुत से लोग सोते समय दूध पीते हैं लेकिन न चाहिये। क्योंकि जितनी धातूत्पादक द्रव्यादिक हैं उनको खा पीके न सोना चाहिये, हेतु यह है कि पचता नहीं; जब न पचा तो मल अधिक वा पतला अवश्य ही होगा, इस्से अग्न्यादि आशय तथा वीर्य निर्बल हो जाता है । मुलायम रेचन यह है, उष्ण प्रकृत वाले को जैसे कि शरबत बनिली गुलकंद गुलाब गुलकंद सेवती गुलकंद अमिलतास मुरब्बा हड़ अमृत हरीतकी इत्यादि । शीत प्रकृत वाले को जैसे कि लवण पंचक यवक्षारादि चूर्ण पंचसकार चूर्ण कोष्ठबद्धारि चूर्णादि जिनका नुसखा आगे लिखा है, इन दवाइयों को सोते समय खा लेने से सवेरे खुलासा दस्त आ जाता है । प्रायः हिन्दूस्तानी लोग जो दिशा जाने के समय शिर में अंगोछा बांध लेते हैं और दिशा के समय बोलते नहीं ये दोनों कर्म उत्तम हैं । इनको अवश्य करना चाहिये क्योंकि शिर बांधने से मलाशय में गर्मी पहुंच कर दस्त साफ आता है और मूक रहिने के सबब से मल अपान वायु प्रेरित निराश्रय त्रिवली मार्ग हो निकलता है त्रिवली मल मार्ग को कहिते हैं जिसमें शंख की तरह तीन बल है तीनों का नाम यह है । प्रवाहिणी सर्जनी ग्राहिका इन तीनों शिरा की प्रकृत और गुण आगे कहेंगे यही तीनों में से एक ऐसी नाड़ी है कि जिसमें शुद्धि स्थान से संबंध है जब तक जल और मृतिका से सफाई न कर ले तब तक वह चञ्चल रहती है लेकिन पानी के तरावट से स्थिर हो जाती है इस्से जब तक हाथ पैर मुंह

न धो डाले तब तक न तो शिर का कपड़ा खोले और न बोले इस का और २ अभिप्राय योगशास्त्र से मालूम हो सक्ता है वह भी आगे कहेंगे॥

यदि यह कोई शंका करे कि और देश वाले क्यों नहीं शिरमें कपड़ा बांधते और मूक रहते यथा उनके वह खाक नहीं है, परंच यावत् कर्म मनुष्यों के शरीर रक्षक हैं वे सब देश प्रभाव से हैं जैसे कि इङ्गलैण्डवाले प्रायः दिशा फिर के आबदस्त नहीं लेते कागद से गुदा पोंछ डालते हैं इसका मुख्य कारण हिम प्रधान देश है। क्योंकि अति जाड़ा के कारण पानी छुआही नहीं जाता॥

दंत धावन॥

शौचानन्तर दन्त शुद्ध हेतु १२ अंगुल की लम्बी और कनिष्ठिका प्रमाण मोटी जिसके बीच में गांठ न हो ऐसी दातून को करे परंच जहां तक हो सके खैर महुआ करंज नीम बबूल और मौसली इन्हीं की दतून हो यदि शोंठ पीपर मिर्च सेंधा निमक इन सबों के चूर्ण में शहत या तेल मिला दांतों में मल कर बाद दांतून करे तो दांतो के बीच में जो मांस बढ़ आता है मुंह की दुर्गन्धि दांतों से खून का आ जाना और बादी पन यह कभी न हो, दांत बिमल और अन्न में रुचि हमेशा बनी रहे। अगर किसी समय दातून न मिले तो काष्ट कोयला और सेंधा निमक बूक कर दांत मल डाले और जीभ छीलने के वास्ते सोना या चांदी आदि धातु की सुन्दर मुलायम चिकनी धन्वाकार दश अंगुल की तनी हो इसके अभाव में दातून फाड़ कर जीभ छील ले यदि उपरोक्त रीति से दन्तधावन जिह्वा शुद्ध कर कभी २ या जब आवश्यक समझें एक छँटाक काली तिल के तेल से कुल्ली कर डाला करें तो मुख का फीकापन दुर्गंध मसकुर का सूजना और दांत का हिलना बन्द हो और दांत की जड़ खूब मजबूत हो परन्तु ये लोग जिनका गला तालु, ओष्ठ और जिह्वा का रोग हो एवं मुख सड़ा। तथा खांसी श्वास हिचकी हो या जी मचलाता हो ज्यादा नशा खाये हो शिर और कर्ण में दर्द हो, तो जब तक ए बेमारियां न आराम हो जांय तब तक दातून न करे बाद दन्त-

धावन के शीतल जल से खूब नेत्र मुख को धो डाले । दन्त धावन के अलावा यदि मनुष्य दिन में तीन चार मरतबे हमेशा ठंढे जल से नेत्र मुख धोया करे तो उसको नेत्र और शिर की बीमारी कभी न हो ॥

दन्तमञ्जन ॥

सड़ी सुपारीका कोइला १छँटाक भूंजाहुआ तूतिया ६ मासा दोनोंको कूटकर दांत मांजने से दांत खूब साफ होजाताहै तथा दांतों से रक्त का आना बन्द हो जाता है ॥

प्रतिसारण ॥

कूट, दारुहल्दी, धवके फूल, पाढ़ी, कुटकी, हल्दी, तेजबल, मोथा, लोध इन सबों को बराबर भाग ले चूर्ण कर जीभ और दांत के जड़ में बारंबार मल कर लार गिराने से दन्त पीड़ा रक्त आना मसूढ़ा सूजन और जलन जल्द जाता रहता है ॥

प्रातःकालकी हवाखाना ॥

दन्तधावन के बाद मनुष्य अच्छा कपड़ा पहिन पैर में जूता हाथ में छड़ी ले सूर्योदय के पूर्वही किसी अच्छे बगीचे या स्वच्छमैदानमें कि जहां मल मूत्र आदि बुरे पदार्थों की दुर्गन्धि न हो । वायु सेवनार्थ वहां जाय न बहुत जल्दी चले न बहुत आहिस्ते समगति से वहां टहिले । परन्तु बहुत तेज हवा चलता हो या आन्धी गरदा हो तो न जावे । क्योंकि तेज हवा अर्थात् आन्धी गुबाड़े में रहिने से शरीर रुक्ष तथा चेहरे की रंगत बदल जाती है और बात श्लेष्म वाले के सन्धियों में दर्द होने लगता है मनुष्य को यहां तक चलना फिरना उचित है कि जब तक पैर न थके क्यों कि बहुत ज्यादा चलने से शरीर में हरारत और कमर में कमजोरी आती है एवं वीर्य्य भी कुछ निर्बल हो जाता है । जोलोग न घूमते हैं न किसी प्रकार का परिश्रम करते हैं उनका शरीर कफ मेद के बढ़ जाने से मोटा और शिथिल हो जाता है । जैसे की महन्त और प्रायः तीर्थों के पंडे

"सुखवातंप्रसेवेत ग्रीष्मेशरदिमानवः" ग्रीष्म शरत अर्थात् वैशाख ज्येष्ठ कार्तिक और अगहन इन महीनो में सुखार्थी लोग अवश्य वायु का सेवन करें ॥

जूतापहिरनेकागुण ॥

मनुष्य को ऐसा जूता पहिरना चाहिये कि जिसकी एडी कुछ ऊंची हो न बहुत ढीला हो न तङ्ग हो । जूते के भीतर किसी तरह का ऐसा मुलायम चमड़ा लगा हो कि जिससे तलुवे के खून में उष्णता न पहुचे ।

जूता पहिरने से पैर में ताकत रहती है, आदमी सुख समेत चल सक्ता है, पैर का चमड़ा मुलायम रहिता है बिवाई आदि किसी तरहकी बीमारी नही होती न कांटा और बिच्छू आदि जीवो से भय रहिता है इसलिये जूता चारो आश्रमियो को पहिरना चाहिये और जो प्राय. ब्रह्मचारी आदि जूता न पहिर कर खड़ाऊं पर चढ़ दिन रात चला करते है उनका मस्तिष्क रुक्ष होजाता है और बुद्धि विक्षिप्तो के साथ मिल जाती है । नग्न पैर चलने से नेत्र और शिर में गर्मी पहुच कर शिरोग्रह आदि अनेक बीमारी होती है ॥

छड़ीलेनेका गुण ॥

मनुष्य को यह भी उचित है कि बिगैर छड़ी लिये हुये कभी बाहर न निकले क्योंकि हाथ में छड़ी रहिने से दातसे काटने वाले कुत्ता आदि और सींग से मारनेवाले गाय भैंस आदि इसी तरह और २ घातक जीवो से बचने का सम्भव रहिता है । छड़ी हाथ में लेने से कमर और हाथकी कलाई में ताकत रहिती है पैर जमीन पर ठीक तौर से पड़ता है और छड़ी हाथ में रहिने से इतना साहस रहिता है कि मानों कोई रक्षक अपने साथ है ॥

तेललगाना ॥

मनुष्य को आधघण्टा या एक घण्टा ह्या खाना बहुत है बाद इसा

खाने के सूर्योदय से लेकर सात आठ बजे भर में तेल लगाना अति गुण कर होता है ॥

शिर में तेल लगाना ।

शिरमें तेल लगाने से शिर सम्बन्धी यावत् रोग हैं सब नष्ट हो जाते हैं । बाल काले और चिक्कने रहिते हैं । आंख कान नाक और मुख इनमें किसी तरह की बीमारियां नहीं होती बाल कम पकता है और शिर ठंढा रहिता है । जो लोग नित्य शिर में तेल लगा शिर से स्नान करते हैं उन की बुद्धि तीव्र होती है और निद्रा सुख पूर्वक आजाया करती है । इस हेतु शिर में तेल रोज लगाना चाहिये ॥

सब प्रकृति वालों के लिये काली तिल का तेल अति उत्तमहै । शिर में गरी का तेल भी फ़ायदा करता है । लेकिन कितने लोग यह जानते हैं कि शिर में गरी का तेल लगाने से नुकसान होता है सो यह भूल है । हां चमेली हिना आदिक तेलों के लगाने से बेसक बाल जल्द पक जाते हैं । कारण यह है कि यह तेल सफ़ेद तिल के साथ बनता है और सफ़ेद तिल बाल को जल्द पकाता और नजला पैदा करता है । एक कारण गरी के तेल न लगाने का और भी है कि गरी के तेल से शिर गन्धाने लगता है । यदि गरी का तेल इस रीति से बना कर शिर में लगावें तो शिर कभी न गन्धावे ॥

गरी का तेल सेर भर बालछड़, सुगन्धवाला, कपूर कचरी, छरीला, नागरमोथा, सुगन्धनन्तरी, सुगन्धकोकिला, पांडरी, महाभारी, चम्पावती, सफेदचन्दन, छोटीलाइची, ए सब एक २ तोला नर कचूर, तेजबल, हाऊबेर, तालीस, कपूर, लौङ्ग, बड़ीलायची, ए सब चार चार मासा ले सब को अधकचरा कर एक बड़े बोतल में तेल और सब दवा डाल काग से मुख बन्द कर दश रोज तक दिन को घाम में और रात को ओस में रख दिया करे । बाद दश रोज़ के यह तेल बिलायटिङ्ग पेपर या खूब महीन कपड़े से छान दूसरे बोतल में रख दे और रोज़ शिर में लगाया करे ॥

अमलक्यादि तैल।



कच्चे आयले का रस दो सेर, सेंधा निमक ३ छँटाक मुलेटी पाव भर मुलेठी को अधकचरा कर सेर भर पानी में एक रात दिन भिगोय रक्खे दूसरे रोज मल कर पानी छान ले। बाद सेर भर काले तिल का तेल किसी कलई दार बरतन में डाल चूल्हे पर चढ़ा उसी में आयले का रस सेंधा निमक और मुलेठी का पानी भी छोड़ मंदाग्नि से पचा ले जब देखे की पानी बिल्कुल जल गया तब तेल उतार ले परंच एतना ध्यान अवश्य रक्खे कि तेल न जलने पावे इस तेल को छान कर रोज शिर में लगाया करै तो उसको शिर सम्बन्धी बिकारोत्पन्न कभी न हो शिर ठंढा बाल काले और चिकना हमेशा बना रहे इसी तेल को अथवा काले तिल के तेल को यदि बाल्यावस्था से दिन प्रतिदिन शिर में लगाना प्रारंभ करै तो जन्म भर तक उसका बाल कदापि न पके। जो हम लोगों की अपेक्षा बंगालियों का बाल अति काल में पकता है सो केवल तेलही का गुण है। यद्यपि और २ कारणों से भी अकाल पलित (नवीन अवस्था में बाल का स्वेत होना) होजाता है, यथा—

क्रोधशोकश्रमकृतः शरीरोष्माशिरोगतः। पितंचकेशान पचितं पलितंतेनजायते॥ सुश्रुत॥

(क्रोध) धातु की क्षीणतासे उष्ण प्रकृत हो हर समय अन्तस में गुस्सा का रहिना (शोक) धन पुत्र कलत्रादिकों के नष्ट से अथवा किसी के बिरह की चिन्ता में डूबा रहिना (श्रम) क्षुधा पिपासा लगी है पेट गर्म और चित्त घबड़ा रहा है परन्तु काम से छुट्टी नहीं मिलती, इत्यादि कारणों से तमाम शरीर की गर्मी पेट में पित्त द्वारा उष्ण भाफ हो मस्तिष्क जिसको अंगरेजी में (ब्रेन) कहते हैं उसमें जाके लगने से बाल भी पकता है तथा वही जल नीचे गिरने से, नेत्र, कर्ण दन्त और नाशिका में बिकार पहुंचता है, इसी को हिकमत वाले नजला कहते हैं

तथापि शिर की रूक्षता से बाल शीघ्र पकने का सम्भव रहता है परन्तु उपरोक्त तैल या और बहुत से तैल हैं कि जिनके शिरोवस्ति से अकाल पलित और नजला नहीं होता ॥

मनुष्य को तैल आदि द्वारा शिर की रक्षा करना अवश्य कर्तव्य है क्योंकि समग्र शरीर का मूल मस्तिष्क इसी शिर में है, जिसकी ताकत से मनुष्य के बल बुद्धि, विद्या, पराक्रम पुरुषार्थ और आयुः की वृद्धि होती है, इसी की ताकत से स्वामी दयानन्दसरस्वती और केशवसेन आदिकों ने बड़ी २ वक्तृता दे हर एक देशों में अपनी २ सभाएं जमा गये । इसी मस्तिष्क की पुष्टता से इस समय कारनल अलकट हजारों मस्तिष्क के निर्बल भकुआ हिन्दुओं को चेला मूड़ रहा है । इससे इस लेख पर ध्यान दे अवश्य शिर को रक्षा करनी चाहिये ॥

कान में तैल छोड़ना ।

मनुष्य को दूसरे तीसरे दिन कानमें भी तेल जरूर डालना चाहिये क्योंकि "हनुमन्याशिरः कर्णशूलघ्नम् कर्णपूरणम्" सुश्रुत । कर्ण पूरण अर्थात् कान में तैलादिक के डालने से कान का परदा तर रहता है जिससे ठोड़ी मयूरगलसन्निभ गले के पीछे की शिरा शिर और कान इनमें दर्द कभी नहीं होता ॥

शरीर में तेल लगाना ।

इसके बराबर शरीर में ताकत लाने वाला दूसरा उपाय नहीं है । "जलसिक्तस्यवर्द्धन्ते यथा मूलेऽङ्कुरास्तरोः तथाधातुविवृद्धिर्हिस्नेहसिक्तस्य जायते" । जैसे वृक्ष के जड़ में जल सींचने से वृक्ष का अंकुर बढ़ता है वैसाही शरीर में तेल के लगाने से धातु बढ़ता है । यही कारण है कि जो आयुर्वेद वेत्ता वैद्यगण, वात रोग कुष्ठरोग, जीर्णज्वर प्रभृत रोगों पर विशेष कर तैलही का अधिक गुण दिखलाया है यह बात तो प्रसिद्ध है कि मर्दन करने से तैल सब रोम कूपों के राह से शरीर में घुसकर एक

ही समय सब नसों में तथा रक्तादि में कार्य करता है। इसलिये तैल मर्दन करना अत्यावश्य है॥

शरीरमें तेल लगाने से स्नायु शिरा धमनी और त्वचा कोमल रहिती है खाज दाद सेंहुआ फोड़ा फुन्सी आदि त्वचा की बीमारियां स्वप्न में भी नहीं होती हैं शरीर खूबसूरत बली और फुर्तीला बना रहता है॥

चन्दनादितैल।

सफेदचन्दन, मोथा, खस, सुगन्धवाला, मुलेठी, कमलगट्टा की गरी, छोटीलायची, नागकेशर, मँजीठ, हरदी, दारुहरदी, शिलाजीत, जटामासी, तेजपात, कङ्कोल, सरिवन, कुटकी, अगर, लौंग, केशर, दालचिनी, ए सब औषध दो दो तोला ले कूट कर ४ सेर पानी में एक रात्रि दिन भिगोय रक्खे दूसरे रोज उन्हीं सब औषधियों को शिल पर पीस उसी पानी में छान ले तत्पश्चात् डेढ़ सेर काले तिल का तेल किसी कलईदार बरतन में डाल चूल्हे पर चढ़ाय मन्दाग्नि से उक्त जल और पांचसेर दही का तोड़ पका ले। जब देखे की सब पानी जल गया तब उतार ठंढा कर छान बोतल में भर कर रख दे। इस तेल को शरीर में मर्दन करने से जीर्णज्वर, उन्माद गर्मी पित्तविकार, मुख तथा शरीर का पीलापन, बातों का भूल जाना, धातु की क्षीणता और सुस्ती ए सब नष्ट हो जाते हैं। यदि पांच चार महीना बराबर इस तेल को लगाये तो बदन ऐसा सुर्ख और खूबसूरत हो जाता है कि जिसका कुछ बयान नहीं। यह तेल सब कोई नहीं बना सकते इसलिये काले तिल का तेल सर्व साधारण को लगाना उत्तम है॥

निषेध।

तरुणज्वर्य्यजीर्णीच नाभ्यक्ताव्यौकथंचन। तथाविरक्तोवां-तश्चनिरूढ़ोयश्चमानवः॥

नयाज्वर, अजीर्ण, अतीसार और वमन वाला, तथा गुदा मार्ग की पिचकारी ले चुका हो एतने मनुष्य तैल न लगावै॥

स्नान करना।

हर एक चिकित्सा ग्रन्थों के देखने से ज्ञात होता है कि जैसा इस आर्य्यावर्त्त में स्नान करने का प्रचार है वैसा अन्य द्वीपों में नहीं। इस का मुख्य कारण यही है कि एक तो और २ द्वीपों की अपेक्षा यह द्वीप सदा ही गर्म है दूसरे ग्रीष्म ऋतु में अत्यन्त उष्ण हो जाता है। तीसरे इस देश में एक २ नदी ऐसी हैं कि जिन में स्नान या उन के केवल जल पीनेसेही कुछतक आराम हो जाताहै। चौथे हमारे भूतपूर्व भारतवर्षीय अधिकांश आप्तगण योगाभ्यासी होते थे इस लिये उन को बाह्य कर्म (शौचक्रिया) अधिक करना पड़ता था। स्नान करने से न तो बैकुण्ठ मिलता है और न मुक्ति होती है पर यह स्वास्थ्य का एक अङ्ग है "अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति" मनु० इत्यादि बहुतसे वचन हैं कि जलसे केवल १२ प्रकार के मल दूर होते हैं। जैसे कि—

वसाशुक्रमसृङ्मज्जा मूत्रविट्घ्राणकर्णविट। श्लेष्माश्रुदूषिकास्वेदो द्वादशैतेन्नृणांमला: ॥ मनु०

वसा वीर्य्य रक्त मज्जा मूत्र नाक कान इन सबों का मैल और कफ आंसू कीचर पसीना यही १२ मल मनुष्यों के गात्र में होते हैं वेही साफ करने के लिये स्नान है। आज कल हमारे भ्रातृ गणों के हृदय से उक्त आशय तो जाता रहा। गङ्गाजी मुक्ति के देने वाली हैं यही निश्चय कर जून फजून नहाय रोग ग्रसित हो कितने झट पट शरीरही से मुक्ति हो जाते हैं॥

स्नान का गुण।

तन्द्रापपोपशमनं तुष्टिदंपुंस्त्ववर्द्धनम्। रक्तप्रसादनंचापि स्नानमग्नेश्चदीपनम्॥ सुश्रुत चिकित्सा स्थान अ० २४

स्नान करने से हर समयका औंघाना और पापोपशमन अर्थात् मन की ग्लानि जाती रहती है चित्त की प्रसन्नता और पुंस्त्व की वृद्धि होती है अग्नि दीपन एवं रक्त का सञ्चालन ठीक रहता है। जब यह सब बातें स्नान करने से प्राप्त होती हैं तो आत्मा भी सब व्याधियों से शांत हो सक्ता है इसी लिये आचार्यों ने कहीं यदि प्रसंग वस मुक्ति प्राप्ति भी कह दिया हो तो कोई असंगत नहीं है॥

तेल लगा के स्नान करने का गुण।

शिरामुखैरोमकूपैर्धमनी भिस्तर्पयन। शरीरबलमाधत्ते युक्तस्नेहो ऽवगाहनैं॥ सुश्रुत चिकित्सा स्थान अ० २४

तेल लगा के स्नान करने से शिरा मुख (सकोली नसों का मुह) रोम कूप (रोमों के गढ्ढे) धमनी (सबसे बड़ी नसें) ये सब पुष्ट होते हैं और शरीर में ताकत आती है। सब मनुष्यों को उचित है कि गर्म ऋतु में अधिक गर्म जल से और जाड़े में अधिक ठंढे जलसे कदापि स्नान न करें "अतिशीताम्बुशीतेच श्लेष्ममारुतकोपनम्। अत्युष्णमुष्णकालेच पित्तशोणितवर्द्धनम्" सुश्रुत चिकित्सा अ० २४। शीत काल में अति शीताम्बु (बासी पानी) में स्नान करने से कफ वायु का कोप होता है इसी प्रकार उष्ण काल में अत्युष्ण जल (आग से या घाम से गर्म किया हुआ जल) के स्नान करने से पित्त रक्त बढ़ता है। यह भी याद रखने के योग्य है कि कैसाहू जाड़ा से जाड़ा क्यों न पड़ता हो गर्म जल शिर पर कभी न डाले "उष्णेनशिरसःस्नानमहितंचक्षुषःसदा" सु० चि० अ० २४ गर्म जल से शिर से स्नान करना हमेशा नेत्र के लिये अहित है। यदि ऐसाही किसी को कफ वात की बीमारी घेरे हो तो अलबत व्याधि का बलाबल देख गर्म जल शिर पर दे॥

निषेध।

अतीसार, ज्वर कर्णशूल, वातरोग, आध्मान (पेटफूलाहो) अजीर्ण

इन रोगों में और भोजन मैथुन और कसरत के उपरान्त तत्क्षण स्नान न करै । शरीर पसीना युक्त हो । या अति शीतल वायु बहती हो या बदन किसी कारण से गर्म हो तो भी स्नान न करै । जिस पानी में कीड़े पड़ गये हों घास फूस के पड़ने से सड़ गया हो और जिस तालाब या नदी में पाखाने और नाबदानों की नालियां लगी हों और पानी उसका चारो तरफ से रुका हो तो उस जल से स्नान न करना चाहिये इलाजुलगुरबा और तिब यूसफी आदि यूनानी किताबों में लिखा है कि चाहे गर्म जल से हो या सर्द जल से हो रोज २ नहाना पट्ठों को क्षीण करता है । इसी कारण से बहुत से हिन्दूओं को जोकि सदा नहाते हैं चाहे युवावस्था में स्वभाव की गर्मी से हानि कम मालूम होती हो परन्तु जब उमर कुछ अधिक बढ़ जाती है तो रगों और गुरदे में निर्बलता देख पड़ती है ॥

(उत्तर) यह लेख महा भ्रम दायक और हिन्दुओं के तन्दुरुस्ती का विघ्न कारक है क्योंकि यूनानी वैद्यक शास्त्र अरब पारस आदि ठंढे मुल्कों के प्रकृत के अनुसार बने हैं जहां आभ्यन्तरिक गर्मी और बाह्य शीत का सञ्चार रहता है वहां अवश्य प्रति दिन का स्नान करना औगुण करैगा। भारतवर्ष में बाह्य गर्मी हमेशा बनी रहती है यदि लोग स्नान करने का नियम छोड़ दें तो थोड़ेही काल में उनको कोई न कोई रक्त सम्बन्धी बीमारी अवश्य खड़ी हो जाय । हां, बहुत ज्यादा तर स्नान करना जैसे की बाजे २ अधिकाचारी हिन्दू गया जी दफे दिशा जाते हैं तै दफे नहाते हैं ऐसा न चाहिये प्रतिदिन नियमित समय पर एक मरतबे स्नान करना उत्तम है । अन्यथा स्नान करने से नाड़ियां सङ्कुचित हो उत्तेजन क्रिया से रहित हो जाती हैं ॥

स्नानकरनेका समय ॥

निरोग पुरुषों के लिये सूर्योदय से लेकर सात बजे दिन तक स्नान करना लाभदायक है, बिमार और कमजोर मनुष्य को आठ बजे से ग्या-

बह बजे तक में स्नान करलेना उत्तम है । आज कल बहुत से वैद्य लोग वृहत ग्रन्थों के अनभिज्ञता से कतिपय ऐसे रोगों में स्नान करना बन्द करादेते हैं कि जिन रोगों में स्नान पथ्य है । यही कारण है कि बहुत से रोगी आरोग्य न होकर और भी उसी में पच जाते हैं । जैसे, रक्तपित्त, यक्ष्मा (तपेदिक) हिचकी, तृष्णा, मूर्छा, मदात्यय (जो अधिक नशा खाने से हो) उन्माद अपस्मार (मृगी) अस्मरी (पथरी) यह सब रोग बिना स्नान के कदापि निर्मूल नहीं हो सक्ते पुराना ज्वर, दाहरोग, उष्णवात (जिसमें बातों का भूलना आदि अनेक उपद्रव होते हैं) मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात (सुजाक) नेत्ररोग, विषरोग, चाहिये कि उक्त रोगार्त पुरुष और गर्भिणी स्त्री तमाम शरीर में तेल लगा के पूर्वोक्त समय में अवश्य स्नान करे । हाल की बात है कि महल्ले शाहगञ्ज के एक बाबू को उष्ण वात की बीमारी दो वर्ष से थी डाक्तरी दवाइयों में हजारों रुपये खर्च हुये पर बिमारी न गई किसी एक महात्माने शिक्षा दिया कि बाबू साहब आप नित्यप्रति गङ्गाजी स्नान करिये गङ्गाही जल पीजिये और उन्हीं का ध्यान रखिये आप की बिमारी जाती रहेगी । बाबा जी वैद्यक मतसे रोग और गङ्गा जलका संयोग परिज्ञात करके नहीं कहा था लोक में जैसे प्रसिद्ध हैं उस तरह से कहा था पर बाबू जी उस साधू की शिक्षा मान प्रतिदिन सबेरे उठ गङ्गा नहाने लगे और जल भी गङ्गाही का पीने लगे उनका रोग एकही दो महीने के आभ्यन्तर में जाता रहा, अब क्यों कर हम मान सक्तेहैं कि गङ्गाजी के स्नान करने से लोगों का दुःख नहीं छूटता । यह जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में आयुर्वेद द्वारा गंगा जी का यथार्थ समालोचना न कर एक बारगी लिखमारा जोकि जल स्थल मय हैं वे तीर्थ कभी नहीं होसक्ते क्योंकि "जनायैस्तरंतितानितीर्थानि" मनुष्य जिन करके दुःखों से तरे उन का नाम तीर्थ है अब पाठक गण बिचार करें कि ऐसे २ महा बज्र बिमारियों से बढ़ कर और कौन सा दुख है यह बिलकुल अनभिज्ञता है कि जल का केवल एक डुबानाही गुण जान लिया और सब दया बैठे । जल प्रकरण में गङ्गा जल का गुण लिखेंगे ८

कसरत करना।

कसरत भी आरोग्यता का एक बड़ा अङ्ग है। हमारे इस देश में कसरत करने की चाल भले आदमियों में अब नहीं रह गई लोग समझते हैं क्या हम को पहलवानी करना है और गदकाफरी बाना आदिक कसरत को तो निश्चही बदमाशी पेशा जान कर उस का नाम तक नहीं लेते, काल की भी क्या विचित्र गति है, एक समय वह था कि यही हमारे भारत भ्रातृगण उक्त विद्या में ऐसे २ निपुण होते रहे और उसी के प्रभाव से आरोग्यता; साहस, बल, वीर्य और सदा बुद्धि शील बने रहते थे कि जिन को अत्युन्नत विमल कीर्त्ति रूपी मयूर अब तक अधिकांश शिक्षित पुरुषों के हृदय में नाच रहा है यह बात विचार करने के योग्य है कि जिस समय से आयुर्वेदानुगामी धनुर्वेद की अवनति आरम्भ हुआ तभी से आर्य सन्तान या हिन्दुओं की सौभाग्य प्रभा अस्तमित और भारत लक्ष्मी का अन्तरध्यान हो चला और तभी से हिन्दूगण निर्बलता हेतु मुसलमानों से लड़ते हुये भी पराजित होने लगे और दिन २. निर्द्धन निरतेज और शक्ति रहित होते आये। तभी से आज तक हिन्दुओं की प्राचीन रीति नीति उन्नति आदि सब बातों में ऐसी हेठी पड़ी चली आती है कि जिसका उदाहरण देखलाना अपने गृह के छिद्र का प्रकाश करना है। यही धनुर्वेद प्रणाली की आज कल ऐसी अनादृत और लुप्त दशा है कि लोग गवर्नमेंट से प्रार्थना करते हैं कि हम को वालंटियर बनाइये हम आप की सन्ती रूस मनहूस से लड़ कर रूस कर देंगे। हम कहते हैं खाक कर देयगें जब तुम्हारी चार कदम चलने से सांस फूलने लगती है, किसी के शरीर से रक्त बहते देख गश आ जाता है, राम लीला मुहर्रम संग पड़ने से दश रोज बाहर नहीं निकलसक्ते दश कोठरी के भीतर रह कर भी शंख नहीं बजा सक्ते, बलिप्रदान में अजा तक को हाथ से नहीं मार सक्ते, किसी तरे का गुल गपाड़ा सुनतेही ले लोटा पाखाने को दौड़ते हो तो क्या तुम वालंटियर बनोगे और रूस को फते करोगे अङ्गरेजों में साठ वर्ष के बूढ़े को भी किसी न किसी प्रकार का

कसरत करते अवश्य ही देखते होंगे, यह कसरतही का प्रताप है जो अद्यावधि भारत वर्ष में नित नये गोरे मुह वाले आकर धमगजरी मचा रहे हैं और डाक्तरी आदि कलईदार चमकीली चीजों को देखा २ कर हिन्दुस्तानियों के तन मन धन को खींच अपनी मुट्ठी में कर लिया है। अब यह समय ऐसा नहीं है कि आप लोग उनकी मुट्ठी से छुटकारा पाने का यत्न न करैं आप लोग सुश्रुतादि ग्रन्थों की आलोचना कीजिये और देखिये कि कसरत के क्या २ गुण उन लोगों ने वर्णन किया है॥

कसरत का गुण।

शरीरोपचयःकान्ति र्गात्राणांसुविभक्तता, दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वंलाघवंमृजा। श्रमक्लमपिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता, आरोग्यंचापिपरमंव्यायामादुपजायते॥ सु०

कसरत करने से तमाम शरीर के स्वचा कस जाते हैं बदन खूब सूरत और सुडौल हो जाता है, अग्नि दीप्त अनालस्य (सुस्ती न मालुम हो) स्थिरत्वं अर्थात् शरीर बहु काल स्थाई रहै हलकी और मुलायम भी बनी रहती है। कसरती मनुष्य मेहनत, पियास, गरमी सरदी इन सब को सहि सक्ता है और उसको परम आरोग्यता प्राप्त होती है॥

कैसाहू मोटा से मोटा क्यों न हो कसरत करने से अवश्य उसकी वे ढङ्गी मुटाई कम हो जाती है अतएव कैसाहू दुबला मनुष्य होगा कुछ न कुछ जरूर मोटा हो जाता है। निश्चय है कि बिना कसरत किये शरीर में तय्यारी और ताकत कभी नहीं आसक्ती चाहे वह दिवा रात्रि मोतीही क्यों न खाया करैं। अङ्गरेज लोग हिन्दुस्तानियों की अपेक्षा रिष्ट पुष्ट बली पराक्रमी विद्वान और एक न एक नये २ कल विद्या के प्रकाश करने वाले दिखलाई देते हैं यह सब कसरत ही का प्रताप है। यदि कोई यह कहै कि हजारों हिन्दुस्तानी लोग ऐसे २ कसरत करने वाले पड़े हैं कि एक अकेला दश अंगरेज को मार के गिरा सक्ता है ले-

किन महा मूर्ख लंठराज क्यों बने रहते हैं ? वह क्यों नहीं विद्वान् और शिल्प विद्या के प्रकाशक होते हैं, इसका उत्तर यही है कि इनका कसरत मत विद्या से सम्बन्ध नहीं रखता और पथ्य प्रकरण से ठीक भी नहीं मिलता कारण यह है कि विद्वान् लोग कसरत को बदमाशी पेसा जान त्याग बैठे हैं और मूर्ख लोग इसे जीविका समझ राज दरबारों में या जहां तहां खेल कूद के पेट भर लेते हैं । बुद्धि की परिचालना और विद्या की उन्नति करने वाला गुण प्रायः भारत वर्ष से जाता रहा कसरत करने वाले को वन रण गिरि दुर्गम और कठोर स्थल में एवं सत्रुओं से भय कम रहता है । एकाएकी किसी प्रकार की बिमारी या बुढ़ापन बहुत जल्द उसे नहीं घेर सक्ता और अजीर्ण की बिमारी तो उसे होती ही नहीं ॥

व्यायामंकुर्वतोनित्यंविरुद्धमपिभोजनम् । विदग्धमविदग्धंवानिर्दोषंपरिपच्यते ॥

प्रतिदिन का कसरती यदि विरुद्ध भोजन (रोगोत्पन्न कारक) खा लेगा तो निस्सन्देह विदग्ध हो या अविदग्ध हो पर उसे निर्दोष पच जायगा इसी तरे—

वयोरूपगुणैर्हीनमपिकुर्य्यात्सुदर्शनम् ॥ सु०

अवस्था और रूप करके हीन भी पुरुष कसरत करने से अति रूपवान् हो जाता है । अपने शरीर की आरोग्यता (हेल्थ) चाहने वाले मनुष्य बारहो महीना थोड़ा डण्ड मुग्दर और बैठक की कसरत अवश्य करें । बहुत से लोग यह जानते हैं कि बैठक करने से क्लीवत्व (नपुंसक) हो जाता है यह महा भूल है, "हां" बिना लंगोट कसे बैठक लगाने से पोता बढ़ आने का सम्भव रहता है ॥

कसरती पुरुष को घी दुग्ध आदि बलकर वस्तु हमेशा खानी चाहिये विशेष कर कसरत के उपरान्त बिना कोई ताकत वर चीज खाये पानी

पीना वर्जित है । बहुत से लोग कसरत के पहिलेही दूध पी लेते हैं या कसरत किये जाते हैं और दूध या भीजा चना खाते जाते हैं । यह मूर्खता है । क्योंकि इसका बिधान वैद्यक में कहीं नहीं है—और परिक्षा से नुकसान पाया गया है । यह भी याद रखने के योग्य है ॥

वयोबलशरीराणिदेशकालाशनानिच । समीक्ष्यकुर्य्यात्व्यायाममन्यथारोगमाप्नुयात् ॥ सु०

मनुष्य को उचित है कि अपनी अवस्था बल शरीर देश काल और भोजन देख कर कसरत करै अन्यथा करने से रोगी हो जाता है जैसे की अवस्था तो १० वर्ष की है पर कसरत करना ३० वर्ष वाले की बराबर, बल ५ सेर बोझा उठानेका है मनभर उठानेमें उद्यत है, शरीर तो महा मोटा पर बिना क्रम एका एकी मलखम आदि (जमनास्टिक) का कसरत किया चाहते हैं । अति शीतल देश में मट्टी लगा के उतलोट करना, उष्णकाल में अधिक करना अयोग्य है, खाना तो छँटाक घी भी नहीं डण्ड लगाना पांच सौ इससे अवश्य क्षयी, तृष्णा, वमन, रक्त, पित्त, भ्रम, खांसी, स्वास और ज्वर आदिक बिमारी होने का सम्भव है ॥

निषेध ॥

रक्तपित्तकृश:शोषीश्वासकासक्षतातुर: । भुक्तवान्स्त्रीषुच क्षीणोंभ्रमार्तश्चविवर्जयेत् ॥

रक्त, पित्ती, दुर्बल और जो किसी रोग से सूखा जाता हो, दमा, खांसी और घाव से पीड़ित या अति स्त्री प्रसङ्ग करने वाला गरमी, सुजाक तथा घुमरी युक्त पुरुष और भोजन के ऊपर कसरत न करै ॥

कसरतकरनेकासमय ॥

उत्तम तो यह है कि सवेरे स्नान के उपरान्त यथाशक्ति कसरत कर बाद माथे में चन्दन लगा गायत्री सन्ध्या से निवृत्त हो भोजन करे । इससे

अतिरिक्त समय में भी कसरत कर सक्ता है पर नागा न होनी चाहिये, नियमित समय पर अवश्य कुछ न कुछ जरूरही कर ले । कसरत कर के उसी वक्त लँगोट खोल डालना, या स्नान कर लेना, या विना कोईचीज खाये अति ठण्ढा जल पी लेना नुकसान करता है । कसरत के उपरान्त आधघण्टा या पावघण्टा टहल के तब कोई काम करै। पाठकगण, यदि आप लोग इस दुर्लभ शरीरको कि जिसके द्वारा चारो पुरुषार्थों की सिद्धि है आनन्द से रखना चाहैं तो अवश्य कसरत करैं ॥

चन्दनलगाना ॥

यद्यपि आजकल माथे में चन्दन लगाना नव शिक्षित लोगों को पाखण्ड या एक प्रकार का चिन्ह जान पड़ता है परन्तु आयुर्वेद में इसका अधिक गुण लिखा है जो सविस्तार इसे दूसरे खण्ड में लिखेंगे ॥

पैरधोना ॥

यह जो प्रायः हिन्दू लोग बिना पैर धोये भोजन नहीं करते इसे होटल में भोजन करने वाले जेन्टेलमेन लोग चाहे बुरा समझैं या पसन्द न करैं लेकिन यह भी एक उत्तम फल देने वाला कर्म है ॥

पादप्रक्षालनंपादमलरोगश्रमापहम् । चक्षुःप्रसादनंवृष्यं रक्षोघ्नंप्रीतिवर्द्धनम् ॥

पैर के धोने से पैर का मल रोग और थकाई जाती रहती है नेत्रमें तरावट शरीर में तैयारी और मन प्रसन्न रहता है । केवल खानेही के समय पैर धोना नहीं बल्कि जब २ आवश्यकता देखे तभी धो डाले जैसे कि भोजन के आदि में मूत्रपुरीष के अन्त में कहीं से घूम फिर के आया हो और सोते समय पर जरूर पैर धोना चाहिये पैर धोयके सोनेसे सुख समेत नींद आ जाती है और यह दुस्स्वप्न नहीं देखता ॥

भोजन ॥

यह बात सबको अच्छी तरह से मालूम है कि हम लोगों को भूख और प्यास लगती है और तब खाने और पीने की जरूरत पड़ती है। यदि किसी मनुष्य को कुछ रोज तक कुछ भी खाना न मिले तो इसमें सक नहीं कि वह बहुत दुबला हो के भूख से मर जायगा। इससे यह बात सिद्ध हुई कि भोजनही जीवन का मूलहै इसलिये विशेष कर मनुष्य को खाने पीने के नियमों पर ध्यान अवश्य रखना चाहिये क्योंकि जिन का खाना पीना एक बन्धी हुई तादाद के बमूजिब नहीं है उसे और समस्त आचरणों से कुछ भी फायदा नहीं हो सक्ता। यह बात साफ जाहिर है कि ठीक समय पर परिमित भोजन करने से वह भोजन अति गुण कारी होता है जैसा कि सुश्रुत में लिखाहै॥

आहारःप्रीणनःसद्योबलकृद्देहधारकः। आयुस्तेजःसमुत्साह स्मृत्योजोऽग्निविवर्द्धनः॥ चि॰ स्था॰ आ॰ २४॥

समय का भोजन सद्यही प्राण को तृप्त करता है और बल कर एवं देह धारक है आयुः तेज उत्साह स्मरण शक्ति पराक्रम और अग्नि को बढ़ाता है। जो लोग समय कुसमय कम जादा पशुवत भोजन किया करते हैं उनके सामने हर समय काल खड़ा रहता है और वेही मनुष्य हैजा आदि बिमारियों से पीड़ित भी होते हैं॥

हमारे हिन्दुस्तान में हर एक तिथियों में व्रत की परिपाटी ऐसी फैल गई है कि लोग देश काल पात्र न बिचार कर एकादश्यादिक तिथियों में उपवास कर एक न एक रोग में ग्रस्त हो जाते हैं। जैसे देखिये ज्येष्ट शुक्लपक्ष की एकादशी को अन्न खाना कौन कहै जल तक पीना मना है कि जिस ऋतु में एक घड़ी भर जल न मिलने से मनुष्य व्याकुल हो जाता है। तो ऐसी अवस्था में सबके लिये व्रतों की परिपाटी आयुर्वेद सम्मति नहीं है क्योंकि लिखा है कि—

भोजनेच्छाविघातास्या दङ्गमर्दोऽरुचिःश्रमः। तन्द्रालोचनदौर्वल्यं धातुदाहोवलक्षयः॥ विघातेर्नापिपासायाः शोष कण्ठास्ययोर्भवेत्। श्रवणस्यावरोधश्च रक्तशोषोहृदिव्यथा॥

खूब भूख लगने पर भोजन के न मिलने से बदन में हड़ फूटन होना, अरुचि, शरीर ढीली, नेत्रों में झांप, नेत्र के सामने तिलमिल मालूम होना, रक्त मांसादि सप्त धातुओं में दाह और बल का नाश होता है। तो भला बतलाइये जिस शरीर से परम पुरुषार्थ की सिद्धि है वही निकम्मी होगई तो उपवास करनेसे कैसे तुम मुक्ति पा सक्तेहो गीता में स्पष्ट लिखदियाहैकि उपवास से योगकीसिद्धि नहींहोती। इसी प्रकार प्यास से, प्यास के रोकने से कंठ और मुख का सूखना, श्रवण शक्ति अर्थात सुनने की ताकत जाती रहती है। रुधिर का सूखना और हृदय में दर्द होने लगता है। भावप्रकाश में भी लिखा है कि—

पनीयंप्राणिनांप्राणाविश्वमेवचतन्मयम्। अतीत्यन्तनिषेधेननक्वचिद्वारिवारयेत्॥

विश्व तनमय यह जल मनुष्य का प्राण है इसलिये जहां जल का पीना अत्यन्त निषेध है वहां भी प्यास लगने पर पानी अवश्य पिये क्यों कि "तृषितो मोह मायाति मोहात् प्राणं विमुञ्चति" प्यासे को पानी न मिलने से बेहोशी आती है और बेहोशी में प्राण छूटने का सम्भव है बङ्गाल में एकादशी के दिन विधवा स्त्रियों की बड़ी दुर्दशा होती है एकादशी महात्म के इस बचन से कि "एकादश्यामन्नेपापानिवसन्ति" अर्थात् जितने पाप हैं वे सब एकादशी के दिन अन्न में बसते हैं बस इस बचन को धर्म का मूल जान उन बिचारी अबलाओं को जबरदस्ती उपवास कराते हैं। यद्यपि यह व्रतादिक गीता आदि ग्रन्थों के देखने से निरर्थक जान पड़ता है पर हमें मत मतान्तरों के झगड़े से प्रयोजन नहींहै लेकिन जब हम देखते हैं कि व्रत करते २ गर्भवती का गर्भ गिर जाता है पुत्रवती का पुत्र बिमार हो जाता है। सद्यो विवाहिता स्त्री लड़के और

युवा पुरुषों को निस्तेज देखते हैं तो हम क्यों कर कह सक्ते हैं कि एका दश्यादिकों के व्रत से दुःख नाश हो जाता है ऐसा तो नहीं होता किन्तु उलटा क्षुधा आदि से दुःख होता है और दुःख पाप का फल है, सत्य तो यह है कि धर्म्मात्मा पुण्यात्मा और ईश्वर का जानने वाला वही पुरुष हो सक्ता है कि जिसका खाना पीना चलना फिरना आदि इन्द्रियों का आचरण कालानुसार ठीक बन्धा है ॥

भोजन करने का घर सफेदी से पुता हुआ उमदा साफ और पाक स्थान से कुछ दूर पर होना चाहिये वहां पर कुछ सुगन्धित द्रव्य रक्खेहों और नेत्र के सामने विशेष करके भोजन करने एवं सोवने का कमरा बहुत साफ रखना लिखा है। खाने के वक्त यदि माता पिता मित्र वैद्य पाक कर्ता (खाना पकाने वाला) मोर कुत्ता और बानर इन्हें सामने बैठाय लेवे तो उत्तम है, क्योंकि इन सभों की दृष्टि अच्छी होती है और बहुत गरीब आदमी जिन्हें उत्तम प्रकार का भोजन दुर्लभ है एवं बिल्ली आदि जीव उस समय न रहने पावें ॥



भोजनकेपात्र।

भोजन के समय घी कांसे के पात्र में रखना उत्तम है, क्योंकि कांस की कटोरी में घृत बिगड़ता नहीं, यही कारण है जो यज्ञ में घृत कांस ही के पात्र में रखना लिखा है। मीठी चीज पीने या चाटने की हो तो चांदी के पात्र में रक्खे। सूखा मांस (कबाब आदि) रखा दार या सूरबा (अखनी) सोने के पात्र में लिखा है। कटु और अम्ल आदि की चटनी वगैरः पत्थल की कूंडी में ले ॥

दद्यात्ताम्रमयेपात्रेसुशीतंशुश्रृतंपयः ॥

पीने के लिये उमदा परिस्रुत शीतल जल ताम्र पात्र में लेना चाहिये। बहुत लोग जानते हैं कि तांमे के बर्तन में पानी पीना मने है

सो भूल दें, मनु ने सिर्फ दूध या सहत आदि मीठी चीज ताम्र पात्र में रख कर खाना मने किया है, इसका कारण यह है कि उक्त द्रव्यों में ताम्र का वमि कारक अंश खिंच आता है । निर्णय सिंधु में लिखा है ।

गव्यंचताम्रपात्रस्थं मद्यतुल्यंघृतंविना ॥

दूध ताम्र पात्र में रखने से मद्य के तुल्य हो जाता है, यदि घृत उस में न मिला हो, इससे स्पष्ट होता है कि घृत उस अंश को खींचने नहीं देता । भोजन के समय मद्य मृत्तिका पात्र में और दही चीनी कांच एवं स्फटिक पात्र में रख कर खाना लिखा है "कुलार्णव, कुलप्रदीप, समयाचार देवीरहस्य आदि शाक्त के ग्रन्थों में लिखा है" कि कांच पात्र कभी जूंठ नहीं होता, वैसेही विष्णुपुराणादि वैष्णवी ग्रंथों में शंख की महिमा लिखी है । दाल भात और रोटी इन्हें अच्छे मनोरम लिखले पात्र में लेना अच्छा है । उक्त पात्रों के अभाव में उक्त धातुओं की कलई हो, उसके भी अभाव में पत्थल या मृत्तिका का पात्र लेना उत्तम है जितने सूखे पदार्थ हैं उन्हें अपने दहने तर्फ और पानी आदि द्रव्य पदार्थ अपने बांये तर्फ रखना उचित है और दाल रोटी की थाली अपने सामने रक्खे । चाहिये कि एक गज लम्बी चौकोर बिलस्त भर की ऊंची चौकी अपने सामने रख उसी पर सब पात्रों को संस्थापन करै ताकि झुक कर खाना न पड़े क्योंकि—

सुखमुच्चैःसमासीनःसमदेहोऽन्नतत्परः ॥ सुश्रुत,

सुख पूर्वक ऊंची छाती और शरीर को खूब सीधी करके भोजन करै क्योंकि झुक कर खाने से पेट दबा रहता है, इससे उस समय पक्वाशय की धमनी निर्बल रहती है । यही कारण है जो युरोपियन लोग टेबुल पर खाना रख और कुरसी पर बैठ कर खाते हैं, पर एतद्देशीय नवशिक्षित गण उक्त आशय को तो जानते नहीं इसे अभ्यासी कोटिमें गणना कर बड़े २ महाजनों के लड़के चोरी छिपा होटल में जाके खाना खातेहैं इससे यदि अपने घर में एक चौकी पर भोजनके समय बरतन सजा और

आप सुख पूर्वक आसन पर बैठ आनन्द से भोजन करे तो होटल से क्या कम मज़ा मिले, अङ्गरेजोंका अनुकरण भी न हो और महामांस की परसादी से भी बचे रहैं। पर वह साहब जो मुख में चुरट दाब (गिटपिट बोलत साहबी मत चले पतलून जाकट से) उन्हें यह कब अच्छा लगेगा॥

भोजन करने के पदार्थ न बहुत गर्म हों और न बहुत शीतल पर ताकत देने वाले सुगन्धित मसालों से धूपित हो। और भोजन करने में न तो बहुत जल्दी करे और न अति देर करे, यद्यपि नीति का वचनहै-

अचिरंकुरुराजेन्द्रभोजनेशयनेरणे॥

भोजन शयन और युद्ध बहुत जल्द करना, पर जल्दी २ भोजन करना बड़ा हानि कारक है॥

पूर्वंमधुरमश्नीयान्मध्येऽम्ललवणोरसौ॥ सुश्रुत,

भोजन के आदि में मिष्ट द्रव्य जैसे दूध चिनी या रोटी दूध खीर और मालपुआ आदि, मध्य में अम्ल और नमकीन यथा रोटी तरकारी दाल भात और चटनी आदि, अन्त में पीने की यथा माठा आदि पीना लिखा है। पर बहुत काल से आयुर्वेद का प्रचार प्रायः लुप्त हो जाने के कारण मनुष्यों का खाना पीना ऐसा गड़बड़ हो गया है कि लोग इतना भी नहीं जानते कि कौन सी चीज हमें पहले और कौनसी पीछे खानी चाहिये और कौन द्रव्य के साथ कौन सा पदार्थ खाना उचित नहीं है, इसीसे अच्छी तादाद और नियमित समय के भोजन करनेवाले लोग भी प्रत्यह अनेकानेक रोगों में ग्रस्त रहते हैं॥

अब कुछ भोजन के उन अङ्गों को कहता हूं जिस से प्रत्येक मनुष्य की स्वस्थ्यता, बल, बुद्धि, पराक्रम बढ़ सक्ती है। यह सभी जानतेहैं कि भूख प्यास लगनेपर खाने पीने की इच्छा सब लोगों को होतीहै इसलिये उक्त वेगों के रोकने या उनके समय को न्यूनाधिक करने से रोग पैदा होता है। भूख मारने से देह और आंखों में दर्द, अरुचि, श्रम, तन्द्रा,

दाह, और बल का नाश होता है, जो लोग भूख लगने पर नहीं खाते उनकी अग्नि पहिले तो वातादिक दोषों को नष्ट कर धातु को जलातीहै बाद वही जठराग्नि आहार रूपी इंन्धन न पाके ठंढी हो जातीहै किसी कवि ने कहा भी है ॥

आद्रौरूपविनाशिनीकृशकरीकामस्यविध्वंसिनी। ज्ञाने-च्छेदकरीतपःक्षयकरीधर्मस्यनिर्मूलिनी ॥ पुत्रभ्रातृकलत्रभे-दनकरीलज्जाकुलच्छेदिनी। सामांपीड़तसर्वदोषजननीप्रा-णापहारीक्षुधा ॥

अब बतलाइये कौन कह सक्ता है कि मनुष्य व्रत उपवास करके अर्थ धर्म काम मोक्ष को पा सक्ता है, इस दुर्लभ शरीर को तो बेशक काल के मुख में दे शीघ्र ही जीवन से हाथ धो सक्ता है, जो चारों पुरुषार्थों के साधन की जड़ है, हम यह नहीं कह सक्ते कि तुम एकादश्यादि व्रत मत करो, करो फिर; करो अवश्य करो; किन्तु प्यारे भ्रातृ गण, भूख लगने पर अवश्य खावो; चाहे कन्दही फल खा के रहो कुछ अन्देशा नहीं, हां खा ना, न पचने से अजीर्ण हुआ हो तो एकादशी पर क्या हसर है आप द्वादशी को भी न खाइये, हम तो वैद्य हैं जिससे आप आरोग्य रहैं यही शिक्षा देंगे। विचार सहित आहार करने से तृप्ति, बल, बुद्धि आयु, शक्ति ओज और सुन्दरता की वृद्धि होती है ॥

जो हमने कहा है कि भोजन के आदि में मीठी चीज खानी चाहिये उसका कारण यह है कि जो मनुष्य जितनी देर में भोजन करते हैं उस काल का तीन भाग कर प्रथम में वायु शमन करनेवाली मीठी चीज बीच में अग्निकारी खट्टी और नमकीन और अन्त में कफ नाशक कड़ुई तीती और कषैली चीजों को प्रीति पूर्वक मन लगा कर भोजन करना चाहिये; जो लिखा है कि कड़ी और भारी वस्तु भी भोजन के आदि में खाना उत्तम है इस लिये कि भोजन काल में जठराग्नि तेज रहती है

इस से कही और भारी वस्तु (रोटी पूरी आदि) खाना जल्द पच जाता है ॥

पहले हम भोजन करने का मकान भोजन के पात्र और किस प्रकार भोजन करना चाहिये कह आये हैं और यह भी दिखलाया है कि ठीक समय पर भोजन करने से क्या लाभ होता है । अब विचार करना चाहिये कि ईश्वर ने हमारे जीवन के हेतु क्या २ वस्तु उत्पन्न किया है और कौन २ द्रव्य के खाने से हमे क्या २ हानि लाभ हो सक्ता है । उपरोक्त सब बातें खास करके उन लोगों के लिये हैं जिनको सब तरे का आराम है। पर विशेषकर समान्य रीति से देश काल आबहवा औ दोष विचार करके उसके अनुसार चलना सब को उचित है ॥

अन्न पाक यंत्र ॥

सच्चिदानन्द ज्योति स्वरूप नित्यारख निरप्रह निर्गुण परमात्मा ने जीवधारियों के अभ्यन्तर ऐसे २ सूक्ष्मातिसूक्ष्म नाड़ियों के द्वारा प्राण रक्षक भोजन पचने और शुक्र बनने का यंत्र बनाया है कि जरा भी उलट फेर होने में शरीरही नष्ट भ्रष्ट हो जाती है । जो कुछ भोजन किया जाता है यह पहले प्राणवायु आय कर आहार को आमाशय में ले जाती है यह आहार षट रस में कोई रस क्यों न हो आमाशय में जा मधुर और फेना सा हो जाता है बाद वही पाचक पित्त से दग्ध हो खट्टा हो जाता है फिर समान वायु से प्रेरित हो ग्रहणी में पड़ता है और ग्रहणी से अग्निकोष्ठ में पच कडुआ हो जाता है यदि न पचा तो आंव हो गया और नहीं तो वही उत्तम रस अग्नि के बल से मधुर और चिकना हो जाता है और वही रस अमृत के समान हो अखिल धातुओं को उत्पन्न कर शरीर को पुष्ट करता है । यदि मन्दाग्नि से अपक्क अर्थात् अच्छे प्रकार से न पचा तो वही रस कडुआ खट्टा हो तादृश डकार उत्पन्न करताहै और विष समान हो अनेक उदरादि व्याधि प्रगटकर महत्

क्लेश देता है चाहिये उस अवस्था में वमिकृत द्रव्य के बल से वमन कर उस रस को निकाल डाले ॥

यह भी जानने के योग्य है कि जितना खाना खाया जाता है वह सब शरीर के विभागों के बनाने में नहीं काम आता अवश्य कुछ हिस्सा जो फ़ुजूल हैं बदन से बाहर निकल जाता है परंच उन मिश्र द्रव्यों की सूरत में आकर निकलता है जिनमें निमक की चीजें ज्यादा रहती हैं जैसे मल मूत्र । जब आहारसे रस खिंच कर अलग हो जाताहै तब सार हीन मल, और जल, रह जाता है उस जल को मूत्र वाहिनी शिरा ले-कर बस्ति याने मूत्र की थैली में डाल लिंग द्वारा निकाल देती है और मल को अपान वायु पक्काशय में लाय त्रिवली अर्थात् गुदा मार्ग से निकाल देती हैं ॥

बाद इसके फिर यह रस समान वायु (जो वायु अग्न्याशय में रहती है) से प्रेरित (भेजा हुआ) हृदय में जाय रंजित पित्त (रंजक पित्त वह है जो अपनी ताकत से उसी रस को रक्त बना देता है) से पचकर रक्त हो जाता है । यही रक्त सर्व शरीर में स्थिति उत्तम जीवका अधार है और रक्तही बदन के सब हिस्सों को जिन्दा रखता है । रक्त क्या चीज है और किस तौर पर यह शरीर में चलता है और गदि्ध किया हुआ रक्त किस प्रकार उसी हवा से साफ होजाता है इन सबों का बयान रक्त प्रकर्ण में लिखेंगे ॥

यदि यह रस रक्त न होकर विदग्ध हो गया तो खट्टा हो जाता है अब जानना चाहिये कि भोजन किया हुआ द्रव्य प्रथम रस बनके ५ रोज में पित्त की मदद से रक्त हो जाता है, इसी प्रकार पांच ५ रोज में रक्त से मांस, मांस से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से मज्जा और मज्जा से [illegible] दपछ अधिक एक मास में जाके शुक्र बनता है । परन्तु जिसकी जठराग्नि तेज है उसको इससे कम दिन में और जिसकी भूख कम है उसको इससे भी धिक [illegible] में शुक्र होता है । लेकिन धातु बर्द्धक औषध खाने से जल्द

और अधिक शुक्र होता है । वृद्धावस्था में वायु की अधिकता से रस सूख जाता है इसलिये उस अवस्था में वायु शमन कारक एवं धातुबढ़ाने वाले तर द्रव्य भोजन करना उत्तम है । शरीर में वीर्य्यही प्रधान वस्तुहै इसकी ताकत से जीवधारी गण अनेक प्रकार के काम कर रहेहैं जैसे दूध में घी और ऊख में रस रहता है वैसाही मनुष्य के शरीर भरमें शुक्र है और यही शुक्र, स्त्री के देखने, छूने, उसकी बोली सुनने, उसका ध्यान करने और मैथुन का आनन्द होने से लिङ्ग के रास्ते निकल जाता है, यही कारण है कि अति मैथुन करने से मनुष्य बहुत जल्द निर्बल हो वृद्ध हो जाता है ॥

मनुष्य को अपने खाने पीने का संयम विचार सहित ठीक समय पर रखना उचित है, चाहिये कि जिससे धातु में हानि न पहुंच कर और दिन प्रति दिन शुक्र की वृद्धि होती जाय ऐसा भोजन करै । भूख होने पर यदि भोजन न करै तो अग्नि वीर्य और रक्त को सुखातीहै इसलिये भूख लगने पर अवश्य खावै ॥

——○:*:○——

भोजन करनेका समय ॥

सामान्य तरह से सब चिकित्साओं का मत है कि एक पहर दिन के ऊपर और दो पहर के भीतर और रात के एक पहर के भीतर भोजन करना श्रेष्ठ है; परन्तु रस दोष और मल के पकने पर जब भूख तेज हो आहार करने का यही समय ठीक है लेकिन परीक्षा से देखा गया है कि जिन लोगों के भोजन का समय बँधा है उन्हें उसी समय में जाके भूख लगती है, जो लोग एक दिन रात में एकही बार भोजन करते हैं उन्हें ठीक दोपहर के भोजन करना उत्तम है । बाजी २ यूनानी किताबों में लिखा है कि दो दिन एक रातमें तीन बार से अधिक न खाना चाहिये शायद ऐसा यूनान वाले करते भी हों पर यहांके मुसल्मानोंमें तो ऐसा

नहीं देखा जाता हमारी रायमें तो भोजन का समय दस बजे दिन और १० वा ९ बजे रात को उत्तमहै उसमें भी जो कोमल प्रकृति वालेहैं और जिन्हें पढ़ने लिखने आदि की मेहनत अधिक पड़ती है उन्हें मामूली भोजन के अतिरिक्त प्रातःकाल शौच के अनन्तर और सन्ध्या समय चार पांच बजे शौच के अनन्तर शुद्धचित्त हो कुछ ताकतवर मोदक या अन्य पदार्थ खाके जल पी लेना बहुत जरूरी है, क्योंकि इससे शरीर का बल अधिक मेहनत करने पर भी नहीं घटता पर समय का ख्याल अवश्य रखना चाहिये ॥

निषिद्धान्न ॥

जिस अन्न में कुछ स्वाद न हो ऐसा भोजन बासी, जूठा (उच्छिष्ट) और जो खाना बसाने लगा हो, बहुत देर में पका हो या दुरियाय गया हो, शीतलसे फिर गर्म किया गयाहो या अच्छी तरह न पकाहो और जल गया हो तो कदापि न खाना चाहिये क्योंकि ऐसे २ अन्नों के खाने से विशूचिकादिक रोग होने का सम्भव रहता है, यह भी याद रखने के योग्य है कि भात के साथ सिरका और मुर्गे के मांसके साथ मूली, मूली के साथ दूध या दही के साथ बकुले का मांस न खाना चाहिये क्योंकि उससे कफ में विकार उत्पन्न होताहै । दूध के साथ अञ्जीर या नींबू या-मछली और कबूतर के बच्चे के मांस के साथ प्याज का खाना वर्जित है क्योंकि इससे वायु का कोप होता है । सरसों के तेल से भूंजा हुआ कबूतर का मांस और दूध के साथ तेल का बना पदार्थ कदापि न खाना चाहिये इससे शीघ्रही कमल रोग होता है ॥

जो हम लिख आये हैं कि चार दफे भोजन करना चाहिये, अर्थात् मामूली भोजन के अतिरिक्त भी सबेरे और शाम को कुछ बलिष्ट पदार्थ खाना अत्यावश्य है । और अति लाभदायक शिक्षा में यह भी देखलाया है कि प्रातःकाल उठ कर बासी मुंह बासी पानी पीना अति गुणकारक है । सब मनुष्यों को उचित है कि उक्त जल पान के एक घण्टा बाद

नीचे कहे हुये पदार्थों में से जो इच्छा हो खाना बहुत जरूरी है पर ऐसा भी न खा ले जिससे कि मामूली भोजन में विघ्न पड़े (खाने की इच्छा न हो या कम खाया जाय) ॥

कुण्डलनी अर्थात् जलेवी ॥

जलेवी का बनाना कुछ कठिन नहीं है, इसलिये बनाने की क्रिया नहीं लिखा इसे घर में औरतें भी बना लेती हैं और बाजार में भी हेलवाइयों की दुकान में प्रत्यह सबेरे ताजी मिल सक्ती है ॥

गुण ॥

पुष्टिकृद्बलकृन्नाम्ना पुष्टिकान्तिबलप्रदा । धातुवृद्धिकरी वृष्यारुच्याचेन्द्रियतर्पणी ॥

जलेवी शरीर को पुष्ट (मस्त) करती है कान्ति (चेहरे पर रौनक) और बल को बढ़ाती है, धातु वृद्धि, वृष्य (सद्यः शुक्रकर) रुचि और इन्द्रियों को तृप्त करती है । परीक्षा करने से देखा भी गया है कि रोज सवेरे जलेबी खाने से बहुत अधिक फायदा हुआ है, लेकिन मन्दाग्नि वाले को आंव पैदा करती है, बाजार की अपेक्षा घर की बनी हुई जलेबी बहुत लाभदायक होती है क्योंकि बाजार का खमीर अच्छा नहीं होता, खमीरही पर कुछ कथन नहीं है बाजार के बने पदार्थ सभी खराब होते हैं । इसी से वेद में लिखा है:—

"नापणीमन्नमश्नीयादिति"

बजार का पका अन्न न खाना चाहिये । कारण यह कि हेलवाई लोग प्रायः सड़ा, घुना, बासी, खराब जो कुछ माल बच जाता है उसे भी किसी न किसी ढङ्ग से बेंच डालते हैं और बहुत प्रकार का मिलावट कर देते हैं । इसी सबब से हर एक मेलाओं में लोगों को हैजा हो जाता है ॥

॥ माखन मिश्री ॥

दुग्ध मथने से जो घी निकलताहै उसी को प्रायः मक्खन कहते हैं।

मक्खन का गुण ॥

"दुग्धोत्थंनवनीतन्तु चक्षुष्यंरक्तपित्तनुत् । वृष्यंबल्य मति-स्निग्धं मधुरंग्राहि शीतलम्"

दूध से निकला मक्खन नेत्र और रक्त के विकार को हर लेता है और वृष्य (शुक्रकर) बल्य (ताकत बर) अति चिक्कन, मीठा, ग्राहि (दीपन पाचन) और शीतल है । रोज सबेरे माखन और मिश्री के खाने से विशेष कर नेत्र और मस्तिष्क में अधिक बल होता है और इसके खाने वाले को मृगी, उन्माद, मूर्च्छा और शिर की बिमारी स्वप्न में भी नहीं हो सक्ती । यदि नियम के साथ रोज सबेरे तीन चार महीने तक कासश्वास (दमा) और यक्ष्मा (कफक्षयी) वाले को माखन मिश्री खिलाई जाय तो हम निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि बिमारी जाती रहेगी ॥

आंवला का मुरब्बा ॥

रोज सबेरे एक या दो रेसा रहित आंवले के मुरब्बे में एक चांदी का वर्क लपेट कर खाने से जैसा फायदा करता है प्रशंसा करना व्यर्थ है । आंवला तीन दोष को नाश करता है ॥

"रक्तपित्तप्रमेहघ्नं परंवृष्यंरसायनं । हन्तिवातं तदम्लत्वात् पित्तंमाधुर्यशैत्यतः ॥ कफंरुक्षकषायत्वात् फलंधात्र्यास्त्रिदोषजित्"

आंवला रक्त पित्त और प्रमेह का नाशक एवं वृष्य और रसायन (जो वृद्धावस्था न आने दे) है विशेष कर आंवला अपने खट्टे अंश से वात को, शीतल और मीठे अंश से पित्त को, रुक्ष और कषाय प्रभाव से

कफ को नाश करता है। जिनको आंवले का मुरब्बा और चांदी का वर्क न मिल सके वे सिर्फ सूखा आंवले का चूर्ण ६ मासा और मिश्री ६ मासा सवेरे फांक कर खाइ। या जल पी लिया करें तो भी बहुत फायदा करे।

गोक्षुर पाक ॥

बड़ा गोखुरू पाव भर, जायफल ३ मासा, लवङ्ग ४ मासा, मिर्च १ तोला, कपूर ६ मासा, अकरकरहा ६ मासा, समुद्रशोष ६ मासा, असगन्ध ६ मासा, हरदी ६ मासा, आंवला, तज, तेजपात, छोटीलायची, वंशलोचन, नागकेशर और तालमखाना, एक २ तोला धोई भांग ५ मासा, अफीम २ मासा, गौ का दूध ४ सेर, चिनी २ सेर, बबूल का गोंद ८ तोला, चांदी का वर्क २० ताव। क्रिया, सब दवाइयों को भिन्न २ कूट कपड़ छान कर ले पहिले दूध को कढ़ाई में चढ़ा आंच दे जब दो हिस्सा दूध जल जाय तब गोखुरू का चूर्ण और अफीम को दूध में छोड़दे और पकाता जाय, जब बिलकुल खोया हो जाय तब उसी में पाव भर घी डाल खोवे को खूब भून ले, बाद इसके गोंद को भी घी में तल ले, फिर चिनी का उमदा चासनी कर उसी में खोवा और सब दवा मिला दे बदाम ऽ= किसमिस ऽ= पिस्ता ऽ- गरी २ तोला, सई चिरौंजी २ तोला इन सभों को भी महीन कतर कर उसी में डाल एक २ छँटाक का लड्डू बनाले।

"प्रातस्सेव्यमिदं महौषधवरं रोगौघविध्वंसनं छ्वशेषं सकलप्रमेहहननं प्रौढ़ांगनाद्रावणम् ॥

नित्य प्रातःकाल एक लड्डू खाने से सम्पूर्ण रोगों का नाश होता है विशेष कर धावाशीर प्रमेह के नाश करने एवं स्त्री द्रावण और धातु स्तम्भन में उत्तम औषधि है। और भी बहुत-सी दवाइयां प्रातः काल खाने के योग्य हैं जिनका बयान फिर कभी समयानुसार करेंगे। प्रिय पाठकगण ऊपर लिखे हुये औषधियों में जो प्राप्त हो सके अवश्य प्रातः

काम खाया करिये फिर देखिये चन्द रोज़ में कैसा फ़ायदा मालूम होता है ॥

दूसरा भोजन ॥

इसका नियम दिन के एक पहर के ऊपर और दो पहर के भीतर लिख चुके हैं । इस वक्त के भोजन लायक उत्तम यह वस्तु है, मूंग और उर्द की धुली हुई दाल क्योंकि इन दोनों का छिलका शुष्क है कानपुर से लेकर पूर्व में प्रायः लोग अरहर की दाल ज्यादा खाते हैं हैं लेकिन जहां तक परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है केवल अरहर की दाल खाना अति हानि कारक हैं इन सबों के गुण आगे प्रकाश करैंगे । चावल दूध, घी, चिनी, मुलायम, तरकारी और मांस, किन्तु मांस का शास्त्र विहित खाद्याखाद्य की अनुमति आगे देंगे । इस समय केवल इतनाही दिखलाते हैं कि बिना घी दुग्ध अर्थात् बिलकुल रूखाही अन्न खाना बड़ा निषेध है क्योंकि निरा रूक्ष (अरहर चना की दाल रोटी) और रूखा अन्न (चना अरहर और मटर का बरअस) ये पचे हुये गोलाकार हो कर ऊपर का हिस्सा उसका जल जाता है इससे मन्दाग्नि या कोष्ठबद्ध होने का संभव है । दूध भात या दूध रोटी चिनी के साथ रोज भोजन के आदि में खाना शरीर को मोटा और बलवान करता है । दालभात दालरोटी और खिचरी के साथ घी खाने से खाना अच्छी तरह हज़म हो जाता है एवं कोष्ठ परिस्कार और मन्दाग्नि का नाश होता है । यह भी याद रखने के योग्य है, जैसा किसी कवि ने कहा है ॥

"शतंविहाय भोक्तव्य सहस्रंस्नानमाचरेत् । लक्षंविहाय दातव्यं कोटिंत्यक्त्वा हरिंभजेत्"

सर्व साधारण को उचित है कि सैकड़ों ज़रूरी काम को छोड़ समय पर भोजन करैं क्योंकि भोजन काल के पहले ही खा लेने से सामर्थ्य की हानि, सिरमें दर्द और विशूचिका आदि बीमारी उत्पत्ति होने का डर

है इसी तरह भोजन के समय को खिला कर खाने से वायु का विकार, मन्दाग्नि अरुचि अजीर्ण रोग पैदा होता है। सुतरां नियमित समय पर भोजन करना अति लाभ दायक है। कोष्ट अर्थात् जहां भोजन किया हुआ पदार्थ एकत्रित होता है उसको चार भाग मान कर दो भाग अन्नादि से, १ भाग जल से परिपूर्ण करना और एक भाग वायु के सञ्चार के लिये खाली छोड़ देना चाहिये॥

भोजन का तीसरा समय॥

चार पांच बजे शाम को समस्त द्रव्योपार्जनादि कामों से निवृत्त हो शौचान्तर शुद्ध चित्त हो बतौर जल खवा के कोई पुष्ट कारक लड्डू या आगे लिखित में जो मुनासिब समझे खाकर थोड़ा जल पी ले बाद इसके कामोद्दीपन मसाला से पूरित बंगला पान का एक बीड़ा खा स्वच्छ निर्मल और इत्र गुलाबादिकों से वासित हलका वस्त्र पहन हाथ में छड़ी ले मन प्रसन्न और श्रम निवारणार्थ किसी बग़ीचे में या ऐसे स्थान में एक आध घंटा घूमने के लिये निकल जाय जहां हर एक अपने परम प्रेमियों से मेल मिलाप हो, या किसी उत्तम हवा दार दिव्य स्थान में बैठ कर दिल बहलाने वाली किताब देखे या सितार आदि रमणीक बाद्य बजावे या सुने, या अपने परम इष्ट मित्रों से वार्तालाप करे इन व्यवहारों से परिश्रम की जो हरारत है बिलकुल जाती रहती है, चित्त प्रसन्न और धातु पुष्ट होता है, एवं उस व्यक्त को गजले की बीमारी स्वप्न में भी नहीं हो सक्ती है॥

कपिकच्छु (केवाछ) पाक॥

केवाछ के बीज की गरी ऽ।॥ दूध ऽ४ चिनी ऽ२ छोटी पीपर, सिंघ जायफल, तज, तेजपात, लायचू, छः छः मासा, जावित्री और केशर चार चार मासा, छोटो लायची, बंशलोचन, पुनर्नवा, सफेद मूसली, सफेद चन्दन, अगर और अकरकरहा, एक २ तोला, कस्तूरी एक या दो मासा

कपूर ३ मासा, बदाम पिस्ता किसमिस और मुनक्का आधे २ पाव इन सब दवाइयों को अलग २ कूट कपड़ छान कर ऊपर कहे हुये गोखुरू पाग की तरह इसे तैय्यार कर बादाम आदि मेवा डाल तीन २ तोले का मोदक बना ले प्रत्यह संध्या समय एक लड्डू खाकर ऊपर से पाव आध पाव दूध पी लेने से सब प्रकार का प्रमेह नाश होता है ॥

"तत्रापिक्षीण देहस्य वलपुष्टि विवर्द्धनम"

कैसाहू दुर्बल और बल हीन पुरुष क्यों न हो कुछ काल पर्य्यन्त इसके सेवन से अवश्य बली और पुष्ट होगा ॥

यदि उक्त पाक न बन सके तो मखाने को घी में तल कर चिनी या मिश्री में पाक बना लें । रोज संध्या समय तीन चार तोला खाकर दूध या जल पीले अगर यह भी न हो सके तो सिर्फ पाव या आधसेर अधावट दूधही पीले क्योंकि उस समय कुछ न कुछ खाना बहुत ज़रूरी है ॥

चौथा रात्रि भोजन ॥

. यह तो लिखो चुके हैं कि एक प्रहर रात के भीतरही भोजन करना उत्तम है कि । बहुत से लोग ऐसे भी देखे जाते हैं जो १२ बजे रात को आहार करते हैं पर यह बिलकुल वाहियात है क्योंकि भोजन वास्तविक न परिपाक होने से सबेरे दो तीन दफे दस्त आना पड़ता है और कुछ डकार या गले में जलन होती है ॥

अति लाभदायक शिक्षा ॥

शरीर के आरोग्य कारक अनेक विषय ऐसी हैं जिन्हे याद रखने से सर्वसाधारण जन प्रति दिन क्या प्रति मुहूर्त लाभ उठा सक्ते हैं सुतरां आत्म हितकारियों को उचित हैं कि निम्नलिखित बातों पर अवश्यमेव ध्यान दें ॥

१ भोजन से उदर को बहुत नहीं भर लेना चाहिये क्योंकि अधिक खाने से बदन बेकार और निकम्मा हो जाता है ॥

२ एक आहार जब तक न पच जाय तब तक दूसरा आहार कभी न करना चाहिये क्योंकि इससे अग्नि का दीपन पाचन बल घट जाता है ॥

३ भोजन करके ततक्षण स्त्री प्रसङ्ग कदापि न करना चाहिये इससे निश्चयही उदर शूल और अण्डवृद्धि हो जाता है ॥

४ अति भूख लगी हो तो पानी पी कर पेट न भर लें कारण यह है कि जलोदर रोग होजाता है, इसी तरह अति प्यास में अन्न खा लेने से गुल्म रोग होता है ॥

५ प्राणी मात्र को छः घंटे से कम और आठ घंटे से ज्यादा नही सोना चाहिये। क्योंकि छः घंटे से कम सोने में मस्तिष्क में निर्बलता और आठ घंटे से अधिक सोने में शरीर में भारी पन और आलस्य प्राप्त होती है ॥

६ शरीर पसीना से आर्द्र हो तो जब तक पसीना न सूख जाय या कपड़े से अच्छी तरह न पोंछ लिया जाय तब तक आकाशी हवा विशेष कर पूर्व की वायु न लगनी चाहिये और न स्वेद युत शरीर पर पानीही पड़ना उचित है सबब यह है कि इन दोनों कारणों से स्नायुओं में वायु के कोप से दर्द होने लगता है ॥

७ दिवसान्तेपिवेद्दुग्धं निशान्तेशीतलंजलं। भोजनान्ते पिवेत्तक्रं किमन्यैर्भेषजैर्नृणाम् ॥

सन्ध्या समय दूध पीना अति लाभदायक है, इसी लिये शास्त्रकारों ने धातु वर्द्धक द्रव्य सन्ध्याही को खाना लिखा है और धातु वृद्धिकारक द्रव्यों में दुग्ध प्रधान द्रव्य है ॥

"धातुपुष्टि अरु बलवरन जोकोई पूछे आय।
पय समान औषध नहीं जगमें दियो बताय॥"

८ प्रति दिन सूर्योदय के पहिले कुछ अंधकार रहते में एक सेर या जितनी इच्छा हो बासी जल पीने से सब रोगों का नाश और १०० वर्ष की आयु होती है, और यह क्रिया अर्श, शोथ, कुष्ठ, मूत्राघात, रक्तपित्त, अम्लपित्त, मेद और उदर, नेत्र, कर्ण, गल शिर रोग एवं वस्ति शूल और त्रिदोष को नाश करता है पर यह भी याद रखने योग्य है कि सोते से उठ कर तत्काल जल न पी ले दश पन्द्रह मिनट ठहर के जल पीना उचित है। उसी काल में नाक से बासी जल पीने से बुद्धि और दृष्टि की वृद्धि एवं जल्द बाल का पकना, स्वरभंग, पीनस, कासश्वासादि अनेक रोग नाश होते हैं॥

९ भोजन के अन्त में तक्र अर्थात् माठा पीने से भोजन अच्छे प्रकार पच जाता है॥

१० (उदके आत्मानं न पश्येत्) पानी में अपना मुख न देखना चाहिये सबब यह है कि दृष्टि रक्षक नस में वायु का कोप होता है॥

आयुर्वेद (वैद्यक शास्त्र) के जानने वाले मियवर "व्याधशाकुनिक पतितपापकारिणां नप्रतिकर्तव्यं एवंविद्या प्रकाशते मित्रयशोधर्मार्थ कामांश्च प्राप्नोति" सब के तथा ग्राम पशुओं के मारनेवाले (गोघातक म्लेछ) पक्षियों के मारने वाले तथा पतित (जो हिन्दू ईसाई हो गया हो और खाद्याखाद्य का विचार न रखता हो) और पापियों की औषध न करना इस आचरण से विद्या सफल होती है लोक में मित्रता बढ़ती है यश होता है धर्म, अर्थ काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं॥ सुश्रुत

जब कि दूध घृत उत्तम अन्नादिकों से शरीर पुष्ट और बलवान रहता है तो मांस खाने की कोई ज़रूरत नहीं है। मांस खानेवाले इस को बहुत कुछ समझते हैं और ऐसाही है भी लेकिन विचार करना चा-

हिये कि किस समय पर किस चीज की आवश्यकता होती है। स्वास्थ्य में मांस खाना व्यर्थ है और देखला सक्ते हैं कि और २ पदार्थ खा कर के मांस की अपेक्षा अधिक फल पा सक्ते हैं, तो अच्छे बिच्छे में भी पशु का खाना पशुओं का काम है, अब की तुम्हारे खिया चन्द तरह के वस्तु खाने पीने के लिये ऐसे तैय्यार हैं कि जिनके खाने पीने से दिन प्रतिदिन बलिष्ठ और पुर्षार्थी हो सक्ते हो तो क्यों वृथा मांस खाकर बदनाम होते हो। तुम्हारे पूर्व के पुरषे जिनका इतिहास दिन रात बांचा और सुना करते हो। वे तुम से किस बात में कम थे, क्या वे मांसाहारी थे? कभी नहीं। विचार करके देखिये भारतवर्ष, चीन, और जापान में करीब ३० किरोड़ बौद्ध मत वाले हैं और सब लोग जानते हैं कि वह लोग कुछ कम जोर नहीं हैं और यह भी नहीं है कि इन लोगों की जिन्दगी थोड़े दिन की होती है इस लिये हे प्यारे बांधवगण दया की हालत को छोड़ जहां तक बन पड़े मांस भक्षण त्याग करो इसमें तुम्हाराही कल्याण है॥

गरमी के दिन बीत जाने पर हलके कपड़ों को क्रमशः बदलना चाहिये जाड़े के दिनों में शरीर रुईदार और ऊनी कपड़ों से आरोग्य रहता है॥

जाड़े के दिनों में लोग रात को शयन करने के मकान की किवाड़ बन्द रखते हैं चाहिये कि सूब तड़के उठ किवाड़ और खिड़कियों को कुछ काल तक खोल रक्खा करें क्योंकि ख़राब हवा जो रात में इकट्ठी होती है निकल जाती है॥

मद्यपान इस देश में जैसा फैला हुआ है और फैला जाता है उसका कारण गुप्त नहीं है विद्वान लोग सभी जानते हैं। जहां तक आयुर्वेद द्वारा अवलोकन किया जाता है मद्यपान (जो सिर्फ नशा करने के लिये पीते हैं) किसी तरह पर गुणदाई नहीं हो सक्ता बल्कि अनेक तरह के रोग पैदा हो सक्ते हैं प्रत्यक्ष है कि इसी की मित्रता मानो अपनी काल को बुलाना है, प्रायः देखने में आया है कि इसके पीते २ कितने लोग हो

फार और पागल हो गये हैं । अति सुरापान से मस्तिष्क का नाश और बहुत से रोग, यक्ष्मा, स्वास और काश पैदा हो जाते हैं और रक्त का कोई उपद्रव उठना तो शङ्काही नही है और यह भी है कि जो अति सुरापान से रोग होता है उसे असाध्यही जानना चाहिये फिर धन्वन्तर भी उसकी चिकित्सा नही कर सक्ते हैं, इसलिये हे प्यारे भ्रातृगण दवा की हालत को छोड़ और किसी तरह पर सुरापान करना उचित नहीं है बाकी बयान सुरा के प्रकर्ण में करेंगे ॥

बहुत तम्बाकू और चुरट को भी पीना न चाहिये क्योंकि इसके अभ्यास से आंत, फुफुस (फेफड़ा) हृतपिंड (दिल) मस्तिष्क और दांत कमजोर हो जाते हैं । क्योंकि शीतल वायु से दिल की ताकत कायम रहती है और आभ्यन्तरिक आशय मजबूत होते हैं इस हेतु दवा के अतिरिक्त तम्बाकू आदि का पीना वाहियात है ॥

सात आठ बजे रात को एक मरतबे न सो के एकबारगी रात को पढने से और अधिक श्रम करने से बुद्धि तीव्र नहीं रहती इसलिये नियम के साथ दिनही में या तीन चार बजे रातको उठके पढ़ना उत्तम है लेकिन चिमनी या किसी किस्म की तेज रोशनी को आखों के सामने रख कर पढ़ने से नेत्र कमजोर हो जाते हैं इसलिये यदि रातको पढ़ना होतो नेत्र को बचा कर रोशनी रक्खे या लम्प पर हरी चिमनी लगावे या चिमनी पर आड़ रख कर पढ़ सक्ते हैं ॥

जाड़े के दिनों में जो मकान सीड़ या पानी से तर रहता है उस मकान में बिना अग्नि रक्खे रहना निषेध है क्योंकि जाड़े के ऋतु में बहुत अधिक सरदी से अलग रहनाही उत्तम है, कारण यह है कि इस ऋतु में अति ठण्ढ जल हवा और सरद आहार आदि के सरदी को अधिकता से ज्वर खांसी आमवात और अतीसार आदि रोग पैदा हो जाते हैं ॥

बिना जाने बूझे और परिक्षा के किसी के हाथ से कुछ चीज विशेष

कर पान का बीड़ा न खाना चाहिये इसी प्रकार मूर्ख वैद्य (अताई) के हाथ की दवा खाना और जहर खाना दोनों बराबर है क्योंकि शास्त्रकारों ने इस बात का बड़ाही निषेध किया है, कारण यह है कि:—

औषध्योऽमृतकल्पास्तुशस्त्राशनिविषोपमाः। भवन्त्यज्ञैरुपहृतास्तमादेतांविवर्जयेत् ॥

औषधि जो अमृत के समान हैं वे उन अशिक्षित वैद्यों के हाथ से शस्त्र वज्र अथवा विष के समान हो जाती हैं इसलिये मूर्ख चिकित्सकों के हाथ की औषध कभी न खाय ॥

स्नेहादिष्वनभिज्ञोयःक्रियासुचकर्मसु। सनिहन्तिजनंलोभात्कुवैद्योन्रपदोषतः ॥

जो वैद्य समयपर पसीना देना अथवा छेदनभेदन (चीरफाड़) आदि क्रियाओं को नहीं जानता वह लोभ से रोगी के प्राण को नाश कर देता है और उस हत्या से राजा पापी बनता है क्योंकि उसने अपने राज्य में ऐसे मूर्ख को चिकित्सा करने का अधिकार क्यों दिया ॥

जो वैद्य केवल शास्त्र को जानता है और कर्म को नहीं जानता इसी तरह जो क्रिया को जानता है परन्तु शास्त्र के बोध से रहित है वह वैद्य रोगी को पायकर घबड़ाय जाता है जैसे कातर पुरुष रण में घबड़ा जाता है राजा को उचित है कि ऐसे वैद्य को मरवा डाले। फिर आज कल बहुत से वैद्य ऐसे भी देखने में आते हैं कि कुछ पढ़े लिखे तो हैं पर उसके तत्व (भीतरी मतलब) को बिलकुल नहीं जानते तो वस मनुष्य चाहे सब शास्त्र को पढ़ ले परंतु बिना अर्थ के जाने वह शास्त्रज्ञ नहीं कहलाता केवल शास्त्रों का भार उठाने वाला है। "यथा खरश्चन्दन भारवाही भारस्यवेत्ता नतुचन्दनस्य" जैसे गधे पर चन्दन लादने से गधा केवल चन्दन के भार को जानता है परंतु उसकी सुगंध को नहीं जानता ॥

सुबह का उठना॥

अगर आदमीको सवेरे उठना होतो उनको रातको सवेरेही सोना ज़रूर है। बहुत रात आ जाने पर जो सोते हैं वे सवेरे बिछौना परसे नहीं उठ सक्ते। अगर वह उठें भी तो कुछ फायदा न होकर बहुत तरह की खराबियां पैदा होती हैं बदन दुबला और रोगी हो जाता है, सिर भारी मालुम होता है, आंखों में जलन होती है और किसी काम में करनेही में उत्साह नहींहोता। इसलिये अगर भोर के वक्त चार पांच बजे बिछौना पर से उठने का नियम करना हो तो रात को नव दस बजे सोने का अभ्यास करना पड़ेगा और यही करना उचित है॥

रात को ज्यादे न जाग कर सोने की आदत लगाने से सुबहको उठ कर अपना काम अच्छी तरह हो सकता है सिर्फ इतनाही नहीं होता पर इससे बहुत तरह की आफतें, डर और बुरी बुरी बातोंसे भी बचाव होता है। आधी रात के अँधियारे में छिप कर और इसे सुयोग समझ कर बहुत से लोग अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारते और नरक का द्रवाजा खोलते हैं और अन्तको जन्म भर पछताया करके भी अपने किये हुए बुरे कामों के फल से छुटकारा नहीं पाते ऐसे भी आदमी बहुत से देखने में आते हैं कि जो अपने किये हुए बुरे कामों का फल अपने लड़के बालों तक फैलाते हैं और उनके बिचारे लड़कों को निरपराधी हो कर भी अपने पिता के किये हुए बुरे कर्मों का फल भोगना पड़ता है। ऐसे नरक के जाने वाले, अपनी सी जिन्दगी में दाग लगा कर सिर्फ आपही दुःख नहीं भोगते पर इस पृथ्वी पर के बहुत से दूसरे मनुष्यों को भी दुःख सागर में डुबाते हैं ऐसे आदमियों के जिन्दगी पर धिक्कार है।

भाइयो, तुम कभी भी इस तरह की बुरी चाल मत कबूल करना। हर रोज़ मन करके रात को ९,१० बजे सोने की आदत लगाओ और भोर को चार पांच बजे उठो और जन्म भर इसी नियम का पालन करो इस नियम के चलने से हिसाब करके देखो कि जिन्दगी के दिन कितने

बढ़ जाते हैं। एक आदमी चार बजे हर रोज, उठ कर अपना काम शुरू करता है। और दूसरा आदमी छः बजे उठ कर काम शुरू करता है। यदि वे दोनों रात के एकही वक्त सोवें तो ४० बरस के बाद मालूम पड़ेगा कि पहिला आदमी दूसरे से १० बरस ज्यादे बचा। इस तरह हिसाब करने का मतलब यही है कि असल जिन्दगी क्या है? इस बातको अगर अच्छी तरह सोचा जाये तो, बचपन का खेल, स्नान, खाना पीना सोना, आराम वगैरह कामों में जो वक्त बीतता है वह छोड़ कर सिर्फ कई घंटे जो हमलोग हकीकत में अच्छे कामों में बिताते हैं उसी का नाम असल जिन्दगी रखने से, भले कामों में, मनुष्य के जीवन का बहुत ही कम वक्त खर्च होता है, यह तो साफही जाहिर है इस तरह हिसाब करने से जो जितना ज्यादे काम कर सकता है उसको उतनाही बड़ी जिन्दगी का आदमी कह सकते हैं और इसी लिये उन दोनों आदमियों में एक आदमी दूसरे से दस बरस ज्यादे जीआ॥

एक बड़े ज्ञानी ने कहा है कि, सुबह इसकी हवा में कोई ऐसी एक चीज है कि जिससे लाल खून की तेजी बढ़ती है। सारा शरीर तेजस्वी होताहै, ओंठ लाल होते हैं और बदन सबही जगह से सुडौल होता है इसलिये मैं कहता हूं भाई यदि तुम दीर्घजीवी होना चाहो, झरझर आवाजसे जिस तरह निर्मल जलका सोता बहताहै उसी तरह अपनी नसों में खून बहै यह चाहते हो तो अपना बिछौना सुबह को तड़के छोड़ो और परिंदों की भांति निहाल हो कर ईश्वर का भजन करते हुए फिरने को बाहर निकल जाओ। तब यह मालुम होगा कि मनुष्य इस जिन्दगी में कितना सुखी हो सकता है। यदि इस जन्म में मनुष्यों के उपकारका कोई बड़ा काम करना चाहो यदि अकाल मृत्यु से बच कर बुढ़ापेमें सुख से ईश्वर का भजन करते हुए प्राण देना चाहो, तब सदा करके नियम के साथ तड़के उठो, सूर्य्य निकलने के पहिले आलस से भरेहुये बिछौना को छोड़ो घर की रुकी हवा से बाहर निकल आओ। थोड़ी देर तक साफ और ठण्ढी हवा खाओ। ईश्वर का नाम ले कर उत्साह के साथ काम में

लगो, तभी तुमको मालुम होगा कि तुम कितनी तरक्की करते हो और कितना काम कर डालते हो तुम अपना काम अपनी तरक्की और फुर्ती देख कर आश्चर्य में आ जाओगे ॥

ऋतु ॥

शरद ऋतु ।

शरद्ऋतु सब मुनियोंकी सलसे कुआर कार्तिक गिने गये हैं । सुश्रुत में भी इसी प्रकार पहिले ऋतु का वर्णन किया है पर दोनों के एकट्ठा होने और कोप करने और उनके सम के लिये दूसरे प्रकार ऋतु संज्ञा बांधी है जिसको सब वैद्यक शास्त्रानुयायियों ने अङ्गीकार किया है । वे भादों कुआर को वर्षा कहते हैं और कार्तिक अगहन को शरद ऋतु कहते हैं । यथार्थ में भी दोषों का एकट्ठा और कोप होना आदि इसी प्रकार की ऋतु बांधनेही से ठीक होता है ॥

यह ऋतु मनुष्यों के स्वास्थ्य और शरीर संशोधन में जैसा लाभ दायक है सभी जानते हैं । इसी ऋतु में स्नेह, स्वेद, वमन, जुलाब और रक्त मोक्षण (फस्त लेना) उत्तम होता है । इस ऋतु में खाने, पीने का समय अवश्य ठीक २ रखना चाहिये । आजकल प्रायः अग्नि मन्द और अजीर्ण द्वारा ज्वरादिक रोगोत्पन्न होने का सम्भव रहता है क्योंकि "वर्षासंचीयतेपित्त, शरत्काले प्रकुप्यति" वर्षा ऋतु का एकट्ठा हुआ पित्त, शरद ऋतु में कोप करता है । इसी हेतु शारङ्गधर ने विशेष कर १५ रोज अवश्य अल्पाहार करना लिखा है ॥

"कार्तिकस्य दिनान्यष्टौ चाष्टौ मार्गशिरस्यच । यमद्रंष्ट्रा समाख्याता स्वल्पाहारी सुखीभवेत्" ॥

कार्तिक शुक्ल पक्ष की अष्टमी से अगहन की अष्टमी पर्य्यन्त यम दंष्ट्रा संज्ञक दिन है इन दिनों में स्वल्पाहारी मनुष्य सुख से रहते हैं

इस ऋतु में पित्त समन कारक आहार विहार करना उचित है। जैसा कि, मूंग, पुराना चावल, जंगली जानवरों का मांस, दूध, मिश्री का सरबत, शहद, ताड़ी, गाय का दूध, आदि और जो २ समय के फलादिक हैं अपनी प्रकृति के अनुसार भोजन करे। वृक्ष की छाया, कपूर और श्वेत चन्दन का लेप कुछ चन्द्रमा की सेवा, सुगन्धित पुष्पों की माला, सफेद और हलका वस्त्र पहिरना, सुस्वादु शीतल तथा निर्म्मल जल पीना, आज कल प्रायः सभी जल निर्म्मल हो जाने के कारण पीना लिखा है। परन्तु आंसूद और नदी का जल जैसा गुण दायक होता है बयान करना वृथा है। लेकिन वह नदी जिसका जल कहीं से रुका न हो न गाय भैंस और घोड़ा आदि पशु वहां धोये जाते हों। जहां मनुष्य स्नान न करता हो धोबी कपड़ा न धोता हो। और शहर गावों के नाबदानों की मोरियां जहां पर न लगी हों। वहां का जल पीना उत्तम है॥

प्रायः जो नदी हिमालय से निकली हैं या जिसकी धारा बालू तथा पथरीली भूमि में तीव्र गति से बहती है उनका जल अति हलका, निर्मल और अमृत के समान होता है यह पूर्वकाल के सुश्रुतादि वैद्यों ने परीक्षा करके देखी है इसी कारण गंगा जी का महात्म यहां तक बढ़ गया है कि नाम लेने से पाप पलायमान होते हैं॥

(आंसूद जल की विधि)

प्रातः काल एक घड़ा में जल भर कर घाम में रख दो और रात्रि को वैसाही रक्खा रहने दो दूसरे रोज़ छान कर पीने को रख लो बाद उसी प्रकार घड़े को जल से भर कर फिर रख दो। यह जल सूर्य्य के किरणों से तपा और चन्द्रमा के किरणो से या अधो पतित ओस के अणु मात्रों से शीतल हुआ अमृत के समान हो जाता है। वात, पित्त, कफ, रक्त इनका सम कारक, बल वृद्धि कर, अरुचि क्षय, और मन्दाग्नि का नाशक एवं नेत्रों को अतिलाभ दायक है॥

निषेध।

खटाई, गर्म चीज, क्षार, मदिरा, दही, अलसी, तेल, ज्यादा नमकीन वस्तु, दिन का सोना, घाम व्रत करना, रात्रि जागरण, मैथुन। क्रोध और जो २ पित्त के बढ़ाने वाली वस्तु हैं सेवन करना सब वैद्यों ने शरद ऋतु में मना किया है इस सूत्र पर कार्तिक और अगहन के जितने पर्व हैं सब उत्तम भोजन विशिष्ट हैं। जैसे दिवाली, अन्नकूट, भ्रातृद्वितीया, रासपूर्णिमा, देव उठानी एकादशी को भी यहां सब प्रकार उत्तम फल फूल भोजन करते हैं। वर्षा रितु का उत्पन्न चीजें विष्णु को पहिले समर्पण की जाती हैं। इसका कारण यही है कि वर्षा ऋतु में सब औषधियां निरस और विदाह करने वाली रहती हैं वे शरद ऋतु में रस युक्त और बलवती हो जाती हैं और आजही काल की संग्रहीत औषधियां साल भर गुण दायक रहती हैं। यह भी एक प्रधान कारण है कि बनियों के यहां की औषधियां कुसमय के संग्रहीत होने से रोगों पर अपना यथार्थ गुण नहीं दिखातीं॥

हेमन्त ऋतु।

पौष और माघ महीने को हेमन्त ऋतु कहतेहैं। आज कल अग्नि की तीव्रता से भोजन यथावत पच कर उसका रस शीघ्र खिंच तमाम शरीर में पहुंच जाता है "तस्मात् स्निग्धं तदाहितम्" सु० इससे स्निग्ध पदार्थ अर्थात् घी दुग्ध आदि अधिक हित करता है। यही कारण है जो इस ऋतु के खाने पीने में प्रायः आयुर्वेद ग्रंथकारों ने स्निग्धही स्निग्ध लिखा है और प्रत्यक्ष भी है कि कैसाहू निर्बल क्यों न हो जाड़े में अवश्यही कुछ अधिक खाने लगता है। हम निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि इस ऋतु में जो मनुष्य संयम सहित बलिष्ट धातुत्पादक द्रव्य भोजन करते हैं उनका बल एक वर्ष तक कदापि नहीं घटता। इस ऋतु के खाने योग्य पाक॥

मूसली पाक।

मूसली सफेद देहली की ऽ। गौ का दूध ४ सेर, घी पाव भर, चीनी २ सेर, जायफल, लौंग, केशर, सोंठ, पीपर, मिर्च जावित्री ए सब छः २ मासा छोटी लायची, त्रिफला सब, तेजपात, जटामासी और नाग केशर ए छ चीजें एक२तोला। केवांछ का बीज, धनियां और बंशलोचन दो २ तोला, पहिले सब दवा को अलग २ कूट कपर छान कर ले। दूध को एक कड़ाही में डाल औंटाये जब देखे कि तीन हिस्सा दूध जल गया एक हिस्सा बाकी है तब मूसली के चूर्ण को उसी में डाल खूब घोंट ले जब खूब गाढ़ा खोआ के मानिन्द हो जाय तब उसी में घी डाल खोये को खूब भूंजे जब महक उठने लगे और रवा उसका बिखर जाय उतार ले। बाद चीनी की गाढ़ी चासनी बना उसी में खोया और सब दवा को मिला ऊपर से बादाम की गरी आधपाव पिस्ता आधपाव चांदी का वर्क २० डाल आधी २ छँटाक की गोली बना ले प्रातः और सायङ्काल एक गोली खा के ऊपर से पाव भर गौ के दूध पीने से अवश्य प्रमेह आदिक रोग आराम हो बल वीर्य्य बढ़ता। वैद्यक शास्त्र, में हर एक पाकों के गुण यहां तक लिखा है कि खाने वाला कामदेव से अधिक रूप और बृहस्पति से भी अधिक विद्वान हो जाय परन्तु परिक्षा लेने से ज्ञात हुआ कि जिस तरे हरएक स्तोत्रों में कवियों की तरंगे चुनीं हैं उसी प्रकार यह भी है॥

रतिवल्लभाख्य बृहत्पूंगीपाक॥

दक्षिणी चिकनी सुपारी डेढ़पाव, गौ का दूध ५ सेर, चिनी ढाईसेर, घी पावभर, छोटी पीपर, जायफल, जावित्री, तेजपात, सोंठ, लौंग, केशर, गजपीपर, कचूर, मेथी, छ २ मासा। छोटी लायची, गुलसकरी, बरियारा के जड़ का छाल, दालचीनी, खस, सुगन्धबाला, मोथा, त्रिफला, बंशलोचन, शतावर, केवांछ का बीज, मुनक्का, तालमखाना, बड़ा गोखुरू छुहारा, तीखुर, धनियां, सूखा कसेरू और सिंघाड़ा, मुलेठी, बरी, जटा-

सालो, सौंफ, सफेद मूसली, असगन्ध, मिर्च, चिरौंजी, सेमर का बीज, कमलगट्टे की गरी, श्वेत चन्दन, और लाल चन्दन, ए सब एक एक तोला कस्तूरी, शुद्ध कपूर, अनबेधी मोती, गुलाब के अर्क की चेंटी चार २ मासा, बदाम की गरी और पिस्ता आध २ पाव, चांदी का वर्क २० सोनेका वर्क ५ सब दवाइयों को अलग २ कूट कपरछान कर पूर्वोक्त रीति से पाक बना उसी में सब औषध डाल आधी २ छँटाक का मोदक बना दोनों व सब एक २ लड्डू खा ऊपर से पावभर दूध मिश्री मिला के पिये। कुछ दिन बराबर इसके खाने से वीर्य्य अधिक बलवान हो क्लीवत्व नष्ट हो जाता है। और जिन मनुष्यों का वीर्य्य प्रसङ्ग में न रुकता हो तो इतनी औषध और मिला देय। अकरकरहा १तोला, समुद्रशोष, पोस्ता का दाना और भुनी हुई भांग छ २ मासा दूध का सोधा हुआ धतूरे का बीज ४ मासा॥

हेमन्तऋतु का पथ्य॥

घी, दूध, मांस, उर्द, मिश्री, ऊख, मद्य (बलकारक अर्क) और रित के फल इत्यादि प्रकृत के अनुसार खावे शरीर में तेल मर्दन, कसरत स्त्री प्रसङ्ग, अग्नि का सेवन पटे मकान में सोना गर्म जल का पीना इत्यादि इस रितु में वैद्यों ने उत्तम लिखा है तथापि पाठक गणको इस बात पर अवश्य प्रतिक्षण दत्तचित्त रहना चाहिये कि कौन सी बातें हमारे लिये बलप्रद हैं और कौन सी नहीं, यथा स्त्री प्रसङ्ग चाहै जो रित हो प्रतिदिन करना हाथी सरीखे बलवान को भी मटिया मसान कर मुर्दों के कोटि में कर देता है। यदि ऐसाही अति कामी हो तो इस रितु में आठवें रोज प्रसंग कर सक्ता है नहीं तो यही वेदानुसार मास २ में उत्तमहै "आगकाताप्रमा"चाहे जाड़ासेजाड़ा क्यों न पड़ताहो पित्तप्रकृत वाला और जिसको खून की बिमारी हो कदापि न चाहिये। अतिकाल तक घाममें रहना किसीरित में अच्छा नहीं है क्योंकि "श्रमपस्वेदमूर्छाशक्रपित्ततृष्णा क्लमःभ्रमः, दाहंविवर्णतांकुर्य्यादेतांआतपसेवितः" अर्थात् घाम में रहने से पसीना सिर में गर्मी रक्त पित्त पियास औंकाई पुनरो शरीर में जलन

और चेहरे का रंग काला पड़ जाता है, इन सबों की शान्ति छाया से होती है ॥



वसन्त ऋतु ॥

फाल्गुण और चैत्र महीने को वसन्त कहते हैं हेमन्त ऋतु का सञ्चित कफ आजकल कोप करता है। इस ऋतु में कसरत करना, शाम सबेरे हवा खाना, चिनी का सरबत आदि शीतल पदार्थों का सेवन करना व हुत फायदा करता है। परन्तु सबसे बढ़कर इस ऋतु में कै करना और जुलाब लेना उत्तम लिखा है और देखा भी गया है कि अच्छा जुलाब होने से शरीर हलकी और चित्त प्रसन्न हो जाता है। पर अंटकरपच्चू किसी की बनाई हुई कड़ी जुलाब ले लेना बिलकुल वाहियात है। कारण यह है कि जुलाब का पच जाना या तादाद से जादा दस्त का आ जाना शरीर के नाश कर डालता है। चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट इनका मत यह है कि बिना स्नेह घी आदि चिकनी चीज पी के नाड़ियों के मल को फुलाना (स्वेद) फूले हुये नाड़ियों के मल को पसीना के द्वारा बाहर निकलना (वमन) पित्त को ऊर्द्ध मार्ग से गिराना (जुलाब लेना उत्तम नहीं है। यूनानी हिकमत में लिखा है कि बगैर मुञ्जिस (दोष पकाए बिये) के मुस्सहल न लेना चाहिये। डाक्टरी में इसका कुछ विचारही नहीं है, इसी से डाक्टरी जुलाब यथार्थ गुण नहीं करता इस लिये हम आपलोगों के उपकारार्थ दो चार साधारण२ जुलाब लिखे देते हैं कि जिनमें सेवाय फायदा के हानि नहीं है ॥

मुञ्जिस हकीमी ॥

खीरा ककड़ी का बीज १॥ तोला, गुलबनफ्सा, गुलनीलोफर, गुलाब का फूल और काहू ये सब एक २ तोला, मुलेठी ८ मासा, उन्नाब १४दाना आलूबखारा २० दाना, लसोढ़ा २० दाना मुनक्का १५ दाना, सब दवां को

तब एसिड हाल शीघ्रही पी जाय। सोडा एसिड अंगरेजी दवा खाना में तो एक के आठ देना पड़ता है पर सौदागरों के यहां सोडा एक पौण्ड (आधसेर) ≡) का और टाटारिक एसिड ४ औंस (आधपाव) ≡) का मिलता है। एवं शीतल जल या बर्फ का पानी फायदेमन्द है, बर्फ का गुण प्रथम अङ्क में लिख चुके हैं बहुत से लोग जानते हैं कि बर्फ की तासीर गर्म है जब गरम है तो लोग जाड़े में क्यों नहीं पीते और शीत की बिमारियों में क्यों नुकसान करता है जानना चाहिये कि जो शीतल परिस्रुत जल (फिल्टर वाटर) का गुण है वही बर्फ का, रहा यह कि ज्यादा ठण्ढक की वजे से जल की अपेक्षा बर्फ का बिपाक किञ्चित अधिक गरम है॥

दिन को तःखाने में या पटे हुये मकान में और रात्रि को ओस में शयन करना गुण दायक है। दिन को शयन करना सेवाय ग्रीष्म ऋतु के और ऋतों में बर्जित है॥

सर्व्वर्तुषुदिवास्वापः प्रतिसिद्धोऽन्यत्रग्रीष्मात् प्रतिषिद्धेष्व पितु बालवृद्धस्त्रीकर्षितक्षतक्षीणमद्यनित्ययानवाहनाध्वकर्म्म परिश्रान्तानामभुक्तावतां मेदःस्वेदकफरसरक्तक्षीणानामजीर्णि नांचमुहूर्तं (घटिकाद्वयं) दिवास्वपनमप्रतिसिद्धम् सु० शा रीरस्था अ० ४॥

निषेध में भी बालक, वृद्ध, स्त्री क्षेशित फोड़ा से पीड़ित, धातुक्षीण बाला शराबी, घोड़े हाथी आदि की सवारी से या रास्ते का थका, भूखा, मेद पसीना रस और रक्त करके क्षीण और जिसे अजीर्ण सा बना रहता हो तो वे लोग दिन में दो घड़ी सो सक्ते हैं॥

दिवास्वापःप्रकोपाच्च कासश्वासप्रतिश्यायशिरोगौरवाङ्ग मर्दाऽरोचकज्वराग्निदौर्बल्यानिभवन्ति॥

दिन के सोने से मनुष्य को खांसी, स्वास, जुकाम शिर में भारीपन अंग में दर्द, अरुचि, ज्वर और शरीर दुर्बल हो जाता है ॥

रात्रावपिजागरितवतां वातपित्तनिमित्तास्ताएवोद्रवा भवन्ति तस्मान्नवात्ययाद्रात्रौ दिवास्वप्नञ्चवर्जयेत् ॥

यही रोग रात के जागने से वात पित्त करके होता है इसलिये दिन के सोवना और रात के जागना वर्जित है—ऐसाही यदि अति जरूरत रात के जागने की पड़े तो (रात्रावपिजागरितवतांजागरितकालादर्द्धं मिष्यतेदिवास्वप्नः) चाहिये कि जितना कालतक रातको जागे उसका आधा दिन को शयन करे ॥

यह भी सब पर विदित है कि और ऋतों की अपेक्षा इस ऋतु में उष्ण प्रकृत वाले को अधिक क्लेश मिलता है अतएव उन्हीं के कल्याणार्थ कुछ औषध लिखे देते हैं ॥

छ; मासा बिहीदाने को डेढ़पाव जल में एक मृत्तिका पात्र में भिगा कर रात को ओस में रखदे, सबेरे खूब मलकर लुआब निकाल लेय बाद उसमें एक तोला मिश्री डाल पहिले एक या दे। आंवले का मुरब्बा खा कर ऊपर से यही बिहीदाने का सरबत पी जाय। इसी प्रकार सबेरे भिजो कर किसी ठण्डे मकान में रखदे शाम को उक्त प्रकार सेवन करे। इसी प्रकार दो महीने बराबर पीने से अन्तस दाह, हौलदिल, घुमरी, सनलबायु, मिरगी और बातों का अधिक बिस्मृत होना जाता रहता है ॥

अन्यच्च ।

खीरा ककड़ी का बीज, धनियां, काहू का बीज, कुलफा, कासनी, गुलाब का फूल और सेवती का फूल दे। २ तोला खस सफेद चन्दन का बुरादा कमल गट्टे की गरी, सौंफ, मिर्च एक २ तोला छोटी लायची छ मासा सब को अधकचरा कर दे। दे। तोले की मात्रा बना ले एक मात्रा को पावभर जलमें रात को भिजो सबेरे खूब मल के छान कर दे। तोला

चिनी छोड़ पी जाय, इसी प्रकार दोनों समय पीने से अधिक फायदा करता है ॥

पेठे का मुरब्बा ।

पेठे का गूदा दो सेर चीनी दो सेर, पेठे के टुकड़े २ बना कर बांस की गुदनी से गोद कर चूने के पानी में घड़ी भर डाल रक्खे फिर सफा पानी से धो कर किसी तांबे के बरतन में थोड़े से पानी में डाल कर जोश दे जब पेठा आधा गलजाय उतार पानी से निचोड़ ठंढा कर ले। फिर बूरे की चासनी पका कर उसमें उन टुकड़ों को डालकर थोड़ी देर तक जोश दे जब शीरा उनमें भरजाय उतार कर ठंढा करले । जब देखे शीरा बहुत पतला हो गया है तो उसमें से पेठे को निकाल चासनी को थोड़ी और गाढ़ कर उसमें फिर पेठे को डाल देय बाद इसके सफेद जीरा, धनियां, तेजपात इलायची छोटी, मिर्च, बंसलोचन दो दो तोला, और चांदी के वर्क २० वर्को को चूर्ण कर मिला अमृतबान में रख दे । इसको शाम सवेरे खाने से रक्त पित्त ज्वर, छयी श्वासोश्वास, कासादि रोग छूट जाते हैं विशेष कर धातुक्षीण वाले को अधिक फायदा करता है ॥

ईश्वर ने मनुष्य के आरोग्य रहने के हेतु समय २ पर अनेक प्रकार के फलफलादिक उत्पन्न किया है चाहिये कि मनुष्य अपने मिजाज के मुआफिक देख अवश्य थोड़ा बहुत रोज २ फलों को खाया करैं इसलिये हम समय के फलों का भी कुछ गुण लिखे देते हैं

हिनवाना ।

इसमें कुछ निमक का भी अंश है सुर्ख बीजवाले में कृष्ण बीजवाला हिनवाना उत्तम होता है, (गुण) दूसरे दरजे का शीतल है इसका विपाक गर्म है धातु को क्षीण करता है और पित्त वर्द्धक एवं कफ वायु का नाशक है और कफ खांसी वाले को अधिक फायदा करता है ॥

खरबूजा ।

चतुर्थ श्रेणी में ठण्डा है, (गुण) वायु पित्त का नाशक एवं दिशा पेशाव साफ लाने वाला है विशेष कर सुजाक वाले को अधिक फ़ायदा करता है ॥

बेल ।

विशेष कर ग्रहणी और आमशूल को नाश करता है लेकिन बड़े बेल की अपेक्षा छोटा बेल किञ्चित गर्म है हलका और शीघ्र पचजाता है लेकिन स्वाद में कटु है ॥

फालसा ।

द्वितीय दर्जे का शीतल है स्वाद में कषाय और अम्ल है परन्तु पकने पर मीठा हो जाता है और खाने में भी मीठा ही फालसा गुण दायक होता है (गुण) दिल का धड़कना घुमरी पियास अन्तर्दाह रुधिर की गरमी, गरम ज्वर (वात पित्त ज्वर) धातु क्षय इन रोगों को आराम करता है विशेष कर चीनी के साथ इसका शरबत बड़ा फायदा करता है ॥

प्रावृट ऋतु

आषाढ़ और श्रावण महीने को प्रावृट् ऋतु कहते हैं ग्रीष्म ऋतु का संचय (संग्रह) वायु इस ऋतु में कोप करता है । इसलिये आज कल वायु शमनकारी आहारादि करने से वायु बलहीन हो जाता है । घी, दूध, इत्यादि भोजन एवं वदन में मट्टी लगा के कसरत करना अधिक फ़ायदा करता है ॥

आंम ।

इस ऋतु में ईश्वर ने मनुष्य के खाने योग्य एक उत्तम फल आम का

ऐसा उत्पन्न कियाहै जिसका प्रशंसा करना व्यर्थहै हम तो जानतेहैं स्वर्ग में भी इससे बढ़कर फल न होता होगा १ वैद्यक में आंम के गुण अधिक लिखे हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि आंम के सर्वाङ्ग में अनेक प्रकार के गुण भरे हैं ॥

आंम का फूल।

इसे छाया में सुखा चूर्ण कर बराबर की मिश्री मिला ६ मासा के अंदाज दोनों समय जल के साथ खाने से अतीसार, प्रमेह कफ पित्त, अरुचि रुधिर एवं दृष्टि रोग आराम होता है। परन्तु केवल वायु वृद्धि रोगी को कम फायदा करता है ॥

आंम की गुठली।

पके आंम की गुठली के भीतर की गरी का चूर्ण, खांड या दही के साथ खाने से वमन अतीसार और पेट का दाह हर लेता है ॥

आंम का पत्ता।

आंम के मुलायम नवीन पत्ते के चूर्ण से कफ पित्त का नाश होता है, दूसरे हरएक मंगल में इसका बन्धनवार बना कर घरमें बांधने से गृह की शोभा और देवता तक प्रसन्न होते हैं ॥

आंम पेशी अर्थात् अमचूर।

इसका स्वाद खट्टा और कसायला है पर खाने से दस्त साफ और कफ बातको नाश करता है ॥

आंम की खटाई।

यद्यपि खाने से कुछ धातु में विकार पहुंचाती है, पर लगाने से खुजुली विशेष कर मकरी के मूत से या और कोई फदकोले जानवर के छु जाने से शरीर में आवला सा पड़ जाता है वह शीघ्रही आराम होताहै ॥

लगाने की तरकीब।

आम की पुरानी खटाई २ तोला ढाक के पत्ते की ढिपुनी १ तोला मिर्च १० दाना सबको महीन पानी में पीस बाद सौ पानी का धोया हुआ घी छटांक घी में फेंट दोनों समय लगावे और एक मरतबे रोज नीब के पानी से धो डाला करै ॥

आंम का छाल।

आंम का अन्तर छाल २ तोला कुचल कर पावभर जल में रात को भिगा ओस में रखदे सबेरे मलकर छान २ माशा शहद डाल ७ रोज पीने से रक्त पित्त अर्थात् मुख से या दस्त से या दोनों रास्ते से पित्त के साथ लोहू का गिरना अवश्य जाता रहता है ॥

आम्रातक अर्थात् अमावट।

इसे इस तौर पर बनाते हैं कि पके आंम के रसको किसी काष्ठ या पत्थल आदि चिकने पात्र पर फैला के घाम में सुखावें, ऐसे कई बार सुखा २ के जमाता जाय उसीको अमावट कहते हैं। अमावट को लोग कई तरह से खाते हैं, इसका गुण, रेचक रुचिकारी, हलका और पाचन है एवं छर्दि पिपासा और वात पित्त का हरने वाला है ॥

कच्चा आम।

कच्चा आम बहुत खट्टा रूखा त्रिदोष और रुधिर में विकार उत्पन्न करने वाला है इससे कच्चा आम खाना अच्छा नहीं, लेकिन इसी आम से जब दूसरा पदार्थ बनता है तो उसका गुण औरही हो जाता है जैसे आचार आदि। आम का आचार तेलहा और नुनहा एवं आम का मुरब्बा और आम का सिरका यह सब लोग बना सक्ते हैं और इन चीजों का खाना भोजन के मध्य में उत्तम होता है खाली पेट आचार खाना अच्छा नहीं है ॥

सास ।

यह अंगरेजी आचार है और अंगरेजों में इसका खर्च अधिक रहता है, बनाने की तरकीब यह है कि हरे आम की छिली हुई फांकी आधसेर नमक ऽ। चिनी ऽ।= छीला अदरख ऽ॥ किसमिस ऽ॥ लाल मिरचा आधी छटांक निखालिस सिरका ऽ१॥ सिरके में सब चीज को पीस कर किसी बरतन में भर मुंह बन्द कर १५ या २० रोज तक घाम में रक्खे फिर उस को निचोड़ कपड़े में छान बोतल में भरले और जब किसी खानेको मजेदार करना हो तो उसमें से दस पांच बूंद डाल दे ॥

आम की जेली ।

तरकीब यह है कि दो सेर कच्चे आमों को छील के महीन कतरले डेढ़ सेर पानी में इतना पकावे कि वह खूब गलजाय जब देखे कि आधा पानी रह गया है उतार ले और पीले रंग के फलालैन के कपड़ेमें जिस प्रकार कुसुम चुआया जाता है उसी प्रकार छाने बाद टपकाये हुये अर्क के बराबर मिश्री या चिनी डाल चासनी पकाले और चिनी के बरतन या चौड़े मुख की बोतल में भर कर जमावे यह बड़े मजेदार चीज है खाने से मन प्रसन्न हो जाता है ॥

आम की चटनी ।

कच्चा आम छीला हुआ एक सेर शक्कर १ सेर नमक ऽ। लाल मिर्चा ऽ= अदरख ऽ। सूखा पुदीना ऽ। सिरका ऽ१ सब चीजों को सिरका में महीन पीस किसी आचार के बरतन में पांच व रोज घाम में रखदे बाद खाने के काम में लावे

आम का पाक ।

पक्के और मीठे आम का रस १६ सेर मिश्री ४ सेर घी १ सेर तीनों को एक कलईदार डेग में डाल चूल्हे पर चढ़ाय मन्दाग्नि से पकावे जब

खूब गाढ़ी चासनी हो जाय तब उतार शीतल कर उसमें यह दवा डाले मिर्च, धनिया, सफेद जीरा, तेजपात, दालचिनी, नागकेशर, छोटी लायची, बंसलोचन, अकरकरहा, यह सब दो २ तोला छोटी पीपर, लौंग, और जायफल यह सब एक २ तोला केशर ६ माशा कस्तूरी १ माशा चांदी का वर्क ३० साथ सहत ऽ। सब दवा को पीस उक्त चासनी में मिलाय अमृतबान में रखदे। एक छटांक सबेरे और एक छटांक शाम को खा,के ऊपर से दूध पीने से शरीर पुष्ट और स्वास कास आदि आराम होता है पक्का आम खाके ऊपर से दूध पीना अति गुणकर होता है॥

जल।

मनुष्य, पशु पक्षी कीट पतङ्गादि सभी जीव पानी की इच्छा रखते हैं और ईश्वर रचित द्रव्यों में से जल वह वस्तु है कि जिसके बिना क्षण भर जिन्दगानी नहीं रह सक्ती इसी तरह जीव से अन्य जड़ पदार्थ वृक्ष लता गुल्म, तृणादि यह भी जल के बिना व्याकुल हो जाते हैं और जल न पाने से शीघ्रही समूल नष्ट हो जाते हैं, इसी से वैद्यक में जल का प्रधान नाम जीवन रक्खा है "पानीयंप्राणिनांप्राणविश्वमेवचतन्मयम्" आहार के बिना तो कुछ काल प्राण रक्षा हो सक्ती है परन्तु जल के बिना जीवन रक्षा बड़ीही कठिन है। यह तो जल का अभाव हुआ, जल के प्राप्ति समय में भी यदि कुत्सित या विष दूषित जल मिला तो भी जीवन का विनाशही समझिये, क्योंकि ऋतु के विपर्य्येय अर्थात् शीतकाल में गर्मी और वर्षा काल में शीत होने से एवं अन्य २ कारणों से भी जल बिगड़ जाते हैं और बिगड़े जल के व्यवहार से शरीर में अनेक रोग हो जाते हैं॥

यह तो सभी जानते हैं कि भूख मारने की अपेक्षा प्यास मारना कठिन काम है। पर क्यों कठिन है और प्यास क्यों लगती है? इसका कारण यह है कि शरीर में जो चैतन्यता है वह रुधिर से है और वही रुधिर निरन्तर सम्पूर्ण शरीर की शिरा (भेइन) और सूक्ष्म २ स्नायुओं

(नर्भ) में दौरा करता है सो इसी गति के हेतु से रुधिर का जलीय अंश कम हो जाने से घन हो जाता है तब उस गति को समंजस करने के लिये रुधिर में फिर जलांश बढ़ाना चाहिये, यह इसी क्रिया से रक्त में खुश्की पहुंच कर मनुष्य को प्यास मालुम होती है । यह तो सिर्फ स्वाभाविक प्यास है इससे भिन्न और २ कारणों से भी रक्त का जलांश कम होने से तृष्णा लगती है । यथा, थूंक के अधिक गिरने से पसीना निकलने रोने और आंसू बहाने से एवं गर्म और अधिक क्षार पदार्थ के खाने से इसी तरह सोच, क्रोध, चिन्ता, कसरत और रास्ता चलने से जल पीने की इच्छा होती है ॥

यद्यपि प्यास लगने पर पानी पीना अच्छा है परन्तु बहुत सी जगह अपथ्य भी है जैसे रात्रि में उठि २ के पानी पीना नजला पैदा करता है, फल आदि जैसे खर्बूजा, सर्बूज आमरूद खीरा ककड़ी इत्यादि अनेक प्रकार के ऐसे फल हैं जिन्हें खाकर ऊपर से जल पी लेना खांसी और अजीर्ण रोग होने का डर हैं और बच्चों के लिये तो बहुत ही मना है, इसी तरह मैथुन और कसरत करने के उपरांत, बहुत मेहनत या रास्ते का थका हो तो पानी न पी ले क्योंकि इससे नाड़ियां निस्तेज हो जाती हैं । हमने हिकमत की किताब में यह लिखा देखा है, मनुष्य को उचित है कि मैथुन (स्त्री प्रसंग) के उपरांत जल पी लिया करै, वीर्य्य मानिन्द घी के है और तमाम जिस्म में रहता है वक्त मैथुन के गर्माहट पाकर वह पतला और पलायमान हो जाता है सो जल पी लेने से फिर वह गाढ़ा और ठंढा हो जाता है । पाठकगण, वैद्यक शास्त्र में मैथुन के उपरांत जल पीना अति हानि दायक लिखा है परीक्षा से यहां तक सिद्ध हुआ है कि यदि मैथुन के तत्क्षण उपस्थि को जलसे न धोकर रुमाल से पोछ लिया करै तो उत्तम है कारण यह है कि उस समय वह स्थान अति उष्ण रहता है इससे जल शीघ्रही भीतरी नसों में जाय उसे निर्बल और निस्तेज कर देता है मैथुन के उपरांत यथा,२ करना चाहिये उसे मैथुन के प्रसङ्ग में लिखेंगे ॥

अति क्षुधा में बिना कुछ भोजन के जल पी लेना अपथ्य है अर्थात्

अग्निमन्द हो के उदर रोग होता है। एक दिन में कई जगह का जल न पीना चाहिये जिस कुये या नदी या तालाब में छोटे २ कीड़े पड़ गये हों या कूड़ा करकट के गिरने से पानी सड़ गया हो या जिस कुये के समीप संडास हो तो उसमें का पानी न पीना चाहिये ॥

आज कल के रोगों के देखने से मालुम होता है कि मनुष्यों को स्वच्छ जल पीने को नहीं मिलता है सैकड़ों प्रकार के रोग मनुष्यों भ्रष्ट जल पान और दुष्ट वायु के सेवन से होता है, सब से उत्तम जल नदी का है सो नदी के जल पीने वाले भी प्रायः बिमारही रहते हैं, इसका भी सबब यही है, एक तो नदी और तालाबों में अनेक अस्वास्थ्य कर द्रव्यों के साथ जल ऊपर से बहकर आ मिलता है, दूसरे नदियों में गलीज़ कूड़ा और मुर्दे, अधजले मुर्दे, और जले हुये मुर्दों की राख डाली जाती हैं, तीसरे जिस घाट से पानी पीने के लिये लेते हैं वहीं या उसके थोड़े ही दूर पर लोग नहाते धोते औ जानवरों को नहलाते हैं और धोबी कपड़े धोते हैं, चौथे आज कल प्रायः उन घाटों में जहां कि लोग नहाते धोते और जल पीते हैं तमाम शहरों के नाबदानों का पानी बह कर आता है। इसी तरह अनेक विघ्नों से कुएं का भी पानी बिगड़ जाता है, जैसे कुयें के समीप संडास और मोरियों का होना पानी को गन्दा करता है, कुवों में मुड़ेर का न होना जिससे बरसात का मैला पानी चला जाता है, बाजे २ कुवों के पास जानवरों को पानी पिलाने और सड़क छिड़कने के हौद बने हैं उन हौदों का गन्दा पानी सूक्ष्म २ सूराखों से होकर कुयें में रसा करता है; फिर कुयें का मुख खुले रहने से पास के वृक्षों के पत्ते उड़ कर उसमें गिरतेहैं और मूस घुइस छिपकिली वगैरह जानवर भी गिर पड़ते हैं फिर अक्सर कुवों की जगत पर लोग नहाते और गलीज कपड़ा ऐसे ढंग से पछाड़ते हैं कि तमाम छींटा कुएं में आता है, उक्त सब कारणों से कुयें का पानी गन्दा हो जाता है ॥

ध्यान देकर देखने और परीक्षा-लेनेमें ज्ञात हुआ है कि भारत वर्ष में वात पैत्तिक ज्वर, विशूचिका, रक्त आमातिसार, श्लीपद (हाथीपांव)

और अण्डवृद्धि (फोते का सूजन) नजला आदि और भी बहुत से रोग हैं जो विशेष कर जलही के दोष से होते हैं ॥

भोजन के मध्य में प्यास लगने पर घूंट दो घूंट जल पी लेना अच्छा है परन्तु श्लेष्म प्रकृत वाले को जहां तक हो सके भोजन के अन्त में जल पीना उत्तम है । भोजन में एक रस के अन्त और दूसरे के प्रवेशमें (जैसे मीठा खाने के बाद नमकीन पदार्थ का खाना) पूर्व रस को जिह्वा से छुड़ाने के हेतु यदि तृष्णा हो तो एक घूंट जल पी ले नहीं तो सिर्फ जल से कुल्ला कर डाले क्योंकि "विशुद्धरसनेतस्मै रोचतेऽन्नमपूर्ववत्" इस तरह करने से जिह्वा शुद्ध रहती है और जो २ पदार्थ खाये जाते हैं उनका यथार्थ स्वाद मिलता है । जो लोग भोजन के सङ्ग अधिक जल पीते हैं उनका पेट बढ़ जाता है और अग्नि मन्द हो जाती है । भोजन के बीच में थोड़ा जल पीने से अग्नि तेज होती है अन्त में पीनेसे अंग पुष्ट और ताकतवर होताहै । भोजनके कुछ देर बाद बारम्बार थोड़ा २ जल पीने से शीघ्रही आहार पच जाता है ॥

जलका नाम ।

जल, पानी, सलिल, नीर, कीलाल, अंबु, आप, वार, वारि, तोय, पय, उदक, जीवन, अमृत और घनरस यह पंद्रह जल के मुख्य नाम हैं "यथानाम तथागुणः" जैसा नाम है वैसाही जल में गुण भी हैं ॥

सर्वसाधारण जलका गुण ।

घुमरी श्रम आंख के सामने अंधियारा का होना, प्यास, तंद्रा (आंख झपा रहना) वमन अजीर्ण और अति निद्रा को दूर करता है एवं बल को बढ़ाता है तर्पण, हृदय को हित और रस का कारण तथा अमृत के समान जीवन है ॥

तालाव के जलका गुण।



उत्तम भूमि में हमेशा जिसमें जल बना रहता है वह तड़ाग (तालाब) कहलाता है। तालाब का जल स्वादु में कषायल पाक में कडुआ और वायु का बढ़ाने वाला एवं मूत्र और विष्टा के बांधने वाला होता है और रक्त पित्त को नाश करता है। यही कारण है कि जो तालाबके जल पीने से अजीर्ण हो जाता है और स्नान करने से शरीर खजुवाने लगता है, सम्भव है कि यदि बङ्गदेश वाले बदन में तेल दरदी मल के स्नान न करें और अधिक तेल न खांय तो उनका जीवन ही कठिन हो जाय क्योंकि वहां तालाबहो में लोग नहाते धोते और उसी का जल पीते हैं याद रखना चाहिये कि बाबत किसी समय पर सेवाय तालाब के दूसरा जल पीने को न मिले तो अवश्य औषधियों के द्वारा जल शुद्ध कर लेना उचित है॥

बावली।

पत्थरों या ईंटों की सीढ़ियां जिस चौड़े कुये में नीचे तक बनाई जाती है उसको वापी (बावली) कहते हैं जो बावली का जल खारा होता है तो पित्त को वृद्धि कर शीत वायु को नाश करता है और मीठा होने से कफ.कृत और वायु पित्त का नाशक होता है॥

कुआं।

जो जमीन में सकड़ा गोल और गहिरा खोदा जाय जिस में की पानी निकल आए चाहे पक्का हो या कच्चा उसे कूप (कुआं) कहते हैं। जो कुयें का जल मीठा हो तो हलका और त्रिदोष नाशक एवं अग्नि और बल का वृद्धि करने वाला और मनुष्यों को अति हितकारी होता है और खारा होने से अग्नि मन्दादि अनेक रोग का करने वाला होता है॥

घुमरी, जी मचलाना, धुआं सा डकार आना, वमन और रक्त पित्त इन रोगों में जरूर ठंढा जल पिलाने से उपकार होता है ॥

शीतल जलका निषेध।

पसुली को दर्द में शीत युक्त वायु रोग में गले के दर्द में, हिचकी में, उदर शोथ और नवीन ज्वर में शीतल जल न देना चाहिये ॥

अति जल पीनेका निषेध।

अरुचि जुकाम मन्दाग्नि कोढ़ मधु प्रमेह (जिस मूत्र पर मच्छी बैठती हैं) फोड़ा, उदर रोग ज्वर और नेत्र रोग इन रोगों में जल बहुत ही थोड़ा २ पीना योग्यहै और बहुत जल एक बारगी पीलेना तो किसी अवस्था में सेवाय हानि के लाभदायक नहीं होता, क्योंकि ज्यादा मिकदार जल के पीने से अन्न का परिपाक नहीं होता और जब अन्न ही नहीं पचा तो बिमारी न पचनेमें या कोई नवीन बिमारी खड़ी होजाने में क्या असम्भव है। मनुष्य को उचित है कि जठराग्नि के बढ़ाने के लिये थोड़ा २ जल बारम्बार पीवे। प्रायः देखने में आया है कि अज्ञान लोग रोगियों को चित्त लेटे भी जल पिला देते हैं सोचना चाहिये क्योंकि "उत्तानशयनेपेयंकाश्यंमन्दाग्निदोपकृत्। वामदक्षिणपार्श्वेनपिबेत्तोयंसुखावहं" उत्तान सोये जल पीने से दुर्बलता और मन्दाग्नि आदि दोष बढ़ता है बांये और दहिने करवट जल पीने से आरोग्य लाभ होता है ॥



अद्भुत।

बहुत सी तरकीबें ऐसी हैं जिनकी करामात से एक प्रकार का तिलस्म जान पड़ता है। पर तिनका ओट पहाड़ही है जब तक उस तत्व को लोग सम्पूर्ण रूप से नहीं जानते तब तक उन्हें अचम्भा मालुम होता है, जहां जानगये फिर क्या यही कहेंगे वाह तिनका ओट पहाड़ ॥

पानी से सूखा बालू निकालना ।

साफ किया हुआ बालू या भरभूंजे का बालू या पत्थल को कूट कपड़ छान कर तीनपाव लेवे । एक छटांक मोम को गला उसी बालू में डाल ऐसा मल दे कि मोम बिलकुल न मालुम हो, बाद किसी बरतनमें भर कर रखदे । जब किसी को दिखलाना हो तो एक चौड़े मुंह का बरतन (जिसमें बन्धी मुट्ठी अच्छी तरह आ जा सके) ले पानी भर दे । यहा पर थोड़ी चालाकी चाहिये बालू को मुट्ठीमें भर मुट्ठीको उक्त पानी के अन्दर ले जाय चुपचाप बालू को रखदे कि बालू की पिण्डी न फूटने पावे ऊपर से पानी को गन्दलो दे ताकि लोगों को मालुम हो जाय कि बालू पानी में मिल गया तब हांथ को पानी से निकाल सबको देखा दे फिर पानी में हांथ डाल आहिस्ते से उसी बालू की पिण्डी उठा कर या हर लाय सबके सामने मुट्ठी के एक कोने से बालू झरझरा दे ॥

बिना आग के आग बल उठे ।

क्षोरो पुटास और चिनी दोनों बराबर ले एक में मिला दे किसी कागदार सीसी में रखदे, जब किसीको देखलाना हो तो थोड़ी सी वही दवा निकाल उसमें किसी ढङ्ग से एक बिन्दु गन्धक का तेजाब डाल दे, बस तेजाब के डालतेही बल उठेगा ॥

अदृष्टाक्षर ।

अगर चूने से सफेद कागज पर लिख कर सुखादो तो कुछ न पढ़ा जायगा, परन्तु जल में डालने से सब अक्षर सफेद देख पड़ेंगे ॥

दूसरा ।

पूर्वोक्त प्रकार दूध से लिख कर सुखाले, पानीमें डालनेसे नीले रंग के अक्षर देखने लगेंगे ॥

तीसरा।

नौसादर, नीबू या पियाज या लहसुन के रससे सफेद कागज पर लिख कर सुखा ले, आंच दिखाने से सुर्ख रंग के अक्षर देख पड़ेंगे॥

चौथा।

मदार के दूध से हथेली में लिख कर सुखा ले कुछ भी न मालुम होगा, जब दिखलाना हो तो थोड़ी सी राख लेकर हांथ में मल ले सब काले रंग के अक्षर देखने लगेंगे॥

मोम की वत्ती आपी आप वालने की विधि।

एक मोमबत्ती के सिरे पर फास्फोरस (यह एक दवा है हड्डियों के खार से बनती है) मद्य में घिस कर लगादो फिर रख छोड़ो देखाने के समय एक बिल्लौर की छड़ी एक तरफसे गरम कर बत्ती के ऊपर मारो और कहो जल उठ तो यह बत्ती खुद बखुद जल उठेगी॥

बिल्लौर की छड़ी में यह सुभीता है कि वह गरम भई मालुम नहीं होती है॥

वरतनपर चांदीचढ़ानेकी सहज विधि।

चांदी का वर्क ५ मूंगी फिटकिरी १५ रत्ती नौसादर १५ रत्ती सेंधा नमक १५ रत्ती तीनों को खरल कर किसी शीशी में रख दे जिस बरतन पर चांदी चढ़ाना हो उसे खूब मांज कर चमका ले बाद इसी पौडर से खूब मल दे, पर यह कलई कच्ची है॥

पीतल तांबा आदि वस्तुओंके साफकरनेकी रीति।

छोटी २ चीजें जैसा कि घड़ी के पुरजे चेन और वस्तुहों उन्हें चिमटी से थाम नाइट्रिक एसिड में डुबो शीघ्रही पानी में डुबादेय चमकने लगेगा॥

कांच की चीजों का बराबर तोड़ना।

गिलास शीसा या बोतल वगैरह जहां से तोड़ना हो वहां रेती से जरा निशान करदे फिर एक लोहे की सलाई खूब गरम करके उसपर फेरें तो ठीक बराबर जगह से वह टूटेगी॥

दूसरी तरकीब।

जहां से तोड़ना हो उस स्थान को थोड़ी सी तरपिटैं या मिट्टी के तेल में सूत का डोरा तर करके बांध दियासलाई से जला दे, जब जल कर बुत जाय तो वहां पर जरासा पानी डाल दे ठीक उसी जगह से टूटेगी॥

ऐने पर कलई करना।

जिस कदर बड़ा ऐना हो उतनाही बड़ा ताव शीशे की पन्नी जो बनियों की दूकानों में मिलती है मँगाले एक चिकने पत्थल पर कि जिसमें बाल समान भी कहीं रेखा नहीं हो क्योंकि जो कुछ करामात है यह पत्थलही में है अकसर कलई करने वालों के पास पत्थल बहुत उमदा रहता है। उसी पत्थल पर पन्नी को फैला दे और उसके ऊपर थोड़ा पारा (जितने में कि समस्त ताव में फैल जाय) डाल कपड़े की पोटली से चारो तर्फ फैलादे बस ऐने को ले एक तर्फ से उसी पन्नी पर सरका दे और उठा ले वह पन्नी शीसे को अच्छी तरह थांम लेगी और सुरत दीखने लगेगा। इसको

कारखाना देहली और कलकत्ते में बहुत है और इस काम के करने वाले प्रायः मुसलमान हैं यहां भी दो तीन मुसलमानों की दूकान हैं चाहिये कि हमारे एक आध हिन्दू भाई भी दुकान करलें ॥

तांबे के डेकची आदि पर कलई करना।

जिस बरतन पर कलई करना हो उसे इटकोहरा (पक्की ईंट का रवादार चूर्ण) और इमिली या आंम की खटाईसे खूब मांजे ताकि जरा भी मैला न रहे और बरतन चमकने लगे, तब उसे अग्नि पर रख खूब गर्म करे (ऐसा गर्म हो कि उसमें रांगा डालने से गल जाय और फैलाने से फैल जाय) तब उस गरम बरतन में रांगा डाल घन के गलायले, बाद इसके बरतन के चारो तर्फ नौसादर की बुकनी छोड़ कपड़े से गले हुये रांगे को जहां तक कलई करना हो आहिस्ते से चारो तर्फ फेर देय बस बहुत उत्तम श्वेत और चमकदार कलई हो जायगी। इस काम के करने वाले सिर्फ मुसलमानही लोग हैं और मुसलमानों के अतिरिक्त हमारे हिन्दू भाई विशेष कर कायस्थ और काश्मीरियों के यहां तो अवश्य ही कलईदार बर्तन रहता है और कलईदार बर्तन कहीं निषेध भी नहीं है और न वैद्यक मत से कलईदार बर्तन में खाना पकाना मना है पर हिंदू लोग अपने खाने पीने का बरतन मुसलमान को नहीं छुलाते इस लिये हरएक शहरों में एक दो हिन्दुओं की दूकान होनी चाहिये ॥

जरमन सिलवर।

३ भाग दस्ता धातु, दो भाग तांबा और तीन भाग निकेल यह भी एक प्रकार चांदी की आकार धातु है और बड़े २ सौदागरों के यहां मिलता है उक्त तीनों धातुओं को एकत्र कर गला देने से जर्मन सिल्वर बन जाता है ॥

पूटीन ।

आलमारी याकस और किवाड़ आदि के दराज या सांस को बन्द करने के लिये पुटीन तैय्यार की जाती है इसके बनाने की बहुत सी तरकीबे हैं परन्तु सर्व साधारण कार्य के लिये यह उत्तम है । पहिले थोड़ा सा टीसी का तेल अग्नि पर खूब पका ले बाद उसे अग्नि पर से उतार शीतल कर ले, अन्दाज माफिक जितने में तेल घन हो जाय लिखने की खरी कूट कर मिला दे और एक काष्ठ पर रख एक लोहे की हथोड़ी से खूब पीटे की पीटते २ अति कोमल हो जाय तब काम में लावे ॥

दो द्रव्यों के संयोग से अद्भुत पदार्थ का बनना ॥

असंख्य द्रव्य ऐसे हैं कि जो एक दूसरे के साथ मिल जाने से अति आश्चर्यित और बहुत से गुण गर्भित पदार्थ बन जाते हैं जैसे चूना और नौसादर । इन्हें भिन्न २ सुङ्घने से नाक को कुछ भी कष्ट नहीं मालुम होता पर इन्ही दोनों को एक में मिला देने से इसमें ऐसा एक प्रकार का तेज उत्पन्न हो जाता है कि लोग उसको नाक के पास तक नहीं ले जा सक्ते अंगरेजी में इसीको "इमोनिया" कहते हैं । परन्तु वह लोग इसको बड़ी सफाई के साथ तैय्यार करते हैं । नीचे लिखी हुई रीति से मिलाने में भी वैसाही तेज और वही फायदा होता है परन्तु इसकी तेजी थोड़े ही काल में जाती रहती है । खाने का चूना बुझा हुआ और नौसादर दोनों सम भाग ले एकत्र कर किसी कागदार सीसी में बन्द करले । यदि कोई आदमी किसी कारण से बेहोश हो गया हो या शीत से दांत बैठ गये हों तो इसके सुङ्घातेही होश में आ जाता है । जिस स्त्री को भूत प्रेत चुड़ैल लगेहों और बड़े २ झाड़ फूंक वालों से भी न कबूलती हो तो इसके सुङ्घा देने से फौरन तोबा करने लगेगी और कहैगी मैं फलनियां भग जाती हूं मम भूत प्रेत चुड़ैल सब भग जांयगे । परन्तु यह भी याद रखना चाहिये कि तीन मिनट से अधिक देर तक किसी को न सुङ्घावे

और बालकों को किसी अवस्था में न सुङ्घानी चाहिये। एवं उस आदमी को भी न सुङ्घाये जो किसी नशा के खाने से बेहोश हो गया हो। एक विशेष बात परीक्षाओं से और भी सिद्ध भई है कि जो बेहोश रोगी इस के सुङ्घाने से होश में नहीं आया तो फिर उसका होश में आना बहुत कठिन है॥

उन्हीं उक्त दोनों पदार्थों से पानी भी बनाया जाता है जिसको अंगरेजी में "एमोनियां वाटर" बोलते हैं और उसी अर्कको स्पिरिट के साथ मिलाने से स्पिरिट एमोनिया" कहलाता है और मोल लेने से अंगरेजी दवा खाने में ॥) का एक औंस (ढाई तोला) मिलता है॥

लेकिन यही अर्क यहां भी तैयार हो सक्ता है। उसकी तरकीब यह है कि नया चूना एक सेर पानी में भिगा दे और दूसरे एक बासन में आधसेर नौसादर को तीन सेर पानी में मिला के जोश दे जब खूब गर्म हो जाय तब उसीमें चूने का पानी भी डाल दे बाद ठंढा होजानेके उस पानी को आहस्ते से थोरा २ उड़ेल ले फिर उसी थोरे पानी को डेग में भर धीमी आंच से आधसेर अर्क टपकाले। इसका मात्रा २० बिन्दु से ६० बिन्दु पर्य्यन्त है। मूर्छा रोग में और सांप के काटने में डाक्तरी चिकित्सा की यह प्रधान औषधि है आध घंटे पर उक्त बिमारी में इस दवा के पिलाने से शीघ्रही फायदा होता है। एक तोला एमोनिया वाटर को ६ तोला सरसों के तेल में मिला के गले के सूजन में लगाने से अधिक फ़ायदा करता है। नौसादर और चूना इन दोनोंका गुण अलग २ भी अनेक रोगों पर है लेकिन वैद्यलोग इसका गुण बहुत कम जानते हैं।

हैजा॥

इस बिमारी का नाम सुनते ही समग्र शरीरके रोम खड़े हो जाते हैं और देह थर २ कांपने लगती है। हां!! ईश्वर ने कैसे २ एक २ रोग कराल महाकाल के समान मनुष्य के इस छोटे से जीव के हरणार्थ उत्पन्न किया है कि जिसके चंगुल में फँस कर इस असार संसार में पल

भर को पोद स्थिति करना दुष्कर हो जाता है। आज कल प्रायः देखने मे आता है कि हमेशा हैजे का राज्य किसी न किसी देश में बना ही रहता है। फिर विशूचिका (हैजा) महारानी की कृपा कटाक्ष रोगियों पर ऐसी रहती है कि यदि रोग प्राप्त काल में सद्वैद्य या डाक्टर न मिला झट पट ग्रास कर डालती है। पीछे एक भी किसी की दाल गलाई नहीं गलती। चाहे अमृत का घड़ा क्यों न हाथ में लिये हो बस कर मल २ कर रोना और कहना कि हाय अमुक डाक्टरी दवाखाने की हरी सीसी पिलाई जाती तो जरूर बच जाता समय चूक फिर क्या पछताना। इस बिमारी के सम्बन्ध में बिलायत वालों ने कई मरतबे आंदोलन किया और बड़े २ सभ्य एलोपेथिक तथा होमियोपेथिक डाक्टर महोदयों से अनुसंधान किया कि कोई ऐसा उपाय या औषध प्रकाश की जाय कि जिससे संक्रामक रोग अर्थात् विशूचिकादिक रोगों की उत्पत्ति बहुत कम हो और इससे मरने न पावैं। इसके बाद में डाक्टरोंने भलीभांति से परीक्षा करके कहा है कि सेवाय सफाई और धूप द्वारा दूषित विष वायु का निराकरण। एवं रोगियों के मल मूत्र द्वारा रोग न फैलने पावें और उपाय नहीं है। प्रत्यक्ष भी है कि आज तक किसी वैद्य डाक्टर और हकीम द्वारा कोई ऐसी निश्चय उग्र महौषधि न निकली कि जिससे रोगी बचही जावे और वही औषधि देश विदेश गांव गँवई जहां वैद्य डाक्टर गूलर के फूल हैं सर्वत्र बटवा दी जाती कि जिस से रोगी इस महामारी के पद से लतमर्दन न होने पाते॥

हम निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि जैसा आज कल संक्रामक रोग (जो रोग छुईछूत और बदबू से फैलते हैं) किसी न किसी स्थानमें बनाही रहता है। ऐसा उपद्रव पूर्व काल में कभी न था। इसका मुख्य कारण यही है कि अगले जमाने में यहां जंगल इस कदर थे कि जिससे वह दूषित वायु जो मनुष्यों के स्वास द्वारा निकलता है सब वृक्षादि खींच लेते थे उनसे हवा साफ बनी रहती थी। दूसरे दुष्ट और निषिद्ध मांसाहारी बहुत कम थे इससे मनुष्य के शरीर से दूषित वायु भी नहीं निकलती थी। विवेचित भया है अधिक जो मांसादि दूषित मांसाहारी

मनुष्यों के शरीर से जो पसीना निकलता है वह निहायत बदबूदार होती है जिससे कि जहरीली वायु (मलेरिया) होने का सम्भव है । यदि कोई यह कहै कि अगले जमाने में जब कि बहुत जङ्गल या वन जंगलों में लाखों दुर्गन्धित जानवर शेर भेड़िया रहते थे और हजारों गौ भैंस आदि जीवों को खाते थे और मांस हड्डियां वहीं पड़ी सड़ा करती थी कि जिससे बड़ा भयानक दूषित वायु उत्पन्न होता था तो उसमे क्यों नहीं संक्रामक बिमारियां पैदा होती थीं ? सत्य है पर ईश्वर ऐसा दयालु और सर्व शक्तिमान है कि उन जङ्गलों में अकस्मात् अंधड़ों के वेग से परस्पर बांस आदि वृक्षों की डालियां रगड़ जाने से अग्नि लग जाती थी और वहां के जानवर दूसरे जंगल में भाग जाते और बहुत से वहीं जल जाते थे ॥

तीसरे इस आर्य्यावर्त में मुर्दे भी सेवाय जलाने के फेंके या गाड़े नहीं जाते थे । आज कल गाड़े जाने के वजे से लक्खों बिगहा जमीन बिगड़ गई और उस जमीन की हवा बिगड़ कर लोगों के शरीर में रोग उत्पन्न किया और वही हवा भूत प्रेत पिशाच के नाम से प्रसिद्ध हो बड़े २ विद्वानों की बुद्धि को भी बिगाड़ दी ॥

चौथे आज कल प्रायः गांवों के निकासों में मरे हुये जानवरों की हड्डियों का ढेर लगा रहता है वो सड़ कर हवा गन्दी कर डालती हैं । पांचवे हरएक शहर के बाहर थोड़ेही दूर पर मंयुलसों के मैलों का गड्ढा भरा रहता है कि जिसकी दुर्गन्धि आधे २ मील तक जाती है और ईंट खपरा आदि पकाने भी जहां तहां लगे रहते हैं कि जिसमें हड्डी और बहुत सी निकम्मी बदबूदार चीजें पड़ती हैं और वे लपक के साथ न जल कर केवल चारोओर धुआंधारी मचाये रहती है कि जिसको दुर्गन्धि मनुष्य को असह्य रहती है ॥

छठें पूर्व काल में यज्ञ होम अधिक होते थे जिससे कि वायु में सुगन्धित पदार्थों के परिमाण मिल कर हवा हमेशा स्वच्छ रहती थी । यद्यपि अब सफाई का बन्दोबस्त अच्छा है पर उपरोक्त रीति से न होने

के कारण दिन २ संक्रामक रोगों की वृद्धि होती जाती है और इस पर गवर्नमेंट भी ध्यान कम देती है ॥

इस प्रकर्ण के उठाने का मुख्य अभिप्राय यह है कि हमारे पढ़े लिखे देशी गण सचेत हो आधुनिक बाह्य सफाई ही में न मग्न रहें अर्थात् विलायती सभ्यताही पर न लट्टू रह कर अपने पूर्वजों की सत्क्रियाओं को भी देखें सुनें और हमारे आयुर्वेद मे हैजा आदि संक्रामक रोगों से बचने के नियमों को याद रक्खें और हैजा प्राप्त होने पर जब तक अच्छा मत वैद्य या देश कालज्ञ हकीम डाक्टर न आ जांय तब तक उसके रोकने का उपाय करता रहे । क्योंकि बहुत से स्थान ऐसे हैं कि जहां कोई भी चिकित्सक नहीं है यदिहै भी तो कोस दो कोस पर जब उसे एक आदमी बुलाने को गया और वैद्यराज न मिले कहीं चिकित्सा करने गये हैं अब वह आदमी वहीं ठहर गया कि वैद्य जी को संग ले के चलें उधर अति काल होने से दूसरा भी आदमी चला तब रोगी और घबराने लगा । चिकित्सक को आते २ पांच चार घंटा या इससे भी कुछ अधिक काल लग गया तब तक में रोग चतुर्गुण हो रोगीही इस असार संसार को परित्याग चला । इस लिये वह रोग ही न होने पावे ऐसा उपाय सर्वदा करना चाहिये, वह उपाय सब से मुख्य सफ़ाई है जिसको वैद्य डाक्टर और हकीम सब प्रकार के चिकित्सक लोग मानते हैं ॥

सफाई ॥

१ मकान की आंगनाई कुछ बड़ी हो जिसमें धूप और हवा आ सके नावदान एक कोने में और पक्का हो जिससे पानी सफ़ाई से निकल जाया करे ॥

२ पाखाना यदि सण्डास अर्थात् गहिरा कूप सा हो तो हर महीने में दो तीन सेर खारी निमक या चूना या रेह मट्टी डाला करे और पाखाना या सुड्डी हो तो पंद्रहवें रोज कारबोलिक के पानी या चूने के पानी से धुला दिया करे ॥

३ आंगनाई में या दरवाजे में दुर्गन्धित गंदीली चीज़ या ऐसी चीज़ जिस से भी मचलाने का सम्भव हो न पड़ी रहनी चाहिये॥

४ सब अमीर ग़रीब को उचित है कि दरवाजे पर या जहां उचित समझै यथा शक्ति यदि फुलवारी लगाने की शक्ति न हो तो फूलों के गमला थोड़े बहुत अवश्य रक्खे। यह जो तुलसी का पेड़ हमारे यहां बड़ा पूजनीय है वह इसी सफाई का प्रधान अङ्ग है। इस पर दुर्वायु आकर्षण की शक्ति अधिक है इससे इसको घरमें अवश्य रखना चाहिये।

५ चाहिये कि तमाम मकान चूने से पुता रहे परंच भोजन करने और सोने का घर तो नित्यही पुता रहना चाहिये और रसोंई का घर गोबर और पिंडोर से पुता रहना चाहिये और रसोंई के घर में बैठकर भोजन न करे। इसी कारण महूर्त चिन्तामणि मे रसोंई बनाने का घर अग्नि कोण में और भोजन का घर पश्चिम दिशा में लिखा है॥

६ जब कपड़े से बू आने लगे तो बिना धुलाये उसे कदापि न पहिने॥

हैजा न होनेका उपाय।

यह तो सभी जानते हैं कि हैजा हमेशा एक न एक देशमें बनाही रहता है पर विशेषकर ग्रीष्म (बैशाख जेठ) और वसन्त (फाल्गुणचैत्र) ऋतु में हैजा होने का सम्भव रहता है। और यह भी सबको विदितहै कि एक प्रकार की बिषदूषित वायु फैलती है तभी अजीर्ण द्वारा यह रोग होता है। हमारे कहने का तात्पर्य्य यह है कि प्राप्तकाल पर इसका रोकना दुस्साध्य है इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इसके चङ्गुल में न फँसने का उपाय हमेशा करता रहे पर उपरोक्त महीनों में तो अवश्यही अपने संजमों को ठीक रक्खे। क्योंकि यह रोग उन्हीं को होता है जिन्हें यह परिज्ञान नहीं है कि हमें किस समय क्या आचरण और कौन द्रव्य भक्षण करना उचित है और कौन नहीं। और जो व्यक्त परिमित भोजन

करते हैं विशेषतः आयु के हिताहित विषय में खूब अभिज्ञ है यह प्रायः इस रोगमें आक्रान्त नहीं होते ॥

१ बहुत गर्म स्थान में रह कर एक बारगी शैत्य स्थान में न चला जाय और न बहुत ठंढ पदार्थ भोजन करले ॥

२ अतिशय जल पान, कभी अल्प कभी ज्यादा, कभी कम पका कभी ज्यादा पका या बासी द्रव्य भोजन, दिशा पेशाब का रोकना, दिवानिद्रा रात्रि जागरण, प्रभृति त्याग करे ॥

३ दश ग्यारह बजे के उपरान्त रात को न जागे क्योंकि रात के जागने से प्रायः हैजा हो जाता है ॥

४ अत्यंत विरेचक औषध, तेल की बनी हुई पकौरी आदि गर्मचीज शराब आदि अधिक नशा न खावे ॥

५ शाम सबेरे घंटा आध घंटा शुद्ध वायु का सेवन करना और गीत वाद्यादिकों से मनमें विनोद रक्खे ॥

६ हैजा के प्रादुर्भाव समय में प्रतिदिन एक बार बेल का शरबत पीना या ठंढई के साथ रत्ती दो रत्ती भांग घोंटकर प्रतिदिन सन्ध्या स मय पीना उत्तम है ॥

७ कपूर सूंघे और कपूर का पानी २ तोला दोनों समय पी लिया करे अथवा जल के घड़े में एक छोटी सी डली कपूर की डालदिया करे क्योंकि कपूर के सेवन से हैजा नहीं होता, परन्तु इस विषयको लोग बहुत कम जानते हैं। विलायत के प्रसिद्ध डाक्टर रिङ्गर साहब चिकित्सा विधान में लिखा है कि गरमी के दस्तमें (हैजेमें) कपूर से बढ़कर दूसरी औषध नहीं है ॥

८ बहुत सकेत कोठरी में रात को मुख ढांप कर न सोवे और न किसी अधिक तङ्ग बैठक में दश बीस आदमी को सङ्ग लेकर बैठे ॥

९ जिस स्थान में हैजा उठा हो वह स्थान त्याग दूसरे जगह को चला जाय और हैजे का नाम सुन कर कदापि न डरे ॥

१० घरमें प्रत्यह शाम सवेरे गंधक या दशांग या धूप या गुगुलकी धूनी अवश्य दिया करै क्योंकि इससे बिष दूषित वायु का निराकरण हो जाता है यही कारण है जो पूर्वाचारों ने व्यवस्था दिया है कि गृहस्थ लोग घर में ठाकुर रक्खे और शाम सवेरे धूप दीप दिया करै । अंगरेजी डाक्टरों ने अच्छी तरह परीक्षा लिया है कि हैजा वाले रोगियों का मल आदि कूप तालाब नद्यादिकों के जल के साथ मिल जाने से यह रोग शीघ्र ही चारो तर्फ फैल जाता है । यदि हैजावाले का मल इधर उधर न फेंका जाय और वस्त्र आदि तालाब नदी कूप आदि स्थानों पर न धोये जांय तो निश्चय है कि यह बिमारी चारो तर्फ न फैले, चाहिये कि किसी एकांत में गढ़ा खोद उसमें काष्ठ कोयला डाल उसी में मल फेंके और ऊपर से चूने का पानी या कार्बोलिक एसिड का पानी छुड़ा दे इससे मल का दोष दूर हो जाता है । और वस्त्र को पहले चूना या क्लोराइड आफ़ लाईम के जल से धो कर तब तालाब आदि में या धोबी को धोने को दे । जिस घर में रोगी हो उस घर को धूप आलकत्तरा या गंधक के धुंवा से धूपित करे और उसी मकान के एक कोने में कार्बोलिक एसिड की एक सीसी का मुंह खोल कर रख दे । इससे रोगी को फ़ायदा और देश का उपकार दोनों होगा ॥

बिष वायु दूषित गृह ॥

इनुफेकटेडचेम्बरसं । जिस समय ज्वर, हैजा, माता आदि रोग द्वारा देश भर ग्रसित हो जाय, या कोई गृहस्थ में परिवार उक्त रोग में ग्रसित हो कोई तो मर जाय, कोई, आराम हो और कोई २ फिर उसी रोग में ग्रस्त हो दुर्बल बना रहे तब निश्चय जानना चाहिये कि उस देश या उस घर की वायु बिष से दूषित है, तब अगर उस देश के प्रत्येक गृहस्थ अपने २ घर में या फ़क्त रोगी के घर में निम्न लिखित धुंवा देवे तो निश्चही उक्त महा कराल रोगों से छूट जाय ॥

सोरे का धुंआ देना ॥

सोरा १ छटांक, गन्धक का तेजाब आधी छटांक । एक बड़े पात्र में या गमले में गरम जल भर कर उसके बीच में एक बरतन इस प्रकार से रक्खे कि उसके भीतर जल न जाने न पावै । बाद उस बीच के बरतन में सोरा डाल ऊपर से बूंद २ गंधक का तेजाब टपकाना आरम्भ करै इससे धुंवा निकलने लगेगा । एक छोटे से घरमें धुंवा करने के लिये केवल एक पात्र बहुत है, यदि बड़ा घर हो तो उसी तरह दो पात्र स्थापन करे और जिस घर में रोगी हो उस घर में तो अवश्य धुंवा देवे लेकिन धुंवे का पात्र रोगी के समीप न रक्खे किन्तु थोड़ी दूर पर रक्खे ॥

इस धुंवे को पहले पहल श्री युत डाक्तर कारमईकेल स्मिथ साहब ने प्रकाश किया था । जिस समय सन् १७८२ ई० में विलायत के विनचेस्टर नगर में उक्त रोग द्वारा बड़ी मरी पड़ी थी तिस समय इस धुंवे से बड़ा भारी उपकार हुआ और इसी पर गवर्नमेंट ने उक्त डाक्तर को पचास हज़ार रुपया पुरस्कार दे कर राज चिकित्सक का पद अभिषिक्त किया । उसी समय से आज तक हरएक चिकित्सक गण बराबर इसे काम में लाते आये और इससे विशेष उपकार देखा गया है ॥

हैजे को संस्कृत में विशूचिका, अंगरेजी में कालरा, बंग भाषा में उलाउठा और तन्त्र शास्त्र वाले इसीको महामारी की बिमारी कहते हैं डाक्तरी में मेलिगनेन्ट आदि कालरा बहुत प्रकार के हैं जिनका बयान आगे लिखेंगे । प्रथम हम " एशियाटिक कालरा " का बयान करते हैं जो देश विदेश सर्वत्र फैला है ॥

इस हैजे का विवरण और लक्षण ॥

बारम्बार पै और पाकस्थली पूर्व आंत में दर्द हो । परन्तु अधिक दस्त होने से पेटका दर्द बन्द हो जाता है । दस्त पतला पीत वर्ण और

मल सहित एवं अजीर्ण द्रव्य युक्त और अवशेष में कुछ आंव सहित भी होता है। जिह्वा कंटक मई और नाड़ी मन्द २ गति एवं कभी गतिहीन भी हो जाती है। पियास अत्याधिक और किसी २ रोगी को हिचकी भी आने लगती है हांथ पैर शीतल समग्र शरीर या ओठ और हांथ पैर के नाखून तो अवश्यही नील वर्ण हो जाते हैं। सम्पूर्ण शरीर में ऐंठन और हांथ पैर के नस खिंचने लगते हैं। उक्त लक्षण युक्त रोगी ऐसाही कोई भाग्य वस बच जाता हो नहीं तो २४ घंटे के भीतर अवश्यही मर जाता है॥

चिकित्सा॥

रोगी को किसी प्रकार की गीली चीज खाने न दे, जिसमें ताकत आये ऐसी चीज खिलानी चाहिये। जैसे ब्रांडी या पोर्टवाइन के साथ अरारोट का मांड़ मिलाके पिलाना उत्तम है। और इस दवा को देवे॥

१ चाकमिक्सचर ४ औंस। टिञ्चरहाईआसएमाई दो ड्राम। पिपर-मेण्ट वाटर १ औंस सब को एकत्र कर एक २ औंस के अंदाज दिन में चार पांच दफे या जैसा रोगी का बलाबल देखे सेवन करावै॥

अगर देखे कि रोगी बिलकुल बलहीन हो गया है और नाड़ी गति क्षीण एवं स्थान भ्रष्ट चल रही है, शरीर या हांथ पैर पाला के समान है, तब निम्न लिखित उष्ण कारक अर्क पिलावे॥

व्यवस्था॥

ऐरोमेटिक एमोनिया १ ड्राम। सलफिउरिक ईथर आधा ड्राम। टिञ्चर कारडेमम कम्पौंड ४ ड्राम, ब्रांडी १ औंस, लडेनम १ ड्राम, केम्फर वाटर ५ औंस। एकत्र कर एक सीसी में १२ दाग (मार्क) बना उसी में अर्क भर दे, एक २ दाग आध २ घंटा या एक २ घंटे पर देवे जब देखे कि दो तीन मात्रा दे चुके और कुछ फ़ायदा नहीं मालुम होता तब

सोरे का धुंआ देना ॥

सोरा १ छटांक, गन्धक का तेजाब आधी छटांक । एक बड़े पात्र में या गमले में गरम जल भर कर, उसके बीच में एक बरतन इस प्रकार से रक्खे कि उसके भीतर जल न जाने न पावै । बाद उस बीच के बरतन में सोरा डाल ऊपर से बूंद २ गंधक का तेजाब टपकाना आरम्भ करै इससे धुंआ निकलने लगेगा । एक छोटे से घरमें धुंआ करने के लिये केवल एक पात्र बहुत है, यदि बड़ा घर हो तो उसी तरह दो पात्र स्थापन करे और जिस घर में रोगी हो उस घर में तो अवश्य धुंवा देवे लेकिन धुंवे का पात्र रोगी के समीप न रक्खे किन्तु थोड़ी दूर पर रक्खे ॥

इस धुंवे को पहले पहल श्री युत डाक्टर कारमाइकेल स्मिथ साहब ने प्रकाश किया था । जिस समय सन् १३८२ ई० में विलायत के विनचेस्टर नगर में उक्त रोग द्वारा बड़ी मरी पड़ी थी तिस समय इस धुंवे से बड़ा भारी उपकार हुआ और इसी पर गवर्नमेंट ने उक्त डाक्टर को पचास हज़ार रुपया पुरस्कार दे कर राज चिकित्सक का पद अभिषिक्त किया । उसी समय से आज तक हरएक चिकित्सक गण बराबर इसे काम में लाते आये और इससे विशेष उपकार देखा गया है ॥

हैजे को संस्कृत में विशूचिका, अंगरेजी में कालरा, बंग भाषा में उलाउठा और तन्त्र शास्त्र वाले इसीको महामारी की बिमारी कहते हैं डाक्टरी में मेलिगनेन्ट आदि कालरा बहुत प्रकार के हैं जिनका बयान आगे लिखेंगे । प्रथम हम " इप्डिस्कालरा " का बयान करते हैं जो देश विदेश सर्वत्र फैला है ॥

इस हैजे का विवरण और लक्षण ॥

बारम्बार कै और पाकस्थली एवं आंत में दर्द हो । परन्तु अधिक वमन होने से पेटका दर्द बन्द हो जाता है । दस्त पतला पीत वर्ण और

मल सहित एवं अजीर्ण द्रव्य युक्त और अवशेष में कुछ आंव सहित भी होता है। जिह्वा कंटक मई और नाड़ी मन्द २ गति एवं कभी गतिहीन भी हो जाती है। पियास अत्याधिक और किसी २ रोगी को हिचकी भी आने लगती है हाथ पैर शीतल समग्र शरीर या ओठ और हांथ पैर के नाखून तो अवश्यही नील वर्ण हो जाते हैं। सम्पूर्ण शरीर में ऐंठन और हांथ पैर के नस खिंचने लगते हैं। उक्त लक्षण युक्त रोगी ऐसाही कोई भाग्य वश बच जाता हो नहीं तो २४ घंटे के भीतर अवश्यही मर जाता है॥

चिकित्सा॥

रोगी को किसी प्रकार की गीली चीज खाने न दे, जिसमें ताकत आवे ऐसी चीज खिलानी चाहिये। जैसे ब्रांडी या पोटवाइन के साथ अरारोट का मांड़ मिलाके पिलाना उत्तम है। और इस दवा को देवे॥

१) चाकमिक्सचर ५ औंस। टिंक्चरहाईआसाएमाई दो ड्राम। पिपरमेन्ट वाटर १ औंस सब को एकत्र कर एक २ औंस के अंदाज दिन में चार पांच दफे या जैसा रोगी का बलाबल देखे सेवन करावे॥

अगर देखे कि रोगी बिलकुल बलहीन हो गया है और नाड़ी अति क्षीण एवं स्थान भ्रष्ट चल रही है, शरीर वा हांथ पैर पाला के समान है, तब निम्न लिखित उष्ण कारक अर्क पिलावे॥

व्यवस्था॥

ऐरोमैटिक एमोनिया १ ड्राम। सलफिउरिक ईथर आधा ड्राम। टिंक्चर कारडेमन कम्पौंड ४ ड्राम, ब्रांडी १ औंस, लडेनम १ ड्राम, केम्फर वाटर ५ औंस। एकत्र कर एक सीसी में १२ दाग (मार्क) बना उसी में अर्क भर दे, एक २ दाग आध २ घंटा या एक २ घंटे पर देवे जब देखे कि दो तीन मात्रा दे चुके और कुछ फायदा नहीं मालुम होता तब

बीस २ मिनट पर देना शुरू कर दे। तब भी यदि हाथ पैर में गर्माहट और नाड़ी तेजी के साथ न चलने लगे तब पैर की एड़ी और हाथ की कलाई पर राई का पलस्तर रख दे। पलस्तर लगाने का प्रयोजन यह है कि इसके द्वारा गर्मी उत्पन्न हो नाड़ी चलने लगे॥

वैद्यक मत से हैजा॥

पीछे हम हैजा न होने का उपाय लिख आये हैं, पर अब हम आयुर्वेद द्वारा संक्षेप से हैजे का निदान और चिकित्सा लिखते हैं। आशा है कि पाठकगण अवश्य इस लेखानुसार रोगियों को अकाल काल से बचा धन्यवाद देंगे॥

आज कल हैजे की अधिकता से विशेष कोई लक्षण दिखलाने की जरूरत नहीं है क्योंकि मूर्ख से भी मूर्ख तक जान जाते हैं कि इसे हैजा हो गया है॥

हैजेका लक्षण॥

मूर्छातिसारौवमथुःपिपासा शूलंभ्रमोद्वेष्टन जृम्भदाहाः।
वैवर्ण्यकम्पौ हृदयेरुजश्च भवन्तितस्यां शिरसश्चभेदः॥

बेहोशी, दस्त पतला, बारंबार कै होना, पियास, शरीर में ऐंठन घुमरी, कल न परै, जँभुआई, दाह, शरीर का रंग बदल जाना, देह कांपना हृदय और शरीर में दर्द होना। विशेष करके कि दस्त पेट और शरीर में ऐंठन पेशाब का न होना, पियास की आधिक्यता अवश्य होती है॥

साध्य लक्षण॥

यदि धीरे २ उपद्रव घटता जाय विशेष कर वमन। रोगीको थोड़ा निद्रा आ जाय शरीर गर्म बना रहे एवं रोगी तीन चार रोज बच जाय

और बात कफ का कोई उपद्रव न उठे तो यकीन है कि रोगी अवश्य बच जायगा ॥

असाध्य लक्षण ॥

हाथ पैर में ऐंठन ज्यादा हो, स्वर मङ्ग और बल घट गया हो, भीतर दाह ऊपर शीत हो। रोगी को कल न पड़े, पेशाब न उतरे मारे पियास के गले में कांटे पड़ गये हों, सांस कम आवे या सांस लेते में गला खर २ बोले हुचकी आवें और नाड़ी रुक-२ के चले तो रोगी का जीना बड़ा कठिन है ॥

चिकित्सा ॥

इस रोग की चिकित्सा नाना प्रकार की है विशेष कर डाक्टरी में इसको बड़ी तूल के साथ बयान है, परन्तु जिस प्रकार की चिकित्सा से अधिकांश लाभ देखा गया है प्रथमतः उसीको कहते हैं। इसके परे और भी वैद्य डाक्टरों के मतामत से कौन औषध देने से क्या लाभ हुआ है यह भी प्रकाश करेंगे ॥

जहां तक हो सके फौरन के दस्त बन्द करे। हकीमों की राय है कि हैजा शुरू होतेही के दस्त न बन्द करे कुछ दूषित मल निकल जाने दे ? पर हम कहते हैं कि तत्क्षण बन्द करना उचित है क्योंकि हैजे के दस्त बन्द करने में रोगी का पेट नहीं फूलता। बाद इसके पेशाब खोलने और शरीर में ताकत लाने की उपाय करे ॥

हैजे की प्रधान औषध केवल यह है। अफीम, पारद, कफूर, ब्रांडी सौंफ, गुलाब, पुदीना, बर्फ ॥

विशूचिकान्तक वटी ॥

सिगरफ सफसूदा बादो एक तोला को १२ प्रहर कागजी नीबूके रस

में खरल कर छाया में सुखा ले बाद इसके सिंगरफ के बराबर अफीम ॥ दोनों खरलमें डाल पानीसे घोंट कर बाजराके बराबर गोलियां बनालें। यह बटी हैजे ॥ रामबाण सा गुण दिखाती है; और पाठक गणों से स-विनय प्रार्थना करते हैं कि जहां तक हो सके बटी को पुण्यार्थ दिया करें॥

अनुपान।

चाहिये कि हैजा शुरू होतेही यह गोली खिला दी जाय, रोगी गोली को मुह में रख पानी से उतार जावे न दांत से कुचले और न जीभ से टुघलावे। यदि गोली उसी समय कै से गिर जाय तो दूसरी गोली पानी में घोल कर पिला दे, गोली के पचतेही कै दस्त बन्द हो जायगा अगर गोली पच जाय और दस्त न बन्द हो तो ३ घंटे के बाद एक या दो गोली जैसी ताकत देखे खिला दे। फिर भी न बन्द हो तो १० घंटे तक गोली न दे पियास और वमन रोकने की उपाय करे अर्क सौंफ ऽ। अर्क पुदीना ऽ॥ अर्क गुलाब ऽ॥ कफूर का पानी ऽ॥। आधी छँटाक, बर्फ का पानी ऽ। इन सबों में जो मिल जाय एकत्र कर एक २ तोला दश २ मिन्ट पर बराबर पिलाता जाय, इससे भी कै न बन्द हो तो थोड़ी राई पानी में पीस आठ अंगुल लंबा चौड़े कागज पर लेप कर पेट पर रख दे जब खूब जलन होने लगे तब निकाल डाले, जब देखे कि रोगी के हांथ पैर में ऐंठन ज्यादा है और बदन बहुत ठंढा है नाड़ी की गति अति मन्द है तो उक्त रीत्यानुसार राई हांथ पैर की कलाई पर रख दे। और केवल तारपीन का तेल हांथ पैर में मालिश करना प्रारंभ कर दे जब तक कि ऐंठन मिट कर नाड़ी खूब तेजी से न चलने लगे॥

ज्योंही दस्त बन्द हो उसी वक्त पेशाब खोलने की चेष्टा करे। कलमीसोरा ३ तोला, टेसू का फूल २ तोला दोनों को पानी में पीस टिकिया बना पेडू पर रख दे और आध २ घंटे पर बदलता जाय और पन्द्रह २ मिन्ट पर नाईट्रिक इथर का दश २ बूंद थोड़े से पानी के

साथ या दश २ दाना शीतल चिनी की बुकनी थोड़े से पानी के साथ बराबर देता जाय जब तक कि पेशाब साफ न आने लगे ॥

अति क्षुधा लगने पर बाबूदाना मिस्री के साथ दे या मूंग की मुलायम खिचरी दे ॥



आध्यात्मिक शक्ति ॥

परम पिता परमेश्वर ने हमारे आत्मा की रक्षा और उसके आध्यात्मिक कार्य्य साधन के लिये आत्मा के साथ २ एक प्रकार की सूक्ष्म विद्युत भी दी है जिसको सूफी लोग "नूरेइन्सान" और यूरपीय विद्वान, आडिल कहते हैं। यह विद्युत शीतल, प्रकाश युक्त और सूक्ष्मगामी होती है। जिस प्रकार आत्मा अपनी मानसिक इच्छा द्वारा अपने बाह्य शारीरक अंगों को हिलाता, डोलता अपने काम में लाता है उसी प्रकार इस विद्युत को भी जिधर चाहता है फैलाता और उससे अनेक प्रकार के कार्य्य साधन करता है। इस विद्युत द्वारा आत्मा बाह्य इन्द्रियों के बिनाही जितनी दूर चाहे देख सक्ता सुन सक्ता है और अपनी इच्छा प्रकाश कर सक्ता है। यह विद्युत ऐसी सूक्ष्म है कि कोई पहाड़ दिवार आदि उसे रोक नहीं सक्ता है उनके भीतर से निकल २ जाती और आत्मा दृष्टि आदिक शक्तियों को दूर २ फैला देती है। इस विद्युत का और कोई शब्द नहीं मिलता लाचार विद्युत कहना पड़ा इसी के द्वारा योगी जन अद्भुत शक्ति सम्पन्न होकर एक स्थान पर बैठ कर देश देशान्तरों को आभ्यन्तरिक दृष्टि से देख सक्ते हैं। इसी विद्युत के विषय में आज कल "थियोसोफिष्ट" कुछ कहने और लिखने लगे जिससे लोग उनकी दुम में घुसे जाते हैं और उनके चेले बनते जाते हैं यह आश्चर्य्य की बात नहीं है। संसार में यद्यपि कोई मनुष्य एक तुच्छ शारीरक अङ्ग को ही किसी ऐसे कार्य्य में लगाना आरंभ करे, जिसे और लोग नहीं कर सकते, तो सब हैरान होकर उसके पीछे

में खरल कर छाया में सुखा ले बाद इसके मिसरख के बराबर अफीम ले दोनों खरलमें डाल पानीसे घोंट कर बाजराके बराबर गोलियां बनालें। यह बटी हैजे में रामबाण का गुण दिखाती हैं; और पाठक गणों से सविनय प्रार्थना करते हैं कि जहां तक हो सके बटी को पुण्यार्थ दिया करें॥

अनुपान।

चाहिये कि हैजा शुरू होतेही यह गोली खिला दी जाय, रोगी गोली को मुंह में रख पानी से उतार जावे न दांत से कुचले और न जीभ से टुघलावे। यदि गोली उसी समय कै से गिर जाय तो दूसरी गोली पानी में घोल कर पिला दे, गोली के पचतेही कै दस्त बन्द हो जायगा अगर गोली पच जाय और दस्त न बन्द हो तो ३ घंटे के बाद एक या दो गोली जैसी ताकत देखे खिला दे। फिर भी न बन्द हो तो १० घंटे तक गोली न दे पियास और वमन रोकने की उपाय करै अर्क सौंफ ऽ। अर्क पुदीना ऽ॰ अर्क गुलाब ऽ॰ कपूर का पानी ऽ०॥ आधी छँटाक, बर्फ का पानी ऽ। इन सबों में जो मिल जाय एकत्र कर एक २ तोला दश २ मिन्ट पर बराबर पिलाता जाय, इससे भी कै न बन्द हो तो थोड़ी राई पानी में पीस आठ अंगुल लंबा चौड़े कागज पर लेप कर पेट पर रख दे जब खूब जलन होने लगे तब निकाल डाले, जब देखे कि रोगी के हांथ पैर में ऐंठन ज्यादा है और बदन बहुत ठंढा है नाड़ी की गति अति मन्द है तो उक्त रीत्यानुसार राई हांथ पैर की कलाई पर रख दे। और केवल तारपीन का तेल हांथ पैर में मालिस करना प्रारंभ कर दे जब तक कि ऐंठन मिट कर नाड़ी खूब तेजी से न चलने लगे॥

ज्योंही दस्त बन्द हो उसी वक्त पेशाब खोलने की चेष्टा करै। कलमीसोरा ३ तोला, टेसू का फूल २ तोला दोनों को पानी में पीस टिकिया बना पेडू पर रख दे और आध २ घंटे पर बदलता जाय और पन्द्रह २ मिन्ट पर स्पार्इट्रिक इथर का दश २ बूंद थोड़े से पानी के

साथ या दश २ दाना शीतल चिनी की बुकनी थोड़े से पानी के साथ बराबर देता जाय जब तक कि पेशाब साफ न आने लगे॥

अति क्षुधा लगने पर साबूदाना मिश्री के साथ दे या मूंग की मुलायम खिचरी दे॥

आध्यात्मिक शक्ति॥

परम पिता परमेश्वर ने हमारे आत्मा की रक्षा और उसके आध्यात्मिक कार्य्य साधन के लिये आत्मा के साथ २ एक प्रकार की सूक्ष्म विद्युत भी दी है जिसको सूफी लोग "नूरेइल्हाम" और यूरपीय विद्वान, आडिल कहते हैं। यह विद्युत शीतल, प्रकाश युक्त और सूक्ष्मगामी होती है। जिस प्रकार आत्मा अपनी मानसिक इच्छा द्वारा अपने बाह्य शारीरक अंगों को हिलाता, डोलता अपने काम में लाता है उसी प्रकार इस विद्युत को भी जिधर चाहता है फैलाता और उससे अनेक प्रकार के कार्य्य साधन करता है। इस विद्युत द्वारा आत्मा बाह्य इन्द्रियों के बिनाही जितनी दूर चाहे देख सक्ता सुन सक्ता है और अपनी इच्छा प्रकाश कर सक्ता है। यह विद्युत ऐसी सूक्ष्म है कि कोई पहाड़ दिवार आदि उसे रोक नहीं सक्ता है उनके भीतर से निकल २ जाती और आत्मा दृष्टि आदिक शक्तियों को दूर २ फैला देती है। इस विद्युत का और कोई शब्द नहीं मिलता लाचार विद्युत कहना पड़ा इसी के द्वारा योगी जन अद्भुत शक्ति सम्पन्न होकर एक स्थान पर बैठ कर देश देशान्तरों को आभ्यन्तरिक दृष्टि से देख सक्ते हैं। इसी विद्युत के विषय में आज कल "थियो सोफिष्ट" कुछ कहने और लिखने लगे जिससे लोग उनकी दुम में घुसे जाते हैं और उनके चेले बनते जाते हैं यह आश्चर्य्य की बात नहीं है। संसार में यद्यपि कोई मनुष्य एक तुच्छ शरीरक अङ्ग को ही किसी ऐसे कार्य्य में लगाना आरंभ करे, जिसे और लोग नहीं कर सकते, तो सब हैरान होकर उसके पीछे

दौड़ने लगते हैं। थियोसोफ़िष्ट लोगों ने इस पुरातन विद्या का अभी तक एक लेश भी नहीं जाना है। और न यह जानने के लिये प्रयत्न ही करते हैं। उन लोगों ने तो केवल रुपया कमाने और भारत वासियों को मूड़ने के लिये ही यह थोड़ा सा तमाशा मेस्मिरीजम आदिक सीख लिया है। जिससे हमारे भोले भाले देश वासी मतवाले होकर उनके गीत गाते और अपने परिश्रम की कमाई में आग लगाते हैं। मेरे प्यारे भारत वासियो यह तुम्हारे ही देश की विद्या है जिससे अब "मियां की जूती मियां की चांद" का खेल हो रहा है। जिस प्रकार हम यद्यपि एक हाथ उर्द्धबाहूं की नाईं पड़ा या खड़ा रहने दें, और उससे कुछ काम न लें, तो थोड़े से काल में यह अकड़ कर किसी काम का नहीं र-हता है। अगर कोई अच्छा वैद्य मिले और किसी औषधि या यत्न द्वारा उसे सुधारे, तो यह कुछ काम देने लगे तो सम्भव है। इसी प्र-कार अनेक समय से हम लोगों ने अपने बाप दादा के आध्यात्मिक साधन को छोड़ कर इस अद्भुत ईश्वरीय शक्ति को बेकार कर रक्खा है जिससे अब हम साधारण रूप से भी उसे किसी काम में नहीं ला सक्ते हैं। और यद्यपि किसी को उसका लेश मात्र भी साधक देखते हैं, तो गुलाम बनने, उसकी जूतों साफ़ करने, और अपना तन मन अर्पण करने को तत्पर हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हम इस महान शक्ति को खो कर बहुत दुर्बल और दुखी हो रहे हैं। और जब तक हम अपने साधन की ओर दृष्टि न करेंगे, तब तक हमारी दशा सुधर न स-केगी। यही तो योग का मूल है। आज कल हमारे भारत वासी यह समझते हैं कि इसको साधन करने के लिये घरबार त्याग करना पड़ता है। और संसार से विदेशी होकर वन में रहना होता है। नहीं भाई, यह सारा खेल संसार के पवित्र उद्देश्य को पूरा करने के लिये ही है। परमेश्वर ने यह सुन्दर संसार त्याग करने और उससे मुंह मोड़ने के लिये नहीं बनाया है। हां, अत्याचार, कुसंस्कार आदि अवश्य त्याग करना पड़ता है क्योंकि जब तक आत्मा पवित्र न हो, यह विद्युत निर्मल नहीं होती, और न अपना कार्य्य कर सकती है। यदि लोगों को

इच्छा होगी, और यह अपनी आध्यात्मिक शक्ति को जानना और उसे अपने कार्य्य में लगाना चाहेंगे, तो मैं यथा शक्ति उनको ऐसा उपाय और साधना बतलाने में प्रस्तुत हूंगा जिससे यह इस शक्ति को लाभ करके अनेक प्रकार का आनन्द पावेंगे। मैं तो यही चाहता हूं कि मेरे देश वासी इन शारीरिक इन्द्रियों पर ही भरोसा करते न रहजावें क्योंकि एक समय ऐसा आवेगा जब यह शरीर न रहेगा और आध्यात्मिक इन्द्रियों से ही काम लेना पड़ेगा यद्यपि अभी से इसका सीखना आरंभ न करेंगे तो मृत्यु के पश्चात् अंधे लूले की दशा में रहना पड़ेगा॥

आध्यात्मिकशक्ति साधन॥

आज मैं लोगों की इच्छा देख कर कुछ आध्यात्मिकशक्ति के वृद्धि का उपाय वर्णन करना आरंभ करता हूं। यदि भारत वासी सज्जन पुरुष शान्ति लाभ निमित्त इसको सीखना और अपने जीवन में इसका अनुष्ठान करके आनन्दित होना चाहेंगे तो मैं धीरे२ सब कुछ यथाशक्ति प्रकाश करूंगा। यह तो मैं जानता हूं कि आज कल हमारे देश वासी युक्ति, तर्क ज्ञान आलोचना, संदेह वादी, और सांसारिक गोलमाल से अशान्त और थकित हो कर एक प्रकार की नूतन पिपासा योग साधने की प्रकाश कर रहे हैं। इसी लिये किसी मनुष्य में लेश मात्र भी आध्यात्मिकशक्ति देख कर मोहित हो जाते हैं। यहां तक कि धन और प्राण भी अर्पण करना स्वीकार कर बैठते हैं। जिसका कि मैं पहिली बार कुछ वर्णन कर चुका हूं॥

आप जानते हैं जब एक वस्तु पर किसी प्रकार का रंग चढ़ जाता है, तो उसपर दूसरा रंग चढ़ाना, या उसको अपनी पहली अवस्था में लाना कठिन होता है। पहिले उस रंग को रगड़ कर साफ करना पड़ता है। इसी प्रकार जब हमारी प्रकृति ही बदल गई है, हमारा रंग ही दूसरा हो गया है, तब हमारे आत्मा की प्रकृति शक्ति का प्रकाश पाना या उसको असली रूप का मिलना कठिन दिखाई देता है।

सारा कार्य्य विश्वास द्वारा ही चलता है, खाना, पीना, उठना, बैठना, सोना, जागना, वाणिज्य, व्यौपार सभी विश्वास बिना नहीं हो सक्ते हैं। हमारे आपस में विश्वास न होने के कारण हम एक दूसरे की सहायता नहीं करते, एक दूसरे का उपकार साधन नहीं करते, इसी लिये दास बन कर दुःख भोग कर रहे हैं, देश विनाश हो रहा है। आप कहते होंगे कि यह तो और ही कुछ कह रहा है, जिस विषय पर कहना है और जिसके लिये हम अपेक्षा करते हैं, वह तो नहीं कहता है। महाराज जब तक भूमि ठीक नहीं होती, उसमें वीर्य्य बोने से कुछ फल नहीं होता है ऐसे छोटे मोटे चुटकले जिनको थिओसफिष्ट लोगों में देखते हैं, और जिनके कारण आप मोहित होरहे हैं, वह तो दो दिन में आ सक्ते हैं। यह तो बाजीगर के आम के रस हैं, आज हैं कल नहीं। मैं तो आप के हृदय भूमि ऐसा पेड़ लगाना चाहता हूं कि जो सर्वदा हरा भरा रहे और उत्तम से उत्तम फल देकर आप को आर्य्य पुरुषों की ठीक सन्तान बना देवे। घबड़ाइये नहीं, आप को कुछ बहुत कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा थोड़ा ही हृदय भूमि का जंगल काट कर बाग़ लगाना होगा—केवल अपने हृदय को प्रकृति अवस्था में लाना होगा, झाड़ी जंगल साफ़ करना होगा। इसी लिये मैं आज आप से इतनाही कहना चाहता हूं, कि प्रकृत विश्वास क्या है (जिससे आप को विदित हो जावेगा, कि आप के ऊपर कैसा रंग चढ़ा हुआ है) और उसके उज्वल करने की रीति क्या है। प्रकृत विश्वास ही आत्मदर्शन का मूल है, जब तक आप अपने आत्मा को देखही नहीं सकेंगे, तो उसकी शक्ति का जानना, उसकी वृद्धि या उससे कार्य्य साधन करना कैसे सम्भव हो सकेगा?

यह तो स्पष्टरूप से जाना जा सक्ता है, कि जिसे लोग विश्वास कहते हैं वह प्रकृत विश्वास नहीं वह तो केवल आपस के संस्कार हैं। इस बात का प्रमाण यही देख लीजिये, कि वह संदेह से अतीत नहीं है। जब तक संदेह है तब तक यही जानना चाहिये कि प्रकृत विश्वास नहीं मिला और जब तक प्रकृत विश्वास प्राप्त नहीं। तब तक योग की

बात कहना ही निरर्थक है। योग के पथ में चलने के लिये सर्वत्र ही यह लौकिक संस्कार परित्याग करना और प्रकृत विश्वास ढूंढ़ना होगा। प्रकृत विश्वास योग पथ की पहिली सीढ़ी है॥

प्रकृत विश्वास का लक्षण अपरिहार्य्यता और अनतिक्रमणीयताही है। जिस विश्वास को किसी बल द्वारा हटा न सकें, हजार २ विरोधी युक्ति से उसे हिला न सकें, वही प्रकृत विश्वास है। दर्शन शास्त्र में इस को ब्रह्म विद्या और आत्मप्रत्यय बोलते हैं। जिसके विपरीत कुछ भावना करही नहीं सके वही आत्म प्रत्यय, वही प्रकृत विश्वास है। क्यों जी देखो तो वही आप में भी कुछ है, चुटकुलों को देखकर तो मोहित हो जाते हो। किन्तु पहिले इस विश्वास के लाभ करने के लिये प्रस्तुत हो। तब मैं आगे कहूंगा, नहीं तो बस सलाम। बाकी दूसरे राह में देखो॥

लड़कों की पसुली की बिमारी॥

एक तो वैद्यक शास्त्र की ऐसे ही दुर्दशा हो रही है दूसरे जो कुछ भी वह अपढ़ अज्ञान नकली वैद्य और चांडाल औरतों के मारे और भी सत्यानाश हो रहा है। यह तो सभी जानते हैं कि युवा मनुष्यों के अपेक्षा बालकों के रोगों का नाड़ी के द्वारा यथार्थ ज्ञान कर लेना बड़ा दुस्कर है, क्योंकि सयान आदमी नाड़ी के अतिरिक्त अपने समग्र क्लेशों को कह भी देता है। बालक बिचारा न तो बोल सके और न अपने आभ्यन्तरिक सुख दुःख का बयान कर सके वह सिर्फ माता के आधीन रहता है चाहै माता मारे या जिलावै। धात्री शिक्षा, गर्भ रक्षा, बाल पोषण और स्त्री पुरुष व्यवहार आदि विद्या जो स्त्रियों को पढ़ना अत्यावश्य है वह तो जाता रहा अब तो केवल गङ्गा नहाना, मंदिरों में जा के कथा सुनना पति रोके तो चूल्हा और घर के बरतन फोड़ना, फलनियां के शिरे बलिराजा आवथे, फलनियां तो दुआ बाबा का पूजन

यों और फसाने वाबा जी तो ऐसे हैं कि जन्म के बांझ को लड़का देते हैं यही कुसङ्ग और कुसंस्कार रह गया। यही कारण है आजकल स्त्रियों के अति प्रचण्ड होने का क्या इख़्तियार है कि बिना महामायाकी आज्ञा घर के मर्द कुछ कर तो सके, जहां बालक बीमार हुआ और उन के स्वामी जी बोले कि लाओ किसी सतवैद्य या डाक्टर को दिखलावें तहां झट घुड़क उठीं कि कुछ जानत बूझत हो कल घसिटिया की गाई आई रही सो देख लिहेस है। फिर क्या पूछना है ओढ़ चदरिया तैय्यार हो गई। हमारे इस देश के स्त्रियों को ऐसा टोना टामरका दृढ़ विश्वास पड़ गया है कि जहां देखो अच्छे २ घर की स्त्रियां बालकों को बगल में दवाए और हाथ में थोड़ी सी बकुन्ही की सींक लिये मसजिद के दरवाजे खड़ी हैं। प्रायः देखने में आता है कि बड़े सवेरे सड़कों पर सड़क बटोरने वाले हलालखोर आदि हाथ में झाड़ू लिये लड़कों को झार रहे हैं। बड़े आश्चर्य की बात है कि अंगरेज़ और बङ्गालियों के ऐसे खूब सूरत और साफ़ लड़के जिनको दाइयां गोदों में लिये सड़कों पर टहलाया करती हैं, कि जिनको अच्छे और बुरे लोग सभी देखते हैं उनके लिये न कहीं टोना न टामर और हमारे इस देश वालों के लड़के जिन की नाक बह रही है। मक्खियां भिन भिना रही हैं, बदन में मैला कुचैला कपड़ा पड़ा है तेल चभोके चिथड़ों को तहबीज गले में गूंथी हैं लहसुन और हींग की दुर्गन्ध देह से निकल रही है, घर के बाहर नहीं आने पाते परंच टोना उन्हें रोज़ लगता है॥

अब देखिये एक तो अति काल तक बालक का मुख ढांप कर गोद में दबा रखने से बीमारी होती है, दूसरे टोने के भय से लड़कों को इस कदर मैला कुचैला बनाये रहती हैं कि जिससे अकस्मात एक न एक रोग उत्पन्न हो रहता है, तीसरे जो मांसाहारी गर्मी सुजाक वाले सैकड़ों मुसल्मानों के मुंह की भाफ और थूंक कि जिसकी बौछार बालक की मां के मुख तक जाती है, कि जिससे रोग होने का सम्भव वैद्य, डाक्टर, हकीम सभी कह सक्ते हैं। चौथे हलालखोर आदि नीचों के कपड़े झाड़ू और टोकरों की दुर्गन्धि, पांचवे माता का तीन बजे रात्रि

से उठ गङ्गा जमुना का नहाना, एकादशी, मङ्गल और एतवार का व्रत अम्ल और रूक्ष पदार्थों का नून कजून भोजन, छठे बिना जाने बूझे सेंहुड़ के पत्ते का अर्क तक पिला देना, इत्यादि हम कहां तक कहैं हजारों अनाचार हैं। "माता यदि विष दद्यात् पिता विक्रयते सुतं, राजा हरति सर्वस्वं शरणं कस्य जायते"। माता ही बालक को यदि विष पिला दे पिता बेच डाले राजा सब छीन ले तो फिर वह किस के शरण में जा सक्ता है॥

अब कहिये इस प्रकार बालकों को रखने से क्योंकर जीवन रक्षा हो सक्ती है यदि लोट पोट बच भी गये तो सभी, निर्बलता के कारण बल वीर्य बुद्धि तथा शक्ति उत्तमता अनुसरण उपलब्ध कदापि न होगी। इसी सबब से इस देश वालों के लड़कों की मेधा तीव्र नहीं होती बल्कि और भी जब २ उमर बढ़ती जाती है तब २ और भी मोटी होती जाती है॥

यह जो पसुली की बीमारी आज कल प्रसिद्ध है और मूर्ख से विद्वान तक यही कहते हैं कि इस लड़के की पसुली चल रही है। इसको खूब गर्म चीज़ खिलाओ और पेट पर गर्म दवाइयों का लेप करो। परन्तु आज तक किसी ने इस विषय पर ध्यान न दिया कि असिल में यह बिमारी क्या है और इस बिमारी का हाल किसी ग्रन्थ में भी है या नहीं। हम नहीं जानते इस बिमारी का प्रकाशक कौन वैद्य डाक्तर हकीम है जो हर एक औरत मर्द के मुंह से पसुली चली २ सुनाई देती है। इसी भेड़िया धसान से तमाम भारतवर्ष तहस नहस हो गया इसी प्रयाग नगर में एक से एक वैद्य धन्वन्तरि बने हजारों रुपये खसोट रहे हैं पर इसकी आलोचना आज तक किसी ने न की। ये जो साथय रहित पराधीन बिचारे हजारों लड़के प्रति दिन अकाल कालग्रास होते जाते हैं इसका प्रतीकार किसी प्रकार हो सक्ता है या नहीं इसी रोग का हवाल यदि किसी समय कोई प्रथम श्रेणी के यूरोपियन डाक्तर लिख कर गवर्नमेंट में भेज देगा और जैसे माता की बिमारी रोकने के

लिये टीका का प्रकाश हुआ है उसी प्रकार इसका भी टीका या औषध लगाने अथवा खिलाने का हुक्म निकल आवेगा तो अन्त में निरुद्यमी लोग लड़कों को लेके भीतर भागेंगे और यही कहेंगे कि सरकार हमारे साथ अन्याय करती है ॥

निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि "पसुली चली" इस नाम की बिमारी का लेख समस्त वैद्यक के ग्रन्थों में नहीं है पर अत्याश्चर्य इस विषय पर है कि पढ़े लिखे वैद्य लोग भी झटाका कह देते हैं कि इसकी पसुली चल रही है । हिकमत के ग्रन्थों में कहीं २ पसुली के रोग का पता ऐसा लिखा है पर निदान ठीक २ नहीं मिलता । किसी २ देश वाले इसी रोग को डब्बा डब्बा भी कहते हैं । इस रोग की दवाइयां प्रायः लोहार बढ़ई कोल चमार कसाई तक बना करके बांटा करते हैं कि जिनसे हजारों लड़के बिचारे काम आ जाते हैं । इसका संशोधन बिना राजाकी दृष्ट पड़े कदापि होना सम्भव नहीं है । अब हम पाठकगणों के अवलोकनार्थ प्रथमतः बालकों के उन समग्र रोगों का वर्णन करते हैं जो प्रायः लड़कों को हुआ ही करते हैं और जिनका वैद्यक के ग्रन्थों में प्रमाण भी मिलता है । सुश्रुतादि सिद्धान्त ग्रन्थों के देखने से ठीक मालुम होता है कि सेवाय पूतना आदि बाल ग्रह के और जो रोग सयान के होते हैं वही बालकों के भी, पर शार्ङ्गधर आदि छोटे २ ग्रन्थों में पूतना के अन्यत्र बहुत से बालकों के रोग लिखे हैं कि जिनके लक्षण अद्यावधि बालकों में पाये जाते हैं और उसी प्रकार की चिकित्सा से रोग आराम भी हो जाता है । पूतना आदि बालग्रह जिनका बयान वृहत् ग्रन्थोंसे छोटे ग्रन्थ तक सभी में पाये जाते हैं और जिनका लक्षण कुछ २ बालकों में भी मिल जाता है पर चिकित्सा उनका सेवाय झाड़ फूंक टोटका उतारा के और नहीं है परन्तु ग्रन्थकार ने जिस मतलब से टोटका आदि लिखा है उसका गूढ़ अभिप्राय कभी प्रकाश करेंगे । क्योंकि यहां सब से पहिले हमको यही कहिना पड़ता है कि जब तक कुपथ्य से माता के दूध में विकार उत्पन्न नहीं होता तब तक बालक कदापि रोगग्रस्त भी नहीं होता । जिन स्त्रियों के दूध में बात का विकार अधिक हो जाता है

कम दूध पिये बालक का लक्षण यह होता है। दिन प्रति दिन दुबला होता जाय, दस्त दूसरे तीसरे रोज हो, पेशाव करते कांखे और कम उतरे और मिनमिनाता रहे॥

पित्त दूषित दूध पीने से दस्त पतला फटा सा पीला या हरा हो, मुह से फटा दूध भी फेंक दे, शरीर गर्म रहे, मुह पर से कपड़ा फेंक दे, और कभी २ पसीना भी आ जाय मूत्र गर्म उतरे॥

कफ सम्बन्धी दुष्ट दूध के पीने से मुह से लार बहे, हर समय औंघाया करै और ठमकाय॥

बालकों की हांफी जिसको लोग पसुली की बिमारी जानतेहैं और धड़का जिसे औरतें झपेट कहती हैं इस बिमारी में लड़के खेलते २ एकाएक आंख उलट देते हैं और चेहरे का रंग बदल जाता है मालूम होता है कि खतम हो गये मगर जब मुह पर पानी छिड़का जाता है और बदन में हवा लगती है तो फिर होश में आजाते हैं लेकिन यहां की स्त्रियां तो निस्सन्देह इस बिमारी को अढ़ाई घड़ी का मारसिंही टोना जान उसको और भी चारो तरफ से हांप आजवाइन और मिर्च की धूनी दे कर फौरन मार डालतीहैं। प्रिय पाठक गण, दूध में विकार उत्पन्न होने का पूर्वरूप (प्रथम लक्षण) यह है कि आठ दस रोज़ के पेस्तरही से बालक की मा के पेट में आगसा जलने लगता है या पेट करोने लगता है यदि उसका उपाय तत्क्षण कर दिया जाय तो न माता का दूधही बिगड़े और न लड़का बिमार हो॥

उसका उपाय यही है कि जब धात्री (दूध पिलानेवाली स्त्री) के पेट में आग बल उठे या पेट करोने लगे तब पाव भर गौ के दूध में एक तोला मिश्री मिला के पिया देय या मिश्री का सरबत पिला देय या और कोई ठंडी चीज खिला के पानी पिला देय। इसी प्रकार यत्न जलन उठने पे कर दिया करै तो कदापि बालक बिमार न हो। सब को उचित है कि यह बात अवश्य अपनी २ स्त्रियों को जिनका दूध

बालक पीता हो मिला दें कि जब उनके पेट में आग सा जलने लगे या पेट फरोने लगे तो उक्त उपाय से निवारण कर लिया करें। क्योंकि "अग्र सोची सदा सुखी" पहले ही सोच लेने में मनुष्य सदा सुखी रहता है। ऐसा कौन सा मनुष्य है जो यह न जानता होगा कि "गृहे रत्नानि बालके" बालक गृह का एक रत्न है और जिनके गृह में बालक नहीं हैं यह घर वन के समान है, एक पुत्र के लिये लोग लाखों रुपये खर्च कर डालते हैं देवी देवता पीर पैगम्बर मनाया करते हैं यहां तक कि मैं स्त्री पुरुष दिवा रात्रि इसी शोच में पड़े रहते हैं और कहते हैं कि हे ईश्वर हमको एक लड़का चाहे लँगड़ाही लूला दे लोग अपुत्री तो न कहेंगे। अब विचार करने का स्थलहै कि ऐसा अमूल्य पदार्थ कि जिसके द्वारा पितर तक स्वर्ग जाने की आशा रखते हैं, वह केवल माता की अज्ञानता से क्षण मात्र में एक साधारण बिमारी में बिचारे अकाल काल ग्रास हो जाते हैं। हां! "पुत्रशोक महाकष्टम्" ऐसा कौन सा पाषाण हृदय होगा जो याद कर जाने पुत्र के महा शोक समुद्र में डूब कर असह्य कष्ट को न प्राप्त होगा॥

यह जो पसुली की बिमारी आज कल समस्त भारत वर्ष में फैली है खास कोई ऐसी बिमारी नहीं है कि जिसमें लड़के मरही जांय। यह केवल रोग के अनभिज्ञता से लोग भ्रम में पड़ उलटी पुलटी औषध करके बालकों को मार डालते हैं। पाठक गण प्रथमतः जब हम सिर्फ आयुर्वेद के दो चार छोटे मोटे ग्रन्थ देख चिकित्सा करना आरम्भ किया था उस अवस्था में हमारी भी यही दशा थी कि प्रचलित गोलियां जो कि लोग अब तक बनाकर लड़कों को दिया करते हैं हम भी देते थे, पर ईश्वर की करुणामय दृष्टि से शीघ्र ही हम को सुश्रुतादि ग्रंथों के अवलोकन द्वारा इस बिमारी का अनुमान हो गया और दोई चार लड़कों पर आजमाने से पूर्वोक्त कुपथ्य जनित रोग निवारक महौषधि भी उपलब्ध हो गई। उसी समय से आज तक कोई दश हजार लड़के ऐसे २ आराम किये होंगे कि जिसे लोग पसुली की दवा खिलाते और झरवातेर मारचुके थे एक परिक्षा और देखा है कि जब अति गर्म दवा

देते देते बालक के अभ्यन्तर गर्मी इस कदर बढ़ जाती है कि बगल में ज्वर मापक तापमान यंत्र (थरमामेटर) के लगाने से पारद सौ नम्बर तक चढ़ जाता है तो फिर उसका बचना बड़ा कठिन हो जाता है ॥

उक्त रोग का लक्षण यत्न।

माता के विदग्ध दूध के पीने से बालक के पक्काशयस्थ वायु कुपित हो पित्त के साथ मिल जाने से छाती का कफ सूख जाता है तब प्राण वायु के अवरोध से स्वास गत वायु का गमनागमन कुछ कम होने के कारण बालकों को एक प्रकार की हांफी पैदा होती है तब पेट उसका अति कोमलता के कारण उछलने लगता है उसी को लोग पसुली की बिमारी जानते हैं ॥

यह रोग दो प्रकार से होता है एक वायु पित्त के कोप से दूसरा केवल वायु से, पहले का लक्षण यह है कि पेट बहुत अधिक न उछले दस्त पतला हो, पेशाब बहुत गर्म और कम उतरे, गले में कफ का घुरघुराहट हो या न भी हो पियास से ओंठ चाटे और पानी के तरफ ज्यादा रुजू हो, कपड़ा मुह पर न रख सके और कभी २ घबड़ा कर दूध भी न पिये। दूसरे का लक्षण जो सिर्फ वायु से होता है वह यह है कि मल के सूख जाने से दस्त न हो, पेट बहुत उछले, मूत्र अति उष्ण हो और कम मूते और गला सांय २ करे या गलेमें कफ बोले, नासिका का छिद्र सूख जाय स्वास मुखसे आवे और कुछ पेट भी फूल जाता है ॥

पसुली की बिमारी की अनभूत महौषधि।

जो रोग सिर्फ वायु पित्त के कोप से होता है कि जिसका लक्षण ऊपर लिख चुके हैं, उसका उत्तम उपाय यह है कि पहिले उसका दस्त इस औषध से गाढ़ा और कम कर दे। बेल की गरी सूखी ६ मासा,

पुराने आम के गुठली की गरी ४ मासा दोनों को महीन चूर्ण कर ४ मासा मिश्री मिला वय को ६ मात्रा कर पानी के साथ दिन में ६ मरतबे करके पिला दे। या केवल बेल का मुरब्बा दो २ मासा करके दिन में ४ मरतबे पानी में घोल कर पिला दे। एकही दो रोज में दस्त गाढ़ा और कम हो जायगा। बाद दो रोज के पांच २ दाना शीतल चिनीकी बुकनी दो २ घंटे पर पानी के साथ देकर पेशाब की गर्मी भी छांट दे। जब देखे कि इसका दस्त और पेशाब साफ होता है सिर्फ गले में कुछ कफ का घरघराहट बाकी है तब कार्बोनेट आफ सोडा या साफ किया हुआ सज्जीखार ६ रत्ती मिश्री ४ रत्ती दोनों को मिला ४ भाग कर पानी के साथ दिन में ४ दफे पिला दे। ऊपर लिखी हुई मात्रा दो वर्ष से ऊपर वाले बालकों के लिये है, उससे कम उमरवाले बालकों को आधा मात्रा देना चाहिये और उनकी माता को गर्म चीजों से परहेज करावे।

दूसरा जो केवल वायु से होता है उसमें पहिले दस्त खुलासा करावे वह यह है कि सोडा ३ रत्ती, गुलकन्द गुलाब ४ मासा पहिले गुलकन्द को थोड़े से पानी में घोल मल कर छान ले तब उसी में सोडा डाल पिला दे। इसी तरह दिन में ३ या चार मरतबे पिलावे। यदि इससे एक रोज में दस्त न आवे तो दूसरे रोज सबेरे रेंड़ी का तेल २ मासा तारपिन का तेल २ बिन्दु थोड़े से दूध में मिला के पिला दे। बाद दस्त साफ आने के पूर्वोक्त रीति से शीतल-चिनी पिला पेशाब भी साफ कर दे। यदि लड़का कुछ खाता पीता हो तो उसे मूंग की मुलायम खिचरी या साबूदाना दूध मिश्री के साथ दे। निस्सन्देह बालक पांच सात रोज में आराम हो जायगा॥

आशा है कि हमारे प्रिय पाठक गण इस लेखानुसार उपाय कर बालकों को अकाल काल के मुख से बचाय इसका आन्दोलन अवश्य करेंगे। क्योंकि जीवदान के समान दूसरा दान नहीं है और न जीव रक्षा के बराबर संसार में कोई उपकार है। लिखा भी नन्दपुराण में॥

"अप्येकंनीरुजीकृत्य व्याधितंभेषजैर्नरः। प्रयातिब्रह्मसदनं कुलसप्तक संयुतः" जो मनुष्य एक भी रोगी को औषध द्वारा निरोग करता है वह सात कुल सहित ब्रह्म लोक को जाता है "कपिलाकोटिदानाद्धि यत्फलं परिकीर्तितम्। तत्फलंकोटिगुणितं मेकातुरचिकित्सया" एक कोटि कपिला गौ के दान में जितना फल है, उसका कोटि गुण फल एक रोगी की चिकित्सा में है पाद्मश्च "दीर्घतीव्रामयग्रस्तं ब्राह्मणंगामथापिवा, दृष्ट्वापथिनिरातंकं कृत्वाब्रह्महाशुचिः" पुरातन कठिन रोग ग्रस्त ब्राह्मण या गौ को रास्ते में देख उसका रोग छुटा देने में ब्रह्म हत्या का पाप छूट जाता है। पुरा काल में एही भूमण्डल मध्य में मनुष्यों के कल्याण एवं देह रक्षार्थ निमित्त अनेक महर्षि बहु यत्न द्वारा अनेकानेक द्रव्य तथा शारीरक परीक्षा कर अथर्व वेदान्तर गत आयुर्वेद नामक प्रतिष्ठित शास्त्र निर्माण किया तद्वारा अद्यपर्यन्त दयावलम्बी प्राज्ञ वैद्य वर देश काल के अनुसार प्राणी मात्र का दुःख हरण करते आये। अतएव काल से समुद्र तुल्य आयुर्वेद शास्त्र का शंका समाधान एवं समालोचना न होने से प्राय लुप्त ही हो गया॥

धातृ शिक्षा।

सब से पहले इसके लिखने का अभिप्राय यह है कि उत्तमोत्तम स्वास्थ्य सभी को लाभ हो सक्ता है जिसके पूर्णायु वह्र्क का उद्योग जन्म से यथा सम्भाधान ही से किया जाय, क्योंकि "छिन्नेमूलेनैव पर्णंनशाखा" इससे जड़ का मजबूत होना अत्यावश्य है। और यह सभी जानते हैं कि बालकों के भीतरी पीड़ा का हाल जानना हर एक का काम नहीं है? सेवाय उन वैद्यों के जिन्हें आयुर्वेद का पांचवा अंग कौमारभृत्य नामक तंत्र में खूब अभ्यास हो पर इस बात का बड़ा खेद और अत्यंत शोक है कि हमारे इस देश के वैद्य लोग सुश्रुतादि आयुर्वेद के अमृत सरोवर में स्नान न करने से यह तंत्र बिलकुल नहीं जानते इसी से

अपकीर्ति और अपयश का टीका लगाये फिरते हैं कि जिससे हवरे के नहाने वाले (घर्मकार कर्म्मीहर) भी घिनाते हैं। बाल्य चिकित्सा पर ध्यान देना वैद्यों को क्या गृहस्थ मात्र को भी उचित है। बालकों की अवस्था तीन भाग में विभक्त है॥

पहली शिशुता, जोकि जन्म से दो वर्ष पर्य्यन्त जब तक कि दूध के सब दांत न निकल आयें॥

दूसरी कुमारता, अर्थात् दो वर्ष से सात आठ वर्ष पर्य्यन्त जब तक कि दूध के समय दांत झड़ कर ठहराऊ दांत सब न आजांय॥

तीसरे कैशोर, जो कि कुमारता बीतने के उपरांत पन्द्रह सोलह वर्ष पर्य्यन्त की अवस्था गिनी जाती है॥

अब हम शिशु संज्ञक बालक को जन्म समय से लेकर जब तक कि दूध के सब दांत न निकल आयें पूरी और परिक्षित चिकित्सा लिखते हैं। पाठक गण अपनी २ स्त्रियों को इसे अवश्य पढ़ावैं॥

स्नान॥

जन्म हुए बालक को उसी समय स्नान कराना अच्छा नहीं। प्रायः स्त्रियां ठंडे पानीसे भी नहवातीं या धो डालती हैं, पर इससे उपकार न होकर और अनहित होता है जैसा कि आंख और फेफड़े में जलन इत्यादि। परंच अति गरम जलसे भी नहवाना उचित नहींहै क्योंकि इससे भी रक्तके अति कोमलता से बच्चे के शरीर में ददोरा या दाना २ सा निकल आता है। इसलिये केवल पानी को जरासा चिकाले जैसा कि जाड़ेमें प्रातःकाल में कूपका जल उष्ण होता है। आजकल जन्मतुए को दाई लोग साबुन लगा के नहलाती हैं पर याद रखना चाहिये कि साबुन बच्चे के आंखमें न जाने पावे। इस प्रकार नहवाना उत्तमहै कि

एक किसी पात्र में शीतलसे जल भर जन्मतुए बालक को खूब नहया कर तमाम मैल साफ करदे क्योंकि जो धात्री डर से अधिक जल में न नहवा कर ऐसाही धोना के रहने देती हैं, इससे मैल जम कर त्वचा में अनेक प्रकार के रोग हो जाते हैं। बच्चे को नहवाने के बाद बहुत कोमल कपड़े के टुकड़े से आहिस्ते २ रगड़ के चमड़े का मैल पोंछ लेना चाहिये ताकि कुछ गर्भ के मैल का अंश न रहजाय॥

एक बार प्रातःकाल बालकों को शिर से पैर तक रोज नहवाना चाहिये। बहुत सी औरतें जानती हैं कि बालकों को रोज २ नहवानेसे सर्दी और कफ खांसी हो जाती है? सो भूल है, बल्कि चौथे आठवें नहवाने से बेसक बालक बीमार हो जाता है। ऐसा देखने में भी आया है रोज २ जल द्वारा सफाई न रखने से बालकों के शिर में मैल जम कर फुन्सियां निकल आती हैं जिसे वैद्यक में उपशीर्षक (चांइचूर) कहते हैं इसी प्रकार गुदा में मैल जमकर गुदपाक (दिशाकेजगह घाव) और कान के पीछे मैल जमकर कनकटी हो जाती है। हां इतना अवश्य करना चाहिये कि जन्म समय में या जाड़े के ऋतु में बालक को स्नान कराय मुलायम कपड़े से बहुत शीघ्र तमाम शरीर पोंछ ले बाद इसके धात्री अपने हाथों को आग में सेंक ले ताकि फिर ठंढे २ हाथ बालक के शरीर में न लगने पावें, इस प्रकार करने से अवश्य बालक बलिष्ट होता जायगा। हमने प्रायः देखा है कि गरम ऋतु में भी स्त्रियां धात्रीशिक्षा की अनभिज्ञता से दो २ घंटे तक जन्मतुए बालक को आगसे सेंका करती हैं। दो महीने के बाद यदि बालक किसी कारण से कृश और आशक्त देख पड़ता हो तो उसके नहवाने के पानीमें तनिकसा सेंधानिमक डाल देने से लड़का बली होता जायगा॥

जिस ढङ्ग से बच्चों को नहवाना लिखा है यदि वैसाही प्रति दिन स्नान कराया जावे तो अवश्य बच्चा नाना प्रकार के दुःखों से बचा रहेगा इसी से प्राचीन वैद्यवरों ने यह यथार्थ गुण जान संस्कृत में जल का नाम

जीवन (जिलाने वाला) कहा है वास्तविक वायु के नीचे जलही जीवों के जीवन का मूल है बिना जल जीवगण का प्राणधारण कदापि नहीं हो सक्ता । ठीक समय के स्नान से रोगदोष दूररहते हैं नाड़ियां सतेज और शरीर बलिष्ट होताहै । एतद्देशियों के लिये ऐसाउत्तम और कोई पदार्थ बलदायक नहीं है इसमे हे बच्चों की माता यदि प्रीति पूर्वक नियम बांधके नित्य बच्चों को स्नान कराती जाओगी तो अवश्य बालकोंकी स्वास्थ्यता दिन २ बढ़ती जावेगी इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥

स्तनपान का बयान ॥

जो स्त्री दो एक वार बच्चा पैदा कर चुकी हैं वह जन्मतुए बालक को थोड़ा ठहर के स्तन का दूध अवश्य पिलावे । बहुतेरी गर्म मिजाज वाली स्त्रियों के एक दो रोज स्तन में दूध आता नहीं, उस अवस्था में जब देखे कि दो एक वार बच्चे के मुखमें स्तन देके चुभलाने से भी दूध नहीं निकलता तब लाचार हो गाय या बकरी के दूध में आधा गर्म पानी और जरासा खांड़दार चिनी डाल कर पिलावे । बाद इसके ऐसा उपाय करे * जिससे माताके स्तन में शीघ्रही दूध आजाय क्योंकि जन्मतुए को कुछ रोज तक ऊपर का दूध या किसी प्रकार का खाना खिला कर रखने से बच्चा बहुत दुर्बल और कमजोर हो जाता है ॥

पर यह बात बहुत याद रखने के योग्य है कि बिना पानी मिलाहुआ दूध बच्चे को कभी न पिलावे क्योंकि निखालिस दूध वह हजम नहीं कर सकते । फटा २ दूध की करने लगते हैं और उन्हें अनपचा दस्त आने लगता है और पेट के दर्द के मारे रें, रें, किया करते हैं ऐसी हालत में न सूझ पड़ा तो लड़के खतमही हो जाते हैं ॥

* दूध में दो तोला सतावर पका थोड़ी सी मिश्री डाल कर पिलाना या चार मासा तालमखाना के चूर्ण की फंकी फँका कर ऊपरसे दूध पिलाना, सोप मक़त वाली को दो पीपर दूध में पकाकर पिलाना ॥

जो बच्चा दूध पीने में इच्छा न करे अथवा वह पीने चाहता है और पीते नहीं बनता तो झट किसी अच्छे चिकित्सक को बुला के दिखा लेना उचित है कि बच्चे को जीभ किसी दूसरे स्थान से जुड़ तो नहीं गई जो वह दूध नहीं पी सक्ता। यदि जुड़ी हो तो अति सूक्ष्म अस्त्र से उसे चीर कर अलग करदे जिससे कि बच्चा सुख से दूध पीने लगे॥

यह तो सभी जान सकते हैं कि जहां लड़का पेट के बाहर हुआ और मां का दूध पिया तहां जरूर ही पाखाना फिरेगा लेकिन जब देखे कि जन्म-हुआ अपनी मां का दूध पीने पर भी दस्त नहीं फिरा और एक या दो रोज बीत गया है तो अवश्य है कि लड़के को एक मासा चांदी के तेल में जरा सा शहत मिला के चटादे या दूधमें घोलकर पिलादे क्योंकि दो तीनदिनतक पेट में पुराना मल रहने से सूख जाता है और उसी से बच्चे को धनुष्टंकार रोग हो जाता है जिसे लोग जमुहा दबाना कहते हैं। ऐसा भी देखने में आया है कि बच्चे को दस्त आरहे हैं और जमुआ दबा लिया है? कारण यह है कि आज कल धात्री विद्या के न जानने से स्त्रियों को देश काल का पहिचानना तो जाती रही परंपरा की यथाधुंध बातें याद हैं, जैसे सोहर ऐसे घर में करना जो घर मकान भर में सब से खराब सकेत अंधियारा और कोने में पड़ता है। हवा स्वप्न में भी न जा सके इस तरे मकान बन्द उस पर भी दिन रात राई और लहसन की धूनी प्रसूती यदि अति गर्म प्रकृति वाली भी हो तो भी उसे झोंका झोंक सोठौरा और अजवाइन दिया जाता है। उपरोक्त कारणों से दग्ध हुआ माता का दूध जहां बच्चे ने पिया शीघ्रही दस्त पतला और पेशाब अति गर्म अदहने सा होने लगा, वह सिर में गर्मी पहुंच तालु (जिसकी ताकत से लड़के दूध पीते हैं) सूख लबड़ का नस खिंच जबड़ा बैठ जाता है। इसे भी जमुआ दबाना कहते हैं, और भी बहुत से कारण हैं जिससे यह रोग होता है पर इस देश के मूर्ख लोग सेवाय झाड़ फूंक के और जान्ते ही नहीं। फिर यह रोग ऐसा हत्यारा है कि जिस लड़के को होता है उसकी जानही ले के छोड़ता है। और में इसी रोग से हजारों लड़के मरते हैं। पाठक गण यह अमोल्य बातें आपही पढ़ कर न रखदें प-

रंच कोचिन करके स्त्रियों को अवश्य पढ़ाइयें। फिर इखिये स्त्रियां धात्रो कर्म में कैसी चैतन्य हो जायगी कि आप को ४) विजिट देके भी किसी मेम साहब को न बुलाना पड़ेगा॥

फिर भी कहा जाता है कि माता के उचित है कि नित्य नियम पूर्वक वंधेज से बच्चे को दूध पिलावें क्योंकि प्रायः ऐसा भी देखने में आया है कि बच्चों की मां निरोग रिष्ट पुष्ट और स्तन का दूध वेकार रहित है तो भी बालक वीमार ही रहता है कारण यह कि दूध पिलाने की रीति नहीं जानतीं॥

चेत करके दहिने वायें दोनों स्तनों का माता पारी २ बच्चों को स्तन पान करा दिया करें यह न ख्याल करें कि स्तन छुड़ाने से बालक रोने लगेगा क्योंकि वैसा न करने से शायत किसी स्तन में दुग्ध इकट्ठा हो जम गया तो फ़ौरन वह दूध स्तन में किसी न किसी प्रकार का क्षय उतपन्न कर सक्ता है॥

वाजी २ स्त्रियों का यह हाल है कि किसी रोज लड़के को तो दिन भर दूध ही पिलाया करतीं हैं और कभी आलस्य वश दिन में फ़क़त दो तीन दफ़े पिला के रहने देती है इससे अनपच होकर लड़के को अवश्य पेट की वीमारी हो जाती है, इस लिये दूध पिलाने का वक्त बांध रखना चाहिये, जैसा कि लड़के को प्रथम महीने में दिन भर में आठ दफ़े और रात को दो तीन दफ़े से ज्यादे दूध नहीं पिलाना चाहिये इसी प्रकार ज्यों २ बच्चों कि आयु बढ़ती जाय अर्थात् पांच छः महीने के बाद चार २ घंटे का नियम बांध दे। अकसर धात्री लड़कों को नींद से उठा के दूध पिलाने लगती हैं या बच्चा सो रहा है और आप चुभर २ उसे दूध पिलाये जाती हैं यह आदत बहुत ही खराब है, और ज्यादा रात बीते पर भी दूध न पिलाना चाहिये, बाद एक पहर के अथवा ग्यारह बारह बजे के बाद अवश्य

रोवैंगे या रात को बच्चा से जरा दूर लड़के को सुलावैं ताकि वह मन मानता दुग्ध न पिये दूर २ सुलाने से मेरा मतलब यह नहीं है कि दूसरी कोठरी या दूसरे पलंग पर॥

एक आदत और भी यहां की स्त्रियों में देखी जाती है कि जैसे ही रसोई पकाय आंच से बाहर आई उसी समय दुग्ध पिलाने लगती हैं या किसी के साथ लड़ रही हैं और दुग्ध पिलाती जाती हैं ऐसा न चाहिये क्योंकि उस समय उनका दुग्ध विष समान हो जाता है॥

याद रखना चाहिये कि जब माता को कोई बीमारी हो या तबियत गुस्से या सोच से परेशान हो या व्रत उपवास किये हो तो लड़के को उस समय मा का दुग्ध न पीने देना चाहिये क्योंकि उस दुग्ध के पीने से बालकों को अनेक प्रकार की बीमारी हो जाती है॥

प्रसूता का शरीर सबल और स्तन दुधार हो तो चार मास पर्य्यन्त बच्चे को कोई अन्य आहार देने की ज़रूरत नहीं है यदि सामने के दो दांत निकल आवैं तब मा के दूध के सिवा साबूदाना या पुराने चावल का भात दूध के साथ देने से कुछ हर्ज नहीं होता और मा का दूध तभी छुड़ाना उचित है जब लड़के का समग्र दांत निकल आवे, किसी कारण से मा के स्तन में दूध न होता हो या मा सूतिका ज्वर आदि रोगसे ग्रस्त हो तो चाहिये कि दूध पिलाने को कोई अन्य धात्री रखले या दूध पिलाने वाली सीसी से पिलावे, पर दूध गाय या बकरीही का होना उचित है और बाजे २ लोग लड़कों को गदही का दूध पिलाते हैं, लेकिन दूध में पानी जरूर मिलाना चाहिये और जैसे २ लड़के की उम्र बढ़ती जाय वैसे पानी का हिस्सा भी कम करता जाय, पानी सिर्फ इस लिये बढ़ाया जाता है कि दूध पतला हो जाय जिससे कि लड़के को आसानी से पच जावे और सबेरे का दूध तीसरे पहर को और तीसरे पहर का दूध शाम को न पिलाना चाहिये॥

जब बच्चा छः सात महीने का हो जाय तो उसे मा के दूध के

रंच के नियम करके स्त्रियों को अवश्य पढ़ाइये। फिर इनलिये स्त्रियां धावी कर्म में कैसी चैतन्य हो जायगी कि आप को ४) विजिट देके भी किसी मेम साहब को न बुलाना पड़ेगा॥

फिर भी कहा जाता है कि माता को उचित है कि नित्य नियम पूर्वक वंधेज से बच्चे को दूध पिलावें क्योंकि प्रायः ऐसा भी देखने में आया है कि बच्चों की मां निरोग दिष्ट पुष्ट और स्तन का दूध वेकार रहित है तो भी बालक बीमार ही रहता है कारण यह कि दूध पिलाने की रीति नहीं जानतीं॥

चेत करके दहिने बायें दोनों स्तनों का माता बारी २ बच्चों को स्तन पान करा दिया करें यह न ख्याल करें कि स्तन छुड़ाने से बालक रोने लगेगा क्योंकि वैसा न करने से शायद किसी स्तन में दुग्ध इकट्ठा हो जम गया तो फ़ौरन वह दूध स्तन में किसी न किसी प्रकार का क्लेश उत्पन्न कर सक्ता है॥

बाजी २ स्त्रियों का यह हाल है कि किसी रोज लड़के को तो दिन भर दूध ही पिलाया करतीं हैं और कभी आलस्यवश दिन में फ़क़त दो तीन दफ़े पिला के रहने देती है इससे अनपच होकर लड़के को अवश्य पेट की बीमारी हो जाती है, इस लिये दूध पिलाने का वक़्त बांध रखना चाहिये, जैसा कि लड़के को प्रथम महीने में दिन भर में आठ दफे और रात को दो तीन दफ़े से ज्यादे दूध नहीं पिलाना चाहिये इसी प्रकार ज्यों २ बच्चों कि आयु बढ़ती जांय अर्थात् पांच छः महीने के बाद चार २ घंटे का नियम बांध दें। अकसर धावी लड़कों को नींद से उठा के दूध पिलाने लगती हैं या बच्चा सो रहा है और आप चुपुर २ उसे दूध पिलाये जाती हैं यह आदत बहुत ही खराब है, और ज्यादा रात बीते पर भी दूध न पिलाना चाहिये, बाद एक पहर के अथवा ग्यारह बारह बजे के बाद अवश्य

रोयेंगे या रात को बच्चा से जरा दूर लड़के को सुलावें ताकि वह मन मानता दुग्ध न पिये दूर २ सुलाने से मेरा मतलब यह नहीं है कि दूसरी कोठरी या दूसरे पलंग पर ॥

एक आदत और भी यहां की स्त्रियों में देखी जाती है कि जैसे ही रसोई पकाय आंच से बाहर आईं उसी समय दुग्ध पिलाने लगती हैं या किसी के साथ लड़ रही हैं और दुग्ध पिलाती जाती हैं ऐसा न चाहिये क्योंकि उस समय उनका दुग्ध विष समान हो जाता है ॥

याद रखना चाहिये कि जब माता को कोई बीमारी हो या तबियत गुस्से या सोच से परेशान हो या व्रत उपवास किये हो तो लड़के को उस समय मा का दुग्ध न पीने देना चाहिये क्योंकि उस दुग्ध के पीने से बालकों को अनेक प्रकार की बीमारी हो जाती है ॥

प्रसूता का शरीर सबल और स्तन दुधार हो तो चार मास पर्य्यन्त बच्चे को कोई अन्य आहार देने की ज़रूरत नहीं है यदि सामने के दो दांत निकल आवें तब मा के दूध के सिवा साबूदाना या पुराने चावल का भात दूध के साथ देने से कुछ हर्ज नहीं होता और मा का दूध तभी छुड़ाना उचित है जब लड़के का समग्र दांत निकल आवे, किसी कारण से मा के स्तन में दूध न होता हो या मा सूतिका ज्वर आदि रोगसे ग्रस्त हो तो चाहिये कि दूध पिलाने को कोई अन्य धात्री रखले या दूध पिलाने वाली सीसी से पिलाये, पर दूध गाय या बकरीही का होना उचित है और बाजे २ लोग लड़कों को गदहों का दूध पिलाते हैं, लेकिन दूध में पानी जरूर मिलाना चाहिये और जैसे २ लड़के की उम्र बढ़ती जाय वैसे पानी का हिस्सा भी कम करता जाय, पानी सिर्फ इस लिये बढ़ाया जाता है कि दूध पतला हो जाय जिससे कि लड़के को आवाओ से बच जावे और सबेरे का दूध तीसरे पहर को और तीसरे पहर का दूध शाम को न पिलाना चाहिये ॥

जब बच्चा छः सात महीने का हो जाय तो उसे मा के दूध के

अलावा संसारी खाना (दाल भात रोटी) आदि भी थोड़ा २ खिलाना प्रारंभ करदे और पुराने महीन चावलका भात और दूध खिलाना बच्चों को अति लाभ दायक होता है, परन्तु बक्त बांध कर खिलाना बहुत ज़रूर है। बहुत सी औरतें बच्चों को ज़बरदस्ती ज्यादे खाना खिला देती हैं इस वास्ते कि लड़के मोटे ताजे हो जांय, ऐसा समझना बड़ी भूल है, क्योंकि जितना पच सके उतनाही खिलाना अच्छा है। जियादे खिलाने से लड़के का पेट निकल आता है, गला पतला और देखने में लड़के दुर्दशाहीन मालुम पड़ते हैं, इस लिये कम और दिन रात में सिर्फ तीन या चार दफे खिलाना उत्तम है, और यह बात भी याद रखने के योग्य है कि जब तक लड़का दशबर्ष का न हो जाय बिना दूधके खाना कभी न देना चाहिये, कोई २ दूध न देकर मांस का जूस बच्चों को पिलाते हैं परन्तु यह बच्चे के पक्ष में पथ्य नहीं कहा जा सक्ता क्योंकि उससे पेट में अम्ल (खट्टा रस) उपजता और पेट फूलता है, और छांट भी हो जाती है, एवं कभी २ पेट में पीड़ा और मरोड़ भी उठने लगती है। लेकिन दूध भी अनेक गायों का या गाय बकरी भैंस का एक में मिला के देना अनुचित है सिर्फ एक ही गाय या बकरी का दूध देना चाहिये। जिस दोहनी में दूध दुहा जाय अथवा जिस पात्र में दूध रक्खा रहा करे उसको चेत करके देख लेना चाहिये कि भीतर मैल तो नहीं जमा है। मैल जमे और बिना आग के सेंके दोहनी में का दूध थोड़ही पेट में जाके सड़कर दस्तीला हो जाता है। सांझ सबेरे दोनों वेला नित्य दुहे की टटका दूध उसमें जरासी मिश्री और कणिकाभर निमक डाल कर भात के या रोटी के साथ या ऐसाही पिला देना बच्चोंको बड़ा फायदा करता है। मिश्री से मांस पुष्ट होता है और नोन से पचने की शक्ति बढ़ती है और पेट में कीड़े नहीं पड़ने पाते॥

बच्चों को अधिक मीठा और फल फलहारियोंसे खूब परहेज करना चाहिये। यहां के औरतों की बान है कि जहां लड़का रोया झट उसके हाथ में मीठा या कुछ फल का चीज थँमा देतीहैं यह नहीं जानतीं पीछे इसको सिर पर हाथ धर कर रोना होगा॥

मीठा खिलाना दांत के हक में बहुत खराब है और इससे शीघ्रही सुखंडी (मिठया) रोग हो जाता है कि जिस बिमारी से आज कल भारतवर्ष के असंख्य लड़के बिचारे अकाल कालग्रास होते जाते हैं, इस रोग का लक्षण और औषध आगे लिखेंगे। फल फलहारियों से लड़कों के पेट में बीमारियां हो जाती हैं ॥

लड़कों को कपड़ा पहिनाना।

जहां लड़का पैदा हुआ उसी वक्त से यहां की धात्रू शिक्षा हीन स्त्रियां बच्चे को शिर से पैर तक ऐसा ढांप रखती हैं कि जिसका कुछ बयान नहीं, यहां तक कि गर्म ऋतु में भी रूईदार या फलालैन के कनटोप से हर समय शिरको ढांपे रहती हैं। परन्तु इससे बिगाड़ छोड़ कुछ भी गुण नहीं हो सकता। साधारण रूई के कपड़े के टुकड़े की अपेक्षा फलालैन अथवा अन्य किसी गर्म कपड़े के टुकड़े से बच्चे का पेट बांधे रखना ठीक है। कारण यहहै कि बच्चे का पेट दब्दाया रहताहै जिससे उसको सुख और स्वस्थता बोध होती है और मूत्र आदि के द्वारा जो यह भीग भी जाताहै तो भी नाभि कब्जी नहीं भीगने पाती, परन्तु उस भीगेहुये को अलग कर दूसरा पहिना देना उचितहै। परन्तु याद रखना चाहिये कि उसे बहुत कस के न बांधे क्योंकि कसके बांधने से अँतरी का काम ठीक २ नहीं होने पाता विशेष करके यदि अँतरीका कुछ दुख बच्चे को हो गया तो आरोग्य करने में बड़ी कठिनता पड़ती है ॥

बहुत लम्बे कपड़े के द्वारा बच्चे को लपेट रखना या अनेक कपड़ों से खूब ढांप रखना बिलकुल वाहियात है, सिर्फ एक ऐसे साफ और मुलायम कपड़े से बच्चों को ढांके रहना चाहिये ताकि मच्छर आदि न काटैं न तेज वायु बहुत शरीर में प्रवेश करे और छाती पेट एवं पांव सर्वदा ढांके रहना चाहिये पर शिर नेत्र मुख नासिका और कर्ण (कान) खुला रहना उत्तम है। जो लड़का जन्महीं से कृश हो या खांसी आती हो तो जाड़े और वर्षा के दिनों में फलालैनका टुकड़ा उसे उढ़ाये रहना बहुतही अच्छा है ॥

जब देखे कि कपड़े मैले हो गये हैं या पेशाब करने से भीज गया है फौरन उतार कर दूसरा साफ कपड़ा पहिराना उचित है क्योंकि भीजा या पसीना खाया हुआ कपड़ा बच्चे के देह पर पड़ा रहने न पावे ॥

शिर खुला रहे ऐसा सुन कर बहुत से लोग शङ्कित होंगे उन्हें चाहिये कि विशेष कर गर्म ऋतु में मोटे कपड़े की टोपी या कनटोप न पहिना के पतीले सूत के कपड़े की टोपी पहिनाया करें, क्योंकि मोटी टोपी या कनटोप पहिना रखने से माथे में गर्मी पहुंच पसीना चुकचुका जाता है बाद वही पसीना शीतल हो फिर उसी गर्म माथे में खुश्क हो जाता है उसी गर्मी सर्दी के योग से बच्चे की नाक बहने लगती है ॥

जिस घरमें लड़के रहते हों वह घर खूब साफ और हवादार होना उचित है । रात को लड़के गर्मी से रोयें तो उन्हें पङ्खा झल कर हवा देनी चाहिये । जब चौदह पन्द्रह रोज के लड़के हो जांय तो उन्हें गोद में बाहर ले जाकर हवा खिलानी चाहिये, पर यहां की दुष्ट स्त्रियों के मारे लड़के बिचारे वर्षों बाहर नहीं निकलने पाते हैं, जहां कोई भी बाहर ले चला वहीं कांव २ कर दौड़ी खबरदार बाहर न ले जाओ फलनियां बड़ी टोनहाइन है देखते टोना लगाय देंहे । हे ईश्वर दयानिधि भारत वर्ष से कब यह कुसंस्कार दूर होगा ॥

दांत निकलना ।

बच्चों को दांत निकलने के समय भी बड़ी तकलीफ होती है, प्रायः एतद्देशीय अशिक्षित स्त्रियां दांत आने के पूर्व की अनेकानेक उपद्रवों को टोना और नजर समझ बस झाड़फूंक के भरोसे में पड़ कर बालकों के जीवन से हाथ धो बैठती हैं, दांत निकलने का समय सब बालकों का एक सा नहीं होता, किसी को तो सातवें आठवें महीने में दूध के दांत निकलने लगते हैं, कभी ऐसा देखा गया है कि तीन चार मास के भीतरही बच्चों का दांत निकलना प्रारंभ हो गया है । आज तक देखने में नहीं आया पर सुना है कि बाजे बच्चे पेट ही से दांत

लिये आये हैं। अस्तु पर ऐसा बच्चा बिरलाही कोई जन्मता होगा और यह भी कह सक्ते हैं कि पेट ही से उत्पन्न दांत शीघ्रही फ़र भी जाता होगा। किसी २ बच्चे को एक दो बरस इससे अधिक वर्ष होने पर भी दांत नहीं निकलते केलनों के जवानी पर दुग्ध का दांत निकलता है किसी डाक्तरी पुस्तक में लिखा है कि फ्रांस देश में एक बुढ़िया के दुग्ध के दांत पचासी वर्ष की अवस्था में निकले थे, किसी २ ग्रंथकारों का कथन है कि केलनों के जन्म भर दांत ही नहीं निकलते॥

बालकके दन्तोत्पत्ति का शुभाशुभ फल भी कई एक ग्रंथों में लिखा है, जैसे, यदि बालक दांत समेत जन्मे तो उसका जन्म राक्षसका जानना और उससे अनेक जीवों को क्लेश पहुंचे और माता को शीघ्र ही नाश करे। प्रथम द्वितीय और तृतीय मास में बालक के दांत निकले तो पिता का नाश करे चाहे वह पिता सूर्य्य के समान तेजस्वी क्यों न हो पर वह बालक यम समान हो शिघ्रही पिता का प्राण हरे। चतुर्थ मास में दन्तोत्पत्ति होने से निज भ्राता को नाश करता है। पञ्चम मास में मामा को और षष्ठम मास में माता पिता के धन का नाशक हो। अगर सातवें मास में बालक के दांत निकले तो अवश्यमेव दासत्व को प्राप्त (किसी का सेवा टहल करने वाला) हो। अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश, त्रयोदश, और चतुर्दश इन महीनों में दांत के निकलने से बालक सौभाग्य युक्त अनेक सुखों के भोगने वाला होता है, निषिद्ध मासों में दन्तोत्पत्ति होने का शान्ति भी ग्रंथकारों ने लिखा है पर उसके लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ी॥

दुग्धके दांतोंकी संख्या १० ऊपर और १० नीचे मिला कर २० होती है। तिनमें बीच वाले साम्हने के चार २ दांतों को राज दन्त और उनके पास के एक इधर एक उधर इस क्रम से दो २ दांतों को कुक्कुर दन्त (भेदन दन्त) कहते हैं और दोनों तरफ के दो २ दांत इसी प्रकार नीचे ऊपर मिला के दांतों को चौभड़ (पेषन दन्त) के दांत कहते हैं। उनके उत्पत्ति का क्रम प्रायः यही देखने में आया है कि पहले नीचे की बाद

ऊपर के पांति के मध्य का दो २ दांत सम और बाद इसके पहिले ऊपर अनन्तर नीचे के निकलते है इस क्रम से प्रायः दो वर्षमें समग्र दांत निकल आते हैं। दांत निकलने के समय अक्सर बच्चों को ज्वर, खांसी और दस्त पतला होने लगता है। जब देखे कि उक्त बिमारियां दांत के वजे से हैं और दांतों की जड़ का मांस फूला एवं छूने में गर्म और पीड़ा बोध हो तो मस्कुर के उस स्थान को जहां पर दांत छिपे रहते हैं सूक्ष्म छूरी से चीर देना चाहिये। लेकिन ख्याल रखना चाहिये यदि मस्कुर फूला और गर्म न मालुम होता हो तो कदापि न चीरे और न अँगुली से दबावे क्योंकि यहां कि स्त्रियां चिरा न देकर प्रायः अँगुली से फूले हुये मस्कुर को दबा देती हैं ताकि चमड़ा फटकर दांत आसानी से निकल आवे पर इससे चीर देना कहीं अच्छा होता है॥

दांत निकलने के समय बच्चा जो चीज हाथ में थांभता है उसे मुह में डाल के मस्कुर के नीचे दांतों की जड़ में रख चाभने लगता है। लेकिन यह वस्तु कड़ी हुई तो अपने दबेरे से दांत जल्द आने में अधिक बाधा करता है इससे छोटी और कड़ी कोई वस्तु भूल कर भी लड़के को न दे शायद धोखे से गले ही में चला जाय, सब से उत्तम यहहै कि एक रबर का गँहा या कड़ूवा बना कर बच्चे की कलाई में पहिराय दे ताकि उसी को बारम्बार मुह में डाला करै। एक बात और भी देखने में आती है कि प्रायः लड़के दांत निकलने की दशा में अपनी अँगुलियां अँगूठा मुह में डाल लिया करते हैं। सो उसे न छुड़ाना अच्छा है, कारण यह है कि एक तो दांत निकलने की व्यथा शांत रहती है, दूसरे दांत निकलने में हित होता है, तीसरे मुह से लार बहने लगता है, उस अवस्था में लड़कों के मुह से लार बहना बहुत अच्छा होता है। यद्यपि अधिक लार बहा करने से बच्चे की छाती पर का कपड़ा भीग जाता है, परन्तु लार के बहने से तालू ओदे रहते हैं और आहार की पचन शक्ति बढ़ती है लेकिन बच्चे के मां को यह भी सर्वदा ख्याल रखना चाहिये कि लड़के का मुह तो नहीं आ गया जो लार अधिक बहता है, क्योंकि मुह आने का लार सिवाय हानि के कुछ भी फायदा नहीं दे

भक्ता, यदि हो तो निम्नलिखित उपायों से शीघ्र ही बच्चे के मुंह को आराम करना अत्यावश्य है। जो अधिक लार बहने से बारम्बार बच्चे की छाती और खाती पर का कपड़ा भीग जाया करता है; उसे चेत कर के पोछ लेना और भीगा कपड़ा उतार के सूखा कपड़ा पहिना देना उचित है॥

एतद्देशीय बच्चों को दांत निकलने की दशा में नाना प्रकारके रोग घेर लेते हैं और उन रोगों से हजारों बिचारे लड़के मर जाते हैं। कारण यह है कि एक तो यहां कि अपढ़ स्त्रियां जन्मतेही से बच्चे को अफ़ीम खिलाना शुरू कर देती हैं कि जिस्से दांत अति पीड़ा और जलन के साथ निकलता है। दूसरे चाहे लड़का मर जाय पर मुबकुर कभी न चीरने देंगी, तीसरे टोना टामर पर ऐसा दृढ़ बिस्वास पड़ा है कि सिर्फ़ फ़रवाने ही के भरोसे में बच्चे को खतम कर डालतीं हैं॥

माता के दुग्ध बिकार से प्रायः बच्चों का मुंह आजाता है, सो दो प्रकार का है जो बच्चे के मुख में सफेद मलाई सी जमी और फटी २ सी देख पड़े वह मुख स्राव है लौकिक में इसे सफेद मुंहा कहते हैं इसमें मुंह से लार बहुत बहता है और जो बालक के मुख में लाल २ दाने या छाले पड़ जांय उसे मुख पाक (लालमुंहा) कहते हैं॥

चिकित्सा।

सफेद कत्था ६ माशा, शीतलचिनी १० दाना, कपूर १ रत्ती तीनों को पानी में पीस अँगुली से मुख के भीतर लेप करै॥

पीपल का छाल और पत्र दोनों सुखाय बराबर ले कूट कपड़ छान कर २ रत्ती के अन्दाज दिन में ४ दफे सहत के साथ चटाने से बच्चों का मुखस्राव आराम होता है॥

खरिधन, लोध, तिल, मुलहठी, चारो को छः २ माशा ले पाव भर जल में क्राथ कर, उसी क्राथ में रुई भिगा २ बच्चे का मुख दिन में दो

या तीन दफे पोछ लिया करें इससे मुख पाक शीघ्रही मिट जाता है। लेकिन बच्चे की मां को परहेज अवश्य करना चाहिये । दन्त चिकित्सा आगे लिखेंगे॥

अब सिर्फ यह बात कहना है कि कभी दांत निकलने के समय बच्चों की देह में वा बजा खास कर कानों के पीछे छोटी २ फुन्सियां वा खाज उपजती है परन्तु एकाएक किसी औषध को लगाकर आराम करना हानि कारक है, उस स्थान पर कोई औषध लगाने की जरूरत नहीं है सिर्फ नीम के पानी या साबुन से रोज २ धो देना काफी है और कभी २ जरासा रेंडी का तेल दे के कोठा साफ कर देना चाहिये, सब आपही निवृत हो जावेगी ॥

—:○:○:○:—

बच्चों को हवाखिलान ।

अत्यन्त छुट पनही से चाहिये कि बच्चे को नित्य गोद में ले कर शाम सबेरे घर के बाहर किसी स्वच्छ स्थान में जा निर्मल और आरोग्य कारक वायु का सेवन करावे । कितने रोज के लड़के को बाहर ले जाकर हवा खिलाना चाहिये ? यह बात देश काल और ऋतुओं के स्वभाव से मालुम हो सक्ता है । जैसे गर्मी के दिनों में प्रातःकाल और सन्ध्यासमय पन्द्रह सोल रोज के बच्चे को भी गोद में लेजाकर बाहर हवा खिलाना उत्तम है परन्तु जाड़े और बरसात में इतनी अवस्था वाले को बाहर ले जाना अच्छा नहीं है ॥

जब बच्चा तीन चार महीने का हो जाय तब तो निश्चयही प्रतिदिन दोनों समय बच्चे का पांव अच्छे कपड़े से ढांप तोप के गोद में लेके बाहर किसी उत्तम स्थान में घुमा ले आना लड़कों को जीवन रूपी वृक्षकी जड़ में अमृत का सींचना है । प्रायः देखने में आया है कि जहां बालकों को गोद में लिया बालक खुद प्रसन्न हो बाहर ले चलने के लिये चेष्टा प्रकाश करता है और बाहर ले जातेही बच्चे बहुत सन्तुष्ट और प्रफुल्लित

देख पड़ते हैं। जिस दिन बड़ी ठण्डी हवा चलती हो या गरदा गुब्बार हो तो बच्चे को कदापि न ले जाना चाहिये॥

प्रायः हिन्दुस्तानी गँवरदल मर्द और औरतें लड़कों को गोद में लेना बिलकुल नहीं जानती हैं और न अँगरेजों के लड़कों को गोद में लिये हुए देख शिक्षा होती है। यहां कि जो बेवकूफ मजदूरिन या खुद बच्चे की माता बच्चे की जांघ फाड़ अपने कमर पर बिठा कर ले चलती हैं बल्कि बच्चों को गोद में लेना जानती हैं, इस प्रकार गोद में लेना लड़कों के स्वास्थ्य में बड़ा हानि पहुंचाता है, यहां तक कि फोते के नीचे की नस में अति रगड़ पहुंचते २ वही युवा अवस्था में क्लीवत्व का रूप दिखलाता है॥

बचपन ही से अङ्ग का प्रचालन स्वस्थ्यता के लिये आवश्यक है, यही कारण है कि ईश्वर ने बच्चेको जन्मतेही से उनकी प्रकृत हाथ पैर धकेलने और फेंकने की करदी है। सबको उचित है कि चेत करके बच्चों को एक छोटे खटोले या चौरस जमीन पर गुलगुला और साफ़ बिछौना बिछा उतान लिटा दिया करें, तब देखिये बच्चा कैसा हर्षित और प्रफुल्लित हो हाथ पैर ऐंचता और फेंकता है और खिल खिला कर हंसता है कि देखतेही बनता है, उक्त क्रिया (परिचालन) से बच्चे की आभ्यन्तरिक पेशियां बढ़ती हैं और पीठ की रीढ़ एवं हाथ पांव अच्छा व लवान होता है और विशेष बात यह है कि बच्चे का खाना हजम हो जाया करता है॥

देखिये ईश्वर की कृपा से प्रथमतः बच्चे अनायास स्वभाव ही से बकैयां चलने लगते हैं और फिर स्वभावही से क्रमशः कुछ पांव खड़े भी होने लगते हैं बाद चलने फिरने की शक्ति हो जाती है भगवान ने जो कुछ चमत्कारी और प्रवीणता किया है सब धन्य है कितनी स्त्रियां बच्चों को बकैयां चलने से रोकती हैं इस लिये कि कपड़ा मैला हो जायगा यह नहीं जानतीं कि बकैयां चलने से बच्चों की जांघ, हाथ पांव और समग्र नस रोज बरोज बली होते जाते हैं॥

यह भी स्त्रियों को जानना अवश्य है कि जब तक बच्चे की पीठ का हाड़ (रीढ़) मजबूत न हो जाय और लड़के कुछ थांम कर स्वयं न खड़े होने लगें तब तक प्यार से बच्चे को बहुत न झकझोरे और न खड़ा करने की चेष्टा करे, प्रायः बच्चों को नादान स्त्रियां दोनों हाथ में पकड़ के गेंदे के समान ऊपर उछाल कर लोक लेती हैं यह महज नादानी है क्योंकि इस तरह पर बच्चा भयभीत हो जाता है और अन्त्र (हँसिया) एवं रक्त के चक्र में व्यतिक्रम पड़ जाता है और दूध पिलाने के बाद भी बच्चे को न झकझोरना चाहिये ॥

बच्चे के लेटे रहने का स्थान या कोठरी को न तो चारोतर्फ से ऐसा बन्द रहना चाहिये कि जिससे एक बारगी वायु का आना जाना बन्द होजाय और न ऐसाही खोल रक्खे कि शीतल युक्त वायु समस्त घर में भर जाय चेत करके बच्चों के लिये एक छोटीसी मसहरी अवश्य बनवा दे ताकि लेटे हुये बच्चे को मशा मच्छर आदि जीव न काट सकें, यह भी प्रायः देखने में आया है कि तेल उपटन के बाद लेटे हुये बच्चों के खटोले पर अकसर चींटी चढ़ जाती हैं इसलिये मसहरी के चारो पाये के नीचे चार पत्थल की कूंडी में पानी भर कर रख देना उचित है ताकि कोई जीव जन्तु बच्चे की खाट पर न चढ़जांय, बाकी दूसरे खण्ड में देखो ॥

वीर्य्य।

यह बात प्रगट है कि प्राणी मात्र के लिये आरोग्य और स्वस्थ रहने का मुख्य कारण वीर्य्य की ताकत है, जिसका वीर्य्य क्षीण स्वल्प वा शुष्क हो जाता है वह अवश्य किसी न किसी रोग में ग्रस्त हो शीघ्रही मृत्यु के कराल मुख में प्रवेश करता है या सदैव के लिये किसी न किसी कठिन रोग में लिप्त हो गृहकार्य देवकार्य और विद्या के पठन पाठन आदि सतकार्य से रहित हो पूर्ण आयु भर उसका जीवन निष्फल एवं दुखदाई हो जाता है। यह सभी जानते हैं कि सामान्यता से वीर्य्य सम्पूर्ण शरीर में रहता है पर विशेष कर वीर्य्य वीर्य्याशय और स्त्रियों

के शुद्ध रक्त में रहता है यदि उसमें क्षीणता हुई तो शीघ्रही शरीर का नाश हो जाता है। कैसे परम शोक का स्थल है कि मनुष्य इस वीर्य्य को तुच्छ और असार समझ कर नष्ट और विनष्ट करने में कुछ भी शंका नहीं करते और कुसंग वश हस्त मैथुनादि या वेश्या गमनादि विषय में लिप्त हो थोड़ेही काल में अपने जन्मोत्त सुख परम पौरुष और मान बड़ाई को भी हाथ से खो बैठते हैं। बुद्धिमान को उचित है कि वृथा वीर्य्य कभी न नष्ट करैं बल्कि जहां तक हो निरन्तर इसके वृद्धि करनेहीं की चेष्टा में रहैं क्योंकि वीर्य्यही शरीर का मूल है, वीर्य ही के बल से शरीर में तेज पराक्रम सौंदर्य्यता और विद्या प्राप्त होती है॥

कितने भयानक रोग मानव देह में घुस कर शरीर को नाश करते हैं ज्ञान न होने के कारण मनुष्य अकस्मात् कितनी विपदों में गिरजाता है, कोई नहीं कह सक्ता। जानकर भी कितने आदमी हैं, जो ऐसी विपदों के भय से सतर्क हो कर उनसे बच सक्ते हैं?

वास्तविक में मनुष्य यह कह कर कि हम इनसे नहीं बच सक्ते हैं, पग पग में रोग यन्त्रणा और मन की यातना आदिक शारीरिक मानसिक अशेष क्लेशों में फँस कर दुःख भोग करते २ इस जीवन की लीला को समाप्त कर देता हैं। तो भी जो मनुष्य विचार शील और चतुर होता है, वह सतर्क रह कर और जहां तक हो सक्ता है इन सारे पापों से बच कर अनेक सुख के साथ जीवन निर्व्वाह करने में अवश्य समर्थ होता है॥

जैसाही हो, पाप तो अनेक प्रकार से संघटित होताही रहता है, किन्तु मनुष्य इस पाप या अनिष्ट का कारण सर्वत्र नहीं जान सक्ता है। जानने की सामर्थ्य भी हो तो भी यह समझ कर कि हम नहीं जान सक्ते, मनुष्य अनेक प्रकार के पापों का भागी बनजाता है। इस लिये इसी अज्ञात या अज्ञान पाप के विषय में ही आज कुछ कहना चाहते हैं॥

अतिशय स्त्री संसर्ग करने में शरीर धीरे २ टूट फूट जाता है, हस्त

मैथुन करने से भयानक अनिष्ट होता है, भारी खाना खाने से उदरामय (पेचिस) उपस्थित होती है, बहुत पढ़ने चिन्ता और शोक आदि के करने से मनोवृत्ति और विचार शक्ति बहुतही निस्तेज हो जाती है, इत्यादि ऐसे २ पापों और उनके कारणों को बहुत लोग जानते हैं और जान कर यथा शक्ति उनसे बचने की चिन्ता करते हैं किन्तु पर-स्त्री विषयक चिन्ता और देहस्थशुक्र धातु को तेज करनेवाले बहुत कारणों से मनुष्यों का जो अनिष्ट होता है, उसे कितने आदमी जानते हैं। नहीं जानते यही समझ कर हम आज अलक्षित पाप या अनिष्ट के विषय को साधारण मनुष्यों के उपकारार्थ कहना चाहते हैं॥

महात्मा चरक ने कहा है।

रसइक्षौ यथा दध्नि सर्पिस्तैलं तिले यथा।
सर्व्वत्रानुगतं देहे शुक्रं संस्पर्शने तथा॥
तत् स्त्री पुरुषसंयोगे चेष्टा सङ्कल्पपीड़नात्।
शुक्रंप्रच्यवते स्थाना ज्जल मार्द्रात् पटादिव॥
हर्षात्तर्षात् सरत्वाच्चपैच्छिल्याद्गौरवादपि।
अनुप्रवन भावाच्च द्रुतत्वान्मारुतस्य च॥
अष्टाभ्य एभ्य देहेभ्यः शुक्रं देहात् प्रसिच्यते।

अर्थात् जैसे ऊख में रस, तिल में तेल और दधि में घी सर्वत्र अनुगत भाव से विद्यमान रहता है। वैसेही शुक्र धातु भी सर्व्वत्र देह में अनुगत भाव से रहकर चर्म्म में अधिक रहता है। यही शुक्र स्त्री पुरुष के संयोग चेष्टा संकल्प और पीड़न द्वारा भीगे वस्त्र से जल की नायी अपने स्थान से गिर जाता है। उसी तरह हर्ष द्वारा यह शुक्र भी जल सूक्ष्म फिर भारी पिच्छल और चलायमान हो कर देह से निकलने लगता है॥

इन्हीं सारे महात्माओं के वाक्य के अनुवर्त्ती हो कर पुरातन काल से ही हिन्दू शास्त्रों में शुक्र धातु के अव्यहित रखने के लिये बहुत से उपदेश पाये जाते हैं। आयुर्वेद तो है ही है, उसके सेवाय वेद पुराण स्मृति, मनुसंहिता आदिक जिस किसी शास्त्र को खोलो देखोगे-सारे शास्त्र में ही स्त्री पुरुष के विषय में कैसी २ सुन्दर युक्ति और उपदेश हैं। किसी वयश और किसी अवस्था स्त्री पुरुष का विवाह उचित है। स्त्री पुरुष के कैसे संयोग से अच्छी सन्तान उत्पन्न हो सक्ती है, पुरुष के शुक्र और स्त्री के आर्त्तव में कैसा दोष हो जाने से सन्तान नहीं होती अथवा विकृत सन्तान होती हैं, और दूषित शुक्र और रक्त के संशोधन का उपाय हम जितना कुछ जानते हैं उन सब बातों के विषय में शास्त्राकार कुछ न कुछ आन्दोलन कर गये हैं। इन में शारीरिक सम्बन्ध हेतु वैद्यक शास्त्रों में अच्छी प्रकार वर्णन किया गया है। वास्तविक में वैद्य शास्त्रकार लोगों ने इस विषय में जो २ सूक्ष्म २ तत्व का अनुसन्धान कर गये हैं, उसकी तुलना में हम लोग आज कल के चिकित्सक गण कोई नई बात नहीं जानते हैं, क्यों नहीं जानते इस बात को हम धीरे २ बतावेंगे कुछ ही हो, वैद्यकशास्त्र में शुक्रधातु को सर्व्व प्रकार अचल रखने के लिये बहुतही उपदेश हैं॥

शुक्रं तस्माद्विशेषेण रक्ष्यमारोग्य मिच्छता।

अर्थात् आरोग्य या सुख की अभिलाषा करनेवाले लोग शुक्रधातु की सर्व्वदा रक्षा करते हैं। क्योंकि शुक्र विशुद्ध न रहने से मनुष्य पुरुषत्व या पौरुष से हीन हो कर एक प्रकार सारे सुखों से वञ्चित हो जाता है *॥

* चाहे कोई हमारी इस बात को यहां न माने किन्तु जो पुरुष स्त्री संसर्ग नहीं करता, या जो स्त्री संसर्ग की शक्ति नहीं रखता वह सारे सुख सम्भोग से बंचित रहता है। अतएव यहां पर हमारे वक्तव्य का औरही गम्भीर उद्देश्य है। वह अवश्यही अपने पाठकगणों को किसी न किसी समय बतावेंगे।

यह तो शास्त्र की बात हुई। अब हम इस बात की आलोचना करना चाहते हैं, कि आज कल के हिन्दू लोग इन शास्त्र की बातों पर कहां तक चलते हैं। किन्तु आलोचना क्या करें, जिस हिन्दू धर्म्म की दोहाई देकर, जिन शास्त्रकारों के वाक्यों की श्रेष्ठता प्रतिपादन करके आज हम इन सारी बातों का आन्दोलन करते हैं, पर अफसोस, क्या इन बातों के कहने को हमें स्थान मिला है? कौन हिन्दू सन्तान इस गम्भीर वाक्यों के मर्म्म को जान कर उसपर कान देगा? हम यही नहीं कहते कि कोई नहीं सुनेगा। हम कहते हैं कि दो एक मनुष्य को हमारी बात पर ध्यान देना असम्भव हिन्दुओं में न सुनने के ही बराबर है॥

जो हो, हम शुक्र धातु के दूषित और नष्ट होने के कुछ न कुछ कारण बतला ही देते हैं॥

सो इन सारे कारणों में सब से पहले बाल्य विवाह आदिक कितने एक सामाजिक दोष हमारे सम्मुख खड़े हो जाते हैं, किन्तु हम कहते हैं कि हमारे देश में इस समय बहुत से लोग पूर्ण यौवन अवस्था में भी विवाह करके इन सारे दोषों से नहीं बच सके हैं क्योंकि जब चौबीस बरस के बलिष्ठ आरोग्य बालक का आठ दश या ग्यारह बरस की कन्या से विवाह हुआ उसी दिन से उस जवान बालक का इस लड़की के साथ विवाह करने के कारण शारीरिक अनिष्ट होना आरंभ हो जाता है। देश की रीति अनुसार वह जवान उसी दिन से उस दुग्ध पोष्य बालिका को जवान स्त्री समझने लगता है। उस बालिकाके साथ उनका सहवास तो होने ही लगता है। इसके सिवाय कोई २ आदमी पशुवत् व्यवहार करने से भी नहीं हटते इस सहवास से जो अपकार होता है उसे चाहे कोई समझ न सके किन्तु विचार करने से इसका अनिष्ट तो अवश्य ही जान सकेंगे। कह चुके हैं कि इस सूक्ष्म अनिष्ट के विषय पर आलोचना करना इस प्रबन्ध का प्रधान उद्देश्य है। यह तो हमने पहिले कह दिया, कि जैसा तिल में तेल और ऊख में रस

अनुगत भाव से विद्यमान रहता है, शुक्र धातु भी ठीक वैसाही शरीर में विद्यमान रहता है। तिल या ऊख के पेरने से जैसे तिलका तेल और ऊख का रस एकट्ठा हो कर निकल आता है, शरीरस्थ शुक्र धातु भी ठीक वैसा ही स्त्री पुरुष के संयोग, चेष्टा संकल्प और रगड़ से भींगे वस्तु से जल की तरह अपने स्थान से गिर जाता है। तिल या ऊख को पेर कर उसी समय उसको न निकाल लें तो थोड़ेही दिनों में नष्ट हो जाता है। देह का शुक्र धातु भी चाहे किसी कारण अपने स्थान से हट जावे यदि उसी समय बाहर न हो जाय तो दूषित हो कर नाना विध रोग उत्पन्न करता है। अब देखना चाहिये कि नाना कारणों से मनुष्य का धातु अपने स्थान से हिल जाता है या नहीं। कोई पर स्त्री विषय की चिन्ता कर के कोई अपनी बालिका स्त्री के साथ प्रत्यह संसर्ग में ही रहकर कोई शुक्र के उद्दीपक या स्थान भ्रष्ट करने वाले कर्म करके, शरीरस्थ शुक्र धातु को यहां से वहां करके दूषित करते और नाना प्रकार के रोग कमाने में कभी नहीं चूकते हैं। यह तो सूक्ष्म अनिष्ट की बात हुई अर्थात् इन सारे पूर्वोक्त कारणों से शरीरस्थ शुक्र धातु अपने स्थान से हटाता है या नहीं और हट कर कोई विशेष अनिष्ट करता है या नहीं, यह केवल सूक्ष्म चिन्ता के बिना ऐसी वैसी बातों से समझाना कठिन है। कुछ भी हो, शुक्र वेग को रोकने या उसे स्थान से हटाने से केवल अदृश्य अपकारही नहीं होता। इसके सिवा कोई एक बाहरी रोग भी उपस्थित हो जाते हैं जैसा कि वैद्य शास्त्र में लिखा है॥

मेढ्रे वृषणयोः शूल मङ्गमर्दो हृदिव्यथा।
भवेत् प्रतिहते शुक्रे विबन्ध मूत्रमेवच॥

अर्थात् शुक्र के उपस्थित वेग के रोकने से पुरुष के अङ्ग और कोष में तीव्र वेदना हड़ फूटन और हृदय में वेदना, और मूत्र रोग हो जाता है। फिर कहा जाता है कि जो अनेक समय बालिका स्त्री के साथ बिना संसर्ग के रहते हैं उनको भयानक प्रमेह और धातु का रोग हो जाता है। परन्तु इसी अवस्था से थोरे २ एकवीरा और कोरएड आदिक

कठिन व्याधि भी उत्पन्न हो जाती हैं। और शुक्र धातु की इस अवस्था में धीरे २ वीर्य्य हीन हो जाने में कोई सन्देह ही नहीं है ॥

यहां पर यह विचार करना पड़ता है कि यद्यपि देह में सब से श्रेष्ठ शुक्र धातु में पद २ पर जो दोष उत्पन्न हो जाने की सम्भावना है, उसे कितने मनुष्य जानते हैं और जानकर भी कितने लोग इन दोषों से बचने की चेष्टा करते हैं। हमारा यहां तक विश्वास है, यहां तक हम कह सक्ते हैं कि देह में इस प्रकार शुक्र धातु के उत्तेजित होने से भीतर और कभी २ बाहर भी बहुत सा अनिष्ट होता जाता है ॥

अनेक प्रकार से सिद्ध हो सक्ता है कि हिन्दुओं की देहों के अवनति का यही कारण है। विस्तार हो जाने के भय से हमने इस पर और कुछ अधिक नहीं लिखा। जितना कुछ हमने लिखा है उसे पढ़ कर अनेक पुरुष इन दोषों से यथा शक्ति बचने की चेष्टा करेंगे। कुछ ही हो, इसके पीछे जो हम स्त्री पुरुष संसर्ग के विषय में लिखेंगे उसमें इन सारी बातों का भी आन्दोलन करते जावेंगे ॥

स्वप्न दोष चिकित्सा ॥

आज कल यह रोग भी छोटी २ अवस्था वाले पुरुषों में अधिक तर फैला हुआ है। आगे के जमाने में इस बिमारी का कोई नाम भी नहीं जानता था और न वैद्यग्रंथों में इसका कहीं निदान और चिकित्सा है जब से बाल बिवाह होना आरंभ हुआ है तभी से इसका भी जड़ जमा है, इसके अतिरिक्त रोगियों कि अधिकता, मूर्खता और विधवाओं का झुण्ड, भारत के धन का होम स्वाहा जोरू में जूती जुतव्वल और आर्य्यावर्त की कुदशाओं का प्रचार यह सब बाल बिवाह ही से हुआ है अभी क्या कुछ दिन बाद देखियेगा कैसे २ कट्टर बहादुर पैदा होंगे कि शायद बिलस्त भी कुछ ऊंचे हों सेर आधसेर बोझा उठाने और मील आधमील चल भी सके ॥

स्वप्नदोष कई कारणों से होता है एक तो अकाल में हस्तमैथुनादि अनेक संसर्ग से वीर्य्य का पतन होना, दूसरे तरह बेतरह की चिन्ता, तीसरे विषयसक्तों की सङ्गति, चौथे भंग चरस चण्डू शराब में दिनरात मस्त रहना, पांचवें अपनी स्त्री को देख गुस्सा करना और मा बाप से कहना कि हमें खर्चा देओ नहीं तो परदेश चले जायंगे, छठे मा बाप को डांट ससुर तुम्हार बियाह करदिया गौना करदिया मेहर का लैके रहो पैदा करो खाव। और भी बहुत से कारण हैं जिन्हें वीर्य्य दोष के प्रसंग में कहेंगे॥

चिकित्सा॥

सफेद मूसली २ भाग, मखानाकी ठुर्री ३ भाग, तालमखाना ४ भाग, इन तीनों दवाइयों को ले कर कूट कपर छान कर सब की आधी मिश्री मिला छ २ मासे की पुड़िया बना ले शाम सबेरे एक पुड़िया मुहमें रख पाव भर गौ के दूध से उतार जावे इसी प्रकार ३ महीने बराबर खाने से स्वप्न दोष अवश्य मन्द हो जाताहै। परन्तु गर्म चीज और नशा वगैरह से पहरेज करना होगा॥

बहुत से अनजान लोग रात को खूब सख़्त लँगोट बांध के सोते हैं ताकि स्वाब न हो लेकिन इससे और भी होता है। किसी मनुष्य को रात के लँगोट बांध के न सोना चाहिये सबब यह है कि रात्रिको मूत्र की थैली में मूत्र का अंश अधिक हो जाता है पेशाब लगने पर आलस्य बस यदि उठ कर पेशाब न किया और सो गया तो अवश्य स्वप्न हो जायगा॥

अँगरेजी दवाइयों की समालोचना॥

पाठक गणों के रक्षार्थ कुछ डाक्टरी औषध का भी गुणागुण प्रकाश करते हैं कि जो आज कल सर्वसाधारण में प्रचलित हैं, पर लोग

वेदना निवारक मालिस ॥

बदाम का तेल २ औंस, कपूर १ ड्राम, लेमन आधा ड्राम, एकत्रित करके दर्द स्थान पर मर्दन करें ॥

ऐल किवबेब। शीतल चिनी का तेल। इस तेल का रंग पिपरमेन्ट तेल के सदृश है। सुजाक, प्रमेह और प्रदर रोग में इस तेल को और २ मूत्र कारक औषध के साथ पिलाने से फायदा होता है ॥

(गनेरिया [सुजाक] मिक्सचर)

शीतल चिनी का तेल एक ड्राम, बेलसम कोपेवा २ ड्राम, नाईट्रिक इथर ३ ड्राम, लायकर पुटास २० बिन्दु, गोंद का जल ११ औंस एकत्रित कर एक औंस के परिमाण दिन में दो तीन दफे के पीने से शीघ्र उपकार होता है ॥

ऐल क्लोव। लवङ्ग का तेल। इस तेलका रंग सुर्ख है। इसको विरेचक औषध के साथ एक बिन्दु मिला के देने में पेट के दर्द में बड़ा फायदा करता है। इस तेल को रुई के फाहे में बोर कर, दांत के तरे दबाने से दांत के दर्द को फौरन आराम करता है। दांत में कीड़े लग गये हों तो इस तेल का फाहा उस दन्त के छिद्र में रख देने से दन्त कृम नष्ट हो जाते हैं ॥

ऐल नटमेग। जायफल का तेल। यह तेल भी किञ्चित हरिद्रा वर्ण होता है। जब हैजे की बिमारी में शरीर शीतल हो जाता है तो इस को कपूर के तेल के साथ हस्त पाद में मर्दन करने से या एक दो बूंद किसी हैजे की दवा के साथ खिला देने से फिर शरीर गर्म हो जाता है इसका मात्रा ३ से ५ बिन्दू पर्य्यन्त अधिक मात्रा खा लेने से नशा करता है—

ज्वर एवं हैजा रोग में यदि शरीर हिमाङ्ग हो जाय तो निम्न-लिखित औषध मर्दन करने से यथेष्ट उपकार होता है ॥

कायपाल का तेल १ ड्राम, केम्फर लिनिमेन्ट २ औंस, तारपीन का तेल १ औंस एकत्र कर हाथ पैर में मालिस करै ॥

ऐल सिनेमम दालचिनी का तेल। यह भी तेल हरिद्रा वर्ण होता है। इसको प्रायः अजीर्णादि रोगों में देते हैं मात्रा १ बिन्दु से ३ बिंदु पर्य्यन्त है। इसको भी यदि रुई के फाहे में बोर कर दन्त छिद्र में रक्खे तो दन्तक्षत शीघ्र आरोग्य हो ॥

अभिनिवेश चित्त से ध्यान देकर देखते हैं तो कतिपय अंगरेजी औषध ऐसे देखे जाते हैं कि जिनका गुण कथित रोगों पर यथार्थ लक्षित होता है पर उनकी बनावट ऐसे ढंग से है कि जिसकी व्यवस्था देखते ही पुराने लोग घृणा करने लगते हैं। जैसे कि मलहम कोई अंगरेजी मलहम ऐसा नहीं है कि जिसमें सुअर की चर्बी न पड़ती है ॥

आइन्टमेन्ट (मलहम) आफ आईओडिन कम्पौंड इस मलहम का रंग किञ्चित रक्तिम् वर्ण होता है और ॥) का एक औंस (आधी छटांक) अंगरेजी दवा खानों में मिलता है। गलगण्ड, गण्डमाला, यकृत (लीवर) प्लीहा (स्प्लीन), कर्णमूल स्फीक गला और बगल की गिल्टी एवं कोष शिरा का सख्तपन इन सब रोगों पर उक्त मलहम के मर्दन करने से शोषण क्रिया द्वारा चाहे रोग समूल नष्ट न हो परंच उपरोक्त रोगों का वृद्धि होना शीघ्र ही दूरी भूत होता है ॥

आईओडिन २० ग्रेन (१० रत्ती) रेक्टफाइड स्पिरिट १ ड्राम (३० रत्ती) सूकर चर्बी २ औंस (एक छटांक) एकत्रित कर घोंट के पूर्वोक्त रोगों पर थोड़ा २ अंगुली से या किसी दूसरे पदार्थ से लेकर दिन में दो तीन चार मर्दन करै ॥

आइन्टमेन्ट आईओडाईड आफ पुटास इसका गुण उपरोक्त मल-

हम के सदृश है। विशेषतः इसमें यह है कि बालक के यकृत प्लीहा और अर्बुदादि रोग में थोड़ा २ मालिश करने से अधिक फायदा करता है। इससे जलन आदिक नहीं होता॥

आइंटमेन्ट आफ जिङ्क यह श्वेत रङ्ग का मलहम है। स्त्री के स्तन का घाव। शिर के घाव दाद रोग क्षत और जिस घाव में पानी सा पुलपुलाता है इस मलहम के लगाने से घाव शीघ्र शुष्क होता है और नेत्र के पलक पर इसका लेप करने से नेत्र दाह और सोते समय पलकों का चपक जाना जाता रहता है॥

५ अक्साईड आफ जिङ्क ॥० या १ ड्राम ऐल रोजमेरि ५ बिन्दु शुगर की चर्बी १ औंस एकत्रित कर लिन्ट या कपड़े की पट्टी कतर उसपर मलहम लगा घाव पर लगा दे॥

आइन्टमेन्ट बेलाडोना इसका गुण वेदना निवारक है॥

शरीर के चाहे जिस स्थान में दर्द हो इस मलहम के मर्दन करने से अवश्य फायदा होता है। यह मलहम केवल एक्सट बेलाडोना और शुगर की चर्बी से बनता है॥

आइन्टमेन्ट सलफर कम्पौंड गन्धक का मलहम। यह मलहम खाज की बिमारी को बहुत शीघ्र आराम करता है। पहिले खजुरी के घाव को गर्म पानी और साबुन से खूब धो डाले बाद यह मलहम लगावे। इस मलहम को इस तरे बना ले। साफ गन्धक ६ ड्राम, फिटकरी २ ड्राम सोरा १० ग्रेन, कोमल साबुन ६ ड्राम, ऐलबर्गमेन्ट ५ बिन्दु, शुगर की चर्बी २ औंस इन सब दवाइयों को एकत्र कर खरल में खूब घोंट ले॥

बाकी दूसरे खण्ड में देखो।



सूचीपत्र ॥



आरोग्य दर्पण ॥

"द्वादश अङ्कों का एकजिल्द"
द्वितीयखण्ड ॥

जिसमें भोजनान्त में मुख धोने से लेकर गर्भाधान पर्य्यन्त
कर्म, अति लाभदायक शिक्षा आदि अनेक विषय
पूरित पण्डित जगन्नाथ शर्म्मा राजवैद्य ने
लोकोपकारार्थ रच कर प्रकाश किया ॥

आयुर्वेदोक्त औषधालय
तानसेनगञ्ज
प्रयाग
"धार्म्मिकयन्त्रालय में मुद्रितहुआ"

द्वितीयावृत्ति १००० माह सेप्तम्बर सन् १८९४ मूल्य १॥)

सूचीपत्र।

सूचीपत्र ।

* इसमें दृष्टि दोष से अंगरेजी की जगह "अंरेजी" छप गया, आशा है कि पाठकगण सुधार लेंगे ॥

आरोग्यदर्पण द्वितीय खण्ड।



आचमन ।

चिकनाई छुटाने के लिये भोजन के उपरांत चने के बेसन से हाथ मुंह मल कर जल से धो डालना उत्तम है। कितने लोग साबुन से भी धोते हैं, बिलायती साबुन तो बेशक अनेक जानवरों के चरबी आदि बुरी वस्तु से तैय्यार होता है किन्तु देशी साबुनमें कोई बुरे पदार्थ नहीं हैं (चूना, सज्जी, गरी के तेल आदि वस्तुओं से बनता है जिसके बनाने की क्रिया भी आगे लिखेंगे) तथापि लोक निन्दित होने से त्याज्य ही उत्तम है॥

यदि कोई महाशय सफाई के लिये देशी साबुन का इस्तेमाल करें तो कोई हर्ज भी नहीं है॥

भोजनांत में मुख धोने के समय चाहिये की जो कुछ दांतोंकी संधि में उच्छिष्ट लगा हो उसे आहस्ते से लकड़ी तिनका (खरचा) से या सोने और चांदी के सूक्ष्म मुख सलाई से निकाल कर कुल्ली कर डाले, क्योंकि भोजनके उपरांत कई कुल्लों के करने से, कफ, तृष्णा, मुखका सूखना, नाश हो मुख की शुद्धि होती है। भोजन के उपरांत कितनी कुल्ली करे इसमें प्रमाण है।

कुर्याद्द्वादशगण्डूषान्पुरीषोत्सर्जनेततः । मूत्रोत्सर्गेतु चतुरो भोजनान्तेतुषोडश: ॥

शौचके अनन्तर मनुष्य को १२ कुल्ले करने और सिर्फ मूत्र परित्याग में ४ कुल्ला और भोजन के उपरांत मुख धोने के समय १६ कुल्ला करने चाहिये। बहुत से अमीर लोग जाड़े के दिनों में रात्रि के भोजनान्त में

गरम जल से कुल्ली करते हैं अगर किसी को सन्देह हो कि करना चाहिये या नहीं ? यह भी शंका दूर किये देते हैं ॥

सुखोष्णोदकगण्डूषः कफारुचिमलापहः। दन्तजाड्यहरश्चापि सुखलाघवकारकः ॥

सुखोष्णोदक अर्थात् सहने लायक गरम जल से जाड़े के दिनों में कुल्ली करने से कफ, अरुचि, मुख का मैल, दांतों का ठंढा होना नाश हो के मुख हलका होता है किन्तु गरम दिनोंमें बिमारीके अलावा गरम जल से कुल्ला करना नहीं चाहिये, और सुनिये जो आप लोगों को जानना बहुत जरूरी है । प्रायः आप लोगों ने वैद्यों के मुख से सुना होगा कि फल फलहरी खा के ऊपर से जल नहीं पीना चाहिये हम कहते हैं जल पीना तो निषेध ही है आचमन भी नहीं करना चाहिये क्योंकि जिह्वा के नसों के द्वारा जल गलेमें जाके खांसी आदि रोग उत्पन्न करता है, विशेष कर निम्नलिखित चीजों को खाके तो कभी कुल्ला न करे ॥

द्राक्षादीनि फलानीक्षून् पयोमूलंघृतंदधि । ताम्बूलमौषधं पत्रं हविर्भुक्तापिनाचमेत् ॥

मुनक्का से लेकर कच्चे फल, ऊख, (पौंढ़ा) दूध, मूल (शकरकंद आदि) घृत, दही । पान का बीड़ा, औषध, पत्र और हविष्यान्न पदार्थ को भोजन करने पर आचमन भी नहीं करना चाहिये क्योंकि इन चीजों को खाके ऊपर पानी पीने से अथवा कुल्ला करने से श्वासकास आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं ॥

यदि किसी अन्न को कण दांतों के संधि से न निकले तो मनु जी के लेखानुसार उसे पवित्र या दांतों के समान पवित्र जान कर छोड़ देना चाहिये क्योंकि ताकत करके निकालने से दांत कमजोर और

मांस युक्त हो जाते हैं। उसी अवस्था में जल से आंखों को धोने से दृष्टि में बल और ज्योति बढ़ती है इसमें भी बचन है यह कोई न कहे कि सम्पादक महाशय के जो जी में आता है उड़ाते जाते हैं॥

आचम्यजलयुक्ताभ्यां पाणिभ्यांचक्षुषीस्पृशेत्। भुक्तापाणितलेघृष्ट्वा चक्षुषोयदिदीयते॥ अचिरेणैवतद्वारि तिमिराणिव्ययोहति॥

आचमन करके अर्थात् मुख धोके भीजे हुये दोनों हाथों से नेत्रों को पोछ लेय, दूसरा बचन है कि भोजन के बाद मुख धोके भीजे हुये अपने दोनों हाथों को रगड़ कर नेत्रों को पोछ लेने से वह जल बहुत जल्द नेत्र रोग को नाश करता है तात्पर्य यह कि भोजन के उपरान्त कुल्ला वगैरह करने के उपरान्त नेत्र मुख अवश्य धो डाला करै॥

भोजनान्त मे कर्म।

भुक्त्वा शतपदं गच्छेत् वामपार्श्वे तु संविशेत्। शब्द रूप रसान् गन्धान् स्पर्शां च मनसः प्रियान्॥ भुक्तावानुपसेवेत् तेनान्नं साधु तिष्ठति सु० सूत्र स्थान अ० ४६

भोजनके बाद मनुष्य को अत्यावश्यकहै कि सौ कदम टहलके अति कोमल शय्या पर बायें करवट लेट रहे, उस समय शब्द अर्थात् गाना आदि मनोहर बोलने वाली चिड़ियों की आवाज सुनना, रूप (तस्वीर वगैरह) देखना, रस (पान आदि) वस्तुओं का रस चूसना, गन्ध (इतरादि का सूंघना) स्पर्श (रुई से भरे हुये कोमल तकियों पर हाथ फेरना) इत्यादि जिससे मन प्रसन्न हो, सेवन करने से भोजन किया हुआ अन्न यथार्थ पच जाता है, बाद बीस पचीस मिनट के फिर दहिने करवट १०

मिनट लेट कर उठ खड़ा हो भोजन के परे शत पद चलने से अन्न स्वस्थ और आयु की वृद्धि होती है, दौड़ने वाले के पीछे मौत दौड़ती है, टहलने के बाद किंचिन्मात्र पलंग पर लेट रहने से अङ्ग पुष्ट होता है। भोजन के बाद बैठने से पेट में बड़ी, तोंद और तंद्रा बढ़ती है ॥

अन्य मत से भोजनांत में शयन क्रम ।

श्वासानष्टौ समुत्तानस्तान्द्विः पार्श्वेतुदक्षिणे। ततस्तुद्विगुणान्वामे पश्चात्सुप्याद्यथा सुखम् ॥

अर्थ—भोजनान्तर सौ कदम डोल कर आठ श्वास पर्यंत चित लेट जावे फिर सोलह श्वास दहनी करवट सोवे, फिर ३२ श्वास निकले इतनी देर तक बांई करवट सोवे पीछे अपनी इच्छानुसार चाहिये जिधर की करवट सोवे ॥

वामपार्श्व शयन का कारण ।

वामदिशायामनलोनाभेरूर्ध्वोस्तिजंतूनाम् । तस्मात्तुवाम पार्श्वेशयीत भुक्त प्रपाकार्थम् ॥

अर्थ—बांई तरफ नाभी के ऊपर अग्नि स्थान है, इसी से भोजन करे हुये मनुष्यको अन्नके परिपाकार्थ बांई करवट शयन करना चाहिये ।

अब शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पांचों को भोजनान्त में जो वैद्यवरों ने मनुष्यों के लिये सेवन करना हितकारी लिखा है उसका कारण दिखलाते हैं ॥

स्वास्थ्य के विषय में एक विलायती डाक्टर का लिखकर हमने एक किताब में पढ़ा है, उसमें लिखा है कि भोजन के बाद चित्त सोना उत्तम

है, किन्तु उन्हों ने यथार्थ कारण नहीं दिखलाया कि क्यों उत्तम है लेकिन इतना तो हमने भी अनुभव किया है कि चित्त सोने से आत्मा को आनन्द अधिक मिलता है ॥

शब्द—उत्तम गान और बाजा एवं मनोहर चिड़ियोंकी बोल चित्त की प्रसन्नता, शोक और चिन्ता को हर लेता है। स्पर्श—त्वचा में कोमलता यथार्थ रक्त संचालन और मांस पैदा करता है। रस गंध—पान इलायची की स्वाद और इतर आदि की सुगंधि सेवन करने से भोजन का जल्द स्वस्थ और सुख प्राप्त होता है। रूप—तस्वीरों के देखने से वीर्य्य एवं काम की वृद्धि और मन प्रसन्न होता है ॥

भोजनान्त में स्मरण।

हमारे हिन्दू मत में भी कोई २ बातें किसी स्थलमें चाहें वे शारीरक हों, चाहे धार्म्मिक ऐसी लिखीहैंकि जिसे सुन कर बहुतेरहीम विदेशीय जन को कौन कहे एतद्देशीय आज कल के नव शिक्षित गण चकित हो झूठ २ कहने लगते हैं, किन्तु हम कहते हैं कि हमारे भूत पूर्व ऋषिगण पंडुयाल नहीं थे उन्होंने जो कुछ लिखा है उसमें भीतरी मतलब अवश्य गंभीर है किन्तु हम लोग विद्या हीन होने से नहीं समझ सकते हैं तो सिवाय झूठ के और क्या कहेंगे ? हमारे वैद्यक शास्त्र तथा अन्य ग्रन्थों में लिखा है कि भोजन के उपरान्त निम्नलिखित महात्माओं को स्मरण करने से भोजन किया हुआ अन्न अच्छी तरह पच जाता है ॥

अगस्तिंकुंभकर्णंच शनिंचवड़वानलं। आहारपाचनार्थाय स्मरेद्भीमञ्चपञ्चमम् ॥ शर्य्यातिंचसुकन्यांच च्यवनंशक्रमश्विनौ। भुक्तमात्रःस्मरेद्यस्तु तस्यान्नंजीर्यते ॥

अगस्तिमुनि (पार्वती जी के खिलाने से भी न अघाने) कुंभकर्ण (भोजन करने में प्रसिद्ध ही थे) शनिश्चर (यह प्रसिद्ध हैं) बड़वानल

(समुद्र भषण गये) और पञ्चम भीमसेन महाराज (खाने और बल दोनों में प्रसिद्ध) इन पांचोंको जो भोजन के उपरान्त स्मरण करके पेट पर हाथ फेरता है भोजन किया हुआ अन्न उसका निर्विघ्न पच जाता है। शर्याति, सुकन्या, च्यवन, इन्द्र और अश्वनी कुमार जो मनुष्य भोजन करने के उपरान्त उक्त पांचों को स्मरण कर नेत्रों को भीजे हुये हाथों से पोछता है, उसके नेत्र कभी नष्ट नहीं होते ॥

भोजन के बाद अप्रिय शब्दों के सुनने, ग्लानिकर वस्तुओं के देखने और बहुत हंसने से वमन हो जाता है।

इस स्थल में थोड़ी सी बात और कहने की जरूरत है जो आरोग्य इच्छुक जनों के लिये निहायत उपयोगी है वह यह है कि भोजन के उपरांत जब तक भोजन पच कर पेट कुछ हलका न हो दूसरा भोजन न करे और न कुछ फल फलहरी खावे यहां तक कि बहुत पेट भरके पानी भी न पिये, हां भोजन के उपरांत पीछे का चूसना और पियास होने पर थोड़ा २ करके कईबार जल पीने से लाभ है किन्तु उपरोक्त कर्मों से अजीर्ण होने का खौफ रहता है। लिखा भी है:—

अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाद्वा संधारणात् स्वप्नविपर्य्ययाच्च ।
कालेऽपिसात्म्यं लघुचापि भुक्तमन्नंन पाकं भजति नरस्य ॥

बहुत जल पीना, विषम भोजन अर्थात् पूर्व कृत भोजन के अपरिपक्व मेंही फिर भोजन कर लेना, मल मूत्र के वेग का रोकना, दिन में सोना रात में जागना और बिना भूख या भूख मार कर या समय पर आध सेर की जगह छँटाकही खा के रह जाना इन्हीं छः प्रकार के कुसंयम से अजीर्ण अग्नि मंदादि रोग पैदा होते हैं, ईर्षा, भय, क्रोध, लोभ, राग, द्वेष और शोक युक्त हो कर भोजन करने से आहार का पाक उत्तम न हो अजीर्ण हो जाता है, भोजन के बाद पन्द्रह २ मिनट में दो तीन बार थोड़ा २ जल पीना बहुत फायदा करता है। अगर भोजन के

पड़े शिर में भारी पन अति निद्रा, धड़कन और आलस्य मालूम हो तो मिश्री के शरबत में ज़रासा नीबू का अर्क डाल कर पी जाय या पौंडे की गंडेरी चूसै ॥

तथा अन्यच्च वर्जित ।

शयनंचाशनंचाति नभजेन्नद्रवाधिकं । नाग्न्यातपौनप्लवनं नयानंनापिवाहनं ॥ व्यायामंच व्यवायंच धावनंयानमेवच । युद्धंगीतंचपानंच मुहूर्तंभुक्तवांस्त्यजेत् ॥

भोजन करने के उपरांत दो तीन घड़ी तक जब तक भोजन कुछ पच न जाय निम्नलिखित कामोंको न करे, जैसे—घोर निन्द्रा, पुनः भोजन करना, द्रव अर्थात् अत्यन्त पतले पदार्थों का पीना, आंच के सामने या घाम में रहना जल में तैरना या बहुत स्नान करना, रास्ता चलना, घोड़े हाथी आदि सवारी पर बैठना, कसरत करना और स्त्री गमन करना, दौड़ना, बहुत चलना कुश्ती लड़ना, गाना और पढ़ना आदि कर्म न करे क्योंकि इन सब कर्मों से भोजन का परिपाक नहीं होता ॥

तांबूल (पान) के २७ गुण ।

तेज, गरम, रोचक, कषाय, तीता, क्षार और हलका है, रक्त, पित्त, और मुंह को साफ, कान्ति और सुन्दरता बुद्धि, कफ, दुर्गन्धि क्षार, पंच्छा, हनु, दांत और जीभ का मल, गल रोग, वात व्याधि और श्रम को नाश करता है नया पान मीठा, कसैला, भारी और कफकारी साग के बराबर है। पुराना पान थोड़ा कडुआ हलका और कफ नाशक है। पका हुआ सफेद पान अधिक गुण दायक है। बङ्गला पान कडुआ, दस्तावर, पाचक, पित्तकर और कफ नाशक है और देशावर बङ्गला के अपेक्षा कुछ कम गर्म और मीठा है ॥

सुपारी—भारी, शीतल, रूखी, कषैली, मोह (शिर में चक्कर) मद (नशा) कफ और पित्त नाश एवं दाढ़ों के बन्धन को ढीला करने वाली है, सब से उत्तम सुपारी जिसके बीच में सखी हो, कच्ची सुपारी कफ और अग्नि मन्द करने वाली होती है। बेहतर होगा कि पान के साथ खाने के लिये एक रोज पूर्वही पकी सुपारी को महीन कतर कर गुलाब या चन्दनके अर्कमें न हो तो सिर्फ पानीही में भिगा रक्खे तथा दक्षिणी (चिकनी) सुपारी पान के साथ खाना बहुत ही फायदा करती है॥

कत्था—कफ और पित्त समन कारी है। खैरसे हजारों साधारण २ बिमारियां आराम होती हैं जिसका बयान आगे करेंगे। खैर बहुत प्रकार के हैं परंतु खाने और दवा के काम में सिर्फ दोही अर्थात् कृष्ण खदिर (काले रंग का खैर जो उक्त नामक वृक्ष के आभ्यान्तरिक काष्ठ के जलीय सार से प्रस्तुत होता है, पांडु खदिर (पपड़िया खैर) जो ग्याम्बिर नामक वृक्ष के पत्र एवं तरुण शाखाओं के अग्र भाग के जलीय अंश से तैय्यार होता है। सिंहपुर एवं भारत समुद्रस्थ द्वीपों में बनाया जाता है। कृष्ण खैर की अपेक्षा पांडु खैर उत्तम होता है। एतद्देशीय व्यापारी लोग सभी खैर में ईंटा पत्थर मिलाते हैं इससे बनियों के यहां का खैर बिना साफ किये हुये कभी न खाना चाहिये॥

चूना—वायु और कफ नाशक है, बाकी बयान डाक्तरी प्रकर्ण में देख लो। पान, सुपारी कत्था और चूना मिलजाने से अद्भुत रंग का मन प्रसन्न करने वाला पदार्थ बन जाता है कि जिसके खाने से सुन्दरता, मुख शुद्ध, सुगन्ध और त्रिदोष शांत होता है। पान के साथ प्रातः काल में सुपारी, मध्याह्न में खैर और रात में चूना अधिक खाना चाहिये, पान की डण्ठी और फुनगी निकाल कर खाना उचित है और इसके तीन पीक थूक कर शेष रस खाने से अमृत समान गुण होता है क्योंकि "आद्यौ विषोपमंपेयं द्वितीयं भेदि दुर्जरं, तृतीयादि तु पातव्यं सुधातुल्यं रसायनम्"

पान के त्याज अङ्ग ।

आयुरग्रे यशोमूले लक्ष्मीमध्येव्यवस्थिता । तस्मादग्रं तथा मूलं मध्यंपर्णस्य वर्जयेत् ॥ पर्णमूले भवेत्व्याधिः पर्णाग्रे पाप संभवः । जीर्णपत्रं हरत्यायुः शिराबुद्धि विनाशिनी ॥

ऊपर इसे लिख आये हैं कि पान की जड़ तथा अग्र भाग और मध्य तोड़ के तब खावे, उसे दिखलाते हैं । पान के अग्र भाग में आयु का नाश मूल में यश और मध्य में लक्ष्मी (शोभा) की वास रहती है । इस कारण पान का मूल मध्य और अग्र भाग त्याग करना क्योंकि पान के मूल भक्षण करने से शरीर में रोग उत्पन्न होता है । अग्र भाग सेवन से (पाप) मन में ग्लानि और सड़ा तथा बासी पान खाने से आयु का नाश तथा शिरा युक्त (जो पान के बीच में लकीर होती है बिना उसके निकाले) खाने से बुद्धि का नाश होता है ॥

पान में चूना आदि लगाने का प्रमाण ।

गुञ्जार्धं चूर्णकं चैव तत्समं खदिरंमतं । माषैकं क्रमुकं सर्वं कर्पूरादिगणं च यत् । मिश्रितं पूगतुल्यंस्यात्ताम्बूले मान मीरितम् ॥

लोग प्रायः पान खाने का शौक रखते हैं, परन्तु पान लगाना नहीं जानते इसी से पान नुकसान करता है । चूना और खैर आध २ रत्ती लगावे । सुपारी का कतरन ६ रत्ती धरै और कपूर, लौंग, छोटी लायची आदि का चूर्ण सब मिलाके छः रत्ती रहे इस रीतिसे पान का बीड़ा बनाना चाहिये और बीड़े में दो पान से कम न रहै क्योंकि ठीक चूना रहने से पान का पीक अत्यन्त रक्त वर्ण और सुपारी अधिक होने से

रंग का नाश होता है । पान में चूना अधिक लगाने से मुख दुर्गन्धि करने लगता है । निम्नलिखित चीजों के संहित लगाने से बीड़ा जायकेदार और सुगन्धित होता है—जैसे पान सुपारी खैर चूना बनाई तमाकू छोटी लायची जावित्री कंकोल जायफल कस्तूरी लौंग कपूर और केशर इन सहित बना बीड़ा मनुष्यको मदोन्मत्त आनन्द से आनन्दित करता है ॥

बहुत से लोग पान न खाके सिर्फ सुपारी चबाया करते हैं । जैसे रीवां आदि प्रदेश के लोग चीखो खाते हैं धर्म सम्बन्धी ग्रन्थों में पान रहित सुपारी खाने का बहुत कुछ निषेध किया है ॥

अनिधाय मुखेपर्णं पूगंखादति योनरः । दशजन्म दरिद्रः स्यात्ततश्चाधो गतिं व्रजेत् ॥

पान के बिना जो मनुष्य केवलसुपारी खाता है वह दश जन्म दरिद्री हो नर्क को जाता है, इसमें संदेह नहीं केवल सुपारी खानेसे मुख फीका जिह्वा कठोर शिर में कमजोरी और बुद्धि कम होताहै और भी वचनहै ।

विनापर्णंमुखेदत्वा गुवाकंभक्षयेद्यदि । तावद्भवतिचाण्डालो यावद्गङ्गांनपश्यति ॥

बिना पान के जो मनुष्य केवल सुपारी खाता है वह जब तक गंगा जी का दर्शन न करै चाण्डाल रहता है, यह वचन धर्मशास्त्र का है वैद्यक का नहीं और धर्मशास्त्रों में ऐसे २ वचनों को देने का मुख्य प्रयोजन ऋषियों का यह है कि लोग उस काम को अवश्य त्याग देंय । जैसे:—

वाचस्पतौ—तांबूलंविधवास्त्रीणां यतीनांब्रह्मचारिणाम् । तपस्विनांचविप्रेन्द्र सर्वपुण्यहरंस्मृतम् ॥

विधवा स्त्री, यती, ब्रह्मचारी और तपस्वी याने संन्यासी आदि के शरीर का पुण्य पान खाने से नाश होता है। वैद्यकशास्त्र में विधि युक्त पान खाने को किसी के लिये निषेध नहीं किया है, उक्त लोगों को जो धर्मशास्त्र पान खाने से रोकता है मुख्य तात्पर्य्य यहहै कि एक तो पान खाना शृङ्गार है दूसरे काम की वृद्धि होती है इसी लिये निषेध किया है अगर जितेन्द्रिय लोग सिर्फ मुख शुध्यर्थ पान खावैं तो कोई हर्ज नहीं है॥

भूख की हालत और मल त्याग करने के पीछे पान न खाना चाहिये। बहुत पान खाने से मुख, जिह्वा, नेत्र, केश दांत और कान में विकार एवं पित्त, वायु, रक्त और शोष (धातुक्षय) रोग की उत्पत्ति तथा बल और क्षुधा का नाश होता है। स्नान भोजन और जल पीने के उपरांत या कहीं से थका आया हो पान खाना अच्छा होता है। "न नेत्रकोपे नच रक्तपित्ते क्षतेनघाते नविषेनशोषे" आंख रोग रक्त पित्त घाव या फोड़ा फुन्सी, उष्ण वायु, विष और शोष रोगों में पान खाना नुकसान करता है॥

ग्रंथान्तर मत से पान खाने का समय।

रतौसुप्तोत्थितेस्नाते भुक्तेवन्ते च संगरे। सभायां विदुषां राज्ञां कुर्यात्ताम्बूल चर्वणम्॥

स्त्री संभोगके समय, शयन से उठ कर स्नान पूजनादि से निवृत हो के, भोजन के उपरांत, वमन के अथवा दन्तधावन करके, कुश्ती और युद्ध में राजा एवं पण्डितोंकी सभामें इतनी जगह पान खाना उत्तमहै।

तमाल पत्र—जहां तक परीक्षा से देखा गया है दवा के अतिरिक्त तमाकू खाने से नुकसान करता है, भारत में बिरलाही कोई ऐसा मनुष्य

निकलेगा जो तमाकू न खाता हो, न अधिक नहीं जरासा पान ही के साथ खा लेते हैं, अधिकांश अमीर लोग ऐसे हैं जो सिर्फ पान के साथ तमाकू खाते हैं, तमाकू खाने से दांत, आंख और मस्तिष्क निर्बल एवं बुद्धि मन्द पड़ जाती है चाहे जो हो यह भी प्रायः देखनेमें आताहै कि किसी वस्तु की आदत पड़ जाने से हानि देख कर भी लोगों से नहीं छोड़ा जाता । पहिले तो तमाकू किसी अवस्था में खाना लाभ नहीं यदि खाने की ऐसाही इच्छा हो तो चाहिये कि निम्नलिखित रूप से तमाकू बनाय ले और जरा सा पान में रख कर खावे ॥

अमीरी लटका ।

पावभर अच्छे तमाकू के पत्ते को ३ सेर पानी में डाल कर भिगा दे सवेरे उस पानी को फेक दूसरा पानी उतनाही निकदार डार दे फिर शाम को वह पानी फेक उतनाही और पानी छोड़ रात भर रख छोड़े पुनः सवेरे उस पानी को फेक तमाकू सुखा ले । बाद उस तमाकू को महीन कतर कर सेरभर गुलाब के अर्क में धीमी आंच से पका ले जब डेढ़ पाव अर्क बाकी रह जाय तो खूब मलकर छान ले और फिर उसे धीमी आंच में पकाना शुरू करै जब सिर्फ एक छंटाक रहिजाय तो उतार ले और सफेद चन्दन का बुरादा ६ मासा अकरकरहा ६ मासा छोटी लायची का दाना १ तोला जायफल ६ मासा जावित्री ३ मासा लौंग ६ मासा केशर ५ मासा कपूर ३ मासा कङ्कोल ४ मासा कस्तूरी ४ रत्ती चांदी का वर्क २० ताव सब को महीन कूंट उक्त अर्क में घोंट उर्द के बराबर गोली बना ले और पान के साथ एक गोली खावे । गरमी के दिनों में लौंग जावित्री आदि वस्तु का मात्रा कम कर दे ॥

गरीबी लटका ।

१ पाव तमाकू के पत्ते को गरमी पूर्व क्रियानुसार पानी में भिगा

कर निकाल डाले बाद सुखाय के महीन कतर ले कुटी हुई धनिया १ तोला, छोटी लायची १ तोला, चिकनी सुपारी २ तोला, लौंग ६ मासा, कायफल ६ मासा, केवड़े से बासित खैर १ तोला, सब को महीन कतर समाल पक्ष में मिला डिब्बी में रख दे और जरासा पान में छोड़ लिया करे। फैसाहू चमदा तमाकू क्यों न बनी हो भोजन के उपरांत पान के साथ भी न खाना चाहिये॥

संध्या समय का कर्म।

शरीर आरोग्य रखने के निमित्त मनुष्य को उचित है कि द्रव्योपार्जनादि कामों से निवृत्त हो कर चार पांच बजे संध्या को शौच के अनन्तर (अक्सर लोग हैं जो दिन रात में सिर्फ एक दफे शौच जाते हैं परन्तु दोनों समय शौच जाना बहुत अच्छा है) हाथ पैर और मुख धो कर श्रम निवारणार्थ और शरीर जलरक्षा के थोड़ा सा जल मधुर मोदक या पाव आधसेर अधावट दूध में एक तोला शहत और तोला भर मिस्री डाल कर पी जाना चाहिये बाद एक पान का बीड़ा खा के ऋतु के अनुसार वस्त्र धारण कर पूर्वोक्त कथनानुसार किसी बगीचे में या जहां मन प्रसन्न हो हवा खाने के हेतु जावे या किसी दिव्य स्थान में बैठ कर एवं वृद्धि करने वाली पुस्तकों को देखे या अपने इष्ट मित्रोंसे वार्तालाप करे इत्यादि कर्म से श्रम, आलस्य और मन की उदासीनता नष्ट हो। कर चित्त प्रसन्न, धातु एवं आयु की वृद्धि होती है॥

पौशाक।

वस्त्र धारण करने से जो कुछ ऊपरी सजावट है वह तो हई है विशेष इससे शरीर की रक्षा है। आगे समय में इस देश निवासियों के सिर्फ पौशाक यह थे जैसे धोत (धोती) अङ्गरक्षा (अंगरखा) उष्णीष (पगड़ी) और दोपट (दुपटा) जब से मुसलमानों का राज हुआ तब से सं-

सर्ग, अब आर्य्य गण भी कुरता, फतुही, मीमस्तीन, पायजामा, साफा, एका, इत्यादि पहरने लगे। अंगरेजी राज होने से औरही चाल बदल गई जिसे देखिये जाकट कोट पतलून ही में मस्त हैं इसी प्रकार दूसरे के राज होने पर वैसाही वस्त्र धारण करने लगेंगे नफा नुकसान पर बिलकुल ध्यान ही नहीं ईश्वर ने मनुष्य को बुद्धि दी है कि जिसने समस्त पदार्थों के हेतु यथार्थ प्रकृति जान कर अपने लाभ के स्वार्थमें लावे । हे प्यारे आर्य्य भाइयो भेड़ी मत बनो अपने हित अहित वस्तुओं पर ध्यान दो जो वस्तु श्रेयकारी चाहे स्वदेशीय हो या विदेशीय हो ग्रहण करना और हानि कारक वस्तुओं को सर्वदा तिरष्कार करना बुद्धिमानों का काम है ॥

प्राचीन ग्रन्थों के देखने से जाना जाता है कि पूर्व समय में इस देश वाले काले कपड़े नहीं पहनते थे क्योंकि सब स्थलों में श्वेताम्बर, पीताम्बर, रक्तांबर और चित्राम्बर, शब्द पाये जाते हैं । वास्तव में पोशाक देश काल के अनुसार होना चाहिये अति उष्ण देश या गरम ऋतु में श्वेत या संदली रंग का शीतल और महीन वस्त्र धारण करने से मेधा, धृति, शीतलता की प्राप्ति और गरमी की निवृत्ति होती है और सर्वांग में श्वेताम्बर धारण से यश, आरोग्यता, शोभा, आनन्द रुचि, काम और प्रीति होती है विशेष कर वर्षाकाल में तो अवश्य श्वेताम्बर धारण करना चाहिये । क्योंकि लिखा भी है ॥

शीतकालेतुकौशेयं कषायंघर्मवासरे। वर्षासुश्वेतवस्त्रंस्या देवंवस्त्राणिधारयेत् ॥ शुक्लन्तुशुभदंवस्त्रं शीतातपनिवारणं । नचोष्णंनचवाशीतं तत्तुवर्षासुधारयेत् ॥

शीत काल में या ठण्ढ मुल्कों में रेशमी कपड़ा पहिनना, गरमी में गेरुवा वस्त्र और वर्षा काल में सफेद वस्त्र धारण करना चाहिये । सफेद

वस्त्र का गुण आयुर्वेद के जानने वालों ने इस प्रकार कहा है कि सफेद वस्त्र शीत और गरमी दोनों को निवारण करता है, न यह गरम है और न शीतल है इसलिये शीत गरम समान गुण विशिष्ट वर्षा काल में सफेद ही वस्त्र पहिनना लाभदायक है ॥

अति शीत देश या ऋतु में वायु और कफ समन करने वाली छालटी, टसरी, रेशमी और पशमीना श्वेत या सुर्ख रङ्ग के कपड़े पहनना उत्तम है ॥ क्योंकि ।

कौशेयंचित्रवस्त्रंच रक्तवस्त्रंतथैवच । वातश्लेष्महरंतत्तु शीतकालेविधारयेत् ॥

रेशमी कपड़ा, रंग बिरंग के रंगे हुये कपड़े और लाल वस्त्र कफ वात को नाश करता है और शीतकाल या देश में प्रायः शीतवायु का जोर रहता है इसलिये शीतकाल में जहांतक हो रेशमीही वस्त्र पहनने चाहिये कोई २ टीकाकार चित्र वस्त्र के स्थान में ऊनी वस्त्र, बनात, लोई, धुस्सा साल, कम्बल आदि का ग्रहण किया है ॥

आयुर्वेद विद्वानों ने कषाय वस्त्र की बहुत कुछ तारीफ की है इस को पवित्र, शीतल पित्त का नाश करनेवाला लिखा है । धर्म के ग्रंथों में सन्यासियों के लिये जो कषाय (गेरुआ) वस्त्र धारण करने को लिखा है सिर्फ आरोग्यतार्थ, क्योंकि कपड़ा पहिनने न पहिनने से मुक्ति लाभ नहीं है, और न किसी को नर्क ही में जाना पड़ता है ऋषियों ने उसके फायदे पर लक्ष्य करके धर्मशास्त्रों में इसलिये लिख दिया है कि हठात् लोग उसे ग्रहणही करें । कषाय वस्त्र एक तो जल्द मैला नहीं होता, दूसरे उसमें पसीने का विकार नहीं होता, तीसरे जहां जल मिले पछार डाले बहुत जल्द साफ हो जाता है, साबुन वगैरह नहीं खोजना पड़ता, चौथे चतुर्थाश्रम का चिन्ह है ॥

चाहे गर्म ऋतु हो या सर्द आज कल जिसे देखिये यही काले कपड़े पहनते हैं एक यह भी देश में अधिक रोग फैलने तथा निरन्तर रोगी बने रहने का एक मूल कारण जान पड़ता है ॥

क्योंकि काले कपड़े पहिनने से रस, रक्त और वीर्य्यमें अधिक गर्मी पहुंचती है, कारण यह है कि और २ पदार्थों की अपेक्षा काली वस्तु से उष्णता अधिक निकलती है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि एक चौकोन टीन का पात्र बनाओ उसके एक ओर काला रङ्गो, दूसरी ओर सफेद काग़ज़ चिपका दो तीसरी तर्फ शीशा और चौथी ओर केवल टीन रहने दो फिर उस पात्र में गरम जल भर मुख ढांप दो और थरमामेटर जिससे गरमी शरदी नापी जाती है उसके निकट धरो जब टीनकी ओर उसे लाओगे तब डिगिरी कम हो जायगी, शीशे के सन्मुख करोगे पारा ऊपर को चढ़ेगा, काग़ज़ के सामने करने से अधिक ऊंचा होगा और काले रङ्ग की तर्फ ले आने से सब से अधिक पारा ऊंचा हो जायगा इससे स्पष्ट है काले तर्फ से उष्ण जल की गरमी अधिक निकलती है । इस लिये जाड़े के दिनों को छोड़ और ऋतुओं में तो काला कपड़ा पहिरना अवश्यही नुकसान करता है क्योंकि काले कपड़े में सूर्य्य का तेज अधिक प्रवेश करता है इससे शरीर की उष्णता बाहर ज्यादा निकलती है यही कारण है कि उष्ण देश के मनुष्य काले और हिम देश के गोरे होते हैं । यदि कहो कि यूरोपियन लोग तो प्रायः कालेही कपड़े सब दिन पहिनते हैं उन्हें नुकसान क्यों नहीं करता ? कारण यह है कि ये लोग अति शीत देश के रहने वाले हैं । बड़े अफसोस की बात है कि अंगरेज लोग हिन्दुस्तानियों के चाल चलन की एक भी अनुकरण न किया और हिन्दुस्तानियों ने यहां तक नकल किया कि बिलकुल नकल बन गये अर्थात् बिना दुम के लंगूर हो गये धिक्कार है ऐसे मनुष्यों को जो निष्कलंकित अपने देश के प्राचीन रीतों को त्याग देते हैं ॥

छाता का गुण।

वर्षानिलरजोघर्म हिमादीनांनिवारणम्। वर्ण्यंचक्षुष्यमो
जस्यं शङ्करंछत्रधारणम् ॥

छाता धारण करने से मङ्गल नेत्र को हित, उत्साह, बल और सुख प्राप्त वर्षा, धूप, हवा, धूल और शीत से रक्षा होती है। बिना छाता के ग्रीष्म काल के धूप में चलने से ज्वर हैजा आदि अनेक रोग होते हैं ॥

इसी प्रकार जाड़े के दिनों में रात्रि में भी छाता लगाना ओस का बचाव होता है क्योंकि जाड़े के दिनों में रात में जब अधिक सरदी पड़ती हो बिना छाता के घूमने से जुकाम खांसी और ज्वर जिसे शारदीय ज्वर कहते हैं होता है। यही कारण है जो विलायत आदि सरद मुलकों में रात्रिमें भी सर्वसाधारण लोग छाता लगाके बाहर निकलते हैं ॥

आजकल आर्य्यावर्त में जिस के हाथ में देखिये विलायती छाता मौजूद है, मौजूद क्यों न रहे, विलायती छाते में जो रूप रंग सौकियापन है कभी हिन्दुस्तानी छाते में आ सक्ता है इसीसे बिक्री भी अधिक है, हम ने एक सम्वाद पत्र में पढ़ा है कि प्रति वर्ष विलायत से हिन्दुस्तान में ३ करोड़ रुपये का छाता आता है। भारतवर्ष में एक से एक धनवान राजा पड़े हैं किसी सपूत से यह नहीं बनपड़ता कि छाता बनाने का कल हिन्दुस्तान में खोल देंय कि जो करोड़ों रुपिये इस के जरियेसे विलायत जाता है यहीं रहे। खैर इसको हम कहां तक रोयेंगे हमारा काम आरोग्यता के विषय में शिक्षा देना सो देते हैं। गरम दिनों में हरे रंग का छाता लगाना रुधिर और नेत्रों के लिये हित है और काले रंगका छाता जाड़ों के दिनों में रात्रि को लगाना लाभदायक है ॥

पायताबा या मोजह।

पूर्व काल में यहां पायताबे का व्यवहार कहीं न था अब सभी लोग

इसे पहनते हैं । रात में पायताबा पहन कर किसी ऋतु में न सोना चाहिये, जूता और मोज़ह दोनों पहने हुये राह से चल कर जब कहीं स्थिर बैठना हो तो उस समय सर को खुला रखना चाहिये । जिस के पैर के तलुवे में जलन हो या ज्वर हो उसे मोज़ह पहनना निषेध है परन्तु सर-सांम या उन्माद की बिमारी में जब सर पर भीगा कपड़ा रक्खा जाता है उस अवस्था में मोज़ह इस लिये पहिना देना उचित है कि शायद कम-ज़ोरी से अंग दर्द या शीत न आजय ॥

पगड़ी ।

उष्णीषंकान्ति कृत्केश्यं रजोवात कफापहम् । लघुतच्छ स्यते यस्मा द्गुरु पित्ताक्षि रोगकृत् ।

पगड़ी पहनने से शोभा, बालों की रक्षा और कफ का नाश होता है परन्तु थोड़ी देर तक पगड़ी सर पर रखनी चाहिये सुतरां देर तक धारण करने से पित्त और नेत्र रोग होता है या बहुत हलकी पगड़ी बांधे ॥

परन्तु दक्षिणी ब्राह्मणों को इसका ध्यान भी नहीं दो दो और तीन २ सेरकी पगड़ी हर समय सिर पर धरे रहते हैं ।

भूषण ।

विधि के साथ स्वर्ण और जवाहिरों का भूषण यथा योग्य पहनने से सुन्दरता सन्तोष, बल, पुष्टी, शोभा, ओज अभिमान, प्रीति और धन की वृद्धि, पाप अमंगल ग्रह दृष्टि दोष और दुःस्वप्न का नाश होता है । आर्य ग्रन्थों के देखने से ज्ञात होता है कि अगले के समय भारत में आभूषण पहनने की रीति अधिक थी वाल्मीक जी कहते हैं, कि रामराज में ऐसा मनुष्य कोई न था कि जिस के कान में स्वर्ण कुण्डल और स्वर्ण मकुट न हो उस समय चोर डांकू का नाम भी न था क्योंकि सब आर्य्यगण सम्प-

न थे जब से स्त्रेणों का राज हुआ साथ ही साथ चोर दुष्ट डांकुओं की भी वृद्धि हुई, इस में शक नहीं कि आभूषण धारण में प्रत्यक्ष उपरोक्त गुण पाये जाते हैं परन्तु आज के समय में उक्त गुण के परिवर्तन में यहां तक अवगुण देखने में आता है कि नित नित हजारों जन लूटे और असंख्य बालक मारे जाते हैं॥

हमारे विचार में उपरोक्त गुण लाभार्थ पञ्चरत्न में जो लाभ हो तत् सहित सिर्फ एक अंगूठी धारण करना युवा पुरुषों को हानिकर नहीं है॥

क्योंकि गहना पहिनने के कारण कितनी जान जाती है छिपा नहीं है विशेष कर लड़कों को तो कभी गहना पहिनाना नहीं चाहिये॥

पंच रत्नानि।

नीलकं वज्रकंचेति पद्मरागश्च मौक्तिकम्। प्रवालश्चेति विज्ञेयं पञ्चरत्नं मनीषिभिः॥

अन्यच्च—सुवर्णं रजतं मुक्ता राजावर्तं प्रवालकम्॥

नीलक, हीरा, पद्मराग, मोती और मूंगा यही पञ्चरत्न हैं, दूसरा सुवर्ण, चांदी, मोती, राजावर्त और मूंगा रत्नाभावे सिर्फ सुवर्ण लेना॥

रत्न धारण के गुण।

ग्रह दृष्टि हरं पुष्टि करं दुःस्वप्न नाशनं। पापदौर्भाग्य शमनं रत्नाभरण धारणम्॥

अंगूठी आदि में रत्नों को जड़ के पहिनने से सूर्य्यादि नवग्रहों की क्रूर दृष्टि का नाश, शरीर में बलाधान, बुरे स्वप्नों का नाश, मन की ग्लानि और दुर्भाग्यता नाश होती है (नवग्रहों के रत्न यह हैं) सूर्य्य का माणिक मणि, चन्द्रमा का मोती, मंगल का मूंगा, बुध का पन्ना, वृ-

हस्पति का पुखराज, शुक्र का हीरा, शनि का नीलम, राहु का गोमेद, और केतु का वैडूर्य्य, जो ग्रह की खराब दृष्टि हो उन्हींका रत्नधारण करने से वो प्रसन्न होते हैं ।

पुष्प धारण के गुण ।

सुपुष्पाणिसुगन्धीनि नित्यंशीर्षंप्रधारयेत् । सुगन्धि पुष्प पत्राणां धारणं कान्तिकारणम् ॥ आयुष्यं ब्रह्दिरं पुण्यं मलक्ष्मी कलि नाशनम् ॥

सुन्दर सुगन्धित गुलाब, चमेली बेला आदि के पुष्प अथवा सुगन्धित पत्तों को शिर पर धारण करने से उन फूलों से माला आदि बना के गले आदि अङ्गों में पहिरने से रूप यौवन प्रफुल्लित होता है, शोकादि; आलस्य, उदासीनता और शरीर के दुर्गन्धि का नाश होता है । नेत्रों में तरावट: दाह जलन का नाश और मन प्रसन्न होता है ।

जातीपुष्पं तथा वेला जाम्भजं कुटजं तथा । पाटलञ्चब्रह्मपुष्पं वकुलं चम्पकंतथा ॥ श्रीखण्डञ्चव गौलालं कस्तूर्य्या सह धारयेत् । मन्दार मरुवश्चैव नीलोत्पल कुमुदतं रक्तोत्पलं यूथिकाश्च कर्पूरैः सह धारयेत् ।

इस श्लोक का अर्थ यह है कि चमेली, बेला, नारंगी, (कुटज) कुरैया या इन्द्रजव का फूल, गुलाब, कूजा, मौलसिरी, चम्पा, और गुल्लाला इन पुष्पों के हार आदि गहनों तथा पंखियों में कस्तूरी को सफेद चन्दन में घिस के उन पर खूब छिरक कर पहनने से अथवा पुष्पों के पंखियों की हवा खाने से जितने प्रकार के रोग हैं सब शमन होतेहैं इसी प्रकार मन्दार मरुआ, नील कमल के फूल, कुई (नीलोफर) लाल कमल और जूही इन पुष्पों की वस्तुओं पर कपूर जल छिरक के धारण

से भी समस्त रोगों का शमन होता है। विशेष कर घुमरी, हौल दिल, उन्माद, प्रमेह, क्लीवत्व, मस्तिष्क की निर्बलता और मन का विकार तो बहुत शीघ्र नाश होता है॥

समयानुसार पुष्पों का धारण करना।

स्नान करने के पहिले चमेली की माला पहिनना, स्नान करके जूही और बेले के फूल का धारण करना और तेल लगा के केतकी के पुष्प का धारण करना उत्तम लिखा है और कमल के पुष्पों को जब इच्छा हो काम में ला सक्ता है॥

ऋतु योग्य पुष्प।

अर्थात् गरमी के दिनों में धारण करने लायक पुष्प यह हैं। पीली चमेली, कुन्द, रे.वाड़ी, चन्दन के फूल, बेल पुष्प यह सब रस और बल में समानहैं, यह सब त्रिदोष नाशकहैं इस लिये हमेशा धारण करने के योग्य हैं परन्तु गरम दिनोंमें ज्यादे फायदेमन्द हैं॥

जाड़े के दिनोंमें या जिस देश में हमेशा जाड़ा पड़ता है उन देशोंमें केतकी, मौलसिरी, कमल, गुल्लाला और चम्पा लाभदायक है॥

क्योंकि ये पुष्प शीतवात के हरने वाले और तासीर में कुछ गरम हैं इसलिये इन्हें शीत काल में धारण करने से अधिक लाभ होता है॥

वर्षा काल में—बेल, महुआ, नील कमल, गुलाब, पांडर और चन्दन के पुष्प ए मातदिल हैं, त्रिदोष नाशक, स्वच्छ नेत्रों में ठंढक देने वाले और शिर को पुष्ट करते हैं॥

पुष्पों के धारण करने की अवधि।

जाई का फूल छ पहर तक गुणवान रहता है बाद बेकाम हो जाता है। नेवारी का फूल चार घड़ी, कमल पुष्प तीन रात, केवड़ा ५ पांच रात,

गुलाब दो रात, चमेली आधीरात तक, चम्पा १ दिन, जूही ४ घड़ी, बंसन्ती, मौलसिरी, चन्दन और ओषधी इतने पुष्प जब तक अच्छे मालूम हों धारण करे। मन्दार, मरुया, दौना, पांडर, इतने पुष्प जब तक सुगन्धित रहें धारण करना चाहिये ॥

पुष्पों के विशेष गुण ।

त्रिदोषशमनीजाती महादाह विनाशिनी। सुगन्ध दोष समनं गौलालपुष्पमुच्यते ॥ पित्तहृदिगदश्चैव चक्षुष्यश्चोत्पलं-स्मृतम्। श्लेष्मवात प्रशमनमुष्णवीर्य्यञ्च निर्म्मलम् ॥ पुष्पाणां प्रवरश्चैव केतकीपुष्पमुच्यते। ईषदुष्णंसुगन्धञ्च सुशीतंदृष्टि-दायकम् ॥ शिरोभ्रम विनाशार्हं शतपत्रं तु शोभनम्। अधार्य्यं मल्लिका पुष्पं दृष्टिहानि करंपरम् ॥ चंपकंवात शमनं चक्षुष्यं विशदं शुभम्। पाटलं च महाशीतं श्लेष्मवात प्रवर्द्धनम् ॥ मन्दाग्नि पित्त दोषघ्नं कर्णव्याधि विनाशनम्। पाटलं धारयेद्यस्तु सम्पदा स समन्वितम् ॥ ज्वर मूर्छा पिपासाघ्न मायुष्यन्दाह नाशनम्।

जाही का पुष्प त्रिदोष नाशक और महा दाह का शान्त करने वाला है, गुलाब का पुष्प अति सुगन्धित और दोषों को शमन करता है। कमल का पुष्प वात कफ नाशक नयनों का हित पित्त हर्त्ता उष्ण वीर्य कुछ गर्म और निर्मल होता है। केतकी पुष्प सब पुष्प में उत्तम है कुछ उष्ण सुगन्धित शीतल और दृष्टि को बढ़ाने वाला है, मस्तक भ्रम को नाशक शत पत्र है। चमेली का पुष्प दृष्टि को हानि कारक है अतः इसे न धारण करे, चम्पा का पुष्प वात नाशक नेत्रों का हित और शुभ है। पाटल पुष्प शीतल कफ वात का बर्द्धक मन्दाग्नि पित्त के दोष और कान की पीड़ा को दूर करता है। जो

मनुष्य पाटल पुष्प को धारण करता है वह भगी होता है ज्वर दाह प्यास मूर्छा को दूर करता है और वायु वर्द्धक है पाटल गुलाब का भी नाम है।

खड़ाऊं।

भोजन के पहले और पीछे खड़ाऊं पहनने से काम वायु और नेत्र को हित है अधिक पहनने से दृष्टि की हानि होती है॥

द्विजादि गणों को उचित है कि पूर्व खण्ड कथनानुसार समस्त कर्मों से निवृत्ति हो के सूर्यास्त समय में पश्चिम या उत्तराभि मुख बैठ के सायं संध्या की उपासना करें॥

सायं सन्ध्या फलम्।

बौधायनः।

यदुपस्थकृतं पापं यच्च योनि कृतं भवेत्। सायं संध्या मुपस्थाय तेन तस्मात्प्रमुच्यते॥

जो मनुष्य राग द्वेष छोड़ भीतर या जलादि से बाहर पवित्र एवं एकाग्र चित्त हो प्रसन्नता पूर्वक सायं संध्या तथा ईश्वराराधन करता है वह पर्वत के समान दुःख और महा पापों को भी काट डालता है और जो मनुष्य प्रातस्सायं संध्या और परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना नहीं करता वह कृतघ्न मूर्ख और महा पापी है उस का अमूल्य जीवन का दिन व्यर्थ जाता है और भी लिखा है॥

मरीचिः—सन्ध्या येन न विज्ञाता संध्या येनानुपासिता। जीव मानो भवे च्छूद्रो मृतः श्वा चाऽभिजायते॥

दक्षः—संध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्व कर्मसु। यदन्य त्कुरुते कर्म न तस्य फल भाग्भवेत्॥

मनुः—नतिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्। स साधुभिर्बहिष्कार्यः सर्वस्माद्द्विज कर्मणः॥

मरीचि महाराज कहते हैं। जो संध्या कर्म नहीं जानता और न संध्या का वन्दना करता है वह जीवन मात्र शूद्र हो के बाद मरने के कुत्ता के योनि में जन्म लेता है। दक्ष जी कहते हैं कि जो द्विजाति संध्याकर्म को नहीं करता वह हमेशा अपवित्र और सब उत्तम कामों से बहिर्भूत रहता है। संध्याकर्म के अतिरिक्त जैसे गङ्गा नहाना एकादश्यादि व्रत करता है उसके फल का भागी नहीं होता। मनु का वाक्य है कि जो प्रातःकाल की संध्या नहीं करता और न सायं संध्या का उपासक है वह द्विजादि सम्पूर्ण कर्मों से छुट जाता है इसलिये सायं संध्या और प्रातःकाल की संध्या अवश्य करै जो वैदिक मंत्रों से न कर सकै वह सिर्फ ईश्वरका ध्यान और प्राणायाम करै॥

स्नानंसन्ध्याजपोहोमः स्वाध्यायोदेवतार्चनम्। यस्मिन् दिनेनसेव्यन्ते वृथासद्दिवसोन्नृणाम्॥

मिताक्षरा का वचन है कि स्नान सन्ध्या जप होम और देवता का पूजन जिस दिन नहीं करते मनुष्य का वह दिन वृथा जाता है सन्ध्या कर्म का विधान आध्यात्मिक ख० के प्रकर्ण में लिखेंगे॥

सन्ध्या काल भोजन करने से रोग, मैथुन करने से गर्भ का बिगाड़, सोने से धन का, विद्या पढ़ने से आयु का नाश और राह चलने से भय होताहै। अग्नि, शोभमा रात्री काम और आनन्द देनेवालीहै सन्धियाली से भय भूल और दिशा भ्रम होता है। निर्मल और शीतल वायु शरीर में लगने से (विशेष कर गर्मी के दिनों में सन्ध्या समय) पित्त और दाह रोग का नाश होता है॥

रात्रि में भोजन।

रात्रौचभोजनंकुर्यात् प्रथमप्रहरान्तरे। किञ्चिदूनंसमश्नीयाद्दुर्जरंतत्रवर्जयेत्॥

मनुष्य को उचित है कि रात्री में एक प्रहर के भीतर अर्थात् ९ या १० बजे भरमें भोजन कर लेवै क्योंकि अधिक रात जाने पर भोजन करने से अजीर्ण होने का डर है और रात्रि में कुछ कम भोजन करना याने जितनी भूख हो उसकी चौथाई आहार छोड़ देवै और जितनी चीजें देर में हजम होने वाली हैं उन्हें रात्रि में कभी न खावै। कारण यह है कि रात का भोजन न पचने से शीघ्र अजीर्ण हो हैजा आदि रोग उठ खड़े होते हैं। यह बात याद रहे कि अगर रात्रि के भोजन से अजीर्ण हुआ हो तो दिन में दो बार भोजन न करे क्योंकि रात्रि के अजीर्ण में दूसरे दिन भोजन करने से मन्दाग्नि रोग होताहै, यदि अत्यन्त भूख लगे तो बहुत हलकी और शीघ्र पाकी द्रव्य भोजन करे॥

मद्य पान।

आज कल हिन्दुस्तान में भी शराब पीने की लोगों को अधिक आदत पड़ गई है। कितने लोगों की इसके पीछे जान जाती है छिपा नहीं है क्योंकि शराब और विष में कोई भेद नहीं है (येविषस्यगुणाः प्रोक्तास्तेपमद्ये प्रतिष्ठिताः) जितने गुण विष में शास्त्रकारोंने कहा है वे सब मद्य में भी विराजते हैं। यद्यपि आयुर्वेद तत्व दर्शियों ने मद्यपान में अनेक गुणभी दिखलाया है और उसे स्वभाव में अन्न के समानकहा है तथापि अयुक्त प्रमाण से पिया गया मद्य मनुष्य को शीघ्र हनन करता है। जैसे अन्न प्राणियों का प्राण है परन्तु बेप्रमाण खाया हुआ अन्न मनुष्य को शीघ्र मार डालता है। लिखा भी है॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्तं हिनस्त्यसून्। विषं प्राणहरं तच्च युक्ति युक्तं रसायनम्॥

अन्न यह जीव मात्र का प्राण है लेकिन बेअन्दाज भोजन किया अन्न प्राण नाशक होता है। विष यद्यपि प्राण नाशक है परन्तु युक्ति से सेवन किया गया विष भी अमृत के तुल्य रसायन होता है।

तथापि जहां तक हो सके विष का त्याग करना ही शिष्ट जनों का काम है क्योंकि सांप का पकड़ने वाला यद्यपि अपनी मंत्र की ताकत से सांप को पकड़ता है लेकिन यह भी सिद्धान्त है कि सांप पकड़ने वाले की मृत्यु सांप ही के द्वारा होती है। इसी प्रकार शराब पीनेवाले चाहे वे विधि से पिये वा अविधि से अन्ततोगत्वा उनकी मृत्यु मद्य ही के द्वारा होती है। यह कथन केवल हमारा कल्पना मात्र नहीं है बल्कि इसी विषय में विलायत के आयुर्वेद वेत्ताओं तथा विज्ञान शास्त्र के वेत्ताओं ने अनेकानेक व्यवस्था दी है जिसे पाठकगणों के अवलोकनार्थ नीचे प्रकाश करते हैं॥

प्रोफेसर मिल्टन् ने लिखा है "मद्य (शराब) एक प्रकार का विष है। रस शास्त्र और वनस्पति शास्त्र में यही स्थान अर्थात् यही उपनाम श्रेष्ठ है। पीनेवालेकी मात्रा अनुकूल यह शीघ्र अपना प्रभाव दिखलाता है अथवा विलम्ब में अर्थात् अकस्मात् शीघ्र प्राणघात करता है वा धीरे धीरे"॥

डाक्टर मुनरो का कथन है "मद्य के विषय में प्रत्येक लिखने वालों ने लिखा है कि यह निद्रा कर विष है अर्थात् धीरे से प्राण घात करने वाला है"॥

डाक्टर लीज का बयान है "मैटीरियामेडिका (वैद्यक ग्रन्थ) सम्पूर्ण ग्रन्थकार अब सहमत हैं कि मद्य उद्भिज विषों में सब से बलवान और मृत्यु कारक विष है"॥

डाक्टर गार्डन ने लिखा है "तीक्ष्ण मद्य से अधिक बलवान विष प्राप्त होना कठिन है"॥

प्रोफेसर सेवाल का कथन है "मद्य मनुष्यों के स्वभाव और उसके शिरागों पर तथा पाचन शक्ति पर विष का प्रभाव उत्पन्न करता है और उदर में दाह उत्पन्न कर देता है। जिसका फल यह होताहै कि अनेक

प्रकार के व्रण और कृच्छ्र रोग हो जाते हैं और उदर के चारों ओर की त्वचा कड़ी हो जाती है और अन्त में मांस ग्रन्थि, मांसार्बुद और दूसरे इन्द्रिय सम्बन्धी विकार उत्पन्न हो जाते हैं" ॥

डाक्टर योमैनस कहताहै कि "मद्य जितने काल तक उदरमें ठहरता है वह पाचन शक्ति का सब से प्रबल शत्रु है" ॥

डाक्टर येगोरी का वचन है "मद्य उदर के लिये सब से हानिकारक वस्तु है" इसके पीनेसे कुछ दिनके पश्चात् कलेजे में रक्त संचय हो जाता है फिर अन्यान्य पदार्थोंकी वृद्धिसे, कलेजेके कहीं मोटे कहीं क्षीण होनेके कारण, मद्यप मनुष्य अपना साधारण नित्यका कार्य करनेमें सर्वथा असमर्थ हो जाता है जिससे न तो पित्तस्राव होता है और न रक्त शुद्धि होती है । धीरे २ दूसरे विकार उत्पन्न होकर एक प्रकार का रोग जिसको अंगरेजी में "जिन्ड्रिन्कर्स लीवर" या "आयनेल्ड लीवर" कहते हैं हो जाता है । बहुधा रक्त के रुकने से अत्यन्त दुखदाई पीड़ा सहित जलोदर रोग हो जाता है जो प्रायः असाध्य रोग है । पुनः शरीर में अनेक प्रकार की नित्य नई पीड़ाओं के भोग कर मद्यप रोगी निराश हो मृत्यु का आश्रय लेता है ॥

प्रोफेसर बस का वर्णन है " कि मैं ने आठ मनुष्यों के कलेजे की परीक्षा ली थी जो कि मद्य के अधिक अभ्यासी होने के कारण मृत्यु के हस्तगत हुये थे। उन सब के कलेजे के दशा में तनिक भी अन्तर न था"।

डाक्टर लिट्ल जान, जो कि एडिनबरा में सर्व साधारण की स्वस्थता का द्रष्टा (निगहबान) और पुलिस सर्जन था, लिखता है "मैं ने जहां तक परीक्षा की मद्यपों के कलेजों को रोग-ग्रसित पाया । मद्य के न्यूनाधिक मात्राअनुकूल रोग की दशा भी वैसीहीथी" ॥

मिष्टर ब्रान्सन कहते हैं चाहे जितना न्यून मद्य पीने का अभ्यास (आदत) क्यों न हो परन्तु बहुधा यह हैजा पैदा करता है और मद्यप को यह हैजा पैदा हो जाय तो असाध्य बनाता है" ॥

डाक्टर स्वाम का कथनहै "न्यूयार्क के अस्पताल में २०४ हैजे के रोगियों में केवल ६ मनुष्य ऐसे थे जो मदिरा नहीं पीते थे" ।

डाक्टर एलिस् ने पार्लियामेंट सम्बन्धिनी एकसभा में कहा था "मादक अर्क मुख्य कर के मद्यपान अधिक विक्षिप्तता का हेतु है क्योंकि मिड्ल सेक्स,, के पागल खाने में २८ विक्षिप्त (पागल) एक वर्ष में उन में १८ मदिरा पीने वाले थे ॥

एडनबरा के रायल राशाद्दुल्ला के डाक्टर "स्के" का कथन है "मद्यपान विक्षिप्तता (पागलपन) का मुख्य कारण है । १८० विक्षिप्त जिन के रोग का कारण ज्ञात हो गया था उन में पचास मद्यप थे" केवल यही रोग नहीं प्रायः मद्यपों को अनेक रोग हुआ करते हैं जो मदिरा के कारण असाध्य हो जाते हैं ॥

मद्य का प्रभाव केवल मद्य पीनेवाले पर नहीं समाप्त होता किन्तु एक दूसरे के पश्चात् अर्थात् उस की सन्तति भी वैसीही होती जाती है । डाक्टर होव, एक प्रसिद्ध अमेरिका निवासी, लिखता है कि दो सौ विक्षिप्त मनुष्यों में से जिन का रोग निदान विदित हो गया था ४५ ऐसे थे जिन के माता पिता मद्यप थे ॥

डाक्टर कारपेन्टर कहता है "मुझे पूर्ण विश्वास है कि जि जो मद्य के अभ्यास से उन्मत्त हो जाते हैं उन की सन्तति को भी यही कष्ट भोगना पड़ता है" ।

न्यूयार्क ट्रिटाके का कथन है "मद्यप की सन्तान अवश्य मद्यप होती है",

अब बुद्धिमानों को विचार करना चाहिये कि विलायत आदि जो एक प्रकार का अति हिम प्रधान देश है कि जहां मद्यपान अधिक हानिकर न होना चाहिये, जब वहां के लोगों को नुकसान करता है तो यह आर्य्यावर्त्त जहां एक प्रकार की सर्वदा आभ्यान्तरिक लोगों के अन्तस में गर्मी बनी रहती है वहां मद्यपान क्यों न हानि कर होगा ? अवश्य होगा यही कारण है जो भारत में प्रति दिन कोढ़ियों की वृद्धि होती जाती है ॥

विधियुक्त मद्य पान का फल ।

विधिना मात्रया काले हितै रन्नैर्यथाबलं । प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतोपमम् ॥ स्निग्धैःसदन्नैर्मांसैश्च भक्ष्यैश्च

सह सेवितं। भवेदायुः प्रकर्षाय बलायोपचयायच॥ कान्यता मनसस्तुष्टि स्तेजो विक्रम एवच। विधिवत्सेव्यमानेतु मद्येसन्निहिता गुणाः॥

जो मनुष्य विधि पूर्वक मात्रा सहित भोजन के साथ अपनी ताकत के अनुसार प्रसन्न चित्त से मद्य पीता है वह मद्य अमृत के समान गुण करता है। उत्तम बनाया चिकने अन्न (ताजा घृत पक्का दाल भात आदि) और मांस (सूरवा कबाब आदि) और मनोहर खानों के साथ पिया भया शराब आयुः (उमर) बल और शरीर का बढ़ाने वाला होता है। बल बर्द्धक द्रव्यों से खिंचा हुआ उमदा शराब, अन्दाज से विधि पूर्वक पिये तो उस के पीने से रूप की सुन्दरता, मन का सन्तोष, शरीर का तेज और पराक्रम बढ़ता है, यदि मद्यपान न करै तो अति उत्तम है॥

अविधि मद्य पान।

निर्भक्त एकान्ततएव मद्यं निषेव्यमाणं मनुजेन नित्यं। उत्पादयेत्कष्टतमान्विकारा नापादयेच्चापि शरीर भेदम्॥ क्रुद्धेन भीतेन पिपासितेन शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन। व्यायामभाराध्व परिक्षतेन वेगावरोधाभिहतेनचापि अत्यम्लभक्षावततोदरेण साजीर्णभुक्तेन तथाऽबलेन। उष्णाभितप्तेनच सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान्विकारान्।

जो मनुष्य बिना भोजन अर्थात् खाली पेट में शराब पिया करता है। याने गिलास पर गिलास ढकोसे जाता है और उसके ऊपर कुछ खाना नहीं खाता उस के शरीर में अति कष्ट असाध्य रोग होते हैं और उससे वह मनुष्य मर जाता है। जो मनुष्य क्रोध के ऊपर, भय युक्त, पियास शोकग्रस्त में, भूखे पेट और मेहनत किये भये पर, बोझ उठाने के उपरान्त, कहीं से थक के आया हो,

दस्त मूत्र खुलासा न हुआ हो, या पेट में पित्त जमा हो या रुक्ष अन्न खाये हो जैसे बजरा आदि, अजीर्ण से पेट भरा हो, अति धूप का तपा या गर्मी से व्याकुल हो उस के ऊपर शराब पीने से वह शरीर में अनेक प्रकार का रोग उत्पन्न करता है। इसलिये जिसे मद्य पीने की लत पड़ गई है बिना पिये चैन नहो या जो कभी २ मनप्रसन्नार्थ शराब पीने की आदत रखते हैं। वे रात्री में भोजन के साथ ही एक छटांक या इस से कुछ कम पी सक्ते हैं परन्तु अति गरम ऋतु में वह भी निषेध है। और सब नियम भोजन करनेके वही हैं जो दिन के भोजन प्रकर्ण में लिखे हैं। भोजन करने के दो अथवा एक घड़ी के बाद उत्तम पलंग पर सोना आरोग्य कर है॥

निद्रा विधिः।

नित्यानन्द जगदीश्वर ने मनुष्यों को क्या जीव मात्र को दिन कृत परिश्रम आश्चर्य रात में सोने से का नियम बना दिया है। सुख पूर्वक रात्रि में सोने से परिश्रम से उत्पन्न आलस्यादि जितने उपद्रव हैं वे सब शान्त होते हैं। रात में जागने से, या किसी विघ्न से, अथवा किसी रोग के कारण से रात में नींद न पड़ने से आलस्य, झांप, शिरदर्द, खोकाई और अजीर्ण आदि अनेक रोग खड़े हो जाते हैं। इसलिये मनुष्य को उचित है कि हजारों जरूरी कामों को छोड़ रात में अवश्य सोवे परन्तु छ० अथवा सात घंटे से अधिक न सोना चाहिये॥

शय्याविचारः, शिल्पशास्त्रे।

चतुराशीतिपर्वाणि दैर्घ्येणापरिकल्पयेत्। षडङ्गुलानि विस्तारं सप्तकांहस्तमेस्मितम्॥ एवंशय्याविधातव्यं सर्वेषां शयनोचिता। मानाधिक्येदरिद्रः स्यान्मानहीनेसुखक्षय:॥

भावार्थः—साढ़े तीन हाथ की लम्बी ढाई हाथ चौड़ी और एक हाथ ऊंची ऐसी शय्या होनी चाहिये इससे बड़ी दरिद्र और छोटी सुख

क्षय करनेवाली है। विष्णु पुराण में लिखा है कि न बहुत बड़ीहो और न छोटी एव न मैली कुचैली हो और खटमल जिसमें न हो यह शय्या सुख की देनेवाली होती है। उत्तम पलंग पर सोनेसे त्रिदोष नाश होता है। तोशक पर सोने से वायु और कफ नाश हो रक्त वृद्ध होता है। परंतु गरम ऋतु में सूती गलीचे पर सोने से बहुत फायदा होता है। जमीन तथा काठ की चौकी पर सोने से बात पित्त का कोप होता है॥

सुश्रुत—उपरोक्त लक्षण युक्त पलँग बल, पुष्टि प्रीति नींद और बुद्धि को बढ़ाने वाला त्वचा को मुलायम मांस और रक्त को मुनासिब अन्दाज से अंग में पहुंचाने एवं श्रम वायु और कफ रोग का हरने वाला है। मार्कण्डेय का वचन है कि भोंगी, भग्न, उत्तर शिर और जिसमें मसहरी न हो ऐसे पलङ्ग पर न सोये। गार्ग्य ऋषि कहते हैं शून्यालय, स्मशान, चौरहा, शिवालय, मातृ वेश्मनि (मातृ वर्ग की निज कोठरी में) गोशाला, धान्याशय आदि स्थानों में, पलाश, आंब, जामुन इनके नीचे, अपरीक्षित स्थान और बिजुली से दग्ध स्थान में आरोग्य के चाहनेवाले जन कदापि न सोवें॥

शयन में दिशा का विचार।

मार्कण्डेयः—प्राक्शिरः शयनेविद्याद्धन मायुश्च दक्षिणे।
पश्चिमे प्रबला चिन्ता हानिर्मृत्यु रथोत्तरे॥
गार्ग्यः—स्वगृहे प्राक्शिरः शेते श्वाशुर्ये दक्षिणाशिराः।
प्रत्यक्शिरः प्रवासेतु न कदाचिदुदक् शिरा॥
विष्णुपुराणे—प्राच्यांदिशिशिराशस्तं याम्यायमथवानृप।
सदैवस्वपतः पुंसो विपरीतं तुरोगदम्॥

मार्कण्डेय का वचन है कि पूर्व शिर में सोने से विद्या, दक्षिण में आयुः की वृद्धि पश्चिम में चिन्ता और उत्तर में मृत्यु प्राप्त होती है। गार्ग्य कहते हैं अपने घर में पूर्व शिर, ससुराल में दक्षिण शिर और यात्रा में पश्चिम शिर कर के सोना परन्तु उत्तर शिर कभी न सोवे॥ वि॰ पु॰ में लिखा है पूर्व शिर सोना शुभ है॥

विपरीति सोने में रोग होता है। और भी इसी प्रकार बहुत से ऋषियों के वचन पाये जाते हैं तथा परीक्षा से भी जाना गया है कि उत्तर सिर सोने से अवश्य दुःस्वप्न आदि होते २ कोई न कोई रोग भी हो जाता है इससे उत्तर सिर कभी न सोना चाहिये ॥

करवट सोने से बल, हमेशा चित सोने से मनसा और छाती पर हाथ रख कर सोने से दुःस्वप्न होता है ॥

शय्या सिर की ओर ऊंची और पैर की तर्फ नीची होनी चाहिये एवं चारों पाये के तले जलयुक्त चार कूंडी रखनी चाहिये ताकि चींटी आदि कोई कृमि शय्या पर चढ़ न जाय ॥

सोने का कमरा रमणीय, सुगन्धित शोभा युक्त सुखद (तसवीर वगैरह) वस्तु से युत एवं जाड़े में गुलाबी, वर्षा काल में श्वेत और गरमी में हरे रङ्ग से पोता होना चाहिये ॥

सोते समय निम्नलिखित पदार्थ खाट के समीप अवश्य रख लेवे।

उपानहौ वेणुदण्ड मम्बुपात्रं तथैव च। ताम्बूलादीनि रम्याणि समीपे स्थापयेद्‌गृही ॥

जूतों का जोड़ा या खड़ाऊं, बांस का सोंटा या कोई हथियार हो, जल भरा पात्र और पान कायची अँतर आदि मन प्रसन्न कारक रमणीय वस्तुओं के मनुष्य मात्र सोते समय अपने पास अवश्य धर लेवें।

दीप कालः मरीचिः।

रवेरस्तं समारभ्य यावत्सूर्योदयो भवेत्। यस्यतिष्ठे दृगृहे-दीप स्तस्यनास्ति दरिद्रता ॥

सूर्यास्त से लेकर जब तक सूर्योदय न हो जिसके घरमें दीपक जलता है वह दरिद्र नहीं होता है एक तो यही प्रत्यक्ष है कि चोर का भय कम रहता है। दीपक का मुख पूर्व होने से आयु, उत्तर मुख होनेसे धन की वृद्धि पश्चिममुख होनेसे दुःख और दक्षिण मुख होनेसे हानि होताहै॥

दीप का मुख॥

प्रत्यङ्मुखोदुःखदोऽसौ हानिदोदक्षिणामुखः॥

मरीचि का वचन है कि पश्चिम और दक्षिण मुख दीपक हानिकारक होता है कार्त्तवीर्य तन्त्र में लिखा है कि अनुष्ठान में प्रत्यङ्मुख दीप स्थापन करना चाहिये इससे स्पष्ट हुआ कि गृह में सर्व्वदा उत्तर और पूर्व मुख दीपक रखना उत्तम है॥

"उत्तम दीप लक्षणम्" सद्मने॥

नेत्रह्लादकरः सार्च्चिं दूरतापविवर्जितः।
सुशिखः शब्दरहितो निर्धूमोनातिहृस्वका॥

नेत्रों को हर्षकारक, दूर तक जिसकी तेजी न जाती हो अर्थात् ठण्डी रोशनी हो सुन्दर गुल, धूम तथा शब्द रहित हो और टेम न अति ह्रस्व और न दीर्घ ऐसा दीप मनुष्य को आरोग्य प्रद होता है। दीपक की बत्ती सूत या ऊन आदि वस्त्रों की न होनी चाहिये सर्व्वदा कपास की बत्ती और स्नेह में से घृत या तिल तथा सरसों का तैल दीपकमें जलाना वैद्यक का मत है परन्तु आज कल जहां देखिये ठाकुरद्वारे से लेकर पाखाने की कोठरी तक करोसिन ऐल (मिट्टी का तैल) और विलायती चिमनी जलती हैं। इसमें संदेह नहीं कि एक लैम्प जला देने से कमरा भर चमक उठता है परन्तु चिमनी की तीव्र चमक नेत्र की ज्योति को मन्द करती है। पिछले समय में सौ वर्ष के वृद्धको भी चश्मे की हाजत नहीं होती थी अब सोलह वर्ष के छोकड़ों को बिना चश्मा राह नहीं सूझता यह सब कारण प्राचीन व्यवहारों के त्याग का है। आरोग्येच्छुक जन को उचित है कि आवश्यकीय कार्य्य के अतिरिक्त सर्व्वदा घरी चिमनी जलाया करें॥

श्लेष्म प्रकृति वाले के शयन गृह में रात भर दीप का जलना लाभदायक है और वातपित्त प्रकृति वाले को हानिकारक है॥

"पुरुषस्य दीपनिर्व्वापणेदोषः"

यह बात प्रायः सभी जानते सुनते होंगे कि पुरुष को दीपक बुताने में दोष होताहै इसीसे स्त्रियां पुरुष को दीप बुताने भी नहीं देती हैं॥

दीप निर्व्वापणात्पुंसः कूष्माण्डच्छेदनात् स्त्रियः।
अचिरेणैव कालेन वंशनाशो भवेत् ध्रुवम्॥

पुरुष को दीपक बुझाने से और स्त्रियों को पेठा के चीरने से वंश क्षय होता है अर्थात् वीर्य्य तथा रज कुछ काल में वंशोत्पादक क्षीण होजाता है। यदि कोई आधुनिक मतावलम्बी पाठक कहै कि यह किसी तन्त्र या पुराण की गप्प है? तो इसका उत्तर यही है कि कुछ दिन वैद्यक शास्त्र को पढ़ो स्वयं पता जाता रहेगो॥

लालटेन का गुण॥

मनुष्य को उचित है कि यदि अंधियारी रात में कहीं जाना हो तो लालटैन अवश्य ले लेय क्योंकि मार्ग में सर्पादि जन्तुओं और शत्रु का भय नहीं होता है॥

पङ्खा॥

दयामय पिता जगदीश्वर ने मनुष्यों के रक्षार्थ निर्व्वायु की अवस्था में व्यजन (पङ्खा) बनादिया है पङ्खे की हवा दाह, मूर्च्छा, पसीना और थकावट दूर करती है। ताड़ के पङ्खे की हवा त्रिदोष शमन करने वाली है। बांस के पङ्खे की हवा गरम और रक्तरोग पैदा करती है। चवर, कपड़ा, मोर के पङ्खा और बेंत के पङ्खे की हवा, प्रकृति के सम चिकनी, तर, सुख देनेवाली, ज्वर, दाह, मूर्च्छा, पसीना, बेकली और बात पित्त शमन करनेवाली होती है विशेष कर मशा मच्छड़ आदि दंशन करनेवाले जीवों से क्लेश नहीं होता, भोजन करते समय में भी पङ्खे से वायु दिये जाय कि जिसमें मक्खी आदि जीव भी भोजन पर न बैठने पावें क्योंकि मशा मच्छड़ आदि के काटने से रक्त रोग और भोजन पर बैठ जाने से हैजा आदि रोग होताहै कारण यह है कि उक्त जीव गाय, गीदड़, कुत्ता आदि अनेक जीवों के विकार रक्त को पान करते हैं और वही रक्तयुत डङ्क से मनुष्य के कोमल शरीरमें काटते हैं इससे रक्त रोग होता है। और भोजन के द्रव्य पर बैठने से हैजा आदि अजीर्ण रोग होताहै। ज्वर आदि किसी क़िस्म की बीमारी क्यों न हो जिस तरह प्यास लगने पर जल का निषेध नहींहै उसी प्रकार गर्मी लगने पर पङ्खे की हवा का निषेध नहींहै। जो मनुष्य बाहर की हवा से परहेज़ कर निरन्तर कपड़े के पङ्खेकी हवामें रहतेहैं उनकी आयु और आरोग्यता सदा बढ़तीहै॥

"दिशाभेद से बाहर के हवे की की गुण" सुश्रुते।

पूर्व की हवा भारी, गरम, मीठी (क्योंकि फलों में मीठे रस पैदा करती है) चिकनी, तर करनेवाली दाह और वायु रोग के बढ़ानेवाली पित्त रक्त त्वचा दोष, बवासीर विष, कास, सन्निपात ज्वर, दमा, आमवात रोगीत्पन्न करनेवाली है परन्तु मिहनती (कसरती आदि) और धातुक्षीण वाले को हित करती है॥

दक्षिण की हवा मीठी, हलकी, ठण्ढी बल और हट बनानेवाली पित्त और रक्तरोग नाशिनी है॥

पश्चिम की हवा तेज और सुखानेवाली हलकी वायु बढ़ानेवाली बल, मेद पित्त और कफ को नाश करती है। उत्तर की वायु—चिकनी, मीठी, ठण्ढी कोमल बल और दोष बढ़ानेवाली है॥

"कोन की हवा का गुण"

पूर्व और दक्षिण कोण की हवा रूखी और दाह पैदा करती है। दक्षिण और पश्चिम कोने की हवा ठण्ढी है। पश्चिम और उत्तर कोने की हवा कड़वी, तीती और वायु बढ़ाने वाली है। उत्तर और पूर्व कोने की हवा कड़वी और वायु रोगकारी है। हवा की उत्पत्ति, स्वरूप, वज़न, ताक़त और हवा से क्या २ वस्तुयें तैयार होती हैं यह सब पदार्थविद्या से ज्ञात हो-सक्ता है भिन्नप्रकर्ण में इसे भी लिखेंगे॥

"अञ्जन"

प्रति दिन आँखों में सुरमा देना हित है। परन्तु लोग इसे शृङ्गार या असभ्यता जान कम काम में लाते हैं। हमारी यह सम्मति है कि दूसरे तीसरे दिन दृष्टि के बढ़ाने के लिये आँखों में अञ्जन अवश्य लगा लिया करें।

"पक्ष्मलं विशदं कान्त ममलोज्ज्वल मण्डलम्,
नेत्रमञ्जन संयोगाद्भवेचामलतारकम् सुश्रुते"

नेत्र में अञ्जन लगाने से पलकों के मल नष्ट हो नेत्र का फैलाव सुन्दरता श्वेत मण्डल और कृष्ण तारा मल रहित रहता है॥

वैद्यक में यह भी लिखा है कि हेमन्त और शिशिर ऋतु में दोपहर के समय ग्रीष्म और शरद् में प्रातःकाल, वर्षा में संध्या समय, परन्तु जबतक आ-काश साफ़ हो और अधिक गरमी न हो, बसन्त ऋतु में जब इच्छा हो आँखों

में सुरमा लगाना उत्तम है। परन्तु सामान्य विधि से सुबह या शाम को लगाना चाहिये। निषेध—बहुत सर्दी, गर्मी, हवा, मेघ घिरेहुये, रात में जागरण, वमन, सिर से स्नान, और भोजन करके और नवज्वर रोग में सुरमा लगाना मना है॥

"सुरमा लगाने की विधि"

खास सुरमा जो विन्ध्य पर्वत से आता है बाज़ार में बनियों की दूकानों में मिलता है आध पाव लेकर आग में गरम करके तीन २ बार गोमूत्र में त्रिफला के क्वाथ में, शहद में, बकरी के दूध में, भंगरा के रस में बुझाले, तब साफ पानी से खूब धोकर साफ करके दर्माश शुद्ध कपूर मिलाय खूब महीन चूर्णकर किसी काग़दार शीशी में रख लेय, यदि पूर्वोक्त द्रव्यों में शीशे को भी पिघला करके तीन २ बार सीधकर सलाई बना ले तो अति उत्तम हो, न होसके तो साधारण शीशे की सलाई से पूर्वोक्त लेखानुसार आंखों में अञ्जन लगाने से आंख की जलन, कीचड़ आना, खुजलाहट, पानी बहना, दर्द, हवा और घाम का विकार जाता रहता है॥

आंख दूखने का लेप॥

छोटी हरें, सेंधा नमक, गेरू, और रसवत इन चारों को सम भाग ले पानी में महीन पीस किञ्चिन्मात्र गुनगुना कर सोती समय या जब इच्छा हो पलकों पर लेप कर देय शीघ्रही आराम होगा॥

रतौंधी का अञ्जन॥

रसवत, हरदी, दारु हरदी, चमेली और नीम के पात सबको बराबर ले गोबर के रस में घोंट गोली बना ले दोनों समय पानी में घोंट अञ्जन करें तो निश्चय रतौंधी छुट जाय परन्तु सिर में चमेली के तेल को लगा कर स्नान करें और दुग्ध आदि तर और शीतल चीज खावें॥

अति क्रोध, शोक, रुदन, स्त्री प्रसङ्ग करने से, अति सूक्ष्म तथा चमकीली वस्तुओं के देखने से, नङ्गे पांव चलने से घाम तथा आंच में रहने से, मदिरा आदि नशों के अधिक सेवन से, गरमी के रोग से, सामर्थ्य से अधिक पढ़ने लिखने से मनुष्य जल्दी ही दृष्टिहीन वा अल्पदृष्टि होजाता है॥

हमेशा आंखों में अञ्जन लगाने से, सिर में तेल देकर स्नान करने से, निरन्तर वीर्य की रक्षा करने से दिन में तीन चार बार पैर और मुख के धोने से मूंग, लाल धान, जौ, घी, दूध मुनक्का, आंवला, केला, भांगरे की

साग, बनमुर्गा, हिरण, कछुआ, काला तीतर इनके मांस और जिन २ चीज़ों के खाने से दिल और दिमाग़ में ताक़त पहुंचती है, उन सबों के खाने से सर्वदा रमणीक शीतल मकान में रहने और सुखपूर्वक निर्विघ्न रात में सोने से मनुष्य दृष्टिहीन नहीं होता॥

आदर्श (आईना)

लोग कहते हैं कि रात में आईने में मुख देखने से मुख में भाई पड़ती है परन्तु यह वचन हमें किसी ग्रन्थ में नहीं मिला, दर्पण देखने का कोई काल नियत नहीं है मनुष्य की इच्छा होने पर हर समय देख सक्ता है। आईने में मुख देखने से मङ्गल, शोभा, बल, पुष्टि और आयु बढ़ती है॥

प्रसाधनी (कङ्घी)

इसका भी अनियत काल है आवश्यक होने पर मनुष्य बालों को झाड़ सक्ता है, आबनूस या भैंसे की सींग की कङ्घी अच्छी होतीहै। कङ्घी से रोज़ बालों को साफ़ करनेसे बालोंका मैल और कीड़े नाश होकर शोभा बढ़तीहै लेकिन एक वचन भी है॥

शरीर शुद्धिं निर्वर्त्य कृतशौच विधिर्न्नरः।
केशपाशे प्रकुर्व्वीत प्रसाधन्यादि शोधनम्॥

शौचानन्तर नहा धो के संध्या से निश्चिंत हो कङ्घी से बालों को साफ़करे क्योंकि बाल झाड़ने से बाल टूटते हैं और बाल टूटने से द्विजातिगण अशुच होजाते हैं (ऐसी धर्मशास्त्र की आज्ञा है) तो बिना स्नान किये संध्याकर्म निषेध है इसलिये संध्या से निश्चिंत होके तब बालों को झाड़े।

एक स्थल में लिखा है कि कङ्घी से बालों को सवाँरना कायस्थादि वर्णों के लिये है, ब्राह्मणादि के लिये नहीं क्योंकि ब्राह्मणों को सर्व्वदा मुण्डन या बहुत छोटे २ बाल रखने चाहिये, खैर इसका खण्डन तो हम नहीं करते किन्तु बाल रखने पर कङ्घी से बालों को साफ़ करना सब वर्णों के लिये आयुर्व्वेद का मत है।

शयनविधि।

उपानहौवेणुदण्ड मम्बुपात्रं तथैवच। ताम्बूलादीनि र-

स्थानि समीपे स्थापयेद्गृही ॥ नार्द्रवासाश्च नग्नश्च शून्येष्वस्तश्च खेऽशुचिः ॥

सोते समय पलँग के समीप पहिरने का जूता या स्लिपर अथवा खड़ाऊँ बिस्तर के नीचे पलँग पर डण्डा, लाठी या कोई हथियार, पलंग के पास किसी तिपाई पर स्वच्छ जल और बीड़ी आदि रमणीक वस्तुओं को अवश्य रखलेवे। किन्तु भीगे कपड़ों पर तथा नग्न होकर, अकेले घर में, शरीर में तैलादि मर्द्दन करके, उच्च स्थान अर्थात् बिना आड़ के चबूतरा, अटारी अथवा मचान आदि पर न सोवे ॥

"शयने आवश्यक कर्म्माणि" मार्कण्डेयः–

रात्रिसूक्तं जपत्स्मृत्वा देवांश्च सुखशायिनः । नमस्कृत्वा व्ययं विष्णुं समाधिस्थः स्वपेन्निशि ॥ दक्षः–निद्रा समय मासाद्य तांबूलं वदनात्यजेत् । पर्य्यङ्कात्प्रमदां माला ललाटं पुष्पाणि मस्तकात् ॥

सोते समय के जरूरी काम मार्कण्डेय जी इस प्रकार लिखते हैं कि वेदोक्त रात्रिसूक्त पाठ करके अव्यय विष्णु भगवान और देवताओं को स्मर्ण करके शयन करे। दक्ष जी कहते हैं कि निद्रा प्राप्त समय मुख से पानको थूंकदेय, माथे का चन्दन और पुष्पों का माला वगैरह भी गले से दूर करदेय ॥

तात्पर्य्य यह है कि पलंग के पास जूता रहने से मूत्रादि त्याग करने के लिये पहिरने के काम आताहै। अस्त्र रहने से दुःस्वप्न का नाश और शत्रु का भय नहीं रहता, जल और पान आदि रखने से रात्रि में मुख धोने आदि और बीड़ी खाने में काम आता है, भीगे कपड़ों पर सोने से अङ्ग दर्द होने लगता है, नग्न सोने से स्वप्नादि दोष तथा दुःस्वप्न होता है, तैलादि लगा के सोने से चींटी आदि पलंग पर चढ़नेका भय और कपड़ा मैला होताहै, बिना आड़ उच्च स्थान में सोने से गिरने का भय रहता है।

जगत्पिता जगदीश्वर को स्मरण करके सोने से शत्रुओं की रक्षा और उन लोगों का कर्ज अदा होता है, मुख में पान का बीड़ा रखकर सो जाने से उस के कण श्वासद्वारा गले में जाके खांसी उत्पन्न करता है और गले में पुष्पोंके

माला आदि पहिन कर सोने से पतङ्गादि कृमि आ लिपटती हैं।

प्राय: ऐसे लोग हैं जिन्हें सोती समय जल पीने की आदत है कितने लोग रात में कई बार उठ के जल पीते हैं, परन्तु नुकसान करता है जिन्हें रातको प्यास अधिक लगे वे शीतलचीनी चाबकर सोया करें तो तृष्णा न लगे॥

मैथुन विधि।

पूर्वरात्रे व्यतीते तु सगच्छेद्रतिमन्दिरं।
पादौ प्रक्षालयत्पूर्वं पश्चाच्छय्यां समाविशेत्॥

जब प्रहर भर रात्रि व्यतीत होजाय अर्थात् १२ बजे के उपरान्त जब मनुष्य रतिमन्दिर अर्थात् स्त्री के पास जावे तहां जाकर प्रथम पैरों को धोय पोंछ कर तब शय्या पर बैठे।

जिस ग्रन्थ को देखिये रात ही में मैथुन करना सिद्ध होता है तिसमें भी मध्याह्न को छोड़ दे अर्थात् ११। १। २ और ३ बजे रात के अभ्यन्तरमें मैथुन श्रेष्ठ है। एकान्त, रमणीक, सुगन्ध शोभा और सुखद वस्तु युक्त बने कमरे में चिड़ियों की सुरीली गान सुनते हुये, वदन में सुगन्ध फूल इतर लगा कर और उत्तम भूषण वस्त्र धारण कर और बलकारी द्रव्य हलवा भोजन करके इलायची, केशर, कस्तूरी आदि सुगन्ध द्रव्य युक्त पान चाबते हुये कामबाण से व्याकुल प्रीतियुक्त पुत्रार्थी पुरुष पूर्वोक्त उत्तम शय्या पर स्त्रीप्रसङ्ग करे॥

ऋतुवती स्त्री को भी चाहिये कि उत्तम २ वस्त्र, आभूषण और अञ्जनादि सर्वाङ्ग शृङ्गार कर परस्पर प्रीति में मग्न चिकना और थोड़ा भोजन किये काम में व्याकुल आनन्द सहित पतिके सङ्ग रति करानेको प्राप्त हो॥ परन्तु:—

अति वृद्धायां दीर्घरोगिण्या अन्ये वा विकारेणोपसृष्टायां, गर्भाधानं नैव कुर्व्वीत्। पुरुषस्याप्येवं विधस्य तएव, दोषाः सम्भवन्ति॥

अति बुढ़ापा (५० वर्ष से उपर्य्य) दीर्घरोगिणी अन्य विकार युक्त जैसे अकामा अङ्गहीना आदि स्त्रियों में गर्भाधान न करे इसी प्रकार पुरुष को भी जानना। जैसे बहुत भोजन किये, अधीर, अबल, क्षुधा, तृषा, व्यथा। और मलादि वेगयुत, बालक, बूढ़ा, रोगी और कामवेग रहित पुरुष से (यदि उत्तम सन्तान की इच्छा रखती हो तो) कभी गर्भाधान न करावे॥ और भी।

पंचविंशे ततोवर्षे पुमान्नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्य्यौ तौ जानीयात्कुशलोभिषक् ॥
सुश्रुते सूत्रस्थाने अ० ३५ ॥

शरीर की उन्नति वा अवनति की विधि जैसी वैद्यक शास्त्र में है वैसी अन्यत्र नहीं, किस समय और कैसा भोजन करके मैथुन करने से कैसा बालक उत्पन्न होगा और अतुल पराक्रम, तेजवान, विद्यावान आदि गुण युक्त पुत्र हमलोग कैसे उत्पन्न करसक्ते हैं ये सब वैद्यक शास्त्र में विधान हैं इस लिये विशेष कर गर्भाधानादि संस्कारों के करने में वैद्यकशास्त्र का आश्रय अवश्य लेना चाहिये। देखिये सुश्रुतकार परम वैद्य (कि जिनका प्रमाण सब विद्वान लोग मानते हैं) गर्भाधान का समय कमसे कम १६ वर्ष की कन्या २५ वर्ष का पुरुष अवश्य हो, जितनी सामर्थ्य पचीसवें वर्ष में पुरुष के शरीर में होती है उतनी सामर्थ्य १६ वर्ष में कन्या के शरीर में होजाती है इसलिये वैद्य लोग उस अवस्था में दोनों को समवीर्य्य वाले जानें। उक्त अवस्था से न्यून समय में कभी गर्भाधान न करे क्योंकि ॥

ऊन षोडश वर्षाया मप्राप्तः पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते ॥ २ ॥
जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्त बालायां गर्भाधानं न कारयेत् ॥
सुश्रुते शरीरस्थाने ॥ अ० १० ॥

१६ वर्ष से कम अवस्था की स्त्री में यदि २५ वर्ष से कम अवस्था वाला पुरुष गर्भाधान करता है तो वह गर्भ उदर में ही बिगड़ जाता है, अन्ततोगत्वा यदि उत्पन्न भी हुआ तो चिरजीवी न होगा, कदाचित् जीवे भी तो अत्यन्त शरीर का दुर्बल और रोगी हो इससे अत्यन्त बाला याने १६ वर्ष की अवस्था से कम अवस्था की स्त्री में कभी गर्भाधान न करना चाहिये ॥

बाल्यविवाह और न्यून अवस्था में गर्भाधान ही का यह फल है कि लाखों पुत्रहीन हैं और होते जाते हैं, बाबा जी के यन्त्रविभूति से धन का भी सर्वस्व नाश और दुराचार की वृद्धि भाग्य का नाम ले ले सिर पीट कर रोना इत्यि-

गोचर होरहे हैं यह क्या झूठी बात है एक २ स्त्रियों के दश २ लड़के हों और एक भी न जिये॥

प्रथम तो परस्पर अप्रीति होने के कारण गर्भधारण ही नहीं होता यदि हुआ भी तो गर्भ ही गिर जाता है या मरे लड़के पैदा होते हैं राम २ रटते पैदा भी हुये तो माता भवानी को दोषी कर औघड़ी फिर जहां के तहां ही चले जाते हैं। हे आर्य्य भाइयो! यदि आपलोग अपने कुल का दीपक उत्तम सन्तान सुन्दर सुशील बुद्धि बैल पराक्रम युक्त श्रीमान् पूर्ण चन्द्रकला के समान यशोभिमान चाहते हो तो (गौरीदद्याद्दिग्धुलोकं वैकुण्ठं रोहिणी ददी) इस लालच को त्याग और वपोकानन्दन पाधा पुरोहितों के खटपटांग कथा से बचिहे बस अवश्यमेव सोलहवें वर्ष की कन्या का २५ वर्ष के पुत्र के साथ विवाह करो इससे न्यून में कभी मत करो यही देश की उन्नति देश का सौभाग्य और देश का सुधार करनेवाला कर्म्म है॥

"गर्भाधान के पूर्व्व स्त्री पुरुष को आवश्यकीय कर्म्म"

पुरुष को उचित है कि एक मास पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्य से रहे और धातु पुष्ट औषधि तथा घी दुग्ध आदि बलकर पदार्थ का अधिक सेवन करे, विशेष कर जिस दिन गर्भाधान करनाहो "सर्पिः स्निग्धः सर्पिः क्षीराभ्यां शाल्योदनंभुक्ता" पुराने चावल के भात में गोघृत, गोदुग्ध और मिश्री मिला कर अथवा खीर भोजन करे॥

स्त्री को भी चाहिये कि उत्तम आहार भोजनकर एक मास ब्रह्मचारिणी रहे विशेष कर॥

"ऋतौ प्रथम दिवसात् प्रभृति ब्रह्मचारिणी।
दिवा स्वप्नाञ्जनाश्रुपात स्नानानुलेपना॥
भ्यङ्गनख च्छेदन प्रधावन हसन कथनाति।
शब्दश्रवणाव लेखनानि लायासान् परिहरेत्"

रजोदर्शन (मासिक धर्म्म) के प्रथम ही दिन से ब्रह्मचारिणी दिवा स्वप्न (दिनको सोना) आंखों में अञ्जन लगाना, रोना, स्नान, शरीर में तेल और उबटन का लगाना, नख कटाना, हसना, बहुत बकवाद करना, गम्भीर शब्द सुनना, नख से जमीन लिखना, तेज हवा और मेहनत त्याग करे क्योंकि॥

दिवास्वपन्त्याः स्वपशीलोऽञ्जनादन्धो रोदनादिकृतदृष्टिः।
स्नानानु लेपनाद्दुखः शीलस्तैला भ्यङ्गात् कुष्ठी॥
नखापकर्त्तनात् कुनखी प्रधावनाच्चंचलो हसनाच्छ्याव।
दन्तौष्ठतालजिह्वःप्रलापी चातिकथना दतिशब्द श्रवणा॥
द्बधिरोऽवलेखनात् खलतिर्मारुता यास सेवना दुन्मत्तो।
गर्भो भवतीत्येव मेतान् परिहरेत्॥ सुश्रुते शा०अ० २॥

दिन के सोने से अपशील (पापाणहृदय) अञ्जन लगाने से अन्धा, रोने से विकृत दृष्टि (ऐंचाताना) स्नान और उबटन लगाने से दुःख युक्त तैल लगाने से कोढ़ी, नख कतराने से कुनखी (एक प्रकार का कुष्ट है) दौड़ने से चञ्चल, हँसने से काला दांत ओठ तालु जिह्वा और आन तान बकने वाला, अति बोलने और शब्द श्रवण से बधिर, पृथ्वी लिखने से दुष्ट और अति वायु सेवन तथा परिश्रम करने से उन्मत्त गर्भ (लड़का पैदा) होता है इसलिये उक्त बातों को रजो युत स्त्रियां अवश्य त्याग करें॥

वैद्यक के अतिरिक्त पुराणों में भी रजो युक्त स्त्रियोंको छूनेतक का निषेध है और प्रथम दिवस में चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन रजकी (धोबिन) संज्ञा लिखा है, कारण यह स्पष्ट होताहै कि जिससे धर्म्मवती तीन दिन सबसे भिन्न एकान्त स्थल में वास करे "न रहे बांस न बाजे बांसरी" तब अवश्यमेव रजोयुक्ता उक्त बातों से बच सक्ती है। कैसा आनन्द होताहै जबकि हमलोग पूर्व ऋषियों के रचेहुये ग्रंथों के अभिप्राय को पूर्ण रूपसे जान जाते हैं आज कल के सिर्फ अंगरेजी बूके हुए नवजवानों को अभिप्राय तो सूझ पड़ता नहीं कोट पतलून की शान में झट कह देते हैं कि हमारे पूर्व्व ऋषिलोग तो बेवकूफ थे॥

दर्भ संस्तर शायिनीं करतल शरावपर्णा न्यतम
भोजनीं हविष्यं त्र्यहञ्च भर्त्तुः संरक्षेत्।
ततःशुद्धस्नातां चतुर्थे ऽहन्यहतवाससमलंकृतां॥
कृत मङ्गल स्वस्ति वाचनां भर्त्तारंदर्शयेत्॥

भावार्थः—कुशे की चटाई पर सोवे, हाथ में या पत्र में रखकर खीर भोजन करे और तीन दिन पति से बची रहे, चौथे दिन स्नानकर मलिन वस्त्र त्याग सुन्दर अम्बर तथा आभूषण धारण कर कल्याणकारक वेदमन्त्र पढ़ के पतिका दर्शन करे। पतिही का क्यों दर्शन करे इसमें क्या हेतु है।

पूर्वं पश्येदृतु स्नाता यादृशं नरं मङ्गना।
तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्त्तारं दर्शये दतः॥

ऋतुस्नाता अर्थात् मासिक धर्म्म से शुद्ध होके जिस रूप रङ्ग के पुरुष या स्त्री को देखेगी तादृश रूप पुत्र अथवा कन्या को उत्पन्न करेगी इस कारण भर्त्ता ही को देखना उचित है।

प्रथम हम दिखला चुके हैं कि ऋतुस्नाता नारी "भर्त्तारंदर्शयेत्" यहबात बहुत सत्य और परीक्षित है कि गर्भवती अपनी इच्छानुसार गौर वा श्याम सुन्दर रूप शीलयुत शोभायमान सन्तान उत्पत्ति कर सक्ती है, यह कोई कल्पना वा रूपक नहीं है किन्तु पूर्ण सत्य यथार्थ है कि उत्तम संतान करने का मुख्य हेतु यथोक्त वधू वर के आचार तथा आहार पर निर्भर है। भाग्य के भरोसे जो घोर अज्ञान निद्रा में पड़े हैं वे तो अवश्यही इसे मिथ्या कल्पित कहानियाँ जानेंगे। जो २ विद्यायें मनुष्यकी आत्मा और मनसे सम्बन्ध रखती हैं यद्यपि उसका अंकुर यही भारतवर्ष है परन्तु आज योरुप आमेरिका आदि अन्य द्वीपों के विद्वान और तत्त्वदर्शियों के शिर मौर होरहाहै वे भी इसी बातको मानते हैं कि सन्तानका स्वरूपवान् बलवान् बुद्धिवान और तेजवान् होना माता के आधीन है प्रायः देखा भी गयाहै कि माता पिता गौराङ्ग और स्वरूप वाले हैं परन्तु लड़के बदशक्ल और कालेकुरूप हैं। अत्यन्त बाल्यावस्था में गर्भाधान करने के कारण बालक गर्भही में बिगड़ जाते हैं वा उत्पन्न हुये और मरगये अथवा गर्भाधानही नहीं होता उस अवस्था में पुरुष अपने वीर्य्य (यह प्रकर्ण आगे लिखेंगे) और स्त्री रजको शुद्ध करे। स्त्री जब देखे कि रजस्वला होने के समय में १२। १३ दिन शेष रहें तो दोनों समय सिर्फ खीर भोजन करे और ऋतु समय में शास्त्रोक्त रीति (आगे कहेंगे) से गर्भाधारण किया करे तो अवश्य उत्तम सन्तान होवे, यदि इस प्रकार करने से भी दो तीन ऋतुकाल व्यर्थ जांय अर्थात् गर्भाधान क्रिया निष्फल होयाने गर्भस्थिति न हो तो निम्नलिखित घृत को बनाकर स्त्री पुरुष दोनों सेवन करें और मद्य

मांसादि तमोगुण भोजन तथा ऋतुकाल के अतिरिक्त मैथुनादि कुत्सितविहार त्याग करें, जिस प्रकार योगी अपने तन मन और धन को योगाभ्यास में लगा देते हैं, मुक्ति के अर्थी शरीर को भी विष्णुमें अर्पण करदेते हैं, विद्यार्थीगण द्रव्योपार्ज्जन तथा सभ्यमण्डली में प्रशंसा प्राप्त्यर्थं विद्याध्ययन में दत्त चित्त से कटिबद्ध होजाते हैं उसी प्रकार उत्तम सन्तान चाहने वाले भी सिद्ध बाबा आदि लुटेरों की आशा छोड़ घृत दुग्धादि चावल गेहूं आदि जिससे अंतःकरण की शुद्धि बल पुरुषार्थ आरोग्यता और बुद्धि प्राप्त होती है भोजन करें, ब्रह्मचर्य्य से रहें और यथोचित काल में अपनी स्त्री का समागम करें। जैसे अन्य २ पदार्थों को उत्कृष्ट करने की विद्या है वैसेही संतानको उत्पत्ति करने की यही वैद्यक विद्या है चाहिये कि इस पर लोग अधिक ध्यान देवें क्योंकि इसके न होने से भारत की उन्नति होना सर्व्वथा असम्भव है॥

घृत।

आमा हल्दी ४ तोला हल्दी, श्वेत चन्दन, मुरा, कूट, जटामासी, मोरवेल (यह नाम दक्षिण में प्रसिद्ध है) शुद्ध शिलाजीत कपूर मोथा यह सब दो २ तोला ले कूट कपरछान कर ढाई सेर गौ के दूध में मिलाय एक गूलरके काष्ठ पात्र में दही जमादेय और प्रातःकाल गूलर ही की मथानी से मथ करके उसमें से मक्खन निकाल उसको ताय करके उसमें केशर, जायफल, छोटी लायची दो २ माशा कस्तूरी ४ रत्ती मिला के नित्य प्रातःकाल दो २ तोले के अन्दाज से दोनों जने खीर अथवा मीठे भात के साथ मिला के यथारुचि भोजन करें, इत्यादि और भी कामदेव घृत फलघृतादि संतानोत्पादक घृत लिखे हैं किसी श्रेष्ठभिषकवर से सम्मत्यानुसार बनवाकर सेवन करें। स्वामी दयानन्द भी अपने संस्कारविधिमें उक्त घृत लिखाहै और यह कहा कि यदि उक्त घृत सेवन से भी दो काल व्यर्थ जांय तो तीसरे महीने में ऋतु समय जब आवे तब पुष्य नक्षत्र युत ऋतुकाल दिवस में जिस दिन गर्भाधान करना हो (पुष्य नक्षत्र रहे) प्रथम प्रातःकाल उपस्थित होवे प्रथम प्रसूता (बियाई) गौ का दही दो माशा और यव के दानों को सेंक के पीस दो माशा ले दोनों को एकत्र करके पत्नी के हाथ में देके उससे पति पूछे "किम्पिवसि" इस प्रकार तीन बार पूछे और स्त्री भी अपने पति को "पुंसवनम्" इस वाक्य को तीन बार बोल के उत्तर देवे और यव युक्त दही को पीजाय, इसी रीति से पुनः २

३ बार विधि करना तत्पश्चात् कुश्मांडकी वा श्वेत फलकी भंटकटाई(कण्टकारि) औषध को जल में महीन पीस के उसका रस कपड़े में छान के पति (पुरुष) पत्नी के दाहिने नाक के छिद्र में सिंचन करे और पति निम्न लिखित मन्त्र से जगन्नियंता परमात्मा की प्रार्थना करके यथोक्त (पूर्व्वोक्त लेखानुसार उत्तम आभूषणादि धारणकर प्रसन्नचित्त हो) ऋतुदान करे यह सूत्रकार का मत है॥

ओम् यमोषधी त्रायमाणा सहमाना सरस्वती।
अस्या अहंबृहत्याः पुत्रः पितुरिव नामजग्रभम्॥

सुश्रुतकारका भी मत है "लब्धगर्भायाश्चैतेष्वहःसुलक्षणा वटशुङ्गा सहदेवाविश्वदेवानामन्यतमंक्षीरेणाभिषुत्यत्रींश्चतुरो वाबिन्दून्दद्याद्दक्षिणे नासापुटेपुत्रकामायैनचतान्निष्ठीवेत्"

पूर्व्वोक्त प्रकार सुलक्षणा वटशुङ्ग (बरगद के वृक्ष का सुनगा) सहदेवा विश्वदेवा (बूटी है) और भी जितने समान गुणकर दुधार वृक्ष हैं हाथ से खुतुर कर उसका दूध तीन या चार बिंदु दक्षिण नासा में दे खींचजाय और थूके न "पुत्रकामायै" कहने का मुख्य प्रयोजन यह है कि उक्त वट दुग्धादि दक्षिण नासा पुट में देने से पुत्र और बामनासा पुट में देने से कन्या उत्पन्न होगी, वाग्भट्ट में भी लिखा है कि लक्ष्मणा बूटी वा बट जटा प्रथम ब्याई गौ के दुग्ध में घोंट स्त्री ऋतुकाल में तीन चार बूंद बामनासा से चढ़ाय जाय तो निश्चय कन्या उत्पन्न होगी और भी अनेक उपाय सन्तानोत्पादक भी हैं जिन्हें आगे कहैंगे।

स्त्री स्वाभाविक रीतिसे प्रति मास ऋतुकाल रजस्वला होतीहैं जिसदिन रजोदर्शन होताहै उस दिन से १६ दिनतक प्रसङ्ग करने की अवधि है उसी को समय और ऋतुकाल भी कहते हैं इसके बाद गर्भ नहीं रहता, इसकी जाननेवाले चतुर व्यभिचारी पुरुष तथा व्यभिचारिणी स्त्रियां जो गुप्त रूपसे एक प्रकार का सम्बन्ध रक्खे हैं वे अवश्य १६ दिन त्याग के प्रसंग करते हैं कारण यह कि गर्भाधान होने का भय नहीं रहता है।

प्रायः अज्ञान विधवायें जो अपने पातिव्रत धर्म्म तथा विद्याशास्त्रसे अनभिज्ञ हैं वे कामवाण से व्यथित हो शीघ्रही परपुरुषमें रत होजाती हैं फिर क्या स्वानमैथुन के समान क्षणमात्र को आनन्द अन्तिम दुःख की सीमा नहीं

(लोगों पर विदित है कि आज कल हजारों गर्भपात होते हैं असंख्य बच्चों के जन्मतुये बालक दरिया, तल्हाव और गढ़ोंमें फेंके जातेहैं) उन अवस्थाओं को यह बात अवश्य याद रखना चाहिये कि उक्त १६ रात्रियों के बाद दिन रात आनन्द में मग्न रहनेसे भी गर्भाधान नहीं रहता॥ उपरोक्त १६ रात्रियों में प्रथम की तीन रात्रियों में कदापि प्रसङ्ग न करना चाहिये क्योंकि उन तीन रात्रियों में स्त्री के शरीर में से एक प्रकार मलीन रुधिर निकलता है जो कोई इन रात्रियों में प्रसङ्ग करते हैं उनका बल बुद्धि तेज और आयु का नाश होजाता है तथा गर्भ स्थिति नहीं रहता क्योंकिः—

"नचप्रवर्त्त मानेरक्ते वीजं प्रविष्टगुणकरम्भवति यथानद्या प्रतिस्रोतः पुविद्रव्यं प्रक्षिप्तं प्रतिनिवर्त्तते नोर्ध्वंगच्छति तद्वदेवद्रष्टव्यं"

बहते हुये रक्त में प्रसङ्गद्वारा प्रविष्ट वीर्य्य गुणकर नहीं होता अर्थात् खून के साथ वीर्य्य भी बह जाता है जैसे बहते जल में कोई उतरानेवाली वस्तु के फेंकने से तत् स्थानमें ठहर नहीं सक्ती। रात्रिगणना इसलिये है कि दिन में ऋतुदान का निषेध है।

श्री स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में गर्भाधान के प्रकर्ण में और बिस्मनलाल मु० त० तिलहर शाहजहाँ पुर निवासी ने एक छोटी सी पुस्तक गर्भाधान विधि की बनाई है उसमें लिखा है कि रजोदर्शन से ४ रात्रि तक प्रसङ्ग निषिध है, खैर स्वामीजी ने तो मनु का प्रमाण दियाहै भला उक्त मुद्रिस जो प्रथम चार रात्रियों का निषेध किस स्वप्न में देखाहै यह भी क्या भूगोल का पढ़ाना है वैद्यक सम्बन्धी व्यवस्था जो विना ततविषयक शास्त्र अवलोकन के करता है उसे प्रज्ञाहनन का पाप होता है। वाग्भट्टादि सिद्धान्त आयुर्वेदीय ग्रन्थों में चतुर्थ दिवस का निषिध कहीं नहीं लिखा है वल्कि चौथे दिन गर्भाधान का विधान लिखाहै यथा सश्रुते।

तीन रात्रि त्याग कर चतुर्थ रात्रि में गर्भाधान करने से सम्पूर्ण अंग युक्त दीर्घायु सन्तान होती है, अन्यच्च।

इसलिये ऋतुवती तीन रात्रि पति का संग त्याग करैं, अन्यच्च।

"विकल्पेनच्चतुर्थ्यां पञ्चम्यामष्टम्यां दशम्यां द्वादश्याचोपे

याद्दिति पुत्रकामः"

पुत्र उत्पन्न करनेवाले चौथी, छठवीं, दशवीं और बारहवीं रात्रि में गर्भाधान करें॥

"अतःपरं पञ्चम्यां सप्तम्यां नवम्यामेकादश्याञ्च स्त्रीकामः, त्रयोदशी प्रभृतयोनिन्द्याः"

कन्या की इच्छा करनेवाले पांचवीं, सातवीं, नवीं, ग्यारहवीं रात्रि में प्रसङ्ग करै, तेरहवीं रात्रि से सोलहवीं अर्थात् अंत की चार रात्रि निषिध है।

पहिले कहचुके हैं कि स्त्रियों का मासिक तीन ही दिन रहता है चौथे दिन से गर्भाधान की रात्रि होती है और सम रात्रियों में पुत्र तथा विषम रात्रियों में गर्भाधान रहने से कन्या होतीहै किसी २ का मतहै कि गर्भाधान के समय में यदि स्त्री रजआधिक्य वाली हुई तो कन्या होगी शुक्र अधिक हुआ तो पुत्र होगा जो रज और शुक्र समान हुये तो नपुंसक लड़का पैदा होगा। गोरखपुर से एक महाशय लिखते हैं कि गर्भाधान में लिखा है कि ४ दिन धर्मवती स्त्री को त्याग करै और आप आरोग्य दर्पणमें चौथे दिन गर्भाधान की विधि देते हैं और आज कल प्रायः ऐसा देखने में भी आता है कि ४ ५ दिन अथवा किसी २ का तो आठ २ दश २ दिन तक रक्त बन्द नहीं होता तो उस अवस्था में किस तरह प्रसंग मनुष्य करसक्ता है क्योंकि गर्भ रह नहीं सक्ता तो प्रसंग करना व्यर्थ है। दूसरे ज्योतिष शास्त्रमें लिखा है कि अमुक २ शुभ दिन नक्षत्र आवे तब गर्भाधान करै यदि उत्तम मुहूर्त न मिले और गर्भाधान का समय प्राप्त है तो इसमें क्या करना योग्यहै।

कृपाकर इसका उत्तर अवश्य दीजिये?

(उत्तर)—प्रकृत्यावस्था और जिसका जैसा बल है उससे अधिक अथवा कम रक्त जाना और तीन दिन से अधिक दिन तक रक्तस्राव बना रहना रोग समझा जाताहै। रक्त दर्शनमात्र दिखलाई दे या पेट में अधिक दर्द होकर एक रक्त का गांठ गिर पड़े या सिर्फ एक ही दो दिन रक्तस्राव होकर बन्द होजाय अथवा मास से और दो चार दिन बढ़कर धर्म हो तो जानना चाहिये कि रज क्षीणता से रक्त सूख गया है उसका उपाय यह है कि अनार इत्यादि रक्तोत्पादक द्रव्य खिलाकर रक्त की वृद्धि करै और तीन दिनके ऊपर कई दिनतक रक्तस्राव होना तथा पांच चार दिन मास पूर्ति को रह जायं

तभी रक्तस्राव होजाना रक्त की ज़ियादा जानना चाहिये, जब तीन दिन से अधिक दिनतक रक्तस्राव होते देखे तो शीघ्र ही औषध द्वारा उसको बन्द करने की चेष्टा करे। जितनी औषधियां रक्तप्रदर की हैं वे सब उस अवस्था में काम देसकती हैं। ज्योतिष शास्त्र में सिर्फ़ गणितमात्रमाननीय है अ.युर्व्वेद वित् चिकित्सकगण आवश्यक कार्य्यमें मुहूर्त्तादि फलित अंगको नहीं मानते।

दत्तात्रयी आदि कई ग्रन्थों में बंध्या की चिकित्सा तथा निदान इस प्रकार से लिखे हैं कि एक समय पार्वती जी ने शिव जी से प्रश्न किया कि महाराज बाज स्त्रियों के गर्भ ही नहीं रहता सो क्या कारण है! शिव जी बोले कि स्त्री लोग छः दोषों से बंध्या होतीहैं उनमें भी कोई स्त्रियोंको तो जन्मावधि संतान नहीं होता अर्थात् जन्मबंध्या होतीहैं, किसीके होते हैं और मर जाते हैं उसे मृतबंध्या कहते हैं, किसीके सिर्फ़ एक संतान होकर बन्द होजाता है उसे काकबंध्या कहते हैं, उक्त बंध्यायें निम्नलिखित ६ दोषों से होतीहैं प्रथम फूल (गर्भाशय) के मध्य में वायु भरजाती है। २ फूल के ऊपर मांस बढ़जाता है। ३ फूल में कृमि होजाते हैं। ४ फूल वायुवेगसे शीतल होजाताहै। ५ पुष्प दग्ध होजाने से। ६ पुष्प उलट जाता है, कोचित् भूतदोष और ७वाँ अष्टम कर्मदोष मानते हैं। फूल में दोष प्राप्त होने का मुख्य कारण बालविवाह है। स्त्री पुरुष में परस्पर अप्रीति और असमय मैथुनहै। छोटी स्त्रीको जो बड़ा पुरुष मैथुन करताहै तो भी फूल जल जाताहै। लक्षण–मासिकधर्म के बाद जब पुरुष रति करचुके तो पूछे कि तुम्हारा कौन अङ्ग दुखता है जो स्त्री यो कहै कि शरीर कांपताहै तो जानना कि फूलमें वायुहै, कटिमें दर्दकहै तो मांसवृद्धि जानना, पिंडुरियों में दर्द बतलावे तो फूल में कृमि जानना। छाती में दर्द कहै तो शीतल माथ व्यथा में फूल दग्ध और जांघोंमें दर्दहोना कहै तो जानना कि फूल उलट गया है। यदि कहीं दर्द न हो तो जानना कि पूर्व्वजन्म का दोष है।

जब देखे कि स्त्री के गर्भाशय का फूल जल गयाहै तो समुद्रफल, सेंधा नोन और किञ्चिन्मात्र लहसुन तीनों को महीन पीस रुई के फाहा में करके भग में रख दे अगर जलन मालूम हो तो निकाल डाले इसी तरह तीन दिन करे चौथे दिन स्नान करके पति का सङ्ग करे निश्चय है कि गर्भाधान अवश्य होगा। फूल में हवा भर गया हो तो हींगको काले तिल के तेलमें पीस रुई

में तर कर भग में तीन दिन रखने से दोष नाश होताहै। यदि फूल में मांस बढ़गया हो तो काला जीरा, हाथी का नाखून और रेंडी का तेल तीनों को महीन पीस रुई में तर कर भग में रक्खे तीन दिन पर्य्यन्त चौथे दिन पुरुष का सङ्ग करे। ३ फूल में कीड़ा लगाहो तो हड़, बहेरा, कायफल तीनों को साबुन के पानी में महीन पीस रुई के फाहा में तर कर भग में रक्खे तो कृमिनष्ट हो गर्भ रहे। ४ फूल शीतल होगया हो तो बच, स्याह जीरा, असगन्ध तीनों को चौकिया सुहागा के पानी में पीस फाहा तर कर तीन दिन पर्य्यन्त भगमें रखने से आराम होताहै। ५ यदि गर्भाशय उलट गया हो तो कस्तूरी और केसर दोनों को पानी में पीस गोली बनाय भग में राखे। चतुर्थ दिन स्नान पति का सङ्ग करै आशा है कि आधान रहैगा॥ ६

एक महाशय हजारी बाग़ से पत्रद्वारा निम्नलिखित बातें पूछा है उसेभी इसी स्थल में पाठकगणों के अवलोकनार्थ प्रकाश करते हैं वह यह हैं ११ रात्रि से १६ अन्त की रात्रि क्यों निषिध है यदि इन रात्रियों में आधान हो-जाय तो उसका क्या फल होगा। दूसरा अगर आधान के प्रारम्भ ही से स्त्री दो मास पर्य्यन्त रोगार्त्त रहै तो उसकी चिकित्सा होनेसे बालक को कुछ क्षेम होताहै या नहीं (उत्तर) मासिकधर्म्म के स्नानान्तर स्त्रियोंके गर्भाशय (पुष्प) का मुख खुल जाताहै और प्रायः षोड़श रात्रि पर्य्यन्त खुला रहता है तत्पश्चात् रक्त का मेल उसमें पुनः सञ्चित होना आरम्भ होताहै इस कारणसे उस अवस्था में आधान नहीं रहता यदि किसी कारण वशात् रह भी गया तो निर्बल सन्तान होनेका तथा गर्भ गिरजानेका भी सम्भव है। एक बात परीक्षा से यह भी देखा गया है कि जिस स्त्री का मन पति से रुष्ट अथवा क्रोधित रहता है जब तक मन प्रसन्न न करेगी आधान न रहैगा और जिस स्त्री का मन परपुरुष पर लगा रहताहै उसे भी निज पतिसङ्ग से प्राय आधान नहीं रहता जब उस परम प्यारे का संग होगा शीघ्रही आधान रह जायगा। या पुरुष स्वयं गर्भाधान के दिनों को किसी कारण से त्याग कर अथवा विदेश से आया हो और ऋतुवती का दिन भी गत होगया हो तो भी गर्भाधान हो-सक्ता है। आधान रहने का दिन भी निश्चय तभी होगा जब सिर्फ़ मासमें एक ही वार प्रसङ्ग करेगा। गर्भिणी स्त्री यदि किसी रोग में ग्रसित हो और उसका यत्न न कियाजाय तो उसी रोग से गर्भ में बालक दुःख पाकर मरजाता

तभी रक्तस्राव होजाना रक्त की अधिकता जानना चाहिये, जब तीन दिन से अधिक दिनतक रक्तस्राव होते देखे तो शीघ्र ही औषध द्वारा उसको बन्द करने की चेष्टा करे। जितनी औषधियां रक्तप्रदर की हैं वे सब उस अवस्था में काम देसक्ती हैं। ज्योतिष शास्त्र में सिर्फ़ गणितमात्रमाननीय है अ.युर्व्वेद वित् चिकित्सिकगण आवश्यक कार्य्यमें मुहूर्त्तादि फलित अंगको नहीं मानते।

दत्तात्रयी आदि कई ग्रन्थों में वंध्या की चिकित्सा तथा निदान इस प्रकार से लिखे हैं कि एक समय पार्वती जी ने शिव जी से प्रश्न किया कि महाराज बाज स्त्रियों के गर्भ ही नहीं रहता सो क्या कारण है! शिव जी बोले कि स्त्री लोग छः दोषों से वंध्या होती हैं उनमें भी कोई स्त्रियोंको तो जन्मावधि संतान नहीं होता अर्थात् जन्मवंध्या होतीहैं, किसीके होते हैं और मर जाते हैं उसे मृतवंध्या कहते हैं, किसीके सिर्फ़ एक संतान होकर बन्द होजाता है उसे काकवंध्या कहते हैं, उक्त वंध्यायें निम्नलिखित ६ दोषों से होतीहैं प्रथम फूल (गर्भाशय) के मध्य में वायु भरजाती है। २ फूल के ऊपर मांस वृद्ध होजाता है। ३ फूल में कृमि होजाते हैं। ४ फूल वायुवेगसे शीतल होजाताहै। ५ पुष्प दग्ध होजाते हैं। ६ पुष्प उलट जाता है, केचित् भूतदोष और ७वाँ अष्टम कर्मदोष मानते हैं। फूल में दोष प्राप्त होने का मुख्य कारण बालविवाह है। स्त्री पुरुष में परस्पर अप्रीति और असमय मैथुनहै। छोटी स्त्रीको जो बड़ा पुरुष मैथुन करताहै तो भी फूल जल जाताहै। लक्षण—मासिकधर्म के बाद जब पुरुष रति करचुके तो पूछे कि तुम्हारा कौन अङ्ग दूखता है जो स्त्री ये कहे कि शरीर कांपताहै तो जानना कि फूलमें वायु है, कटिमें दर्दकहै तो मांसवृद्धि जानना, पिंडुरियों में दर्द बतलावे तो फूल में कृमि जानना। छाती में दर्द कहै तो शीतल माथ व्यथा में फूल दग्ध और जांघोंमें दर्दहोना कहै तो जानना कि फूल उलट गया है। यदि कहीं दर्द न हो तो जानना कि पूर्व्वजन्म का दोष है।

जब देखे कि स्त्री के गर्भाशय का फूल जल गयाहै तो समुद्रफल, सेंधा नोन और किञ्चिन्मात्र लहसुन तीनों को महीन पीस रुई के फाहा में करके भग में रख दे अगर जलन मालुम हो तो निकाल डाले इसी तरह तीन दिन करे चौथे दिन स्नान करके पति का सङ्ग करे निश्चय है कि गर्भाधान अवश्य होगा। फूल में हवा भर गया हो तो, हींगको काले तिल के तेलमें पीस रुई

में तर कर भग में तीन दिन रखने से दोष नाश होताहै। यदि फूल में मांस बढ़गया हो तो काला जीरा, हाथी का नाखून और रेंडी का तेल तीनों को महीन पीस रुई में तर कर भग में रक्खेतीन दिन पर्यन्त चौथे दिन पुरुष का सङ्ग करै। ३ फूल में कीड़ा लगाहो तो हड़, बहेरा, मायफल तीनों को साबुन के पानी में महीन पीस रुई के फाहा में तर कर भग में रक्खे तो कृमिनष्ट हो गर्भ रहे। ४ फूल शीतल होगया हो तो बच, स्याह जीरा, असगन्ध तीनों को चौकिया सुहागा के पानी में पीस फाहा तर कर तीन दिन पर्यन्त भगमें रखने से आराम होताहै। ५ यदि गर्भाशय उलट गया हो तो कस्तूरी और केशर दोनों को पानी में पीस गोली बनाय भग में राखि। चतुर्थ दिन स्नान पति का सङ्ग करै आशा है कि आधान रहैगा॥ ६

एक महाशय बक्सारी बाग़ से पत्रद्वारा निम्नलिखित बातें पूछा है उसेभी इसी स्थल में पाठकगणों के अवलोकनार्थ प्रकाश करते हैं वह यह हैं ११ रात्रि से १६ अन्त की रात्रि क्यों निषिध है यदि इन रात्रियों में आधान होजाय तो उसका क्या फल होगा। दूसरा अगर आधान के प्रारम्भ ही से स्त्री दो मास पर्यन्त रोगार्त्त रहै तो उसको चिकित्सा होनेसे बालक को कुछ क्लेश होताहै या नहीं (उत्तर) मासिकधर्मके स्नानान्तर स्त्रियोंके गर्भाशय (पुष्प) का मुख खुल जाताहै और प्रायः षोड़श रात्रि पर्यन्त खुला रहता है तत्पश्चात् रक्त का मैल उसमें पुनः सञ्चित होना आरम्भ होताहै इस कारणसे उस अवस्था में आधान नहीं रहता यदि किसी कारण वशात् रह भी गया तो निर्बल सन्तान होनेका तथा गर्भ गिरजानेका भी सम्भव है। एक बात परीक्षा से यह भी देखा गया है कि जिस स्त्री का मन पति से रुष्ट अथवा क्रोधित रहता है तब तक मन प्रसन्न न करेगी आधान न रहैगा और जिस स्त्री का मन परपुरुष पर लगा रहताहै उसे भी निज पतिसङ्ग से प्राय आधान नहीं रहता जब उस परम प्यारे का संग होगा शीघ्र ही आधान रह जायगा। वा पुरुष स्वयं गर्भाधान के दिनों को किसी कारण से त्याग कर अथवा विदेश से आया हो और ऋतुवती का दिन भी गत होगया हो तो भी गर्भाधान होसक्ता है। आधान रहने का दिन भी नियत तभी होगा जब सिर्फ़ मासमें एक ही वार प्रसङ्ग करेगा। गर्भिणी स्त्री यदि किसी रोग में ग्रसित हो और उसका यत्न न कियाजाय तो उसी रोग से गर्भ में बालक दुःख पाकर मरजाता

है अथवा तद्रोग ग्रसित उत्पन्न होगा इसलिये बीमार गर्भिणी स्त्री की चिकित्सा सत्वैद्य द्वारा अवश्य करावे। गर्भस्थित होने न होने के अनेकानेक कारण हैं फिर भी कभी प्रकाश करेंगे। आरोग्यदर्पण के प्रथम अङ्क से जो प्रातरुत्थानाद्यारभ्य शयनान्त पर्य्यन्त यावत्कर्म्म थे क्रमशः प्रकाश कर स्त्रीप्रसंग के प्रकर्ण में ऋतुदान की भी व्यवस्था अपनी स्वल्प बुद्ध्यानुसार साधारणतौर पर गाय गये, विज्ञवर पाठक गण को यदि किसी स्थल में कुछ भ्रमदायक अथवा अशुद्ध देख पड़े तो कृपाकर स्वयं शुद्ध करलेंय और हमें पत्रद्वारा सूचित करें ताकि प्रकाशित होनेवाले अङ्कों में छप जाया करे।

आगे हम भी कुछ स्त्री प्रसङ्ग के विषय में लिख चुके हैं फिर भी उसी विषय को उठाते हैं पाठक गण उसे फाल्गुण मास का फगुआ जान हंसें न उसके तात्पर्य्य को समझें कि सम्पादक क्या कहता है। आज कल देखा जाता है कि भारत के तीन भाग मनुष्य पर स्त्री गमनादि में रत हैं। इसमें शक नहीं है कि स्त्रीप्रसङ्ग में अति सुख है परन्तु क्षणमात्र के लिये पुनः अधिकांश आयु ऐसे दुःख से काटना पड़ता है कि जिसकी सीमा नहीं, मेरी यह राय नहींहै कि अपनी स्त्री से भी गमन न करे, मेरा तात्पर्य्य वेश्या आदि गमन पर है। क्योंकि आज कल ऐसे ही मनुष्योंकी संख्या अधिक तर है। उनमें भी कई भांति के लोगहैं जैसे किसी का चित्त किसी गृहस्थ स्त्री के प्रेम में फंसा है और उसीके पीछे लोकलज्जा त्याग पागल बना फिरता है इस कोटि में गुसाईं बैरागी और महंत आदि भी बहुत हैं और इन्हीं लोगों के कारण से बड़े २ आदमियों के घर के कामकाज करनेवाली चाकरनियां कुटनी बनगई हैं। यह कोई असत्य बात नहीं है जिनका चित्त गृहस्थिनों में अटकता है वे उसके मिलने के लिये अनेक तोड़फोड़ के उपाय रचते हैं। दूसरे वेश्यागामी इनमें केवल मूर्खही नहींहैं बल्कि अधिकांश ऐसे पढ़े लिखे मनुष्य इस दुष्कर्म में लीन देख पड़ते हैं कि जिनपर अनाथ भारत की उन्नति निर्भर है लेकिन जब वे ही सारहीन होते जाते हैं तो भारत की उन्नति होचुकी। तीसरे गुदामैथुन करनेवाले, इस कोटिमें मुसलमान और रामफटाका वाले अधिकहैं।

अपनी स्त्री से भोग करने से जो क्षति होती है उससे सतोगुण अधिक क्षति पर स्त्री गमन करने से होती है कारण यह है कि जब पर स्त्री गमन करने की इच्छा होतीहै तो उसके साथही काम इतना प्रबल हो उपस्थित

होताहै कि जिस क़दर स्वकीय स्त्रीगमन में वीर्य्य पात होताहै उससे कई अंश अधिक शुक्र पर स्त्री संग में निर्गत होजाता है। धातु निकल जाने का यह बहुत ठीक कारण है कि जैसी इच्छाकी प्रबलता होतीहै उसीके अनुसार वीर्य्य भी स्खलित होजाता है। (प्रश्न) पर स्त्री के साथ शीघ्रही कामोत्तेजित और अधिक वीर्य्यपात क्यों होता है? (उत्तर) अपनी स्त्री नित्यशः समीप रहने से वैसी प्रबल इच्छा नहीं होती जैसी पर स्त्री से होती है। इसका कारण यही जान पड़ताहै कि नित्यशः चित्त लगी रहने से और दूरसे कभी कभी चक्षुद्वारा दृष्टि संग करने से निरन्तर कामाग्नि सुलगा करती है वह अकस्मात् प्राप्त होजाने पर शीघ्रही अति कामोत्तेजित हो अधिकांश वीर्य्य निकल जाता है। (प्र०) किसी २ को पर स्त्री प्राप्त होने पर भी कामोत्तेज नहीं होता क्यों? (उ०) उसका कारण डर है और बहुतेरों को यह होता है कि स्पर्श करते ही कपड़े में शुक्र निर्गत होजाता है। इत्यादि कारणों से शरीर को बड़ा ही अपकार होता है इस लिये पूर्णावस्था में प्रसन्नतापूर्व्वक विवाह कर उसीसे आनन्द करना चाहिये। (प्र०) यह सब बातें स्वकीय स्त्री में क्यों नहीं होतीं? (उ०) उसका कारण यह है कि अनायास को मिली हुई वस्तु पर कोई अधिक चिन्ता नहीं करता क्योंकि वह तो मन के चलायमान होतेही मिल सक्ती है। दूसरे पर स्त्री के प्रेम में अनेक प्रकार के शोक चिन्ता भी उत्पन्न होती है क्योंकि जिसके पानेमें कष्टहै-अर्थात् जो वस्तु शीघ्र नहीं मिलसक्ती है उसके विषय में स्वभावता अधिक चिन्ता उपस्थित होतीहै यहां तक कि इसी फ़िक्र और गममें कितनों का अन्न जल छुटजाताहै कितने लोकलज्जा कुटुम्ब का मोह छोड़ देश देशान्तरों को भग जाते हैं अनेकानेक यातना भोग करते हैं इससे पर स्त्रीगमन में कुछभी सुख नहींहै। (प्र०) वाह आप क्या कहते हैं पर स्त्री में जो सुख है उस सुख का हाल वही जानसक्ता है जो एक बार भी अपनी रम्य सरोवर प्राणप्यारी के प्रेमरूपी भँवर में चक्कर खाया है "बन्दर क्या जाने अदरख का स्वाद" भला कन्दर्पविद्याहीन पुरुष इस सुख को जान सक्ते हैं कभी नहीं? (उ०) इस बातको हम भी मानते हैं कि सुख अवश्य मिलता है परन्तु यह सुख उन लोगों को भ्रमसे जान पड़ता है नहीं तो वास्तवमें दुःखके अतिरिक्त सुखका लेशमात्र भी नहीं है क्योंकि पर स्त्री गमन करने में पहिले तो यह भय लगा रहता है कि कोई देख न

हो अथवा कोई सुन न ले इत्यादि इन्हीं चिन्ताओं से शरीर दग्ध होजाता है तो फिर जहां ऐसी चिन्तायें वर्त्तमान हैं वह क्षणकालीन सुख क्योंकर सुख देसता है कभी नहीं क्या तुमने रावणादि पर स्त्रीगामियों का वृत्तान्त कभी नहीं सुना है तो क्षणकालीन सुख के लिये जन्मपर्यन्त दुःखका झेलना मूर्खों का काम है। इस लिये बुद्धिमान लोग पर स्त्री को "मातृवत्परदारेषु" माता कहा है। (प्र०) अच्छा वेश्यागमन में तो दोष नहीं है क्योंकि न तो वह किसी की स्त्री है और न उसमें किसी प्रकार का भय तथा चिन्ता होती है किन्तु रुपये का खर्च है? (उ०) वेश्यागमन में उससे भी अधिकांश वीर्य्य का नाश है क्योंकि शुक्राशयमें विषयसमय शुक्र सदा प्रस्तुत नहीं रहता, जिस समय मन में काम विषयकी चिन्ता उपस्थित होती है स्त्री को स्पर्श अथवा आलिङ्गन का उद्योग कियाजाता है उसी समय वीर्य्याशय में धातु का आना आरम्भ हो जाता है अर्थात् जिसके साथ जिसका मन जितना ही अधिक चलायमान होता है उतना ही शीघ्रता से शुक्र प्रस्तुत होकर निर्गत होता है तो पर स्त्री वा वेश्यागमन से मन में जैसी भारी चञ्चलता उपस्थित होती है वैसी हर समय की मिलनेवाली अपनी स्त्री प्रति उद्योग करने से भी वैसी चञ्चलता कदापि नहीं होती है तो बस यही जान लीजिये कि जिसके ऊपर मन अधिक दौड़ता है उसीके साथ अधिक परिमाण शुक्र भी निर्गत होता है और अधिक वीर्य्य के निकलने से शरीर और मन भी अधिकतर निर्बल एवं निस्तेज हो जाता है। दूसरे वेश्यागमन से उपदंश (गरमी) और मूत्राघात (सुजाक) बद (बाघी) भगन्दर आदि रोग उत्पन्न होते हैं जिसमें दुःख से अतिरिक्त लोकनिन्दा भी होती है। जैसे एक बड़े आदमी के पुत्र के गरमी निकली किसी वैद्य ने पारद संघटित औषध खिलादिया कि जिससे उसका मुंह आ गया उससे थूका न जाय तो उसने अपने बाप से कहा कि बाप थूका नहीं जाता है उसके पिता ने उत्तर दिया कि बेटा तुमको जहान थूकता है एक तुमसे न थूका गया तो क्या हुआ। तो देखिये वेश्यागमन से धन शरीर लोक-लज्जा सबका नाश होजाता है। वेश्यागमन के विषय में मृच्छकटिक नाटक में यह बहुत ठीक लिखा है॥

इह सर्व्वस्व फलिनः कुल पुत्र महाद्रुमाः।
निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्या विहग भक्षिताः॥

अयं हि सुरत ज्वालः कामाग्निः प्रणयेन्धनः।
नराणां यत्र हूयते यौवनानि धनानि च॥

अर्थात् कुलवालों के पुत्ररूपी बड़े वृक्ष जो सब प्रकार से फल फूल सक्ते हैं वह वेश्यारूपी पक्षियों करके भक्षण किये हुये निष्फल होजाते हैं यह कामरूपी अग्नि जिससे सुरत अर्थात् स्त्री सङ्गरूपी ज्वाला उठती है और वह प्रीतिरूपी लकड़ी से जलती है ऐसी अग्नि में मनुष्यों का रूप तथा धन स्वाहा होजाता है। किसी कवि ने कहा है।

सोरठा–यह तन हरियर खेत, तरुणी हरिणी चरि गई।
अजहूँ चेत अचेत, अधपेटचरा बचाय ले॥

फिर जो मनुष्य वेश्यामें लीन रहते हैं उनको कामाग्नि तथा धनाग्नि निरन्तर दग्ध करती है कारण यह है कि वह आज एक वेश्या पर आसक्त हैं और उसी की चिन्ता में लगे हैं फिर उसके मिलते देर न हुई कि उससे भी बढ़बढ़ कर खूबसूरती में एक दूसरी दृष्टि पड़ी, बस अब उसकी चिन्ता में लगे इसी प्रकार निरन्तर तृप्ति नहीं होती और यावत् यौवन इसी दुःख से काटते हैं इससे वेश्यागमन को विद्वानों ने निषिद्धही कियाहै। एक वेश्यागामी राजा की एक पण्डित हमेशा निन्दा करते थे कि तुम वेश्या के पाप से इस लोक में दुःख भोगकर नरक में जाओगे। एक दिन राजा ने अपनी वेश्या से कहा कि आज रातको तुम पण्डित के घरमें जाओ और पण्डितके साथ किसी तरह रमण करो तो पण्डित फिर हमारी कभी निन्दा न करे। राजा की आज्ञा पाय वेश्या अपना शृङ्गार कर बन ठनकर पण्डित जीके पास गई और कहने लगी कि महाराज आज कृपाकर मेरे साथ गमन करिये। पण्डित जी ने वेश्या से कहा कि अच्छा तुम अपने शरीर के वस्त्रको उतार कर अलगधर कर नग्न होजाव, वेश्या नग्न होगई, पण्डित जी उसे नीचे से ऊपर तक निहार कर कहा कि जो २ वस्तु हमारी पण्डिताइन के हैं वही तुम्हारे में भी हैं उससे अधिक क्या तुम में है जो हम तुम्हारे साथ रमण करें तो यह मूर्खों का काम है जो अपनी स्त्री को त्याग वेश्या गमन करते हैं। वेश्या ने राजा से जाके यह सब वृत्तान्त सुनाया, राजा को ऐसी लज्जा आई कि वेश्या गमन करना छोड़ दिया यह बात बहुत सत्य और परोचित है कि वेश्यागमन में

सिवाय वृथा वीर्य्य नष्ट करने के और कुछ भी गुण नहीं है क्योंकि पुरुष वेश्या को प्यार करते हैं और वेश्या रुपये को प्यार करती है तो परस्पर प्रीति न ठहरी तो जहां परस्पर प्रीति नहीं वहां सुख कहां। अनेक पुरुषोंके सङ्ग से वेश्या का कामानन्द नष्ट होजाता है सिर्फ मनके मोहने वाली ऊपरकी जो कुछ सफाई और बनावट है वही देख लीजिये जिन महाशयको इस बातका विश्वास नहीं किसी सत्य बोलने वाली वेश्या से कसम धरा के पूछो कि जैसे पुरुष को तुम्हारे साथ प्रसङ्ग करने से आनन्द होताहै वैसाही तुमको भी होता है या नहीं तो वेश्या कहेगी कि चढ़ती जवानी में शायद चन्द्रोदय कभी २ होजाता था अब तो सिर्फ रुपये का आनन्द होता है प्रथम तो वेश्यागमन में परस्पर आनन्द नहीं, दूसरे जब वेश्या को बुलाते हैं अथवा उसीके घर जाते हैं तो रुपये वसूल करने तथा निश्चयः अप्राप्ति जान चार पांच वार प्रसङ्ग करते हैं, तीसरे जब धातु में ज्यादा पहुँच जानेके हेतु स्तम्भनशक्ति जाती रहती है तो अफीम, चण्डू आदि नशा पीने लगते हैं जिसमें वीर्य्य और भ्र जल भुन खाक होजाता है, चौथे जब पास रुपया न रहा तो घरकी वस्तु तथा औरत का गहना तक लेकर देआते हैं, पांचवें गरमी सूजाक से पीड़ित हो वैद्य, डाक्टरों के पास दौड़ते हैं अन्त में आप भी नरक भोगते हैं और अपने कुटुम्ब को भी भोगाते हैं। शेष तीसरे खण्ड में ॥

अति लाभदायक शिक्षा ॥

केवल पुरुष विषयक मनुष्य को उचित है कि बाद प्रसङ्ग के अवश्य दुग्ध पिये, सबसे उत्तम तो यह है कि जिस रात्रि में स्त्रीप्रसङ्ग करना हो पूर्वही से मिश्रीयुत अधावट दूध रक्खा रहे और मैथुन के उपरान्त उठकर हाथ मुंह धोय दूध पी ले इससे मैथुन की हरारत जाती रहती है, वीर्य्य में किसी प्रकार का दोष नहीं उत्पन्न होताहै। यदि रात्रि में दुग्ध लाभ न हो तो उचित है कि प्रातस्समय शौच दन्तधावन के बाद आध सेर टाटका गौ के दुग्ध में मिश्री डाल पीजाय, मैथुन के सवेरे यह भी करना योग्य है कि उस दिन काले तिल का तेल शरीर में मर्द्दन करके स्नान करे और दुग्ध भात मिश्री या खीर या मीठा भात भोजन करे और दोपहर के दो तीन घण्टे तक शयन करे इस क्रिया से मनुष्य कभी वीर्य्यहीन निर्बल पुरुषत्व रहित न होगा।

मैथुन हमेशा रात्रि में एक बार करना उचित है सिर्फ वर्षाकाल में जब

कि आकाश अभ्रयुक्त हो और हिमऋतु में दिनमें भी मैथुन करसक्ता है परन्तु एक बार।

वेद की आज्ञा तो यही है कि मनुष्य मासान्तमें स्वकीय ऋतुवती स्त्री के साथ गमन करे, मनु का भी वचन है।

ऋतुकालाभिगामीस्यात् स्वादर निरतःसदा। ब्रह्मचर्य्यैव भवति यत्र तत्राश्रमे वसन्॥

इसीसे जो मनुष्य अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ ब्रह्मचारी के सदृश है। जो मनुष्य वृथा वीर्य्य नष्ट न करके निरन्तर उसकी स्थिरता रखता है वही पुरुष बलवान, तेजस्वी और सम्पूर्ण उत्तम कार्य्यों का करनेवाला होताहै, अन्यथा वीर्य्य नष्ट करने से आयु घट जाती है और अनेक प्रकार के रोग होते हैं, विशेष कर गृहस्थ को तो अवश्यही अपने वीर्य्य की स्थिति और भोजन छादन इस प्रकार रखना चाहिये कि वीर्य्य कभी स्वप्न में भी नष्ट न हो कारण यह है कि जितना ही वीर्य्य पुष्ट होगा उतना ही उनके लड़के अत्युत्तम रूप,लावण्ययुक्ति पुष्टि,बल और पराक्रमयुक्त होंगे।

सज्जनों को उचित है कि अपनी स्त्री से प्रेम, प्यार और प्रसन्न करें उससे ऐसा वर्त्ताव रक्खें कि वह सर्व्वदा प्रसन्न रहे। क्योंकि॥

सन्तुष्टो भार्य्यया भर्त्ता भर्त्राभार्य्या तथैवच।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्रवैध्रुवम्॥

जिस कुल में स्त्री से पुरुष और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती हैं उसी कुल में सर्व्वसौभाग्य और ऐश्वर्य्य निवास करते हैं। जहां कलह एवं दोनों में अप्रीति रहती है वहां ही दौर्भाग्य और दारिद्र वास करताहै इससे स्त्री का प्रसन्न रखना विद्वानों को श्रेयहै क्योंकि स्त्रियों को दुःख न हो,ऐसा मनु जीका भी वचन है।

शोचन्ति यामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्व्वदा॥

जिस घर में स्त्री शोकातुर होके दुःख पाती हैं वह घर वा कुल शीघ्र ही सत्यानाश होजाता है और जिसमें स्त्रियां आनन्द से प्रमोद और प्रसन्नता से भरीहुई रहती हैं वह घर और कुल सर्व्वदा बढ़ता है। हे आर्य्यकुलाभिमा-

नियो यदि पापलोग सच्चे मन से देश का कल्याण एवं उन्नति चाहते हो तो वेश्याओं के वाहरी जालमें फँसकर धर्मपत्नियों को शोकातुर मत करो उन्हीं के साथ भोग विलास करो उन्हींको अच्छे २ आभूषण और वस्त्र पहिनाओ फिर देखो तुम्हें कैसा आनन्द मिलता है, देख, करके भी क्या अन्धे बने हो यह सौभाग्य अंग्रेजों का हिस्से है ? हे ईश्वर दयानिधे हमारे आर्य भाइयों को भी वृद्धि दे ।

मनुष्य अति कामातुर होने पर जाड़े के दिनों में तीसरे दिन, गर्मी में पन्द्रहवें दिन और वर्षाकाल में जब मेघ की गर्जना हो मैथुन कर सक्ता है क्योंकि स्त्रीप्रसंग की इच्छा हो तो कामके वेग को न रोकना चाहिये क्योंकि काम के वेग को रोकने से प्रमेह और मूत्रकृच्छ्रादिक बीमारियां, अङ्गमें शिथिलता और पुरुषत्व की हानि होतीहै इससे कामातुर होनेपर प्रसङ्ग करना उचित है ।

कामातुर के लक्षण ॥

चित्त घबड़ाय, कहीं मन न लगे, बिना इच्छा ही लिये उपस्थेन्द्रिय बली एवं कठोर हो प्रसङ्ग योग्य स्त्री को देखतेही समस्त शरीर मग्न होजाय और मूर्च्छा की प्राप्तहो तब जानना चाहिये कि वह कामातुर है उस अवस्था में उचित है कि पूर्व्वोक्त नियमित दिनों में अवश्य मैथुन करे । कोई यह प्रश्न करे कि यदि उस अवस्था में स्त्री गर्भिणी या रोगार्त्ति हो तो ? दूसरी स्त्रीसे गमन करे, (प्रश्न) "मातृवत्परदारेषु" इत्यादि अनेक शास्त्रकारोंके वचन हैं कि पर स्त्री गमन न करना (उत्तर) दूसरी स्त्री से तात्पर्य्य है रोग रहित वेश्या अर्थात् कामातुर होने पर यदि स्वकीय स्त्री गर्भिणी या रोगग्रस्त हो तो नियोग या वेश्यागमन करलेना कोई दोष नहीं है कारण यह है कि यदि उस अवस्था में स्त्री लाभ न हो तो शारीरक दशा में हानि पहुँच सक्ती है (प्रश्न) ऐसा मत कहो वेश्या महा पापशीला होती हैं उनके स्पर्शमात्रमें मनुष्य पापी होजाता है, पुनः "आयुः क्षतिर्बलक्षता सुयशास्यता च निन्दार्थ हानि लघुता विगतिः परत्रेति" वेश्यागमन से आयुको नाश निष्फल वीर्य्य पतन, हँसी लोकनिन्दा, द्रव्यनाश और हलकई एवं पुर्व्वमें उत्तम गति नहीं होती (उ०) यह सामान्य वचन उनके लिये है जो अहर्निश उसीमें लिप्त रहते हैं, आपद् कालमें नियोग या वेश्यागमनमें पाप नहीं है क्योंकि ईश्वर की सृष्टि क्रमानु-

कुल स्त्री पुरुषका स्वाभाविक व्यवहार रुकही नहीं सक्ता सिवाय वैराग्यवान पूर्ण विद्वान योगियों के। नित्यप्रति स्त्री के साथ एक पलंग पर सोना भी निषेध है क्योंकि वीर्य्य मानिन्द घी के है जिस प्रकार घृतपिण्ड अग्निताप से द्रव होजाता है तिसी प्रकार मनुष्य का वीर्य्य भी स्त्री के समागम अर्थात् सिर्फ अङ्ग स्पर्श से ही द्रवीभूत हो च्युत होजाता है। स्त्री से अलग रहने वाले पुरुष चिरायु और बली होते हैं और वे एकाएकी बहुत शीघ्र बुढ़ापा नहीं होते, उत्तम है कि जिस दिन प्रसङ्ग करना हो एक पलंग पर शयन करे॥

स्त्री त्याज्य॥

निम्नलिखित स्त्रियोंके साथ मैथुन करना शास्त्रमतसे कदापि न चाहिये, जैसे रजस्वला, अकामा (जिस स्त्री का काम चैतन्य न हो) मलिना (मैली कुचैली) अप्रिया, वृद्धा, रोगयुक्ता, अङ्गहीना (लँगड़ी लूली, अन्धी आदि); गर्भिणी, योनिरोगयुक्ता अर्थात् जिसके गर्मी, सुजाक, या प्रदर की बीमारी हो, गुरुपत्नी, शत्रुपत्नी, कफोरिणी और जिसमें कुछ छिद्र हो, ऐसी स्त्री से रति नहीं करनी चाहिये क्योंकि रजस्वला के संग से दृष्टि आयु तेज और धर्मकी हानि होतीहै और रजस्वला के संगसे जो सुजाक की बीमारी होती है उससे भगन्दर रोग होताहै और आराम नहीं होता, वृद्धा के साथ आयु का नाश, गर्भिणी के सङ्ग से भ्रूणहत्या या गर्भपीड़ा, रोगिणी के सङ्ग बल का नाश, हीनाङ्गी, मलिना, वैरयुक्ता, अति दुबली, वन्ध्या और अकामा के संगसे धातुक्षीण रोग और मन मलीन होता है।

दिशा पेशाब लगा हो उसे रोक कर मैथुन करने से, प्रसंग में वीर्य्य के रोकने से और चित्त सो कर अर्थात् स्त्री को ऊपर बैठा कर प्रसंग करने से बहुधा पथरी की बीमारी होती है॥

ऊपर लिख चुके हैं कि स्त्री को ऊपर बिठाकर विपरीत रति करने से बहुधा पथरी की बीमारी होती है-यही नहीं परन्तु इससे और भी अनेक उपद्रव होते हैं यथा सुश्रुते शारीरक दो अध्याये॥

ऋतौ पुरुषवद्वापि प्रवर्त्तताङ्गनायदि।

तत्र कन्या यदि भवेत् सा भवेन्नर चेष्टिता॥

ऋतुवती नारी यदि पुरुषवत् अर्थात् पुरुष नीचे और स्त्री ऊपर बैठ कर

प्रसंग करे और यदि गर्भ रहजाय और जो कन्या उत्पन्न हो। तो उस कन्या की चेष्टा पुरुषकी सी होतीहै याने उसका बोलचाल पोशाक आदि सब पुरुष के से होंगे और यह भी सम्भव है (जैसा कि कभी २ सम्वाद पत्र द्वारा सुना जाताहै) मूछ डाढ़ी में बाल आदि हों ॥

योभार्य्यायां ऋतौ मोहा दङ्गनेव प्रवर्त्तते।
ततः स्त्री चेष्टिताकारो जायते पण्ड संज्ञितः ॥

जो पुरुष महामत्तता से स्त्री की नाईं नीचे होकर प्रसंग करते हैं उससे उत्पन्न पुत्र षण्ड अर्थात् जनाना होता है उस लड़के के सम्पूर्ण व्यवहार स्त्री का सा होताहै जैसा चटकना, मटकना, लहँगा पहिनना आदि दुर्गुण। यदि कोई यह कहे कि दोनों श्लोकों के अभिप्राय तो एक ही से हैं याने पुरुष ही नीचे रहा तो फल भिन्न क्यों हुआ ? तात्पर्य्य यह है कि स्त्री बिना प्रेरणा के मदसे मूर्च्छित हो पुरुषवान् चेष्टायुत हो गमन करे तो निश्चय है कि रज-आधिक्य से कन्या ही उत्पन्न होगी और उससे सब आचरण और कुछ आकार भी पुरुष के से होंगे। उसी प्रकार पुरुष को भी जानना ॥

अभ्यन्तर परीक्षा करनेसे निश्चय हुआहै कि हैजा आदि संक्रामक छुतहा रोगों से तत्काल मृत्यु तथा निरन्तर रोगी बने रहनेका मुख्य कारण वीर्य्यकी अशुद्धता है। यह तो सभी जानते हैं अर्थ धर्म्म काम और मोक्ष की प्राप्ति इसी देहसे होतीहै इसलिये देहको रोगसे रहित और सुखी रखनेका उपाय करना सर्व्वसाधारणको उचितहै वे उपाय क्याहैं कि विहिताचरण और पथ्य सेवन का परिज्ञान ? विहिताचरण कौन है ? आयुर्व्वेदके मत से विवाह स्त्री प्रसङ्ग आदि। आज कल के लोगों का ध्यान इन विषयों पर बिलकुल नहींहै और स्त्रीप्रसङ्ग में क्या हानि और लाभ है और किस प्रकार करना चाहिये इसे तो बहुत ही कम लोग जानते होंगे यह कहते हैं "कोक पढ़े बिन रति करै सो नर पशू समान" हम कहते हैं पशु तो अच्छे हैं सिर्फ रतिशास्त्र नहीं जानते गर्भोत्पादन की सामर्थ्य तो रखते है उनका सभोग प्रायः सफलहोता है और आज कल के मनुष्य रतिशास्त्र न जानने के कारण वीर्य्य क्षीण ऐसे होगये हैं कि जन्म भर नपुन्सक और अपुत्री कहलाते हैं अन्त में न यह लोक सधे न परलोक अन्ततोगत्वा किसी न किसी रोगमें ग्रस्तहो अकाल कालग्रस्त होजाते हैं। इसलिये बुद्धिमानों को उचित है कि वीर्य्य की रक्षा अवश्य करें।

चरक मुनि कहते हैं जिस प्रकार अन्नादिक बीज बहुत पुराना होने या कच्चा रहने से तथा जल से भीगने या कीड़ों के खाने या आगमें भुन जाने से बिगड़ जाताहै फिर वह जमता नहीं तैसेही मनुष्यों का वीर्य्य भी शास्त्र विरुद्ध व्यवहार चेष्टा और अनुविहित रति होने से सन्तान योग्य नहीं रहता यह अविचार राजा बाबुओंमें अधिकांश पायाजाताहै जो वनिता और पुंश्चली के चर्म्म घर्षण को मुख्य राजसुख समझते हैं जब वीर्य्य रहित होजाते हैं तो अन्त में बाबाजी की बिभूति ढूढ़ते हैं॥

शुक्रदोष॥

निम्नलिखित कारणों से शुक्र अवश्य दूषित होजाता है। अतिशय स्त्री प्रसङ्ग, अति कसरत, असात्म्य सेवन, अर्थात् प्रकृति विरुद्ध आहारादि, अकाल (रजस्वला) अयोनि (योनि भिन्न अन्यस्थान गुदा आदि तथा हस्तमैथुन) गमन, इच्छा प्राप्ति में मैथुन न करना, अति रूखा कटु, कसैला, लवण, अम्ल और गरम चीज़ के सेवन से, अति वृद्धावस्था होने से, चिन्ता, शोक, भय, क्रोध बहुकाल व्याधियुक्त रहने से मलमूत्र अवरोध एवं क्षयादि कारण से वायु कफ वीर्य्य वहनेवाली नसों में प्राप्त होके शीघ्र ही वीर्य्य को दूषित करते हैं सो दूषित शुक्र ८ प्रकार के हैं।

फ़ेनयुक्त १ पतला २ रूखा ३ बदरङ्ग ४ पूति (दुर्गन्धि युक्त) ५ बहुत चिकना ६ दूसरी धातुपरष्टि अर्थात् रक्त आदि धातु से मिलाहुआ यह ७ प्रकार आठवां अवसादि याने ग्लानिकारक है, तन्मध्ये फ़ेनिल पतला शुष्क और पिच्छिल वायु दूषित है इन धातुओं से गर्भ उत्पन्न नहीं होता है और पित्त दूषित शुक्र नीला दुर्गन्धि युक्त अति गरम होताहै और धातुच्युत समय लिङ्ग मार्ग में जलन होतीहै, ऐसा द्वारा रुद्धमार्ग शुक्र अतिशय चिकना होताहै। अधिक स्त्रीप्रसंग से चोट लगने से क्षय से वेग रोकने से अति कुपथ्य करने से बहुधा करके रक्तयुत या गठीला २ वीर्य्य लिंगमार्ग में रुक के कष्टसे निकलता है इसलिये चाहिये कि मनुष्य वीर्य्यरक्षा में निरन्तर तत्पर रहैं॥

गर्भिणीगमन निषेध॥

गर्भिणी सप्तमान्मासादुपरिष्टाद्विशेषतः।
निषिद्धात्वष्टमेमासे मैथुनं न समाचरेत्॥

गर्भिणी स्त्री के साथ सहवास करना तो सर्वथाही निषिध ऋषियों ने किया है परन्तु सातवें महीने से विशेष कर मैथुन करना निषिद्ध है । जैसे ऋतुस्नाता स्त्री से सम्भोग न करने से एक बालहत्या का पाप होताहै वैसेही पूर्ण गर्भावस्था में प्रसंग करने से एक बालहत्या का पाप होताहै ॥

वर्षाऋतु में उपटन और तेल मर्द्दन करना, शरीरमें माटी लगाकर कसरत करना, कूप का जल और दुग्ध पीना, घोड़े की सवारी करना बहुत फायदा करताहै । पूर्व की हवा खाना, पानी में बहुत भीगना, घाममें फिरना बहुत रूखा और शीतल भोजन, रोज २ मैथुन, दिन में सोना और नदी का जल पीना कदापि न चाहिये । जिनका प्रण हमेशा गंगा जल ही पीनेका है उन्हें भी उचित है कि श्रावण भादों दो महीना न पियें क्योंकि वर्षाकाल में वन, पर्वत, बाग इत्यादि स्थलों से सड़े साँप लता पत्ती और भी अनेक प्रकार का मैला बहकर नदियों में आता है इससे वर्षा में नदी का जल विष समान होकर अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, इसी लिये शास्त्रकारों ने लिखाहै कि समुद्रगामिनी नदियों को छोड़कर सब नदियां वर्षाऋतु में रजस्वला होती हैं स्नान उनका जलसेवन उसी प्रकार निषिद्ध और हानिकारक है जैसे ऋतुवती स्त्री का सेवन—वर्षा में आकाशपतित धारा जल अमृत समान गुण करता है क्योंकि वर्षाकालमें आकाश की वायु अत्यन्त शीतल होनेसे वहां जो निर्म्मल जलीय वाष्प सञ्चित है वह हिम होकर वृष्टि के आकार भूतल में गिरताहै अतएव वह जल अधोपतित होतेही पूर्व्ववत् निर्म्मल व्यवस्था (परिष्कार जल) को प्राप्त होता है यह जल भभके से खिचेहुये जल से भी उत्तम जल है इसलिये उक्त जल वर्षाकाल में पीना विशेषकर रोगियों को अति गुणकारी है ॥

"वृष्टि का जल लेनेका सहज उपाय"

एक अच्छे साफ बड़े कपड़े को ७ । ८ हाथ की ऊँचे बाँस चार कोनों पर गाड़ उसीके ऊपर कपड़े को बांध देय और बीचमें कपड़े के ऊपर एक साफ ईंट रख और उस कपड़े के नीचे ठीक बीचमें एक मिट्टी का कलशा तिपाईपर रखदेय वह शीघ्रही वृष्टिके जल से भर जायगा। परन्तु प्रथम २ । ३ पल जो वृष्टि पड़े उसे वायुस्थ धूल "मैला" वा नाना रोगकृत जान त्यागदे तिसके बाद निर्म्मल जल ग्रहण करें यह जल सिर्फ दो या तीन दिनतक काममें आसक्ताहै ।

किसी कार्य्य की हानि वा उद्योग निष्फल होने से कौन ऐसा मनुष्य है जिसके चित्त में उद्विग्नता न होती हो, मनुष्य पर कैसीहू आपत्ति क्यों न आन पड़े कभी धैर्य्यहीन न होना चाहिये, मनको सर्व्वदा आनन्द में रखने वाला मनुष्य आयुष्मान होताहै और उसके शरीर को शोकाग्नि कभी दग्ध नहीं करसक्ती है बुद्धिमानों का मन सर्व्वस्व नाश होने पर भी कभी शोक समुद्र में नहीं डूबता वे लोग परिणाम देखकर कार्य्य सिद्धि होने का उपाय करते हैं।

मनुष्य को यह भी उचित है कि जैसे दीमक धीरे २ वाल्मीक (बाँबी) को बनाती है वैसे ही उपकारी जीवों को पीड़ा न देकर पर जन्म के सहायार्थ धीरे २ धर्म्म का सञ्चय करे। क्योंकि:—

नामुत्रहि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः।
न पुत्र दारं न ज्ञाति धर्म्मं स्तिष्ठति केवलः॥

परलोक में न माता न पिता न पुत्र न स्त्री न जात भाई सहाय करसक्ते हैं किन्तु एक धर्म्मही सहायक होताहै। विचार करने का स्थलहै कि मनुष्य अनेक उपाय (मिथ्या भाषणादि महा पाप) करके पदार्थ लाता है और सब कुटुम्ब आनन्द से भोग लगाते हैं चैन करतेहैं, परन्तु दोषभागी नहीं होते किन्तु अधर्म्म का कर्त्ता ही दोष का भागी होता है, फिर देखिये मरने पर मृतक शरीर की बन्धुवर्ग ले समशान में जा ढेले के समान भूमि में छोड़ कर पीठ दे विमुख हो चले आतेहैं कोई उसके साथ जानेवाला नहीं होता किन्तु एक धर्म्म ही उसका संगी होता है, हाय वे कैसे नर हैं जो ऐसे सच्चे परम मित्रको त्याग करदेते हैं। क्या वह नहीं जानते हैं कि मनुष्य अकेलाही जन्म और मरण को प्राप्त होताहै और आप ही धर्म्मका फल सुख तथा अधर्म्म का फल दुःख भोगता है॥

महाभारत के उद्योग पर्व में लिखाहै कि मनुष्य कभी निकम्मा और आलसी न बने। सुख, लाभ, मान, बड़ाई आदि पा के कभी हर्ष में मग्न न हो और न दुःख, हानि, अपमान और निन्दा सुनके रञ्ज और क्रोध करे क्योंकि अति हर्ष और शोक से शीघ्रही शरीर में रोग होजाता है।

गृहस्थाश्रमियों को उचित है कि निम्न लिखित मनुष्य से सदा बचे रहैं कभी उसका आदर न करें जैसा कि मनुजी ने कहा है॥

गर्भिणी स्त्री के साथ सहवास करना तो सर्वथाही निषेध ऋषियों ने किया है परन्तु सातवें महीने से विशेष कर मैथुन करना निषेध है। जैसे ऋतुस्नाता स्त्री से सम्भोग न करने से एक बालहत्या का पाप होताहै वैसेही पूर्ण गर्भावस्था में प्रसंग करने से एक बालहत्या का पाप होताहै॥

वर्षाऋतु में उपटन और तेल मर्द्दन करना, शरीरमें माटी लगाकर कसरत करना, यूप का जल और दुग्ध पीना, घोड़े की सवारी करना बहुत फायदा करताहै। पूर्व की हवा खाना, पानी में बहुत भीगना, घाममें फिरना बहुत रूखा और शीतल भोजन, रोज २ मैथुन, दिन में सोना और नदी का जल पीना कदापि न चाहिये। जिनका प्रण हमेशा गंगा जल ही पीनेका है उन्हें भी उचित है कि श्रावण भादों दो महीना न पियें क्योंकि वर्षाकाल में वन, पर्वत, बाग इत्यादि स्थलों से सड़े मांस लता पत्ती और भी अनेक प्रकार का मैला बहकर नदियों में आता है इससे वर्षा में नदी का जल विष समान होकर अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, इसी लिये शास्त्रकारों ने लिखाहै कि समुद्रगामिनी नदियों को छोड़कर सब नदियां वर्षाऋतु में रजस्वला होती हैं स्नान उनका जलसेवन उसी प्रकार निषिद्ध और हानिकारक है जैसे ऋतुवती स्त्री का सेवन—वर्षा में आकाशपतित धारा जल अमृत समान गुण करता है क्योंकि वर्षाकालमें आकाश की वायु अत्यन्त शीतल होनेसे वहां जो निर्म्मल जलीय वाष्प सञ्चित है वह हिम होकर वृष्टि के आकार भूतल में गिरताहै अतएव वह जल अधोपतित होतेही पूर्व्ववत् निर्म्मल व्यवस्था (परिष्कार जल) को प्राप्त होता है यह जल भभके से खिंचेहुये जल से भी उत्तम जल है इसलिये उक्त जल वर्षाकाल में पीना विशेषकर रोगियों को अति गुणकारी है॥

"वृष्टि का जल लेनेका सहज उपाय"

एक अच्छे साफ बड़े कपड़े को ७।८ हाथ को ऊंचे बांस चार कोनों पर गाड़ उसीके ऊपर कपड़े को बांध देय और बीचमें कपड़े के ऊपर एक साफ ईंट रख और उस कपड़े के नीचे ठीक बीचमें एक मिट्टी का कठया तिपाईपर रखदेय वह शीघ्रही वृष्टिके जल से भर जायगा। परन्तु प्रथम २।३ पल जो वृष्टि पड़े उसे वायुस्थ धूल, "मैला" वा नाना रोगकृत जान त्यागदे तिसके बाद निर्म्मल जल ग्रहण करे यह जल सिर्फ दो या तीन दिनतक काममें आसक्ताहै।

किसी कार्य की हानि वा उद्योग निष्फल होने से कौन ऐसा मनुष्य है जिसके चित्त में उद्विग्नता न होती हो, मनुष्य पर कैसीहू आपत्ति क्यों न आन पड़े कभी धैर्यहीन न होना चाहिये, मनको सर्व्वदा आनन्द में रखने वाला मनुष्य आयुष्मान होताहै और उसके शरीर को शोकाग्नि कभी दग्ध नहीं करसक्ती है बुद्धिमानों का मन सर्व्वस्व नाश होने पर भी कभी शोक समुद्र में नहीं डूबता वे लोग परिणाम देखकर कार्य्य सिद्धि होने का उपाय करते हैं।

मनुष्य को यह भी उचित है कि जैसे दीमक धीरे २ वाल्मीक (बाँबी) को बनाती है वैसे ही उपकारी जीवों को पीड़ा न देकर पर जन्म के सहार्थ धीरे २ धर्म्म का सञ्चय करे। क्योंकिः—

नामुत्रहि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः।
न पुत्र दारं न ज्ञाति धर्म्मं स्तिष्ठति केवलः॥

परलोक में न माता न पिता न पुत्र न स्त्री न जात भाई सहाय कर सक्ते हैं किन्तु एक धर्म्मही सहायक होताहै। विचार करने का स्थलहै कि मनुष्य अनेक उपाय (मिथ्या भाषणादि महा पाप) करके पदार्थ लाता है और सब कुटुम्ब आनन्द से भोग लगाते हैं चैन करतेहैं, परन्तु दोषभागी नहीं होते किन्तु अधर्म्म का कर्त्ता ही दोष का भागी होता है, फिर देखिये मरने पर मृतक शरीर को बन्धुवर्ग ले श्मशान में जा ढेले के समान भूमि में छोड़ कर पीठ दे विमुख हो चले जातेहैं कोई उसके साथ जानेवाला नहीं होता किन्तु एक धर्म्म ही उसका संगी होता है, हाय वे कैसे नर हैं जो ऐसे बड़े परम मित्रको त्याग करदेते हैं! क्या वह नहीं जानते हैं कि मनुष्य अकेलाही जन्म और मरण को प्राप्त होताहै और आप ही धर्म्मका फल सुख तथा अधर्म्म का फल दुःख भोगता है॥

महाभारत के उद्योग पर्व में लिखाहै कि मनुष्य कभी निकम्मा और आलसी न बने। सुख, लाभ, मान, बड़ाई आदि पा के कभी हर्ष में मग्न न हो और न दुःख, हानि, अपमान और निन्दा सुनके रञ्ज और क्रोध करे क्योंकि अति हर्ष और शोक से शीघ्रही शरीर में रोग होजाता है।

गृहस्थाश्रमियों को उचित है कि निम्न लिखित मनुष्य से सदा बचे रहैं कभी उसका आदर न करें जैसा कि मनुजी ने कहा है॥

पापण्डिनो विकर्म्मस्थान् वैडाल वृत्ति कान् शठान् ।
हैतुकान वकवृत्तींश्च वाङ् मात्रेणापि नार्चयेत् ॥

(पाखण्डी) भीतर तो कपट की कतरनी, दिखानेको ऊपरसे भेष बनाये हो जैसे कि आज कल कितने ईसाई, सन्यासी बने लोगों को भ्रष्ट करते हैं और कथाई मिला सूत्र धारण कर ब्राह्मणों के भेष से सैकड़ों गौओं को ले जाते हैं, (विकर्म्मस्थ) जैसे विद्वान ब्राह्मण लोग आज कल लोभ में ईसाइयों को संस्कृत पढ़ाते हैं, अपने धर्मखण्डन की व्यवस्था देते हैं, (वैडालवृत्ति) जैसे बिलार छिप और स्थिर रहकर ताकता २ झपटसे मूषि को पकड़ मार अपना पेट भरता है वैसेही आज कल सोना चांदी बनाने वाले और लड़का वाला देनेवाले बाबा जी लोग रक़म लूट २ कर मज़ा उड़ाते हैं। (शठं) अर्थात् हठी दुराग्रही अभिमानी आप जाने नहीं औरों का कहा माने नहीं जैसे हमारे निरक्षर सरयूपारी ब्राह्मण (हैतुक) कुतर्की व्यर्थ बकनेवाले जैसे आज कल के स्वधर्म हीन सिर्फ अंगरेज़ी बूके द्विजातियों के छोकड़े और स्वार्थ-परायण कोई २ सम्पादक गण जिनसे चार पैसा मिले वोचाहे कर्मभ्रष्ट अंत्यज क्यों न हो उसकी तारीफ़ करने और कामी आदिक ब्राह्मणों को कहैं कि वे मूर्ख हैं (वकवृत्ति) बकुले की प्रकृति सभी जानते हैं वैसे आज कलके वैरागी और खाकी आदि चेला मूड़ छल छिद्र से लाखों रुपये ठग लेते हैं गाँव खरीदते हैं, मुक़द्दमा लड़ते हैं, गो भक्षकों को मालपुवा खिलाते हैं ऐसोंका सत्कार वाणीमात्र से न करना चाहिये।

मनुष्य को उचित है कि रोज़ सवेरे उठकर माता पिता को प्रणाम करे कोई अतिथि विद्वान संन्यासी को अथवा अपने कुल जाति के किसी वृद्ध को देखे तो अवश्य प्रणाम करे क्योंकि ॥

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारितस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलं ॥ (१) मनुः

...जो मनुष्य सदा नम्र सुशील विद्वान और वृद्धों (माता पिता आदि) की सेवा करता है उसकी आयु विद्या, कीर्त्ति और बल ये चार सदा बढ़तेहैं यह भी चाहिये कि वैर बुद्धि छोड़के सब मनुष्यों से मेल मुलाक़ात और सदा मधुर सुशीलता युक्त वाणी बोले परन्तु छली दुष्टों का साथ कभी न करे क्योंकि

जिस तरह काजल की कोठरी में जाने से दाग लगजाता है वैसाही दुष्टों के साथ में धर्मात्म पुरुष भी पापयुक्त होजाते हैं॥

नाग्निम्मुखेनोपधमेन्न ग्नान्नेचेतचस्त्रियम्।
नामेध्यंप्रक्षिपे दग्नौ नचपादौ प्रतापयेत्॥
अधस्तान्नोपदध्याच्च नचैन मपि लङ्घयेत्। मनुः अ० ४

अग्नि को मुख से न फूँकना (अग्निकण उड़कर नेत्र में जाने से तथा कपोलों का रक्त जपा होजाने से नेत्ररोग होजाता है) अग्नि में बिष्ठा आदि अपवित्र वस्तु न डालना (वायु विष दूषित होजाती है) पाँव न तपाना (अति जाड़े के दिनों में भी पादको अग्नि में न तपावे इससे पाद दाह रोग होताहै) नङ्गी स्त्री को न देखना (वैराग्यवान पुरुष भी कामी होजाता है) पलंग के नीचे अग्निको न रखना (प्रायः देखने में आयाहै कि खटिये में आग लग गई है) अग्नि को न लङ्घन करना और न पाँव से छूना (इससे निश्चय पैरों में अगिया बराहो होजाती हैं) नख से पृथ्वी लिखना सिर को हमेशा उच्च रखना, वस्त्र रहित पलङ्ग पर सोना सूर्योदय और सूर्यास्त में सोना, दूँस २ कर भोजन करना मलिन वस्त्र धारण किये रहना घृत दुग्ध रहित रुक्ष पदार्थ भोजन करना इत्यादि आरोग्य इच्छुक जन सदा त्याग करें। बहुत दिन जीने की इच्छा करनेवाला मनुष्य कपाट खोल कर न सोवे, बड़े गृह में भी अकेला न सोवे, रजस्वला स्त्री से भाषण न करे, रात को अकेला मार्ग में न चले, न बहुत कालतक पर्वत में वास करे, कांसके पात्रमें पैर न धोवे, फूटे पात्र में और जिस पात्र में मन की प्रसन्नता न हो उसमें भोजन न करे, अति भोजन न करे, दिशा पेशाब न रोके, बिना परीक्षा लिये एकाएकी किसी मनुष्यपर विश्वास न करलेय, विशेषकर रातको बिना जाने अन्न कभी न पिये भाँग बूटी और पान माता पिता मित्र टहलू आदि से अतिरिक्त पुरुषके हाथ से कभी न खावे, जिससे एक बार शत्रुता हुई हो उसे कभी अपना मित्र न जाने, केश भस्म हाड़ फूटा टूटा माटी के पात्र का टुकड़ा, बेनउर भूसा इन सबोंपर न खड़ा रहे, बानर, न्योरा, बिल्ली और भेड़िया आदि दुष्ट जीवों को न पाले, कोप से अपने सिर और केश को प्रहार न करे, उपवास भी न करे, भोजन के उपरान्त बार-बार, अर्द्ध रात्रि को और जो जलाशय जाना नहीं गया है उसमें स्नान न करे॥

उम्र बढ़ाना चाहे तो भोग कम करे, जिसके निकल जाने में इतना सुख है उसके रोकने में कितना सुख होगा यह बात विरले ही पुरुष जान सक्ते हैं। अगर चाहें कि बीमार न पड़ें तो पेट भर न खाय और छाती को हमेशा रक्षा करें। इज्जत के साथ रहना चाहे तो ऋण न ले और न किसीसे प्रश्न करे, यदि चाहे कि जो मुंह से कहें वही हो तो झूठ न बोले। दुनियां का मज़ा चाहे तो मेहनत करके विद्या पढ़े। अगर चाहे कि हमारे कोई शत्रु न हो तो क्रोध न करे। दुनियां में सबसे मित्र बनना चाहे तो मीठा वचन बोले परन्तु सत्य वचन हो। यदि चाहे कि हमेशा आरोग्य रहें कभी किसी रोगमें ग्रस्त न हों तो आरोग्यदर्पण में प्रातरुत्थानादारभ्य शयनान्त पर्य्यन्त जो कर्म मनुष्यों के लिये लिखे हैं उन्हें काम में लाओ। अपनी आंख और जिह्वा को निरन्तर अपने वश में रक्खो। अपना कपड़ा और अपना शरीर पवित्र रक्खो प्रति दिन रात्रि को सोने के लिये जब पर्य्यङ्क पर जाओ तो जो कुछ तुमसे दिन में किसी क़िस्म का अपकर्म हुआ हो तो ईश्वर से माफ़ी मांगो और शपथ करो कि पुनः ऐसा न करेंगे। यदि कोई सत्कर्म तुमसे हो तो भूल जाओ क्योंकि उसका स्मरण रखना अभिमान उत्पन्न करता है किसी को मज़ो में आकर अपने वित्त से बढ़कर काम मत करो नहीं पीछे पछताओगे। जो भेद कहने योग्य न हो उसको कभी अपने मित्र से भी न कहो। अगर किसी से किसीका भला होता हो तो भांजी मत मारो और पशु बनके न किसीसे मिलो क्योंकि इससे बढ़ कर दूसरा पाप नहीं है। जब किसी पुरुष से और कोई पुरुष बात करता हो तो तुम कभी उनके बीचमें न बोलो क्योंकि लोग तुम्हें मूर्ख समझेंगे मूर्ख-की यह बड़ी पहिचान है जो बिना पूछे बोल उठता है। जिस समय कोई पुरुष कुछ खा रहा हो तुम कभी उधर न देखो। जिस मार्ग में तुम्हारे पिता पितामह चले हों उसी मार्गमें तुम भी चलो परन्तु जो सत्पुरुष पिता पितामह रहे हों, अगर दुष्ट रहे तो कभी उनको राहपर मत चलो भूत पूर्व्व आर्य्यों के मार्ग पर चलो क्योंकि धर्म्मात्मा पुरुषों के मार्ग में चलने से दुःख कभी नहीं होता। विद्या पढ़ने का शौक रखते हो तो दुष्ट विषयी जनों का संग, मद्यादि नशे का सेवन और वेश्यागमनादि असत् व्यसन त्यागकरो यदि होसके तो यथाशक्ति अन्न वस्त्र और पुस्तकादिसे "विद्यार्थियोंका सत्कार करो इससे बढ़कर संसार में और पुण्य नहींहै". "विद्यादानात् परं दानं न

भूतो न भविष्यति" जल, अन्न, गौ, पृथ्वी और सुवर्ण आदि मर्त्यलोकमें जितने दान हैं इन सब दानोंमें विद्या का दान अति श्रेष्ठ है यह जो आज कल राजा महाराजा सेठ साहूकार आदि प्रति दिन बुद्धि बल पराक्रमहीन होते जाते हैं क्यों? विद्यादान न देकर कुपात्रों को दान देने से, कुपात्र कौन हैं? महन्त, वैरागी, अंग्रेज़ा और तीर्थों के पण्डे। किसी मित्र से जो वस्तु उसको आवश्यक भी हो जहांतक बने मत मांगो। और पुरुष वही मनुष्य कहा जाता है जो विपत्ति के समय सन्तोष करे, हाय २ न करता फिरे॥

अहिंसापरमोधर्म्मः॥

इसे ऐसा मत मानो कि यह मूसे, छछूंदर और गोजरों से भर जांय, खाट के खटमल और वस्त्र के चीलड़ों के मारने में भी दया लगी, व्याघ्रादि दुष्ट जीवोंके मारनेको हिन्सा नहीं कहते, उपकारी जीवों की रक्षा (गोरक्षा) में जहां तकहो धन लगाओ और परिश्रम करके गोरक्षिणी सभा स्थापित करो।

आज कल के नवयुवकों ने यह एक सरल उपाय सोच लिया है और अपने तईं ऐसा बांध लियाहै कि बिना उसके घड़ी भर भी उनका काम चलना कठिनहै देखिये जब उनको प्रसङ्ग में रुकावट (स्तम्भन) नहीं होती तो शीघ्र ही कोई ऐसी औषधि खा लेने का अभ्यास डाल लेते हैं जिससे उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण हो कितने लोग वीर्य्यस्तम्भन के लिये केवल भांग अथवा मद्य ही नहीं पीते किन्तु अफीम गांजा चण्डू भी सेवन करने लग जाते हैं और उन वस्तुओं का अपने तईं ऐसा व्यसन और नेह लगा लेते हैं कि जिनका छूटना जन्म पर्यन्त असम्भव होजाता है यही दशा विषैली वस्तुओं की है जैसे कुचला, बछनाग, संखिया, धतूरा आदि॥

विषैली वस्तुओं में कोई तो संखिया सेवन करते हैं, कोई कुचला, कोई बछनाग, कोई धतूरा आदि वस्तु सेवन कर अपने शरीर का राजा जो सम्पूर्ण पुरुषार्थ का देनेवाला है उसको क्षणिक सुख के लिये अनुचित रीति से क्षार क्षार कर डालते हैं।

कितने लोग बाबा जी के गण्डे अथवा तावीज पर ही अपना जीवन समझते हैं, कितने वैद्य जी की गोली पर ही अपना पुरुषार्थ मानते हैं, कितने मनुष्य तेल अथवा लेपन (तिला) यही आदि से स्वाभाविक चर्म के धर्म को बिगाड़ देते हैं परन्तु यह उनके सम्पूर्ण उद्योग और उनकी मनोवाञ्छा निः-

फल और निष्प्रयोजनीय है यद्यपि उनको उस समय औषधि अथवा नशीली वस्तु सेवन के बल पर कुछ यथेष्टता जान पड़ती होगी और वैसा होना भी स्वाभाविक है कारण यह कि नशे की वस्तुओं का स्वाभाविक गुण प्रत्येक नशे अथवा और दूसरी औषधि के बलसे उस समय थोड़े काल पर्य्यन्त कुछ वीर्य्य रुक जाय तो कोई बड़े आश्चर्य की बात नहीं है आश्चर्य्य तो क्या जब अपने बल से कोई काम प्रत्यक्ष न हुआ तो दूसरे के बल से अथवा आधार से कितने दिन तक काम चल सकाहै। स्मरण रहे कि उपरोक्त उपायों से सिवाय हानि के लाभ कुछ भी नहीं है, लाभ उन लोगों को कुछ है जिनका यौवन संपूर्ण नहीं तो आधा अवश्य बीत चुका हो उनके लिये स्वयं वैद्यक शास्त्र में युक्ति युक्ति लिखी है और उन मनुष्यों को लाभ भी उपरोक्त प्रकार से दृष्टिगोचर होसक्ता है जिसमें किसी प्रकार की हानि नहीं जाती, परन्तु आज कल के नवयुवकों को उपरोक्त उपायों से लाभ केवल क्षणिक है अनन्तर हानि ही हानि है।

प्रथम यह कि नशीली अथवा विषैली अथवा दूसरी वस्तु जो वीर्य्यस्तम्भन के लिये खाई जाती है उससे जबतक उसका गुण रहता है तब तक तो सुख मालूम होता ही है यह सब कोई जानते हैं परन्तु उसमें विचारना चाहिये कि जबतक नशा (तरङ्ग) मनुष्य में रहती है उसकी गर्मी से धातु स्थान का सम्पूर्ण वीर्य्य पिघल कर मूत्र की थैली में इकट्ठा होरहता है और ज्यों २ प्रसङ्ग करिये त्यों २ वह पिघलता तो रहै है परन्तु थैलीमें भी सब धातु पानी सी हो रहती है और जहां नशा का बल किञ्चित् भी घटा तहां इकट्ठी जमी हुई धातु शीघ्रही बाहर निकल पड़तीहै फिर क्या जब बार बार प्रसङ्गकरने पर जितनी धातु गिरती है उतनी यदि एक ही प्रसङ्ग में वीर्य्य निकल जाय तो फिर शरीर का बल, नेत्रों की ज्योति, भूख आदि कम न हों तो फिर क्या हो। और यह भी प्रत्यक्ष है कि उपरोक्त प्रकार जिस मनुष्य ने अपने तईं बाँध लिये हैं उनकी परीक्षा भी उपरोक्त वर्णन के अनुसार होगई है अतएव मनुष्यमात्र को विशेष कर नवयुवकों को उचित है कि वीर्य्य स्तम्भन के लिये ऐसा भ्रष्ट अभ्यास कभी डालने का साहस न करें उनको चाहिये कि प्रथम ही से वे अपने अमूल्य शरीर के राजा का रक्षण करने में आलस्य छोड़ दे जिससे पीछे पछताना और हाथ न मलना पड़े और यदि उनको किसी वि-

शेष कारण से अधिक पुष्टता की आवश्यकता हो तो शास्त्रोक्त बाजीकरण आदि रसायन क्रिया का सेवन वैद्यों के उपदेश और सम्मति से करना उचित है।

जो चाहो कि हम किसी के फन्दे में न फँसें तो प्रत्येक विषय की मीमांसा करने का अभ्यास उत्पन्न करो और प्रत्येक मनुष्य का छल पहिंचानो। आनन्द से अपना जीवन काटना चाहो तो बिना बिचारे कोई काम न करो "अग्रशोची सदा सुखी" प्रथम शोचकर काम करने वाला सदा सुखमें रहता है।

"शुष्कं वैरं विवादञ्च न कुर्य्यात् केनचित् सह"

बिना प्रयोजन के वैर और झूठा बकवाद किसीसे मत करो इसमें लोक-निन्दा और अपने को भी लज्जाप्रद है। जब तक जिसकी परीक्षा न कर लो कदापि उसका सङ्ग न करो जिस प्रकार स्वर्ण की चार परीक्षा हैं॥

"निघंर्षणं छेदन ताप ताड़नै"

घिसना छेदना ताव देना और पीटना तिस प्रकार मनुष्य की भी चार परीक्षा करले।

"कुलेन शीलेन गुणेन कर्म्मणा"

कुल शील गुण और कर्मसे यदि चेत उक्त चारों में पूर्ण परीक्षा होजाय तब उससे प्रीति मिलाप करना उत्तम होगा। सत्कर्म में जितना होसके परिश्रम करो जैसे गोरक्षा अनाथालय इत्यादि। अपनी प्रतिष्ठा चाहो तो जब सभा में तुम कोई बात कहो, सप्रमाण कहो।

युवावस्था के दिन बड़े भयानक हैं, इनको सत्कर्म करना परम पुरुषार्थ है और जो युवावस्था में सत्कर्म नहीं करेगा वह फिर वृद्धावस्था में क्या करेगा, यह मूर्खों का कथनहै कि हम वृद्धावस्थामें धर्म करेंगे। किसी मनुष्य से त्यौरी चढ़ा कर बात मत करो चाहे वह मित्र हो चाहे शत्रु जब तुम्हारी वैसी प्रकृत पड़जायगी तो हर एक से लड़ना पड़ेगा। मित्रों की सहायता और माता पिता की प्रतिष्ठा एवं धन पर ही भरोसा मत रक्खो वेदादि सत्‌-विद्या तथा आर्थ्य कालिक विद्याध्ययन कर अपने लिये भी उच्चता सम्पादन करो। विद्या से मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है और यश का प्रकाश होता है। एवं अनुभव उसका दृढ़ होजाता है जो लोग विद्या के अनुरागी हैं उन्हें चाहिये कि नित्य संध्या के समय यह शोचे कि आजके दिन कितनी नई बातें निश्चय

भई । इस माया से विद्या मत सीखो कि जिससे केवल द्रव्य वा सांसारिक सुख मिलेगा वरञ्च अपनेको मनुष्य और बुद्धिमान बनाने के लिये विद्या सीखो यदि संसार में अपनी कीर्त्ति चाहो तो सन्तानको विद्या और विनय सिखाओ धन्य है उनके माता पिता को जो अपने शरीर पर अनेक क्लेश सह कर भी सन्तानों को विद्या पढ़ाते हैं, वह कुल धन्य और वह सन्तान बड़ा भाग्यमानहै जिसके माता पिता विद्वान हैं क्योंकि जितना माताओं सन्तानों को उपदेश और विद्या का लाभ होता है उतना किसी से नहीं, बड़ों का वचन है कि माता जन्मसे लेकर सन्तानमें जबतक पूरी विद्या न हो सुशीलता का उपदेश करे। सुश्रुत का मत है कि माता पिता गर्भाधान के कुछ मास पूर्वही से और माता गर्भाधान के पश्चात् भी मादक द्रव्य, मद्य, दुर्गन्ध लहसुन मांसादि, रूक्ष बुद्धि नाशक पदार्थों को छोड़ के जो शान्ति, आरोग्य, बल, बुद्धि, पराक्रम और सुशीलता को प्राप्त करे जैसे घृत, दुग्ध, मिष्ठान्न आदि श्रेष्ठ पदार्थों का सेवनकरें कि जिससे रजवीर्य्य भी दोषों से रहित होकर अत्युत्तम गुणयुक्त हो। प्रत्यक्ष है कि जैसा जिसका रजवीर्य्य होताहै वैसीही सन्तान उत्पन्न होती है॥

धात्रीशिक्षा॥

प्रथम खण्ड के आगे से॥

पहिले बच्चे को दवा खिलाना अंगका परिचालन और बच्चे के शयनस्थान आदि का बयान करचुके हैं। अब जो निम्नलिखित बातें हैं उनपर स्त्रियोंको अवश्य ध्यान देना चाहिये॥

बच्चे की कोठरी में आग या दीपक इस ढबसे रखना चाहिये कि जन्मतुए की आंख उसकी ज्योति पर चमकने न पावे क्योंकि जन्मतुए बहुधा चमकीली चीजों को टकटक लगाके देखने लगते हैं इससे आंख सम्बन्धी रोग होने का डर रहता है और गर्म ऋतु में अर्थात् चैत्र, बैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ इन चार महीनों में बच्चे की कोठरी में आग कभी न रक्खे क्योंकि कोठरी अति गर्म होने से बच्चे की देहमें लाल २ दाग पड़जाते हैं॥

बच्चे को प्यार करना चुम्मा लेना हो तो ठीक बच्चे के मुखके सामने अपना मुख रखना चाहिये प्रायः गँवारदल स्त्रियां या पुरुष पीछे या बगल मेंसे झट बच्चे का मुख थाम अपनी तरफ कर चूमने लगती हैं इससे हंसिये में दर्द और ऐंचाताना हो जा सक्ता है॥

जबतक बालक वर्ष डेढ़ वय का न होजाय कभी अकेले सुलाना न चाहिये क्योंकि निरे बचपन की वय में विशेष कर जाड़े के दिनों में दूसरे की देह का दन्द (ताप) न पाने से सुखपूर्व्वक नींद बच्चे को नहीं आती, जो स्त्री बहुत बेहोश सोती हो अर्थात् सो जाने पर यह न मालूम हो कि मैं कहां पड़ी हूँ और न जगाने से जल्द जागी उसे चाहिये कि एक हाथ की लम्बी और कलाई की बराबर मोटी तकिया सोती समय बीच में रख ले ताकि बच्चे का हाथ पैर न दबजाय। प्रायः देखने में आयाहै कि बाज़ २ स्त्रियोंके अलमस्त और अचेत सोने से बच्चे बिचारे नीचे दबकर मरगये हैं॥

ऐसी २ दुर्घटनाओं का कारण मूल में इस देशके अदृष्ट का दोष है क्योंकि इतनी छोटी अवस्था में सन्तान होने लगते हैं कि माता खुद अपने ही शरीर की संरक्षण में अज्ञान रहती हैं तो फिर वह बालक का खयाल और देख भाल क्या करसक्ती हैं॥

बच्चे का मुख सोती समय कपड़े आदि से भूलकर भी ढका रहने न देना क्योंकि उस अवस्था में शुद्ध वायु श्वास के द्वारा फिफड़े के भीतर जाना बहुत उचित है अगर मच्छड़, दंश आदि कीटों के काटने का डर हो तो बच्चे को मसहरी के भीतर लिटावे या मुखपर जालदार कपड़ा डाल दे। निद्रा लगती समय चेत करके बच्चों के बदन का कपड़ा मुख्य करके गर्दन पर का तो अवश्य ढीला कर देना उचित है॥

जो बालक आरोग्य होताहै वह दूध पीने के अतिरिक्त समय में भी सोया ही करता है। इसमें कुछ शक नहीं कि अधिक सोने से बालकों के शरीर में बलाधान और स्वस्थता प्राप्त होतीहै और अच्छे हृष्टपुष्ट बलवान लड़के को भी कुछ काल अच्छी तरह नींद न लगनेसे दुर्बल और रोगी होजाते हैं इसी लिये अच्छा उपाय न करके यहां की चाण्डाल स्त्रियां नींद आने के लिये बच्चों को अफीम खिलाने लगती हैं जिससे कि बच्चा और भी दुर्बल होरौं २ करने लगता है और अन्त में उस मूर्खा माता के मुख में कालिख लगा यमालय को चला जाता है, इस बात का अनुभव किसको न हुआ होगा? अच्छे पढ़े लिखे लोग तो अवश्य ही कहेंगे कि इस बच्चे की मृत्यु अफीम ही से हुई है। यद्यपि बालकों को अधिक कालतक सोया रहना बहुत ही उत्तम है परन्तु किसी कारण वश अगर बच्चे को जल्द नींद न आती हो तो नींद लग

लाने के मतलब से कुछ औषधि आदि देना अनुचित है कारण यह है कि अजीर्ण या पेट में पीड़ा से बच्चों को सुखनिद्रा नहीं लगती अतएव नींद लगती न देख के पेट साफ़ कर देना अत्यावश्यक है ।

निम्नलिखित बातें बच्चेवाली स्त्रियों को अवश्य याद रखना चाहिये । जैसे सन्तान के शयन का खटोला बहुत छोटा न होके फरहरा होना चाहिये । धात्री बच्चे का मुख अपने पेट में दबा के न सुलाये क्योंकि श्वास रुक जाने का डर है, ऐसा हुआ भी है । बालक पेटकैयां (मुंहके बल) न सोने पावे बच्चे को चित्त या करवँट सुलाना उत्तम है ।

माता अपने सोने के पूर्व्व अवश्य याद करके देख लिया करें कि बच्चे का मुंह कपड़े से फँसा तो नहीं है । बच्चे के सिर के नीचे एक अच्छी भी अति मुलायम तकिया ज़रूर होनी चाहिये परन्तु ऐसी बड़ी बेडौली न हो कि कहीं दबाव आदि के कारण उलट कर बच्चे के मुंह पर आ पड़े जिससे श्वास रुकने का डर है, आरम्भ से तीन चार महीने तक बराबर रोज़मर्रा माता को उचित है कि बालक के मल मूत्र को देख के जान लिया करें कि वह मल मूत्र जैसा होना चाहिये वैसा ही है या कुछ अन्तर है यदि कुछ अन्तर अर्थात् मूत्र कम करता या मूत्र करते कांखता या मूत्र में अति गर्माहट होवे मल अधिक और पतला फटा २ वा दुर्गन्धियुत वा एक दो रोज़ होता ही न होवे तो तुरन्त उसका उपाय करें ॥

वालकों की खांसी की दवा ।

अतीस, नागरमोथा और मुलेठी इन तीनों को बराबर ले कूट कर खूब महीन चूर्ण करले मात्रा आधी रत्तीसे १ रत्ती पर्य्यन्त है, बालकों की अवस्था माफ़िक मात्रा बना शहद के साथ दिन में ४ बार चटाने से लाभ होताहै यदि बालक न चाट सके तो पहिले शहद में मिला बाद माता के दुग्ध में घोल कर पिला दे, डाक्टर लोग प्रायः इपीकाकुआना शहद के साथ चटाने को देते हैं और खिरिया कर डोभर्स पौडर भी कभी २ दे देते हैं लेकिन बालकों के हक़में यह दोनों औषधियां हानिकारक हैं इपीकाकुआना और हमारे देशी मदार की जड़ की छाल का चूर्ण, गुण में दोनों बराबर हैं और डोभर्स पौडर में अफ़ीम और इपीकाकुआना आदि वस्तुयें मिली हैं, पर आज कल के लोग डाक्टरों को धन्वन्तरि का अवतार मान लियाहै ॥

शीतला।

बहुत से रोग है जिनका यत्न यथार्थ न होने से वह रोग बढ़ कर प्राण हरण करता है परन्तु हैजा और शीतला की बीमारी यह तो यत्नरहित रोगी को शीघ्रही यमालय पहुँचा देती है।

इस रोग का भी आदि कारण विष दूषित वायु है, देखा जाताहै कि ऋतु के परिवर्तन में जिस तरह फसली ज्वर या हैजा एक के होते ही नगर भर में फैल जाता है उसी प्रकार शीतला का भी स्वभाव है जहाँ एक को निकलीं तो उसके हेलमेल से और को भी अवश्य ही निकल आती हैं वैद्यक में शीतला को मसूरिका और विस्फोटक रोग भी कहते हैं और बङ्गालमें इसे बसन्त कहते हैं, यह रोग प्रायः लड़कों के अधिक होता है अच्छी तदवीर और औषधि न करने से हजारों लड़के बिचारे बिना मौत के मर जाते हैं। देखा गयाहै पर अफसोस यहाँ के अज्ञान हिन्दू लोग सिर्फ देवी देवता के भरोसे इस कठिन माता में भी दवा नहीं करते, कहते हैं देवी नाराज होजांयगी बस इसी अज्ञानता से असंख्य लड़के अकाल काल ग्रास होते जाते हैं, बहुधा नेत्रहीन या काने होजाते हैं और बहुतोंके हाथ पैर लुञ्ज या टेढ़े होजातेहैं।

आज कल सरकार की तरफ से टीका लगाया जाता है और एतद्देशीय लोग अपनी बुद्धि विहीनता के कारण इससे डरते हैं परन्तु यह कोई नई बात नहींहै प्राचीन लोगों की ज़बानी सुना जाताहै कि इस देशमें भी पहिले (जब सरकार की तरफसे टीका लगाना नहीं जारी हुआ था) माली वग़ैरः टीका लगाते थे और उससे बड़ा लाभ होता था।

साधारण लक्षण।

विष दूषित वायु स्वस्थ शरीर में प्रवेश करने से प्रथम तीन चार दिन बालक को ज्वर आता है मुख सूखे रहता है प्यास लगती है बाद शरीर में एक प्रकार छुद्र २ फुन्सियाँ निकल आती हैं और छः सात रोज में मवाद भर आता है और फुन्सियां बड़ी होजातीहैं किसी २ को भयानक ज्वर भी बना रहता है रोग साध्य रहने से रोगी पन्द्रह सोलह दिन में आरोग्य हो जाता है यह रोग एक जन को दो बार नहीं होता और किसी २ को दोबार हुआ भी है।

१—साधारण शीतला की बिमारी में औषध न देय यदि कोई उपद्रव जैसे कि अधिक ज्वर, बहुत रोना, बदन नोचना नींद का न आना बारम्बार

चौंक उठना या अनर्थक बकना इत्यादि हो तो अवश्य औषध करना चाहिये।

२—रोगी को खूब ठण्ढे मकान में रक्खे और दरवाजों में खस या जवासे की टट्टी लगा दे और कुछ नीम की टेरियां बांध दे क्योंकि इस रोग में शीतल उपचार एवं निम्बपत्र का बन्धनवार बांधना अति हितकर है, लिखा भी हैः—

शीतलासु क्रियाकार्य्या शीतलारत्तयासह ।
बध्नीयान्निम्ब पत्राणि परितेभवनान्तरे ॥

शीतला रोग में रक्षा के अर्थ सब शीतल ही उपाय करना और घर के भीतर चौतरफा नींव के पत्ते बांधना उत्तम है दरवाजे में एक हौद पानी से भर कर रख दे और दरवाजा पानी से हर समय तर रक्खे।

३—रोगी का बिछौना सफेद और बहुत मुलायम हो एवं मैला होने पर शीघ्र ही बदल देना चाहिये॥

४—जिस घर में रोगी हो वहां अग्नि और तेज रोशनी न रहनी चाहिये यही कारण है जो शीतला देवी की पूजामें हवन नहीं करते परन्तुः—

कृमिपात भयाच्चापि धूपयेत्सरलादिभिः ।

विष दूषित वायु के निराकरणार्थ एवं बहतीहुई माता में कृमि न पड़ें इस वास्ते राल लोबान वगैरह का धूप कभी २ रोगी के और समस्त घर में देते रहना अति उत्तम है।

५—कोई मनुष्य रखें वस्त्र धारण कर, पान खाकर, माथे में लाल टीका दे के या लालवस्तु ले के रोगी के घर में न जाय, कारण यह कि ऐसे रोगी की आंख में सुर्ख वस्तु की चमक न पड़नी चाहिये।

६—यदि रोगी बालक, माताका दुग्ध पीता हो तो उस माताको सिर्फ मूँग की दाल अथवा गेहूं की रोटी, पुराने चावल का भात और गो का दुग्ध खिलाना चाहिये श्वेत या हरा वस्त्र पहिरे बहुत श्रम, क्रोध और उपवास न करे शरीर में तेल न लगावे कारण यह कि कदाचित् बच्चे की देह में तेल लग जाय क्योंकिः—

कुर्य्याद्व्रण विधानञ्च तैलादीन् वर्ज्जयेच्चिरम् ।

इस रोगमें छेला फोड़े का विधान है वैसा ही उपचार करना परंतु तेलादिकों का बहुत दिन बचाव रखना चाहिये।

७—जब तक शीतला की बीमारी न आराम हो घर में पूरी कचौरी बरा मसाले दार कलिया आदि व्यंजन न बने न मद्य का प्रचार हो क्योंकि भूजने तलने की शब्द एवं गर्म महक से रक्त कोप को प्रोत्स होता है।

अथ विस्फोटक।

(बड़ी मात का कारण)—यह रोग, अति खट्टा तीच्छा (मिर्चा) गर्म दाह-कारक, (चिरका) चार (राई) द्रव्य के खाने से अजीर्ण से धूप में रहने से, ऋतु के विपरीत होने से (जाड़े में गर्मी और गर्मी में जाड़ा) वातादि दोष कुपित हो चर्म में घुस घुस रक्त को दूषित करके भयानक विस्फोटक रोग को उत्पन्न करते हैं, यदि उक्त कुपथ्य धात्र ने किया तो माता को न हो के दुग्ध पीने वाले बच्चे को वही रोग होता है परन्तु प्रायः देखने में आया है कि बच्चे को मसूरिका अर्थात् छोटी माता अधिक निकलती हैं।

बड़ी माता का स्वरूप॥

अग्निदग्धानिभास्फोटाः सज्वरारक्त पित्तजाः।
क्वचित्सर्वत्र वा देहे विस्फोटा इति ते स्मृताः॥

जैसे कि आग से जले के फफोले होते हैं वैसे ही फफोले देह में एक जगह अथवा समस्त देह में रक्त और पित्त के बिगाड़ से ज्वर सहित पड़ जाते हैं उन्हीं को बड़ी माता कहते हैं। वाताधिक्य में शिर दर्द फफोलों में दर्द और कुछ कालापन ज्वर प्यास और जोड़ों में दर्द होता है॥

पित्ताधिक्य में ज्वर, दाह, अङ्ग दर्द पिपासा फफोलों का जल्द पकना बहना और रङ्ग में पीला एवं लाल होता है। कफाधिक्य में से, अरुचि फफोलों में खाज और रङ्ग में पाण्डु, वेदना रहित और बहुत दिनों में पकता है द्वन्द्व में २ दोष के लक्षण मिलते हैं॥

त्रिदोष लक्षण॥

जो विस्फोटक त्रिदोषज होता है सो बीच में गहिरा, किनारे ऊंचे कठिन अधपका दाहयुत ललामी लिये, तृषा, बेचैनी, वांति मूर्च्छा, पीड़ा, ज्वर,

प्रलाप कम्पन और भ्रमकी इन लक्षण युक्त उक्त रोग बहुत कठिन होता है अच्छा यत्न न होने से रोगी मर जाता है। रक्ताधिक्य और पित्ताधिक्य दोनों का लक्षण एक है ॥

उपद्रव ॥

हिक्काश्वासोऽरुचिस्तृष्णा अङ्गमर्दो हृदिव्यथा ।
विसर्पज्वरहृल्लासा विस्फोटानामुपद्रवाः ॥

जो विस्फोटक रोग त्रिदोषज हो और इसको श्वास, पियास अङ्ग शिथिल हृदय में पीड़ा, विसर्प (फफोले फटजांय लाल सरीखा पानी बहे) ज्वर और जी मचलाता हो तो असाध्य जानिये, इस अवस्था में अच्छे वैद्य का काम है। विस्फोटक की चिकित्सा, छोटी माता का बयान और टीका लगाने का प्रकर्ण आगे लिखेंगे ॥

मसूरिका (छोटी माता)

इसका भी आदि कारण वही है जो बड़ी माता का है। मसूरिका के पूर्व रूप में ज्वर, खजुरी, शरीर में ऐंठन, अरुचि, भ्रम, त्वचा में सूजन, अङ्ग और नेत्र लाल होते हैं। प्रायः छोटी माता सरसों या राई के सरीखे दाने निकल कर पांच वो चार दिन में मुर्झाय जाती हैं। दोषों के अधिक कोप होने से अपने २ दोषानुसार मसूर के सदृश सुर्ख पीले रूखे तीव्र वेदना युक्त कठिन एवं देर में पकने वाले होते हैं त्रिदोष में नीले रंग की चिपटी बीच में गहरी बहुत काल में पकने और पीव बहने वाली होती हैं ॥

चर्म्मपीड़िका माता ॥

ये माता औषधि के योग्य नहीं होती हैं। इसमें कण्ठ का अवरोध, तन्द्रा प्रलापादि अनेक उपद्रव होते हैं। एक रोमान्तिका नामक माता होती हैं। वे रोमछिद्र समान ऊँची लाल रङ्ग की होती हैं।

और भी सप्तधातु गतादि मसूरिका के लक्षण हैं परन्तु ग्रन्थ बढ़जाने के भय से सम्पूर्ण नहीं लिखा जासक्ता ॥

असाध्य लक्षण॥

प्रवाल (मूँगा) सदृश लाल, जामुन सरीखे काली, अलसी के फल के समान तथा लोहे की लाल के सदृश होने से कठिन चिकित्सा समझनी चाहिये। जिस माता के निकलने में खांसी, हुचकी, बेहोशी, तीव्र ज्वर, प्रलाप बेचैनी, मूर्च्छा, तृष्णा, दाह, घुमरी, मुख नाकसे रक्त गिरना, नेत्र अति लाल कण्ठ में घुरघुर शब्द, श्वास और अति उश्वास हो तो जानना कि वह निश्चय मर जायगा॥

मसूरिकान्तेशोफः स्यात्कर्परेमणि बन्धके।
तथासफलकेवापि दुश्चिकित्स्यःसदारुणः॥

माता के अन्त में कुहनी, पहुंचा अथवा कन्धे में सूजन आवे तो असाध्य ही समझना।

शास्त्र से अतिरिक्त परीक्षित असाध्य लक्षण--कई बार की परीक्षा से निश्चय हुआ है यदि माता के आराम होने के बाद तीव्र ज्वर, अति प्यास, खांसी, गले में दर्द दस्त पतला हो यदि उस अवस्था में वैद्य द्वारा यथार्थ चिकित्सा न होगी तो निश्चय है कि उसके यकृत (लीवर) में शोथ शीघ्रही आ जायगी और आश्चर्य नहीं कि किसी न किसी रग में रक्त जमकर फोड़े होजांय। जब रोगी को पानी पीने में क्लेश होना अर्थात् प्यास हो परन्तु जल समीप जाते ही अनिच्छा प्रकट करे तो ज़रूर है कि तीन चार दिन में रोगी मरजायगा। सन् ८७ में बहुत से लड़के इस कारण से मरे हैं, डाक्टर लोग देशीय चिकित्सा न जानने के कारण रोगियों को वृथा की अङ्गरेज़ी दवा दे दे के और भी गड़बड़ सड़बड़ कर डालते हैं अन्त में भी नहीं जान सके हैं कि इस रोगी की मृत्यु का कारण ठीक क्या हुआ उन्हें अपने स्वार्थ साधन से काम चाहे भारत बने या बिगड़े, रहे हकीम सो उनसे माता की बीमारी में बहुत कम सहायता ली जाती है सो भी हिंदुओं के यहां बिलकुल ही नहीं और जिस क़िस्म के वैद्यों का आज कल प्रचार है वे लोग न तो किसी सद्गुरु के द्वारा शिक्षा पावें न उस शास्त्र का मर्म बूझें कि जिनसे इन महा कठिन रोगों की जानकारी और उनके आरोग्य करने की योग्यता प्राप्त हो-

भक्ति दक्षिणा या फीस देकर टीका लगवाती थी वही अब अङ्गरेजी टीका वालों को गोदनहरा के नाम से कह कर ऐसी घृणा रखती है कि सब लोग थोड़ा २ चन्दा करके टीकावालों को इस लिये राजी करते हैं कि वे उनके बालकों के टीका न लगावें। इसमें विशेष कारण टीका से परहेज करने का यही है कि टीका के महिकमे में अधिक मुसल्मान होते हैं यदि अच्छे शिष्ट पढ़े लिखे हिंदू विशेष कर ब्राह्मण टीका के काम में नियत किये जांय तो यह काम पूर्णरूप से प्रचलित होजाय नहीं तो रँगीहुई कागज सर्कार ईख लिया करे कार्रवाई कुछ औरही होतीहै जिसको हम जानते हैं।

हमारे विचार में टीका दिलाना बहुत अच्छी बात है पर जिनसे न हो-सके १४ संख्या के लेखानुसार रोग का यत्न करो और माता पूज जाने के बाद कभी धोखा मत खाओ तुरन्त मूसल औषध द्वारा अवस्थानुसार (शीतल चीनी का चूर्ण १।२ रत्ती दो २ घण्टे में जल के साथ पिलाओ) आभ्यन्तरिक उष्णता साफ़ करके तत्पश्चात् कुछ दिन पर्य्यन्त जैसे सरबत अनार, सरबत सन्दल, सरबत बनफ्शा, सरबत नीलोफर, सरबत उन्नाव, अर्क गुलाब, अर्क धनियाँ, अर्क कासनी, या कासनी के पत्तों को कूट कर रस निकाल ले या फाड़ ले उसमें मिश्री डालकर पिलावे, रुधिर के साफ करनेमें इसके बराबर दूसरी औषध नहीं है परन्तु कासनी के पत्तों को धोना न चाहिये क्योंकि उसका असर जाता रहता है॥

माता की चिकित्सा।

उपद्रव रहित माता में सेवाय बाह्य यत्न के औषध न करना चाहिये। यदि ज्वर हो तो स्नान न करना बहुत हवा में न रखना, कभी २ भाँग का चूर्ण देह में लगा देना। माता के प्रारम्भ में तीन दिन दोनों समय दो तीन दाना कालीमिर्च के साथ रुद्राक्ष को बासी पानी में घोट कर पिलावे जब देखे कि माता का ज़ोर नहीं घटता है पिलाना बन्द कर देय। यदि माता उभ-ड़ती हुई न दीखे तो एक दो बदाम को पानी में भिगा कर देय। छिछड़ा निकाल पानी में घोट कर पिला देय या ऐसही खिला देय, दिन में दो तीन दफे देने से बैठी हुई माता उभर आती है।

अगर रोगी बालक बहुत रोवे और अपने हाथों से देह खजुवावे और बदन नोचे तो पोस्ते के सूखे ढो या एक फल को कुचल कर एक मट्टी के पात्र में रात को भिगा दे और सवेरे खूब मल कर छान ले और जरा सी मिश्री मिला कर पिला दे इसी प्रकार सवेरे भिजोवे तो सांझ को पिलावे।

बाजे बच्चों के पैर के तलुवा और हथेली में भी माता निकल आती है जिसके की तलुवा अधिक जलता है चाहिये कि चांवल के धोवन से दिन में कईबेर तलुवे को धोय देंय।

पाक काल में सब मसूरिकों की वायु सुखाता है तब हंसपा (तरबोषध) देना चाहिये, जुसे मुलेठी, मुनक्का, मीठा अनार और मिश्री संयुक्त दुग्ध फाड़ के उसी का पानी पिलाना इससे जल्दी पकती है और वायु भी कोप नहीं करता परन्तु पाक देख लेना। अगर वायु कोप से पेट में दर्द पेट फूलना शरीर ऐंठन या कम्पन हो तो किञ्चित् सेंधव नोन युक्त मांसरस के साथ कुछ भोजन देना, थोड़ी सी बिजयसार की लकड़ी और खैर, सेर आध सेर पानी में गरम कर छान ले और वही पानी पीने को देय और आबदस्त लेने के लिये भी उसी जल को रक्खे। मुंह में छाले पड़ गयेहों या मसीन २ फुन्सियां (माता) निकल आई हों तो जाई के पत्ते, मजीठ, दारुहल्दी, सुपारी, आंवला और मुलेठी इन सबकी सम भाग ले ११ हिस्से जल में क्वाथ कर कुल्ली करावे यदि अति बालक हो तो श्वेत खैर सुपारी दोनों को पानी में पीस लेप कर देय।

दगापूर्ना और मुलेठी को पानी में घोट. उसे अधिक पानी में घोल कर रोज़ २ उस जल से रोगी की आंखों को सींचने से नेत्र नाश या फूली आदि पड़ने का भय नहीं रहता। यदि माता बहती हों तो बड़, पीपर, पाकरि, गूलर और आम इनकी छाल या पत्तों को खुश्क चूर्ण कर बुरकावे, किसी किसी का मत है कि जङ्गली कण्डों की राख बुरकाना अति लाभदायक है। माता में कृमि न पड़ें इसलिये कभी २ राल लोबान आदि की धूनी देना भी उत्तम है। अगर माता के फोड़े दूषित होजांय तो शीघ्र ही जोंक लगवा कर रक्त निकलवा दे॥

शीतला की टीका वा छाप (लिम्फ)

पूर्व्व में यह बात लिख चुके हैं कि पूर्व्वकाल में माली लोग टीका लगाते थे उसी का अनुकरण अब सरकार की ओर से होता है, इसमें शक नहीं कि टीका लगाने से माता का ज़ोर घट जाता है और टीका लगाने में बच्चे को कुछ क्लेश भी नहीं होता है परन्तु अज्ञान वश लोग इससे डरते हैं सरकार की तरफ़से भी प्रथम हिंदुस्तानी के रीत्यानुसार टीका लगाया जाता था वह यह था कि चेचक के दानेमें से ज़रासा पेप लेकर शलाका (नश्तर) की नोक से आरोग्य बालक के बाहू में चर्म्म के अभ्यन्तर प्रवेश कर देते थे वह जब आवला पड़ गया तो उसी का पेप लिया या जब दाना मुरझाय गया तो छिलको को उतार कर उसमें ज़रा सा पानी डाल महीन घोंट लेई सा बना टीका के काम में लाते थे और अब भी कितनी जगह इसी तरह से टीका लगाया जाताहै परन्तु प्रायः देखा गया है कि टीका लगाने पर भी कालान्तर में माता निकल आती हैं।

पचासी वर्ष गत हुआ होगा कि डाक्टर जेनर नामक एक अंगरेज ने गोथन टीका का प्रकाश किया अर्थात् गौओं के थनों पर जो दाने निकलते हैं उसके पेप से टीका लगाना प्रचार किया और उसका नाम "वेक्सिनेशन" रक्खा अब अधिकतर सर्व्वत्र उसी से टीका लगाया जाता है और इस बात के लिये सरकारी कानून होगया है कि जब बच्चा कुछ सयाना होजाय तो उसके मा बाप उसे अवश्य टीका लगवा देवें और बाज २ यह कहते हैं कि सिर्फ़ मुम्बई के लिये सरकारी कानून है अन्य देशों में ऐसा कानून नहीं है परन्तु गवर्न्मेंट की ओर से टीका लगानेवाले हिंदू मुसल्मान दोनों जाति के लोग नियत हैं और जो कोई इच्छा प्रकट करे कि हमारे बच्चे को टीका लगा देयो तो वे नियमित लोग धर्म्मार्थ टीका लगा देवें और २ द्वीपों में इसका अधिक प्रचारहै। विलायतमें एक भी लड़के ऐसे न निकलेंगे कि जिनके टीका न लगाया गया हो, इसमें शक नहीं कि टीका लगाने से बहुत अधिक लाभ देखा गया है और हिंदू लोग जो प्रायः उससे डरते हैं, कई कारण हैं प्रथम तो यह कि देवी अप्रसन्न होंगी। दूसरे अशिक्षितों में पूर्व्व होसे यह ख़्याल जमे हैं कि सरकार अपने मतलब (जिसकी बाहू से दूध निकलेगा उस बच्चे

अगर रोगी बालक बहुत रोवे और अपने हाथों से देह खजुवावे और बदन नोचे तो पोस्ते के सूखे डोडे या एक फल को कुचल कर एक मट्टी के पात्र में रात को भिगा दे और सवेरे खूब मल कर छान ले और जरा सी मिश्री मिला कर पिला दे इसी प्रकार सवेरे भिजोवे तो शाम को पिलावे।

बाजे बच्चों के पैर के तलुवा और हथेली में भी माता निकल आती है जिसके की तलुवा अधिक जलता है चाहिये कि चांवल के धोवन से दिन में कई बेर तलुवे को सींच देवे।

पाक काल में सब मसूरिकों को वायु सुखाता है तब हंसपद (तरवोपध) देना चाहिये, शुद्ध मुलेठी, मुनक्का, मीठा अनार और मिश्री संयुक्त दुग्ध फाड़ के उसी का पानी पिलाना इससे जल्दी पकती है और वायु भी कोप नहीं करता परन्तु पाक देख लेना। अगर वायु कोप से पेट में दर्द पेट फूलना शरीर ऐंठन या कम्पन हो तो किञ्चित् सैंधव नोन युक्त मांसरस के साथ कुछ भोजन देना, थोड़ी सी विजयसार की लकड़ी और खैर, सेर आध सेर पानी में गरम कर छान ले और वही पानी पीने को देय और आवदस्त लेने के लिये भी उसी जलको रक्खे। मुख में छाले पड़ गये हों या मसीन २ फुन्सियां (माता) निकल आई हों तो जाई के पत्ते, मजीठ, दारुहल्दी, सुपारी, आंवला और मुलेठी इन सबको समभाग ले १६ हिस्से जल में क्वाथ कर कुल्ली करावे यदि अति बालक हो तो श्वेत खैर सुपारी दोनों को पानी में पीस लेप कर देय।

इन्द्रायण्ड की पत्ती? — (line reads:) इन्द्रापूर्ता और मुलेठी को पानी में घोट उसे अधिक पानी में घोल कर रोज २ उस जल से रोगी की आंखों को सींचने से नेत्र नाश या फूली आदि पड़ने का भय नहीं रहता। यदि माता बहती हो तो बड़, पीपर, पाकर, गूलर और आम इनकी छाल या पत्तों को खुश्क चूर्ण कर बुरकावे, किसी किसी का मत है कि जङ्गली कण्डों की राख बुरकाना अति लाभदायक है। माता में कृमि न पड़ें इसलिये कभी २ राल लोबान आदि की धूनी देना भी उत्तम है। अगर माता के फोड़े दूषित होजांय तो शीघ्र ही जोंक लगवा कर रक्त निकलवा दे॥

शीतला की टीका वा छाप (लिम्फ)

पूर्व्व में यह बात लिख चुके हैं कि पूर्व्वकाल में माली लोग टीका लगाते थे उसी का अनुकरण अब सरकार की ओर से होता है, इसमें भ्रम नहीं कि टीका लगाने से माता का जोर घट जाता है और टीका लगाने में बच्चे को कुछ क्लेश भी नहीं होता है परन्तु अज्ञान बहु लोग इससे डरते हैं सरकार की तरफ से भी प्रथम हिंदुस्तानी के रीत्यानुसार टीका लगाया जाता था वह यह था कि चेचक के दानेमें से ज़रासा लेप लेकर शलाका (नश्तर) की नोक से आरोग्य बालक के बाहु में चर्म्म के अभ्यन्तर प्रवेश कर देते थे वह जब आवला पड़ गया तो उसी का लेप लिया या जब दाना सुरझाय गया तो छिलकी को उतार कर उसमें ज़रा सा पानी डाल महीन घोंट लेई सा बना टीका के काम में लाते थे और अब भी कितनी जगह इसी तरह से टीका लगाया जाताहै परन्तु प्रायः देखा गया है कि टीका लगाने पर भी कालान्तर में माता निकल आती है।

पचासी वर्ष गत हुआ होगा कि डाक्टर जेनर नामक एक अंगरेज ने गौथन टीका का प्रकाश किया अर्थात् गौओं के थनों पर जो दाने निकलते हैं उनके लेप से टीका लगाना प्रचार किया और उसका नाम "वेक्सिनेशन" रक्खा अब अधिकतर सर्वत्र उसी से टीका लगाया जाता है और इस बात के लिये सरकारी कानून होगया है कि जब बच्चा कुछ सयाना होजाय तो उसके मा बाप उसे अवश्य टीका लगवा देवें और बाज २ यह कहते हैं कि सिर्फ मुम्बई के लिये सरकारी कानून है अन्य देशों में ऐसा कानून नहीं है परन्तु गवर्न्नमेण्ट की ओर से टीका लगानेवाले हिंदू मुसल्मान दोनों जाति के लोग नियत हैं और जो कोई इच्छा प्रकट करे कि हमारे बच्चे को टीका लगा देवोतो वे नियमित लोग धर्म्मार्थ टीका लगा देवें और २ द्वीपों में इसका अधिक प्रचारहै। विलायतमें एक भी लड़के ऐसे न निकलेंगे कि जिनके टीका न लगाया गया हो, इसमें भ्रम नहीं कि टीका लगाने से बहुत अधिक लाभ दिखा गया है और हिंदू लोग जो प्रायः उससे डरते हैं, कई कारण हैं प्रथम तो यह कि देवी अप्रसन्न होगी। दूसरे अविद्वितों में पूर्व्वहीसे यह ख्यालात जमे हैं कि सरकार अपने मतलब (जिसकी बाहु से दूध निकलेगा उस बच्चे

की सरकार लेगी) से टीका जारी किया, धर्म्मावलम्बी जो स्वयं मुसल्मानों से छूने में घृणा करते हैं वे किस तरह अपने बच्चों को उनसे टीका लगवाना पसन्द करेंगे कभी नहीं। प्रजावत्सल सरकार यदि दृढ़चित्त से बच्चों को आरोग्य प्रदान करना चाहती है तो अवश्यमेव इस काम में सिर्फ ब्राह्मण ही भरती करे इससे फिर हिंदूमात्र को परहेज न होगा॥



टीका लगवाने के साधारण नियम॥

१—जितना शीघ्र बने बच्चे को शीतला कराल रूपी अरिष्ट से बचा लेने का उपाय पूर्व ही से करना अति उत्तम है। यदि बालक आरोग्य और सबल हो तो थोड़ी मास की अवस्था में टीका दिला देना कोई अंदेशा नहीं है क्योंकि बच्चे की अवस्था जितनी ही अधिक होती जायगी उतनी ही टीका का स्थान हाथों से निखार बिखार डालने का डर है और एक बार छाप लगा देने के बाद यदि सात वर्ष बीतने पर फिर टीका लगवा दिया जाय तो माता निकलने का खटका जन्म पर्य्यन्त न होगा।

२—खूब सावधानता से टीका (प्रथम ही जाँच लेवें कि इस सूची से किसी रोगी बच्चे तो नहीं गोदे गये हैं इत्यादि) लगाना उचित है, टीका देने के दो तीन दिन बाद तीन चार दिन तक बहुधा बच्चों को धीमा ज्वर, मुख सूखा, रात में अल्प निद्रा और किसी २ को दस्त पतला बना रहता है छः सात दिन बाद टीका के चक्र और गाँठ उभड़कर लाल हो जाता है और मीठी २ टपक भी होती है परन्तु तीन चार दिन के बाद आप आराम हो जाता है औषध करना उचित नहीं है।

३—जिस में बच्चे टीका के स्थल को न मलने पावें इस लिये उनके अङ्गा या कुरता की बाँही ढीली रखनी चाहिये, टीका के स्थान में सूजन और दर्द विशेष मालूम हो तो उसके चक्र और नारियल का तेल या मक्खन या घी लगा दे, टीका सूख जाने पर पपड़ी को हाथ से न उचारे आपही आप सूख कर गिर जाने देय पानी का बचाव रखना लाभ दायक है।

आयुर्वेद।

यह अथर्व वेद का उपांग है। जैसे ऋगवेदादिकों के उपांग धनुर्वेदादि हैं। ब्रह्मा जी ने सृष्टि के पूर्वही एक सहस्त्र अध्याय युक्त एक लक्ष श्लोक आयुर्वेद बनाया, प्रथम, एकही भाग था मनुष्यों का अल्प आयुष्य बुद्धि, पराक्रम तथा वीर्य्य हीन देख ऋषियों ने निम्नलिखित नामोंसे आठ भाग कर दिया॥

१—शल्य (अस्त्र चिकित्सा) २—शालाक्य (मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों के लक्षण और शांति) ३—कायचिकित्सा (ज्वरादि रोगों को शमन करना) ४—भूत विद्या (यंत्र मंत्र बल दानादि उपाय) ५—कौमार भृत्य (बाल रक्षण, धात्री शिक्षा) ६—अगदतंत्र (विष पीड़ित मनुष्यों की चिकित्सा) ७—रसायन तंत्र (शीघ्र बुढ़ापा न होने की विधि) ८—वाजी करण तंत्र (वीर्य वृद्धि तथा स्त्री समागम में अति आनन्द उत्पन्न होने के उपाय) इसी को आयुर्वेद का अष्टांग कहते हैं, जिन्हें विस्तार सहित आगे लिखेंगे॥

आयुर्वेद की परम्परा।

प्रथम ब्रह्मा जी ने आयुर्वेद को प्रगट कर दक्षप्रजापति जी को पढ़ाया, दक्षप्रजापति जी ने बड़े विद्वान सूर्य के पुत्र अश्वनीकुमार को पढ़ाया, यह महाशय वैद्यक के बड़े भारी पण्डित हुये, एक समय ब्रह्मा का शिर भैरव ने काट लिया था अश्वनीकुमार ने जोड़ दिया, तब से और प्रतिष्ठा हुई और यज्ञ में भाग पाने लगे। देवासुरसंग्राम में दैत्यों से घायल हुये देवताओं का घाव तुरन्त अच्छा कर दिया, इसी विद्याके बल से इन्द्र का भुजस्तंभ, पूषा के गिरे दांत, भग देवता के फूटे नेत्र और चन्द्रमा का क्षयरोग अच्छा कर दिया। भृगुवंशी च्यवनऋषी आंख के अंधे और अति वृद्ध हो गये थे अश्वनीकुमार ने उन्हें एक ऐसी

औषध का जल बनाय स्नान करा दिया कि वह अति सुन्दर कमल के समान नेत्र युक्त मनोहर रूप १६ वर्ष के युवा हो गये, अश्वनीकुमार से पढ़ कर इन्द्र ने आत्रेय मुनि को पढ़ाया, आत्रेय बड़े भारी वैद्य हुये जिन्हों ने आत्रेयसंहिता नामक ग्रंथ रचा और अग्निवेश, भेड़, जातूकर्ण, पराशर, क्षारपाणि और हरीत को आयुर्वेद पढ़ाया, वे सब महाशय भी अपने २ नाम की संहिता और ग्रंथ रचते भये जैसे अग्निवेश रचित अञ्जननिदान, और हरीत कृत हारीतसंहिता आदि ॥

भरद्वाज मुनि ।

भरद्वाजसंहिता के देखने से ज्ञात हुआ कि एक समय हिमालय के सन्निकटवर्ती स्थान में बड़े २ तेजस्वी स्वाध्याय में तत्पर ऋषिगण परस्पर विचार करने लगे कि धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष का मूल यह शरीर है और इसमें रोग होने से जप, तप, स्वाध्याय, धर्म ब्रह्मचर्य आदि सब नष्ट हो जाते हैं यहां तक की निरन्तर स्व शरीर रक्षा की चेष्टा रहित होने से शीघ्र ही कालग्रस्त होना पड़ता है इसलिये शरीर का पालन मुख्य कर्त्तव्य है ऐसा सुन सब की तरफ से भरद्वाज मुनि इन्द्र लोक में गये वहां इन्द्र से आयुर्वेद का मूल तत्व प्राप्त कर लौट आये उन्हों ने आर्यावर्त के अनेक ऋषियों को आयुर्वेद पढ़ाया और भरद्वाज संहिता नामक श्रेष्ट ग्रंथ बनाया ॥

चरक मुनि ।

यह महाशय आत्रेय मुनि के पुत्र हैं इनका वृत्तान्त इस प्रकार लिखा है कि जब भगवान ने मत्स्यावतार ले वेदों का उद्धार किया उसी अवस्था में उक्त मुनि ने सांगोपांग आयुर्वेद पढ़ कर रोगार्त्त मनुष्यों के कल्याणार्थ मर्त्यलोक में उसका प्रचार किया और चरकसंहिता नामक एक ग्रन्थ बनाया इनको लोग शेष का अवतार भी कहते हैं ॥

धन्वन्तरि।

पुराणों से जाना जाता है कि धन्वन्तरि का जन्म समुद्र से हुआ है एक समय इन्द्र ने भारत के प्राणी मात्र को रोगातुर देख धन्वन्तरि से कहा कि आप मनुष्यों के कल्याणार्थ काशी के राजा का तन धारण करें तब धन्वन्तरि जी ने इन्द्र से पढ़ कर के काशी के राजकुल में जन्म ग्रहण किया और दिवोदास इस नाम से प्रसिद्ध हुये.यह महात्मा बाल्यावस्था ही से विरक्त हो अनेक तपश्चर्या में प्रवृत्त हुये परन्तु ऋषियों ने इनको काशी के राज्यपद पर बैठाया, उक्त काशीराज बड़े भारी वैद्य हुये। कुछ काल के पश्चात् विश्वामित्र ने अपने पुत्र सुश्रुत से कहा कि हे वत्स दिवोदास काशी के राजा साक्षात् धन्वन्तरि हैं तुम काशी में जाओ उनसे आयुर्वेद अध्ययन करके लोकका उपकार करो, सुश्रुत पिता की आज्ञा स्वीकार कर एक सौ ऋषियों के पुत्रों को साथ ले काशी में गये और अष्टांग आयुर्वेद अध्ययन कर सांगोपांग समस्त ऋषि पुत्रों को पढ़ाया और वैद्यों के उपकारार्थ सुश्रुतसंहिता अपने नाम का ग्रन्थ रचा, यद्यपि मनुष्यों के विविध कल्याण एवं देह रक्षार्थ अनेक ग्रन्थ पृथ्वी तल में विख्यात हैं परन्तु सुश्रुत जैसा निदान शारीरक और शस्त्र चिकित्सा आदि विषयों में सर्वाग्रगण्य और माननीय है ऐसा दूसरा नहीं इसके अध्ययन से वैद्यक सम्बन्धी समस्त शंका निवृत्त हो जाती हैं ऐसा लिखा है कि जिन वैद्यों को सुश्रुत नहीं आता वे चोर हैं और राजा से वध दण्ड पाने योग्य हैं॥

नाड़ीज्ञान।

आयुर्वेदाभ्यासी (वैद्य) को आभ्यन्तर रोग के पहिचान के लिये नाड़ी ज्ञान अवश्य होना चाहिये क्योंकि बिना नाड़ीज्ञान के रोग को साध्या-असाध्य परीक्षा और रोगी के जीने मरनेकी अवधि नहीं मालूम हो सक्ती

जैसे वैद्यकशास्त्र जाननेवाले को विशेष कर नाड़ी की ज्ञान, डाक्टर को विशेष कर जिह्वा और आंख की पहिचान, हकीम को विशेष कर मूत्र परीक्षा में चित्त अधिक देना चाहिये । इसलिये विचार है कि अब हम अपने पाठकगणों को संक्षेप से वैद्यक के संपूर्ण अङ्गों को बतला दें कि जिससे वे अपनी और अपने कुटुम्ब मात्र की चिकित्सा कर लिया करें किसी मूर्ख वैद्य या बाबाजी के धोखे में आकर धन और प्राण दोनों न गंवावें ॥

जीव धारियों के स्थूल एवं सूक्ष्म सब साढ़े तीन कोटि नाड़ी हैं सो समस्त नाड़ी नाभि मूल में बंध चक्र ऊर्ध्व और अधस्थित हैं । एही सब नाड़ियां आपस में एक के साथ एक मिलकर इस शरीर के ऊपर भाग में जाल के समान बनी हैं जिसे अंगरेजी में (सेल्यूलारटिसु) कहते हैं अर्थात् एक प्रकार जाल सदृश झिल्ली । इसी प्रकार मनुष्य के देह में साढ़े तीन कोटि रोम भी हैं और रोम (बाल) की उत्पत्ति नाड़ियों की मल से है सो समय नाड़ी मुख द्वारा घर्म (पसीना) बिन्दु स्राव होता है । नाड़ी तीन नाम से प्रसिद्ध है १ धमनी सो २४ हैं भोजन का सारभूत रस इन्हीं नाड़ियों के द्वारा वहन होता है इससे इसे रस वाहिनी नाड़ी कहते हैं । सो नाभि मूल हो के १० नीचे को गई हैं वात मल मूत्र, शुक्र, और अन्न रस नीचे पहुंचाना उनका काम है १० ऊर्ध्व गामी हैं सो शब्द रस गंध स्वांस जंभाई डकार क्षुधा और तृषा शक्ति इन सब को अपनी शक्ति से ताकत देती हैं और दो २ तिर्यग (टेढ़ी) हो के फैली हैं । नाभीके मध्यमें सुषुम्नानामकएकस्थूलनाड़ीहै जिनमें कि संपूर्णनाड़ियांजोंककेसमानलिपटीहैं। दूसरी का नाम शिरा (भेइन) है वे सात सौ हैं यह रक्त को वहन करती हैं इससे रक्त वाहिनी कहलाती हैं । तीसरे का नाम स्नायु जिसे अंगरेजी में (नर्भ) कहतेहैं मुख्य नौ से हैं इनका कामहै पसीना को बाहर करना और उसी सूक्ष्म छिद्र द्वारा लेपन तैलमर्दन आदि पदार्थ शरीर में प्रवेश करतेहैं ॥

प्रधान चतुर्दश नाड़ी।

ईड़ा १ पिङ्गला २ सुषुम्ना ३ सरस्वती ४ वारुणी ५ पूषा ६ हस्तिजिह्वा ७ यशस्विनी ८ विश्वोदरी ९ कुहू १० शङ्खिनी ११ पयस्विनी १२ अलम्बुषा १३ गांधारी १४ यही चतुर्दश नाड़ी हैं—जिनमें से १० नाड़ी निम्नलिखित १० वायु के साथ दशेन्द्रियों के मार्ग में वहन करती हैं॥

दश वायु।

प्राण १ अपान २ समान ३ उदान ४ व्यान ५ नाग ६ कूर्म ७ कृकर ८ देवदत्त ९ धनंजय १० यही १० वायु इड़ा प्रभृति दश नाड़ियों में संचार करते हैं। नासिका के वाम भाग में इड़ा, दक्षिण भाग में पिंगला और ब्रह्म रंध्र में सुषुम्ना है इसी तरह वाम नेत्र में गांधारी, दक्षिण में हस्तिजिह्वा, दक्षिण कर्णमें पूषा, वाम कर्ण में यशस्विनी, मुख में अलम्बुषा, लिङ्ग और गुदा द्वार में शंखिनी इस प्रकार दश द्वार को आश्रय कर के दश नाड़ी स्थित हैं॥

नाड़ी स्पर्शन विधिः।

वैद्य रोगी के कूर्पर (कलाई) भाग को अपने वाम हस्त द्वारा दबा के और दक्षिण हस्त की अंगुलित्रय उस के अंगुष्ठ मूल में वायुगति विशिष्ट नाड़ी की सर्वदा परीक्षा करे वैद्य का कर्त्तव्य—वैद्य शौचानन्तर प्रातस्संध्यादि कर्म से निवृत्त हो सुख पूर्वक आसन पर बैठ एकाग्र चित्त कर रोगी को मल मूत्र त्याग कराके नाड़ी का स्पर्श द्वारा परीक्षा करें। पुरुष के दाहिने और स्त्री के बायें हाथ की नाड़ी देखे। इसका कारण यह है कि "स्त्रीणां मूर्द्ध मुखं कूर्मं पुंसां पुन रधो मुखः" स्त्रियों के नाभि में कूर्म (जो एक प्रकार की वृहत् नाड़ी है) का मुख ऊपर और पुरुष के अधोमुख है इस से स्त्रियों के वाम नाड़ी द्वारा शरीर के सुख दुःख का ज्ञान होता है और पुरुष के दाहिने हाथ के अंगूठे की जड़ में जो नाड़ी चलती है प्रथम वायु की दूसरी पित्त और तीसरी कफ की जानना। वात की नाड़ी सर्प और जोंक इत्यादि जान-

वरों की भांति तिरछी बांकी चाल से चलती है। पित्त कि कौआ हिरन और मेढ़क आदि की तरह फुदकती हुई चलती है। कफ की नाड़ी हंस और कबूतर की नाईं धीरी चाल से चलती है जब रोग दो विकारों से होता है तो नाड़ी की चाल भी दो दोषों से मिश्रित हो जाती है जैसे वात और पित्त के विकार से जब रोग उत्पन्न होगा तो नाड़ी की चाल भी सर्प और मेढ़क की चालों से संयुक्त रहैगी इत्यादि और भी जानना। सन्निपात अर्थात् तीनों दोषों के मिश्रित होने से नाड़ी की गति तीतर और बटेर की चाल चलती है। ज्वर के कोप में नाड़ी गरम और जलदी २ चलती है। काम और क्रोध में नाड़ी बहुत जलदी, भय चिन्ता और शोक की नाड़ी क्षीण (धीरी) मन्दाग्नि और धातु क्षीण वाले की नाड़ी अति धीमी चलती है। रक्त विकार वाले की नाड़ी गरम और भारी तथा आमातिसार, आदि उदर व्याधि वाले की नाड़ी लादे हुये भैंसा के समान धीरी और भारी चलती है। अग्नि दीप्त वाले की नाड़ी हलकी और जलदी, आरोग्य पुरुष की नाड़ी बलवती भूखे की नाड़ी चपल और भोजन किये हुये की नाड़ी स्थिर चलती है॥

प्रकृत्यानुसार नाड़ी।

वात प्रकृत वाले की नाड़ी किञ्चित् शीघ्र और सूक्ष्म गति होती है, पित्त वाले की तप्त दीर्घ और अति शीघ्र वाहिनी होती है, कफ वाले की भारी और धीमी गति होती है। परन्तु सिर्फ नाड़ीही के भरोसे न रहैं; रोगी की अवस्था बलाबल आदि ऊपरी दशा को देख ले जैसे कि दुर्बल, धातु क्षीण, दीर्घ रोगी और सुजाक वाले की नाड़ी अति धीमी चलती है, और कफ वाले की भी धीमी चलती है पित्त वाले और कठिनाहारे की नाड़ी एक सी होती है, किसी कारण से जब मनुष्य के सिर पर गरमी चढ़ जाती है तो वह विशेष हो जाता है उस अवस्था में भी नाड़ी धीमी चलने लगती है, वैद्य लोग मौत की नाड़ी जान रुख देना आरम्भ कर देते हैं सुतरां रोगी शीघ्रही यमपुर को गमन कर जाता है वरं उस समय अवश्य शोधक यंत्र (लेंकुस) आदि का अनुसन्धान करलेना उचित है। इसी से प्रायः सर्वाङ्ग लक्षणों से अनभिज्ञ वैद्य धोका खाजाते हैं॥

प्रातःकाल में नाड़ी स्निग्ध मयी, मध्यान्ह में उष्णा, सायंकाल में वेगवती और रात्रि में वेग रहित होती है यह स्वभावज गुण है॥

मृत्यु नाड़ी लक्षणम्।

जिस रोगी की नाड़ी क्षण में वेग से गमन करै और क्षण में धीमी हो वा बन्द हो जाय तो जानना कि सात रोज के अभ्यन्तर में इसको मृत्यु अवश्य होगी॥

आभ्यन्तरिक अतिशय दाह से यदि नाड़ी शीतल एवं अति मन्दगत हो तथा भीतर शीत होने से जिसकी नाड़ी उष्णा और वेगवान हो जाती है उसकी मृत्यु निश्चय होती है॥

जिसकी नाड़ी की गति ऐसी मन्द हो जाय कि देखने से बिलकुल पता न लगे चाहे वह रोगी की इन्द्रियां सब चैतन्य हो बैठने उठने की शक्ति भी बनी हो परन्तु वह तीन प्रहर में अवश्य मृत्यु को प्राप्त होगा, ऐसा हम ने कई एक रोगियों को देखा है॥

पतितःसन्धितोक्षेदो नष्टशुक्रक्षयोभवेत्। शाम्यतेविस्मयस्तस्य नकिश्चिन्मृत्युकारणम्॥

(पतित) ऊंचे स्थान से गिरा हो, सन्धियों (जोड़ों) में चोट लगी हो, नष्ट शुक्र अर्थात् वीर्य रहित एतादृश मनुष्यों की नाड़ी मृत्यु सदृश होती है, परन्तु मृत्यु का कारण न जानना चाहिये॥

रोग रहित अपमृत्यु नाड़ी का लक्षण।

शरीर में कोई रोग नहीं है और किसी कारण से मृत्यु हो रही है तत्समय नाड़ी सन्निपात सदृश हो जाती है॥

डाक्टरीय मतानुसारेण नाड़ीज्ञानम् ।

जन्मकाल में एक मिनिट में नाड़ी की गति १४० बार होती है, तत् ऊर्द्ध एक वर्ष पर्य्यन्त आरोग्य बालकों की नाड़ी १३० बार चलती है, उसके ऊपर द्वितीय वत्सर पर्य्यन्त एक मिनिट के मध्य में ११० बार चलायमान होती है, द्वितीय वर्ष के ऊपर तृतीय वर्ष पर्य्यन्त १०० बार गति विशिष्ट होती है, त्रि वर्ष के ऊपर सप्त वर्ष पर्य्यन्त एक मिनिट में ९० बार, तिसके ऊपर १४ वर्ष तक ८४ बार और चतुर्दश वर्ष के ऊर्द्ध त्रिंशत् (३०) वत्सर पर्य्यन्त ८० बार तथा पंचाशत (५०) वर्ष पर्य्यन्त एक मिनिट में ७५ बार नाड़ी प्रकंपमाना होती है, पचास वर्षके ऊपर अस्सी वर्ष पर्य्यन्त स्वस्थ्य मनुष्यों की नाड़ी की गति ६० बार चलती है तत्पश्चात् वयः और अवस्था क्रम करके उत्तरोत्तर नाड़ी की गति क्षीण होती है, उक्त अवस्थाओं में यदि उक्त संख्या से अधिक नाड़ी की गति हो तो गरमी जानना और न्यून हो तो सरदी जानना चाहिये । डाक्टरी विद्या में नाड़ीज्ञान का प्रकर्ण विस्तार पूर्वक नहीं है इसी कारण डाक्टरों को नाड़ी द्वारा रोग का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है ॥

रोग परीक्षा ।

पूर्व में नाड़ी द्वारा रोगों की परीक्षा तथा साध्याऽसाध्य जानने की रीति लिख आये हैं परन्तु सिर्फ नाड़ीही देखने से रोगों का यथार्थ ज्ञान नहीं होता इसलिये नेत्रादि अष्टांग परीक्षा भी संक्षेपसे लिखताहूं आशा है कि पाठकगण अवश्य इसे अवलोकन करके हमारे परिश्रम को सुफल करैंगे ॥

नेत्र परीक्षा—वात रोग वाले के नेत्र रूक्ष मटीला तथा रक्त वर्ण और कुछ भीतर को दबे हुये और तीव्र ज्वरादि रोगों में एकटकी लगाये देखते हुये होते हैं और वात प्रकृत मनुष्य की आंख प्रायः तेजोविशिष्ट गो

लक उज्वल और पुतली कृष्ण वर्ण होतेहैं। पित्त रोग वालेके नेत्र पीत अथवा लाल रक्त सदृश किम्वा हरे रंग के होते हैं दाह युत और दीप देखने में क्लेश होता है, पित्त मिजाज वाले जन की आंखों में लाल २ डोरे नेत्र बड़े कटीले और तारे अधिक कृष्णवर्ण होते हैं कफ कोपमें नेत्र चिक्कन हर समय में पानी भरा सा रहे श्वेत मन्दज्योति और तेज हीन होते हैं, इस प्रकृत वाले की आंखें प्रायः श्वेत और बलवान होती हैं मिश्रित दोषों में मिले जुले रंग होते हैं और त्रिदोष (सन्निपात) में सब रंग मिल जाते हैं परन्तु रक्त वर्ण अधिक होते हैं। कमल रोग में नेत्र पीले हरदी के समान, हलीमक में हरे, प्लीह ज्वर में कुछ नीले, असाध्य तपेदिक (यक्ष्मा) में श्वेत दूध के समान अधिक रक्त स्राव और हैजे में रक्तिम धूम्रवर्ण एवं भीतर को बैठे हुये होते हैं। हृदयमंत्र की मूत्र और पित्त की क्रिया में व्यतिक्रम होने से उदररोग होता है। आम रोग में पलक बन्द करने में कष्ट होता है, मिरगीरोग में पलक कम्पित, फुफ २ मस्तिष्क और हृदयके रक्तारोध से नेत्र फटे से बड़े हो जाते हैं, उभय नयन रक्त समान लाल होनेसे मस्तिष्क (शिर) में खून जम जाने का बोध होता है, शिर में अधिक रक्त उष्ण हो जाने से, सन्यास रोग (इस रोगमें मनुष्य मरजाता है) में एवं अहिफेन द्वारा विषाक्त होने से नेत्रों के तारा संकुचित (सिकुड़) हो जाते हैं॥

जिह्वा परीक्षा।

बात रोग में जीभ शाकवन के पत्र के सदृश खरखरी रूखी और फटी सी होती है पित्त में लाल किम्वा धूसर वर्ण होती है, कफ दोषसे लिपी पोती और श्वेत रंग होती है, मिले दोषों में रंग मिला रहता है परन्तु सन्निपात में कुछ काली हो जाती है, दोषों के कम कोप से जिह्वा का ज्ञान भी कम होता है। रक्ताधिक्य दाह वशतः जिह्वा उष्ण और लाल वर्ण एवं हैजा मूर्छा और श्वास रुक जाने में शीतल, कंठ के भीतर अति दाह

होने से कृष्ण वर्ण, यकृत् प्लीहादि आभ्यन्तरिक यंत्र की पीड़ा से मरण समय जिह्वा घाव युक्त होती है। आरोग्य पुरुष की जिह्वा हमेशा गीली और गुलाबी रंग लिये होती है ॥

मूत्र परीक्षा ।

जो मनुष्य रात में पथ्य भोजन किया हो और प्रातः काल जल न पिया हो एवं प्रसंग मद्य पानादि किसी प्रकार का कुपथ्य रात में न किया हो तो उसके मूत्र की परीक्षा बहुत उत्तम हो सक्ती है क्योंकि रात में कुपथ्य करने और प्रातस्समय जल पीने तथा मूत्र को अधिक काल तक धर रखने से प्रकृति विलोम मूत्र का रंग हो जाता है रोग का साध्याऽसाध्य तथा प्रकृति की परीक्षा नहीं हो सक्ती है और यथार्थ परीक्षा न करने वाले वैद्य को ब्रह्महनन का पाप होता है, कहावत है "वैद्य चूके रोगी मारे वकील चूके मुवक्किल" इस लिये वैद्य को दत्त चित्त से मूत्रादिकों की परीक्षा करनी चाहिये ॥

मूत्र लेने की विधि शिवसंहिता से ।

जब चार घड़ी रात बाकी रहे रोगी को उठाय के किसी स्वच्छ सफ़ेद कांच की शीशी में पहिली और पिछली थोड़े से धार को अलग कराय बीच की धार मात्र उसी शीशी में कराय काग से तत्क्षण शीशी का मुख बन्द करदेय क्योंकि हवा लगने से भी पेशाब का रंग बदल जाता है। बाद उस शीशी को धूप में रख कर वर्ण आदि की परीक्षा करे। सिर्फ़ वात रोग में मूत्र नीलता युक्त लाल रङ्ग होता है, परन्तु स्वभाव की अति गरमी से भी उक्त प्रकार का रङ्ग हो जाता है, पित्त से पीलापन लिये लाल, कफ से फ़ेन युक्त चिकना और स्वेतवर्ण होता है, रक्त विकार में रक्त सदृश और सन्निपात में कुछ कृष्ण वर्ण हो जाता है, रस धातु अपक्व रहने से मूत्र। कांजी किम्वा बिजौरे के रस तथा पानी के समान हर समय होता है। ज्वर की अधिकता से प्रायः मूत्र पीला और पुराने रोग में लाल हो जाता है। वात ज्वर में केशर के समान पीला पित्त

ज्वर में स्वच्छ पीला और कफ ज्वर में गाढ़ा तथा सफ़ेद रंग होता है। तीव्र सन्निपात ज्वर में मूत्र प्रायः कृष्ण वर्ण हो जाता है और वही असाध्य समझा जाता है। विशूचिका में मूत्र रुक जाता है मूत्र कृच्छ (सुजाक वो प्रायूप) में जलन के साथ बूंद २ मूत्र होता है। बहुमूत्र जिसे मूत्रातिसार भी कहते हैं उसमें मूत्र निर्मल ठंढा गन्ध और दर्द रहित सफ़ेद दिन रात में बहुत बार होता है शीघ्र चिकित्सा न करने से वही क्षेम रोग हो जाता है अर्थात् शरीर के रसादिक अंश जलवत हो सर्वदा निरन्तर मूत्र मार्ग द्वारा बहा करता है। मूत्र कृच्छ मूत्रा घात (सुजाक) अश्मरी (पथरी) प्रमेह और स्त्री के प्रदर आदि रोगों में तो अवश्यमेव मूत्र परीक्षा करना वैद्यों को कर्तव्य है। हर एक व्यक्ति को उचित है कि प्रति मास में निज मूत्र परीक्षा द्वारा वीर्य का होना होना अवलोकन कर लिया करें क्योंकि परीक्षा द्वारा जहां तक सिद्ध हुआ है। वर्तमान समय में अधिकांश लोगों के मूत्र द्वारा धात जाता है पर उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं है। उसको तरकीब यह है कि प्रात समय शौच के पूर्व ही एक श्वेत कांच की शीशी में मूत्र कर शीशी में काग बन्द कर किसी जघे रख दिये। संध्या समय या दूसरे रोज प्रात समय उस मूत्र युत शीशी को उठाय उंजियाले की तर्फ देखे यदि धात जाता होगा तो अवश्य मूत्र के अधोभाग में सफ़ेद बालाई सा या रूई के भुआ सा या दाना विशिष्ट मटिमैले रंग का कुछ पदार्थ जमा सा दिख पड़ेगा॥

मल परीक्षा।

वात रोग में मल (दस्त) बंधा भया, धूम्र वर्ण और रूखा होता है पित्त में पीला और पतला, कफ में श्वेत गाढ़ा और बहुत होता है दो दोषों में मिश्रित और तीनों दोषों के मिल जाने में दस्त काला, कम और कुछ उष्ण होता है। अति काला, अति पीला, अति श्वेत और अति लाल दस्त से जानना कि विमारी बढ़ी है रोग असाध्य होने का डर है वैद्यों को उचित है कि उदर सम्बन्धी रोगों में अवश्य मल की परीक्षा करें। आमवात में दस्त कम होता है पेट फूला रहता है, कांति-

सार में अति पतला मल युक्त, हैजामें पानी के समान पतला मल रहित और ग्रहणी रोग में कच्चा अन्न सहित दस्त होता है, जिसके पेट में कृम (केंचुआ आदि) हो जाते हैं उसका भी दस्त पतला होताहै परन्तु उसका जी भी मचलाता रहता है ॥

वर्ण परीक्षा ।

वात रोगी अर्थात् जिन्हें वायु दोष से रोगोत्पन्न हुआ हो उसका शरीर रूखा, रंग धूमर, रोग वृद्धु में किञ्चित पीला होगा, पित्त रोगी का शरीर पीला तेल लगाया सरीखा, कफ रोगीका शरीर चिकना और स्वेत रंगका होता है मिश्रित रोगों में मिश्रित रंग जानना । किसी किस्म का रोग क्यों न हो अधिक दिन बना रहने से शरीरका रंग पीला हो जाता है ॥

स्पर्श परीक्षा ।

वायु कोप से रोगी का शरीर शीतल, कफ से शीतल और चिपचिपा तथा पित्त से उष्ण होता है मिश्रित दोषों में मिश्रित जानना, ज्वर चाहे जिस दोष से हो परन्तु शरीर उष्ण ही होगा ॥

आर्तव परीक्षा ।

स्त्रियों के द्वादश वर्ष वयस से ५० वत्सर पर्य्यन्त प्रतिमास में जरायु से योनि पथ द्वारा रज का रक्त निर्गत होता है स्वाभाविक मासिक रक्त का वर्ण शशा (खरगोश) के रक्त के समान अथवा लाही के रंग के भांति होता है विशुद्ध मासिक रक्त यदि वस्त्र में लग जाय तो धोने से छुट जाता है । प्रति मास के अन्त में चिकनहट, दाह, शूल बर्जित तीन दिवस स्थायी न बहुत अधिक न अति न्यून निःशत आर्तव निर्दोष जानना, उपरोक्त प्रकार नियमित समय में मासिक न होने ही से स्त्रियों

को शारीरिक वो मानसिक विविध कष्ट दायक रोग उत्पन्न हो जाता है मासिक की शुद्धता से स्त्रियां आरोग्य प्रसन्न चित्त सब अङ्गों में बलवती बनी रहती हैं अतएव स्त्रियों के आर्तव का अनुसन्धान सर्वदा करना अत्यावश्य है ॥

स्वप्न परीक्षा।

यद्यपि यह बात बहुत सत्य है कि जाग्रत् अवस्था में जो कुछ मनुष्य देखता सुनता है तज्जनित वासना निद्रा समय में वही प्रतीत होती है इससे स्वप्न कोई वस्तु नहीं है तथापि स्वप्न का फलाफल भी असत्य नहीं है। जो मनुष्य स्वप्न में देखे कि एक भयङ्कर मनुष्य अंगभंग शिर मुड़ाये लाल काले वस्त्र पहिने हाथमें फांसी या छूरी तलवार लिये किसी को मारता बांधता दक्षिण दिशाको लिये जाताहै या चला जाता है, अथवा गदहा ऊंट भैंसा पर सवार है, तो स्वप्न दर्शक यदि आरोग्य हो तो रोगग्रस्त होय और रोगी हो तो मृत्यु को प्राप्त होय ॥

स्वप्न में ऊंचे से नीचे गिरा, जल में डूबा, अग्नि में जलता, विपत्ति में पड़ा, जलचर आदि के मुख में लीलता हुआ, दीपक और नेत्रों का नाश दीखे, व तिल या सुरा पिये, पकवान खावे, तिल या लोहा पावे, कुआं में गिरे, रसातल में चला जाय, कीचड़ में फंसे, नाचे नंगा हो कर लाल माला शिर पर धारण करे, माता के गर्भ में प्रवेश करे ऐसे स्वप्न देखने वाला आरोग्य हो तो रोगी हो, और रोगी हो तो मृत्यु को प्राप्त हो। रात्रि के प्रथम प्रहर में स्वप्न देखने से उसका फल एक वर्ष में मिलता है, दूसरे प्रहर में देखने से ६ महीने में, तीसरे प्रहर में देखने से तीन महीने में और सूर्योदय वेला में स्वप्न देखने से दश रोज में शुभाऽशुभ का फल मिलता है। दुस्स्वप्न देखने की शांति शास्त्रकारों ने इस भांति लिखाहै, कि दुस्स्वप्न देख कर किसी से न कहे सबेरे स्नान करके वेद का पाठ करे। वेदाध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को स्वर्ण और

तिल का दान देय तो दुस्स्वप्न नष्ट हो । यदि स्वप्न में देवता तीर्थस्थान मन्दिर राजा जीवित मित्र ब्राह्मण गौ यज्ञ देखे । तथा मैले जलमें पैरते अटारी पर्वत हाथी और घोड़ा पर चढ़ा दीखे एवं स्वप्न में शत्रु को जीते और श्वेत पुष्प सूक्ष्म वस्त्र मांस मत्स्य फल इत्यादि अगर रोगी दीखे तो आरोग्य हो, और सुखी दीखे तो धन प्राप्ति हो। जिन स्त्रियों का गमन (प्रसङ्ग) अयोग्य (दुर्लभ) है स्वप्न में उनसे गमन करै, मल लपेटा, मरता कच्चा मांस खाता और जोंक भवरी सर्प बिच्छू माखी इन्हे इसते देखे तो उत्तम है ॥

दूत परीक्षा ।

चिकित्सक को इतनी बातों पर अवश्य ध्यान रखनाचाहिये कि जो रोगी का मनुष्य बुलाने को आवे तो उसकी चेष्टा, चिन्ह, वर्ण, वस्त्र, वाक्य, समय, दिशा, वाहन, वेश तथा देश इत्यादि अच्छेप्रकार देख ले तब रोग आराम करने को जावे, इसी से हमारे भूतपूर्व वैद्यों का यश अब तक विख्यात है ये लोग इन्हीं लक्षणों से घर बैठे रोगी की दशा और साध्या साध्य बता देते थे ॥

यदि दूत (वैद्य को लिवा ले जाने वाला) सफेद वस्त्र पहिरे हुआ, गोरा स्वरूपवान, स्वजातीय, धीरज, बुद्धियुक्त, आभूषण पहिरे, मङ्गल पदार्थ हाथ में लिये पाव पयादे अथवा बैल घोड़े और पालकी पर सवार सन्तोषी और स्वतन्त्र तथा उपरोक्त लक्षण युक्त मनुष्य वैद्य को बुलाने को आवे तो वैद्य जान लेय कि रोग साध्य है और रोगी आराम हो सक्ता है । और वैद्य भी शुद्ध जगह पर पूर्वाभि मुख शान्ति रूप में बैठा हो । अङ्ग में पसीना युक्त मध्यान्ह काल में अग्निसमीपस्थ वैद्य के पास आया हुआ दूत कफ रोग के लिये श्रेष्ठ है, परन्तु पित्त रोगके लिये अशुभ जानना तथा रक्त पित्त अतीसार, प्रमेह और संग्रहणी रोगमें जहां

पानी भरा होय उस जगह पर दूत का मिलना श्रेष्ट है, सुन्दर हवा च लते हुयेमें दूत आया हुआ वातरोगी के लिये श्रेष्टहै। पित्तरोगके वास्ते सवेरे, कफ रोग के वास्ते दोपहर को और वात रोग के वास्ते अर्धरात्रि को आया हुआ दूत उत्तम जानना इससे अतिरिक्त अशुभ जानना ॥

अशुभ सूचक दूत।

बाल, वृद्ध, स्त्री दो तीन या चार मनुष्य एकट्ठे असभ्य बातें कहते नैऋत्य आग्नेय अथवा दक्षिण से आते। शस्त्र पाषाण भस्म हाड़ इनको हाथ में लिये तथा रोगी बहिरे दीन मलीन भूखे पियासे थके अङ्ग हीन (काने इत्यादि) अधिक अङ्ग वाले (छँगुनआदि) भ्रमित नेत्र बिकार वाले (ऐंचाताने) खच्चर आदि पर सवार कंचेस्वर से बोलते भये पाखंडी लूले लोदे अङ्गवाले तिनका तोड़ते भये जल्दी चलो २ ऐसे कहते हुये इत्यादि दूत निन्दित हैं इनके वक्त में वैद्यों को जाना योग्य नहीं है और भी अ नेक उदाण अशुभ दूतों के लिखे हैं ग्रन्थ बढ़जानेके भय से नहींलिखा ॥

शरीर लक्षण।

बुद्धिमान मनुष्यों को उचित है कि प्रतिदिन अपने शरीर की समा- लोचना इस प्रकार किया करें कि जिन २ पदार्थों से शरीर स्थित है उन में से कौन २ से पदार्थ कम हो गये हैं कौन २ से वृद्ध हो गये हैं और कौन २ अपने मर्जादा पर हैं अर्थात् सम हैं। शरीर में असंख्य ऐसे २ आशय ईश्वर ने बना दिये हैं कि जिनके न्यूनाधिक होनेही से शरीर नष्ट भ्रष्ट होने का संभव है परन्तु विशेष कर बात पित्त कफ रस रक्त मांस मेद (चर्बी) मज्जा शुक्र धातु पुरीष (मल) मूत्र और पसीना और स्त्रियों के रज इन में जहां एक आध भी कमजादा हुये कि बिमारीआई इस लिये इनके सम रखने में सर्वदा चैतन्य रहे ॥

प्रत्येक देहधारी के लिये बाह्य और अभ्यन्तर वायु की जरूरत है ऊपर की वायु जीव मात्र को चैतन्य रखती है और भीतर की वायु सब पदार्थों को भिन्न २ स्थानों में पहुंचा देती है क्योंकि ॥

पित्तंपंगुकफःपंगु पंगवोमलधातवः । वायुनायत्रनीयन्ते तत्रगच्छन्तिमेघवत् ॥

पित्त कफ मल मूत्र रस रक्त आदि सातों धातु यह सब लंगड़े हैं वायु जहां इन्हें अपनी शक्ति से ले जाती है वहीं वे मेघ के समान चले जातेहैं इसीसे वायु तीनों दोषोंमें प्रबलहै और सुश्रुतमहाशय जी ने वायु ही को प्राणियों के स्थित उत्पत्ति और विनाश का कारण माना है। वायुके प्रधान गुण सूक्ष्म शीतल रूक्ष हलकी और चरहै और शरीरके पांच भागों में पांच नाम से विख्यात है अर्थात् जो वायु मलाशय में है उसका नाम (अपान वायु) है अग्निस्थान में (समान वायु) हृदय में (प्राणवायु) कण्ठ में (उदान वायु) और सब शरीर में (व्यान वायु) रहती है वायु के न्यूनाधिक तथा कोप से सब विकार युत हो जाते हैं और वायु के शुद्ध रहने से सब शुद्ध रहते हैं ॥

वातक्षय के लक्षण सु० अ० २८ ।

वातक्षये मन्द चेष्टताल्पवाक्त्वमल्पहर्षो मूढ़ संज्ञताच । जब शरीर के भीतर की वायु कम हो जाती है तो (मन्दचेष्टा) शरीर ढीला शिथिल और मन उदास रहता है अल्प वचन अल्प हर्ष संज्ञा नाश-अर्थात् याद दास्त कम हो जाती है। पाठक गण! सेवाय वायु बढ़नेके वायु का कम होना कम सुना होगा ॥

वात वृद्धि के लक्षण ।

वातवृद्धौत्वक्पारुष्यं कार्श्यंकार्ष्ण्यं गात्रस्फुरणं मुष्णकामिता निद्रानाशोल्पबलत्वं गाढ़वर्चस्त्वञ्च ।

वायु के अधिक हो जाने में त्वचा की परुषता कृशता सब शरीर फरकना गर्मी की इच्छा निद्रा नाश या निद्रा उचट जाना बल हीन और मल सूखा एवं थोड़ा होता है॥

वायु कोप के लक्षण।

प्रायः वात प्रकृत वालों को कडुआ तीता कषायल रूक्ष अन्न (बाजरा आदि) हिम अन्न (बासी चावल आदि) और सिरका खाने से उपवास से भय से कामदेव निकलने से बहुत जल में पैरने से रुधिर निकलने से और वर्षा काल से अतिरिक्त दिनों में वाहर घेरे रहने से वायु कोप करता है। तब यह लक्षण होते हैं सिर कनपटी में छाती पीठ की रीढ़ कमर हड्डी और जोड़ों में दर्द दिशा पेशाब कम होना पेटफूलना और बोलना जी घबड़ावे नींद न आवे नेत्रों में नशा सा बना रहे शरीर थकी और रूखी रहै इत्यादि उपद्रव होते हैं॥

वात प्रकृति के लक्षण।

शिर के बाल मलीन और कम शरीर दुर्बल तथा रूक्ष बहुत बकवाद करने वाला मन चलायमान और आकाश चारी स्वप्न देखै तो वातप्रकृत जानना इस प्रकृत के मनुष्य विद्वान शास्त्रार्थ अधिक करता है और (मूर्ख) डाकू एवं भागने वाला होता है और मल्ल युद्ध में बड़ा बलवान होता है आजकाल बहुत काम शुद्ध वायु प्रकृति के लोग दिखलाई देते हैं तांतियाभील जिसका चर्चा प्रायः समाचार पत्रों में रहता है वेशक उसकी शुद्धवात की प्रक्रिति थी॥

डाक्टरी मत से वात प्रकृति के लक्षण।

जिसका शरीर दुबला मांसपेशी संपूर्ण कोमल औ पतला मुख खूबसूरत केश साफ़ मलीन और अलग २ एवं शरीर का रंग किंचित सुर्खी लिये सफ़ेद ओठ पतला नेत्र उज्वल तेजोविशिष्ठ नाड़ी सूक्ष्म वेगवान मन के थोड़ी

सी वेगमें नाड़ी उत्तेजित हो जाय मस्तिष्क वह समस्त स्नायु पदार्थ गुण विशिष्ट हों । ख्यालात बहुत बढ़की हों अनुमान और कल्पनाशक्ति तीक्ष्ण अर्थात् मजमून बनाने में एकही हो विषय चिन्ता तथा किसी कार्य के लिये शीघ्रही तैय्यर हो जाय और सामान्य २ बातों में भी क्रोध अमजाय तो उसे वातप्रकृति जानना । इस प्रकृति वाले को शैत्य द्रव्य खाने तथा सेवन से किसी प्रकार की पीड़ा आदि नहीं होती इसलिये अपनी प्रकृति शुद्ध रखनेके लिये वात प्रकृति वाला शैत्यद्रव्य का सेवन प्रायः करे ॥

वृद्धि तथा कोप वायुशमन, वर्ग ।

शरीर में तेल मर्दन करना तख्त पर सोना ऊपरी तेल हवा का बचाना गोता मार के स्नान करना सिर में तेल का फुवाड़ा देना, घी, नया वर्ष तिल गेहूं, मूंग, लाल धान, गुनगुना जल, गेंड़ा, सूअर, भैंसे, हिरण, मुरगा, मंगर, कछुआ, रोहूमछली, आदि. जीवों की मांस, गोमूत्र, पियाज, लहसुन, मुनक्का, पका आम, आवला, मीठा अनार, कैथा, बड़, पका ताड़ का फल, बिनी गौ का दूध, सैंधव नोन, इत्यादि गुण वेदों ने पथ्य कहा है ॥

पित्त ।

रस का रक्त करना पचाना समर्थ तेज बुद्धि उष्णता कारक पित्त है सो पांच भेद से अग्नि कर्म करता है । प्रधान गुण पित्त के गर्म हैं और पतला पीला नीला सतोगुणी एवं रस उसका कटु है तीता है और जलने से खट्टा हो जाता है । शरीर के पांच स्थानों में रह कर पांच कर्म करने से पित्त का पांच नाम है पाचक, भ्राजक, रंजक, आलोचक, और साधक जो पित्त अग्नि के स्थान में अन्न पचाने के लिये रहता है सो अग्नि से भी अधिक तेज और सिर्फ तिल के समान है किसी २ ग्रन्थों में लिखा है कि भारी शरीर में अर्थात् हस्ती ऊंट आदि जीवोंके शरीर में कुछ बड़ा है परन्तु मनुष्य मात्र के शरीर में देश कालानुसार किञ्चित

न्यूनाधिक तिल के समान है एवं कीट पतंगादिकों के शरीर में रोमाग्र सम होता है। सो पित्त का नाम (पाचक) है। जो पित्त तेल उबटन आदि जिल्द में लिपटे हुये पदार्थों को अपनी शक्ति से शोष लेता है उसका नाम (भ्राजक) है। और जो रस को रक्त बनाता है उस पित्त का नाम (रंजक) है। जो पित्त नेत्रों में रह कर रूप दिखाता है उसका नाम (आलोचक) है। और बुद्धि तथा धारणा चैतन्य रखनेवाला हृदय निवासी पित्त को (साधक) कहते हैं। पित्त के भी कम ज्यादा और कोप से शरीर नाशक हैजा आदि उपद्रव खड़े हो जाते हैं॥

पित्तक्षय के लक्षण।

"पित्तक्षये मंदोष्माग्निता निष्प्रभत्वंच"

पित्त के कम हो जाने से अन्तस में मन्द गरमी और प्रभा नाश होते हैं॥

पित्त वृद्धि के लक्षण।

पित्तवृद्धौ पित्तावभासिता सन्तापः शीतकामित्व मल्प-
निद्रता मूर्च्छा बलहानिरिन्द्रियदौर्बल्यं पीतविण्मूत्रनेत्रत्वंच॥

पित्त के बढ़ जाने में शरीर का रंग पीला हो। जलन शीतल पदार्थों का चाहना अल्प निद्रा शिर में घुमरी और आंखों के सामने अंधियारा हो जाना बल हानि इन्द्रिय दुर्बल एवं नेत्र और मूत्र पीले हों॥

पित्त के कोप करनेवाले वर्ग।

तिल सिरका शराब दही मछली बहुत तेल और गरम द्रव्य अति

सो वेगमें नाड़ी उत्तेजित हो जाय मस्तिष्क यह समस्त स्नायु. पदार्थ गुण विशिष्ट हों। ख्यालात बहुत बढ़के हों अनुमान की कल्पनाशक्ति तीक्ष्ण अर्थात् मजबूत बनाने में एकही हो विषय चिन्ता तथा किसी कार्य के लिये शीघ्रही तैय्यार हो जाय और सामान्य २ बातों में भी क्रोध आजाय तो उसे वातप्रकृति जानना । इस प्रकृति वाले को पथ्य द्रव्य खाने तथा सेवन से किसी प्रकार की पीड़ा आदि नहीं होतो इसलिये अपनी प्रकृति शुद्ध रखनेके लिये वात प्रकृति वाला पथ्यद्रव्य का सेवन प्रायः करे॥

वृद्धि तथा कोप वायुशमन, वर्ग ।

शरीर में तेल मर्दन करना तख्त पर सोना ऊपरी तेज हवा का बचाना गोता मार के स्नान करना सिर में तेल का फुवाड़ा देना, घी, नया उर्द तिल गेहूं, मूंग, लाल धान, गुनगुना जल, गेंड़ा, सुअर, भैंसे, हिरण, मुरगा, मंगर, कछुआ, रोहूमछली, आदि, जीवों के मांस, गोमूत्र, पियाज, लहसुन, मुनक्का, पका आम, आवला, मीठा अनार, कैथा, बड़, पका ताड़ का फल, बिनी गौ का दूध, सैंधव नोन, इत्यादि गुण वैद्यों ने पथ्य कहा है॥

पित्त ।

रस का रक्त करना पचाना समर्थ तेज बुद्धि उष्णता कारक पित्त है सो पांच भेद से अग्नि कर्म करता है । प्रधान गुण पित्त के गर्म हैं और पतला पीला नीला सतोगुणी एवं रस उसका कटु है तीता है और जलने से खट्टा हो जाता है । शरीर के पांच स्थानों में रह कर पांच कर्म करने से पित्त का पांच नाम है पाचक, भ्राजक, रंजक, आलोचक, और साधक जो पित्त अग्नि के स्थान में अन्न पचाने के लिये रहता है सो अग्नि से भी अधिक तेज और सिर्फ तिल के समान है किसी २ ग्रन्थों में लिखा है कि सारी शरीर में अर्थात् हस्ती ऊंट आदि जीवोंके शरीर में कुछ बड़ा है परन्तु मनुष्य मात्र के शरीर में देश कालानुसार किञ्चित

करने से पित्त मिश्रित वमन हाथ पेट एवं पैर में जलन कभी २ खट्टी डकार आने लगती है इसलिये उसे उपवास अथवा अधिक काल बिता कर भोजन करना अतीव अकर्तव्य है और अग्नि सेवन अथवा अग्नि के निकट भी न रहना चाहिये। ऐसे लोगों को दुग्ध सेवन अति श्रेयस्कर है॥

वृद्ध तथा प्रकोप पित्त के शमन कारक वर्ग।

घी, दूध, मिश्री, मक्खन, खोवा, सफेद पुरानाचावल, गेहूं, अरहर, चना, मूंग, जौ, मसूर, बासी साग, धान का लावा, केला, कटहर, खीरा, मुनक्का, कोमल परवर, कुम्हड़ा, ककरी, करेला, अनार, आवला, कोमल ताड़के फल, छुहारा (औषधवर्ग) त्रिफला, पित्तपापड़ा, सतावरी, कुटकी, नींब, सिरस, चन्दन, (विहार) अच्छा शीतल बाग फुवारों का घर केला और कमल के नवीन पत्तों की सेज कपूर और स्वेत चन्दनका लेप मित्र का मिलना प्यारी बातें तथा मनोहर रागों का सुनना अच्छे नाच का देखना मन्द पवन जल का छिरकना चन्द्रमा की ज्योत्स्ना और नाना प्रकार की शीतल विधि यह वर्ग पित्ताधिकारियों के लिये पथ्य कहा गया है॥

कफ।

संधि बंधन शरीर में स्निग्धता रोपण, पूर्ण बल स्थिरता कारक कफ है पांच भेद से जल कर्म करता है। कफ का प्रधान गुण चिकना भारी स्वेत लसलसा ठंढा और मधुर है. परन्तु बिगड़ जाने पर नुनखरा हो जाता है कोई २ कफ को हलका कहते हैं इसलिये कि पानी पर तिरता है। इसका कारण यह है कि कफ स्निग्धता करके पानी में प्रवेश नहीं करता वास्तवमें गुरुही है। आमाशय माथा कण्ठ हृदय और संधि इन्हीं पांचों स्थानों में कफ क्रमशः पांच नाम से (क्लेदन, स्नेहन, रसन, अव-

खट्टा क्रोध घाम और अग्नि का सेवन (व्रत) उपवास और जिन द्रव्यों के सेवन से दाह हो प्रायः इनसे पित्त क्रोधित हो जाता है ॥

पित्त-कोप के लक्षण ।

घुमरी अन्तर दाह मूर्छा दस्त पतला पसीना त्वचा (गर्म) में जलन आल लाल चकत्ता मुख नेत्र दिशा पेशाब और मल पीले नेत्र में नशा पियास मुख का स्वाद तीता अथवा खट्टा हो और समस्त शरीर पके फोड़े के समान दूखें इत्यादि लक्षण पित्त कोप में होते हैं ॥

पित्त प्रकृति के लक्षण ।

लघु शरीर बुद्धि तीव्र अधिक क्रोध पसीना अधिक शरीरसे निकले स्वप्न में अग्नि आदि तेज पदार्थ दीखे अकाल पलित अर्थात् बाल सफेद पकजाना साधारण लक्षण यह पित्त प्रकृत वाले मनुष्य को जानना ॥

डाक्टरी मत से पित्त प्रकृति के लक्षण ।

जिसका शरीर न अति स्थूल और न अति ह्रस्व । मांस पेशी सकल अधिक सख्त, उग्र मूर्ति; मुख श्री तेजस्वी एवं मुख मण्डल आंतरिक भाव प्रकाशित (दमकता हुआ चेहरा) बाल कड़े और काले नेत्र कृष्ण वर्ण कटीले, शरीर श्याम वर्ण रक्त वाही नाड़ी अधिक विस्तृत एवं शरीर के ऊपर भाग में रगें दृष्टिगोचर हों । स्वभाव उसका अनेक गुण विशिष्ट क्या शारीरिक क्या मानसिक कार्य्य में दृढ़ प्रतिज्ञ हो उसे पित्ताधिक्य अथवा पित्त प्रकृति जानना ॥

इस प्रकृति के मनुष्य को प्रायः पांडु यकृत (लीवर) अजीर्ण रोग हो जाता है शराब आदि नशे की वस्तु सेवन से रक्त प्रकृति के समान स्वभाव हो जाने का सम्भव है । प्रायः इस प्रकृति के मनुष्यों को व्रत

दस्त खुश्की और अरुचि, खाना अच्छा न लगे, जिह्वा में कफ लपटा सा रहै आलस लगे पेट भरा सा रहे मुख का जायका नमकीन और मुख की रंगत सफेद इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

कफ प्रकृति के लक्षण।

मोटी बुद्धि स्थूल शरीर चिकने केश महाबल और स्वप्न में जल आदि वस्तुओं को अधिक देखे इत्यादि साधारण लक्षण कफ प्रकृति वाले के होते हैं। शरीर का वर्ण पृथ्वी पर निर्भर है जहां जैसा पृथ्वी का गुण होता है वहां वैसेही रंग वाले जीव होते हैं बात पित्तादि प्रकृति के अनुसार जो केचित आचार्यों ने शरीरके रंग का वर्णन किया है सो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध नहीं होता है क्योंकि जैसे विलायतके मूसा आदि जीव सभी गौरांग होते हैं काश्मीर पंजाब आदि स्थल के भी जन प्रायः गोरे होते हैं मद्रास के लोग मात्र काले होते हैं परन्तु प्रकृति भिन्न २ हैं तो इससे स्पष्ट है कि त्वचा की रंगत पृथ्वी के गुण से बनती है ॥

डाक्टरी मत से कफ प्रकृति के लक्षण।

जिसकी शरीर मोटी और गोल मांसपेशी समस्त कोमल बाल नेत्र और शरीर श्याम वर्ण ओठ मोटे रक्त वाही नाड़ी सूक्ष्म और रक्त संचालन अल्प थोड़े शैत्य द्रव्य के सेवन से भी अङ्ग में दर्द होने लगें शारीरक वा मानसिक क्रियां शक्ति मृदु अथवा माधूर्य्य हो इत्यादि उसे कफ प्रकृति जानना ॥

कितने लोगों को सुरादि मादक द्रव्य के सेवन से हृष्ट पुष्ट होते देखा गया है उसे भी कफ प्रकृति कहना चाहिये कारण यह है कि जिस की कफ प्रकृति है उसे अधिक नशा पान भी प्रथमतः हानि कारक नहीं

लम्बन, और श्लेषम) स्थित हो शरीर को पुष्ट-रखताहै जिस प्रकार तेल चरबी आदि के संयोग से रथ की पहिया चलती है वैसाही कफ के संयोग से शरीर की हड्डियां स्नायु आदि बिना श्रम फिरा करती हैं ॥

कफक्षय के लक्षण ।

श्लेष्मक्षये रूक्षतान्तर्दाह आमाशये तराशयशिरसां । शून्यतासन्धि शैथिल्यं तृष्णा दौर्बल्यं प्रजागरणञ्च ॥

कफक्षय में रूक्षता अन्तर्दाह आमाशय अन्तराशय और शिर शून्य मालूम हो जोड़ जोड़ ढीले पियास शरीर दुर्बल निद्रा नाश यह लक्षण होते हैं ॥

कफ वृद्धि के लक्षण ।

श्लेष्मवृद्धौ शौक्ल्यं शैत्यंस्थैर्यं गौरव मवसादस्तन्द्रानिन्द्रा सन्ध्यस्थि विश्लेषश्च ॥

कफ के बढ़ने से मल मूत्र नेत्र और अंग में सफेदी शरीर में ठंढक और भारीपन, निद्रा अधिक, संधियां शिथिल तथकाई मुख से लार का गिरना ये लक्षण होते हैं ॥

कफ कोप कारक वर्ग ।

दूध दही भारी नया और शीतल अन्न और शीतल जल अजीर्ण भोजन अति खट्टी वस्तु अति बैठना घी तिल मछली दिन के सोना इत्यादि वर्ग कफ को क्रोधित करते हैं और बसंत ऋतु में तो अवश्यही ॥

श्लेष्म कोप के लक्षण ।

... शरीर भारी त्वचा ओदा शोथ आलस्य अधिक निद्रा अधिक गाढ़ा

दस्त खुजली और अरुचि, खाना अच्छा न लगे, जिह्वा में कफ लपटा सा रहे आलस्य लगे पेट भरा सा रहे मुख का जायका नमकीन और मुख की रंगत सफेद इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

कफ प्रकृति के लक्षण।

मोटी बुद्धि स्थूल शरीर चिकने केश महाबल और स्वप्न में जल आदि वस्तुओं को अधिक देखे इत्यादि साधारण लक्षण कफ प्रकृति वाले के होते हैं। शरीर का वर्ण पृथ्वी पर निर्भर है जहां जैसा पृथ्वी का गुण होता है वहां वैसेही रंग वाले जीव होते हैं वात पित्तादि प्रकृति के अनुसार जो केचित आचार्यों ने शरीरके रंग का वर्णन किया है सो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध नहीं होता है क्योंकि जैसे विलायतके मूसा आदि जीव सभी गौरांग होते हैं काश्मीर पंजाब आदि स्थल के भी जन प्रायः गोरे होते हैं मद्रास के लोग मात्र काले होते हैं परन्तु प्रकृति भिन्न २ हैं तो इससे स्पष्ट है कि त्वचा की रंगत पृथ्वी के गुण से बनती है ॥

डाक्टरी मत से कफ प्रकृति के लक्षण।

जिसकी शरीर मोटी और गोल मांसपेशी समस्त कोमल बाल नेत्र और शरीर श्याम वर्ण ओठ गोरे रक्त वाही नाड़ी सूक्ष्म और रक्त संचालन अल्प थोड़े शैत्य द्रव्य के सेवन से भी अङ्ग में दर्द होने लगें शारीरक वा मानसिक क्रियां शक्ति मृदु अथवा माधूर्य्य हो इत्यादि उसे कफ प्रकृति जानना ॥

कितने लोगों को सुरादि मादक द्रव्य के सेवन से हृष्ट पुष्ट होते देखा गया है उसे भी कफ प्रकृति कहना चाहिये कारण यह है कि जिस को कफ प्रकृति है उसे अधिक नशा पान भी प्रथमतः हानि कारक नहीं

होता परन्तु क्रमशः कफ को नष्ट कर के अन्त में शरीर को भी नष्ट कर देता है, इस लिये कफ प्रकृत विशिष्ट जन कदापि मादक द्रव्य सेवन न करें । ऐसे मनुष्य को जाड़े के दिनों में और वर्षा काल में फलालैन का कपड़ा पहनना और सांझ सवेरे चाय पीना चाहिये और अम्ल, दधि, माठा, बासी अन्न इत्यादि शैत्य कारक द्रव्य सेवन न करना चाहिये ॥

जिस प्रकार से हमारे वैद्यक शास्त्र में दो दोषों के लक्षण मिलनेसे द्वन्दज प्रकृति कहा है और तीनों के लक्षण मिल जाने से त्रिप्रकृत कहा है उसी प्रकार डाक्टरी में भी कहा है भेद इतनाही है कि हमारे यहां सिर्फ तीन प्रकृति प्रधान रक्खा है डाक्टरी में चार अर्थात् एक रक्त प्रकृत और भी कहा है जिसे नीचे लिखे देते हैं ॥

रक्त प्रकृति के लक्षण ।

जिसका शरीर स्थूल वा कृष हो बाल कड़े नेत्र नील वर्ण मुख घन कील सुन्दर गुलाब के पुष्प के भांति, चमड़ा कोमल और पतला नाड़ी वेगवान वो पूर्ण रक्तवाही नाड़ी त्वरित वेग से रक्त सञ्चालन, मनोवृत्ति सकल शीघ्र उत्तेजित और मन की गति स्थिर और चञ्चल हो उसे रक्त प्रकृति कहते हैं । जिस प्रकार खेत में बीज डालने से शीघ्रही अंकुर निकल आते हैं तद्रूप मद्यादि पानकरने का फल इस प्रकृति वाला प्राप्त करता है और विचारी स्त्री को पुत्रादिकों से अनाथ कर अनति काल मध्य मेंही आप भी देह भाव से विमुक्त होता है । इस प्रकृति वाले को मद्य पान अति भोजन अत्याधिक स्त्री सहवास करने से प्रायः सन्निज्वर बलवान दाहरोग और रक्त स्रावादि रक्तरोग हो जाता है ॥

विचित्र प्रकृति ।

इस प्रकृत के तीन प्रकार के मनुष्य हैं प्रथम—जिसे पारद घटित औषध अल्प परिमाण अर्थात् एक रत्ती भी खा लेने से मुख आ जाताहै

अथवा मुख से राल बहने लगता है और उतनाही पारा या उस से कुछ अधिक भी खा लेने से दूसरे को कुछ भी नहीं होता ॥

द्वितीय—कितने लोग संसार में ऐसे देखने में आये हैं कि जिसे मछली अण्डा आदि का मांस फल और शाग पात खाने से अजीर्ण रोगहो जाता है और किसी २ को जिल्द की बिमारी हो जाती है ॥

तृतीय—और कितने ऐसे स्वभाव के मनुष्य हैं जिन्हें धारक औषध *अर्थात् अफीम खाने से विरेचक गुण यानि दस्त आता है एवं विरेचक* औषध (एवसम् साल्ट) के खाने से मादक गुण याने नशा करता है। ज्वरघ्न औषध (कुनाइन) के सेवन करने से मुख मध्य में औ अन्यान्य स्थान में भी घाव हो जाता है। इसी प्रकार हरएक प्रकृत के लोग हैं कि एकाएकी अलपच्च चिकित्सक प्रायः चीन्ह नहीं सक्ता इसी दोष के परिहार के लिये सरकार ने एक २ पारिवारिक चिकित्सक नियुक्त कर दिया है ॥

श्लेष्म कोप वृद्धादि हारक वर्ग वैद्यक से।

वमन लंघन आंखों में अञ्जन देना स्त्री प्रसंग शरीरमें उबटन और तेल का मर्दन करना पानी कम पीना दांतुन और कुल्ला देर तक करना हाथी घोड़े की सवारी अधिक कपड़ा पहनना अधिक परिश्रम तथा मार्ग चलना कुस्ती लड़ना नाश लेना गरम द्रव्य अधिक खाना पुराने धान साठी के धान चना मूंग कुरथी गरम पानी मरु देश के जानवरोंके मांस राई बैंगन गूलर लहसुन पिआज परवर केले का फूल जमीकन्द नीम कुटकी निसोत शहद का शरवत पीना जरा २ सा मद्य पीना त्रिफला का सेवन गो मूत्र अच्छा गरम घर इत्यादि गुण कफाधिकारियों के लिये हित कहा है ॥

लक्षण ।

डाक्तरी मत से यदि उष्णधातु यह प्रकृति भी पित्ताधिक्य प्रकृति की भांति जानना सिर्फ इतनाही फर्क है कि इस प्रकृति वाले मनुष्य के चित्त में सर्वदा (जो स्वप्नवत है) अनेकानेक विषय प्राप्त होने की इच्छा उठा करती है और किसी कार्य की स्थिरता नहीं रहती जिसको चणिक बुद्धी कहते हैं इस प्रकृति के मनुष्य प्रायः पागल हो जाते हैं और गांजा चरस अफीम इत्यादि मादक द्रव्य सेवन करने से तो पागल होने में कुछ विलम्ब न जानना चाहिये ॥ :

जिसका जैसा शरीर का रूप रंग होता है वैसाही रोग भी उसे होते हैं जैसे जिसका मुख सुन्दर गोल, बाल चिकने और भिन्न भिन्न नेत्र सबुज आकाश वर्ण नेत्र पलक दीर्घ, और ऊपर का ओठ स्थूल होने से प्रायः गण्डमाला रोग होता है और ऊपर की समस्त लक्षण युत सिर्फ ऊपर के ओठ पतला होने से च्यकाश होने का सम्भव है। और छाती दीर्घ मुख भी सुन्दर, ओठ पतला और संधिस्थान के छोटे (गठीले शरीर) होने से मनुष्य बलवान होता है, और जिसकी छाती छोटी, मुख गोल, ऊपर के ओठ और संधि सकल बड़े होने से शरीर दुर्बल और कमजोर होता है ॥

श्री बाबू गिरने अनियमिताचार से आयुक्षय का कारण देखलाया है जो लोग बड़े आदमी हैं अर्थात् धन सम्पन्न हैं खाना पीना कपड़ा पहनना आदि उत्तम है, अनेक नौकर चाकर लगे हैं सेवाय नौकरों के क्या शारीरक क्या मानसिक किसी प्रकार का परिश्रम नहीं करते केवल अनर्थ कारी आमोद प्रमोद एवं बहुविध सुखद सामग्री पान भोजन तथा अहोरात्र सोवना या नाच मुजरा देखना इत्यादि ऐसे मनुष्यों का जीवन थोड़े ही काल में अपने स्थान को त्याग देता है और जितने दिन बचा भी रहता है तो आरोग्य नहीं रहता है। संसार के देखने से पाया जाता है कि खेती करने वालों का सामान्य खाना पीना पहनना रहता है, वर्षा में भीजते हैं ग्रीष्मऋतों में धूप

घटते हैं तो भी आरोग्य और दीर्घ स्थायी होते हैं। बड़े तजरुबे चिकित्सक महोदयों का परीक्षित कथन है कि खेतिहारों की अपेक्षा बड़े मनुष्यों का जीवन काल अल्प और बड़े आदमियों की अपेक्षा राजा वा राजपरिवारस्थ लोगों का जीवनकाल अति अल्प होता है। यह शरीर मानिन्द घड़ी के है अगर घड़ी बन्द कर रखदिया जाय तो थोड़े ही काल में मुरचा लग कर तमाम पुरजे खराब हो घड़ी सत्यानाश हो जाय सो वैसाही इस शरीर से बल के अनुसार काम न लेने से शरीर सत्यानाश हो जाता है परन्तु शक्ति से अधिक काम लेने में वही होता है॥

वीर्य्यज दोष।

जिस प्रकार सन्तान पिता के धन आदि के उत्तराधिकारी (पानेवाला) होता है वैसाही माता पिता के रोगों का भी अधिकारी होता है। जिस के गंडमाला, क्षय, काश, श्वास कुष्ट गठिया मृगी, उन्माद बहुमूत्र गरमी और प्रमेह होतो उसके सन्तान के भी वही रोग होगा, कुष्ठादि रोग तो तीन पुश्त तक होता है, हिताहित विवेक शून्य पुरुष इन्द्रियोपभोग में प्रवृत हो शरीर को नाना प्रकार के रोगों से असुखी करते हैं और जो सन्तान उत्पन्न होता है उसे भी रोग भोगना पड़ता है॥

अथ रस रक्त मांस मेद हड्डी मज्जा शुक्र पुरीष मूत्र और स्वेद (पसीना) इन के घट बढ़ जाने के लक्षण। सुश्रुत सूत्र स्थान अ०। १५॥

रसक्षये हृत्पीड़ा कम्पशून्यता तृष्णा च रसोऽति। वृद्धो हृदयोत्क्लेदं प्रसेकञ्चापादयति॥

आहार पच कर जो कुछ प्रथम शरीर में बनता है उसे रस कहते हैं वह रस कम हो जाने से छाती में दर्द कम्पन अङ्ग शून्य और पियास लगती है और बढ़ जाने में वमन और मुख से लार बहता है॥

शोणितक्षयेत्वक् पारुष्यमम्लशीतप्रार्थना । सिराशैथिल्य-
ञ्च रक्तेरक्ताङ्गाक्षतासिरापूर्णत्वञ्च ॥

शरीर में लोहू के कम होने से चमड़ा रूखा खट्टा खायका शीत पदार्थ को चाह और नस ढीले हो जाते हैं रक्त वृद्धि में नसें लाल फूली हुई तथा शरीर और आंख भी लाल होते हैं लोहू खब न होने से जिल्द की बिमारी हो जाती है जैसे सूजन दाह जलन बदन में फोड़े फुन्सी शरीर का रंग काला होजाना वात रक्त कोढ़ फीलपाव गण्डमाला देह दुर्गन्ध यकृत प्लीहा विसर्प आदि । शरीर में रक्त एक प्रधान वस्तु है डाक्तरों ने अनुमान किया है कि जवान मनुष्य के शरीर में ८ पौंड (४ सेर) से ३० पौंड (१५ सेर) पर्यन्त रक्त शरीर विशेष में है। श्रीयुत भेलेंगटोन साहब ने लिखा है कि पुरुष के शरीर में ३४॥ पौंड (१७ सेर) और स्त्री के शरीर में २६ पौंड (१३ सेर) रक्त है। रक्त का वजन जल की अपेक्षा कुछ भारी है रसायन विद्या के जानने वाले विद्वानों ने इस प्रकार तुलना किया है। एक पात्र में जल भरो यदि वजन में १० तोला हो तब उसी परिमित गन्धक का तेजाब भर कर वजन करने से १८॥ तोला होगा और उतना ही तेल भर कर तौले तो सिर्फ ८ तोला (अर्थात् तेल पानी से हलका है यही कारण है जो तेल जल के ऊपर रहता है) इस वजन को अंगरेजी में विशेष वजन कहते हैं। जिस पात्र में जल का विशेष वजन १००० तोला या रत्ती होगा उसमें उत-नाही रक्त १०५५ होगा विद्या की भी क्या महिमा है परमाणु से पर्वत तथा जीव से ब्रह्म पर्यन्त कौन सी ऐसी वस्तु है जो विद्या से न जानी जाती हो। जिस प्रकार डाक्टरों ने शरीर की गरमी सरदी मापने को ताप मान यंत्र (थरमा-मेटर) निकाला है वैसाही जलीय द्रव्य का लघुत्व गुरुत्व जानने के लिये एक यंत्र बनाया है उसके भी अधोभाग में पारद है और नल में चिन्ह बने हैं तैल जल सुरा रक्त आदि कोई द्रव्य वस्त हो उसमें डाल तत्क्षण वजन कर लिया जाता है डाक्टरी मत से रक्त के १००० भाग में ३ अति गाढ़ी वस्तु (अण्डा) है, १२७ भाग कण है, खुर्दबीन के देखने से यह वस्तु बहुत सी

छोटी २ नजर आवेंगी इन में से बहुत सी सुर्खरंग की और सफेद रंग की हैं जो सफेद रंग की गोलें हैं उनकी सूरत हरवक्त बदला करती है और उक्त दोनों कणों में और चीजें भी हैं जैसे नेट्रोजन हैड्रोजन आक्सिजन कोयला गन्धक लोहा आदि। ८० भाग लवणांश अर्थात् निमक का अंश है और ७५० जल का अंश है परन्तु शरीर रोगाभिभूत होने से पूर्वोक्त तौल का न्यूनाधिक हो जाता है॥

रक्त संचालन।

शरीर के मध्य में ऐसा कोई स्थान नहीं है कि जहां रगों के द्वारा रक्त न बहता हो। शरीर के किसी स्थान में सूक्ष्म सूवी (सुई) द्वारा बिद्ध (छेदन) करने से सब नाड़ियों से रक्त पात होता है इस से स्पष्ट होता है कि रक्त ही समस्त अंगों प्रत्यंगों को जिन्दा रखता है इसलिये पाठकगण को उचित है कि रक्त शुद्ध तथा सम रखने में अधिक दृष्टि करें। रक्त समस्त स्नायु शिराओं से घूम कर दिल में आता है जिसका वृत्तांत बहुत है परन्तु इस स्थल में हम साधारण तौर पर बयान किये देते हैं। आदमी का दिल बांई छाती से दो या तीन अंगुल नीचे रहता है (वैद्यक में इसे हृत्पिण्ड अथवा शोषक यंत्र कहतेहैं) और किसी किसी का दिल दहिनी तर्फ भी देखने में आया है परन्तु बहुत कम। दिल के नजदीक कान लगाने से आवाज सुनाई देती है। इसी आवाज को डाक्टर लोग लकड़ी का चोंगा लगा कर कान से सुनते हैं, दिल से सिर्फ यह बात जाहिर हो सकी है कि रक्त का गमनागमन कम ज़ादा या रुक तो नहीं गया है क्योंकि दिल व शरीर रोगाक्रांत होने से जो स्वाभाविक शब्द बदल जाता है यह शब्द कैसा है सेवाय सवाई के दूसरे में सामर्थ नहीं है कि कह सके, दिल में से जो शब्द बोध होताहै वह दिलके फैलने और सिकुड़ने से, कारण यहहै कि जब दिलमें खून आता है तब सिकुड़ जाताहै और फैलनेसे रक्त बाहर निकल जाता

है इसी से दिल धक २ किया करता है । जो रक्त छोटे बड़े रगों में संचालन करता है वह रक्त प्रायः १ मिनट में १५० फुट पर्य्यन्त वेगवान है इसी प्रकार जो रक्त सब रगों से घूम कर दिल में जाता है उसके आने जाने में दिल एक रात दिन में १००००० एक लक्ष बारसे कुछ अधिक बार भी संकुचित वो प्रसारित होता है । और कितनों का मत है कि एक मिनट में दिल ७० बार धड़कता है तो इस हिसाब से प्रति घण्टा ४,२०० बार एवं ४ में १ पल लक्ष ८ सौ बार होता है । यह काम यावज्जीवन क्या जाग्रतावस्था क्या स्वप्नावस्था सुषुप्तावस्था कोई अवस्था क्यों न हो कभी बन्द नहीं होता दिन रात में वाम हृदय से इतना रक्त बहिर्गत अर्थात् निकल कर रगों में जाता है कि जिस के सुनने से एक अचम्भा मालूम होगा । आयुर्वेद वित विद्वानों ने निरूपण किया है कि जिस समय प्रायः १३०० तेरा हजार पौण्ड रक्त हृदय से बाहर हो तब जाके सब शरीर में व्याप्त होगा । यदि प्रतिबार न्यूनाधिक १॥ औंस (४।।।) तोला) परि मित रक्त हृदय से बहिर्गत हो तब १००८०० बार में १५१२०० औंस रक्त होता है उसे १२ से भाग देने में १२६०० पौंड रक्त होगा । इतना खून जो कहो हृदय के भीतर है सो नहीं सिर्फ दिवा रात्रि में इस कदर रक्त का गमनागमन होता है । डाक्तरों का मत है कि रस से रक्त बन प्रथम हृदय में जा तब समस्त आशय और नाड़ियों में जाता है और सुश्रुतादि ऋषियों का मत है कि "सखल्वाप्योरसो यकृतप्लीहानौ रागमुपैति" अर्थात् तब रस यकृत् प्लीहा में जाकर रक्तभाव को प्राप्त होता है । श्रीमान् पं० भवदत्त शास्त्री जी ने हम से प्रश्न किया कि रुधिर लाल वर्ण क्यों होता है ? (उ०) रसायन विद्या से इस प्रकार सिद्ध होगा कि रस जब पित्त की तेज से पचता है तो कुछ अस्रभाव को प्राप्त होता है पुनः गमनागमन की परिश्रम से गर्म हो कर रस लाल वर्ण हो जाता है जैसे अंगूर जामुन इक्षु आदि का रस प्रथम मधुर धूमिल रहता है तीन दिन बाद खट्टा अन्तमें तेज और लालरंग हो जाताहै सुश्रुतकार ने लिखाहै॥

विस्रता द्रवता रागः स्पन्दनं लघुता तथा। भूम्यादीनां गुणा ह्येते दृश्यन्ते चात्र शोणिते॥

अर्थात् रक्त में गन्ध ये पृथ्वी का गुण है, गीलापन जलका लालरङ्ग अग्नि का गुण, थोड़ा चञ्चल वायु का गुण और लघुता आकाश का गुण है ये पञ्चभूतके गुण रक्तमें देखाईदेतेहैं। एक यहबात प्रायः लोगोंके मुख से सुनने में आती है कि ४० वर्ष के पश्चात् रक्त का बनना बन्द होजाता है परन्तु आज तक मुझको किसी ग्रन्थ में यह लेख नहीं मिला यदि किसी महाशय को मिला हो तो कृपा करके मुझे लिखें अति धन्यवाद दूंगा। स्त्रियों के विषय में तो सुश्रुत का यह वचन मिलता है॥

रसादेवस्त्रियारक्तं रजःसंज्ञम्प्रवर्त्तते। तद्वर्षाद्द्वादशादूर्ध्वं याति पञ्चाशतःक्षयम्॥

रसही से स्त्रियों का रक्त रज संज्ञक (मासिकधर्म्म) होता है सो बारह वर्ष के ऊपर प्रवृत्ति और पञ्चाश वर्ष से क्षय हो जाताहै। अर्थात् रक्त बनना बन्द हो जाता है॥

अद्भुत औषधियां।

खिजाब।

भूंना हुआ माजू फल ६ तोला, संगराशिव (यह तांबे का मैल है बनियों के दूकानों में मिलता है चिपटाकार टुकड़ा सा होता है वैसेही लोहे का भी होता है परन्तु तांबे का अच्छा होता है) ६ माशा, नौसादर ४ माशा, तूतिया २ माशा, सेंधा निमक २ माशा इन सब को खरल करके बोतल में रख लेय (माजू भूंनने की विधि) चूल्हे पर एक लोहेका बरतन चढ़ाय उसमें छिद्र रहित माजू फल को रख नीचे धीमी आंच देय माजू फल से धुवां निकलना आरम्भ होगा जैसाही धुवां बन्द हो फौरन

तवे से निकाल किसी बरतन से ढांप देय जिस से राख न होने पावे रंग काला हो जायगा । "खिजाब लगाने की विधि" लगाने के छः घंटे पूर्व ही थोड़ी सी छोटी हरैं को कुचल कर एक मिट्टी के बरतनमें भिगा देय वक्त लगाने के उसी हरैं के जल में उक्त चूर्ण को एक लोहे के पात्र में लोहे के डंडे से घोंट कर बालों में लगा देय, इसमें बांधने की जरूरत नहीं है दो तीन घंटे बाद धो डाले एकही दफे के लगाने में बाल काले हो जाते हैं यदि कुछ कसर रह जाय तो दूसरे दफे के लगानेसे खूबकाले हो जाते हैं, इससे बाल कड़े नहीं होते और न जिल्द काला होता है ॥

दूसरा (अँगरेजी)।

यह खिजाब प्रायः अंगरेजी दवा खानों में ढाई रुपयेको मिलताहै और ब्रुश से लगाया जाता है "बनाने की विधि" १ नम्बर—नाइट्रिक (यह चांदी और एसिड से बनता है डाक्टर लोग जलाने का काम इसी से लेते हैं) ॥० औंस (१। तोला) भाफ का पानी यह जल डेग भभके से खींचा जाता है । ३ औंस (१॥ छँटाक) दोनों को हलकर एकशीशीमे भर काग बन्द कर दो । २ नम्बर सलफिहरेट आफ पुटास ॥० औंस, भाफका पानी ३ औंस दोनों को हल कर इसे भी एक शीशी में बन्द करलो "लगाने की विधि" पहिले नम्बर वाली शीशी का अर्क ब्रुशसे या लकड़ी में रुई (तूली) लपेट कर उसी से पहिले बालों में लगावे, जब सूख जाय तब दूसरे नम्बर वाला अर्क दूसरी रुई या ब्रुश से लगावे, लगातेही बाल काले हो जांयगे परन्तु दूसरे नम्बर वाले अर्क को खूब सावधानी से लगाना चाहिये क्योंकि चमड़े में छू जाने से जिल्द काला पड़ जाताहै और देर में छुटता है । इसमें सिर्फ जल्द बाल काले होने के और कुछ भी गुण नहीं है यह भी जैसा हमारे देशी खिजाबों से बाल काले होते हैं वैसा इससे नहीं परन्तु आज कल जिसे देखिये उसी से मुह काला करना पसन्द करते हैं ॥

तीसरा।

भूजा हुआ माजू फल आधपाव हर्रें छोटी आधपाव तांबे का बुरादा दो तोला, कौसीस, नौसादर, दक्षिणी नीला थोथा, और लवङ्ग एक २ तोला, (माजू फल भूंजने की विधि) एक लोहे की कढ़ाई में काले तिल का तेल इतना रहै की जिसमें माजू फल डूब जाय कढ़ाही को चूल्हे पर चढ़ाय आंच दे जब तेल खौल उठे तब माजूफल उसी में डाल देय परन्तु माजूफल छिद्र रहित हो जब माजूफल फट कर उतराय आवै फौरन निकाल ले और एक कपड़े के तले दबाय लेय ताकि उसमें तेल का अंश न रहि जाय, (बनाने की विधि) पावभर सूखे आंवले को अधकचरा कर एक मिट्टी के बरतन में सेर भर जल में रात्रि को भिगोय सबेरे जोश देय जब पावभर पानी रह जाय खूब मल कर छानले एक लोहे के खरल में प्रथम उसी आमले के जल से तांबे के बुरादे को खूब महीन घोंट ले जब बुरादा मानिन्द सुरमें के हो जाय तब माजूफल आदि, समग्र औषधियों को कूट कपड़छान कर उसी में डाल दे और बाकी आंमले के पानी से इतना घोंटे की लसलसाहट से लोढ़ा चिपट जाय। (इस स्थल में खिजाब बनाने की परीक्षा मिल सक्ती है) यदि घोंटते २ लसलसाहट आगया तो जानना कि खिजाब सिद्ध हुआ और जो लसलसाहट न आया तो जानना कि बिगड़ गया। जब देखै की लस आगता और खूब घोंट भी गया है एक २ छटांक की बत्ती बना कर सुखा ले, (लगाने की तरकीब) जब लगाने की इच्छा हो पूर्वोक्त लेखानुसार आंवले का पानी बना उसी में बत्ती को घोंट बालों में लेप कर ऐरंड का पत्र अथवा जिस किसी का पत्र चाहे बांध दे बाद तीन चार घंटे के खोल कर धो डाले पहले दफे इसी प्रकार तीन रोज बराबर लगाने से बाल काले होंगे फिर पन्दरहें रोज सिर्फ एक दफे लगाना काफी है इससे त्वचा काला नहीं होता और न बाल कड़े हों। माजू का खिजाब बस इससे बढ़ कर नहीं है॥

चौथा ।

नील, केतकी की जड़, केले की जड़, चमरा, पियावासा, अर्जुनवृक्ष के फूल, कुसुम के बीज, कालातिल, तगर, कमल का सर्वाङ्ग, लोहचूर्ण, मालकगुनी अनार का छाल, गुर्च, नील कमल का जड़, यह सब औषधें दो २ तोला त्रिफला १ पाव भांगरे (भृङ्गराज) का रस ढाई सेर कालेतिल का तेल आधसेर एक लोहे के पात्र में सब औषधियां मै तैल आदि के भर कर मुख बन्द कर चारों तर्फ घोड़ेकी लीद दे पृथ्वी में गाड़ दे बाद ४० रोज के निकाल कपड़े में छान अग्नि में पचाय लेय जब रस सब जल जाय, तैल मात्र रहि जाय परन्तु तैल खरा न होने पावै क्योंकि बिगड़ जाता है तुरत छान बोतल में भर कर रख देय। चौथे २ रोज इस तेल को बालों में लगावे और तीन चार घंटे के बाद हर्रे के पानी से सिर धो डाले यह नुसखा सुश्रुत का है हमारा आजमाया हुआ नहीं है परन्तु पूर्ण विश्वास होता है कि असत्य न होगा ॥

शतावरि चूर्ण धातु पुष्ट पर ।

पच्छाही शतावरि, बड़ा गोखुरू, केवाछ के बीज की गरी, गुलसकरी (गँगेरुआ भी कहते हैं) बरियारा के बीज, तालमखाना और सेमर का मूसरा (एक वर्ष से ऊपर का न हो) इन सब औषधियों को बराबर ले कूट कपरछान कर बराबर की मिश्री मिला किसी उत्तम पात्र में रख दे, दोनो समय अर्थात् प्रातः काल और संध्या समय भोजन के पूर्व छौ १ तोला चूर्ण को मुख में रख पाव भर कच्चा गौ के दूधसे उतार जाये, इस चूर्ण के सेवन से कैसाहू वीर्य्य निर्बल और पतला क्यों न हो गया हो निश्चय गाढ़ा और पुष्ट हो जाता है और प्रसङ्ग करने की अधिक इच्छा होती है, यदि प्रसङ्ग न कर के एक वर्ष पर्य्यन्त पथ्य सहित इस चूर्णको सेवन करता जाय तो हस्ती के समान बलवान और सत वर्ष की आयु प्राप्त हो और उसके वीर्य्य से उत्पन्न पुत्र सिंह के समान हो ॥

लिङ्ग स्थूल करने का लेप ।

मिर्च, सेन्धा नोन, बड़ी पीपर, तगर, भटकटैया का फल किसी २ देशोंमें इसे भंटा भी कहतेहैं । छटजीरा, कालीतिल, कूट, जौ, उरद, पीली सरसों और असगन्ध इन सब दवाइयों को बराबर ले कूट कपरछान कर शहद में घोंट गोली बना ले यह गोली सूखती कम है इसका कुछ अंदेशा नहीं है । किसी कारण से जैसे फोते के सूजन । नस की निर्बलता हो वा अति अल्प धातु होने से लिङ्ग दुबला हो जाता है तो कुछ दिन बराबर उक्त गोलीको भेड़ी या बकरीके दूधमें घिसकर किञ्चित गुनगुना कर सोती समय पांच छः मिनट रोज लिङ्ग (अग्र भाग छोड़) पर मलने से अवश्य कुछ मोटा हो जाता है । और स्त्रियोंके स्तनों पर मर्दन करने से वह भी कुछ बड़ा और कठोर हो जाता है यह शार्ङ्गधर ग्रन्थकी दवा है परीक्षा में जो कुछ गुण देख पड़ा वह लिख दिया ॥

तिला ।

यह तिला एक पर्वत नामक ग्रन्थ का है आजमाने से कुछ गुण कर देख पड़ा इससे लिखते हैं। अकरकरहा, मालकङ्गुनी, कालातिल, क्षुचिला गन्दाबिरोजा, जायफर, सूखी जोंक और बीरबहूटी यह सब एक २ तोला ले एक छँटाक चमेली के तेल में घोंट कर पाताल यन्त्र से तेल निकाल ले और कागदार सीसी में रख दे । रात को थोड़े काल लिङ्ग पर मर्द्दनकर ऊपरसे बंगलापान बांधदेय। इसी प्रकार पन्द्रह बीस रोज बराबर इस्तेमाल करनेसे यदि वीर्य्य में किसी प्रकार दोष न होगा सिर्फ हस्त मैथुन आदि अप क्रियाओं से नस निर्बल हो क्लीवत्व (नपुंसक) हुआ होगा तो अवश्य फायदा करेगा ॥

पाताल यंत्र से तेल निकालने की विधि ।

इस यन्त्र को वैद्यक में भूधर यन्त्र कहते हैं । एक आतशी सीसी

(यह सीसी मनिहारों की दुकानों में मिलती है अधिक आंच लग जाने पर भी नहीं फटती और सीसियां फट जाती हैं) दवा भर सीसी का मुख सींक या तार के पुञ्ज से बन्द कर दे और सीसी पर ३ कपरौटी कर सुखा लेय। एक हांडे के पेंदी में सीसी के मुख बराबर छेद करै उसी छिद्र में वह्वी सीसी कर रख दे और हांडे को चूल्हे पर चढ़ा सीसी के पेंदीतक बालू या राख भर ऊपर कंडे की आंच करै, और चूल्हे के भीतर एक दूसरी सीसी पूर्वोक्त सीसी के मुख में मिला कर रख देय बस ऊपरके आंच की गरमाहट से तेल निकल कर नीचे की सीसी में टपकेगा परन्तु आंच पर खूब ध्यान रखना चाहिये जादा आंच होने से तेल जल जाता है ॥

चिकित्सा सन्मिलनी से ध्वजभंग की औषध ।

बिल्व पत्र का रस १ छंटाक, गो घृत १ छंटाक कमल के फूल की एक डंडी जल के पीस कर तीनों को एक पीतल के बरतन में मिला कर पी जावै, इसी प्रकार कई रोज प्रातःकाल पीने से नपुंसकपन जाता रहता है ॥

ब्रांडी एक तोला, कुचिला आधा दाना, कुचले को ब्रांडी में घिस कर अग्नि में गरम करके रात को पेड़ू (बस्ति) पर लेप कर ऊपर से पान बांध देय और सवेरे खोल देय इसी प्रकार दो तीन रोज करने से ध्वज भंग रोग (नपुंसक) आरोग्य होगा। सम्पादक का अजमाया हुआ नहीं है ॥

हिंग्वाष्टक चूर्ण ।

सोंठ, पीपर, मिर्च, अजमोदा, सैंधा निमक, स्याह जीरा, और सफेद जीरा, यह सब दो २ तोला हींग को अग्नि में भूंज लेय, सब कूट महीन चूर्ण कर लेय, इसका मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्य्यन्त है ।

भोजन करते समय भोजन करने के पूर्व ही इस चूर्ण को घी में सान पहिले कवल के साथ खाय जाय तब भोजन करै तो यथार्थ रूप से भोजनान्न परिपक्व हो अग्नि वृद्धि होती है॥

ताकतवर शराब।

मिश्री १० सेर, मुनक्का १ सेर, बबूल की छाल आध सेर, आंवला दो छंटाक, मुण्डी दो छंटाक, छरीला, जटामासी, आजवाइन, तज, तज, इलायची, नागरमोथा, नरकचूर, चन्दन सफेद और मेहदी का बीज ढाई ढाई तोला, मूसली सफेद, मूसली स्याह, बहमन सफेद, बहमन सुर्ख, बड़ी लायची, इन्द्रजौ, लौंग, सौंदरी जर्द, और सफेद, यह सब दवा २ तोला, किशमिश पावभर, बदाम पावभर, छोहारा पावभर, मुनक्का पाव भर उक्त सब दवाइयों को अधकचरा कर ४० सेर पानी में (जिस प्रकार से शराब का खमीर उठाया जाता है) भिगा कर सड़ाय देय जब खमीर उठ आवै तब २॥ सेर गौ का दूध और आधसेर संतरे का रस उसी में डाल देग भभके से जिस भांति मद्य खींचा जाता है खिंचवा लेय। इस का मात्रा १ छंटाक से ३ छंटाक तक है जिन महाशयों को शराब पीने की लत है और सैकड़ों रुपया व्यर्थ अंगरेजी मद्य में नष्ट करते हैं, विलायत से आये हुये स्वदेशी भाइयों को जात च्युत करने में तो शीघ्रही कटिबद्ध हो जाते हैं और आप घर बैठे विलायत के गावदानका पानी पी रहे हैं, प्यारे भ्रातृवर्गो रंगे हुये टीकटदार बोतलों पर मत जाइक हो अंगरेजी शराब पीने से निश्चही धर्म का नाश होता है यदि आप लोगों को मद्यही पान स्वर्ग की प्राप्ति है तो उक्त शराब को या हम और भी उत्तम २ मद्य आप लोगों के लिये लिखेंगे, मजिस्ट्रेटी या तह सीलदारी में ।,) के कागज पर दरखास्त दे कर किसी कलवार (जो शराब चुआने जानता हो) से अपने घर पर तैय्यार करवा लो और संध्या समय भोजन के पूर्वही कभी २ पी लिया करो लोक निन्दा और आचार

भ्रष्ट होना दोनों से बच जाओगे, चतुर वही मनुष्य कहा जा सक्ता है जो दोनों लोक को साधना करते हैं ॥

जो जीर्णज्वर या खांसी ज्वर चौथे दरजे का असाध्य न हुआ हो, उस रोग में वैद्यों की अनुमति से मालतीवसंत आदि रस तथा डाक्टरी की हानि कारक (डाक्टरी औषध एतद्देशीय मनुष्यों के स्वभावके विरुद्ध है) औषधियां न देकर यदि दो मास पर्यन्त निम्नलिखित औषधों का सेवन करावे तो हम शपथ सहित कह सक्ते हैं कि निश्चय समूल रोग नष्ट हो जायगा और यह भी कहते हैं कि यदि चेत इससे कुछ उपकार न हुआ तो जान लेना कि यह रोग असांध्य हो गयाहै अब आरोग्यता प्राप्त होना दुष्कर है ॥

लाक्षादि तैल ।

लाख (पीपल वृक्ष की लाही) ३ सेर, कालेतिल का तेल १ सेर, दही का तोड़ ३ सेर, सौंफ, असगन्ध, हलदी, देवदारु, कुटकी, मुर्रा रेणुका, कूट, मुरेठी, सफेद चन्दन, मोथा और रासन (यह अरहर के वृक्ष के आकार पीत पुष्प युक्त एक वृक्ष होता है) ये सब एक २ तोला । प्रथम लाही को साफ कर १२ सेर पानी में लाही डाल एक बरतन में जोश देवे (उसी लाही में आधपाव बेर का पत्र, लोध २ तोला, सज्जी ६ माशा कुचल कर छोड़ देय (जिस से कि सत्वांश सब क्वाथ में आय जाय) जब तीन सेर जल रहे जाय तब शीतल कर छान लेय, तत्पश्चात् एक पीतल या तांबे की कढ़ाई में उक्त तेल डाल चुल्हे पर चढ़ाय उसी में लाही के पानी और दही के तोड़ तथा सौंफ आदि उर्ध्व लिखित दवाईयोंको भी सिलपर पानी में पीस आर्द्र (गोला) कल्क (लुगदी) कर डाल मन्द आंचसे पचावे जब पानी बिलकुल जलजाय (पहचान यह है कि एक लकड़ी ऊपर के तेल में लगा कर आग में छुलाने से चुरचुराहट शब्द न होना तेल जलने न पावे) फौरन चूल्हे से नीचे उतार

कढ़ाई के पेंदे में पानी का पुचारा दे थोड़ी शीतल कर लेय और छान कर बोतल में भर काग बन्द कर रखदे। रोज सबेरे गरम ऋतु में ८ बजे जाड़े में १० बजे एक घंटे तक रोगी के समस्त शरीर में मर्दन कर के यदि रोगी सबल हो तो ताजे कूप जल से स्नान करादे, अधिक निबल हो तो किंचित उष्ण जल से स्नान करावे यदि रोगी अनिच्छा प्रगट करे तो न स्नान करावे तदैव के अतिरिक्त इस तैल के मर्दन से विषम ज्वर खाज खाज अंग दर्द खाज देह दुर्गन्ध ज्वर हड़ फूटन आदि सब आराम होता है एवं गर्भिणी के शरीर में इस तैल को मर्दन कर प्रत्यह स्नान कराने से गर्भ पुष्ट हो आरोग्य बालक उत्पन्न होता है॥

शीतोपलादि चूर्ण।

मिश्री १६ तोला वंशलोचन (जिसके भीतर नीला रंग हो) ८ तोला छोटी पीपर परन्तु प्रथम एक दिन रात पीपर को गोदुग्ध में भिगा रक्खे फिर सुखालेय चार तोला छोटी लायची के दाने दो तोला तज १ तोला इन सब दवाइयों को कूट कपड़छान कर तीन ३ मासे की पुड़िया बना लेय शाम सवेरे एक पुड़िया को शहद के साथ चटा कर ऊपर से छटांक या आधपाव कच्चा गऊ का दूध पिला देय, यदि रोगी को पतले दस्त हों तो इलायचों की समूचा भूंज कर सब दवा में मिलावे और शहद के स्थान में शरबत अनार या शरबत नीलोफ़र देय और दूध भी न देय॥

खदिरादि वटी।

खैर ४ तोला सेलखरी (सङ्गजराहत) २ तोला कपूर एक तोला इन तीनों औषधियों को बबूल के छाल क्वाथ में घोट चने की बराबर गोली बना छायामें सुखायलेय, जब खांसीआवै एकगोली मुखमें डाल चूसे। यदि शिरमें दर्द या घुमरी होती हो तो चमेली के तैल या नारियल के १ छटांक तैल में कपूर ४ मासे, बड़ी लायची के दाने १ मासे शीतलचिनी २ मासे सब को खूब महीन पीस रोज शिर में मले। अधिक पिपासा हो तो मुख में शीतल चिनी

के दाने या सूखे चावलों के टुकड़े मुख में डालडाल कर चुड़के। पेट में दाह या जलन बोध हो तो धान के लावे का माड़ बना उस में मिश्री मिला कर पिलावे और पीत चन्दन अथवा सफ़ेद चन्दन को पानी में थोड़े से कपूर के साथ घिस कर छाती और पेट में लेप कर देय। पुराने ज्वर में दस्त और पेशाब का अधिक खाल रखना चाहिये क्योंकि खुलासा दस्त न होने से शिर में गरमी का चवड़ाना और खांसी का जोर बढ़ता है तथा दस्त पतला अधिक और दिन रात में कई वार होने से रोगी शीघ्रही यमालय को गमन करता है और प्रायः मूर्खों की चिकित्सा से मूत्र में जलन, रोध एवं मूत्र द्वारा धातु का जाना इत्यादि दोष हो जाते हैं उस पर ध्यान न देने से एक भी औषध गुण कारक नहीं होती। यदि रोगी को दस्त अधिक आते हों तो लघु गङ्गाधर चूर्ण या वृहत् गङ्गाधर चूर्ण दे अथवा वेल का मुरब्बा या इसबगोल की भूसी में जरा सा मिश्री मिला के पानीमें घोल कर पिलावे कोष्टबद्ध में अर्थात् दस्त न आते हों तो त्रिफला चूर्ण ६ माशा या हड़ का चूर्ण या मुरब्बा सोते समय खिला देय। या जरा सा अंडी का तेल दूध में डाल कर पिला देय मूत्र जलन के या कडुक हो तो दश २ दाना शीतलचिनी को चूर्ण कर पानी के साथ दिन में चार पांच दफ़े पिलावे मूत्र परीक्षा में यदि धातु का आना स्पष्ट हो तो पूर्वोक्त शितोपलादि चूर्ण के बराबर ताल-मखाने के बीज का चूर्ण मिला मधद के साथ न चटा के सिरफ़ गौ या बकरी के दूध के साथ देवे ॥

पुराण ज्वरे पथ्यम् ।

आंखों में अञ्जन लगाना, स्नान, शाम सवेरे शुद्ध वायु सेवन, दाह शांत करने वाली औषधियों को छाती और माथे पर लेप करना जैसे स्वेत चन्दन, पीत चन्दन, कपूर, शीतलचिनी, खस सुगन्धवाला इत्यादि वस्तुओं को यथोचित न्यूनाधिक ले गुलाब के अर्क में घोट पेट छाती शिर तथा अन्य अंगों में भी जहां अति दाह (जलन) हो लेप करना अ-ति लाभ दायक है। खाने में मूंग तथा अरहर की दाल पुराने चावल

का भात, गेहूं या जवेकी रोटी एवं कुलंग, हरिण खरगोश अथवा बकरी के मांस का सादा जूस (जिन्हे अरुचि अथवा पहरेज होवे न खावैं) गौ तथा बकरी का दूध मक्खन (नवनीत) अथवा ताजा गौ घृत, परवल, रामतोरी (कद्दू) नेनुआ मूली की जड़ और कोमल बीज रहित भांटे की तरकारी (भाजी) परिश्रुत जल (फिलटर वाटर) अथवा स्वच्छ गङ्गा जल या अन्य पहाड़ी झरणों का जल । यह सब गण पुराने ज्वर वालों को सुश्रुत आदि मतों से अधिकांश पुराने ज्वर ग्रस्त रोगियों को आराम कियाहै इससे हम लोकोपकारार्थ प्रकाशित कर देश हितैषियों तथा चिकित्सकों (वैद्य) से सविनय निवेदन करतेहैं कि अवश्य पूर्वोक्त कथितानुसार प्राचीन ज्वरग्रस्त रोगियों की चिकित्सा करके मुझको चिरबाधित और सफल करैं । निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि नियतकाल पर्य्यन्त में यदि सद्दोक्त लिखित उपायों से कुछ लाभ प्राप्त न हो तो निश्चय जानना कि अब उस रोगी का आरोग्य होना अति दुष्कर है ॥

अचार वटी ।

हलदी, दारुहलदी, मिर्च, आंवला, शोंठ, हड़, चीता, कूट, पीपर, सैंधानोन, एक २ तोला निम्बपत्र और नीम परकी गुर्च दो २ तोला मेथा ४ तोला, उक्त सब दवाइयों को कूट कपड़ छान कर शुद्ध जल में घोट कर चने की बराबर गोलियां बना छाया में सुखा ले यह पूर्ण मात्रा है, बालकों की अवस्था देख कर मात्रा बना लेवै और बालकों को निर्फ दिन में दो या तीन मात्रा से अधिक न देय इस गोली को दिन में छः दफे अर्थात् दो २ घंटे में जल के साथ खिलाने से नित्य ज्वर अतरा तिजारी चौथिया और सूतिकाज्वर आराम होता है । इसे पानी में घिस कर आंखों में आंजने (अञ्जन) से आंखों के सामने अंधियारा होजाना स्त्री के दूध से सोते में पलकों का चिपट जाना बकरी के दूध से नवीन फूलों

तिल के तेल से रतौंधी और केले के पानी के साथ आंखों में लगाने से आखों से पानी का बहना बन्द होता है। स्वदेशीय मात दिल भोजन पथ्य है। पाठकगण! उचित है कि आप लोग अवश्य उक्त बटी को तैयार कर रोगियों को बांटिये भारत में देशीय औषध के प्रचार होने की यही एक साधारण उपाय है। जिन्हे इस के भी बनाने में आलस्य होवे ≈)॥ का टीकट भेज यहांसे एक डिब्बी जिसमें १०० गोली हैं मंगा लेय ॥

ऊपर जो शतावर्य्यादि चूर्ण धातुपुष्टाधिकार में लिख आये हैं उसमें अनुपान गौ का दूध लिखा है, कितने पाठकगण पत्र द्वारा पूछते हैं कि यदि गौ का दुग्ध लाभ न हो तो किसके साथ सेवन करें? उत्तर, यदि गौ का दूध न मिले तो भैंस या बकरीके दूधके साथ सेवन करै यदि किसी का दूध न मिले तो सिर्फ जलही के साथ सेवन करै, रहा यह कि जलके साथ खाने से फायदा बहुत कम करता है। प्रायः ऐसे लोग हैं कि जहां आठ दस रोज कोई किस्म की दवा खाया और फायदा न देख पड़ा फौरन छोड़ देते हैं कहते हैं कि यह तो हमको फायदा नहीं किया विचार करने का स्थल है कहीं जन्म भर का कोढ़ एक रविवार में साफ हुआ है दूसरे और २ रोग नाशक औषधियों की अपेक्षा धातु बर्द्धक औषध अधिक काल में गुण करती है कारण यह है कि धातु ४० दिन से कम में नहीं बनता इस लिये कम से कम धातु बर्द्धक औषध ८० दिन पर्य्यन्त अवश्य खाना चाहिये। कोई रोग नाशक औषध क्यों न हो जब तक निम्नलिखित सात बातों का संयोग न होगा कभी गुण न करैगी अर्थात् देश, काल, अवस्था, प्रकृति, बलाबल, रोग और औषध का पूर्ण रूप से संयोग होनेही से आरोग्यता लाभ होती है यदि ऐसा न होता तो एक ही औषध से समस्त भारत का रोग आराम होता क्यों हमारे भूत पूर्व वैद्यवर एक २ रोगों के नाशार्थ असंख्य औषधियों का विधान देते। दीर्घ काली रोगियों के दीर्घ काल तक औषध खाने का विधान खुद

वैद्यक शास्त्रही में लिखा है पाठकगण स्वयं देख लेंय इस लिये सर्वसाधारण रोगग्रस्त बन्धु वर्गों को उचित है कि किसी औषध के सेवनसे यदि किसी प्रकार की हानि न देख पड़े (प्रकृति तथा रोग के विरुद्ध औषध से शीघ्रही नुकसान होता है) तो उस औषध को बराबर सेवन करते जांय अपने समय पर अर्थात् जिस समय वह औषध रोग से बलवान होगी निश्चयही गुण करैगी ॥

क्षुधासागर अर्क ।

अदरख का रस ३ पाव, घिउकुआर का रस आध सेर, बंगला पान का रस आध सेर, कागजी नीबू का रस ३ पाव, जंभीरी नीबू का रस २ पाव लौंग बड़ी लायची, पीपर छोटी, दालचीनी, कालीमिर्च, जवाखार सज्जीखार, जीरा सफेद, जीरा स्याह, कालानोन, सांभरनोन और सेंधव नोन इन सब औषधियों को महीन कुचल कर सब रस को एकत्र कर एक बड़ी सीसी में अथवा किसी ऐसे मृत्तिका पात्र में जिस में कि कुछ रोज तक पानी भरा गया हो भर पात्र का मुख बन्द कर १५ दिन तक धूपमें रक्खे बाद उसे कपड़े में छान बोतल में भर कर रख दे और जरूरत पड़ने पर पिये । इसका मात्रा ३ मासा से २ तोला तक है इस अर्क को दोनों समय अर्थात् साम सबेरे पीने से अग्नि मन्द अजीर्ण और अनेक उदर व्याधि नाश होता है परन्तु जिसकी प्रकृति अतिगर्म तथा धातु की कोई किस्म की बिमारी होगी तो फायदा न करैगा ॥

एरंड पाक ।

छिला हुआ एरंड का बीज आधसेर, दूध ४ सेर, घी पावभर, चिनी ढाई सेर, सोंठ, पीपर, मिर्च, लौंग, छोटी लायची, तज, तेजपात, असगन्ध, सौंफ, रासन, तेजबल, शतावर, गदापूर्ना की जड़, खस कपूरकचरी यह सब औषध सवा २ तोला जायफल १ तोला जावित्री और केशर

छः २ माशा (पाक बनाने की विधि) पिछले अङ्क में मैं लिख आया हूं परन्तु साधारण रीति से फिर भी लिखे देता हूं प्रथम दूध को कड़ाई में चढ़ाय कर औंटे जब आधा दूध जलजाये तब रेंडीकी गूदी को सिलपर पीस दूध में डाल देय और औटता जाय जब खोया हो जाय तो तब खोवे को घी में भूंज लेय बाद चिनी की चासनी बनाय (जब चासनी ठंढी हो जाय) उसीमें खोया और समस्त उपरोक्त काष्ठादि औषधियों को कूट कपरछान कर मिला देय। बादाम पिस्ताकी गरी मुनक्का और किसमिस आध २ पाव ले महीन कतर उसीमें मिला तीन २ तोले का लड्डू बना लेय। प्रात सवेरे एक मोदक खाकर ऊपरसे किञ्चित उष्ण पावभर गौ या बकरी का दूध पीने से गठिया लकवा अङ्ग दर्द पांडु रोग उदर रोग आंत वृद्धि आराम होता है बड़ाभारी गुण इसमें यह है कि कैसा हू कोष्ठबद्ध क्यों न हो सोते समय एक मोदक खा कर ऊपर से गुनगुना दूध पी लेने से सवेरे मामूली दस्त खूब खुलासा आ जाता है॥

अफीम खानेवालों के लिये अफीम पाक।

अफीम ३ तोला, दूध ४ सेर घृत आध सेर चिनी ढाई सेर, तज, तेंजपात नागकेशर मिर्च लवङ्ग जायफल कंकोल अकरकरहा सफेद मूसली स्याह मूसली केवाछका बीज यह सब एक २ तोला सोंठ पीपल जावित्री और केशर छः २ माशा छोटी लायची २ तोला बन्शलोचन २ तोला, मोती अनवेधी ३ माशा कस्तूरी १ माशा चांदी का वर्क ५० लाय (बनाने की विधि) अफीम का मात्रा खानेवाले पर निर्भर है चाहे जितना कम ज्यादा रक्खे पहिले दूध को अधावट करै तब अफीमको पानी में घोल कर उसी में डाल देय जब दूध खोवा हो जाय, घी में भूंज लेय बाद चिनी की चासनी बनाय उसी में खोवा और समस्त औषधियोंको कूट कपर छान कर उसी में डाल देय परन्तु मोती को गुलाब के अर्क में घोंट कर डाले और मामयिक मेवा आदि डाल के लपने पलामल के

अनुसार मात्रा बना ले एवं हरएक मोदकों पर चांदी के वर्क लपेट देय और दोनों समय अथवा एक समय दूध के साथ सेवन करे यह सर्द ऋतु का नुसखा है गर्म ऋतुओं में गर्म चीजों को निकाल डाले यदि अफीम खाने वाला उक्त विधि से पाक तैय्यार कर सर्वदा खाया करै तो कभी वीर्य्य हीन और वृद्ध न हो। इस मोदक के खाने से शीत युक्त खांसी दमा प्रमेह अतीसार और सर्वाङ्ग वायु नाश होता है और वीर्य्य स्तंभन होता है प्रायः लोग नशे के लिये अथवा रोग नाश के लिये अफीम खाने वा चण्डू पीने लगते हैं परन्तु उसका अन्तिम फल यह होता है कि रोग नाश तथा नशा न मिल के और रोग वृद्धि हो जाता है समग्र शरीर की नाड़ियां संकुचित हो जाती हैं, स्मृति ज्ञान बुद्धि भ्रष्ट और कुछ काल में मनुष्य निकम्मा हो जाता है इससे उचित है कि केवल अफीम न खा के अफीम पाकही बनाकर खावे और फिर कुछ रोज के बाद छोड़ दिया करै॥

भांग का पाक।

भांग के खानेवाले भी आज दुनियां में कम न निकलेंगे। भांग के खाने से कुछ ऐसी हानि नहीं है कि शरीर नष्ट भ्रष्ट हो जाय जैसा की अहिफेन के खाने में होता है रहा यह कि शीत मिजाज वाले को कुछ बादी करता है उचित है कि शीत प्रकृति के लोग जाड़े के दिनों में संध्या समय भांग का पाक बना कर खावें। भांग १ पाव, गौ का दूध ५ सेर, घी आध सेर, तज, तेजपात नागकेशर काली मिर्च सूखा असगंध गदापुर्ना की जड़ केवाछ का बीज बरियारा की जड़ कौञ्चा टोंटीकी जड़ ककई की जड़ सब एक २ तोला लौंग शोंठ पीपर जायफल जाविन्नी और केशर छः २ मासा छोटी लायचीवंशलोचन और सौंफ, दो २ तोला।

बनाने की विधि।

पहिले भांग को तीन चार पानी से खूब धो कर सुखा लेय, दूध

को कढ़ाई में डाल औटे जब आधा दूध रह जाय भांग को खूब महीन चूर्ण कर उसी में डाल खोवा कर लेय, खोवा को उसी घी में भून चीनी की चासनी बना उसी में खोवा और समस्त औषधियों को कूट कपर छान कर मिला अपने बल के अनुसार मोदक बना लेय। सांझ सबेरे अथवा सिर्फ सांझ को एक लड्डू खा कर ऊपरसे दूध पिये तो प्रमेहादि समस्त धातु का रोग आराम हो और बल तथा अग्नि की वृद्धि हो। भांग और अफीम पाक विशेष कर उसीको फायदा कर सक्ता है कि जिसका मिजाज शीत का है और उक्त नशा खाने का अभ्यास भी है॥

कामोत्तेजक चूर्ण।

सफेद मूसली दिल्ली की, स्याह मूसली, शतावर, सलाकुल मिश्री, सालिम मिश्री, यह सब एक २ तोला, बहिमन दोनों दो तोला, तोदरी दोनों दो तोला, इन्द्रजव, खुरफारी का बीज, जावित्री, जायफल, सोंठ और कुलीजन छः २ मासा उक्त सब औषधियों को अलग २ कूट कपर छान कर एकत्रित कर चार २ मासे की पुड़िया बना ले सांझ सबेरे एक पुड़िया शहद के साथ चाट कर ऊपरसे पाव भर दूध मिश्रीयुत पी जाय यदि गर्म ऋतु हो तो दूध के परिवर्तन में गाजवां के अर्कमें मिश्री मिलाय कर पीना उत्तम होगा। इस चूर्ण को दो मास पर्य्यन्त सेवन करने से धातुक्षीण नवीन क्लीवत्व दोष आदि आराम होता है और रति काम में आनन्दता प्राप्त होती है। आरोग्य पुरुषों के लिये वैद्यक शास्त्र में दो भांति के प्रयोग कहे हैं। रसायन और वाजीकरण, इन दोनों का यथावत बयान आगे करेंगे। रसायन किसे कहते हैं "यज्जराव्याधिविध्वंसि भेषजंतद्रसायनम्" जिन २ औषधि और उपायों से मनुष्य वृद्ध (बुढ़ापा) न हो अर्थात् सत्तर अस्सी वर्ष पर्य्यन्त संपूर्ण इन्द्रियों कि शक्ति यथावत् बनी रहे उसे रसायन वय स्थापन एवं कल्प भी कहते हैं। रसायन प्रयोग वयस के पूर्व अथवा मध्य में आरोग्य जन को हो सक्ता

है "नाविशुद्धिशरीरस्य युक्तोरासायनोविधिः" रोगी तथा अति धातुक्षीण शरीर रसायन नहीं होता यदि होता भी है तो रोग आराम के बाद एक वर्ष से ३ वर्ष पर्य्यन्त औषध के सेवन से। वाजीकरण उसे कहते हैं कि "यस्मात्द्रव्यंभवेत्स्त्रीषु हर्षोवाजीकरंचतत्" जो क्रिया और औषधियां स्त्री रति में आनन्द उत्पन्न करें। यह भी अति व्यवाय शील को वाजीकरण भी नहीं होता यदिचेत् हो भी तो कुछकाल के औषध सेवन से होगा अन्यथा असम्भव है वाजीकर और रसायन कर अनेकानेक औषधहैं कि जिनके बनाने की क्रिया, खाने की विधि और गुण सुन कर पाठक गण चमत्कृत हो जांयगे उन्हें आगे कहेंगे इस स्थल में हम सिर्फ दो द्रव्य दिखलाते हैं सफेद मुसली (रसायन) और केवाछ का बीज (वाजीकर है) सफेद मूसली छिली को पाव आधसेर ले कूट कपर छान कर तीन २ मासा की पुड़िया बना ले इसका मात्रा ३ मासा से १ तोला तक है जैसी जिसकी अग्नि हो साम सबेरे एक पुड़िया मुख में रख शीघ्रही पाव आध सेर गौ के दूध से उतार जावे, चूर्णको टुघलावे न क्योंकि मुखमें चिपट जाता है। यदि इस चूर्ण के खाने से कोष्टबद्ध अजीर्ण आदि उपद्रव न हो निरन्तर पचा जाय तो जब तक खूब वीर्य्य बलवान पुष्ट और वृद्धि न हो खाना बन्द न करै एक वर्ष तक इसके खाने से वीर्य्य महाबली हो अनेक स्त्री गमन तथा बलवान पुत्रोत्पादन करने में समर्थ होता है। वाजीकर बनकेवाछ के बीज को छील गरी निकाल चूर्ण कर ले इसका मात्रा ४ मासा से दो तोला तक है जैसी अग्नि हो मात्रा बना लेय साम सबेरे एक मात्रा खा कर ऊपर से मिश्रीयुक्त दूध पी जाय जब तक पूर्ण रूप से लाभ न हो बराबर खाता जाय किसी दोष से रति शक्ति क्यों न जाती रही हो अवश्य इसे कुछ काल सेवन करने से पुरुषत्व लाभ होगा॥

———

प्रदर रोग की अपूर्व औषध ।

श्वेत चन्दन जटामासी लोध खस पद्म केशर नागकेशर बेलकी गरी नागरमोथा सोंठ छाहूबेर पाढ़ी कुरैया की छाल इन्द्रजव अतीस मूसा आंवला रसवत आमकी गुठली की गरी जामुन की गुठलीकी गरी मोचरस कमलगट्टेकी गरी (कमलगट्टेके भीतर बीचमें एक हरीवस्तु रहती है उसे निकाल डाले) मजीठ छोटी लायची अनार का बीज और कूट इन सब औषधियों को दो दो तोला ले कूट कपर छान कर बोतल में रख देय इसका मात्रा ६ मासा से दो तोला पर्य्यन्त है । (खाने की विधि) दो तोला साफ पुराने चावल को कुचलकर ३ छँटाक जल में भिजा देय और बाद एक घंटे के मलकर उसका पानी छान लेय उसी जल से उपरोक्त चूर्ण की एक मात्रा शिल पर घोंट कर १ मासा शहद डाल कर पी जावे इसी प्रकार दिन में तीन अथवा दो बार पीने से निश्चय है कि १५ दिवस में रोग अवश्य नष्ट हो जाय । इसी चूर्ण से रक्तस्राव भी बन्द होता है ॥

काले सांप के काटने का इलाज वी० सी० से ।

आक के पत्ते की सफेदी नाखून से उतार कर जमा करलेय और उस में आक के पत्ते का दूध मिला कर चने की बराबर गोलियां बना ले जिसे सांप काटे उसे आधे २ घण्टे के बाद एक एक गोली खिलावे ६ गोलियों तक सांप के काटे हुए आदमी का मुख मीठा मालूम होगा सातवीं गोली कड़वी मालूम होगी और मरीज अच्छा हो जायगा ॥

कस्तूरी की पहिचान ।

प्रायः जाड़े के दिनोंमें नैपाली तथा पहाड़ीमनुष्य नकलीनाभी बनाके शहरों में लाके लोगों से ठग जाते हैं, माघ मास में प्रयाग में सैकड़ों इसी भांति के ठग लोग आते हैं और धोका दे के हजारों रुपये ले जाते हैं कुछ

मयागढ़ो में नहीं ऐसाही हरएक भारीर मेलोंमें होता है और जो जिस वस्तु को पहचानता है वह उससे कभी ठगा नहीं जा सक्ता है। हिरणके नाभी की यह बहुत उत्तम परीक्षा है कि पांच चार लहसुन के जवे को पत्थल पर महीन पीस उसी के रस में एक बिलस्त भर तागा तर कर उसे सूवी (सूई) में पिरोय नाभी में छेद कर डोरे का खींच ले यदि उस नाभी के भीतर असिल कस्तूरी होगी तो लहसुन की दुर्गंध जाती रहेगी कस्तूरी की सुगन्ध डोरे में आ जायगी "खुले कस्तूरी की परीक्षा" अक्सर ठगलोग कोयले आदि वस्तुओं को महीन रख कर बाद असिल कस्तूरी को पानी में घोंट उसी में रवे को तर कर छाया में सुखा लेते हैं इसी प्रकार दो तीन पुट देने से असिल कस्तूरी की भांति महकदार हो जाता है वह मेलों में जाके उसे आठ दस रुपये तोले के हिसाब से बेच आते हैं। एक साफ़ अग्नि के अङ्गारे पर एक रवे को रख देय और उसके धूम की सुगन्ध लेय यदि असिल कस्तूरी होगी तो उसका धुवां आदि से अन्त तक महकदार निकलेगा और नकली होगी तो प्रथम धूम सुगन्ध सहित बाद धूम (धुवां) रहित अथवा जो वस्तु भीतर होगी उसका महक बोध होगा॥

कस्तूरी की उत्पत्ति।

मृग जिसोम नर हिरण के नाभि में चर्म की एक पोटरी सी होती है उसी में कस्तूरी पैदा होतीहै पहिचान उसकी यहहै कि जिस हिरण के नाभी में कस्तूरी रहिती है वह उसी के मद से चारो तर्फ़ बनों में पौधों को सूंघता फिरता है, कारण यह है कि उसकी नाभि में से जो सुगन्ध प्रगट होती है तो उसे उस सुगन्ध का अपनी नाभि में न भान हो कर अन्य वस्तुओं में भान होता है। लोग ऐसा कहते हैं कि उस हिरण के जंघा की अस्थि एकही होती है इससे वह बैठ भी नहीं सक्ता रात को वृक्षादिकों में उठंग कर सो जाता है और वेही हिरण वंशी के शब्द को सुन कर प्रसन्न भी होते हैं। वधिक लोग जो उद्योगी हैं, बन में जहां मद युत मृग को देखा वंशी बजाते हैं और एक टटी बांस के टेक में खड़ी कर देते हैं और उस बांस में

डोरी भी बांध देते हैं जब मृग टट्टी में उंठग कर सो जाता है तब डोरी को खींचते ही टट्टी गिर जाती है और उसी के साथ मृग भी गिर जाता है तब वधिक मृग का पेट फार कर कस्तूरी को थैली निकाल लेते हैं। हर एक ना-भी में से ढाई तीन तोले से कम कस्तूरी नहीं निकलती जिसका मूल्य चालीस पचास रुपया होता है। इस प्रपञ्च का भी अद्भुत चरित्र है जब दो तीन रुपये की लालच में छोटे २ बच्चों को लोग मार डालते हैं तो जिस पशु की शरीर में इस कदर मूल्य निर्म्मित वस्तु है उसका जीवन कैसे वधकों से बच सक्ता है॥

कस्तूरी का गुण।

इसका स्वभाव अति गरम, वातश्लेष्म नाशक, धातुत्तेजक, वाजीकरण अग्नि और मल वर्द्धक है मात्रा इसका अर्द्ध चावल से ४ चावल पर्य्यन्त है। प्रायः अमीर लोग जाड़े के दिनों में पान में डाल कर खाते हैं, खाने और पीने की तमाकू में इसे डालने से तमाकू बहुत उमदा गुण दायक हो जाती है, हरएक पुष्ट दवाइयों में भी इसे डालते हैं। परीक्षा से ठीक जानाजाता है कि शीत मिजाज वाले को सबकी अपेक्षा कस्तूरी अधिक गुण करती है॥

मृगनाभ्यादि वटी (कस्तूरीकी गोली)

कस्तूरी ६ माशा, अनवेधी मोती १ तोला, जावित्री १॥ तोला, केशर २ तोला, जायफल २ तोला, छोटी लायची के दाने २ तोला अगरकरहा २ तोला, कङ्कोल मिर्च २ तोला कपूर ६ माशा, शुद्ध कुचला १ अथवा कुचले का सत्त (इस्टकनिया) ४ चावल, सोने का वर्क १० ताव चांदी के वर्क २० ताव

बनाने की विधि।

प्रथम मोती को घोंटने वाले खरल में डाल गुलाब के अर्क में ४

यहर घोंट ले । कुचला सोधनेकी रीति यहहै कि एकबरतनमें कुचले को जल में भिगा दे और रोज उसका पानी बदलता जाय २१ रोज के बाद उसे छील उसका दल निकाल महीन कतर चूर्ण कर लेय, इसेटिलानिया चाहे अङ्गरेजी दवाखाने से ले लेय, कुचला डालनेसे सिर्फ प्रसङ्गमें स्तम्भन होता है उसे न डाले तो कुछ अन्देशा भी नहीं है । सब दवाइयों को खरल में डाल २ तोला शहद और गुलाब के अर्कमें घोंट मटरके बराबर गोली बना छाया में सुखाय सीसी में बन्द कर रख देय । इस बटी की मात्रा चौथाई गोली से २ गोली पर्य्यन्त है जैसा जिसका बल हो मात्रा बना लेय । संध्या समय एक मात्रा खा कर ऊपर से दूध मिश्री पीने से विषय में अति आनन्द और शक्ति बढ़ती है, परन्तु इस गोली के सेवन करने वाला तेल मिर्चा खटाई शाक बरयम बासी अन्न रुक्ष अन्न बाजरा आदि न खावे घी दूध मलाई पुराने चावल का भात सेव मीठा अनार पौंड़ेकी गड़ेरी आदि अधिक फायदा करताहै इसके अतिरिक्त इस गोली के खाने से कासस्वास यक्ष्मा लकवा गठिया और नपुंसक आदि रोग आराम होते हैं ॥

केशरकी पहिचान ।

यह एक वृक्ष के पुष्प के भीतर का रज है, जैसे बरैं के पुष्पके भीतर रज होता है इसके वृक्ष काश्मीर में होते हैं । ठग लोग नकली केशर भी बना कर अक्सर बेच जाते हैं, वे लोग केशर इस प्रकार बना लेतेहैं, जैसे भुट्टे में जो बाल सदृश पदार्थ होताहै अथवा बरैंके फूलको उत्तम केशर को पानी में गाढ़ा घोंट कर उसी में तर कर छाया में सुखा लेतेहैं इसी प्रकार पांच चार पुट देने से केशर हो जाता है । असिल केशर की पहिचान यह है रङ्ग जर्द चमेली (किञ्चित् सुर्खी लिये पीतवर्ण) तीव्र सुगन्ध, जबान में इसका स्वाद भी किञ्चित खार और चावल भर केशर २० मिनट तक मुख में रखने से शिर में गरमी बोध हो इससे विपरीत नकली

जानना। गुण, गरम सुस्वादु वायु कफका नाशक अग्नि तथा बलको वृद्धि करता है। जाड़े के दिनों में प्रायः इसे पान के तथा और खाद्य वस्तु के साथ खाते हैं॥

सफेदचन्दनके तेलका पहिचान।

यह तेल विलायत से भी बन के आता है और एतद्देशीय इतर बनाने वाले गन्धी लोग भी बना लेतेहैं क्योंकि जितने प्रकार के इतर तैयार किये जाते हैं सब में चन्दन के तेल का पुट रहता है और जादे।तर चन्दन का तेल सुजाक के रोग में अधिक काम आता है, परीक्षासे जाना गया है कि सुजाक की बिमारी में और दवाइयों की अपेक्षा चन्दन का तेल अधिक फायदा करताहै परन्तु जब असल पदार्थ नहींमिलता तो गुण न कर अवगुण करता है फिर आज के जमाने में जैसे और २ बातों की तरक्की हुई है और होती जाती है वैसोही छल कपट झूठ बिश्वासघात आदि की भी ऐसी उन्नति हुई है कि कहीं पैर धरने को जगह बाकी न रही और समय के प्रभुत्व को लखाते बढ़ताही जाता है। खैर सफेद चन्दन के तेल की असिल परीक्षा यह है कि एक खूब साफ सफेद कागज पर थोड़ा तेल लगा दूर से कुयले की आंच दिखाओ फौरन तेल उड़ जायगा जरा भी दाग न मालूम होगा और नकली तेल का दाग बना रहेगा॥

अँगरेजीइमलीकी चटनी।

छिली इमिली २ सेर, मिरचा आधपाव, अदरख छिला हुआ आधपाव, लहसुन छिला आधपाव, दालचिनी १ छटांक, करन (जरंफ्त) एक पाव, किसमिस १ पाव, चिनी १ सेर, निमक ढाई तोला, बिलायती मिरचा अंगूर का १ बोतल (बनाने की बिधि) प्रथम किसमिस और करन को खूब साफ कर पानीमें धो सुखा लेय और इमिलीको थोड़े पानी

में भिजाओ दो घंटे के बाद मल कर बीज फेंक उसका गूदा ले लेय बाद इसके लाल मिरचा अदरख लहसुन और दालचिनी चारो चीजों को शिलपर सिरका दे कर खूब महीन पीस लेय फिर सब चीजों को मै सिरका चिनी आदि एक कलई दार बरतन में डाल चूल्हे पर चढ़ाय मन्दाग्नि में पकावे जब खूब सुगन्ध आने लगे तब उतार लेय और अमृतबान या बड़े मुख के शीशे में भर कर रख देय यह चटनी बरसों रहती है, भोजन के समय या जब चित्त चाहे खावें। इस चटनी को लाट साहब तक खाते हैं॥

आंमकी चटनी।

आंम कच्चा ७ सेर, चिनी साढ़े तीनसेर, सिरका अंगूर का दो बोतल, लाल मिरचा २ छटांक, बादाम की गरी १ पाव धनिया १ पाव, किशमिश तीन पाव, अदरख डेढ़ पाव, नमक डेढ़ पाव, लहसुन २॥) तोला (बनाने की बिधि) यह चटनी दो प्रकार से बनती है एकमें आंम के कतरे रहते हैं और दूसरा आम को पीस तय्यारकी जातीहै। पहिले आंम को छील महीन कतर शिल पर पीस ले बाद इसके मिर्चा लहसुन धनियां अदरख चारो को शिल पर सिरका में पीस ले और बदाम को महीन कतर ले फिर सब चीजों को एक कलईदार बर्तन में डाल चूल्हे पर चढ़ाय धीमी आंच से पकावे और करछुल से बराबर चलाता जाय जब देखे कि खूब पक गया महक आने लगी तब उतार ले और किसी कांच के पात्र में रख ले यह चटनी अति सुस्वाद अग्निबृद्धि गुण विशिष्ट होती है यह चटनी प्रायः बनी बनाई सौदागरों की दुकानों में भी रहती है, और इसे बड़े २ अंगरेज लोग खाते हैं॥

सुजाककी दवा।

ऐसा कौन मनुष्य है जो इस रोग से ग्रसित न हो इसे वैद्यक में

मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात, हिकमत में सुजाक और डाकृरी में गनेरिया कहते हैं जिसका स्पष्ट लक्षण एवं चिकित्सा लिखेंगे निदान से लेकर गतार्द्ध तक इसकी औषध जानते हैं परन्तु जिस प्रकार हैजे की औषध आज तक उत्तम नहीं निकली वैसाही इस रोग की भी ॥

शीतलचिनी आधपाव, सेलखरी आधी छंटाक, कलमी सोरा १॥ तोला, फिटकिरी ६ मासा, गेरू मट्टी ४ मासा, कपूर ३ मासा सब औषधियों को महीन कूट कपरछन कर तीन २ मासे की पुड़िया बना लेय दिन में छः दफे अर्थात् दो २ घंटे पर एक २ पुड़िया मुख में रख दूध पानी या सिर्फ आधपाव पानी से उतार जावे । आठ रोज इस औषध के खाने से पेशाब का जलन और मवाद का आना अवश्य बन्द होगा यदि आठ रोज में मवाद न बन्द हो तो इस औषध को भी खावे और निम्नलिखित पिचकारी भी लेवै, ऐसा देखा गयाहै कि बिना पिचकारीके नहीं आराम होता । गेरू मट्टी २ तोला मेंहदी की ताजी पत्ती २ तोला सफेद सुरमा २ तोला रसवत २ तोला इन चारो औषधियों को डेढ़ सेर पानी में महीन घोंट पकाय लेय जब तीन पाव जल रह जाय छान कर बोतल में भर लेय और दोनों समय इसी की पिचकारी लेवै (पिचकारी लेने की विधि) जब पिचकारी लेना हो प्रथम पेशाब करे बाद एक चौकी पर उकुरू बैठ पिचकारी भर कर लिङ्गमार्गमें देय और तीन मिनट तक लिङ्ग का मुह बन्द करे ताकि शीघ्रही जल गिर न जाय जब पिचकारी ले चुके तो आध घंटा तक पेशाब न करै इसी भांति तीन दफे सबेरे और तीन दफे साम को लेय पांच ही चार रोज में मवाद बन्द हो जायगा यदि इससे फायदा न हो तो यह पिचकारी लेवै ॥

त्रिफला पाव भर नीँव की पत्ती आधपाव धनियां एक तोला अफीम ६ मासा सब दवाइयों को अधकचरा कर डेढ़ सेर पानी में रात को भिजा देय और जोश देय जब आधा पानी रह जाय छान कर बोतल में भर लेय पूर्वोक्तानुसार आठरोज तक पिचकारी लेवे से अवश्य फायदा होगा । प्रायः

लोग यह शङ्का करते हैं कि पिचकारी लेने से मूत्रमार्ग का छिद्र बड़ा हो जाता है ? पिचकारी लेनेसे मूत्रमार्ग बड़ा नहीं होता परन्तु अधिक पिचकारी लेने से पोते में पानी उतर आता है ॥

अगर पेशाब रुक २ होता हो या मूत्रमार्ग में कुछ पड़ गया हो तो इस औषध का सेवन करे। कच्ची फिटकरी १ तोला कबाबचिनी २ तोला रेवचिनी १ तोला कल्मी शोरा १॥ तोला छोटी लायची के दाने १ तोला सब दवाइयां कूट कपड़ छन कर चार २ मासे की पुड़िया बना ले आधसेर गौ का दूध और सेर भर पानी दोनों मिला एक कलिका पात्र में रख दे और उसी के साथ दो २ घंटे पर एक २ पुड़िया खाय। पथ्य मूंग की खिचरी इस प्रकार तीन दिन सेवन करने से मूत्रमार्ग निरन्तर साफ हो जाता है। सुजाक रोग प्रायः तीन कारणों से होता है आतशक स्वप्न, दोष और वेश्यागमन परन्तु आजकल वेश्यागमन से यह रोग होते हुए अकसर देखा जाता है जब लोग वेश्या के पास जाते हैं तो उस समय यह नहीं जाना जाता कि इस को सुजाक है, परन्तु जब लिङ्ग योनि में पहुंचता है तो अतिगर्म अग्नि के स्पर्श सा मालूम होता है चाहिये कि मनुष्य उसी समय उससे अलग हो जाय तो उत्तम है नहीं तो दो तीन दिन के बाद मूत्रमार्ग में दर्द और पीब आने लगती है। इसे मैं प्रथमही स्पष्ट कर चुकाहूं कि एक औषध प्रत्येक व्यक्तियों को लाभ कदापि नहीं पहुंचा सक्ता है। थोड़े रोज हुए कि एक स्त्री जिस की उमर २५ वर्ष की थी दो वर्ष से श्वेत प्रदर रोग में ग्रसित थी जिसने हर एक डाक्टर हकीमों को दवा की परन्तु कुछ लाभ न हुआ अन्त में हमारे पास आई दो मास पर्यन्त मैंने भी अनेक औषध द्वारा उसकी चिकित्सा किया कुछ फायदा न हुआ तब एक साधारण औषध बना कर दिया कि उससे वह १६ दिवस में आराम हो गई। अकरकन्द और रतालु दोनों को महीन कतर छाया में सुखा कूट कपर छन कर एक २ तोले की मात्रा बनाले, हर एक मात्रा में ६ मासा मिश्री और तीन मासा बरगद का दूध मिला मुख में रख पाव भर गौ के कच्चे दूध से उतार जावे इसी प्रकार दोनों समय १६ दिवस पर्यन्त सेवन करने से असूल रोग नष्ट दिखा गया ॥

किसी किसी को स्वप्न दोषसे भी सुजाक का रोग हो जाता है सबब यह है कि स्वप्न में काम विलास प्राप्ति होने पर जहां वीर्य्य स्खलित हुआ फौरन आंख खुल जाती है इस से वीर्य्य बाहर निकले से रुक कर सुजाक हो जाता है इसप्रकार से जिसे सुजाक हुआ हो उसके लिये यह औषध लाभ कारी है, दो तोले असगंधी को रात में आधसेर जल में भिगो दे और सवेरे उसे खूब मलकर लुआब निकाल कपड़े में छान दो तोला चिनी मिलाकर पी जावे और गर्म चीजों से परहेज करे पांच चार रोज में आराम हो जाय गा अगर इससे फायदा न हो तो इसे पिये खीरे ककड़ी के बीज ४ तोला असगंधी ४ तोला गोखुरू २ तोला बिहीदाना २ तोला बबुल का गोंद २ तोला धनिया २ तोला इसबगोल २ तोला आंवला सूखा २ तोला सब दवाईयों को अधकचरा कर १० पुड़िया बांध ले एक पुड़िया रात को आधसेर जल में भिगोदे सवेरे खूब मल छानकर एक तोला चीनी मिला पीजावे इसी प्रकार सवेरे भिगावे तो शाम को मल छान कर चिनी मिला पिये निश्चय है कि सात आंठ रोज में विलकुल जाता रहेगा। अगर आठ रोज में पूर्ण आरोग्यता लाभ न हो तो यह दवा भी पिये जावे औ निम्नलिखित पिचकारी भी लेवे। हड़ बहेरा आंवला तीनो बराबर पावभर ले अधकचरा कर रात को सेरभर पानी में भिगो दे प्रातः काल उसे छान एक मासा नीलाथोथा खूब महीन पीस मिला दे फिर इसकी चार पांच दिन तक दोनों समय पिचकारी लेवे अवश्य फायदा करेगा। खाने को मूङ्ग की दाल गेहूं की रोटी पुराने चावल का भात घी गौ का दूध उत्तम है। एक सुजाक भी इसी प्रकार का हो जाता है जैसे कि अफीम आदि स्तम्भन की औषध खाकर एक रात में तीन चार बार प्रसङ्ग करे और हर बार बाद मैथुन के पेशाव न करे तो वीर्य्य की थोड़ी विंदु लिङ्ग के छिद्र में जम जाती है और सवेरे तक घाव कर देती है। यह सुजाक विना पिचकारी के आराम नहीं होता॥

पिचकारी की दवा।

नीलाथोथा सीली कौड़ी दोनों अग्नि में भूंज कर छः २ मासा

विलायती नील एक तोला तीनों को खूब महीन पीस दो सेर जल में घोंट कर बोतल में भर लेय अन्दाज के माफिक दोनों समय पूर्वोक्तानुसार पिचकारी लेवै। और उपरोक्त औषध का सेवन करै। अगर पेशाब में जलन अधिक हो तो यह औषध का बुन्द्री जुलाब लेवै। शीतलचिनी, कलमी सोरा, सफेदजीरा और छोटी लायची यह सब दवा एक २ तोले सब को महीन पीस छान कर १६ पुड़िया बना ले दो २ घन्टे पर एक २ पुड़िया मुख में रख दूधपानी से उतार जावै इसी प्रकार दिनभर में पांच छः दफे पीवै और धोई मूंग की दाल और पुराने चावल का भात खावै मूत्र जलन जाती रहेगी॥

पिचकारी सब प्रकार क सुजाक की।

रसवत फिटकिरी सफेदखैर और कपूर दो २ मासा सफेदसुरमा एक तोला इन सब औषध को आधसेर जल में घोंट कपड़े में छान दोनों समय पिचकारी लेवै तो सब प्रकार की सुजाक आरम हो॥

दूसरी पिचकारी।

स्वानजिह्वा (कुत्ता का जीभ) एक, उसे अग्नि में जलाय कोयला कर ले तूतिया १ रत्ती, रसकपूर १ रत्ती, सफेदखैर ५ रत्ती, उक्त सब औषधियों को पावभर पानी में घोंट दोनों समय पिचकारी लेने से असाध्य सुजाक भी अच्छा हो जाता है॥

कुराकाटने की पिचकारी।

मनुष्य के शिर के बाल दो तोला प्रथम उसे कतरनी से खूब महीन कतर ले और एक पाव भेड़ी अथवा बकरी के दूध में इतना खरल करै कि एक दिल हो जाय बाद दोनोंसमय पिचकारी लेवे। जो पुराना सुजाक

होने से लिंगेन्द्रिय के भीतर मांस ग्रन्थि पड़ जाती है जिसके वजे से मूत्र रुक जाता है और सर्वदा एक प्रकार का दर्द हुआ करता है। इस रोग को डाक्टर लोग इस्टिक्चर अर्थात् मूत्रमार्ग छोटा हो जाना बतलाते हैं ॥

और जिसकी दवा सेवाय सलाई के अन्य नहींहै यह रोग इस पिचकारी से आरोग्य होता है। एक दो रोज इस पिचकारी के लेनेसे कुरा कट जाता है पहचान यह है कि मूत्र मार्ग से खून निकलेगा, बाद दो रोज के निम्नलिखित पिचकारी लेवे ताकि घाव सूख जावे आधपाव त्रिफला, रसवत १ तोला सफेदखैर ६ मासा मुरदाशंख ६ मासा नींब और बबूली की पत्ती एक २ छटांक सब दवा को कूट कर रात को तीन पाव जलमें भिगा दे सवेरे ऑंस देय जब आधसेर जल रहजाय खूब मल कर छानले और दोनों समय चार पांच रोज सब पिचकारी लेवे ॥

सुजाक पर अंजन ।

गौ के बछड़े का एक सींग पुरानी रुई में लपेट कर बत्ती बनावै और कोरे दीपक में रख कर उसमें रेंडी का तेल भर देवै फिर उसे जला दे और उसके ऊपर एक कच्ची मिट्टी का पात्र रख कर काजल पारै और उस काजल को दोनों समय आंखों में लगाया करै खटाई और बादी पदार्थों से पहरेज करै तो सब प्रकार का सुजाक आराम हो ॥

कामोत्पादक वटी ।

जायफल १ तोला, अकरकरहा १ तोला, सफेदचन्दन १ तोला, कङ्कोल १ तोला, छोटीइलायची १ तोला, जावित्री, केशर, अफीम, लौंग, सोंठ, दखिणी लाल, तेजपात, नागकेशर, और शुद्ध भांग ये छः २ मासा भी भांग का अभ्रक, शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध काला धतूर का बीज और कपूर तीन २ मासा, कस्तूरी २ मासा इस्टिकनिया (कुचलेका सत) अंगरेजी

दवाखाने में मिलता है २ रत्ती। प्रथम अफीम और सिंगरफ को बरगद के दूध में घोट ६ छुहारे का पेट चीर उसका बीज निकाल उसीमें दोनों को भर डोरे से कस कर बांध दे जिसमें कि सन्धि न रहे बाद इसके १ पाव बरगद के दूध में खूब पका ले फिर छुहारे को निकाल डोरा अलग कर सुखा लेय बाद इसके उपरोक्त औषधियोंको कूट कपरछान कर पुस्ते के लुगदी १ छटांक (पुस्तेका फल बीज समेत अधकचरा कर १ पाव पानी में मन्दाग्नि से पकाय ले जब एक छँटाक पानी रह जाय मल कर छान ले) में छोहारे के घोंट उर्द की बराबर गोली बना लेय। हमारे औषधालय में भी तैयार हैं जिनको इच्छा हो ॥) टिकट भेज ४० गोली मंगालें ॥

खानेकी विधि।

यह बटी पूरी मात्रा है कमजोर को आधी गोली देना उचित है, सन्ध्या समय १ गोली खाकर ऊपर से अधावट बायगार दूध में ६ माशा शहद छोड़कर पी जाय, इससे मसङ्गमें दूनी तेजी और स्तम्भन होताहै। शीत वायु के कोप से उत्पत्ति रोग प्रमेह शरीर का दर्द, गठिया, अङ्ग का जकड़ जाना, पक्षाघात (लकवा) बहुमूत्र खांसी स्वास उक्त विधिवत् इस गोली के खाने से आराम होता है। यदि पांच चार रोज के सेवन से उपरोक्त रोगोंमें कुछ उपकार न हो तो जानना चाहिये कि यह बिमारी खून की गरमी से है। मगर गोली दोनों समय खिलाना चाहिये ॥

लवणभास्कर चूर्ण।

सैकड़ों मरतबे आजमाया है। समुद्र लवण (खारा नमक) ८ तोला कालानमक ५ तोला बिड़नोन या अवाखार, सेन्धानोन, धनियां, पीपर पिपरामूल कालाजीरा, तेजपात नागकेशर तालीस और अमलवेत दो२तोला मिर्च जीरा सफेद और सोंठ एक २ तोला, अनार का सूखा दाना ४तोला

लायची छोटी ५ मासा दालचिनी ५ मासा । इन सब दवाइयों को कूट कपड़छान कर बोतल में भर रख दे या नीबू के अर्क में घोंट झरबेली की बराबर गोली बना ले, चूर्ण की अपेक्षा बटी में अधिक गुण एवं चूर्ण छः महीने में गुण रहित हो जाता है और बटी वर्ष पर्य्यन्त गुणदायक रहती है ॥

खानेकी विधि ।

गुल्म, मंदाग्नी और उदर शूलमें घी के माठे से मद्य देना चाहिये अर्थात् १ मासा दवा मुख में रख माठे से उतार जावे । तिल्ली, मांदी बवासीर, कब्जियत् आमातिसार बलगमी खांसी और श्वास के रोग में यह चूर्ण गरम जल या शराब के साथ खाना उचितहै । इसका मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्य्यन्त बालक को आधा मासा या जैसा बलाबल हो देना चाहिये ॥

वृहत् हिंग्वादि वटी ।

हींग, जवाखार, सज्जीखार, (सोहागा) सेन्धानोन, कालानोन, बिड़-नोन, छोटी पीपर, पिपरामूल, चीता, मिर्च, कपूर, धनियां, इमिली, दु-धियाबच, अजमोदा, पुहकरमूल, सोंठ, करञ्ज की गरी, जीरा स्याह, हर्रै पाढ़ी, इन सब दवाइयों को एक २ तोला ले हींग को भून ले बाद सब को कूट कपड़ छान कर कागजी नींबू के अर्क में घोंट झरबेली बैर की बराबर गोलियां बना ले ॥

खानेकी विधि ।

हृदय और गले की जलन एवं विशूचिका (हैजा रोग) रोग में अर्क गुलाब के साथ, पेट के फूलन (पेट भरासा मालूम हो) आंत वृद्धि और

आंव रोग में सौंफ के अर्क या क्वाथ के साथ, पिलही वायुगोला, उदर शूल और हिचकी रोग में गरम जल और मन्दाग्नि में सिर्फ साधारण जल के साथ दिन में दो, तीन या चारगोली खाना चाहिये अगर रोग प्रबल न हो तो सिर्फ दो दफे अर्थात् सांझ सवेरे खाना काफी है। परीक्षा से ज्ञात हुआ है कि इस गोली के खाने वाला मनुष्य चाहे जहां का जल पिये उसे हैजे की बिमारी न होगी इससे उचित है कि हर एक गृहस्थ थोड़ी २ इस गोली को अपने पास अवश्य रक्खें॥

कृमि नाशक चूर्ण।

रेवचीनी वायबिरंग और कबीला इन तीनों को बराबर ले महीन चूर्ण कर लो मात्रा १ मासा से ३ मासा पर्य्यन्त सांझ सवेरे फांक कर ऊपर से पाव आधपाव गौ का कच्चा दूध पी लेने से थोड़े ही दिनों में समस्त उदर व्यापि कृमि (केंचुआ वगैरह) नष्ट हो जाते हैं॥

प्राप्त।

प्रिय महाशय!

इस मेरी बिमारी औषधि को भी अपने अमृत सागर तुल्य ग्रन्थ में स्थान दीजिये॥

सोंठ, सौंफ, खसखस, इन तीनों पदार्थों को सम भागले एक भाग भून डालें और दूसरा कच्चा रहने दें कूट कपड़छान कर उतनी ही कच्ची खांड़ मिला कर आधा तोला या कुछ ऊपर मात्रा बना शीतल जल के साथ भोजन के आदि या अन्त में खा ले तो आंव गिरना या आंव से खून का गिरना अवश्य बन्द हो जायगा॥

पंडित रघुनाथ एफ० ए० क्लास
बरेली कालेज

अंगरेजी काली रोशनाई ।



माजू फल को पानी में औटा कर उसमें कसीस मिलाने से उसका रंग काला हो जाता है और फिटकिरी मिलाने से और भी उत्तम होगा और माजू फल को औटाते समय किञ्चित मात्र लौंग डाल देने से स्याही बिगड़ती नहीं है इस क्रिया में माजू फल १ पाव जल डेढ़ सेर आधा जल जलजाय, कसीस एक तोला फिटकिरी ६ मासा, लौंग ६ मासा उत्तम होगा ॥

दूसरी विधि ।

हड़ बहेड़ा आंवला इन तीनों चीजों को बराबर ले अधकचरा कर लोहे की कड़ाहे में चतुर्गुण जल में डाल भिगा दे दूसरे रोज आंच दे जब आधा जल रहि जाय त्रिफला की चौथाई कसीस डाल पांच चार दिन इसी तरह रहने दे बाद छान काम में लावे ॥

तीसरी विधि ।

माजूफल का चूर्ण २ पौंड कसीस ५ पौंड बबूल का गोंद ४ औंस पानी १२ ग्यालन क्रियाशोट अथवा आलकतरे का तेल २ ड्राम ॥

चौथी विधि ।

माजू फल १२ पौंड कसीस ४ पौंड गोंद ३॥ पौंड पानी १८ ग्या-लन । ऊपर लिखे दो प्रकार की स्याही में जो पानी का भाग लिखा

है उसमें से चार भाग का तीन भाग अर्थात् तीन हिस्से पानी में पहिले माजूफल को आग पर एक घंटा चढ़ाना चाहिये और गोंद का जो परिमाण लिखा है उससे दूने पानी में गला के मिलाना होगा बाकी चौथाई पानी में कौसीस मिला के सब को एक संग मिला डालना और पीछे से आलकतरे का तेल देना ॥

ब्ल्यू ब्लैक काली नीली स्याही।

कौसीस आधसेर माजूफल डेढ़सेर, पानी दससेर कत्था एक छटांक नील। रंग आधी छटांक पीली पुड़िया का रंग (बजार में बिकती है) २॥ रत्ती। पहले माजूफल को पीस के दससेर पानी में भिगा रक्खे फिर आग पर चढ़ाओ जब गर्म हो जाय तब कौसीस और कत्था डाल देय जब देखो की रंग खूब काला हो गया हो तब उतार के छान लो और आठ दश दिन उसी तरह रहने दो फिर दुसरी दफे छान के नीला रंग और पीला रंग मिला दो ॥

ग्रीनब्लाक वा सबुज स्याही।

पांच भाग माजूफल के चूर्ण को २०० सौ भाग पानी में मिला आग पर चढ़ाय के जलाओ फिर छान लो फिर पांच भाग कौसीस को चार भाग लोहे के चूर्ण के साथ मिला के उसमें आधा पाइन्ट नील और तीन भाग सलफियूरिक एसिड (गन्धक का तेजाब) मिला दो। यह स्याही लिखने के समय हरी दिखलाई पड़ेगी फिर काली हो जायगी ॥

हरी स्याही।

जंगाल १ छटांक, क्रमभाक टारटार (यह एक प्रकार का निमक है अंगरेजी दवा खाने में मिलता है) आधी छटांक पानी यथापाय दोनों

चीजों को पानी में मिला के आगपर चढ़ा दो जब आधा पानी रह-जाय तो छान लेय । यह स्याही बहुत उत्तम होती है कितने लोग इसे जंगाल के समान नीला थोथा भी डालते हैं ॥

लाल स्याही ।

ढांक अथवा पीपल की लाख को जरासा लोध और बेर की पत्ती डाल कर चतुर गुण जल में पकाओ जब चौथाई जल रहजाय ६ मासा फिटकिरी डाल दो ॥

दूसरी विधि ।

बक्कन लकड़ी एक छटांक, फिटकिरी आधी छटांक क्रिमआफ टार टार आधी छटांक इन तीनों चीजोंमें सेरभर पानी डाल आगपर चढ़ाओ जब पानी आधा रह जाय तब आधी छटांक ढाक का गोंद मिला दो जब गल जाय तब पौने चार तोला रेक्टी फाइड स्पिरिट और पांच माशा भर कचनियल का अर्क मिला दो यह स्याही बहुत ही सुन्दर होती है ॥

सुनहरी स्याही ।

सोने के वर्क को गोंद के पानी में खूब महीन घोंटो और जरासा उसमें रसकपूर मिला दो । इस स्याही से लिख कर किसी चिकनी चीज के घोंटने से अक्षर चमकीले हो जाते हैं यही तरकीब रुपहली स्याही की भी है इसमें चाहे रसकपूर न मिलावे ॥

आतशबाजी ।

नाम	शोरा	गंधक	कोइला	लोहचूर्ण	लहसुन	तमालपत्र	मराही
बारूद	४ तोला	१०तोला	१२तोला	"	१६तोला	१६ तोला	मा. तो.
गुलरेज	१२	३	१२	६	"	"	"
मालपाल	१ सेर	१ पाव	३छटांक	"	"	"	"
झलाबोर	१२तोला	२ तोला	८ तो०	तो० ५	"	"	"
हजारा	-१०	२	४	५			
करंग	४	४	८	३			
जूही	१४	२	४	५			

गुलरेज (फुलझरी) पहिले शोरा गन्धक और कोयला तीनोंको मिला के खूब महीन पीसो । फिर लोहचूर बारूद से कुछ मोटा अर्थात् बालू की तरह पीस के मिलाओ और एक इञ्ची से दो इञ्ची तक के खोल में भर दो । इसके छुड़ाने से ज़मीन तक फूलों का गजरा सा दीख पड़ेगा (जूही) यह आतशबाजी बहुत ही सुन्दर होती है इसकी बारूद खूब म हीन होना चाहिये ॥

फुलेल बनाने की सहज उपाय ।

सन्दूक के ढकने की तरह एक टीन का बरतन बनाओ, जिसके पेंदे में किनारे की तरफ एक सूराख रहे और उस सूराख में एक नल बाहर की तरफ लगाओ । खूब ताज़े और खुशबूदार गुलाबके फूलकी पत्तियां तोड़ के उपरोक्त ढकने में बिछाओ (पत्तियों की थाक आध इञ्ची से ले के एक इञ्ची तक होनी चाहिये) फिर उसमें थोड़ा सा तिलका तेल डाल दो जब पत्तियां तेल में अच्छी तरह भीग जाएं तब जिसके ऊपर और एक थाक पत्तियों की लगाओ और तेल डालो इसी तरह जितना तेल बनाना होवे उतनीही थाक पत्तियों की लगाते जाओ और तेलडालते

जाओ एक दिन तक तेल में पत्तियों को भीगने दो (एक दिन से ज्यादा नहीं रखना नहीं तो पत्ती सड़के तेल खराब हो जायगा) फिर कापी प्रेस में उस बरतनको रख दबाओ क्योंकि कापी प्रेसमें चीज खूब दबाई जाती है और तेल भी खराब नहीं जाता और नल के नीचे एक बरतन रख दो जब दबाओगे तब सब तेल उस नल के रास्ते से बरतन में चला आवेगा यह तेल बहुत सहज है और बहुत खुशबूदार बनता है इस रीति से बेला चमेली आदि जिस फूल का तेल बनाना चाहो वही बन सक्ता है जितना ताजा और खुशबूदार फूल होगा उतनाही तेल भी अच्छा बनेगा ॥

कुलफी की बरफ ।

पहले धतूरे के फूलकी तरह थोड़ीसी टीनकी चोंगी बना रक्खो जिसकी चौड़ाई की तरफ ढकना रहे और पतली तरफ से बन्द रहे यदि मलाई की कुलफी बनाना हो तो दूध को जला के गाढ़ा कर लो और उसे चोंगे में भर के ढकने से बन्द करलो और आटेकी लोई ढकनेके चारो तरफ लगा दो जिस में ढकना खुल न जाय फिर एक हांडी में बरफ के टुकड़े भरदो और उन चोंगों को उसमें गाड़ दो बरफ के साथ थोड़ासा नमक भी मिला देना फिर उस हांडी का मुख ढांक उसके चारो तरफ कम्बल लपेटो कम्बल में लपेट के ठण्डी जगह में रख दो । तीन चार घंटे बाद दूध जम जायगा । जब बरफ खाली होय तब उसमें से एक चोंगे को निकाल कर उसका ढकना खोलो और दोनों हथेली से पकड़के रगड़ो बस उस में से कुलफी निकल आवेगी यदि नींबू की बनाना होय तो चिनी को पानी में घोलके उसमें थोड़ा सा नीबू का रस मिला देना और दूध की जगह उसी को चोंगे में भर देना ॥

घर के खर्च लायक थोड़ीसी साबुन ।

कार्बोनेट आफ सोडाको साफ जल में डालके सीपका या पत्थरका चूना मिलाओ, जब पानी दूध की तरह हो जाय तब आग पर चढ़ाओ थोड़ी देर बाद उसमें से थोड़ासा निकालो औ २।४ बून्द नाइट्रिक एसिड याने शोरेका तेजाब डाल के देखो कि उसमें बुलबुला उठता है या नहीं जब बुलबुला नहीं उठे उसी समय बरतन को आग पर से उतार लेओ और एक दिन तक ढका रहने दो, फिर ऊपर का खार अलग करलो (परन्तु सावधान रहना जिसमें बहुत हवा न लगे) फिर नारियल का या तिल का तेल या दोनों का तेल मिला कर एक कढ़ाई में रख आग पर चढ़ाओ जब तेल अच्छी तरह जल जाए उसमें ऊपर लिखी खारका पानी डालते जाओ और चलाते जाओ जिसमें जले नहीं जब गाढ़ो होने लगे तब थोड़ासा नोन डाल दो और चलाते जाओ इसी समय जो खुशबूकी चीज डालनी हो सो भी मिला दो और उतार लो जब वह जम जाय तब गृहस्थ के रोज के खर्च लायक अच्छा साबुन बन जायगा ॥



इङ्गलेण्ड यात्रा की समालोचना ।

अब ब्राह्मणों को कौन पूछता है बहुत काल पर्य्यन्त से आशा रखते आये कि अब ब्राह्मण लोग विलायत जाने की व्यवस्था देंगे अन्त में जब देखा कि यह लोग भ्रांत, अदूरदर्शी, स्वार्थी, मूर्ख, और ऐसे सङ्कीर्ण चित्त के हैं कि कभी स्वप्न में भी विलायत जाने को न कहेंगे और यही लोग हमारी उन्नति के बाधक हैं यदि हम लोग इनके आशों को पहिले ही काट डालते तो अब तक बहुत उन्नति कर लेते । कहने का तात्पर्य्य यह है कि लाला रोशनलाल जी बैरिष्टर हो के विलायत से आये हैं

ने द्वीपान्तर वर्ती शत्रुओं से अत्यन्त उपद्रुत हो कर उनके जीतनेके लिये अपने पुत्र भुज्यु को सेना के साथ नावपर समुद्र में भेजा, जब वह नाव समुद्र में बहुत दूर पहुंची तो हवा से टूट गई, तब भुज्यु ने अश्वनीकुमारों की स्तुति की, उन्हों ने सेना सहित भुज्यु को अपनी नावों पर बिठला कर तीन दिन रातमें पहुंचा दिया। इससे भी समुद्र यात्रा सिद्ध होता है जिन्हें अर्थ में शंका हो ग्रन्थ देख लें ॥

भविष्य पुराण में भीष्म युधिष्ठिर के सम्वाद में यह कथा लिखी है कि कांचीपुरी में रत्नसेन नामक एक राजा था उसके देश में देव स्वामी नामक वेद वेदांग पारग ब्राह्मण था जिसकी स्त्री का नाम धनवती था उसके सात पुत्र और एक गुणवती नाम कन्या हुई एक दिन कोई भिक्षार्थी ब्राह्मण आया उसने गुणवती को देखकर कहा कि यह सप्तपदी में विधवा हो जायगी सो सिंहल में सोमा नाम एक धोबिन है यदि वह तुम्हारे घर आवे तो उसका वैधव्य नष्ट हो जाय अर्थात् विधवा न होय। यह बात कह कर ब्राह्मण तो भिक्षाटन को गया, उसकी माता धनवती ने अपने लड़कों से कहा कि जो पिता माता का बात माने वह बहन के साथ सोमा (धोबिन) लाने को सिंहल जाय। पुत्राऊचुः ॥

अन्तरादुस्तरःसिंधुः शतयोजनविस्तरः। अशक्यंगमनंतत्र नचसामागमनेवयम् ॥

लड़कों ने कहा बीच में समुद्र बड़ा दुस्तर है, सौ योजनका विस्तार है हम लोगों में सामर्थ नहीं है कि वहां जांय, तब देवस्वामी लड़की का पिता बोला कि मैं सात लड़के वाला हो कर भी अपुत्रहूं, तब छोटा लड़का शिवस्वामी बोला मेरे रहते कौन सिंहल द्वीप में जायगा बस बहिन के साथ वह सिंहल को चला गया वहां सोमा के घरके पास रहा फिर क्षण भर में सोमा ने दोनों को पार उतार दिया और कांची पुर

पहुंचे। जिस्का दृष्टान्त अब तक मौजूद है कि हिंदुओं में सप्तपदी के पूर्वही लड़कियों को धोबिन के घर सुहाग लेने को भेजते हैं। विचार करिये कि यदि समुद्र यात्रा का निषेध होता तो शिवस्वामी अपने ब्राह्मिन को लेकर वहां क्यों जाता। गर्ग संहिता द्वारिका खण्ड के तीसरे अध्याय में लिखा है कि, आनर्त नाम राजा सूर्य्य वंश में हुआ जिसके नाम से समुद्र में आनर्त देश है। रैवत उसका पुत्र चक्रवर्ती था, उसने कुशस्थली बना कर राज्य किया॥

श्रीमद् भागवत के अष्टम स्कन्ध के २४ अ० में सत्यव्रत राजा से भगवान ने कहा है—कि तुम सब औषध और बीज लेकर सप्त ऋषियों के साथ बड़ी नाव पर बैठ समुद्र में अन्धकार में ऋषियों के तेज से तिमारोगे॥

भारत सारे १४ अ०।

"कृष्णार्जुनौ गतौलङ्का यात्रौर्थ धन साधने" श्री कृष्ण और अर्जुन यज्ञ के धन लेने को लङ्का में गये। पद्म पुराण के क्रिया योगसार में लिखा है तुम दुःख को छोड़ दो, मेरी बात सुनो। समुद्र के पार पञ्च द्वीप में दौव्यन्ती नामक पुरी इन्द्र की पुरी के समान शोभायमान है उस पुरी के राजा का नाम गुणाकार है उसकी स्त्री का नाम सुशीला और कन्या का नाम सुलोचना है सो न तुम्हारे समान सुन्दर और न उसके समान कोई सुन्दरी है यदि स्वर्ग भोग की इच्छा करना चाहते हो तो उस्से विवाह करो॥

भारत के महा प्रस्थान पर्व का वाक्य है "क्रमेण ते ययुर्वीराः लौहित्यं सलिलार्णवम्" फिर वे क्रम से लौहित्य सागर (लाल समुद्र) को गये। इत्यादि अनेक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पूर्व समय में लोग किसी द्वीप द्वीपान्तर में या समुद्र पार जाना दोष नहीं समझते थे और अब भी सेवाय एक विलायत के अन्य देशों में जहाज पर चढ़ के बराबर ब्राह्मण क्षत्रियादि जाते हैं उन्हें कोई जात च्युत नहीं कर सक्ता। थोड़े दो रोज हुये कि मिश्र के युद्ध में हजारों हिन्दू गये थे, सब पर विदित है कि ब्रह्मा में अब तक हिन्दुओं की

पलटने पड़ी हैं, चीन के कई बन्दरों में हिन्दू रहते हैं मिर्च और कालेपानी बराबर हिंदू पाते जाते हैं डाक्टरों में एक हमारे परम मित्र पं० रामसहाय डाक्तर जोकि आज कल आगरे में डाक्तरी करते हैं, सकुटुम्ब जहाज पर चढ़ के कालेपानी नामक प्रसिद्ध टापू में जा वहां से अपने ससुर को जो एक मुकद्दमे में कैद कर के भेजे गये थे लाये। कलकत्ते से ६ दिन रात में वहां जहाज पहुंचता है। विलायत जाने में २१ दिन रात लगता है। उन्हें कोई भी दोषी नहीं कहा न जात बिरादरी के लोग उन्हें जात से अलग किया है ॥

अब निषेधक वचन सुनिये जिन्हें प्रायः दुराभिमानी पुराने लकीर के फकीर पोथाधारी जो मूल मंत्र जान सदा जिह्वाग्र में टुबलाते रहते हैं और जहां किसी ने पूछा महाराज विलायत जाना चाहिये या नहीं? झोंप्रही तम्बाकू चर्वित कटु मुखसे तृणवके समान उगल देते हैं ॥

समुद्र याना स्वीकारः कामण्डलु विधारणम् ।
इमान्कलियुगेधर्म्मान् वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ॥

समुद्र यात्रा करनेवाले का स्वीकार, कमण्डलु धारण, इत्यादि धर्मों का अनुष्ठान कलियुग में वर्जित है। यह वृहन्नारदीय पुराण का वचन है ॥

आदित्य पुराणे ।

द्विजस्याब्धौतु नौयातुः शोधितस्यापि संग्रहः ।

समुद्र में नाव पर यात्रा करनेवाले द्विज को शुद्ध करके भी ग्रहण न करना ॥

निर्णय सिंधौ ।

आगार दाही गरदः समुद्र यायी च कुण्डश्चय कूटकारी ॥

मकान जलाने वाला, विष देनेवाला, समुद्र में जानेवाला, कुण्ड (पिता के जीते दूसरे से उत्पन्न) के रखनेवाला और कपट करनेवाला ब्राह्मण श्राद्ध में भोजन के लिये निषिद्ध है इसमें खण्डन मण्डन दोनों के वचन लिख दिये गये हैं इससे अधिक प्रमाण मिलना कठिन है बुद्धिमान जिस पक्ष को सच्चा समझें मानें ॥

आरोग्य दर्पण।

तृतीयखण्ड।

जिसमें

वेश्यादि गमन द्वारा तथा वीर्य्यक्षय पर पूर्ण दृष्टान्त से
लेकर उत्तम सन्तान उत्पन्न करने पर्य्यन्त तथा अनेक
प्रकार की सिद्धऔषधियां नित्यकर्म आदि से
पूरित हैं जिसको पं० जगन्नाथ शर्म्मा
राजवैद्य ने सर्वसाधारण के
उपकारार्थ बनाया।

आयुर्वेदोक्त औषधालय

जानसेनगञ्ज—इलाहाबाद

"धार्म्मिकयन्त्रालय" प्रयाग में मुद्रित हुआ।

द्वितीयबार १०००] फरवरी सन् १८९८ [... मूल्य १॥)

सूचीपत्र ।

आरोग्यदर्पण—तृतीय खण्ड।

वेश्यादि गमनद्वारा वृथा वीर्य्य अपक्षय और शारीरक हानि पर पूर्ण दृष्टान्त।

दूसरे खण्ड में मैं इस विषय के भलीभांति दर्शाय चुका हूं कि जब तक आर्य्यगण हस्तमैथुन वेश्यागमनादि द्वारा वीर्य्य के अपव्यय से संरक्षित न होंगे भारत का कल्याण होना अति दुष्कर है, क्या यह मनुष्य जो अकथनीय अमूल्यरत्न सृष्टिकारक जीवन मूल के उन्मत्तों के भांति प्रतिदिन निस्पृही होके ऊसर भूमि में फेंक रहा है अकाल मृत्यु से बच सक्ता है? पुत्रवान, धनवान, विद्वान और बलवानोंकी कोटि में उसकी गणना होगी? कभी नहीं। अल्प वीर्य्य ही होने के कारण आर्य्यावर्त्त का राज्य मुसल्मानों ने ले लिया और असंख्य भँकुआ ऐय्याशों के कौड़ी गुलाम बना के सर्वदा के लिये बिचारे मिटे मिटाये कचरे कचराये हिन्दुओं के छाती पर आरा चलाने के लिये इसी भारत में छोड़ गये। मुसल्मानों ने भी जब ढाल तरवार जुलाहों के गले में डाल आप दिन रात वेश्यागमनादि में लिप्त हुये और उधर माहठों के चित्त पर वीर रस की अंतर्दृष्टा प्राप्त हुई अथवा अंगरेजों के सौभाग्य देवता ने उनके द्वारा रास्ता साफ करा दिया कि बिना प्रयास अकंटक राज प्राप्त हुआ, जिनको सौ वर्ष से अधिक हो गये कि वीर्य्य रक्षाही के प्रताप से भारत का शासन कर रहे हैं, तो भी कितने अन्धों के नहीं सूझता कि जब तक अंगरेजी विद्या पढ़ किसी बड़े राज्याधिकार में प्रवृत्ति नहीं होते तबतक विवाह नहीं करते क्योंकि अल्प वीर्य्य में बुद्धि विपर्य्यय रहती है और पूर्ण वीर्य्य की मनीषा शक्ति अनुमित पदार्थ पर झटपट दौड़ती है।

देख लो एक पक्षवाले नेशनल कांग्रेस के लिये कटिबद्ध हैं दूसरे लोग विपरीत कहते हैं कि यह न होना चाहिये। कांग्रेस अथवा जितने

देशोपकारक कार्य्य होते हैं उनमें प्रथम बहुत परिश्रम और दौड़ धूप करनी पड़ती है और बुद्धि शक्ति जो वीर्य के आधीन है यह साक्ष्य देती है कि इस आरंभित कार्य में अवश्य भलाई होगी और इसका अन्तकाल अच्छा होगा सो जो लोग जितेन्द्रिय और वीर्य के अपव्यय से बँचे हुए हैं उनकी बुद्धि शक्ति किसी व्यापार अथवा पारमार्थिक कार्य को नहीं रोकती बल्कि और उत्तेजित करती है और स्वार्थ रक्षा के उपरान्त परमार्थ में भी उनका मन उत्सुक रहता है और जो वेश्यादि गमन के द्वारा वीर्य का नाश कर चुके हैं या कर रहे हैं उनका उत्साह दिन प्रति दिन हत और हीन होता जाता है उन्हें आवश्यक स्वार्थ और क्षणिक सुख जो लम्पटता का अन्तिम प्रमोद है चित्त में बसा रहता है उससे उनके मन को अवकाश नहीं मिलता महर्षियों ने जो वीर्य बढ़ाने की अनेक औषधियां लिखी हैं वह केवल लाम्पट्य और तुच्छ विषयके लिये नहीं किन्तु मस्तिष्क शक्ति और अखण्डबल धारण और प्रबल साहस की वृद्धिके प्रयोजन से और ब्रह्मचर्य व्रत का भी यही अभिप्राय है कि प्रथम वीर्य्य रक्षा से विद्योपार्जन होगा पश्चात् गृहस्थाश्रम आदि के प्रबन्ध में निपुणाई होगी सो हमारे देश में शास्त्र के विपरीत ब्रह्मचर्य्य का प्रथमही लोप हो गया, साधारण जनों में तो अल्पावस्था के विवाह और सीमके नीचे गर्भाधान के द्वारा अल्प वीर्य्यता और मानुषी सृष्टि की दुर्बलता का विस्तार हो गया और धनवान तथा प्रभुता वालों का वीर्य्य वेश्या और व्यभिचारिणियों के हाथ बिक गया यहां तक नौबत पहुंची कि जन्माष्टमी रामनवमी आदि उपासना पर्व्व में भी वेश्याओं का हाव भाव कटाक्ष मुख्य पूजोपचार समझा गया,इस साल माघ मेले में एक नान्हकशाही महन्थ के यहां महीना भर यही मदन महीपति का डंका बाजता रहा सदैव वार वनिताओं के कटाक्ष से दरबार भरा रहता था धन होने की पूर्णता का प्रमाण इस समय वेश्या ही जिस के विषय भर्तृहरि राज ऋषि ने यह लिखा है—

"वेश्याभौमदनज्वालारूपेन्धनसमेधिता । कामिभिर्यत्रहूयन्तेयौवनानि धनानिच" ॥

दोहा।

गनिका कनिका अगिन की रूप समिध मजबूत।
होम करत कामी पुरुष धन योवन आहूत ॥ १ ॥
बुद्धि विवेक कुलीनता तबही लों मन माहिं।
कामबाण की अगिन तन जबलों भभकत नाहिं ॥२॥

भगवान् मनु ने भी लिखाहै कि पर स्त्री गमन से बढ़कर आयुर्बल का हरनेवाला कोई नहीं है "यथा–नातःपरमनायुष्यं परदारोपसेवनं" कारण यह कि बुद्धि ज्ञान पराक्रम का मूल कारण जो वीर्य्यहै सो उसी के नाश और अपहरण की चेष्टा वेश्या लोग करतीहैं जिस प्रकार भेदक औषधियां कुटकी आदि अँतड़ियों के मल को ढूंढ़ २ के भेदन करतीहैं ऐसे ही शुक्रतत्व को उत्तप्त करने और बाहर निकालनेकी विविध चेष्टा वेश्या लोग करतीहैं लोग उसी को सुख समझतेहैं यह नहीं सोचते कि नस नस का प्राण खींचे लेती हैं–जैसा किसी महात्मा का वचन है:–

दर्शनात्हरतेचित्तं स्पर्शनात्हरतेबलम्।
मैथुनात्हरतेवीर्य्यं वेश्याप्रत्यक्षराक्षसी॥

भर्तृहरि जी लिखतेहैं–संमोहयन्ति, मदयन्वि, विडम्बयन्ति, निर्भर्त्सयन्ति, रमयन्ति, विषादयन्ति, एताः प्रविश्यसदयं हृदयंनराणां किंनाम वामनयना न समाचरन्ति ॥

बस बहुत लिखने से शृङ्गाररस के रसिक जन खिन्न होंगे पर क्या किया जाय शास्त्रकारों ने ऐसाही कहा है ॥

सोरठ–गनिका के मृदु ओठ, को कुलीन चुम्बन करै।
नट भट विट ठग गोठ, पीकपात्र है सबनको ॥

शृङ्गाररस के रसिक जन जो चाहैं सो समझे हों पर धातुक्षीणता और विषय लम्पटता दोषसे जो २ अवगुण और बुराइयां उत्पन्न होती हैं उनकी गवाही अनेक पुराण और इतिहास दे रहे हैं देखिये ॥

"जब गुन्नोर के राजा को मुसलमानोंने रणमें जीता तो उस फौज के एक प्रधान मुसलमान सरदार खां ने चाहा कि गुन्नोरकी रानी अति रूपवती है किसी उपाय से उसके साथ भोग करें उसके मिलनेकी तदबीर और बन्धिसें करने लगा एक दिन सरदार खां स्वयं रानी के महल में जा पहुंचा और अपने नौकर से उस रानीके दासी को बुलाके कहा कि तुम रानी से जाके बोलो कि सरदार खां आप की खातिर खुद मुलाक़ात के लिये तशरीफ़ लाये हैं ता कि आप को ख़्याल न गुजरे कि हमारी किसी सूरत में तक़्सीर हुई, अब आप को ज़्यादः इसरार करना अबस है, अगर अब भी हमारी अरज़ को कबूल न फ़रमाइयेगा तो बस यही समझिये कि आखिर को तो हमारे अख़्तियार में हैं, मगर कोई काम ख़िलाफ़ मरजी के होनेमें लुत्फ़ नहीं रह जाता आगे महारानी साहिबा को अख़्तियार है। दासी जाके रानी से सब वृत्तान्त सुनाया रानी (शोकमें डूबकर मनही मन में विचार करने लगी) हाय एक तो पतिके प्राण गये दूसरे यह म्लेच्छाधम मुझे अपनी स्त्री बनाकर रखना चाहता है क्या मुझे योग्य है कि क्षत्री वंश में जन्म ले के अपने प्राणप्यारे पति के वध करनेवाले की रमणी बन कर जीऊं प्राण परित्याग करना उत्तम है परन्तु आर्य्यकुल वैरी म्लेच्छ की शय्या स्वीकार करना अच्छा नहीं दासी से कहा कि खां साहब से कह दो कि रानी आप से ब्याह करना पसन्द करती हैं एक रात का अवकाश मिले कल खां साहब रंगमहल में पधारें। दासी ने आके खां साहब से कहा खां साहब अति प्रसन्न हो डेरे में पहुंचे थे कि रानी के महलों से अमूल्य जड़ाऊ आभूषणादि और रँगीले वस्त्र लेकर ख़ज़ानची आया और खां साहब से कहा कि गरीब निवाज़ यह शादी की नज़र महारानी साहिबा ने भेजा है और निवेदन किया है कि कल आप इन्हीं वस्त्र आभूषणों को धारण करके रंगमहलों में पधारिये खां साहब ने कहा

बहुत अच्छा प्रातःकाल खां साहब गुसल कर बस्त्र आभूषण पहन सवारी पर बैठ महलों में गये रानी आदर पूर्बक सजी हुई मसनंद पर बैठाया थोड़ेही देर गुजरा होगा कि सरदार साहब के सकल शरीर में आग सी लग गई और मूर्च्छित हो गिर पड़ा चेहरा नीला पड़गया नौकरचाकर सब घबड़ा उठे रानी (जब देखा कि पूरा काम हो गया) खां साहब से कहा कि जो होना था सो हो गया यह बस्त्र जो आप पहने हुये हैं विष से रँगे हैं आप मेरी इज़्ज़त लेनेपर तैयार हुये उसके बदलेमें, मेरी और आप की मृत्यु एक साथ होगी इतना सुनते ही सरदारके नौकरों ने चाहा कि रानी को पकड़ लें रानी महल पर से कूदपड़ी और प्राण त्यागकर स्वर्गधाम का रास्ता लिया इधर खां साहब भी डेमे में पहुंच कर दोज़ख का रास्ता लिया पर स्त्री गामियों का यही नतीजा सबको मिलेगा और मिलता है ॥

पाठकगण को तिनकौड़ी बाबू कलकत्ता निवासी के दुर्भाग्यवशात् छोटी अवस्था में फांसी पानेका हाल याद होगा कि जिसका आन्दोलन सन् ८६ के आर्य्यावर्त्त भर के सम्वाद पत्रों में हुआथा। तिनकौड़ी नामक एक धनाढ्य बंगाली का पुत्र जिसकी अवस्था सिर्फ़ १४ वर्ष की थी मद्य के नशे में क्रोधातुर हो एक वेश्या (जिसे ५ हज़ार रुपया दे चुका था) को ३५ छूरी मारी जिसके कारण फांसी पाया, यह कोई नई बात नहीं है इसी प्रकार असंख्य आत्मघात रंडियों की बदौलत हुआ करता है क्योंकि वेश्या प्रसङ्गादि से अधिक शुक्र व्यय जनित मन दुर्बल होने से स्वयं आत्महत्या करने की इच्छा कभी २ बलवती हो जाती है। हे प्यारे भ्रातृगणों! पर स्त्री तथा वेश्या को विष के प्याले के समान दूरही से त्यागकरो और ऐसे इन्द्रियजित बनो कि अपनी स्त्रीके अतिरिक्त यदि चैत् आप से अप्सरा (परी) भी आके गमनेच्छा प्रगट करे तो पं० लेखिम्बराज का अनुकरण करो तभी तुम्हारा कल्याण होगा और देश का मंगल कर सकोगे ॥

देखिये, दक्षिण श्रीपुर नाम एक नगर था तिस्में श्रीचन्द नाम एक

राजा रहता था उसी नगर में लोलिम्बराज वैद्य भी रहते थे और वहीं सकल कलाकोविदा सर्वाङ्ग सुन्दरी रत्नकला नामक वारांगना (वेश्या) भी रहती थी उस वेश्या और उक्त राजा से दोस्ती थी। एकदिन हँसी २ में राजा ने पूछा, हे लोलिम्बराज! वेश्यागमनमें क्याफलहै? लोलिम्बराज ने कहा महाराज! वेश्या महापाप ग्रोलो होती है "आयुःक्षतिर्विफलता" आदि अनेकप्रमाण शास्त्रोंमें मिलतेहैं इससे वेश्यागमनकरना कोईभिद्वान अच्छा न कहैगा। यह वचन सुन राजा सभाजनों को विसर्जन कर अंतःपुर (रनवास) में आ रत्नों से जड़ित शय्या पर लेटगया परन्तु इस चिन्ता से कि कौन उपाय से लोलिम्बराज वेश्यागमन करै निद्रा न आती भई, रत्नकला ने पूछा हे स्वामिन आपको नींद क्यों नहीं आती राजा ने कहा जिस उपाय से लोलिम्बराज वेश्यागमन करैं वह विधि रचो तो हमें नींद आवै। वह हँस कर बोली कि आप चिन्ता त्याग आनन्द से शयन करैं, हम कल्हही इस कामको करेंगी। प्रातःकाल रत्नकला पलङ्ग से उठ अपने गृह में आय निज गृह द्वार को कदली स्तम्भ वन्दनवार गन्ध माल्य आदि अलङ्कारों से चमत्कृत कर संध्या समय दरवाजे पर खड़ीहो लोलिम्बराज की राह जोहने लगी। लोलिम्बराज के सभा में जाने का वहीं मार्ग था जब आहीं तो गये, रत्नकला को देख पूछा (किमुत्सवमद्य) आज क्या उत्सव है उसनें कहा कि त्रिभुवन जननी भगवती का आज पूजन है हमारी इच्छा है आप भी चलिये दर्शन करिये। उसके मीठी वचन को लोलिम्बराज सुन देवी के दर्शनार्थ उसके साथ भीतर गये, दोनों को भीतर गयेहुये देखकर पूर्व शिक्षित दास ने केवाड़ा बन्दकरलिया, लोलिम्बराज भीतर भगवती की मूर्ति को न देख चन्द्र बिन्दुकावत् पलङ्ग को निरीक्षण कर पूछा कि यहपलङ्ग किसलिये है? रत्नकला ने कहा सम्भोगार्थ है, हमारी इच्छा थी कि आप को देवी दर्शन के बहानेसे यहां लाकर अपनी कामना पूर्ण करैं। लोलिम्बराज ने चकित चित्त हो स्वधर्म विचार कर कहा कि मैं वेश्यागमन नहीं करता। ऐसा सुन वह विषादवती हो बोली "स्वागतां च स्त्रियं त्यक्त्वा भ्रूणहत्या भवाप्नुयात्" यह धर्म ग्रंथ का मत है इसलिये आपको सम्भोग करना उचित है। लोलिम्बराज ल-

जित होके बोले कि अच्छा तुम्हारे साथ वाणी करके रति करेंगे शरीर और मन करके नहीं (मैथुन आठ प्रकार का होता है)।

स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणं। संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया निष्पत्तिरेवच॥

स्मर्ण (बारंबार चिन्तन करना) कीर्तन (मुख अङ्गादि और उसके बोल चाल की बारंबार तारीफ करना) केलि (हँसी दिल्लगी करना) प्रेक्षण (प्रेम से देखना) गुह्यभाषण (गुप्त बात करना) सङ्कल्प (सम्भोग करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करना) अध्यवसाय (किसी प्रकार प्रसङ्ग उससे अवश्य करें उसमें परिश्रमकरना) और (निष्पत्ति संभोग करना) ऋषियोंने यह आठों के मैथुनही में गणना किया है। बस लोलिम्बराज ताम्बूलरस से (भित्त) देवालों में हँसी दिल्लगी का सम्बोधन सहित रात भर में १२० पद्य युक्त श्लोक बना के लिखडाला। प्रातःकाल राजा के सभामें पहुंचे (राजा तो जानताही था) पूछा महाराज रात कहांरहे (लो०) वेश्याके घर (राजा०) फलक्यामिला (लो०) एक पुत्र हुआ (राजा) वह पुत्र कहां है (लो०) उसीके घरमें है जाके देख लो राजा जाके दिवालों में श्लोक लिखेहुये देख परम विस्मयापन्न होगया और लोलिम्बराज से क्षमा मांगी (लो०) ने कहा हमने तो क्षमा किया परन्तु अब तुम ऐसा कभी किसी विद्वान् के साथ न करना। कहने का तात्पर्य्य यह कि जो लोग अपने अमूल्य जीवन को आनन्द से काटना चाहते हैं वे कभी वृथा वीर्य्य नष्ट नहीं करते क्योंकि इन्द्रियों की संयमता यही शारीरिक बल है सो इस पर लोग बिलकुल ध्यान नहीं देते॥

आजकल वेश्या संसर्ग प्रभृति कारणों से देहमें शुक्र का भाग अत्यंत अल्प तथा दौर्बल्यादि अनेक दोष प्रायः देखे जाते हैं और धातु वृद्धि एवं पुष्ट होने के अर्थ वैद्यों के शरणागत हो अनेकानेक औषधों का सेवन करते हैं। इस तरह औषध सेवन करना असङ्गत है, यह हम नहीं कह सक्ते हमारे कहने का प्रयोजन यह है कि जब तक मूल विषयों की ओर दृष्टि न दी जायगी अर्थात् जिन २ कारणों से उक्त दोष उत्पन्न होते हैं

पहलेही तत् विषय में सावधान न होकर अनर्थक औषध सेवन करने से क्या फल है ? कुछ भी नहीं। कारण यह है कि जैसे कोई धनवान मनुष्य मूर्खता से बेपरिमाण धन खर्च करने से थोड़ेही काल में जिस तरह एक बारगी दरिद्र हो ऋण रूपी ज्वाला में जलने लगते हैं और वेही अपव्ययी धनवान स्वयं सावधान न हो के खर्च किया हुआ धन स्वयं न कमानेसे अन्तमें सहस्रों चेष्टा करने पर भी ऋण परिशोधन तथा सम्पत्ति रक्षा में किसी प्रकार समर्थ नहीं होते और प्रायः देखा गया है कितने ऋणजाल में जर्जरित जन अन्तमें सब सुख विसर्जनकर दरिद्रों की भांति शाकान्न भोजन करके स्वकीय ऋण शोधन में कटिबद्ध हुये तथापि आशा सम्पूर्ण नहीं देखी गई। इसीतरह वे युवकगण वेश्यागमनादि में बेपरिमाण धातुनष्टकरनेवाले जिन्हें स्त्री प्रसङ्ग तथा सन्तानोत्पत्ति करनेकी पूर्ण सामर्थ थी, परन्तु अपरमित शुक्र नष्ट करते २ अन्त में एकबारगी धातु हीन एवं धातु दौर्बल्य तथा ध्वजभङ्गादि (नपुन्सक), उत्कट २ रोगाक्रान्त हो (ऋणग्रस्त धनी पुरुषकी नाई) अपार दुःख भोग करते हैं और हजारों औषध सेवन करने से भी तज्जनित रोग से नहीं छूटते। इतनाही नहीं बल्कि वेश्या और परस्त्री के प्रेम में कितने समूल अर्थात् तन मन धन सुख सौभाग्य सब रसातल को चले जाते हैं–देखिये ॥

लङ्केश्वरो जनकजा हरणेन बाली तारापहारकतया प्यथ कीचकाख्यः । पाञ्चालिका ग्रहणतो निधनं जगाम तच्चेतसापि परदार रतिं न काङ्क्षेत् ॥

जानकी जी के अपहरण से रावण कैसी दुर्दशा के साथ मारा गया, तारा (सुग्रीव की स्त्री) के हरण से बालीकी मृत्यु हुई और द्रौपदी के हरण से कीचक का वध हुआ, अतएव बुद्धिमानों को चाहिये पर स्त्री गमन करने की इच्छा कभी मनमें भी न करें और भी देखिये पुरुरवा राजा उर्वशी अप्सरा की प्रेम रूपी फांसी में फसकर तहस नहस होगया इसलिये सत्पुरुष इस अमूल्य जीवन को क्षणिक सुख सम्पदतार्थ विनष्ट करना नहीं चाहते ॥

हस्तमैथुनादि निषेध ।

वेश्यादि गमन द्वारा जो कुछ अनिष्ट इस शरीरको होताहै उसे भली भांति दर्शा चुके हैं, वैसाही बल्कि उससे कुछ अधिक हानि और शरीरकी निर्बलता एवं अकाल मृत्यु हस्तमैथुन और गुदामैथुनसे होती है जिसका कुछ २ हाल हम आरोग्यदर्पण के द्वितीयखण्ड में लिख भी चुके हैं ॥

इन दोनों कर्मों से लिङ्ग निर्बल, टेढ़ा अग्रभाग स्थूल और शक्ति हीन हो जाताहै । सुन्तेहैं कुरानमें कोई आयतहै कि महम्मदने कहा है कि यदि स्त्री गर्भवती हो और पुरुष को कामकी इच्छा उत्तेजितहो तो वह गुदामैथुन करै, ऐसे पुरुष लखनऊ काशी आदि स्थानोंमें अधिक मिलैंगे । यद्यपि ऐसे २ अनाचार बन्द करनेको हमारी सरकार ने खास कानून जारी कर दिया है परन्तु जो कुसंस्कार बहुत दिनों से मूर्खों के दिल में जमा है एकाएकी छूटना महा कठिनहै । इस स्थल में हमारी राय है कि यदि अपनी स्त्री गर्भवती हो और ६ मास से ऊपर हो उस समय यदि पुरुष अति कामोन्मत्त हो (जिसमें प्रसंग न करनेसे रोग होने का सम्भव है) तो वेद की आज्ञानुसार नियोग करना उत्तमहै, अभावे-सति किसी आरोग्य वेश्या से प्रसंग कर लेना अच्छाहै परन्तु गुदामैथुन करना पुरुष के लिये किसी हालत में अच्छा नहीं है । यह बात हम निस्सन्देह कह सक्ते हैं कि ऐसे २ दुष्ट कर्म प्रथम हमारे आर्य्य भाइयोंमें नहीं थे मुसल्मानों के राज्यसे इसका प्रचार हुआहै और उन्हीं म्लेच्छों के साथ अधिक संसर्ग होने के कारण आर्य्य सन्तान गण भी कुछ दुर्गुणों में परिपक्क और निपुण हो गये हैं ॥

हस्तमैथुन पहिले भी था प्रायः लोगों के मुख द्वारा श्रवण करनेमें आया है कि भगवान् विश्वामित्र ऋषि ने हस्तमैथुनसृष्टि को कियाथा परन्तु प्राचीन सद्ग्रन्थोंमें इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता, लेकिन धर्मशास्त्र में इसके प्रायश्चित्त का विधान पाया जाता है और प्रायः

वैद्यक के सभी ग्रन्थों में गरमी रोग होनेका ये कारण लिखे हैं (हस्ताभिघातान्नखदन्त घातात) हस्ताभिघात (हस्तमैथुन) नख और दन्त के अभिघात (वाजे २ कुकर्मी लोग लड़कों के मुख में लिङ्ग डालते हैं) से उपदंश रोग होता है इस्से जान पड़ता है कि यह कर्म बहुत काल से प्रचलित है। हस्तमैथुन में लोगोंकी क्यों प्रवृत्ति हुई यह निर्णय करना कठिन है। इतना कह सके हैं, एक तो पिताके स्वल्प और उष्ण वीर्य्य का दोष, दूसरे ठीक २ बालकों को रक्षा का न करना, तीसरे शिशुकाल से ही बुरे २ बालकोंका संसर्ग इत्यादि कारणोंसे मुकुलित वीर्य्यका मुख असमयमें ही खुल जाता है। बस लिंग स्थान में जहां किसी वस्तु का रगड़ लगा सुरसुरी बोध होने से एक प्रकार का आनन्द आना आरंभ हुआ तब उसे हस्त द्वारा शिश्न का अग्रभाग खोलने और बन्द करनेकी इच्छा होने लगी। थोड़ेही काल ऐसा करनेसे वीर्य्य स्खलित हो जाताहै। बस जहां एक दफे उक्त क्रिया से अति आनन्द मिला मूर्ख लोग उसीमें लिप्त हो जाते हैं और उसी सुख को अपने इष्ट मित्रों से कह कर उन्हें भी अन्धकूप में गिरा देतेहैं, यह नहीं जानते कि यही सुख हमको कुछ काल पाकर सर्वनाश करैगा। शरीर क्षीण बल वीर्य्य विहीन रमणशक्ति से दीन और मन मलीन कर देगा, शरीर निस्तेज, बुद्धिका ह्रास शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति नष्ट हो जायगी। हमको इस संसारमें जड़ पदार्थकी भांति होकर जीवन काटना पड़ेगा, हमको सन्तानरहित होने से दूसरे के बालकों को देख ललचाना पड़ेगा, जन्मभर वैद्य हकीमोंकी खुशामद करनी पड़ेगी॥

कुछ दिन हस्तमैथुन करनेवाला बालक युवावस्थामें शुक्र मेह आदि रोगों से ग्रसित होता है। शौच करते समय मूत्र के पहले या पीछे वीर्य्य का निकल जाना और स्वप्नदोष से भी पीड़ित होना, तथा प्रसंग में वीर्य्य का शीघ्र पात होना आदि उत्पात होताहै। लिंग भी क्रमशः आकार में छोटा और निर्बल हो जाता है। शिर कमजोर, विचारहीन और नेत्र भी कुछ ज्योतिक्षीण हो जाते हैं। एक अंगरेजी यंत्र है उसके द्वारा तरल वीर्य्य को देखने से जानागया है कि पतले वीर्य्य में छोटे २

कृमि पड़ जाते हैं जिनका स्वरूप अण्डाकृति मस्तक और लम्बी पुच्छ वाले सूत्रवत् होते हैं ॥

केवल इतनेही लक्षणों पर निर्भर नहींहै, इस नीचवृत्ति क्षुद्र क्रिया हस्तमैथुन से इस शरीर को क्या २ हानि पहुंचती है और उसके द्वारा कौन २ सा दुःख भोगना पड़ता है, लेखनी में ऐसी पूर्णशक्ति नहींहै जो चित्र खींचकर दिखा दे परन्तु उक्त घृणित कर्म करनेवाले युवक गण उपरोक्त लेखोंको ध्यानदेके पढ़ेंगे तो आप ही उनके हृदय में चित्र खिंच जायगी और बारंबार अपने कियेहुये दुष्कर्मोंपर पछतावेंगे और आशा है कि बहुतसे लोग जो अज्ञानतावश इस अमूल्यजीवनमूलमें अपने हाथ से कुल्हाड़ी मार रहेहैं चेत जांयगे, और कितने चेतते भी होंगे। जबसे आरोग्यदर्पणमें हस्तमैथुन द्वारा शरीरनाशक कुशीलसे वीर्य्यके सत्यानाश करनेका दोष और भविष्यतमें अनेक क्लेश होने का सम्भव दिखलाना आरंभ किया है तब से अनेक चिट्ठियां उन युवकगणों की हमारे पास आई हैं और आती जाती हैं जो अज्ञानतावश होकर इस सत्यानाशी कार्य्य में लिप्त हो अपने अमूल्य जीवन को वृथा गँवाने में कटिबद्ध थे। वे लोग लिखते हैं। महाशय! भवदीय रचित आरोग्यदर्पणको जिसमें हस्तमैथुन द्वारा वीर्य्यपात का दोष दिखलायाहै पढ़कर पश्चात्ताप किया और शपथ किया कि आज से अब ऐसा दुष्टकर्म कभी न करेंगे परन्तु महाशय जी मैं इस काम को बहुत दिनों तक करता रहा उस कारणसे मैं इतना दुर्बल हो गया हूं कि मेरे कमर में दर्द रहताहै, पढ़नेमें चित्त नहीं लगता, कितनाहू रटते हैं परन्तु याद नहीं होताहै, शिर कमजोर होगया है कलेजा कभी धक २ करने लगताहै, मन उदास रहताहै और बुरे २ ख्यालात् सूझते रहतेहैं इत्यादि। इसको कोई दवा लिखिये या आप के औषधालय में तैयार हो तो वे०पे० पारसल द्वारा भेजदीजिये॥

पाठकगण, वे लोग उपरोक्त लेखों के अतिरिक्त और भी अपनी भीतरी मर्मोंको जो निरर्थक वीर्य्यपात के प्रभाव से उन लोगों को प्राप्त हुआ है लिखकर भेजते हैं, जिसका यथार्थ प्रकाश करना अनुचित जान

नहीं लिखा । इससे जान पड़ता है कि बालकों के दिलपर उस लेखका असर अधिक हुआ है, ईश्वर ऐसाही अच्छा असर सब के दिलपर पहुंचावे । बस इस लेख को मैं यहीं समाप्त करताहूं । आगे कामशास्त्र के अनुसार स्त्री पुरुषों के लक्षण और जो वेश्यागमन में लिप्त हैं और ऐसे चिप्त के हैं कि उनके समझाने में बिचारे आरोग्यदर्पणकी क्या ताकतहै वे ब्रह्मा के उपदेश को भी न मानेंगे तो भी विवेकियों के उपकारार्थ यथा शक्ति कुछ लेख देता हूं ॥

कामशास्त्ररहित गमन निषेध ।

पाठकगण को याद होगा मैं इस वाक्य को लिख चुका हूं "कोक पढ़े बिन रति करै सो नर पशू समान" जो मनुष्य कामशास्त्र के जाने बिना मैथुन करता है वह तद्विषयक सुख से वञ्चित हो शरीर से भी निकम्मा हो जाता है । हमें यह कहते शोक होताहै कि आज भारतके प्राणी गण अत्यन्त रोग ग्रस्त क्यों हो रहे हैं ? कामशास्त्रके न जाननेसे, शायद लोग यह जानते होंगे और प्रायः यह भी कह देते होंगे कि काम शास्त्र तो विषयी पुरुषों का बनाया है । जैसे अपने आनन्द करने के लिये वाममत ब्राह्मणों ने स्थापनकर लियाहै, सो नहीं । व्यभिचारकर्म, परस्त्री गमन और अति विषयसेवन ये तो अवश्य लम्पट और कुत्सित पुरुषों के काम हैं परन्तु रीति पूर्वक स्वदार गमनादि में कामशास्त्र का ज्ञान बहुत उपयोगी है, क्योंकि कामशास्त्र स्त्री पुरुष के प्रमोद का बढ़ानेवाला है कि जिसकी क्रिया से उत्तम सन्तान हो सके हैं । अतएव उचित और प्रयोजन मात्र कामशास्त्र का ज्ञान और पाणिगृहीता वधू का सङ्गम शिष्ट सम्मत है । यह भी ठीक है कि जो जिसके गुण को नहीं जानता उसकी निन्दाही करताहै । कामशास्त्र आयुर्वेद का अंतिम भागहै । ऋषियों ने जब देखा कि लोग अति कामातुर होकर अज्ञानता से अमूल्य रत्न और जीवन के सर्वस्व बीज को वृथा नष्ट करने लगे हैं उस समय आयुर्वेदको मथकर लोकोपकारार्थ कामशास्त्र एक जुदा शास्त्र ही बना दिया । उसीसे चुन कर पं० कोक जी निज नाम की संहिता

अर्थात् कोक नामक एक ग्रंथ बनाया, उसके आशय ले और लोगोंने भी छोटी २ पुस्तकें बनाई हैं फिर अल्पज्ञ प्राणियोंके समझानेके लिये कोक सार नामक संक्षेप भाषा का ग्रन्थ बनायाहै। संस्कृतमें पञ्चशायक और अनङ्गरङ्ग नामक दो ग्रन्थ बहुत प्रामाणिक और उपयोगीहैं जिसे चतुर्थ या पञ्चमखण्ड के आरोग्यदर्पण में शाङ्गोपाङ्ग लिखेंगे। जिसमें रतिप्रिय नर नारी के प्रयोजनीय साहित्योंका संग्रह कियाहै। औषधों और लक्षणों के विशेष विवरण जिस देशकी स्त्री की प्रकृति रति क्रियाके जिस अंग में जैसी होती है उसे भी वर्णन कर दिया है। कामशास्त्र में चार प्रकार के स्त्री पुरुषों के लक्षण और स्त्री पुरुषका परस्पर बर्ताव, कौन पुरुष किस स्त्रीके साथ और किस अवस्थामें विवाह कर सक्ताहै, सत्यशीला और दुष्टास्त्रियों का स्वभाव और उनके चरित्र और लक्षणद्वारा पहचान, निज स्त्री को वशीभूत रखने की विधि, कामदेव का वर्णन, स्त्रियों के कौन दिन किस अंगमें काम का वास रहताहै, आसनविधि, रूप यौवन सम्पन्न बने रहने, सुन्दर सन्तान उत्पन्न करनेकी विधि, स्त्री अपने पति को किस उपाय से अपने वस में रख सक्ती है, स्त्रियों को शृङ्गार करने की विद्या, यंत्र विद्या, तथा शिल्प विद्या सीखनेकी विधि और वीर्य्यादि पुष्ट करने के अनेकानेक उपाय और औषध लिखे हैं॥

इस स्थलमें हम सिर्फ संक्षेप से स्त्री पुरुष की परस्पर प्रीति, व्यवहार और सहवास आदि प्रकर्णोंको लिखते हैं जिनका याद रखना गृहस्थाश्रमियों के लिये अति लाभदायक है॥

प्रसंगेच्छा।

शरीरेजायतेनित्यंदेहिनांसुरतस्पृहा। अव्यवायान्मोहमेदोवृद्धिःशिथिलतातनोः॥

वीर्य्य पुष्ट रहने से स्त्री के साथ प्रसङ्ग करनेकी इच्छा देहधारियों को नित्यप्रति होतीहै और गमनेच्छा होने पर न करनेसे प्रमेह (धातु रोग) मेद (शरीरका मोटा हो जाना) और सम्पूर्ण अंग शिथिल हो

जाते हैं । इसलिये अकस्मात् गमनेच्छा होने से गमन करना मनुष्यमात्र को जरूरी है ॥

किस अवस्थावाली स्त्रीके साथ कौन पुरुष और कैसे समयमें गमन करै सो दिखलाते हैं । यह बात तो सबी को याद रखनी चाहिये कि अपनी अवस्था से अधिक उमरवाली स्त्री के साथ मैथुन कभी न करै ॥

स्त्री अवस्था विचार ।

बालेतिगीयतेनारी यावद्वर्षाणिषोडश । ततस्तुतरुणीज्ञेयाद्वात्रिंशद्वत्सरावधि॥ तदूर्ध्वमधिरूढास्यात्पंचाशद्वत्सरावधि । वृद्धातत्परतोज्ञेया सुरतोत्सववर्जिता ॥

सोलह बर्ष की उमरवाली स्त्री को बाला, सोलह से बत्तीसवर्ष तक की अवस्थावाली को तरुणी, बत्तीसवर्षके ऊपर पचासवर्षपर्यंतक की स्त्री को प्रौढ़ा और पचास वर्षकी अवस्था से उपरान्त उमरवाली स्त्री को शास्त्रकारों ने वृद्धा कहा है । अपनी अवस्था से अधिक वयवाली स्त्रीके साथ सहवास करना तो निषेध हईहै परन्तु वृद्धा स्त्रीके साथ तो कदापि प्रसङ्ग नहीं करना चाहिये । देखिये ऋषियोंने क्या कहा है ॥

वृद्धोपितरुणींगत्वातरुणत्वमवाप्नुयात्। वयोधिकांस्त्रियंगत्वातरुणःस्थविरायते। आयुष्मन्तोमन्दजरावपुर्वर्णवलान्विताः। स्थिरोपचितमांसाश्चभवंतिस्त्रीपुसंयताः॥

यदि वृद्ध पुरुषभी तरुण स्त्री (अपनी उमरसे कम उमरवाली युवा स्त्री) से गमन करै तो युवत्व धारण करै, अगर जवान मनुष्य बुड्ढीस्त्री से गमन करै तो वह भी बुड्ढा हो जावै । इसलिये वृद्धा स्त्री के साथ कदापि गमन नहीं करना चाहिये । जो मनुष्य सर्वदा तरुण स्त्रीसे भोग करतेहैं वे (आयुष्मतः) ज्यादा उमरवाले (मन्दजरा) अल्पवृद्ध, उत्तम

शरीर, सुन्दर वर्ण, बलयुक्त, बहुत दिनों तक जवान और मांस की सिकुड़न रहित बने रहते हैं। पाठकगण—हमारे इस लेख को कि तरुण स्त्री के साथ मैथुन करने से बुढ्ढा भी जवान हो जाता है कहीं ढ्पकर अनर्थ न कर बैठना कि किसी तरुण स्त्री को देख के उसे प्राप्ति करने की कोशिस और संदिर्ध ठान, कुटिनियों को मालामाल कर दो। यह सब महा अधर्म्म और पाप जनक कर्म हैं, गमन का युक्तायुक्त विधान आगे स्पष्ट लिखते हैं॥

ऋतुपरत्व प्रसंगविचार।

निदाघशरदोर्बालाहिताविषयिणोमता। तरुणीशीतसमये प्रौढ़ावर्षावसन्तयोः॥

गरमी (ग्रीष्म) शरद ऋतुओं में बाला स्त्री के साथ मैथुन करना विषयेच्छुकों को अतिलाभदायक लिखाहै। जाड़ेके दिनोंमें तरुणी स्त्री के साथ, वर्षा और वसन्त ऋतु में प्रौढ़ा के साथ गमन करना उत्तम कहा है। जो मनुष्य विषयी हैं और आरोग्यता भी चाहते हैं वे इसी वचनके अनुसार स्त्री प्रसङ्ग करें।

इस पर यह भी शङ्का होती है कि एक पुरुष को ऋतु २ में अदल बदल कर ४ स्त्रियां चाहिये, सो इसका उत्तर यह है कि यह वचन केवल एकही पुरुष के लिये नहीं है। तात्पर्य यह कि जिनकी बाला स्त्री है वे गरमी और शरद ऋतु में प्रसङ्ग करें और जिनकी तरुणी स्त्री है वे शीत समय में जिनकी प्रौढ़ास्त्री है वे वर्षा और वसन्तऋतु में गमनकरें अन्य ऋतुमें नहीं। बाला आदि स्त्रियोंके साथ गमन करनेका और भी एक विशेष वचन यह है:—

नित्यंवासेव्यमानाहि बालावर्द्धयतेबलं। तरुणीह्रासयेच्छक्तिं प्रौढोद्भावयतेजरां॥

बाला के साथ रोज२गमन करनेसे भी बल बढ़ता है और तरुणी स्त्री से रोज २ मैथुन करने से शरीरके बल हानि और प्रौढ़ा के साथ निरन्तर मैथुन करने से बहुत जल्द बुढ़ाई आजाती है ।

बाला स्त्री के साथ गमनकरनेका मुख्यसमय गरमी और शरदऋतु कहा है सही, पर यदि उसके साथ नित्यही गमन करै तोभी बल को बढ़ावेगी, परन्तु किसके बल को बढ़ावेगी ? तात्पर्य्य यह कि बली पुरुष के ही बल को बढ़ावेगी किन्तु किसी रोग से क्षीण पुरुष के बलको कभी नहीं बढ़ाय सकैगी और यह भी तात्पर्य्य है कि केवल बलको तो बढ़ावे गी परन्तु आगन्तुक रोगोंके प्राप्त होनेसे पूर्वोक्त रोगार्तों के रतिनिषेध की ही कोटिमें अपकारी है, इससे उत्तम यही है कि सर्वथा आरोग्यता चाहनेवाले पुरुष बाला के साथ भी उपरोक्त ऋतुओं में ही गमन करैं, क्योंकि वीर्य्यरक्षाही एकप्रधान फलहै जो समस्त आरोग्यताका कारणहै ।

पाठकगणों के विवेचनार्थ उपरोक्त श्लोक का विशेष आभ्यन्तरिक अभिप्राय प्रगट करते हैं । गरमीमें बाह्याभ्यन्तर की उष्णतासे और शरद ऋतु में पित्तकोप से वीर्य्य तरल भाव में रहता है और यौवन के बढ़ाव के कारण बाला स्त्रीके रजमें रुक्षता और तरलता नहीं रहती,इससे भगाशय उष्णभाफ रहित रहता है । इसलिये गरमी और शरदऋतुओंमें बालाके साथ मैथुन करनेसे बलकी हानि नहींहोती और उक्तऋतुओंके अलावा बाला के साथ मैथुन बलवर्द्धक है । इससे यह सिद्धान्त ठहरा कि बाला स्त्रीही से मैथुन करना सर्व सम्मत है । शीतकाल में वीर्य्य गाढ़ा और शीतल रहता है, इससे तरुणी के साथ गमन करने से वीर्य्य अति शैत्यता से सब रास्तेमें कहीं नहीं रुकके बाहर निकल आता है । इसी तरह वर्षा और बसन्तऋतु में वीर्य्यकी बाढ़ होती है, उस अवस्था में प्रौढ़ा स्त्री के साथ भी गमन करना हानि कर नहीं है । परन्तु यह बात याद रखनी चाहिये कि कोई ऋतु क्यों न हो कम उमर का पुरुष अपने से अधिक उमरवाली स्त्री के साथ गमन करते २ अवश्य बलबुद्धि हीन निस्तेज हो थोड़ेही दिनों में रोगग्रस्त हो यमालय को

रास्ता पकड़ेगा। वैसा ही छोटी उमर की स्त्री यदि बड़े बूढ़े के साथ गमन करावे तो निस्सन्देह बहुत जल्द प्रदर रोग अथवा खांसी ज्वर (तपेदिक) से पीड़ित हो मर जावेगा। भारतवर्षमें अधिक विधवा होने का भी एक प्रधान कारण यह विपर्यय विवाहहै-प्रायः इसदेशमें विशेष कर उत्तमजातों के यहां छोटे २ लड़कोंका विवाह बड़ी उमरवाली लड़कियोंके साथ होताहै। और बाजो २ जगह देखनेमें आताहै कि पुरुषों के विवाह पर विवाह होते जाते हैं और स्त्रियां मरती जाती हैं, इसके कारण दो हैं, प्रथम तो यह कि जिस पुरुषकी स्त्री मर जाती है उसका दूसरा विवाह बही नव दश वर्ष की बालिका के साथ होता है। पुरुष साठ वर्षका क्यों न हो जाय उनका ब्याह दशही वर्षकी कुमारीके साथ होगा। दूसरे बहुत किस्मके ऐसे लोगहैं जो कुलीन नहींहैं अथवा गरीब हैं वे लोग जवान हो जाते हैं विवाह नहीं होता, जब कुछ धनवान हुये तो धन दे कर छोटी २ लड़कियों के साथ विवाह करते हैं, यही कारण स्त्रियों के मरजाने का है। और योनिरोग तो अवश्य ही होता है। देखिये लिखा भी है॥

अतिकायगृहीतायास्तरुण्याश्चण्डिनीभवेत्।

अति अल्प अवस्था की स्त्री के साथ यदि दीर्घ लिंग वाला मैथुन करे तो उससे उसकी योनि कमल अथवा के मानिक लटकि आवें वो अण्डिनी रोग है उससे सन्तान नहीं होते॥

मैथुन निषेध।

अत्याशितोऽधृतिःक्षुद्वान्सव्यथाङ्गःपिपासितः।
बालोवृद्धोन्यरोगार्त्तस्त्यजेद्रोगीचमैथुनम्॥

ऐसे पुरुषों के साथ चाहिये स्त्री गमन न करावे---जिसने अत्यन्त भोजन किया हो, धैर्य्य रहित अर्थात् जल्दीबाज हो जिसके शरीर में दर्द हो, प्यासा हो बालक * याने कम उमर का हो, अथवा यह स्त्रीके उमर से बहुत अधिक उमरवाला हो और गरमी सुजाक आदि रोगों से

पीड़ित हो तो उस पुरुष को मैथुन नहीं करना चाहिये। यदि स्त्री आरोग्यता की इच्छा रखती हो तो वह भी उक्त पुरुषों के साथ कभी भोग न करे॥

यदि उपरोक्त लक्षण युक्त पुरुष मैथुन करे तो स्त्री को तो रोगिणी बनाही देगा लेकिन पुरुष को भी शुक्रकी दुर्बलता, आयुका क्षय होगा और यदि रोगग्रस्त अवस्था में करे तो रोग की वृद्धि होकर मृत्यु को बहुत जल्द प्राप्त होगा॥

मैथुन में समय।

सेवेतकामतःकामंवलाद्वाजीकृतोहिमे। प्रकामन्तु-निषेवेत मैथुनंशिशिरागमे॥ त्र्यहाद्वसन्तशरदोःपक्षाद्-वृष्टिनिदाघयोः।

अथसुश्रुते—त्रिभिस्त्रिभिरहोरात्रैः समयात्प्रमदां-तरः। सर्वेष्वृतुषुघर्मेतु पक्षात्पक्षाद्व्रजेद्बुधः॥

ऋतु के अनुसार मैथुन करने की विधि आयुर्वेदविदों ने इस प्रकार कहा है कि हेमन्तऋतु में पुरुष वाजीकर औषधों को सेवन करके रूप यौवन सम्पन्न स्त्रीके साथ रमण करे, शिशिरऋतुमें जब काम का वेग हो मैथुन करे, वसन्त और शरदऋतुओंमें कामकी चेष्टा होनेपर तीन २ दिन के बाद गमन करे, वर्षा और गरमी की ऋतुओंमें पन्द्रह २ दिनके अन्तर में गमन करना चाहिये। सुश्रुत जी भी यही कहतेहैं कि सम्पूर्ण ऋतुओं में मनुष्य को चाहिये कि तीन २ दिनके अन्तर दे के और गरमीके दिनों

* बहुत सी स्त्रियां पुरुषों की तरह जैसे पुरुषों को इस बात का विश्वास जमा है कि कमसिन औरत के साथ भोग करने से बल बढ़ता है वैसा ही स्त्रियों को भी विश्वास है कि लड़कों से मैथुन कराने से स्त्रियां बुड्ढी नहीं होतीं इससे प्रायः व्यभिचारिणी स्त्रियां कम उमर के सुन्दर बालकोंको खोज २ कर मैथुन कराती हैं॥

में कामोन्मत्त होनेसे पन्द्रहेदिन मैथुन करना चाहिये। कामोन्मत्त होने का लक्षण हमने द्वितीयखण्ड के आरोग्यदर्पण में लिख चुके हैं॥

रुक्षाङ्गीवहुभोजनाचलमति र्गीतप्रियावातला। शैलाम्भोनिधिपार्श्वदेशवनिता प्रायोभवेदीदृशी॥ वर्षायांकुसुमागमेचवहुशः सेव्यापरम्प्रीतिदा॥

रूखे अङ्ग की अर्थात् स्वेदादि रहित जिनके अङ्ग हो, खूब भोजन करनेवाली, बुद्धिमान् गान जिन्हें अति प्रिय हो और वात प्रकृति के लक्षण मिलते हों एतादृश लक्षण युक्त पर्वतीय और समुद्र के किनारे के रहनेवाली स्त्रियां होती हैं। इन स्त्रियों के साथ वर्षा और वसन्त ऋतु में मैथुन करने से अति आनन्द मिलताहै अर्थात् इन ऋतुओंमें उक्त देश की स्त्रियां अति सुख देनेवाली होती हैं। यह जो भारतवर्ष के राजे महाराजे अनेक देश की स्त्रियों से विवाह करते थे यही कारण है किसी २ के सौ सौ दो दो सौ रानियां होतीं थीं इसका सबब भी यही है कि पूर्व समय के लोग विद्वानों से कामशास्त्र को अध्ययन करतेथे।

गुर्वाहारसुगन्धमाल्यवसना स्निग्धाङ्गरागादिभिः व्यक्तग्रंथिरहर्निशंचसकले गात्रेवहंत्युष्णतां। अम्भोजप्रसरारुणोत्तमकरा शीतालयप्रेयसी॥ सौराष्ट्राङ्गकलिङ्गसिन्धुयुवतीः कामंभवेत्पित्तला। हेमन्तेशिशिरेनरैरनुदिनं सेव्यायथाकांक्षया॥

भावार्थः—उत्तम पदार्थों के खूब भोजन करनेवाली, अतर, फुलेल, पुष्पों की माला सुगन्धित वस्त्रों के धारण करनेवाली, दिन रात जिन को यही काम, शरीर को सुधारना, पान चाबना, मांग गुहना, आभूषणों से अङ्ग को सुशोभित करना इत्यादि जिसकी मांस पेशियां पुष्ट हों, सम्पूर्ण शरीर बहुत संकोच तप्त हो, हाथ पैर के तलुए कमल के समान सुर्ख हों और सर्वदा जिसे शीतल स्थान बगीचा आदि प्रिय हो, इसलिये होने से जिसके धातू (रज) से कमल की सी गन्ध आवे ऐसी सौराष्ट्र

देश, वङ्ग देश, और सिन्धु कश्मीर देश की पित्त प्रकृतिवाली स्त्रियां होती हैं। इन देशवाली स्त्रियों के साथ हेमन्त और शिशिर ऋतु में यथेच्छा मैथुन करे, इन ऋतुओंमें यह स्त्रियां अत्यन्त सुखके देनेवाली होती हैं।

ज्ञेयंकोकिलकाकलीमृदुरवा नन्दैषिणीशीतला। निद्रालुश्वशरीरकोमलतनुः स्निग्धाननाश्लेष्मला ॥ वङ्गश्रीहरकामरूपतरुणी सुस्निग्धकेशोभवेत्। गन्तव्याशरदिप्रदिष्टमदना ग्रीष्मेऽपिपुंभिर्वरैः ॥

मनोहर कोकिल के समान मीठी वचन बोलनेवाली, जिस की समस्त शरीर शीतल, आनन्द इच्छक (निद्रालु) नेत्र मद से पूर्णित हो प्रति कोमलाङ्गी, स्निग्ध मुखी, गोल गाल भरे, दीप्तवान जिसके मुख के देखतही काम अस्थिर न रहे उसे स्निग्ध मुखी कहते हैं। कफ प्रकृति युक्ता ऐसी वङ्गाल, सिलहट और कामरू देश की स्त्रियां होती हैं इनके बाल भी बहुत लम्बे और काले भ्रमर के समान होते हैं। इन स्त्रियों के साथ शरद और ग्रीष्म ऋतु में काम क्रीड़ा करने से जो सुख मिलता है वह सुख के समान स्वर्ग का भी सुख धूल है। क्या कोई इस बात का खण्डन करसक्ता है? पूर्ण यौवन प्राप्त काल में स्त्री पुरुष स्वतन्त्र प्रेमोन्मत्त हो अर्थात् अज्ञान अवस्था में माता पिता के द्वारा विवाह न हो के जवानी में स्त्री पुरुष दोनों के परस्पर प्रसन्नता पूर्वक विवाह हुआ हो और देशकालानुसार मदोन्मत्त हो मैथुन करने में अकथनीय और जो अद्वितीय सुख है क्या उसकी बराबरी स्वर्ग का सुख कर सक्ता है? यदि स्वर्गीय सुख इसी सुख को कहें तो कुछ आश्चर्य न होगा।

प्रीतिवर्णन।

कोकसार के मत से जो स्त्री पुरुष में चार प्रकार की प्रीति कह आये हैं, यथाः—नैसर्ग की विषयजा, समा, और अभ्यास की इन चारों के लक्षण हम प्रकाश करते हैं और उसके नीचे प्रकाश करने का मुख्य प्रयोजन यह है कि जब तक स्त्री पुरुष में परस्पर प्रीति न होगी तब तक मैथुन का जो पूर्ण आनन्द है वह कदापि लाभ नहीं हो सक्ता। जैसे वेश्यागमन में जिसे हम भलीभांति आ० द० के दूसरे खण्ड में दिखला चुके हैं।

नैसर्गकी आदि प्रीति के लक्षण ।

अभ्यासविषयासाध्याद्दम्पत्योः सहजातुया । सान्द्रानिगड़भूताच प्रीतिर्नैसर्गिकीमता ॥

मालाचन्दनभोज्याद्यैर्विषयैर्वर्द्धितातुया । प्रीतिर्विषयजाप्रोक्ता समयोगेसमास्मृता ॥

आखेटदेवपूजादिकेलिसंगीतकर्मसु । अभ्यासयोगद्यावृद्धियातिसाभ्यासकीमता ॥

(अभ्यास विषय साध्य) यावही विषय है जिसमें कोई तरदुत नहीं ऐसो स्वभावज प्रीति विवाह होतेही घोर बेड़ी के समान आपस में हो जावे जो छुड़ाने से न छुटे उसको नैसर्गि की प्रीति कहते हैं। यह प्रीति उसी अवस्था में होसक्ती है जब १२ वर्ष से ऊपर उमरवाली स्त्री का २० वर्ष से ऊपर उमरवाले पुरुष के साथ विवाह हो, अन्यथा नहीं। जो प्रीति माला, अतर, मिठाई, वस्त्र, आभूषण, अथवा कोई लालच वस्तु के लेने देने से प्रीति हो उस प्रीति को विषयजा प्रीति कहते हैं। समान योगों को करके अर्थात् स्त्री और पुरुष रूप से यौवन से, धन से तथा कुल आदि हर वस्तुओं से समान होने के कारण जो प्रीति भई हो उसे समा प्रीति कहते हैं।

अब अभ्यास की प्रीति का वर्णन करते हैं। आखेट अर्थात् शिकार खेलने में जो प्रीति हो (इससे मालुम होता है कि पूर्व समय में स्त्रियां भी शिकार खेलने जाती थीं अथवा पुरुषही कहीं शिकार को गया हो किसी स्त्री से प्रीति होवे जैसे सकुन्तला और दुष्यन्त की प्रीति) तथा देव पूजन में (जो प्रायः देखने में आता है कि मन्दिरों में नित्य २ देवपूजनार्थ स्त्री पुरुषों के जाने से किसी किसी से परस्पर बड़ी गहरी प्रीति होती है। यहां तक कि देवपूजन छोड़ पुन: उस और वकील मुख़्तारों की पूजा करनी पड़ती है) केलि अर्थात् काम क्रीड़ा से (जैसे पुरुष संज

घूंघुट अथवा अञ्चल या बांह के ऊपर के वस्त्रों को बारंबार सुधारना, बालों को आगे के तरफ छिटकाना, भौहेंको चढ़ाके तिरछी निगाहोंसे देखना इत्यादि लक्षण परपुरुष के चाहने वाली स्त्रियों में देखे गये हैं। परन्तु यह लक्षण प्रथम प्रेम की सीढ़ी का है जब अधिक प्रेम बढ़ जाता है सिर्फ संइयाम करना बाकी रहताहै उस अवस्थाके लक्षण यहहैं जैसे—

प्रीतम प्यारेको देखके खखारकर थूकना, बहुत हँसना, या गीतगाना सेज से उतर कर अथवा बिछौने से सरककर पास आ बैठना, अङ्गों को तोड़ना, या जँभाई लेना, गरीब स्त्री हे तो कुछ द्रव्य या वस्त्र आभूषण की याचना करना, स्त्री धनवान है तो उस पुरुष से कहना कि तुम्हारे शरीर पर अमुक गहना या वस्त्र बहुत अच्छे लगते हैं क्यों नहीं बनवा लेते हो अथवा कोई वस्तु या अपनी अँगूठी पहिरने को देना, उसे देख के अपने बालक का अथवा किसी सहेली का मुख चूमना, या अपने बराबर की स्त्री के साथ हँसी दिल्लगी करना, कान खजुवाना और पीठ पीछे अपने प्यारे की बड़ाई करना ॥

गहरी प्रीति के लक्षण ।

इमांचविन्द्यादनुरक्तचेष्टांप्रियाणिवक्तिस्वधनंददाति । विलोक्यसंहृष्यतिवीतरोषाप्रमार्ष्टिदोषान्गुणकीर्तनेन ॥ तन्मित्रपूजातदरिद्विष्टिवंकृतस्मृतिःप्रोषितदौर्मनस्यम् । स्तनोष्ठदानान्युपगूहनंचस्वेदोऽथचुम्बाप्रथमाभियोगः ॥

मीठी वचनों का बोलना, धनादि वस्तुओं से सत्कार करना, चाहा हू क्रोध में बैठी हो देखत ही प्रसन्न होजाना, उसके दोषों पर ध्यान न दे के हमेशा उसकी तारीफ करना, उनके मित्रों की खातिरदारी करना और बैरियोंसे अतिद्रोह रखना तथा अपने प्यारेके थोड़ेसो भी सत्कार को बहुत जानना और याद रखना, उसके परदेश में रहनेसे या परदेश जानेके नाम सुनेसे शिकायत रञ्जकरना, छातीका छूना, ओठोंका चुम्बन

और छपटा लेना और बारंबार पसीने का आजाना आदि लक्षण अधिक दोखों होने से प्रायः देखने में आते हैं ॥

परपुरुषरता स्त्रियों के संकेत।

रात्रीविहारजागररोगव्यपदेशपरगृहेक्षणिकाः।
व्यसनोत्सवाश्चसंकेतहेतवस्तेषुरक्ष्याश्च ॥

रात में घर के बाहर निकलना, कहीं अपने भाई बिरादरी के घर जावे तो प्रायः दिया जलनेके बाद अपने घर आवे, रतजगेमें अदबदाय के और रात भर जागना, रोग के बहानेसे पड़े रहना और वैद्य हकीम के घर दवा कराने जाना, भोजन न करना, नीच की स्त्री तथा पुरुषों से बात चीत करना, इधर उधर की बातें पूछना इत्यादि परपुरुषरता स्त्रियों के लक्षण होते हैं, इन स्त्रियों के दूती दूत भी प्रायः नीच जाति के लोग होते हैं, लिखा भी है ॥

भिक्षुणिकाप्रव्रजितादासीधात्रीकुमारिकारजिका।
मालाकारीदुष्टाङ्गनासखीनापितीदूत्यः ॥

भीख मांगनेवाली, बैरागिनि, टहलनी, बुढ़िया लड़कियां, धोबिन, मालिन, बुरे चालवाली स्त्री, सखी, और नाइन, परपुरुषरता स्त्रियां उपरोक्त स्त्रियों से दूती का काम कराती हैं, इन के द्वारा अपना हाल अपने प्रीतम के पास पहुंचाना और उनका हाल सुनना—थाली २ स्त्रियां दूती कर्म में ऐसी पक्की होती हैं कि पतिव्रता स्त्री को भी पर रता बना देती हैं, और कितनों का तो घर कुटुम्बादि छुटाके आनन्द के लिये वेश्या बना देती हैं ॥

अलभ्या स्त्री।

भर्तृस्नेहवतीदृढ़कृतवनिताप्रेम्णाविहीनाभृशं सेर्ष्या-
भूरिसुतात्रपाभरयुतागुर्वादिभीतिस्थिता। प्रायेणार्थवती-

तथापरजनालापेविरक्तासदा निर्लोभाव्यभिचारकर्मणि-बुधैर्दुःखेनसाध्यास्मृता ॥

जो स्त्री अपने पति में अत्यन्त प्रेम रखती हो, या एकही पुरुष में आसक्त हो, हरएक पुरुष के साथ प्रेमहीन हो, ईर्षा जिसमें अधिक हो और अधिक लड़नेवाली, बहुत लजानेवाली, सास ससुर ज्येष्ठ आदि घर के बड़े पुरुषों से अधिक भय खानेवाली (अर्थवती) इसका अर्थ यह है कि धन की कांक्षा रखती हो । इस अर्थ से यह आपत्ति आती है कि प्रायः स्त्रियां धन की लालच से पर पुरुषरता हो जाती हैं इसका अभिप्राय यह है कि (अर्थवती) अर्थात् धनवान हो, परपुरुष से बातचीत करने में निरन्तर लज्जित और निर्लोभ हो प्रायः ऐसी स्त्रियां व्यभिचार कर्म में कुटनियों करके नहीं फँसती हैं । उपरोक्त लक्षण युत स्त्रियों को देख दुष्ट पुरुष उनके मिलनेकी आशा न रक्खें वे कुटनियों करके प्राप्त नहीं हो सक्तीं ॥

सहज प्राप्ता स्त्री ।

मार्गादिभ्रांतदेहाचिरविरहवती मासमात्रप्रसूतागर्भालस्याचनव्यज्वरयुततनुकात्यक्तमानाप्रसन्ना । स्नातापुष्पावसानेनवरतिसमयेमेघकालेवसन्ते । प्रायःसंपन्नरागामृगशिशुनयनास्वल्पसाध्यारतेस्स्यात् ॥

भावार्थः—इतनी स्त्री अलबत्ता छल छिद्रयुत कुटनियों को अथवा चतुर, रूपवान्, धनवान् पुरुष को लाभ हो सक्ती हैं । जैसे मार्ग से थक गई हो या मार्ग से भूलगई हो * बहुत दिनों की विरहवती या जिसे

* एकदिन एक विषयी लाला हमसे कहनेलगी कि हम मुहर्रम के नवई तारीखको १२ बजे रातको चौक में रोशनी देखने गये, जहां अधिक भीड़ भाड़ थी देखा कि एक बहुत हसीन नवजवान किसी अच्छे सुघरमानके घर की औरत, अपनी संगकी औरतोंसे छुट कर व्याकुल हो इधर उधर घूमरही

अनेक दिनों से पुरुष से समागम न हुआ हो, महीना मात्र की प्रसूता हो गर्भवती (लड़का होने के कुछ मास बाद और-५-६ मास तक गर्भ रहते स्त्रियों को मैथुनेच्छा अधिक रहती है) आलस्ययुक्ता, नवज्वरवाली, मानहीना, जो बहुत हसनेवाली हो, मासिक धर्म्म से स्नान करचुकी हो, प्रथम २ यौवन का उमङ्ग उठा हो, वर्षा और वसन्त काल में तथा जिसकी अत्यानन्दा योनि हो, ऐसी स्त्री रति के अर्थ बहुत सहज में प्राप्त हो सक्ती हैं।

पतिध्रुक् स्त्री के लक्षण।

नाभिपश्यतिभर्तारं नोत्तरंसम्प्रतीच्छति। वियोगे-
सुखमाप्नोतिसंयोगेचातिसीदति॥शय्यामुपगताशेतेवदनं-
मार्ष्टिचुम्बने। तन्मित्रंद्वेष्टिमानञ्चविरक्तानाभिवांछति॥

जो स्त्रियां अपने पति को नहीं चाहतीं उनके लक्षण इस प्रकार लिखते हैं। पतिके सन्मुख न देखना, उसके बोलना कौन कहे पति कुछ कहे अथवा कुछ पूछे तो उसकी बात का उत्तर भी न देवे, जब तक पति घर में रहे भुन २ करती रहे और मुख लटकाये रहे और जब पति घरसे

है। हमने उससे पूछा कि तुम कौन हो क्यों भटकती फिरती हो उसने कहा कि हम संग से छूटगयी हैं अब घर कैसे जाय, हमने पूछा कि तुम्हारा घर कहां है, उसने कहा अमुक जगह पर है, हमने कहा कि तुम्हारा घर हम जानते हैं और तुम्हारे बाप से हमसे बहुत मुलाकात है चलो हम तुम्हें तुम्हारे घर पहुंचा दें वह गिड़ गिड़ा के बोली कि बड़ी इनायत होगी॥ तब हमने उसे दो चार गलियों में घुमा के अपने घर पर लाये कहा ठहिरो जरा पानी पीलें तो चलें तुम्हीं थकगई हो अब थोड़ीसी मिठाई खाके पानी पीलो पहले तो इनकार किया और कहा कि जल्दी चलो हमको घर पहुंचा दो तब हमने इसरार किया और प्यार से पुचकार के कहा फौरन राजी होगई और मिठाई खाया खुशी से बात चीत करने लगी मानों बहुत दिनों की मुलाकात थी फिर तो कोई उजर उसे न रहा उसके साथ हमने सहवास किया और उसे उसके घर पहुंचा आये॥

बाहर चला जावे तो बड़ी प्रसन्न रहै और उसके घर में आने में दुखी होय। पहले तो कभी अपने पति के साथ एक संग पलङ्ग पर सोवे नहीं यदि पलङ्ग पर जाय भी, कि तो सो रहै या करवट फिर जावे, अगर पति मुख चुम्बै तो झट गाल पोछ डालै। पतिके मित्रों से शत्रुता रखना और पति के शत्रु उसे चाहै परन्तु वह नराजही रहै।

स्त्रीणां वैराग्य हेतु।

कार्पण्यादतिमानरोगविरहाद्योगादिपारुष्यतो मालिन्यासममङ्गतादिभयतःशोकाद्दरिद्रादपि। भर्तृणान्तानुतादिभिश्चवपुषःकाठिन्यतःशङ्कना दोषाणांचवृथाप्रयान्तिवनितावैराग्यमुच्चैःसदा॥

निम्नलिखित कारणों से प्रायः स्त्रियां उदासीन बनी रहती हैं—जैसे अत्यन्त कृपणता से (पति के अधिक सूम होने से स्त्री उदास रहती है) अति मान (जादा प्यार करने से ऐसी चलचित्त हो जाती हैं कि हमेशा सानही मटका रहता है) पति के रोगी बने रहने अथवा व्यापार पुरुषार्थ रहित होनेसे असम—अर्थात् असमानतासे तात्पर्य यह कि स्त्री पुरुष उमरमें, यौवनमें, कुल आदि में परस्पर बराबर न हों। पति की मूर्खतासे, (भयतः) सास ससुर ज्येष्ठ और पतिसे अधिक डरसे भी स्त्रियां उदासीन रहती हैं शोक से, दरिद्रता से, पति का देह अत्यन्त दुबला, हड़ीला, तथा अत्यन्त कठोर होने से, अत्यन्त शङ्का युत रहने से, और व्यभिचारादि मिथ्या दोष लगानेसे इत्यादि कारणों से स्त्रियों के मन में पुरुष की ओर से विरक्तता उत्पन्न होती है।

स्त्री के बिगड़ने का लक्षण।

पितृसदननिवासःसङ्गतेःपुंश्चलीभिः प्रवसनमपिपत्युर्वार्धकंसेर्ष्यताच। वसतिरथचपुंभिर्दुष्टशीलैस्त्ववश्यम् क्षतिरपिनिजवृत्तेर्योषितांनाशहेतुः॥

स्त्रियां नीचे लिखे हुये कारणों से प्रायः बिगड़ जाती हैं—सर्वदा पिता के घर में रहना (पिता के गृह में निडर और परदा रहित रहती हैं) दुष्ट स्त्रियों के साथ बैठना उठना, उनसे मित्रता रखना, उनके साथ मेले ठेले में जाना, पति के परदेश रहने से, और उन पर किसी का दाब न रहने से, अथवा बुड्ढे पति के होने से (भला बतलाइये जो लोग अपने बुढ़ाई अवस्था में बाला के साथ विवाह करते हैं मुमकिन है कि वह बाला पतिव्रता हो ? कभी नहीं । बुड्ढों को चाहिये कि ज़ादा उमरवाली विधवाओं के साथ विवाह करें) पतिके अधिक ईर्षा करनेसे, तथा ऐयास पुरुषों में बैठ कर हँसी दिल्लगी करने से निज वृत्ति के लोप होनें से स्त्रियां व्यभिचारिणी होती हैं । यह तो अक्सर देखने में आया है कि यदि अति रूपवती स्त्री किसी नीच कुल में अथवा किसी गरीब के घर में होने से व्यभिचारिणी हो जाती हैं ।

सम्भोग समय के भेष यह है ।

स्नातश्चन्दनलिप्ताङ्गः सुगन्धः सुमनोन्वितः । भुक्तवृष्यासुवसनःसुवेषःसमलङ्कृतः ॥ ताम्बूलवदनःपत्न्यामनुरक्तोऽधिकस्मरः । पुत्रार्थीपुरुषोनारी मुपेयाच्छयनेशुभे ॥

यह बात हमने दूसरे खण्ड में भली प्रकार दिखला दिया है कि पुत्रार्थी पुरुष ब्रह्मचर्य्य से रह कर ऋतु स्नाता स्वकीय स्त्री से सहवास करे । परन्तु उस समय कैसा वेष चाहिये सो लिखते हैं (स्नातः) सुगन्ध तैलादि शरीर में मर्दन करके स्नान किये हो, चन्दन, कपूर, कस्तूरी आदि सुगन्ध द्रव्यों का लेपन और अतर लगाये हो, प्रसन्न चित्त, वाजीकर औषधों से वीर्य्य को बलवान और पुष्ट कर रक्खा हो, सुवासित वस्त्र, आभूषण तथा पुष्पों को धारण कर मसालेदार पान का बीड़ा खाये, अपनी आनन्द कादम्बिनी में अनुरागयुत, कामोन्मत्त हो रहा हो, ऐसा पुरुष पुत्र की इच्छा करके उत्तम पलङ्ग पर अपनी स्त्री के पास जावे । जितनाही आनन्द

युत. कामवान हो प्रसङ्ग करेगा वैसाही रूप यौवन, बल बुद्धि तेजः सम्पन्न सन्तान उत्पन्न करेगा ।

गर्भाधान विधिः ।

यद्यपि गर्भाधान की विधि दूसरे खण्ड के आरोग्यदर्पण में लिखचुके हैं तथापि वैद्यक मत से इस स्थल में पाठकगणों के उपकारार्थ और भी लिखते हैं । गर्भाधान किसे कहते हैं (गर्भस्याऽधानं वीर्य्यस्थापनं स्थिरीकरणं यस्मिन्येन वा कर्मणा तद्गर्भाधानम्) गर्भ का धारण याने गर्भाशय में वीर्य्य का स्थापन करना जिस कर्म से होता है उसे गर्भाधान कहते हैं जैसे बीज और क्षेत्र उत्तम होने और विधिपूर्वक बीज के बोने और उसे उत्तम प्रकार सींचने से अन्नादि पदार्थ मोटे घने और बलवान पैदा होते हैं उसी प्रकार उत्तम बलवान ब्रह्मचारिणी स्त्री पुरुषों के संयोग से सन्तान भी उत्तमही होते हैं और उसीके साथ यह भी है कि स्त्री पुरुष जिस प्रकार की चिन्तना करें उसी प्रकार सन्तान होगा। बृहत्संहिता में लिखा भी है "चिन्तेन भावयति दूरगताऽपियं स्त्री गर्भं बिभर्ति सदृशं पुरुषस्यतस्य" मैथुन के समय यद्यपि स्त्री दूर है परन्तु चित्त से जिस पुरुष की चिन्तना करेगी उसीके सदृश गर्भ धारण होगा, यही बात चरक से भी सिद्ध होती है "गर्भोपपत्तौ तु मनः स्त्रियायज्जन्तुं व्रजेत तत्सदृशं प्रसूते" इससे साबित होता है कि स्त्री पुरुष जैसे पुत्र और कन्या की कामना करें तद्रूप उन पदों का चिन्तन करने से वैसाही सन्तान उत्पन्न कर सक्ते हैं इसीलिये रजोधर्म से स्नान करके स्त्री को प्रथम पतिही का दर्शन करना लिखा है ।

उत्तम सन्तान करने की विधि, सुश्रुत से ।

यदि स्त्री ऐसी इच्छा करे कि मेरे श्रेष्ठ पराक्रम बल बुद्धि युत उज्वल सिंह के समान तेजस्वी सन्तान उत्पन्न हो तो रजोधर्म के चौथे दिन शुद्ध स्नान कर उस दिन से सात दिन पर्य्यन्त कुछ जवों को सहत घृत में मिलाय खवदा जिस गौ के नीचे हो ऐसी श्वेत गौ के दूध में भिजोय, चांदी

अथवा कांसे के पात्र में भर प्रातःकाल नित्य सेवन करे या पुराना साठी का चावल अथवा जौ के पदार्थों को पूर्वोक्त गौ के दही, शहद और घृत अथवा दूधही के साथ भोजन करै, नित्यप्रति सुवासित जल से स्नान करे, केशर कपूर और सफेद चन्दन गुलाब के अर्क में घोट अङ्गमें लेपन करै, सूक्ष्म मुलायम श्वेत वस्त्र धारण करे, सुन्दर आसन पर बैठे, सुखद सेज पर शयन करै, सुन्दर सवारी रथ घोड़ीपर चढ़के अथवा उत्तम तुरंग पर चढ़के सांझ सबेरे आरोग्यकर वायु का सेवन करै, काम, क्रोध, लोभ, मोह मात्सर्य्य रहित रहै, उत्तम सजे हुये कमरे में रहै, हर समय चित्तको प्रसन्न रक्खे, सुन्दर, स्वरूपवान, चतुर और मीठी वचन बोलने वाली ऐसी सहेली अथवा टहलुइन पास रहै (शब्द) गान या मनोहर बोलने वाली चिड़ियों की आवाज (स्पर्श) तकिया आदि मुलायम पदार्थ बारंबार छूना (रूप) तस्वीर आदि देखना (रस) ताम्बूल अथवा कोई रस को चाटना (गन्ध) अंतर सूंघना इत्यादि सेवन करै, शान्तिशील एवं अनेक चिन्ताओं से रहित हो सात दिन तक पति से भिन्न रहै, आठवें दिन शिर से स्नान कर षोडश शृङ्गार कर वेदानुसार संस्कार कर पति के साथ प्रसंग करै निस्सन्देह उत्तम, बली विद्वान् गर्भ धारण करैगी। पुरुष को भी चाहिये॥

ततोपरान्हेपुमान्मासं ब्रह्मचारीसर्पिःस्निग्धः सर्पिःक्षीराभ्यांशाल्योदनंभुक्त्वा॥

एक महीने पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्यव्रत धारण करनेवाला पुरुष सायंकाल को शरीर में घृत मर्दन करके सुगन्धित जल से स्नान कर घृत और दूधसे बनाया साठी चावल अथवा पुराने चावलों का खीर भोजन करके स्त्री के पास जावे परन्तु स्त्री खीर न खावे तैल और उरद का भोजन करै॥

नारीतैलेनमाषैश्चसमुपाचरेत्॥

स्त्री, कालेतिल का तैल और उरद के पदार्थों को तथा (पित्तलैः) रुधिर के बढ़ानेवाले पदार्थों को भोजन करके पति के समीप जावे।

इस स्थल में यह बात विचार करना बहुत जरूरीहै कि स्त्री पुरुष किस अवस्था में सन्तानोत्पत्ति करें सो हम आ०द०के दूसरे खण्ड में लिखचुके है इस स्थल में वाग्भट्ट के मत से फिर भी दिखलाते हैं ॥

पूर्णषोडशवर्षास्त्रीपूर्णविंशेनसङ्गता। शुद्धेगर्भाशयेमार्गेरक्तेशुक्रेऽनिलेहृदि ॥ वीर्य्यवन्तंसुतंसूते ततोन्यूनाब्दयोः पुनः। रोग्यल्पायुरधन्योवा गर्भोभवतिनैववा ॥

सोलह वर्ष की स्त्री, बीस वर्षकी अवस्था वाले पुरुषके साथ सहवास करने से, शुद्ध गर्भाशय और गर्भाशय का मार्ग तथा रुधिर वीर्य्य पवन और हृदय के शुद्ध होने से स्त्री बलवान पुत्र को उत्पन्न करती है परन्तु सुश्रुत में १६ वर्ष की स्त्री और २५ वर्ष के पुरुष इसके नीचे अवस्था में गर्भाधान निषेध किया है ॥

अब हमको इस स्थल में पाठकगणों को चेत कराना बहुत उचित है कि जब तक शरीर में कुछ भी रोग रहे मैथुन कदापि न करे और पुत्रोत्पादनार्थ मैथुन करने की इच्छा तो स्वप्नमें भी न लावे क्योंकि जैसे अग्नि के छोटीसी चिनगारीपर फूसफास डालनेसे अग्नि प्रज्वलित होती है वैसाही थोड़ासा भी शरीर में रोग रहनेसे यदि मैथुन करे तो वह रोग पर्वत के समान बड़ा और बलवान होजाताहै और रोगग्रस्त अवस्थामें पुत्रोत्पादनार्थ प्रसङ्ग करना तो सन्तान को मानो आजन्मके लिये रोग रूपी जेहल में डालना है इसलिये जबतक शरीरको आरोग्य और वीर्य्य को खूब पुष्ट न देखे कदापि मैथुन न करे वाग्भट्ट में लिखा भी है ॥

शुद्धशुक्रार्त्तवंस्वस्थं संरक्तंमिथुनंमिथः स्नेहैःपुंसवनैः स्निग्धंशुद्धंशीलितवस्तिकं ॥

जिस पुरुष का वीर्य्य और स्त्री का आर्त्तव (रज) शुद्धहै और शरीर में कुछ भी रोग नहीं है उस अवस्था में दोनों परस्पर अनुराग युक्त (स्नेहैः) फलघृत कल्याणघृत आदि स्नेहोंसे देहको स्निग्धकर, वमन वि-

रेचनर द्वारा धातु को भी गाढ़ा एवं स्निग्ध कर सब पुत्रार्थ मैथुन करै ।

ऋतुदान का काल ।

ऋतुकालाभिगामीस्यात्स्वदारनिरतस्सदा । पर्ववर्जं व्रजेच्चैनां तद्व्रतोरतिकाम्यया ॥ ऋतुःस्वाभाविकःस्त्रीणां रात्रयः षोड़शस्मृताः । चतुर्भिरितरैःसार्द्धमहोभिः सद्विगर्हितैः ॥ तासामाद्याश्चतस्त्रस्तुनिन्दितैकादशीचया । त्रयोदशीचशेषा स्तुप्रशस्तादशरात्रयः ॥

मनुजी महाराज ने भी ऋतुदान के समय का विचार अपने ग्रन्थमें इसप्रकार लिखा है कि मनुष्य को चाहिये हमेसा ऋतुकाल में अपनी स्त्री के साथ समागम करै सेवाय अपनी स्त्री के पर स्त्री गमन करने की इच्छा मन में भी न लावै और पुत्रोत्पादन करनेवाला पुरुष पर्व. तिथियों को जैसे अमावस्या चतुर्दशी अष्टमी आदि को छोड़के स्त्री के साथ रति क्रियाकरै स्त्रियों का स्वाभाविक ऋतुकाल १६ रात्रि का है अर्थात् रजोदर्शनके दिन से लेकर सोलह दिन तक ऋतुकाल कहा जाता है । उनमें से ४ रात्रि अर्थात् जिस दिन रजोधर्म हो उस दिन से लेकर ४ दिन तक प्रसङ्गकरना महा निन्दित है और जैसे चार रात्रि निन्दित है वैसाही ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि भी निन्दित है. शेषरहे दश रात्रि वेही रात्रियां ऋतुदान के लिये श्रेष्ठ हैं ।

युग्मासुपुत्राजायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासुरात्रिषु । तस्माद्युग्मासुपुत्रार्थी संविशेदार्त्तवेस्त्रियम् ॥ पुमान्पुंसोधिके-शुक्रेस्त्रीभवत्यधिकेस्त्रियाः । समेपुमान् पुंस्त्रियौवा क्षीणेऽल्पेचविपर्जयः ॥

पुत्रोत्पत्ति की इच्छा करनेवाले पुरुष युग्म रात्रि अर्थात् रजोदर्शन से छठवीं आठवीं दशवीं और बारहवीं रात्रि इनरात्रियोंमें गर्भाधानकरै परन्तु उत्तरोत्तर रात्रि और भी श्रेष्ठ हैं अर्थात् जैसा छठवीं रात्रि में गर्भाधान करने से बलिष्ठ पुत्र उत्पन्न होगा उससे अधिक बलिष्ठ आठवीं रात्रिमें ऋतुदान करने से होगा उससे भी बलिष्ट दशवीं रात्रि में होगा इसीप्रकार उत्तरोत्तर श्रेष्ठ जानना । जिनको कन्या उत्पन्न करने की इच्छा हो रजोधर्म के पांचवीं, सातवीं, नवमीं और ग्यारहवीं रात्रिमें गर्भाधान करै और इसमें भी उत्तरोत्तर रात्रियों को श्रेष्ठ जानना चाहिये । पुरुष के अधिक वीर्य्य होने से पुत्र और स्त्री के अधिक रज होने से कन्या उत्पन्न होती है । यदि पुरुष के वीर्य्य और स्त्री के रज दोनो बराबर होंतो लड़का पैदाहोगा तो नपुंसक और कन्या बन्ध्या होगी । क्षीणवीर्य्य अथवा अल्प वीर्य्यसे गर्भका न रहना अथवा रहकर भी गर्भ का गिरजाना होता है । सुश्रुत जी भी कहते हैं ॥

एषूत्तरोत्तरंविद्या दायुरारोग्यमेवच । प्रजासौभाग्यमैश्वर्यं बलंचाभिगमात्फलं ॥

इस बात को हम दूसरे खण्ड में लिखचुके हैं कि रजोदर्श निवृत्ति होने में पुरुष स्त्री के साथ गमन करसक्ता है सो तीन दिन स्त्री वर्जित है । चौथे दिन से प्रसङ्ग का दिन गिना जाता है चतुर्थ रात्रि में गमन करने से आयुष्मान् और आरोग्य लड़का पैदा होता है, छठवीं रात्रिमें गमन करने से निस्सन्देह पुत्र उत्पन्न होता है, आठवीं रात्रिमें सौभाग्यवान्, दशवीं रात्रि में ऐश्वर्य्यवान्, और बारहवीं रात्रि में गमन करने से बलवान् पुत्र उत्पन्न होता है इसी प्रकार कन्या की इच्छा करनेवाला विषम रात्रियों में गमन करै और उत्तर २ वही फल होगा। इसी विषय में वाग्भट्ट जी भी कहते हैं ॥

ऋतुस्तुद्वादशनिशः पूर्वास्तिस्रश्चनिन्दिताः । एकादशीचयुग्मासुस्यात्पुत्रोऽन्यासुकन्यका ॥

अर्थात् रजोदर्शन से लेकर बारह रात्रि पर्य्यन्त स्त्री ऋतुवती रहती हैं। अब इससे तीन ही दिन ऋतुवती रहती हैं यह खण्डन हो गया। इसका मतलब यहहै कि तीन दिन रक्त स्राव अधिक रहता है उसमें गमन करना निषेध लिखा है क्योंकि उन तीन रात्रियों में गमन करने से गर्भाधान के रहने के अलावा स्त्री के भगके रुधिरकी गर्मी पुरुष के लिङ्ग द्वारा भीतर जा के रक्त के परमाणुओं को अत्यन्त उष्णकर गमनागमन में बाधा डालती है और वीर्य्य को द्रवीभूत करती है वही गर्मी शिर में प्रवेश कर मनुष्य को बुद्धिहीन बलहीन कर देती है। रजोधर्मवाली से अत्यन्त प्रसङ्ग करने से मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, भगन्दर और उपदन्श आदि असाध्य रोग उत्पन्न होते हैं इसलिये रजो धर्मवाली स्त्री के साथ कदापि गमन न करै ॥

यह बात जो वैद्यक शास्त्र में लिखी है कि विषम रात्रियों में गमन करने से कन्या और सम रात्रियों में गमन करने से पुत्र उत्पन्न होता है और उसका कारण यह दिखलाया है कि सम रात्रियों में स्त्री के रज कम रहता है और विषम रात्रियों में पुरुष के वीर्य्य कम रहता है परन्तु यह नहीं लिखा कि क्यों कम रहते हैं ? मालूम होता है कि यह सब बात वैद्यवरों ने अनङ्ग रङ्ग आदि कामशास्त्र द्वारा परीक्षा करके सिद्ध किया है ॥

सन्तानार्थ मैथुनविधिः ।

पुत्रोत्पादन के अर्थ मैथुन करने की विधि वेद तथा आयुर्वेद में बहुत कुछ लिखी है सविस्तार लिखने में इसका बड़ाभारी एक ग्रन्थ हो जायगा और आजकल ऐसे विद्याहीन बल विहीन लोग हो गयेहैं चाहे आजन्म पुत्र हीन रहैं परन्तु विधिपूर्वक मैथुन कभी न करेंगे। तथापि हम पाठक गणों के उपकारार्थ कुछ मैथुन की विधि लिखतेहैं। स्त्री पुरुष को चाहिये कि पूर्वोक्त रीत्यनुसार आहारादि कर्मों से निवृत्तहो सुन्दर आभूषण और सुगन्ध वासित वस्त्र धारण कर दश ग्यारह बजे

उस अवस्था में मनुष्य को उचित है कि पुनः पूर्वोक्त लेखानुसार स्त्री गमन करै और गर्भ रहने पर गमन कदापि न करै ॥

गर्भवती होने का लक्षण ।

तृप्तिर्गुरुत्वंस्फुरणंशुक्रास्रावानुबन्धनम् । हृदयस्पन्दनंतन्द्रा तृड्ग्लानिर्लोमहर्षणम् ॥

गर्भ रहजाने का लक्षण वाग्भट्टमें इस प्रकार लिखाहै । चित्तप्रसन्न, शरीर में कुछ भारीपन, कोख का फरकना, वीर्य जो गर्भाशयमें गया है उसका न बहना तथा रक्तस्राव भी न होना, कलेजा धक२ करना, नेत्रों पर आलस्य, पियास, खानेपर मनका न चलना और रोमोंका खड़ाहोना इत्यादि लक्षण होने से जानना कि यह स्त्री गर्भवती होगईहै ॥

गर्भपुष्टकारक उपाय ।

लब्धगर्भायाश्चैतेष्वहःसुलक्ष्मणावटशुङ्ग सहदेवाविश्वेदेवामन्यतमाक्षीरेणाभिप्लुत्यत्रीं श्चतुरोवापिविंदून्दद्यात् दक्षिणेनाशापुटे पुत्रकामानताञ्चिष्ठीवेत् ॥

जिस दिन गर्भधारण कियाहो विशेषकर उसीदिन अथवा तीनदिन के भीतर लक्ष्मणा बूटी या बरगद् का सुग्गा (कोपल) या पीले फूल की कगही या गुलसकरी अथवा सफेद फूल का बरियारा इनमें से कोई भी एक मिल जाय जिस गौ के नीचे बछरा हो और दोनोंका एकही रंगहो उसके दूध में पीस पुत्र की इच्छा रखनेवाली गर्भवती अपने दहने नाशा में तीन या चार बून्द सिञ्चन करै अर्थात् नाश लेवै यदि वह गलेमें उतर आवै तो उसे थूके नहीं (दक्षिणे नाशा पुटे) इस लेख से सिद्ध होता है कि कन्या उत्पन्न करने की इच्छुक गर्भवती वाम नाशापुटमें सिञ्चन करै वाग्भट्ट में लिखा है (पुत्रार्थं दक्षिणेसिंचे द्वामेदुहितृ वांछया) उपरोक्त लिखेहुये औषधोंमें गर्भधारण के लिये लक्ष्मणा बूटी एक प्रधान औषध

है प्रायः गयाजी की ओर पर्वतोंपर तथा उत्तरीय-पर्वतोंपर भी मिलती है। लक्ष्मणा का वृक्ष वन तुलसी के समान बड़ा और आकृतिमें भी वैसाही होता है सिर्फ भेद इतना है कि लक्ष्मणा के पत्तेपर घुघु के रुधिर के समान लाल२ छोटे जावआ होते हैं, पुत्रोत्पन्न करने की शक्ति ईश्वर ने इसी को दी है॥

लक्ष्मणा को उखाड़ने की शास्त्रोंमें इसप्रकार विधि लिखते हैं कि शरद ऋतु में जब लक्ष्मणा फल पुष्पसहित होतो शनिवार के दिन सन्ध्या समय पवित्र होके उसके चारों ओर खैर की लकड़ी की चार कीले गाड़ धूप दीपादि से पूजन कर निमंत्रण करआवे जिस समय हस्त मूल या पुष्य नक्षत्र के सूर्य्य हों उसदिन जाके जड़ी बूटी उखाड़नेका प्रसिद्ध जो मन्त्रहै उस मंत्र से उखाड़ लावे और पीछे फिर करन देखे और ऊपर लिखे अनुसार उसके जड़ को दूध में पीस-गर्भवती के नाक में सिञ्चन करे, गर्भाधान के न रहने के बहुत से हेतु हैं उन्हें और उसके रहने के उपाय आ० द० के चतुर्थखण्ड में लिखेंगे। इस समय गर्भके कुछ विकारों को दिखलाते हैं। जो गर्भाधान विधिपूर्वक किया जाता है उसका फल यह है॥

एवंजातारूपवन्तः सत्ववन्तश्चिरायुषः। भवन्त्यृणस्याभोक्तारः सत्पुत्राःपुत्रिणोहिताः॥

विधिपूर्वक ऋतुदान करने से कन्या अथवा पुत्र उत्पन्न होता है वे रूपवान, सत्वगुणविशिष्ट पूर्णआयु पर्य्यन्त जीनेवाले, अपने बाहुबल से पैदा करके खानेवाले, और माता पिता को सुखदेनेवाले होते हैं और जो ऋतुदान अविधि किया जाता है वही गर्भ दोषसहित होता है अर्थात् गर्भ का न रहना, या रह कर गिरजाना, गर्भही में बालकोंका मर जाना अथवा लँगड़े लूले बेढङ्ग कुरूप नपुंसक सन्तानों का उत्पन्न होना इत्यादि इसलिये सुन्दर सन्तान उत्पन्नकरनेकी इच्छा रखनेवाला अविधि गर्भाधान कदापि न करे॥

जोड़ा लड़का होने का कारण

बीजेन्तरवायुनाभिन्ने द्वेबीजेकुक्षिमाश्रिते । यमा-
वित्यभिधीयेते धर्मेतरपुरःसरौ ॥

रज वीर्य्य दोनों मिलकर जिस समय गर्भाशयमें आता है यदि वह भीतर के वायु से दो भाग हो के रहजाय तो दो लड़का एक साथ उत्पन्न होगा और वह भाग रज वीर्य्य की ताकत या मिकदार कम होनेसे हुआ होतो लड़के जन्मतही मरजावेंगे । यदि एक भाग पुष्ट और दूसरा भाग अपुष्ट होतो उसमें से एक लड़का जीवेगा और एक मर जावेगा । अगर दोनों भाग पुष्ट होंतो दोनों जीवेंगे ऐसा बहुतेरों जगह देखने में आया है यदि उसी रज वीर्य्य की भीतर की वायु बिलकुल बिभाग न कर सकी हो कुछ बिभाग हुआ हो और कुछ एकही साथ मिला होतो दो लड़के होंगे परन्तु जुटे होंगे ऐसे लड़के भी कभी २ देखने सुनने में आते हैं । इसीप्रकार तीन चार बालक भी होते हैं, एकहीसाथ पुत्र कन्याओं का उत्पन्न होना रज वीर्य्य के न्यूनाधिक पर निर्भर है ॥

कुत्ते बिल्ली आदि पशुओं के जो अनेक बच्चे पैदा होते हैं उसका कारण यही है गर्भाशय में वायु कर के रज वीर्य्य का बिभाग होना । एकही समय कई सन्तान होने के विषय में अनुमान से हमको यह ज्ञान पड़ता है कि इस कार्य सम्पादन करने में वायु स्वतंत्र नहीं है । क्योंकि यद्यपि खाली घड़े में वायु है परन्तु उसमें घी शहद पारा आदि वस्तु एकबारगी भरदेने से वायु निकल जाता है यदि उसीमें गेहूं चना आदि भर दोतो अवश्य खाली भागों में वायु बना रहेगा इसी प्रकार गर्भाशय में वीर्य्य रज पूरा मात्रा एकही बार आने से वायु निकल जाता है और वीर्य्य रज यदि गर्भाशय में कईबार कर के आने से बीच में वायु रह जाता है इसी से कई लड़के होते हैं और इसका मुख्य कारण वीर्य्य का विकार है ।

नपुंसक सन्तान उत्पन्न होने का कारण ।

सुश्रुत जी पांच प्रकार के षण्ढ (नपुंसक) माता पिता के रज वीर्य दोष से उत्पन्न होने को दिखलाते हैं—जैसे ।

पित्रोरत्यल्पवीर्य्यत्वादासेक्यःपुरुषोभवेत् । सशुक्रं-प्राश्यलभतेध्वजोच्छ्रायमसंशयम् ॥

गर्भाधान के समय माता पिता के अधिक कम वीर्य होने के सबब से जो गर्भाधान रहता है, उससे जो सन्तान उत्पन्न होता है वह आसेक्य नामक नपुंसक कहाता है उसका लक्षण यह है कि युवाअवस्था में, दूसरे मनुष्य के प्रसंग करने से जो वीर्य पात हो उस वीर्य को वह आसेक्य नामक नपुंसक भक्षण करै तब उसका लिंग उठै ।

सौगन्धिक नपुंसक ।

यःपूतियोनौजायेतससौगन्धिकसंज्ञितः । सयोनिशेफ सोर्गन्धमाघ्रायलभतेबलम् ॥

जिस स्त्री के योनि से मवाद जाता हो उसके साथ संभोग करने से जो लड़का पैदा हो वह सौगन्धिक नामक नपुंसक कहाता है । जब तक वह किसी अन्य पुरुषके लिंग को अथवा स्त्री के भग को न सूंघेगा तबतक उसका लिंग चैतन्य नहीं होगा ।

कुम्भिक नपुंसक ।

स्वेगुदेब्रह्मचर्य्याद्यः स्त्रीषुपुम्वत्प्रवर्त्तते । कुंभिकः-सतुविज्ञेयःईर्ष्यकंश्रृणुचापरम् ॥

जो मनुष्य पहले किसी पुरुष से अपनी गुदामंजन कराये उससे उस का लिंग चैतन्य हो तब वह स्त्री के साथ प्रसंग करने लायक हो उसको कुंभिक नपुंसक कहते हैं और कोई २ इसका अर्थ इस प्रकार करते हैं कि पहले जो पुरुष अपने शिथिललिंग से स्त्री की गुदामंजन करै

(अधिक ब्रह्मचर्य रहने से जो नपुंसकता होती है उसके दूर करने के यही उपाय है) जब लिंग उत्थान हो तब स्त्री के साथ प्रसंग करे आगे ईर्ष्यक नपुंसक का लक्षण सुनियेगा। कुंभिक नपुंसकके उत्पत्तिका कारण ग्रन्थांतरों में इसप्रकार लिखे हैं। गर्भाधान के समय माता के विलोम मैथुन और पिता के अल्पवीर्य के प्रभाव से कुंभिक नामक नपुंसक लड़का पैदा होता है एक आचार्य कहते हैं कि गर्भाधानके समय कम रजवाली औरत के साथ अत्यन्त शिथिल वीर्यवाला पुरुष गमन करे और उस पुरुष से उस स्त्री की तृप्ति अर्थात् काम की शांति न हो पुनर्वार अथवा दूसरे पुरुष के साथ मैथुन कराने की इच्छा बनी रहे और वह मैथुन न होने पावे बीचही में गर्भाधान रहजाय उससे जो सन्तान होगी वह कुंभिक नपुंसक होगा।

ईर्ष्यक नपुंसक के लक्षण।

दृष्ट्वाव्यवायमन्येषांव्यवायेयःप्रवर्तते। ईर्ष्यकःसतुविज्ञेयोदृग्योनिरयमीर्ष्यकः ॥

ईर्ष्यक नपुंसक उसे कहते हैं जो दूसरे मनुष्य को मैथुन करता देख कर आप मैथुन करने को उद्यत हो और जबतक अन्य पुरुष को मैथुन करता न देखे लिंग कभी प्रसंग करने लायक न हो। ईर्ष्यक षण्ढ इस प्रकार जन्मता है कि गर्भाधान के समय स्त्री पुरुष किसी ऐसे कार्य में परायण हों जो सहने लायक न हो शोकातुर हर्ष रहित मैथुन करने से जो पुत्र हो वह ईर्ष्यक संज्ञक नपुंसक होगा।

स्त्री चेष्टाकार पांचवां नपुंसक का लक्षण और स्त्री षण्ढ के लक्षण अर्थात् जिस कारण से स्त्री नपुंसक होती हैं दोनों का वृत्तान्त आरोग्यदर्पण के दूसरे खण्ड में लिख चुके हैं इस स्थल में हम यह दिखलाते हैं कि उपरोक्त नपुंसकों के वीर्य है या नहीं।

आसेक्यश्चसुगन्धोचकुम्भीकश्चेर्ष्यकस्तथा। सरेतसस्त्वमीज्ञेयाश्रशुक्रःषंडसंज्ञितः ॥ अनयात्रिप्रकृत्यातुतेषांशुक्रवहाःशिराः। हर्षात्स्फुटत्वमायान्तिध्वजोच्छ्रायस्ततोभवेत् ॥

आसेक्य, सुगन्धी, कुंभीक, और ईर्ष्यक इन चारों पंढों में तो वीर्य है परन्तु पांचवांपंढ जो स्त्री कीसी चेष्टावाला नपुंसकहै जिसका लक्षण आ०द० के २ खण्ड में लिख चुके हैं उसमें वीर्य नहीं है यदि कोई संका करे कि जब वीर्य्यवान है तो नपुंसक कैसे हुआ ? उसका मतलब दूसरे श्लोक से स्पष्ट हो जाता है। यद्यपि उक्त पंढों में भी वीर्य्य नहीं है तथापि ऊपर लिखे हुये चेष्टा करने से जैसे वीर्य्य भक्षण, योनि सूंघना, गुदाभंजन और अन्य पुरुष का मैथुन देखने से शुक्रनाड़ी शिराहर्ष युक्त होकर फूलती है इस्से भी लिंग चैतन्य होता है। यही नपुंसकता दोष स्त्रियों में भी होता है॥

निकृष्ट गर्भोत्पन्न।

यदानार्यावुपेयातांवृषस्यन्त्यौकथञ्चन। मुञ्चतःशुक्रमन्योन्यमनस्थिस्तत्रजायते॥

जिस समय दो स्त्री अति कामातुर हो पुरुषके साथ मैथुन न करा के दोनों आपस में मिल कर भग से भग मिलाय कर दोनों अपने २ रज को त्याग करें उस अवस्था में यदि गर्भ रहजाय तो उस गर्भसे बिना हड्डी का लड़का पैदा होगा, उस लड़के का लक्षण यह होगा कि वह अपने हाथ पैर सकेल सटोर न सके अन्य कोई उसके हाथ पैर को चाहे जिस ओर झुका दे क्लेश नहीं होगा ऐसे बालक अवश्य कभी २ देखनेमें आये होंगे परन्तु जीते नहीं॥

स्वप्न मैथुन से गर्भोत्पन्न।

ऋतुस्नातातुयानारीस्वप्नेमैथुनमावहेत्। आर्त्तवंवायुरादायकुक्षौगर्भंकरोतिहि॥ मासिमासिविवर्द्धेत गर्भिण्यागर्भलक्षणम्। कललंजायतेतस्यावर्जितंपैतृकैर्गुणैः॥

यह सब श्लोक सुश्रुत के शारीर स्थानके हैं। इसका अभिप्राय यह है (ऋतुस्नाता) जो स्त्री रजो धर्म से शुद्ध हुई हो और पुरुष से समागम न हुआ हो यदि वह स्त्री रजोधर्म के चार दिनके बाद और बारह

दिन के भीतर स्वप्न में मैथुन करे और रज, स्खलित हो, जाय, तो उस समय उसी रज को वायु लेकर गर्भाशयमें स्थापन कर देता है। यह गर्भ भी गर्भिणी के समान महीना २ बढ़ता है और उससे कलल भी उत्पन्न होताहै परन्तु पिता के लक्षण रहित अर्थात् जो लड़का पैदा होगा वह एक मांस का पिण्ड समान होगा क्योंकि कलल उसी को कहते हैं। इसके अलावा और भी पाप कर्मों से अनेक प्रकारके विकृत स्वरूपवाले स्त्रियों के सन्तान उत्पन्न होते हैं। जैसा कि सुश्रुत में लिखा है॥

सर्पवृश्चिककूष्माण्डविकृताकृतयस्तुये। गर्भस्त्वेवंविधास्त्वेतेज्ञेयापापकृतोभृशम्॥

सांप, बिच्छू, कुम्हड़े के समान मांस का लोथड़ा ऐसे भयानक स्वरूपवाले, तथा अत्यन्त खराब खराब अंग वाले गर्भ, प्रसूता के पाप करने से होते हैं॥

गूंगा आदि गर्भों के कारण।

गर्भेवातप्रकोपेणदौहृदेचावमानिते। भवेत्कुब्जःकुणिःपंगुर्मूकोमिन्मिनएवच॥

गर्भाशय में वात के प्रकोप से और माता के दौहृद, अपचार से अर्थात् गर्भाधान के बाद गर्भावस्था में बुरे आचरणों से गर्भ में बालक कुबड़ा, टेढ़ा, लँगड़ा, गूंगा और मिनमिन बोलनेवाला होता है। इस स्थल में यह सन्देह हो सक्ता है कि यदि माता पिताही के अपचार आदि दोषों के कारण गर्भ बिगड़ता है तो पूर्व संस्कार मानना सर्वथा असंगत है-? सो ठीक नहींहै। सुश्रुत ही में लिख दिया है (भावितापूर्वदेहेषु इत्यादि तथा अशुभैश्पुराकृतैः) तात्पर्य यह है कि पूर्व जन्म के निषिद्धकर्मों से गर्भाशय में वायु दुष्ट होती है॥

गर्भ में बालक के मल मूत्र न करने का सबब।

बेशक यह सन्देह तो सभी को उत्पन्न हो सकाहै कि जब गर्भाशय में बालक की सम्पूर्ण इन्द्रियां बन गईं और जीव संयुक्त हुआ तो वह

बालक गर्भाशय में दिशा पेशाब क्यों नहीं करता ? गर्भमें बालक के मल मूत्र न करने का कारण यह है ॥

मलाल्पत्वादयोगाच्च वायोःपक्वाशयस्यच । वातमूत्रपुरीषाणिनगर्भस्थःकरोतिहि ॥

गर्भ के भीतर बालक के शरीर में मल बहुत ही अल्प होनेसे और पक्वाशय में वायु के भी अत्यन्त कर्म हीन होने से बालक गर्भ में मल मूत्र और वात का परित्याग नहीं करता, इसी प्रकार गर्भस्थ बालक के न रोने का भी कारण समझना ॥

गर्भमें बालक के न रोने का सबब ।

जरायुणामुखेच्छन्नेकण्ठेचकफवेष्टिते । वायोर्मार्गनिरोधाच्चनगर्भस्थःप्ररोदिति । निश्वासोच्छ्वाससंक्षोभस्वप्नान्गर्भोधिगच्छति । मातुर्निश्वसितोच्छ्वाससंक्षोभस्वप्रसम्भवान् ॥

गर्भाशय के मुख आच्छादित होने से और कंठ कफ करके वेष्टित होने से एवं वायुका मार्ग रुके रहने से, गर्भके भीतर बालक नहीं रोता और गर्भ के भीतर बालक का श्वास लेना, डोलना तथा निद्रा आदि क्रिया माता के श्वासादि लेने से होती है, याने माता जो जो श्वासादिक चेष्टा करती है वही गर्भस्थ बालक भी करता है ॥

पूर्व कर्मानुसार बुद्धि का होना ।

भावितापूर्वदेहेषुसततंशास्त्रबुद्धयः । भवन्तिसत्वभूयिष्टापूर्वजातिस्मरानराः ॥

पूर्व जन्म में जिस मनुष्य का जिस विषय में अत्यन्त अभ्यास रहता है वेही गुण वर्तमान शरीर में भी होते हैं । जैसे जिस मनुष्यकी आत्मा पूर्व देह में जिस विद्या करके विशेष तन्मय रही होगी यह मनुष्य वर्त-

मान देह में अवश्य उसी शास्त्र का जानने वाला होगा। इसी प्रकार चोरी, धूर्तता, लम्पटता आदि बुरे कर्मोंका अभ्यासी भी वर्त्तमान देह में तद्दुर्गुण विशिष्ट अवश्य होगा। पूर्वदेह में जिनके सत्वगुण प्रधान थे वे वर्त्तमान देह में भी वैसाही गुणवान होंगे, तथा व्यतीत जन्म जाति के स्मरण रखनेवाले भी होते हैं॥

गर्भाधान स्थितिके पश्चात् जब तक स्त्री पुनः रजोवती देख न पड़े तब तक उसके साथ मैथुन न करे, ऐसा अनेक शास्त्रों में वचन मिलेंगे। दूसरी बात यहहै कि प्रथम २ जबतक कन्या ऋतुमती न हो उसके साथ भी गमन न करे और ऋतु होने का समय जो सुश्रुत में लिखा है वही ठीक है॥

तद्वर्षाद्वादशात्कालेवर्त्तमानमसृक्पुनः। जरापक्वशरीराणांयातिपंचाशतःक्षयं॥

भोजन से खिंचा हुआ जो रस उससे उत्पन्न होनेवाला रज (मासिक रुधिर) बारह वर्ष के उपरान्त प्रगट होकर जैसे २ शरीर में रसादि बढ़कर शरीर बढ़ता है तैसे २ रज भी बढ़कर महीने महीने योनिद्वारा प्रवृत्त होता है और जब पचास वर्ष से ऊपर की अवस्था प्रारम्भ होती है तब बुढ़ापा होने के कारण क्रमशः रज नष्ट होने लगता है और ६० वर्ष की अवस्था होते २ बिलकुल नष्ट हो जाता है। इस स्थल में यह वचन देने का हमारा मतलब यह है कि प्रथम २ मासिक रक्त स्त्रियोंको बहुत कम होता है, यहां तक कि कितनी धर्मवती हो जाती हैं और रक्त नहीं देख पड़ता, कई महीनों के बाद कुछ २ मालूम होने लगता है। इस अवस्था में भी मैथुन करना नहीं चाहिये, क्योंकि गर्भ रहजाने से बालक का जन्म अति कष्ट से होताहै इसलिये, जबतक खूब खुलासा मासिक होना प्रारम्भ न हो सन्तानार्थ मैथुन कदापि न करे। इसीलिये ऋषियों ने १६ वर्ष की अवस्था वाली स्त्री के साथ सन्तानार्थ मैथुन करने के लिखा॥

अदृष्ट मासिक लक्षण।

पीतप्रसन्नवदनांप्रक्लिन्नात्ममुखद्विजां। नरकामां-

प्रियकथांस्रस्तकुक्ष्यक्षिमूर्द्धजां॥ स्फुरद्भुजस्तनश्रोणिनाभ्यूरुजघनस्फिजं। हर्षौत्सुक्यपरांचापिविद्यादृतुमतींस्त्रियम्

जो स्त्री ऋतुमती होजाय और रक्तस्राव न हो उसके लक्षण सुश्रुत में इसप्रकार लिखे हैं। जिस स्त्री का मुख पीत (यह पीतमुख कान्ति विशेष में जानना) प्रसन्नतायुक्त हो एवं आस्य (देह) मुख और दांत रसीलेहों (नरकाम प्रिय कथा) मैथुन सम्बन्धी बातें अच्छी लगती हों कोख आंख और बाल विकसित याने कुछ फैले हों, बाहु छाती कमर नाभि पिंडरी जांघ और चूतड़ जिसके फरकें एवं प्रसंग कराने की अत्यन्त इच्छा होती हो तो जानना यह स्त्री ऋतुमती हुई है परन्तु रक्त की अल्पता के कारण वह नहीं देख पड़ता।

व्यतीत ऋतु में मैथुन निषफल है।

नियतंदिवसेतीतेसंकुचत्यम्बुजंयथा। ऋतौव्यतीतेनार्यास्तु योनिःसंव्रियतेतथा॥

जैसे फूला हुआ कमल अपने नियत समय में पहुंच कर संकुचित याने सिकुड़ जाता है वैसाही ऋतु के व्यतीत होने पर अर्थात् रजोधर्म होने के १६ दिन बाद स्त्री की योनि (गर्भस्थान) संकुचित होजाती है। इस अवस्था में मैथुन करना निष्फल है क्योंकि वीर्य गर्भाशय में नहीं जाता।

गर्भवती होने के पश्चात् जो लक्षण होते हैं, पुत्र पुत्री और नपुंसक गर्भ रहने के पहचान, गर्भिणी स्त्री के उपचार अर्थात् गर्भयुक्त स्त्रियों को किस प्रकार रहना चाहिये। गर्भ के भीतर कौन महीनेमें बालक के कौन अङ्ग प्रत्यङ्ग बनते हैं इन सभों को आगे प्रकाश करेंगे। इस समय हम इस बात को दिखलाते हैं कि गर्भवती के दुःख होने से वही दुःख भीतर गर्भगत बाल को होता है लिखा भी है।

दोषाभिघातैर्गर्भिण्यायोयोभागःप्रपीड्यते। सस-भागःशिशोस्तस्यागर्भस्थस्यप्रपीड्यते॥

वात पित्तादि दोषों करके कोई किस्म की बिमारी गर्भिणी को हो और उसे शीघ्र शांत न किया जाय तो वही रोग बालक को होगा याने वातादि दोष से तथा लकड़ी आदि के प्रहार से गर्भिणी का जो २ अङ्ग दुःखित होता है वही अङ्ग गर्भ में रहने वाले बालक का पीड़ित होता है । इसलिये गर्भिणी स्त्री को मारना या किसी प्रकार का शोक देना कदापि न चाहिये और जब गर्भिणी दौहृदनी होजाती है उस समय स्त्री को अनेक प्रकार के सुख के द्वारा प्रसन्न रखना आयुर्वेद की सम्मति है । दौहृदनी उस स्त्री को कहते हैं जिसके गर्भ में ४ महीने का बालक होता है ४ महीने में गर्भस्थित बालक के जीव प्रगट होता है इससे शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन विषयों में बालक का मन चलता है और गर्भ के बालक का जो हृदय है वह मातृज है इसलिये चतुर्मास के ऊपर वाली गर्भिणी स्त्री दौहृद वाली कहाती है इस से गर्भिणी का हृदय सन्तप्त होने से गर्भ में जो बालक होता है उसका भी हृदय सन्तप्त होता है । इसलिये गर्भवती स्त्री का मनोर्थ पूर्ण न करना बहुत बुरा है । सुश्रुत जी कहते भी हैं ॥

दौहृदविमानात्कुब्जंकुणिंखञ्जंजड़ं वामनंविकृताक्षमनक्षंवानारीसुतंजनयति । तस्मात्सायद्यदिच्छेत्तत्तदस्यैदापयेत् । लब्धदौहृदाहिवीर्य्यवन्तंचिरायुषम्पुत्रंजनयति ॥

अगर स्त्री की दौहृदेच्छा (दौहृद की इच्छा) परिपूर्ण न होवे तो वह स्त्री कुब्ज, लूला, नपुंसक, बौना (५२ अङ्गुल का लम्बा मनुष्य) ऐंचाताना नेत्रवाला और अनेक रूप रङ्ग रोगवाले आदि ऐसे बालक उत्पन्न करती है । इसलिये चाहिये कि गर्भवती स्त्री जिस २ बात को इच्छा करे (परन्तु वह इच्छा अत्याचारी न हो) उसे अवश्य पूर्ण कर देना चाहिये क्योंकि जिस गर्भवती स्त्री की इच्छा पूर्ण होती है वह स्त्री वीर्य्यवान और दीर्घ उमर वाला सन्तान को पैदा करती है ।

इन्द्रियार्थांस्तुयान्यानसाभोक्तुमिच्छतिगर्भिणी । गर्भाबाधभयात्तांस्तान्भिषगाहृत्यदापयेत् ॥ साप्राप्तदौ-

हृदापुत्रंजनयेतगुणान्वितं। अलब्धदौहृदागर्भंलभेतात्मनिवाभयम् येषुयेष्विन्द्रियार्थेषुदौहृदेवैविमानता। प्रजायेतसुतस्यार्त्तिस्तस्मिंस्तस्मिंस्तथेन्द्रिये॥

गर्भवती स्त्री के इन्द्रिय को जो जो प्रिय हो, जैसे गान सुनना, उत्तम गहना वस्त्र पहरने की इच्छा, दिव्य मूर्त्योदिकों का देखना, खादिक द्रव्यों का भोजन, सुगंध द्रव्य का सूंघना, वन उपवन आदि स्थानोंमें हवाखाना आदि, जिस बात की इच्छा प्रगट हो उसके घरवालों को चाहिये कि अवश्य पूर्ण करें, बल्कि गर्भवती स्त्री से पूंछते रहैं कि आजकल उसकी तबियत किस बात को अधिक चाहती है, उसे पूर्ण करें क्योंकि गर्भवतीके इच्छानुसार सुख न मिलने से निस्सन्देह गर्भ की विकृति हो जाती है और इच्छा पूर्ण होने से गर्भवती उत्तम प्रकार के सन्तान को प्रसव करती है और अलब्ध दौहृदा गर्भवती के गर्भ को अथवा उसके खुदही शरीर को भय रहता है॥

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध यह पांच विषय हैं और उक्त पांचों विषयों के भोग करनेवाली पांच इन्द्रियां हैं कान, त्वचा, नेत्र, जीभ और नाक। अगर गर्भवती स्त्री की जो इन्द्रिय अपने विषय को चाहै और वह न मिले तो गर्भस्थित बालक की भी उसी इन्द्रिय को पीड़ा होगी। जैसे गर्भवतीको गान सुनने की इच्छा हो और वह न सुने तो गान (शब्द) के चाहनेवाला कान है, वह कर्ण न तृप्ति होने से गर्भगत बालकके कान को दुःख होगा इसी प्रकार सब इन्द्रियों को समझना।

दौहृदकेद्वारा सन्तान के लक्षण।

सुश्रुत शरीरस्थान अध्याय॥ ३॥

राजसन्दर्शनेयस्यादौहृदोजायतेस्त्रियाः। अर्थवन्तंमहाभागं कुमारंसाप्रसूयते॥१॥ दुकूलपट्टकौशेयभूषणादिषुदौहृदात्। अलङ्कारैषिणंपुत्रंललितंसाप्रसूयते॥२॥ आश्र-

मेसंयतात्मानं धर्मशीलंप्रसूयते । देवताप्रतिमायान्तुप्रसूतेपार्षदोपमं ॥३॥ दर्शनेव्यालजातीनांहिंसाशीलंप्रसूयते। गोधामांसाऽशनेपुत्रं सुपुप्तंधारणात्मकम् ॥४॥ गवांमांसेचवलिनंसर्वक्लेशसहन्तथा । माहिषेदौहृदाच्छूरंरक्ताक्षंलोमसंयुतम् ॥ ५ ॥

जिस स्त्री की इच्छा राजा के देखनेकी हो वह स्त्री धनवान और पुण्यवान पुत्रको उत्पन्न करेगी ॥१॥ जो गर्भवती की इच्छा उत्तम २ सूतवस्त्र अथवा रेशमी वस्त्र (पीताम्बर आदि) पहरनेकी हो तो वह निस्सन्देह ऐसे रूपवान् पुत्र को उत्पन्न करेगी जो उत्तम २ आभूषण और वस्त्रको धारण करनेवाला हो ॥२॥ जिस स्त्री को महात्मा-ऋषियों के स्थान देखने की इच्छा हो अथवा पवित्र देव स्थान में रहने की इच्छा हो वह धर्मेच्छ सत्यवादी, दृढ़प्रतिज्ञ सन्तान को उत्पन्न करेगी ॥ ३ ॥ अगर गर्भवती स्त्री को शेर चीता आदि हिंसक जानवरों को देखने का मन हो तो निस्सन्देह वह स्त्री दुष्ट प्रकृतिवाला हिंसक बालक पैदाकरेगी । यदि गोह के मांस (गोह बिछखपड़ा या साहूके आकार एकप्रकारका बड़ा जानवर है) खाने की इच्छा प्रगट करे तो वह स्त्री अति हठी और बहुत सोनेवाला बालक उत्पन्न करेगी ॥४॥ गो मांस खाने की इच्छा करनेवाली स्त्री बलिष्ठ और कठिन दुःखों को भी सहनेवाला ऐसा पुत्र, तथा भैंस के मांस के खाने की इच्छुक स्त्री किसी से न डरनेवाला महा शूरवीर, जिस के नेत्र भयङ्कर लाल २ और समस्त शरीर में बाल हों ऐसे पुत्र को उत्पन्न करेगी। इसी प्रकार अनेक खाने पीने के वस्तुओं पर गर्भिणी स्त्री के मन चलने से वैसाही रंग बिरंग के स्वरूप, प्रकृति, और चाल चलनका पुत्र पैदा होता है, जिसका सविस्तार वर्णन करने में बड़ाभारी ग्रन्थ हो जायेगा, आयुर्वेद विद्या के जाननेवाले इतनेही से अनुभव करसक्ते हैं ॥

वाराहमांसात्स्वप्नालुंशूरंसञ्जनयेत्सुतं । मार्गाद्विक्रान्तजंघालंसदावनचरंसुतं ॥

जो दो हृदयवाली स्त्री वनशूकर का मांस खाने की इच्छा प्रगट करै (इच्छा प्रगट करनेसे मतलब है वारंवार उसी वस्तुकी वासना बनी रहै) तो स्त्री अधिक सोनेवाला बड़ा शूरवीर जो रणसे विमुख नहो ऐसे रणधीर पुत्र को निस्सन्देह उत्पन्न करैगी। उक्त वाक्यों से जान पड़ता है कि मांस खानेका प्रचार पूर्व में भी अधिक था। और जो गर्भवती स्त्री चलने फिरने की इच्छा अधिक रखती हो वह बहुत चलनेवाला और हमेशा वनमें घूमनेवाला पुत्र को पैदा करैगी। इसी प्रकार बारहसींगा के मांस की इच्छुक, चञ्चल चित्तवाला और तीतर का मांस चाहनेवाली स्त्री डरपोक बालकको उत्पन्न करैगी। यद्यपि इस स्थलमें इसबातको नहीं लिखा कि मांस खानेकी इच्छा करनेवाली किस जातिकी स्त्रियांहैं लेकिन यह जाना जाताहै कि शूद्र की स्त्रियां अवश्य मांस खाती थीं बहुत सी स्त्रियां गर्भावस्था में मट्टी खपरा आदि चीजें खातीहैं और उन्हीं चीजों पर उनका सदैव मन रहता है इसी से वे स्त्रियां कुरूप, दुर्बल, दरिद्र, पांडुरोगी, और जिस के पेट में केचुये हो जांय ऐसा सन्तान उत्पन्न करती हैं॥

इसमें सन्देह नहीं कि माता अपने गर्भस्थित बालक पर अपने मानसिक विचार द्वारा बहुत कुछ अच्छा बुरा प्रभाव उत्पन्न कर सक्तीहै, यह तो स्पष्टही है कि गर्भिणियों के चित्त में अकस्मात् भय शोकादि उद्वेग होने से शीघ्रही गर्भपात हो जाता है, या बालकको अत्यन्त क्लेश होताहै और उस क्लेशका लक्षण उस बालक के उत्पन्न होने पर प्रत्यक्ष होजाता है। आत्म विद्या के एक बड़ेभारी विद्वान बोघोहाइन साहब अमेरिका ने दौहृदिनी के विषय में कई बातें प्रत्यक्ष देख करके लिखा है कि एक स्त्री जब उसका ३ मास का गर्भ था अचानक एक जंगली रीछके बच्चे को देखकर बहुत डर गई, उसका अन्तिम परिणाम यह हुआ कि उसके गर्भ से बावला लड़का पैदा हुआ और सयाना होने पर रीछ के समान बोलता था वह लड़का १४ वर्ष तक जिया॥

बोस्टन नगर में एक गर्भवती स्त्री अचानक एक तोते से डर गई

का ध्यान जिस २ पर पड़ेगा बालक का कोई न कोई अङ्ग उसीके समान होगा । जैसे मैथुन के समय स्त्री जिस पुरुष को ध्यान में लावे बालक रूप रंग में उसी के समान होगा, यहां तक कि कोई व्यभिचारिणी उप पति के साथ व्यभिचार करते समय अपने पतिका ध्यान करे तो बालक उसी के सदृश होगा मानो उसका औरस जात बालक नहीं है । यही कारण बालकों के मसे, लांछण, कालेदाग इत्यादि का भी है और उक्त महाशय एक कारण अधिक कामादि का भी कहते हैं ॥

लड़कों को विकृताकार तथा बद सूरत होने का कारण माता का अनेक वस्तुओं पर ध्यान देने का है, गर्भिणियों को चाहिये कि बदसूरत मनुष्यों को ध्यान देकर न देखें और अदृश्य वस्तुओं पर इच्छा न प्रगट करें । कदाचित् देख भी पड़ें तो उनको ख्याल में न लावें और सदा खूबसूरत तस्वीरें देखा करें ॥

अस्वाभाविक जन्म का कारण ।

यह भी ईश्वरेच्छा से स्त्री पुरुष के सांसारिक और स्वाभाविक नियम उल्लंघन करने का पाप फल रूप है । यह फल स्वाभाविक रूपसे उत्पन्न हुये बालक पर होता है क्योंकि विद्वज्जनों का मत है कि माता पिता के पुण्य या पाप का भागी उनका सन्तान होता है । बालक का बदसूरत अङ्ग भंग का होना मैथुन की आधिक्यता और न्यूनतापर निर्भरहै जैसे कि मैथुनकी आधिक्यता से हाथ पैर में उंगलियों का अधिक होना और मैथुन की न्यूनता से एक हाथ या दोनों हाथोंका न होना अथवा उंगलियों का कम होना इत्यादि ॥

स्त्री के प्रकृति विरुद्ध मैथुन कराने से अक्सर अस्वाभाविक बालक उत्पन्न होता है । सन् १९०३ ईस्वी में इङ्गलैण्ड देश में एक ऐसा बालक उत्पन्न हुआ था जिसका शिर से कमर तक शरीर मनुष्याकार था और कमर से पैर तक सलोम कूकुर के समान था । विद्वानों के अनुसन्धान करने से जाना गया कि उस स्त्री ने कूकुर के साथ मैथुन कराया था ।

एक स्त्री के विषय में लिखा है कि उसने मैथुन के समय अधिक ध्यान से एक हबसी की तस्वीर देखी थी उसका बालक ठीक हबसी के समान हुआ ॥

इङ्गलैण्ड के दूसरा राजा हेनरी के राज्यमें एक स्त्री के लड़का हुआ जिसके दो शिर, दो मुख, चार हाथ, चार पांव दोनों शरीर पीठके तरफ जुड़े थे, बात करने के समय दोनों मुख एक साथ बात करते थे और दोनों मुख से एकसाथही हँसते और रोते भी थे; यह लड़का कई वर्ष तक जीता रहा लेकिन उनमें से एक तीन वर्ष के बाद मरगया और दूसरा कई दिन तक उस मृतक देहको लेकर जीता रहा लेकिन उसके बोझसे और मृतक शरीर की दुर्गन्ध से वह भी मरगया ॥

लफक नामक एक नगर में एक गर्भिणी स्त्री के मुख पर मांसके एक बिन्दु रक्त के पड़ने से उत्पन्न बालक को देखा गया कि उसके मुख पर एक मसा है। पाठकगण को उपरोक्त लेखोंसे अवश्य मालूम हुआ होगा कि अच्छे और बुरे रूप, स्वभाव के बालक का उत्पन्न होना माता के ध्यान पर निर्भर है यदि उत्तम सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा हो तो दौहृदनियों के मनोर्थ को अवश्य पूर्ण करे। क्योंकि दो हृदयवाली गर्भिणी के इच्छा पूर्ण न करने से अथवा न्यून अधिक मैथुन करनेसे जो सन्तान होगा यदि वह विकृतस्वरूप न होगा तो आलसी बल विद्या बुद्धि हीन अवश्य होगा। इसके पश्चात् हम सुश्रुत से यह दिखलाते हैं कि गर्भगत बालक के कौन २ महीने में कौन २ अङ्ग बनते हैं ॥

मासभेद से अङ्ग का बनना।

तत्रप्रथमेमासिकललंजायते। द्वितीयेशीतोष्मानिलैरभिप्रपच्यमानानां महाभूतानांसंघातोघनःसञ्जायते॥ तृतीयेहस्तपादशिरसां पञ्चपिण्डकानिवर्त्तन्ते ऽङ्गप्रत्यङ्गविभागश्चसूक्ष्मोभवति ॥

भावार्थः—जब स्त्री के गर्भाशय में गर्भ रहता है तो पहले महीने में पुरुष का वीर्य्य और स्त्री का रक्त दोनों सम्मूर्छित हो कफ रूप कलल (पिण्डाकार) अवस्था को प्राप्त होता है । दूसरे महीने में शीत (कफ) गरमी (पित्त) और वायु इन्हीं से विपक्व पञ्च महाभूतों का शुक्र शोणितात्मक जो समूह वह कुछ घना हो जाताहै । तीसरे महीनेमें दो हाथ, दो पांव, शिर यह पांच पिण्ड एकही समय में पैदा होते हैं सिर्फ पिण्डाकारही नहीं बल्कि उसके महीन २ अङ्ग प्रत्यङ्ग भी उत्पन्न हो जातेहैं । जैसे हाथ पैर और शिर यह अङ्ग है और पैरों की उंगलियां तथा शिर के नाक कान ओठ आदि प्रत्यङ्ग कहातेहैं । गर्भगत बालक के जितने अंग होते हैं उनमें से कोई माता के अंग से और कोई पिता के अंग से उत्पन्न होते हैं ॥

चतुर्थेसर्व्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागः प्रव्यक्ततरोभवति ॥

जो तीसरे महीने में सूक्ष्म अङ्ग प्रत्यङ्ग उत्पन्न हुये वे सब चतुर्थ महीने में अलग २ हो जातेहैं और इसी चौथे महीनेमें बालकका हृदय बनताहै इसीसे गर्भिणी स्त्री चौथेमहीनेमें दोहृदयवाली कहातीहै परंतु चरक का मत है कि तीसरेही महीनेमें गर्भिणी स्त्री दौहृदिनी होजाती है और चरक महराज चतुर्थ मास का वर्णन इस प्रकार करतेहैं ॥

चतुर्थमासेस्थिरत्वमापद्यते गर्भस्तस्मात्तदागर्भिणी गुरुगात्रत्वमापद्यते ॥

चौथे महीने में गर्भगत बालक (स्थिर) पुष्ट होता है इसी सबब से चौथे मास में गर्भवती का शरीर भारी हो जाता है ॥

पञ्चमेमनःप्रतिबुद्धतरंभवति । षष्ठेबुद्धिः । सप्तमेसर्व्वाङ्गप्रत्यङ्गविभागःप्रव्यक्ततरः ॥

पांचवें महीने में गर्भगत बालकका मन अर्थात् चेतना उत्पन्न होती

लगते हैं । इसी प्रकार गर्भकी भी उत्पत्ति समझिये, गर्भमें सब अवयव एकही साथ उत्पन्न होते हैं । परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण देख नहीं पड़ते जब बड़े और मोटे हो जाते हैं सब अलग २ मालूम होने लगते हैं ॥

बालक के शरीरमें कौन वस्तु मातृज अर्थात् माता से और कौन वस्तु पितृज अर्थात् पिता से उत्पन्न हैं उसे प्रकाश करते हैं ।

पितृज--गर्भस्यकेश्मश्रुलोमास्थि नखदन्तसिरास्नायुधमनीरेतः प्रभृतीनिस्थिराणिपितृजानि ॥

मातृज--मांसशोणितमेदोमज्जाहृन्नाभियकृत्प्लीहान्त्रगुदप्रभृतीनिमृदूनिमातृजानि ॥

पिता के अंश से बालक के शरीरमें शिरके बाल, डाढ़ी, मूछ, रोम, नख, दांत, छोटे नस, बड़े नस, सब से बड़े नस, और वीर्य्य यह उत्पन्न होतेहैं, माताके अंश से गर्भमें बालक के मांस, वीर्य्य, रक्त, चर्बी, मज्जा, हृदय, नाभि, पिलही, आंत और मलाशय आदि नरम पदार्थ उत्पन्न होते हैं ॥

रसात्मजन्य पदार्थ ।

शरीरोपचयंबलंवर्णःस्थितिर्हानिश्चरसजानि । इन्द्रियाणिज्ञानविज्ञानमायुः सुखदुःखादिकञ्चात्मजानि ॥

रस की ताकत से गर्भगत बालक के शरीर की वृद्धि, बल, स्वरूप और स्थिति अर्थात् गर्भ का ठहरजाना और हानि अर्थात् गर्भ का न ठहरना यह भी रसही से प्रगट होते हैं । तथा नेत्र कर्ण आदि इन्द्री, ज्ञान विज्ञान (सूक्ष्म पदार्थज्ञान) आयुः सुख दुःख आदि यह सब आत्मा से उत्पन्न होते हैं ॥

गर्भमें पुत्र कन्या और नपुन्सक सन्तान होने की पहिचान।

यत्रयस्यादक्षिणस्तने प्राक्पयोदर्शनंभवति दक्षिणाक्षिमहत्वञ्चपूर्वंदक्षिणांसकथिउत्कर्पतिबाहुल्याच्च पुन्नाममध्येयेपुद्रव्येपुदौहृदमभिध्यायति स्वप्नेपुचोपलभते पद्मोत्पलकुमुदाम्रातकादीनि पुन्नामान्येव प्रसन्नमुखवर्णाचभवतितांब्रूयात् पुत्रमियंजनयिष्यतीति तद्विपर्य्ययेकन्याम् ॥

जिस गर्भिणी स्त्री के दहिने छाती में प्रथम दूध देख पड़े, तथा दाहिनी आंख कुछ बड़ी मालूम हो, एवं दहना जांघ गर्भके भारसे कुछ बढा सा जान पड़े और जितने पुरुष संज्ञक द्रव्य हैं जैसे आम, केला, अमरूद, अनार अथवा घोड़ा हाथी आदि जीवोंमें अभिलाष हो तथा स्वप्न में सफेद कमल, लाल कमल, कुमोदनी और आवड़ा आदि पुल्लिङ्ग वाचक पुष्प और फल देखे एवं जिसका मुख सर्वदा प्रसन्न चमकीला रहै तो कहना कि यह पुत्र पैदा करेगी और उपरोक्त बातें सब उलटी होंतो जानना कि इस स्त्री के गर्भ से कन्या उत्पन्न होगी । वाग्भट्टजी इतना विशेष कहते हैं "पूर्वंतत्पार्श्वचेष्टनी" और लक्षणोंके अलावा जिस स्त्री के गर्भ में पुत्र है वह स्त्री की सम्पूर्ण चेष्टा दक्षिण तर्फ रहै याने चलेती पहले दहिना पैर उठावे, सोने में भी प्रायः दहने करवट सोवे । इससे उलटी चेष्टा में गर्भगत कन्या जानना चाहिये ॥

नपुन्सक गर्भ के लक्षण।

यस्याःपार्श्वद्वयमुन्नतं पुरस्तान्निर्गतमुदरं प्रागभिहितलक्षणञ्च तस्यानपुन्सकमितिविद्यात् ॥

जिस गर्भवती की दोनों कोख ऊंचीसे मालूमहों और आगेको ओर

पेट बराबर साधिक दस्तूर हो और जो ऊपर लड़की लड़का होने का लक्षण लिखे हैं वे न मिलते हों तो जानना की इस स्त्री के पेटमें नपुंसक बालक है ॥

यस्यांमध्येनिम्नंद्रोणोप्रभूतसुन्दरं सायुग्मंप्रसूयतइति ॥

जिस गर्भिणी स्त्री का पेट बीच में कुछ खाली सा पड़ जाय जैसे जल का पात्र और चारों तर्फ ऊंचे हों तो जानना कि उसके पेट में जोड़ा लड़का है ॥

डाक्टरीमतानुसार गर्भ का लक्षण ।

इस स्थल में हम संक्षेप से कुछ डाक्टरी मत से भी गर्भगत बालक के लक्षणों को प्रकाश करते हैं । पुरुषका शुद्ध वीर्य्य और स्त्री का रज जब गर्भाशय में जमता है तो वही बारह तेरह दिन के बाद रक्त का एक गोला सा बन जाता है और उसी गोले में कुछ दिन बाद प्रथम दिल बनता है और उसी गोलेमें सम्पूर्ण नसें महीन सूत के समान चारो तर्फ फैल जाती हैं। बाद उसके शिर बनता है और बालक के हाथ पैर नाक मुह आदि स्थानों के सब नसें तैयार हो जातीहैं। यदि वही पिण्ड पुत्र है तो तीस दिन में जितने अङ्ग प्रत्यङ्ग हैं सब बन जातेहैं । अगर वही पिण्ड कन्या की है तो वेही सब अङ्ग प्रत्यंग पैंतालिसवें दिनमें बनेंगे । चौथे महीनेमें लड़का हो चाहे लड़की बाल नख आदि सब निकल आते हैं । सातवें महीने का पैदा हुआ बालक जीता भी है परन्तु आठवें महीने का जन्मा बालक अवश्य मर जाता है उसका सबब यही दिखलाया है कि ताकत स्थिर नहीं रहती. नवें और दशवें का जन्मा हुआ बालक जीता है ॥

गर्भ में लड़का लड़की होने की पहिचान ।

स्त्री के गर्भ में लड़का रहनेसे पेट दहने तर्फ फूला रहताहै लेकिन वह भी बहुत अधिक नहीं कम फूला रहता है और वो स्त्री प्रायः

दहिना हाथ जमीन में टेककर उठती है और चलने में भी अक्सर दहिना पैर उठता है । गर्भ में पुत्र के रहने से स्त्रियों की दहनी छाती कड़ी और कुछ सुर्ख हो जाती है । आंख की पुतली के नीचे जो सफेदी है उसमें जो डोरे रहतेहैं दहिने तर्फ नीले होजाते हैं और नसें देख पड़ने लगती हैं । कन्या गर्भ में रहने से उपरोक्त सब लक्षणों को उलटा समझना जैसे पेट का बायें तर्फ फूलना और अधिक फूला रहना और अक्सर बायां हाथ जमीन में टेक कर उठना, बांई छाती का कड़ा होना थोड़ी ललाई लिये नेत्र के डोरे बायें तर्फ नीले हो जाने इत्यादि ॥

ग्रीस देश निवासी ग्रस्टाटल नामक फिलासफर कहते हैं कि यह बात हमने कई मरतबे आजमाया है और बहुत सत्यहै। गर्भवती स्त्री की छाती से दूध निकाल पानी में डाल दे अगर दूध पानी के नीचे वैसाही बैठ जाय जरा भी न फैले तो जानना कि इसके पेट में लड़का है अगर वह दूध पानी पर उतराने लगे या पानी के ऊपर फैलजाय तो जानना कि गर्भमें कन्या है और यह बात तो प्रायः देखने में आई है कि लड़का पैदा होने में माता को क्लेश कम होता है लड़की में अधिक ॥

गर्भवती स्त्री के त्याजकर्म ।

भावप्रकाश से ।

अतिव्यवायमायासं भारंप्रावरणंगुरु । अकालजागरस्वप्नकठिनोत्कटकासनम् ॥ शोकक्रोधभयोद्वेग वेगश्रद्धाविधारणम् । उपवासाध्वतीक्ष्णोष्ण गुरुविष्टंभिभोजनम् ॥ रक्तंनिवसनंश्वभ्रकूपेक्षांमद्यमामिषं । उत्तानशयनंयच्चस्त्रियोनेच्छन्तिततत्यजेत् ॥ तथारक्तस्रुतिंशुद्धिं वस्तिमाभासतोऽष्टमात् । एभिर्गर्भःस्रवेदामः कुक्षौशुष्येंम्रियेतवा ॥

बहुत मथुन करना, अधिक मेहनत करना, भारी बोझ का उठाना, दिनको सोना रातको जागना या समय से न सोना, उकुरूबैठना, शयया

बहुत देर तक बैठे रहना, ज्यादा रञ्ज करना, शोक करना, डरना या डरने के स्थान में जाना मनमें ग्लानि लाना, दिशा पेशाब लगा हो और हवा छुटता हो उसे रोकलेना, उपवास करना, और दूर तक पैदल चलना * तेल, मिर्चा, खटाई, अचार, सिरका, आदि तीक्ष्ण, देर हजम, और कब्ज करनेवाले पदार्थों का भोजन, लाल वस्त्रों का पहनना § पहाड़, बावली और कुयें का झाकना, शराब पीना, मांस खाना, हमेशा चित्त सोना, इत्यादि कुपथ्य गर्भिणी स्त्री को चाहिये कि त्याग करे क्योंकि इन आचरणों से प्रायः गर्भ गिर जाता है। तथा फस्त खोलाना, जुलाब लेना, दवा खा के वमन करना और आठवें महीने के भीतर बस्ति कर्म अर्थात् पिचकारी से गुदा मार्ग द्वारा मलाशय में दवा पहुंचाना (आठवें महीने में बस्तिकर्म करना लिखा है) इसके अलावा भी जो स्त्री कईबार लड़का जन चुकी है और उसके जो अनुभव किये हुये पथ्य हैं उनको भी शिक्षा को मानना गर्भिणियों के लिये हित है। ऊपर लिखे हुये कुपथ्यों के करने से गर्भ गिरजाता या गर्भही में बालक मरजाता है इसलिये गर्भिणियों को पथ्य से रहना चाहिये ॥

इस स्थल में स्त्रियों के कुछ उन रोगों का बयान करते हैं जिसके सबब से गर्भ नहीं रहता जैसे योनिरोग, प्रदररोग, आर्त्तवरोग आदि। जिसमें हम प्रथम योनिरोग को कहते हैं। स्त्रियों के योनि (भग) बीस प्रकार का रोग होता है ॥

---

* हमारे इस देश की मूर्खा स्त्रियां पूरे गर्भ को धारण किये दो दो चार चार कोस पैदल गङ्गा नहाने दौड़ी जाती हैं, गर्भावस्था को कौन कहै सोवर में भी एकादशी ऐतवार का व्रत करती हैं जब इन कुपथ्यों से गर्भ गिरजाता है अथवा बालक उत्पन्न हुआ मरगया तो घर को और मरे हुये पित्रों को दोष देती हैं ॥

§ लाल वस्त्रों की ललाई की चमक नेत्रों के द्वारा भीतर जा के बालक के नेत्र को गरम करता है इसीलिये चमकीली चीजें गर्भिणी स्त्रियों को देखना मना किया है ॥

योनिरोग।

विंशतिर्योनिरोगास्युर्वातपित्तकफादपि । सन्निपाताच्चरक्ताच्च लोहिताक्षयतस्तथा ॥ शुष्काचवामिनी चैव पण्डीचांतर्मुखीतथा । सूचीमुखीविप्लुताचजातघ्नीचपरिप्लुता ॥ उपप्लुताप्राक्चरणा महायोनिककर्णिका। स्यान्नन्दाचातिचरणा योनिरोगाइतीरिताः ॥

स्त्रियों के योनि में बीस प्रकार का रोग होता है उनके नाम यह हैं। वातजा, पित्तजा, कफजा, सन्निपातजा, रक्तजा, लोहिताक्षया, शुष्का, वामिनी, पण्डी, अन्तर्मुखी, सूचीमुखी, विप्लुता, जातघ्नी, परिप्लुता, उपप्लुता, प्राक्चरणा, महायोनिक, कर्णिका, नन्दा, और अतिचरणा यही २० रोग हैं।

सुश्रुत आदि ग्रन्थों के मत से भी योनिरोग लिखते हैं क्योंकि नाम में शार्ङ्गधर से और अन्य ग्रन्थों से कुछ भेद है। सुश्रुतादि में योनिरोग के नाम इस प्रकारसे लिखते हैं कि उदावृता १ वंध्या २ विप्लुता ३ परिप्लुता और वातला यह पांचरोग वायु दोष से होते हैं। लोहिताक्षरा १ प्रस्रंसिनी २ वामिनी ३ पुत्रघ्नी और पित्तला यह पांच रोग पित्त दोष से होते हैं। अत्यानन्दा १ कर्णिनी २ चरणा ३ अतिचरणा ४ कफला यह पांच कफ दोष से उत्पन्न होते हैं। पण्डी १ अण्डिनी २ महती ३ सूचिवक्त्रा ४ और त्रिदोषजा यह पांच सन्निपात अर्थात् तीनों दोषों से है। इसके उत्पत्ति का कारण सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है:—

विंशतिर्व्यापदोयोनेर्निर्दिष्टारोगसंग्रहे मिथ्याचारेणतास्त्रीणांप्रदुष्टेनार्त्तवेनच ॥ जायन्तेवीर्यदोषाच्चदैवाच्चशृणु ताःपृथक् ॥

मिथ्याचार अर्थात् कुसमय खाना प्रकृति विरुद्ध भोजन जैसे गरम मिजाज है और गर्मही भोजन करना, मिथ्याविहार जैसे दिन रात

मैथुनही करना इत्यादि कारणों से मासिक धर्म का रक्त गरम हो योनिरोग उत्पन्न होता है और माता पिता के वीर्य दोष से जिस कन्या का जन्म हुआ है उसे भी प्रायः योनिरोग हो जाता है ।

उदावृत्ता—जिस स्त्री के मासिक धर्म अति कष्ट से हो, पेडू में पीड़ा रक्त का गांठ गिरे तो जानना कि उदावृत्ता है ।

वन्ध्या—जिसका मासिक धर्म शुद्ध और ठीक समय में न हो उसमें गर्भाधान नहीं रहता ।

विप्लुता—योनिरोग में, योनि के भीतर हमेशा एक प्रकारका दर्द बना रहता है ।

परिप्लुता—योनिरोग में मैथुनके समय योनिके भीतर अधिक पीड़ा होती है ।

वातला—योनिरोग में मासिक रक्त कम हो जाने से जैसे कोई सुई छेदे ऐसा दर्द हो । यद्यपि उपरोक्त चारो योनिरोगों में भी वायु का कोप है तथापि वातला योनिरोग में दर्द अधिक होता है ।

लोहिताक्षरा—जिस योनि के द्वारा गरम २ लोहू दाह सहित जारी हो उसे लोहिताक्षरा कहते हैं ।

वामिनी—जिस स्त्री की योनि पुरुष के मैथुन के बाद पुरुष के लिङ्ग द्वारा गिरा हुआ वीर्य और मात हुआ स्त्री की रज दोनों को बाहर निकाल दे उसे वामिनी योनिरोग कहते हैं ।

संसिनी—जिस स्त्री की योनि अधिक देर मैथुन के होने से, या लिंग की रगड़ से बाहर निकल आवे वह स्रंसिनी योनि है, ऐसी स्त्री के गर्भ रहजाने से सन्तान बड़े मुस्किल से होता है ।

पुत्रघ्नी—(दूसरा नाम जातघ्नी) जिस स्त्री के मासिक रक्त गर्म

महती—उस योनि को कहते हैं जो बहुत फैली रहै यह भी रोग है ।

सूचिवक्त्रा—जिस योनि को छिद्र बहुत छोटी हो वह स्त्री सिर्फ मूत्र त्याग तो करसकै परन्तु मैथुन न करासकै वह सूचिवक्त्रा योनि कहाती है ।

यद्यपि ऊपर कहे हुये चारो योनिरोग वातादि दोष से हैं तथापि जिस योनि रोग में तीनों दोषों के लक्षण पाये जांय वह सन्निपातजा योनिरोग कहाता है ।

योनिकन्द रोग ।

दिवास्वप्नादतिक्रोधाद्व्यायामादतिमैथुनात् । क्षताच्चनखदन्ताद्यैर्वाताद्याःकुपितायतः ॥ पूयशोणितसंकाशं लकुचाकृतिसन्निभं । जनयन्तियदायोनौनाम्नाकन्दस्सयोनिजः ॥

अत्यन्त दिन के सोने से, अत्यन्त गुस्से में बने रहने से, बहुत अधिक मेहनत कसरत करने से, दिन रात मैथुन करानेसे, योनि के छिल जानेसे और नख दांत आदिके लगनेसे, (यदि कोई कहै कि भगमें नखसे चोट लगना तो कोई शक की बात नहीं है क्योंकि मैथुनके पूर्व अक्सर विषयी गण चपटों उसे अंगुलियों से टटोलते रहते हैं पर दांत कैसे लग सक्ता है ? यह भी कोई शंका नहीं है बहुत से ऐसे विषयी निकलेंगे जो भग को जीभ और दांतों से चाटते हैं । यहां एक गांव में बड़े रईश थे उनकी यह आदत थी कि जब तक भग के भीतर जीभ डालकर उसे घंटे दो घंटे खूब न चाटैं लिङ्ग प्रसङ्ग लायक न हो) जो भग के भीतर घावहो उससे वातादि दोष स्वप्रकृत्यानुसार कुपित होके योनिके भीतर पीव और रक्त दोनों को समेट बड़हर के फल के आकार ग्रन्थि (गांठ) उत्पन्न करता है उसे योनिकन्द रोग कहते हैं । वह योनिकन्द वाताधिक्य से रूखा और फटा सा, पित्त से ललाई लिये दाहयुक्त जिसके तकलीफ से ज्वरहो कफसे खाजयुक्त नीलवर्ण का और जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिले उसे सन्निपात से योनिकन्द जानना ॥

योनि रोग की चिकित्सा।

योनि रोग की चिकित्सा साधारण प्रकार से जो अजमूदा है सुश्रुत संहिता, चक्रदत्त और अनङ्ग रङ्ग कामशास्त्र आदि ग्रन्थोंके मतसे लिखते हैं जो सर्व साधारण अपने काम में ला सकें।

ऊपर कहे हुये योनिरोगों में कई रोग हैं जो असाध्य हैं परन्तु चिकित्सा सब की हो सक्ती है और कईबार आराम होते हुये भी देखे गये हैं। प्रायः योनिरोग की दवाइयां इसप्रकार होती हैं, जैसे योनि में बफारा देना, तेल में रुई का फोहा तर करके योनि के भीतर रखना, गोली या बत्ती बना के योनि में रखना, पिचकारी देना, दवाइयों का पानी बना के भग को धोना इत्यादि और दवा भी खाने को दिया जाता है।

जिस योनिरोग में खजुरी बहुत हो और मैथुन करने में गाय की जीभ सरीखी खरखरी मालूम होती हो तो उस रोग में हरदी, दारु-हरदी, और भटकटैया का फूल इन तीनों चीजों को बराबर वजन ले पानी में महीन पीस लुगदी बनाय योनि में रक्खे और इन्हीं दवाइयों की धुनी दे इसीप्रकार कई दिन करने से आराम होता है।

वात करके जितने प्रकार के योनिरोग हैं उनमें गुरच, त्रिफला और दातूनि की जड़ तीनों चीजों का काढ़ा बना के उसीसे योनि को धोना और तगर भटकटैया का फल, कूट, सेंधानोन और देवदारु इन सब औषधों को एक २ छटांक ले कुचल कर ५ सेर पानी में काढ़ा बनावे जब एक सेर पानी रह जाय मलकर छान ले और कढ़ाई में एक पाव काले तिल का तेल डाल उसीमें उक्त काढ़े को छोड़ मन्दाग्नि से पकालेवे जब पानी जलजाय तेल मात्र रहजाय शीतलकर छानलेय उसी तेलका फाहा बोर योनि में रक्खे इसी प्रकार जब तक रोग समूल नष्ट न हो बराबर फोहा रखता जावे।

पित्तदोष से जितने प्रकारके योनिरोग हैं उन सबों में गरम उपचार कभी न करना चाहिये। शीतल दवाइयों का लेप, तथा धोना, और

फोहा आदि रखना अत्यन्त फायदा करता है, इसी प्रकार कफ दूषित योनि में शीतल उपचार न करके गरम उपचार करने से लाभ होता है जैसे पीपर, मिर्च, उरद, हींग, कूट और सेंधानोन इन सब औषधों को कूट पानी में पीस अंगुष्ठ प्रमाण बत्ती बनाय छायामें सुखायलेय। इस बत्ती को योनि में रखने से कफ सम्बन्धी योनिरोग अवश्य आराम होता है।

योनिरोग पर धातक्यादि तैल, चरकसे।

धातक्यामलकीपत्रस्रोतोजमधुकोत्पलैः। जंव्वाम्रमध्यकासीसलोध्रकट्फलतेन्दुकैः॥ सौराष्ट्रिदाड़िमत्वग्उदुम्वरशलाटुभिः। अक्षमात्रैरजामूत्रेक्षीरेचद्विगुणंपचेत्॥ तैलप्रस्थंपिचुंतस्मात्योनौचप्रणयेत्ततः। कटीपृष्ठत्रिकाभ्यंगंस्नेहंवस्तिचदापयेत्। पिच्छलस्रावणीयोनिर्विप्लुतोपप्लुतातथा। उत्तानाचोन्नताशूना सिद्ध्येत्सस्फोटशूलिनी॥

धवपत्र, आंवले के पत्र, कमलपत्र, कालासुरमा, मुलेठी, जामुन और आम की गुठली, कसीस, लोध, कायफल, तेंदू का फल या छाल, फिटकिरी, अनार का छाल और गूलर के कच्चे फल इन दवाइयों को सवा २ तोला ले सब को कूट कर ऽ१॥= एक सेर अढ़ाई पाव बकरी के मूत्र में पीस लुगदी कर एक सेर कालेतिल का तेल कढ़ाई में डाल उसीमें लुगदी और जितना बकरी का मूत्र है उतनाही गौका दूध भी उसीमें डाल कर धीमी आंच से पकालेवे जब दूध वगैरह जल जाय तेल अकेला रह जाय अग्नि से उतार शीतल कर बोतल में भर के रखदेवे। इस तेल का फोहा योनि में रखने से तथा पीठ, कमर, पीठ की रीढ़ में इस तेल के मालिस करने से और इसी की पिचकारी योनि में देने से निस्सन्देह योनि से पीव का बहना, योनि का सूजन और घाव तथा विप्लुता, उपप्लुता, उत्ताना आदि योनिरोग अति दर्द सहित भी आराम होता है। इस तेल के दवाइयों का तोल भाषा में श्लोक से कुछ फरक है पाठकगण संदेह न करें।

चूहे का मांस तेल में पका के उसका फोहा योनि में धरने से अथवा मूसे के मांस के भरता में सेंधा नोन मिला के भग में रखने से निस्सन्देह योन्यर्श और योनिकन्द रोग आराम होता है लेकिन जबतक रोग समूल नष्ट न हो बराबर उसका फोहा रखता जावै ॥

महता योनि की चिकित्सा ।

मदनफल मधूक कर्पूर प्रपूरितं कामिनी जनस्य ।
चिरगलित यौवनस्य च वरांगमति गाढंसुकुमारं ॥

मैनफल, मुलेठी, और कपूर तीनों को महीन पीस तंजेब के कपड़े में पोटरी बनाय भग के भीतर रखने से अतिफैली तथा ढीली योनि संकुचित और सुकुमार हो जाती है ॥

मासिक धर्म की चिकित्सा ।

यद्यपि इस रोग होने का कारण ऊपर लिख चुके हैं तथापि यह स्थल में इतना कहना जरूरी है कि स्त्रियों के माहवारी का बन्द हो जाना और भी बहुत से कारण हैं—जैसे अत्यन्त गरम प्रकृति होने के सबब मासिक खून का सूखजाना उसका लक्षण यह होगा कि शरीर दुबला, शरीर में गरमी मालूम होना और भी जो खून कमी के लक्षण हैं वह भी पाये जाते हैं । चाहिये कि ऐसी अवस्था में पुष्ट और रक्त वर्द्धक औषधियां खिला के तब मासिक खोलने की चेष्टा करै । किसी को अति ठंढक पहुंच कर खून गाढ़ा होके जम जाता है इससे भी मासिक रुक जाता है, किसी के योनि में घाव होके मवाद सूख जाता है उस्से या योनि के रगों के मुख बन्द हो जाने से भी मासिक धर्म्म का होना बन्द हो जाता है और किसी २ को अधिक मोटेपन से रुधिर निकलने के रास्ते बन्द हो जाते हैं । उक्त कारणों को और प्रकृति को अच्छी तरह देख भाल के चिकित्सा करना वैद्य को उचित है ॥

इक्ष्वाकुबीजदन्तीचलागुड़मदनफली कणवयष्टयाह्वैः ।
सास्नुकक्षीरैर्वर्त्तिर्योनिगता कुसुमसंजनी ॥

कड़ुई तूम्बी के बीज, बवाल गोटे के वृक्ष की जड़ की छाल, बड़ी पीपर, पुरानागुड़, मैनफल, दारू का कीट (शराब खिंच जाने के बाद जो कीट नीचे देग में जम जाता है). और मुलेठी इन सब चीजों को महीन पीस थूहर के दूध में घोट उँगुलिया के बराबर बत्ती बना के छाया में सुखाय लेय। इस बत्ती को योनि में रखने से अनार्त्तव रोग अर्थात् मासिक धर्म्म का न होना आराम होके स्त्री महीने२ ऋतुमती होने लगती है॥

मालकांगुनी, राई, विजयसार लकड़ी, दुधियाबच, इन सब औषधों को कूट कपड़छान कर तीन २ मासा की पुड़िया बना ले शाम सवेरे १ पुड़िया मुखमें रख शीतल जलसे उतार जावे इस प्रकार पांच सात दिन दवा खानेसे मासिक धर्म होने लगताहै। अगर इस चूर्णको भी खिलावे और योनि में पूर्वोक्त बत्ती रक्खे तो बहुत शीघ्र फायदा होवे परन्तु यह चूर्ण गरम प्रकृति वाली को फायदा नहीं करता। गरम मिजाज वाली को खून बढ़ाने की चेष्टा करे और योनि में उक्त बत्ती को रक्खे। जिस स्त्री के मासिक धर्म नहीं होता उसे नित्य मछली कालातिल, बरद और सिरका आदि खाना फायदा करता है।

योनिशूल की दवा।

पिचुमन्दरसेनमिश्रितैः पिचुमन्दानिलशत्रुबीजकैः।
घटितांवटिकांभगान्तरे भगशूलप्रशमायधारयेत्।

नींब की निबोली और रेंड़ी के बीज दोनों को नींब के पत्तों के रसों में खूब महीन घोट कर आवला के समान गोली बनाय ले, इस गोली को योनि के भीतर रखने से योनि का दर्द बहुत शीघ्र आराम होता है। इसी प्रकार इन्द्रायण की जड़ और शोंठ इन दोनों को खूब महीन पीस बकरी के घी में घोट योनिमें लेप करनेसे योनि का दर्द तत्काल जाता रहता है। परन्तु जिस स्त्री के योनि में दर्द, गरमी सुजाक आदि के कारण से होगा उसमें फायदा नहीं करैगा।

वन्ध्या चिकित्सा ।

ऊपर कहेहुये योनिरोग में, और सात प्रकारके योनिफूलमें जो रोग होते हैं जिसके लक्षण आरोग्य दर्पण के दूसरे खण्ड में लिख चुके हैं उन रोगों में गर्भ नहीं रहता, तथा माता पिता के अत्यन्त वीर्य्य कमजोर होजानेसे भी गर्भ स्थित नहीं होता, इन सब बातों का विचार करके वन्ध्या की चिकित्सा करना उत्तम है क्योंकि जब तक योनिरोग आदि आरामन होगा गर्भस्थित होना अति दुष्कर है। रत्नावली में वन्ध्या की चिकित्सा इस प्रकार लिखी है ॥

क्वाथेनहयगन्धायाःसाधितंसघृतंपयः । ऋतुस्नाता-बलांपीत्वागर्भंधत्तेनसंशयः ॥ पिप्पलींशृङ्गवेरञ्चमरिचं-नागकेशरं । घृतेनसहपातव्यंवन्ध्यापिलभतेसुतम् ॥

दो तोला नागौरी असगन्ध को गौके दूधमें पीस लुगदी बनाय एक पाव गौ का दूध और एक तोला गौ के घृत में पकाय ले बाद उस दूध को कपड़े में छान कर ऋतुस्नान करके चौथे दिन यदि स्त्री पिये तो निश्चय गर्भधारण करै। इसीप्रकार छोटी पीपर, सोंठ, मिरच और नाग-केशर इनका ६ माशा चूर्ण घी के साथ ऋतुस्नान के चौथे दिन चाटने से वन्ध्या भी सन्तान उत्पन्न करै। गर्भस्थिति के लिये वैद्यक शास्त्र में और भी अनेक दवाइयां हैं जैसे सोमघृत, फलघृत आदि जिसका कि वर्णन आ० द० के दूसरे खण्ड में कर चुका हूं कि जो घृत, स्त्री पुरुष दोनों के दूषित वीर्य्य को शुद्ध करके विद्वान तथा बलवान गर्भ को प्राप्त करता है।

वृन्दत्रयी में लिखा है कि तीन प्रकार की वंध्या होती हैं "जन्मवंध्या काकवन्ध्या मृतवत्सा च कृचित्स्त्रियः" एक जन्मवन्ध्या जिसके कभी गर्भ स्थित न हुआ हो, दूसरी काकवन्ध्या जिसके एक सन्तान हो के फिर गर्भाधान न रहे, तीसरी मृत वन्ध्या अर्थात् लड़के हों और मरजावें। और इसकी चिकित्सा भी अनेक प्रकार की लिखी हैं ग्रन्थ अधिक बढ़जाने के सबब से नहीं लिखते हैं। लेकिन गर्भ का न रहना मुख्य वीर्यदोष है

हमने कई बार स्त्री पुरुष के रज वीर्य की परीक्षा करके वीर्य शुद्ध करके औषध खिलाया है गर्भ अवश्य रहा है और पूर्ण मास में सुन्दर सन्तान उत्पन्न हुआ है।

पुरुष के वीर्य की परीक्षा इसप्रकारसे करै एक फूलके कटोरेमें थोड़ा उष्णजल भर देय और उसीमें पुरुष अपने वीर्यको डाले यदि वीर्य एकबारगी जलके भीतर चलाजाय तो जानना कि यह वीर्य गर्भाधान करने लायक है और वीर्य बूंद २ करके पानी पर उतराने लगे या पानी पर फैलजाय तो जानना कि यह वीर्य गर्भाधान नहीं करसक्ता। यदि वीर्य न पानी के भीतरही जाय और न ऊपर उतरावे पानी के बीचमें जाके ठहरजावे तो जानना कि इस वीर्य से गर्भाधान होगा परन्तु सन्तान नहीं जियेगा। इसीप्रकार रज को परीक्षा करै एक गमले में थोड़े से सोआ के वृक्ष लगा दे और स्त्री से उस वृक्ष की जड़ में पेशाब करावे यदि वृक्ष मुरझा जावे तो जानना कि इसका रज शुद्ध नहीं है और वृक्ष जब के तब बने रहैं तो जानना रज शुद्ध है।

जब देखे कि पुरुष के वीर्य में दोष है तो नीचे लिखी हुई औषध खिलावे जब तक वीर्य शुद्ध न हो।

सफेद मूसली बम्बई की, तालमखाना का बीज, बीजबन्द, गुलसकरी, कामराज, मखाना और सेमरका मूसला इन सातों चीजोंको बराबर भाग ले कूट कपरछान कर छः २ मासा की पुड़िया बनाय लेय, सामसबेरे एक पुड़िया मुख में रख पाव भर गौ के दूध में २ तोला मिश्री और आधा तोला गौ का घी डाल के पी जावे इसीप्रकार जब तक उत्तम बलवान वीर्य न हो दवा बराबर खाता जावे और तेल मिर्चा खटाई शराब मांस स्त्री प्रसङ्ग आदि से पहरेज करै।

स्त्री के रज शुद्ध करने के लिये यह दवा खिलावे। नागौरी असगन्ध, पञ्जाबीशतावर एक २ छटांक, बबूल का गोंद ३ तोला, छोटी लायची १ तोला सब चीजों को महीन पीस कपरछान करलेय इसकी मात्रा ३ मासा से एक तोला तक है सांम सबेरे दोनों समय गौ के दूधसे दवा खावे जब तक रज शुद्ध न हो और मद्यमांसादि गरम भोजन, और शोक क्रोध,

पुरुष समागम आदि से परहेज करै जब देखे कि रज वीर्य दोनों खूब शुद्ध हैं पूर्वोक्त विधिके अनुसार गर्भाधानकरै निस्सन्देह सन्तान उत्पन्न होगा।

प्रदर रोग का निदान।

स्त्रियों के योनि के द्वारा रक्त अथवा धातु का जाना प्रदर रोग कहाता है और प्रायः यह रोग ऐसे २ कुपथ्यों से होता है—जैसे प्रकृति के विरुद्ध अधिक रूखा गरम भोजन करना, शराब पीना, खाने पर तुरत फिर खाना, कच्चे गर्भ का गिरजाना, अति मैथुन करना, सवारी पर चढ़ के अथवा पैदल बहुत घूमना, अधिक शोच और उपवास अर्थात् व्रतों का रखना, असहन बोझ का उठाना, अधिक चोटसे पीड़ित होना इत्यादि कारणों से वातादि दोष करके चार प्रकार का प्रदररोग होता है॥

असृग्दरंभवेत्सर्वं सांगमर्दंसवेदनम्। तस्यातिवृद्धौ-दौर्बल्यंभ्रमोमूर्छामदस्तृषा। दाहःप्रलापःपांडुत्वं तन्द्रा-रोगाश्चवातजा॥

इसका सामान्य रूप यह है कि चारो प्रकार के प्रदररोग में शरीर ऐंठता है और तकलीफ पीड़ा होती है। प्रदररोग के बहुत बढ़ जाने से शरीर दुबला हो जाता है, बिना मेहनत किये शरीर थकीसी मालूमहो यह मन हो कि लेटे रहो कुछ काम काज मत करो, शिरमें घुमरी और नेत्र में गरमी मालूम होना, पियास की आधिक्यता शरीरमें जलन, जी का घबड़ाना, शरीर की रंगत पीलाई और सफेदी मायल, नेत्रों पर झपकी और भी वायु के अनेक उपद्रव हो जाते हैं॥

वातादि भेद से लक्षण।

आमंसपिच्छाप्रतिमंसपांडु पुलाकतोयप्रतिमंकफा-त्तु। सपीतनीलासितरक्तमुष्णं पित्तार्तियुक्तंभृशवेगि-पित्तात्॥ रूक्षारुणंफेनिलमल्पमल्पं वातार्तिवातात्पिशि-तोदकाभम्। सक्षौद्रसर्पिर्हरिताळवर्णं मज्जाप्रकाशंकुणपं

त्रिदोषम् ॥ तच्चाप्यसाध्यंप्रवदन्तितंज्ञा न तत्रकुर्वीतभिषक्चिकित्साम् ॥

माधवनिदानसे वातादि भेदों करके लक्षण कहतेहैं। जिस प्रदररोग में कफ का कोप होता है उसमें योनि से, आंव की तरह अथवा भातके माड़ के समान पीला सफेद मिश्रित रंग का या कोदव धान के धोवन सरीखा धातु निकलता है। जिस प्रदर रोग में पित्त का कोप रहता है उसमें नीला, काला, पीला, लाल और अतिगरम पेट और पेडूमें दर्द हो के योनि द्वारा लोहू निकलता है। वायु दोष से प्रदर रोग में गुलाबी रंग का फेन सहित थोड़ा २ कमर और पेडू में पीड़ाहोके अथवा मांसके धोवन सरीखा योनि द्वारा धातु निकलता है और जिस प्रदर रोग में तीनों दोष मिले रहते हैं उसमें जैसे शहद और घी मिल जाने का रंग होता है उस रंग का या हरताल के रंग के समान अथवा चरबी की भांति दुर्गन्धि सहित योनि के द्वारा धात का मवाद निकलता है यह असाध्य है सैकड़ों वार औषध खिला के परीक्षा लिया है कुछ फायदा नहीं होता निस्सन्देह त्रिदोष युक्त प्रदर रोगवाली स्त्री मर जाती है इसलिये बुद्धिमान वैद्य उस प्रदर रोग की चिकित्सा न करे॥

सोमरोग का लक्षण।

भावप्रकाश से।

स्त्रीणामतिप्रसङ्गेन शोकाच्चापिश्रमादपि। अतिसारकयोगाद्वागरयोगात्तथैव च॥ आपःसर्वशरीरस्थाः क्षुभ्यन्तिप्रस्रवन्तिच। तस्यास्ताःप्रच्युताःस्थानान्मूत्रमार्गंव्रजन्तिहि॥ प्रसन्नाविमलाःशीता निर्गन्धानीरुजाःसिताः। स्रवन्तिचातिमात्रंताः सानशक्नोतिदुर्बला॥ वेगंधारयितुंतासां न सुखंविन्दतेक्वचित्। शिरःशिथिलतातस्या मुखंतालुचशुष्यति॥ मूर्छाजृम्भाप्रलापश्च त्वक्रूक्षाचातिमात्रतः। भक्ष्यैर्भोज्यैश्चपेयैश्च न तृप्तिंलभतेसदा॥ सन्धारणाच्छरीरस्य ताश्चापःसोमसंज्ञिताः। ततःसोमक्षयात्स्त्रीणां सोमरोगइतिस्मृतः॥

जिस प्रकार पुरुष को बहुमूत्र रोग होताहै, और अधिक मूत्र द्वारा घात जाते २ मनुष्य मर जाता है । उसी तरह स्त्रियोंको सोमरोग होता है और यह भी ऐसा दुष्कर रोग है यदि प्रारंभमें उपाय न कियाजाय तो फिर आराम होना कठिन होजाताहै और कुछ दिनोंमें स्त्री गलकर मर जाती है । यह रोग स्त्रियों के ही होता है और इसके होनेका भी कुपथ्य वही है जो प्रदर रोग में लिख आये हैं जैसे—अति मैथुन, अति शोक अधिक मेहनत आदि विशेष यह कि जुलाब के बिगड़ जाने और जहरीली वस्तु के खाने से सम्पूर्ण शरीर का रस रक्तादि तर पदार्थ और जल का अंश अपना २ स्थान छोड़ मूत्राशय में प्राप्त हो के योनिमार्ग द्वारा अनियमित समय में भी निकला करता है । वह जल के समान साफ, रंगरहित, शीतल, जिसमें कुछ भी गन्ध नहीं न किसी प्रकारका दर्द सर्वदा दिवा रात्रि निकला करता है । यही बीमारी जब अधिक बढ़ जाती है तब स्त्री वेगको नहीं रोक सक्ती अर्थात् पेशाब लगनेसे उठते २ कपड़े में भी हो जाता है इससे हर समय धोती भींजी रहती है । इस रोगवाली स्त्री के शिर में दर्द घुमरी, चक्कर, मुखका सूखना, बदन रूखा, शरीर कमजोर, खाने पीने की चीजों से तृप्ति नहीं होना बना रहता है । इस रोग में स्त्रीका रक्त आदि तर पदार्थ पानी सरीखा बहा करता है तथा उसके क्षीण होने से स्त्री के सोम रोग होता है ॥

मूत्रातिसार ।

सोमरोगेचिरंजातेयदामूत्रमतिस्रवेत् । मूत्रातिसारं तंप्राहुर्बलविध्वंसनंपरम् ॥

जब स्त्री को सोमरोग बहुत दिनों तक बना रहता है तो अन्त में उसे मूत्रातिसार हो जाता है अर्थात् बारम्बार और अधिक मिकदार से पेशाब आने लगता है और रोकने से रुकता नहीं इससे स्त्री का शीघ्र ही बल नाश हो जाता है और मर जाती है या कोई अति दुष्कर रोग उसके शरीर में हो जाता है ॥

प्रदररोग की चिकित्सा ।

यह सब आयुर्वेद वेत्ताओं का मतहै कि जितनी औषधियां रक्तातिसार, रक्त पित्त और रक्तज बावासीर के आराम करनेवालीहैं वे सब चारों प्रकार के प्रदररोगों को आराम करती हैं ॥

परीक्षित औषधियां ।

दारुहरदी, रसवत, चिरायता, रूसा, नागरमोथा, बेलका गूदा और शुद्ध भेलावां इन सब औषधोंको बराबर तोल दो तोला ले अधकचरा कर एक पाव जल में एक मृत्तिका पात्रमें रात को भिजा देवे सवेरे औटा देवे जब एक छटांक जल रहजाय उतार शीतल कर के छान लेय और छः मासा मिश्री मिला के पी जावे, इसी प्रकार सवेरे भिजोवे तो शाम को पकाय कर पीवे। यह पूरा मात्रा है यदि रोगी कमजोर या उमर कम हो तो मात्रा भी कम कर लेवे। भेलावां की टिपुनी काट कर के फेंक देवे और उसे फाड़ कर बीज निकाल डाले पश्चात् शुद्ध कर लेय। खाने को नर्म भोजन देवे॥

चन्दनादिचूर्ण प्रदराधिकारे ।

चन्दनंनलदंलोध्रमुशीरंपद्मकेशरं । नागपुष्पंचविल्वंचभद्रमुस्तञ्चशर्करा॥ ह्रीवेरञ्चैवपाठाचकुटजस्यफलंत्वचं । शृङ्गवेरंसातिविषाधातकीचरसाञ्जनं॥ आम्रास्थिजंबुसारास्थितथामोचरसोद्भवः। नीलोत्पलंसमङ्गाचसूक्ष्मैलादाड़िमोद्भवं॥ चतुर्विंशतिमेतानिसमभागानिकारयेत्। तण्डुलोदकसंयुक्तंमधुनासहयोजयेत्। चतुःप्रकारप्रदरंरक्तातिसारमुल्वणम्॥ रक्तार्शांसिनिहन्त्याशुभास्करस्तिमिरंयथा। अश्विनोःसम्मतोयोगोरक्तपित्तनिवर्हणः॥

यह नुसखा हम भैषज्यरत्नावली से लिखते हैं जिसे अनेक बार अजमाके देखा है जो निस्सन्देह प्रदररोग को आराम करता है। सफेद चन्दन जटामासी, लोध, खस, कमलके फूलके भीतर का केशर न मिलने पर कमलगट्टे की गरी, बेलका गूदा, नागरमोथा, मिश्री, सुगन्धबाला, पाढ़ी, कुरैया की छाल, इन्द्रजव, सोंठ, अतीस, धवके फूल, रसवत, आम की गुठलीकीगरी, जामुनके गुठलीकीगरी, मोचरस, नीलकमलका पञ्चाङ्ग न

मिलने पर कमलगट्टे की गरी, मजीठ, छोटी लायची और अनारकाफूल, इन सब चौबिसों औषधों को समान भाग ले कूट कपरछान कर किसी कागदार बोतल में रखदे । इस चूर्ण की मात्रा ६ माशा से दो तोला पर्य्यन्त है, इस चूर्ण को चावल के धोवन और महतके साथ कुछदिन खाने से चारो प्रकार का प्रदररोग रक्तातिसार एवं रक्तज बावासीर निस्सन्देह आराम होताहै जिसतरह सूर्य्यके प्रकाश से अन्धकारका नाशहोताहै उसी प्रकार इस चूर्णके सेवनसे प्रदररोग का नाशहोताहै इस चूर्णको अश्विनी कुमार ने प्रकाश किया है इससे रक्त पित्त का भी नाश होता है । चावल के धोवन की क्रिया यह है कि आधी छँटाक पुराने चावल को थोड़ा कुचलकर जिसमें दो तीन टुकड़े हो जांय १ पाव जलमें भिजो दे घंटे दो घंटे के बाद खूब मलकर छानलेय और उसमें ३ माशा सहत मिलाके उक्त चूर्ण को मुखमें रख ऊपरसे चावल का धोवन पीजावे, अथवा चावल के धोवन में चूर्ण को घोट छानकर पीजावे इसतरह पीनेसे और भी जल्द फायदा करता है खानेमें गरम चीजों का पहरेज ॥

दो तोला अशोक वृक्ष की छाल को दूध में पका के मिश्री मिलाके दोनों समय पीने से रक्त प्रदर आराम होता है उसी प्रकार पके गूलर के फलों को सुखाय चूर्ण कर मिश्री मिलाय एक तोला के अन्दाज दोनों समय दूध के साथ अथवा पानी के साथ खाने से रक्त प्रदर को फायदा करता है ॥

सफेद चन्दन १ तोला, खस १ तोला, कमलगट्टे की गरी १ तोला तीनों को आधसेर चावल के धोवन में खूब महीन घोंट छान कर दो तोला मिश्री मिला के दिनभर में कई मरतबा करके पीनेसे और केवल दूध चावल मिश्री के भोजन करने से योनि द्वारा लोहू का आना बन्द होता है । इसीप्रकार पक्का केले की छीमी को दूध में कई मरतबा छान कर खानेसे योनि द्वारा लोहू का आना बन्द होता है ॥

प्रदर रोग में पथ्याऽपथ्य ।

साठी के धान का अथवा पुराने चावल का भात, मूंग मसूर और चना की दाल, गेहूं या जव की रोटी, गौ या बकरीका दूध, भैंसका घी,

कटहर, केला, चौराई, परवर, पका कुम्हड़ा, कमलकानाल और लौकी की तरकारी । चिरौंजी, अदरक, ताड़ का फल, अनार दोनों प्रकार के, छुहारा, सिंघाड़ा, आमला, नारियल, कसेरू, कैथा, ठण्डा जल आदि जितने प्रकार के शीतल पदार्थ हैं सब फायदा करते हैं. (अपथ्य) बहुत मेहनत करना, रास्ता चलना, धूप और आग के सामने बैठना, दिशा पेशाब का रोकना, तमाकूपीना, मद्य मांस खाना, क्रोध और गुस्सा करना, गुड़ भांटा, तिल, उरद, सरसों, दही, सिरका, अचार, लहसुन आदि जितने गरम और खार द्रव्य हैं सब नुकसान करते हैं ॥

सोम और मूत्रातिसार की चिकित्सा ।

भिंडीकीजड़, सूखापिंडारू, सूखाआमला, बिदारीकंद यहसब चार २ तोला तरह का चूर्ण, और मुलेठी दो २ तोला सबको महीन पीस छः २ मासा की पुड़िया बनाय लेव शाम सबेरे एक पुड़िया मुखमें रख पावभर गौ के दूध में मिश्री मिला के ऊपर से पीनेसे सोमरोग आराम होता है अथवा कुछ दिन बराबर दूधके साथ परछाहीं शतावर पीने से भी रोग आराम होता है । और ऊपर लिखेहुये चन्दनादिचूर्ण से भी सोमरोग आराम होता है । मूत्रातिसार के लिये यह दवा परीक्षित है ताड़ वृक्ष की जड़, खजूर वृक्ष की जड़, मुलेठी और बिलाईकन्द सब को सम भाग ले चूर्ण कर छः मासा के अन्दाज गौ के दूध अथवा चावल के धोवन के साथ दोनों समय कुछ दिन बराबर सेवन करने से मूत्रातिसाररोग आराम होता है इस रोग में भी वही पथ्य है जो प्रदररोग के लिये कहा गया है । स्त्रियों के और रोगों का प्रकरण आरोग्यदर्पण के चतुर्थ खण्ड अथवा पञ्चम खण्ड में लिखा जायगा ॥

परीक्षित औषधियां ।

वैद्यक के ग्रंथों में अभ्रक की उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है कि जब वृत्रासुर के मारने के लिये इन्द्र ने वज्र उठाया तब उसमेंसे चिनगारियां निकल आकाश में फैलकर पर्वतों के शिखरों पर गिरीं उनसे अभ्रक उत्पन्न हुआ सो जहां का पत्थल जिस रंग था वहां उसी रंग का अब तक

अभ्रक मिलता है परन्तु विशेष कर उत्तर के पर्वतों में उत्पन्न अभ्रक में बहुसत्व और सबों में अधिक गुणवान है ॥

अथ अभ्रक के शोधन मारण की विधि ।

अभ्रक के दो भेद हैं श्वेताभ्रक और कृष्णाभ्रक, सो रस बनाने के काम में काला अभ्रक लिया जाताहै क्योंकि काले अभ्रकमें पारदहै और सफेद अभ्रक में पारा नहीं है । यह काला अभ्रक चार प्रकार का है पिनाक–दर्दुर–नाग और वज्र (ललण) पिनाकको आग में डालने से पत्रे खिल जाते हैं, दर्दुर आगमें डालनेसे मेंढकके समान शब्द होताहै, और नाग को आग में डालने से फुफकार देताहै ये तीनों अभ्रक खानेसे मृत्यु को देताहै और वज्र नामक अभ्रक आगमें डालनेसे कुछ रूपान्तर अथवा शब्दादि नहीं होता किञ्चिन्मात्र फूल जाताहै यही अभ्रक खानेके योग्य है इसका भस्म बुढ़ापा तथा मृत्यु का हरनेवाला है ॥

अशुद्ध अभ्रक कोढ़, क्षयी, पांडु, हृदय पीड़ा, पसुरी में दर्द, देह का जकड़ना और अग्नि को मन्द करता है । इसलिये पहले अभ्रक को इस प्रकार शोध लेना चाहिये अभ्रक के खण्ड को ले कोयले के आंच में खूब लाल करे जब देखे कि अभ्रक सुर्ख हो गया है गौ के दूध में बुझाय लेय और बाद इसके चौलाई के साग का रस ३ भाग नींबू का रस १ भाग दोनों रसों को एक पत्थल के पात्र में भर उसी में अभ्रक को एक दिन रात भिजा रक्खे दूसरे दिन जल में धोय हाथ से खूब मल कर उसके पत्रों को भिन्न २ कर देवे तब उसे धान्याभ्रक करे ॥

धान्याभ्रक की विधि ।

उपरोक्त प्रकार से शुद्ध किया हुआ अभ्रक को घाम में सुखाय खरल में महीन कूट लेय जितना कुटा भया अभ्रक हो उसका चौथाई समूचे धान हो दोनों को एक कम्बल में बांध तीन दिन रात पानी में डुबो रक्खे तीन दिन के बाद उसे हाथों से खूब मर्दन करे जिस्से कि अभ्रक सब छन के पानी में निकल आवे और अभ्रकमें जो कंकड़ पत्थल रहता

है वह धान के साथ कम्बल के पोटरी के भीतर रह जावे । जो अभ्रक छन के पानी में आ गया है उसे धीरे करके जल बहाय देवे और अभ्रक को घाम में सुखाय लेय यही अभ्रक मारण प्रकार में श्रेष्ठ होता है ॥

मारण विधि ।

धान्याभ्रकको मदार (कहीं २ इसे आक और अकौवा भी बोलते हैं) के दूध में घोंट टिकरी बनाय सुखायलेय बाद उसे मदार पत्र में लपेट ऊपर कपरौटी कर गजपुट में फूंक देवे इसी प्रकार सात दफे मदार के दूध में घोंट और पत्र लपेट सम्पुट कर गजपुट में फूंके बाद इसी तरह बरगद के जटा के काढ़े में घोंट टिकरी बांध सुखाय बाद ऊपर से कपरौटी कर गजपुट में फूंक देवे फिर कुमारीकन्द (घीकुआर) रसमें खरल में घोट आंच देवें इसी प्रकार १०० गजपुट का आंच देवें यह सौ पुट का अभ्रक अन्य विधि अभ्रक भस्मों से अति उत्तम बल वीर्य वृद्धि कारक है तथा सब से उत्तम अभ्रक भस्म एक हजार आंच का होता है वैद्यक के अनेक ग्रन्थों में अभ्रक फूंकने की अनेक विधि लिखी हैं परन्तु यह विधि सब से उत्तम और सरलहै (अमृतीकरण) जितना अभ्रक भस्महो उतनाही गो घृत ले दोनों काल चूल्हे पर रख इतना आंच देवे कि पात्र के अति उष्ण होने से घृत जल उठे अब घृत जल के शांति हो जाय तो अभ्रक निकाल काम में लावे ॥

मारितस्य अभ्रकस्य गुणाः ।

अभ्रंकषायंमधुरं सुशीतमायुष्करं धातुविवर्द्धनंच । हन्यात्त्रिदोषंव्रणमेहकुष्टं प्लीहोदरंग्रन्थिविषंकृमींश्च ॥ रोगान्हन्यात्द्रढ़यति अपुर्वीर्यंवृद्धिंविधत्ते। तारुण्याढ्यं रमयति शतंयोपितांनित्यमेव ॥ दीर्घायुष्कान्जनयति सुतान्सिंहतुल्यप्रभावान् । मृत्योर्भीतिंहरतिसुतरां सेव्यमानंमृताभ्रम् ॥ १ ॥

यह गुण अभ्रक भस्म के अनेक ग्रन्थों में लिखे हैं। अभ्रक भस्म कसैला, मधुर, शीतल, आयुष्य का बढ़ाने वाला और धातु वर्द्धक है सन्निपात, फोड़ा, धातु रोग, कोढ़, पिलही, मांसग्रंथि, विष दोष, एवं कृमि रोगको नाश करता है, उक्त रोगों के नाश के बाद शरीरको पुष्ट करता है और वीर्य को ऐसा बढ़ाता है कि नित्य सैकड़ों स्त्रियों का संभोग करने को समर्थ होता है और जिनके सिंह के समान बलवान तथा दीर्घायु पुत्र उत्पन्न करने की ताकत देता है एवं मृत्यु के भी भय से बचाता है। परन्तु यह नहीं लिखा कि कितने दिन के सेवन से उपरोक्त गुण लाभ होते हैं।

श्वेत प्रदर की औषध।

औरतों को चार प्रकार का प्रदर रोग होता है जिसमें श्वेत प्रदर अति कठिन रोग है इसमें योनि से कभी२ या सर्वदा निरन्तर गाढ़ा सा पानी निकलता रहता है। एक हलवाइन जिसकी अवस्था २८ वर्ष की थी बहुत दिनों से उक्त रोग में पीड़ित थी प्रयाग में उसने प्रायः छोटे बड़े सभी हकीम वैद्यों की दवा की, परन्तु किसी से कुछ भी फायदा न हुआ अन्त को हमारे औषधालय में आई हमने भी अनेक प्रसिद्ध२ औषधियां खिलाई लेकिन फायदा न हुआ तब एक साधारण औषध बनाके १ मास दोनों समय खिलाने से रोग समूल नष्ट हो गया तत्पश्चात् उसी औषध से कई एक रोगियों को आराम हुआ सो लिखते हैं।

भिंडी (प्रसिद्ध तरकारी) की जड़ सुखा के पाव भर। पिड़ारू (सुपनी भी कहते हैं) सूखा हुआ पाव भर दोनों को कपर छान कर छः छः मास की मात्रा बना ले, पाव भर गौ के दूध में एक तोला चीनी मिला के एक पुड़िया मुख में रख उसी दूध से उतार जावे ऐसा ही साम सवेरे खावे, दूध न मिले तो दवा में तोला मिश्री मिला के पानी से उतार जावे, तेल मिर्चा खटाई आदि गर्म चीजों से परहेज करे।

डाक्टरी मत से सर्प विष की चिकित्सा।

एनीमेल पाइजन (जीवविष) अर्थात सर्पादि जीवों के काटने से

विष से पीड़ित होना । अगर पागल कुत्ता, स्यार प्रभृति सर्पादि जहरीले जीव शरीर में जिस स्थान में काटे बहुत शीघ्र उसी स्थान के कुछ ऊर्द्ध भाग में कपड़ा या डोरे से खूब कस कर बांध देवे, बांधने के बाद देखे कि काटे हुये स्थान में आधार बोध होता है कि नहीं और उसी स्थान का बाल उखाड़ने से कुछ २ बाल उखड़ आता है कि नहीं अर्थात लोम उखाने से न उखड़े और दंशित स्थान में चुटकी काटने से बोध होय तो जानना की रोगी आराम हो जायगा (धागा बांधने से तात्पर्य यह है कि जो रक्त रगों के द्वारा चारो तर्फ घूम रहा है वह रक्त विष के साथ मिल कर शीघ्रही हृदय में न जाय मिले) तो बहुत जल्द दंशित स्थान को नस्तर अथवा छूरी से छेदन कर कुछ रक्त निकाल डाले और घाव को गरम जल से धोके जहां तक जल्दी हो सके उसी घाव पर कास्टिक घिस देवे और एक लोहा गरम करके घाव को दाग देवे लेकिन लोहा ऐसा लाल करे कि उस स्थान का चमड़ा चुर चुराय जाय बाद निम्नलिखित औषध को पिलावे ।

लायकर एमोनिया १ । २ ड्राम । ब्रांडी १ । २ औंस । टिञ्चर ओपियाई १ ड्राम । केम्फर वाटर ६ औंस । इन सब औषधियों को एकत्रित कर, एक शीशी में भर १२ चिन्ह लगा दे आधे घंटे पर या आवश्यक जानने पर दश २ मिनिट के अन्तर पिलावे, और रोगी को बैठने किम्वा प्रथम २४ घंटा पर्य्यन्त सोने न देवे दो मनुष्य रोगी के बगल के भीतर हाथ देके इधर उधर टहलावे और सर्प का भय रोगी के चित्त से समझा बूझा कर हटावे पश्चात नीचे लिखे अनुसार एमोनिया लिनीमेंट तैयार करके घाव पर लगावे ।

लायकर एमोनिया ४ ड्राम, टिंचर ओपियाई ४ ड्राम, ओलिभ आयल ४ ड्राम सब को एक में मिला घाव पर और घाव के चारो ओर मर्दन करे । यह मालिश बिच्छू बर्रै आदि से काटे हुये स्थान में भी फायदा करता है । परन्तु पागल सियार या कुत्ता काटने में पूर्वोक्त चिकित्सा अवश्य करना उचित है यद्यपि कूकुर काटने का जहर जल्दी असर नहीं करता, एक सप्ताह से लेकर ६ सप्ताह अथवा ७ सप्ताह में अथवा १ मास से ६

मास के मध्य में ही रोगी अकस्मात् जलाशय देख के डर जाता है और पानी पीने की शक्ति विनष्ट हो जाती है और कुत्ते समान भूकने लगता है इस रोग को अङ्गरेजीमें (हाईड्रोफोबिया) कहते हैं । यद्यपि हम इसका वर्णन कुत्ता काटने के स्थल में करेंगे तथापि हमें इस समय इतना कहना बहुत जरूरी है कि स्वान और स्यार दंशित रोगी को पहले खूब तेज जुलाब करा के अल्प परिणाम अफीम खिलाना आरंभ करा देना सब से उत्तम है एवं प्रति दिन शिर से स्नान और शरीर में जलाधात करना उचित है ॥

मनुष्य सृष्टि को विनाश करने की सामर्थ्य अनेक जीवादि पदार्थों में देखा जाता है सिंह व्याघ्रादि मनुष्य को मार खाते हैं सर्पादि दंशन तथा मादक द्रव्य के खाने से । बहुत से वृक्ष ऐसे हैं जिनमें से वायु निकल कर शरीर में लगने से मनुष्य मर जाता है परन्तु और जीवों को कम हानि पहुंचती है अन्य २ जीवों में भी आश्चर्यित गुण देखनेमें आते हैं जैसे सर्प के काटने से बीच्छू नहीं मरता और बीच्छू के डंक मारने से सर्प तत्क्षण तड़फड़ा कर मर जाता है । कम मात्रा अफीम के देने से कूकुर नहीं मरते परन्तु उतनाही मात्रा कुचला खिला देनेसे कुत्ते भूंक २ कर मर जाते हैं बन्दर को किसी किस्म का विष कैसाहू वस्तु के साथ मिला के देओ कभी न खांयगे इत्यादि अनेक तिलिस्म हैं न मालूम परमात्मा ने किस २ अभिप्राय से ऐसे पदार्थों को उत्पन्न किया है ॥

आयुर्वेद में भी विष का दो भेद कहा है, स्थावर और जंगम । वृक्षादि से उत्पन्न विष को स्थावर और सर्पादि जनित विष को जंगम विष कहते हैं उनमें प्रथम सर्प विष की चिकित्सा और निदान लिखा है । सर्पों की अनेक जाति है तिसमें मुख्य नव जाति है उसमें भी तीन भेद हैं (भोगी) फण वाले सर्प वे वातात्मक होते हैं इनके काटनेमें वात को कोप करके विष चढ़ता है (मण्डली) जिनके शरीर पर गोल २ चट्टे होते हैं पित्तात्मक हैं इनका विष पित्तात्मक है विष पित्त विकारकारक होता है (राजिल) उन्हे कहते हैं जिनके शरीर पर रेखा होती है कफा-

त्मक होते हैं कफ विकार-सहित इनका काटा हुआ विष चढ़ता है । इसके अतिरिक्त और भी चिन्ह युक्त अनेक सर्प होते हैं ॥

सर्प दंश विष देशकाल भेद से असाध्य ।

पीपलवृक्षके नीचे, देवालयमें, बांबीमें, संध्या समय और चौराहे पर काटने से तथा नस और मर्म स्थान में डँसा भया मनुष्य शीघ्र मर जाता है । अजीर्ण, प्रमेही कुष्टी वायवाला अति गरम मिजाजवाला बालक वृद्ध और अति दुर्बल को सर्प दंशन करे तो असाध्य जानना । ज्योतिष में लिखाहै कि भरणी, मघा, आर्द्रा अस्लेषा मूल, कृत्तिका यह नक्षत्र और पञ्चमी तिथिमें सर्पसे काटा भया मनुष्य असाध्य होताहै ॥

सर्प से काटे हुये विष में आठ वेग (लहर) आताहै प्रथममें संताप, २ में देह कांपना, ३ में दाह, चौथे में विहोश हो के गिरना, ५ में मुंहसे फेन निकलना, ६ में स्कन्ध टूटना, ७ में जड़ीभूत होना और ८ में मृत्यु । प्रायः देखने में आया है कि सर्प दंशित मनुष्य के चाबने से निम्ब पत्र की तिक्तता नहीं बोध होती है ॥

आयुर्वेदीय मत से सर्प विष की चिकित्सा ।

हाथ पैर वगैरह किसी स्थान में सर्प काटै तो अति शीघ्र उसके किंचित ऊर्द्ध में खूब कसके डोरी से बांध देय और सलाका से दाग दे जहां बांधने की जगह न हो तो दंशित स्थान को छूरी से छीले, लोहे की शलाका खूब लाल करके दाग देय और तूंबी आदि से हवा खींचे । एक स्थल में यह लिखा है कि जो सर्प काटै उस सर्प को तुरन्त पकड़ के दांत से काटना अथवा एक मट्टी के ढेले को दांत से काटने से जहर नहीं चढ़ता ॥

जब देखे कि जहर समस्त शरीर में फैल गयाहै तो हाथ पाद और शिरा का वेधन करना कारण यह कि रक्त के निकलने से विष निकल जाता है ॥

या दंशन के चारोओर तूंबी लगाय के कुछ रक्त निकालना और विष नाशक औषधों का लेप करना दूध पानी पिला के घर बर धमन कराने से भी फायदा देखा गयाहै । जो फणवाले बड़े विषधर सर्प काटा हो तो जो आठ वेग पूर्व में हम कह आये हैं पहले वेग में उपरोक्त चिकित्सा कर फस्त देना, दूसरे में विषघ्न औषधों का घी दूध और कुछ शहद में मिला के पिलाना तीसरे में विष नाशक नस्य और अंजन लगाना, चौथे में दूध पानी पिला के औषधसे वमन कराना, पांचवें और छठवें वेग में शीतल उपचार करना या पिचकारी द्वारा कड़ा जुलाब देना और सातवें वेग में तेज अंजन तथा नस्तर से मस्तक में काकपद करके रक्तरहित मांस छीलना, गर्भिणी बालक और वृद्ध इनके सर्प काटा हो तो फस्त न देके मृदु उपाय से विष दूर करना । बकरा आदि जानवरों के सर्प काटे होय तो मनुष्य के समान रक्त निकालना, बैल और घोड़े के दूना, भैंसे और ऊंट के तिगुना और हाथी के चौगुना रक्त काढ़ना चाहिये । जिन मनुष्यों की प्रकृति अति गर्म हो रक्त न निकाल के शीतल उपचार करना ॥

रत्नावली ग्रन्थ में लिखा है कि मेष की संक्रान्ति के आरंभ में एक मसूर और दो नींबके पत्र खा लेय तो वर्षभर उसे विषका भय न हो ॥

कुछ दिन हुये कि मेरे मकान में एक ब्राह्मणी टिकी थी एक दिन उसे प्रातःकाल दक्षिण हस्ताङ्गुली में सर्प ने काटा और चलदिया, परीक्षा के लिये निम्ब पत्र दिया गया आधे पाव खागई मुख कडू न हुआ तब मालूम किया कि बड़ा जहरीला सर्पथा खैर, चिकित्सा होना आरंभ हुआ कुछ फायदा न हुआअन्त में वेहोश होगई ओंठ और नख काले पड़ गये मुखसे फेन बहनेलगा और मुख जकड़ गया लोगों की यह राय हुई कि रोगी दरवाजे पर लेटाय दीजाय और चारों तर्फ गुल करदिया कि सर्प के झाड़ने एवं दवा जानने वाले आवें वैसाही किया गया बड़ी भीड़ लगी कितने झाड़ने फूंकनेवाले आये कोई कानमें मन्त्र पढ़के चिल्लाता है कोई जल के छिंटे मारता है इतने में पुलिस के दूत, दरोगा साहेब भी आ पहुंचे कहा कि इसे अस्पताल भेजो । उन्हें समझा दिया गया वे भी

बैठ गये, एक मुसलमान जाति का कमाई भी खड़ा सब चरित्र देख रहा था उसने कहा भाई अन्त है अपना २ करतब कर लो तो हम भी कुछ यत्न करें यह कोई न कहे कि हम यत्न नहीं करने पाये, सब लोगों ने कहा भाई सब उपाय हो चुके तुमसे भी जो कुछ करते बने करो उसने कहा अच्छा हम आते हैं एक बनिये के दूकानमें कुछ सौदा लिया हाथ में मलते हुये आया और कहा कि दो आदमी इसका हाथ बांधो और दो आदमी पैर बांधो, कुछ बुकनी दिया कि उसे पानी में घोल कर पिला देओ, कहने के मुताबिक पिला दिया गया पांच मिनट के बाद कुछ हाथ में लिये था रोगी के नाकमें डाल नाक बांध लिया, रोगी पांच मिनट तक कुछ नहीं उसको बाद तड़फड़ाने लगी मियां ने कहा खबरदार छोड़ना नहीं, चार मिनट के बाद मियांने कहा बस अब छोड़ दो और मियां ने भी नाक छोड़ दिया, औरत उठ बैठी और कहा अब हम अच्छी हैं मियां ने कहा इसे पाव आधपाव घी पिलाओ आराम होगई, सब लोग चले गये ।।

इसको अत्यन्त उत्कण्ठा हुई कि यह औषध उससे जानकर लोकोपकारार्थ प्रकाश करें। यह तो हमको विदित होगया था कि वह मुसलमान बनिये के दूकान से नौसादर मोल लियाथा परन्तु उसने और किस चीज का मेल किया था मालूम नहीं। एक दिन उस मुसलमान को बुलाया उससे पूछा प्रथमतो उसने बहुत कुछ इनकार किया परन्तु अन्त में कहा अच्छा हम बताये देतेहैं इसमें कुछहै नहीं तिनका ओट पहाड़ है। कहा कि ३ मासा नौसादर प्रथम पानी में घोल कर पिला दे और पांच मिनट के बाद चूना और नौसादर दोनों बराबर वजन में छः छः मासा ले दोनों को एक में मिला पोटरी बना सुंघावै या जरा २ सा दोनों नाक में डाल नाक बांधलेय पांच मिनटमें रोगी उठ खड़ा होगा। पाचक गया जब से इस महौषधि को सुना है कोई सर्प दंशित मनुष्य नहीं मिला कि सत्यासत्य की परीक्षा करें लेकिन निश्चय होता है कि यह औषध अवश्य सत्य है क्योंकि विष रोग पर डाकुरी में अमोनिया (चूना नौसादर) प्रधान औषध लिखा है ॥

से पाद दांत निकलता है और इक्कीस दिन में तालू में विष आजाताहै. काटने के समय विष त्याग देता है परन्तु फिर उसी थैली में विष एकत्रित हो जाता है पच्चीस दिन का बच्चा सर्प जहरीला हो जाताहै और ६ महीने में केंचुल त्यागता है ॥

दो सौ बीस पैर सर्पों के होतेहैं परन्तु ऐसे सूक्ष्म बाल सदृश होते हैं कि देख नहीं पड़ते चलने के समय निकल आते हैं नहीं तो भीतर पेट में छिपे रहते हैं, इनके शरीर में पसुली और सन्धि (जोड़) यह भी २२० होती हैं। जो सर्प बे समय पैदा होते हैं उनमें कम विष होता है और वे सत्तर वर्ष से अधिक जीते भी नहीं, जिन सर्पों के दांत लाल पीले मोले होते हैं उनमें भी विष बहुत कम होताहै और वे डरपोकने होते हैं ॥

सर्पों के एक मुख दो जीभ बत्तीस दांत और विष से भरी चार डाढ़ होती हैं उनके नाम मकरी, कराली, कालरात्रि, और यमदूती है। मकरी डाढ़ का चिन्ह अति सूक्ष्म मस्सर सा, कराली काक पादनख समान, कालिरात्रि टकार अक्षर सदृश और यमदूती कुछ गहिराव लिये और सब डाढ़ों से छोटी होती है, इस से जिसको सर्प काटता है वह तत्क्षण मर जाता है तंत्र मंत्र औषध आदि कुछ काम नहीं करता। सर्पों की डाढ़ों में सदा विष नहीं रहता विष के रहने का स्थान सर्पके दहिने नेत्र के समीप है सर्प जब क्रोध करताहै तब विष नाड़ियों के द्वारा दाढ़ में पहुंच जाता है, अक्सर सर्प दबनेसे पूर्व वैरसे भयसे मदसे क्षुधा से विष का वेग होने से और अपने बच्चों के रक्षा के लिये जीवों को काटते हैं। जो सर्प काटते ही पेट की ओर उलटा हो जाय तो जानना कि दबने से काटा है, जो घाव भली भांति न दीख पड़ेतो भय से, रेखा की भांति डाढ़ लगे तो मद से, दो दाढ़ लगे तो घबड़ाने से और जिसमें दो दाढ़ लगे एवं घाव में रुधिर भर जाय तो विष के वेग से काटा हुआ जानना इत्यादि और भी लक्षण इनके काटनेके हैं जिसे फिर कभी लिखेंगे ॥

रक्त शुद्धकारक अर्क।

झाऊ की जड़ (गङ्गा किनारे कछार में होता है) रसवत, उसवा, उन्नाव, मेंहदी का फूल, पित्तपापड़ा (सहतरा) पित्तपापड़ा का बीज, मेंहदी की पत्ती, सीसम का छाल, मुण्डी, छोटागोखुरू, बर्ग सरफोका, चिरायता, बबायन का छाल, आंवला, बहेरा, गुलदगल्गुा, सिरसा का छाल और कचनार का छाल ये सब तीन २ तोला बहिमन सुर्ख, श्वेत चन्दन, रक्त चन्दन, और नीम का फूल दो दो तोला, बुरादा आबनूस अथवा आबनूस का छाल, बबूल का छाल, बड़हर, और नीमका छाल पांच २ तोला अर्क मकोय एकसेर और अर्क कासनी एक सेर इन सब दवाइयों को अधकचरा कर डेग में एक दिन रात भिगा रक्खे दूसरे दिन बक यन्त्र द्वारा (डेग भभका) बारह सेर अर्क खींच ले॥

सेवन करने की विधि।

सबेरे दोपहर और शाम को अर्थात् दिनमें तीन दफे आध २ पाव अर्क पीवे और सात या आठ बजे सबेरे दो तोला मक्खन (नवनीत) में ६ माशा उपरोक्त १ लेप का चूर्ण या जिस कदर मुनासिब समझे फेंट कर जहां तक चर्म रोग हो लेपन करे और आध घंटेतक या कुछ कम जितने देर में कि मक्खन पिघल कर शरीर में भीज जाय बाद थोड़ी सी किसी खेत की मुलायम मृत्तिका उसी पर खूब मलकर स्नान कर डाले और पीछेसे कारबलिक सोप या अन्य साबुनसे मलकर फिर स्नान कर डाले साबुन न भी मले तो कोई हर्ज नहीं। सेवन के दो चार घंटे बाद अथवा सन्ध्या समय उक्त तैल मर्दनके बाद भी स्नान कर डाले न इच्छा हो न करे (परहेज) तेल मिर्चा खटाई सिरका मांस मद्य स्त्रीप्रसङ्ग धोप धूप अग्नि गुड़ बैंगन उड़द आदि चीजों का त्याग है, गेहूंकी रोटी, पुराने चावल का भात अरहर या मूङ्ग की दाल गौ का दूध घृत मलाई लौकी कद्दू नेनुआ परवर पालकका साग इनकी तरकारी खावे। जब शरीरके दाग या चकत्ता या फोड़ा फुन्सी जो कुछहो बिलकुल मिटजाय तो लेप लगाना छोड़ देय सिर्फ तैल मर्दन और अर्क पीता जाय इसी

प्रकार एक मास पर्य्यन्त औषध सेवन करनेसे रोग समूल नष्ट हो शरीर कुन्दन के समान हो जाती है जब देखे कि उपरोक्त औषधों को सेवन करते हुये दश बारह रोज हुआ और कुछ फायदा नहीं जान पड़ता तो कोई उमदा हलका जुलाब या प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार हकीमी जुलाब लेके तब औषध सेवन करना आरम्भ करे चमड़े पर लगाने का लेप जो हम ऊपर लिख आये हैं अगर पांच चार दिन उसके लगाने से लाभ न हो तो इस चूर्ण का लेप करे ॥

खदिराद्यं चूर्णम् ।

पपरियाखैर (सफेद खैर) आधपाव, चौकिया सोहागा २ तोला, राला धूप २ तोला, नेनुआ गन्धक २ तोला, कपूर २ तोला सब को महीन चूर्ण करले । थोड़े से चूर्ण को पानी में खूब महीन घोंट जहां तक शरीर में फोड़े फुन्सी या खाज हो लेप करदे और चार घंटे के बाद साबुन अथवा बेसन से मल कर पानी से धो डाले और बदन पोंछ कर २ नम्बर का तेल लगा दे इस प्रकार आठ दश रोज करने से सर्व रोग आराम होता है । इस चूर्ण से खाज, सेहुआ, अपरस, और उकवत रोग भी आरोग्य होते हैं ।

व्रणराक्षस तैलम् ।

पारा, गन्धक, हरिताल, सिंदूर, मैनसिल, लहसुन, बच्छनाग, और ताम्र का बुरादा ये सब औषध दो २ तोला ले पीली सरसों का तेल एक पाव, एक ताम्र पात्र में उपरोक्त दवाइयों के चूर्ण और तेल डाल ६ दिन तक घाम में रख छोड़े। इस तेल के लगाने से कफ विकार से, दाद, खाज, लालमंडल, नमूर और विपर्चिका रोग नाश होता है ।

निम्बाद्यं चूर्णम् विषमज्वराधिकारे ।

निम्बपत्र (नीम के सूखे पत्ते) १० तोला, त्रिफला (हड़बहेरा आंवला) ३ तोला, त्रिकटु (सोंठ पीपर मिर्च) ३ तोला, अजवाइन ५ तोला, लवण त्रय (कालानोन सेंधानोन बिड़नोन) ३ तोला और जवाखार २ तोला

इन सब दवाइयों को कूट कपरछान कर चूर्ण बना ले। इसकी मात्रा आधे मासा से तीन मासा पर्य्यन्त है। उक्त चूर्ण को प्रातःकाल और संध्या समय सेवन करने से एकाहिक अँतरा तिजारी और चौथिया ज्वर छूट जाता है, ऐसा कई बार देखा गया है। पथ्य मूंग की दाल पुराने चावल का भात गेहूं की रोटी और दूध मिश्री।

नारायण तैलम्।

काले तिल का तेल १६ सेर, बेल वृक्ष की छाल, अंगेथ (इसी को अग्निमंथ गनियारी या कहीं २ अरनी कहते हैं) की छाल, (श्योनाक) सोनापाढ़ो (पाढ़र) नींब की छाल, गन्ध प्रसारिणी, असगंध, छोटी भटकटैया, बड़ी भटकटैया, (बन भांटा) बरियारा की जड़ अतिबला, (ककही) गोखुरू और गदापूर्णा की जड़ यह सब दवाइयां दश २ पल अर्थात् प्रत्येक औषध डेढ़ २ पाव तीन २ तोला चार २ मासा हुआ। सब दवाइयों को अधकचरा करके ६ मन १६ सेर पानी में रात को भिजा दे सबेरे औटादेवै जब ६४ सेर जल रहजाय मलकर छानले तेल को कड़ाही में डाल चूल्हे पर चढ़ाय मंदाग्नि आंच से उसमें थोड़ा २ काढ़ा दे के पचावै। जब दो सेर पानी जरने को रहजाय तब इन औषधों का कल्क बनाके उसी में डाल दे सौंफ, देवदारु काष्ठ, जटामासी, छरीला, दुधियावच, लाल चन्दन, तगर, कूट, छोटीलायची, पर्णी चतुष्टय अर्थात् सरिवन, पिथिवन, बनउर्दी और बनमूंग, रासना, असगन्ध, सेंधानोन, और गदापूर्णा की जड़ यह सब दवा आठ २ तोला महीन कूट पानी डाल सिल पर पीस लुगदी बना तेल में छोड़दे और ऊपर से १६ सेर शतावर का रस पचावै, यदि ताजा शतावर मिले तो कुचल कर रस निकाल डाले सूखी हो तो आठसेर शतावर को कुचल कर चौसठ सेर पानी में पकावै, जब १६ सेर जल रह जाय मलकर छान उसे तेल में डाल पचावै, जब थोड़ा जल रहजाय तब गौ अथवा बकरी का दूध चौसठ सेर उसीमें पचावै जब दूध बिलकुल जल जाय, केवल तेल मात्र रहगया हो तो उतार ले बोतल में भर काग लगा देय। इस तैल के पीने से पिचकारी से और मर्दन करने से कुंज सर्वाङ्ग

वायु घोड़ा हाथी और मनुष्य का भी रोग आराम होता है। इसके अतिरिक्त मिन्मिनत्व, ठोढ़ी अकड़जाना, दन्तरोग, गले का दर्द, जम्ब जिह्वा, अङ्ग का सूखना, पुराने ज्वर से दुर्बल, धातु की क्षीणता, वातज अण्ड वृद्धि, और आंत वृद्धि, इस तेल के मर्दन से निश्चय आराम होता है। हमारी राय में इस तैल को पीना उचित नहीं है।

हिमसागर तैलम् ।

कालेतिल का तैल ४ सेर, सतावर का रस ४ सेर, पताल कुम्हाण्ड का रस ४ सेर, आंवले का रस ४ सेर, सेमर के जड़ का रस ४ सेर, बड़े गोखुरू का रस ४ सेर, नारियल का जल ४ सेर, और केले के मूल का रस ४ सेर, गौ का दूध १६ सेर (कल्कार्थ द्रव्य) लाल चन्दन, सफेद चन्दन, तगर, कूट, मंजीठ, अगर, जटामासी, छरीला, मुलेठी, देवदारु, नख, हरें, अरिपारा, लोध, मोथा, दालचीनी, छोटीलायची, तेजपात, नागकेशर लौंग, जावित्री, कपूर, पोई का फल, हल्दी यह सब दो दो तोला लेकर पानी में पीस कल्क बनाय ले प्रथम तेल को आंच पर चढ़ाय तब कल्क डाल ऊपर से थोड़ा २ सतावर आदि का रस डालता जाय जब सब अर्क जल जाय सिर्फ तेल मात्र रहजाय तो उतार लेय यह तैल उष्णवायुमें जितने रोग हैं जैसे अंग दाह अंग सूखना शरीर से चिनगी का उड़ना लकवा गठिया आदि अनेक रोग आराम होते हैं यह अजमूदा है।

अन्तर्दाह पर धान्यक हिम ।

प्रातःपर्युषितंधान्यंसलिलंसितयायुतं । अन्तर्दाहं-
हरेत्पीतंदुःखंदुर्गार्चनंयथा ॥

रात में भिजाया धनिया प्रातः उसी जल में चिनी मिलाकर पीनेसे अन्तरदाह ऐसा नाश होता है जैसे भगवती के पूजन से दुःख नाश होता है (विधिः) दो तोले धनियें को साफकर पावभर जल में एक मृत्तिका पात्र में रातमें भिजा एक महीन वस्त्र से पात्र का मुख ढांप ओसमें रख

देवे और सवेरे मसलकर छान ले २ तोला चिनी मिला के पी जानेसे पेट का जलन कलेजा धक २ करना शिर की घुमरी आदि आराम होते हैं। इसी प्रकार २ तोला त्रिफला भिजा सवेरे चिनी डाल के पीनेसे गले का जलन पेटका हर समय घुड़ २ करना कब्ज और नेत्र व्यथा आदि विकार शान्ति होता है और आधपाव त्रिफला डेढ़ सेर जलमें रात को भिगाय सवेरे उसके जल से प्रत्यह नेत्र मुख और शिर धोनेसे समलवायु शिरकी घुमरी नेत्र का जलन बालों का जल्द पकना और बातों का भूल जाना यह सब आराम होते हैं और उसे नेत्र और शिर सम्बन्धी रोग कभी नहीं होसक्ता परन्तु त्रिफला में तीनों चीजों को बराबर न लेने चाहिये। एक भाग हड़, दो भाग बहेरा और चार भाग आंवला त्रिफला कहाता है।

परीक्षित कूसे का जल ।

प्रत्येक बार अजमाने से देखा गया है अवश्य फायदा करता है

जड़ सहित कूसे के वृक्ष को सुखा ले, जिस प्रकार लकड़ी जलायकर कुइला बनाया जाता है बना ले, कूसे की लकड़ी को जलाय देय जब देखे की सब जल गया धुआं नहीं है शीघ्रही उसके ऊपर एक बर्तन ढांप दे ताकि राख न होने पावे। बाद उस कोयले को ले एक पानीसे साफ कर एक घड़े में भर दे और घड़े के पेंदी में एक छेद कर कपड़े की बत्ती बना उसी में डाल दे, दो घड़े खाली और भी ले एक के पेंदीमें छेदकर बत्ती बना के डाल दे जिस प्रकार गरम दिनों में शिव जी के ऊपर जल टपकाने को घड़ा बनाया जाता है वैसाही दो घड़ा बनाले और तीनों घड़ों को रखने के लिये लकड़ी का फार्म (जैसा कि अंगरेज लोग पानी छानने के लिये बनाये रहते हैं) बनवाय लेय, उसके ऊपर वाले घड़े में पानी, बीच वाले घड़े में कोयला और सब के नीचे घड़ा खाली रहे। ऊपर के घड़े से पानी कोयले वाले घड़े में आवेगा और कोयले वाले घड़े से जो पानी टपक कर नीचे गिरेगा वही पानी पीने लायक है। जब प्यास लगे वही पानी पीवे और चौथे आठवें दिन कोयला बदल दिया करे इस पानी से कितनाहू पुरानी खांसी व दमेका रोग हो आराम होता

है, परन्तु कास श्वास रोग में जो पथ्यापथ्य है उसी पर चलना उत्तम होगा ॥

त्रिफले के स्वरस में ओदी हरदी का रस अथवा नीम्ब का रस और शहद घोलकर पीने से कमल रोग नाश होता है ॥

निम्ब पत्र स्वरस—नींब के पत्ते का स्वरस १ तोला शहद ३ माशा दोनों को मिला कर पीने से अनेक प्रकार के चर्म सम्बन्धी रोग आराम होते हैं । निम्बपत्र रस दो तीन बिन्दु नेत्र में टपकाने से नेत्रकी सुरखी कैचाढू पुरानी हो और जाला माड़ा कट जाता है ॥

तुलसी के पत्तों का स्वरस ६ माशा मिर्च का चूर्ण ४ रत्ती दोनोंको एकत्रित कर पीने से विषमज्वर (जो ज्वर जाड़ा देके आता है) आराम होता है, यदि एक समय के पीने में लाभ न दीख पड़े तो दिनमें तीन दफे पूर्वोक्त प्रकार तुलसी पत्र स्वरस पीने से निस्सन्देह विषमज्वर छुट जाता है ॥

डाक्टर लोग भी निम्ब को ज्वराधिकार में प्रायः देते हैं डाक्टरी में निम्ब छाल पत्र और तेल भी काम में लाते हैं । क्रिया, बल कारक सङ्कोचक, कृमिनाशक और ज्वर में विलक्षण उपकार करता है । डाक्टर फर्णिस साहब ने इसे सिनकोना बार्क और आर्सेनिक के साथ परीक्षा करके देखा है वे अपने किताब में लिखते हैं किइसने ६० ज्वरादि रोगी को सिनकोना प्रयोग करके छः दिन के मध्य में ४६ जन को आराम किया और ३८ रोगी को आर्सेनिक प्रयोग से छः दिन में २९ जन को आरोग्य लाभ पहुंचाया, परन्तु १३४ रोगी को निम्ब छाल प्रयोग से छः दिन के मध्य में १०८ जन आराम हुये, इसके अतिरिक्त रोगान्त दुर्बलता में बल कारक हो उपकार करता है । अब देशी औषध का गुण डाक्टरी औषध से अवश्य अधिक है इसमें सन्देह नहीं रहा ॥

टिंचर आफ निम्ब के बनाने की विधि ॥

निम्ब की भीतरी छाल	२॥० औंस (१॥ छटांक)
परीक्षित सुरा (स्प्रिट वाईन)	१ पौंड (आध सेर)

शोरा का मारारांगा आधपाय और शुद्धताप की हरताल आध पाय दोनों को खरलमें डाल कागदी नीबू के रसमें एकपहर घोंटा गोला बनाय शराव सम्पुट में बन्दकर गजपुट में फूंक देय, जब शीतल हो जाय गोले को निकाल एक तोला फिर शुद्ध ताप की हरताल दे कागदी के रस में एक पहर घोंट पूर्वोक्त प्रकार सम्पुट बनाय गजपुट में फूंक देवै । इसी तरह प्रत्येक बार एक २ तोला हरताल दे नीबू के रसमें घोंट १० गजपुट की आंच देनेसे निरुत्थ भस्म होगा। निरुत्थ भस्म उसे कहते हैं जो मित्र पञ्चक से भी न जीवे ॥

मित्र पञ्चक—घृतसहत गूगल घुंघची और सोहागा इनको मित्रपञ्चक कहते हैं जिस धातु की कच्ची या पक्की की परीक्षा करनी हो उसको भस्म में उक्त पांचो वस्तु मिलाय घरिया में धर कर गलाने से कच्ची धातु जी उठती है और जो निरुत्थ भस्म है कभी नहीं जीती । जो धातु मित्र पंचकसे जी उठे उसमें शुद्ध आंवला सार गन्धक समानभाग देकर घीकुआर के रस में एक दिन खूब घोंटें और संपुट में बन्दकर गजपुट में फूंक दे तो निरुत्थ भस्म हो ॥

पूर्वोक्त प्रकार से भस्म किया हुआ रांगा पथ्य सहित कुछ दिन सेवन करने से संपूर्ण प्रमेह मात्र रोग नाश होता है । येह अपनी शक्ति से दाह पांडु प्रमेह कृमिरोग को नाश कर बुद्धि पराक्रम और कांति को प्रकाश करता है । इसकी मात्रा दो चावल से ३ रत्ती तक है, सबसे उत्तम अनुपान है कि शहद के संग चाट कर ऊपर से गौ का दूध मतावा डाल के पीवे ॥

सौभाग्य शुण्ठीपाक ।

इसे सुहागा सोंठ भी कहते हैं, यह पाक प्रसूता स्त्रियों के लिये अति लाभकारी है। चाहिये कि बच्चा जनने के बाद स्त्रियों को अजवाइन सोंठ गुड़ आदि न खिलाय इसी को बना के खिलावे तो बालक भी आरोग्य रहे और धात्रीके शरीरमें किसी प्रकारका रोग भी न हो ॥

शोंठ बैतरा	१॥ पाव	मोचा	१॥ तोला
बकरी का दूध	५ सेर	खस	१॥ तोला
घी गौ का	१ पाव	नागोरीअसगन्ध	२ तोला
चिनी	२॥ सेर	सफेदचन्दन	१ तोला
दालचिनी	१॥ तोला	काला अगर	१ तोला
तेजपात	१ तोला	लौंग	१॥ तोला
छोटी लायची	२ तोला	शतावर	२ तोला
नागकेशर	१॥ तोला	सफेदमुसली	२ तोला
धनियां	१॥ तोला	सोंठ	२ तोला
सफेदजीरा	१॥ तोला	पीपर	१ तोला
स्याहजीरा	१ तोला	मिर्च	१॥ तोला
सौंफ	१। तोला	जायफल	१। तोला
अकरकरहा	१॥ तोला	सिंघाड़ा	२ तोला
जावित्री	१ तोला	कंकोल	१॥ तोला
विधारा	१। तोला	अजमोदा	१ तोला
कमलकट्टे की गरी	१॥ तोला	मुनक्का	१ छँटाक
त्रिफला	२ तोला	किसमिस	२ छँटाक
खरिसारा की जड़	२ तोला	अखरोट	२ छँटाक
पिपरामूल	१ तोला	बदाम	१ पाव
चाव	१ तोला	पिस्ता	१ पाव
चीता	१ तोला		

सब से प्रथम सोंठ को कूट कपरछान करले और दूध को कढ़ाई में औटावे जब आधा दूध जल जावे उसीमें बुकी हुई सोंठ डाल देवे और करछुलीसे बराबर चलाता जावे जिसमें दूध जले न। जब दूधका खोवा हो जावे कढ़ाई चूल्हे से उतार लेवे और खोवा अलग कर फिर कढ़ाई चूल्हे पर चढ़ाय घी डाल दे। जब खूब गरम हो जाय उसीमें खोवे को खूब भूंज लेवे, बाद साफ कढ़ाई में चिनी डाल चासनी बना ले और समस्त दवाइयों को कूट कपड़छान कर और मेवाओं को साफ कतर कर

अति शीत मिज़ाज वालों के लिये ।

केशरावलेहः ।

छोटी पीपर चूर्ण	१ पाव	कपूर	३ माशा
उत्तम केशर	२ छटांक	सोंठ	८ माशा
गौ का दूध	३ सेर	धनियां	१ तोला
गौ का घी	३ सेर	बंसलोचन	२ तोला
मिश्री	२ सेर	सिंघाड़ा	१॥ तोला
तज	१ तोला	कसेरू	१॥ तोला
पत्रज	१ तोला	मोथा	१ तोला
छोटी इलायची	२ तोला	मोचरस	१॥ तोला
नागकेशर	१ तोला	विधारा	१ तोला
लौंग	१ तोला	देवदारु	१ तोला
पिपरामूल	६ माशा	तगर	१ तोला
चीता	४ माशा	जवाखार	६ माशा
जायफल	१ तोला	काला अगर	८ माशा
जावित्री	१ तोला	कमल गट्टे की गरी	१ तोला
शतावरी	२ तोला	सौ आंच का अभ्रक	६ माशा
असगन्ध	१॥ तोला	पारदसंपटित कांतीसार	
बड़ा गोखुरू	१॥ तोला	भस्म	४ माशा

पीपर का चूर्ण और केशर कूटकर दोनों को दूध में पकावे जब खोवा हो जाय घीमें भूनले और मिश्री की चाशनी बना ले परन्तु चाशनी बहुत गाढ़ी न हो मानिन्द शहत के रहे बाद उसी चाशनी में खोवा और उपरलिखित दवाइयों को कूट कपरछान कर मिला के घोंटले । इसकी मात्रा ३ माशे से तोला पर्यन्त है बलानुसार मात्रा बना ले ॥

काश्मीरकावलेहोयं दुर्बलानां बलप्रदः ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा बलमांसविवर्जिताः ॥
व्यवाय रहिता नांच धातुवृद्धि करः परः ।

यह केशर का अवलेह दुर्बलों को बल देने वाला जिन मनुष्यों की इन्द्रियां कमजोर धातुक्षीण या शरीर दुर्बल और बलहीन हों या वह रति शक्ति रहित हो गया हो उन्हें आरोग्य करता है परन्तु उष्ण प्रकृतिवालों के लिये लाभदायक नहीं होगा ॥

मेरी प्रतिज्ञा पाठकगण को अवश्य स्मरण होगा, ग्रन्थ का नाम सिर्फ प्रमाण के लिये दियाजाता है, विषय चाहे जिस ग्रन्थ का हो बिना परीक्षा के नहीं लिखा जाता ॥

जामुन, आम और आवला इन तीनों वृक्षों के पत्तियों का रस दो तोला शहद चार माशा मिला कर दोनों समय पीने से बहुत दिनों का आंव लोहू का पड़ना शीघ्र आराम होता है। वैसाही बबूल के छालका स्वरस शहद मिला के पीने से पतला दस्त गाढ़ा होता है ॥

आर्द्रकस्वरसःक्षौद्रयुक्तोवृषणावातनुत्। श्वासका-साऽरुचीर्हन्तिप्रतिश्यायंव्यपोहति ॥

आदी को कुचल कर उसका रस निकाल दो तोले रस में ३ माशा शहद मिला कर पीने से शीत सम्बन्धी फोते (आंधनजून) का सूजन दर्द दमा खांसी नाक का बहना आराम होता है आदी और सोंठ इन द्रव्यों का व्यवहार जैसा भारतवर्ष में है अन्य द्वीपों में नहीं ॥

आर्यावर्त में आने जाने के कारण कुछ विलायतमें भी शुष्क आर्द्रक (शोंठ) का प्रचार हो चला है पर बहुत कम और इसके गुण में लिख भी दिया है जिसे नीचे प्रकाश करेंगे पाठकगण को यह भलीभांति मालूम होगा कि आदी और शोंठ यह दोनों एकही वस्तु है गीले कन्दको आदी बोलते हैं सूखे को शोंट, इसी हेतु से निघंटु में लिख भी दिया है ॥

येगुणाःकथिताःशुंठ्या स्तेऽपिसन्त्यार्द्रकेखिलाः ॥

जो गुण शोंठ के कहे हैं वेही सब आदी में भी जानना ॥

आदी का गुण गर्म तीक्ष्ण कटु और पचनेपर कुछ मीठा रुक्ष तथा वात कफ का नाशक और क्षुधाकर है॥

भोजनाग्रेसदापथ्यंलवणार्द्रकभक्षणम् । अग्निसन्दीपनंरुच्यंजिह्वाकंठविशोधनम् ॥

भोजन के पहले आदी नोन का खाना अग्निदीप्त भोजन में रुचि जीभ और गले में लपटा हुआ कफ साफ होता है। परन्तु निम्नलिखित रोग तथा समय में आर्द्रक सेवन भावप्रकाश में निषेध किया है॥

कुष्टेपाण्डुामयेकृच्छे रक्तपित्तेव्रणेज्वरे । दाहेनिदाघशरदोर्नैवपूजितमार्द्रकम् ॥

कोढ़ पांडु सुजाक प्रमेह रक्तपित्त फोड़ा घाव ज्वर और दाह इन रोगों में तथा गरमी और शरद ऋतों में आदी न खाना चाहिये॥

मेटिरिया मेडिका से शुंठी का गुण।

अंगरेजी में शोंठ को जिञ्जर कहते हैं। क्रिया, उष्णकर उत्तेजक और वायुनाशक। अधिक मात्रा सेवन से पाकाशयमें जलन बोध करता है। चबाने से लाला निस्सरण अर्थात् राल का बहना, और बाह्य प्रयोग में चर्म में उग्रता प्राप्त होती है। डाकृर टर्नबूल का वाक्य है कि नवीन नेत्ररोग में शोंठ स्थानिक प्रयोग अति लाभदायक होता है। अथवा तेज टिञ्चर जैसे शोंठ का चूर्ण एक भाग और स्पिरिटवाइन दो भाग दोनों को एकत्रित कर कपाल में मालिश करें तो उससे पश्चम स्नायु सम्पूर्ण उत्तेजित होने से उपकार होता है। पेट फूलना या उदर शोथ पश्चात् दर्द में शोंठ का टिञ्चर पिलाने से फायदा करता है और दस्तावर औषध की उग्रता दमन के लिये प्रायः शोंठ मिला देते हैं॥

डाकृर प्यारेरा कहता है कि शिर दर्द में शुण्ठी का पलस्तर शिर पर लगाने से बहुत फायदा होता है दांत के दर्द में शोंठ अथवा अदरख चबाने से राल बहकर दर्द कम हो जाता है। सम्पादक मत-ग्रंथकार

का यह भूल बहुत भारी है कि उक्त गुण प्रकृति विशेष पर नहीं दिखलाया क्योंकि "यद्वायोपथ्यं तत्पित्तस्यापथ्यम्" जो औषध वायुनाशक है अवश्य पित्तवर्द्धक या पित्तविद्वेषक होगा, बहुत कम औषध हैं जो तीनों दोषों को समन करैं। सुण्ठी पित्तरक्त प्रकृतिवाले को लाभकारी कदापि नहीं हो सक्ती ॥

खड्गादिछिन्नगात्रस्यतत्कालंपूरितोव्रणः। गाङ्गेरुकीमूलरसैर्जायतेगतवेदनः ॥

शस्त्र आदि से कटे हुये घाव में यदि उसी समय गाङ्गेरुकी के जड़का रस निकालकर भरे तो शीघ्रही दर्द जाता रहै। और कोई २ टीकाकार ने इसी श्लोक का अर्थ इस प्रकार किया है। शस्त्रके कटे घाव में यदि वरियारा के जड़ का रस डाले तो शीघ्रही घाव शुष्क हो जाय, परन्तु यह ठीक नहीं है। दर्द निस्सन्देह जाता रहता है ॥

पुटपाकविधिः, शार्ङ्गधर से।

पुटपाकस्यपाकोयंलेपास्याङ्गारवर्णता। लेपंचद्व्यङ्गुलंस्थूलंकुर्य्याद्व्यङ्गुलमात्रकम्। काश्मरीवटजम्वादिपत्रैरावेष्टयत्नतः। पलमात्रोरसोग्राह्यःकर्षमात्रंमधुक्षिपेत् ॥ कल्कचूर्णद्रवाद्यास्तुदेयाकोलमिताबुधैः ॥

रोग नाशक ताजी औषधी ले उसे शिल पर पीस गोला बना के तिसपर खम्भारी, बरगद जामुन इन तीनों वृक्षोंमें से किसी वृक्षका पत्र क्यों न हो लपेट डोरे से बांध एक कपरोटी कर ऊपर दो अंगुल की मुटाई माटी लपेट थोड़े से मोटे कण्डों के बीच में धर कर फूंक देय जब ऊपर की मृत्तिका पक जाय * अग्नि से निकाल कुछ शीतल कर गोला

* यहां पर "लेपस्याङ्गारवर्णता" अर्थ ऊपर की मृत्तिका अंगार (अग्नि) के समान लाल हो जाय तब गोलेको निकाल ले यह उत्तम नहीं है, क्योंकि अधिक ताप से रस भी जल जाता है इसी लिये, सिर्फ आंच में लिस मृत्तिका को अधपका कर लेना चाहिये ॥

लोह भीतर की लुगदी ले मोटे कपड़े में धर खूब मलकर रस निचोरि ले यस उसी को पुटपाक कहते हैं । पुटपाक के रस का मात्रा अढ़ तोले से तीन तोला पर्य्यन्त है और उसमें शहद डालने की मात्रा १० मासा है यदि कोई चूर्ण अर्क आदि मिलाने की क्रिया लिखी होतो आधातोला डाले ॥

कुरैयापुटपाक सर्वातिसार पर ।

कुरैया एक वृक्ष का नाम है जिसकी बीजों में इन्द्रजव होता है । कुरैया की ताजी आधपाव छाल ले जिस पर रख चावल के धोवन में घोट कर गोला बना ले और उसपर जामुन का पत्र लपेट सूत से बांध फिर गेहूं का आटा साम के लपेट बाद दो अंगुल माटी लपेटे और बिनुये कंडे की आंच में पका ले तत्पश्चात् अग्नि से बाहर कर गोला फोड़ ४ तोला शहद डाल दोनों समय पीने से बहुत दिनों का कठिन भी अतीसार रोग आराम होता है । चार तोला रस की मात्रा बड़े जवान के लिये है ॥

इसी प्रकार ताजे बेल का पुटपाक तैयार कर ३ मासा मोचरस का चूर्ण मिलाय सातदिन दोनों समय खाने से कष्टसाध्य अतीसार आराम होता है ॥

पके अनार के पुटपाक से भी अतीसार आराम होता है ॥

हृदय शूल पर हिरन श्रृङ्ग पुटपाक ।

हिरन के सींग को महीन २ टुकड़े कर शराव सम्पुट (दो प्यालोंमें बन्दकर) में धर ऊपर से तीन कपरौटी कर घाम में सुखाय १० सेर कंडे के बीच में रख फूंक देय जब शीतल हो जाय सम्पुट से भस्म ले कागदार शीशी में रख दे इसका मात्रा आधा मासा से तीन मासा पर्य्यन्त है । दो तोला गाय के घी के साथ उक्त भस्म दोनों समय पीने से हृदय शूल छाती का दर्द जिसे वैद्यक में उरक्षत कहते हैं पांच सात दिनके पिलनेः

से निश्चय आराम होता है इस अपूर्व औषध से हमने अनेक रोगियोंको आराम किया है ॥

तंडुलजल (चावलका धोवन) विधिः ।

कंडितंतंडुलपलं जलेऽष्टगुणितेक्षिपेत् ।
भावयित्वाजलंग्राह्यं देयंसर्वत्रकर्मसु ॥

तीन तोला साफ पुराने चावल को अधकचरा कर (चूर्ण न होने पावे) सवापाव पानी में मृत्तिका पात्र में रात को भिजा दे सवेरे मल कर छान लेय । आवश्यक कार्य्य में एकही घंटे भिजाकर जल लेलेना कोई अनुचित न होगा । यही जल सर्वत्र कर्मों में दिया जाता है ॥

इन्फ्लुएञ्जा ।

अङ्गरेजी बुखार ।

सुनते हैं इस ज्वर का जन्म इटाली में हुआ है इटालीसे रूस, रूस से इङ्गलैण्ड, विलायत से आर्य्यावर्त्त में आगमन हुआ है । भारतमें कोई भी ऐसा मनुष्य है जिसे यह ज्वर न हुआ हो । यह एक प्रकार का सार्व देशिक सर्दी मूलक ज्वर है, सर्दी मूलक से शीतज्वर न समझना, पित्त सम्बन्धी भीतरी गर्मी और ऊपरी सर्दी के संयोग से यह ज्वर आता है बल्कि न्यूनाधिक तीनों दोष के लक्षण मिलते हैं ॥

कोई का मत है कि यह रोग विशेषकर विष दूषित वायु शरीर में प्रविष्ठ होने से यह रोग उत्पन्न होता है । कोई कहते हैं कि (ब्याक-टेरिया) नामक एक उद्भिज्जाणु के शरीर में प्रवेश करनेसे यह रोग होता है । कोई इस रोग को (स्पर्श क्रामक अर्थात् छुतहा रोग कहते हैं और कोई कहते हैं कि यह म्यलेरिया से जन्म ग्रहण करता है जो हो चाहे जहांसे आया हो अब तो समस्त भारतमें धमगजरी मचा रहाहै बालक वृद्ध युवा किसी को नहीं छोड़ता, जिसको जहां ही पाया धर पटका । किसी को दोही चार दिन में छोड़दिया, किसी को महीनों भुगाया,

मगर कोई ज़राभी चूं किया तो फिर पया यमालय को न भेजा तो मैं न्नू तो उसे अवश्यही बना दिया ॥

इन्फ्लुअञ्जा ज्वर का लक्षण ।

इसका आगमन एक समान नहीं है । यह प्रकृति अवस्था बलाबल पर निर्भर है देखने मे आता गया है कि पहले थोड़ी हरारत मालूम हुई बाद हड्डियों में दर्द शिर भारी हांथ पांव में ऐंठन, कुछ वमनेच्छा हो फिर ज्वर तेज हो जाता है । कभी सारे बदन में दर्द जुकाम जारी होके तब ज्वर आता है ॥

विशेष लक्षण ।

तीव्रज्वर, हाड़ों जोड़ों और शिर में दर्द, हांथ पैर में फाटन बिव-मिषा (जी मचलाना) नाड़ी वेगवान त्वचा में जलन और जिह्वा शुष्क होती है, कोष्ठबद्ध, वा दस्त पतला, नाक बहना, खांसी, आंख लाल, नींद का न आना, अधिक पिपासा, पेट में दाह इत्यादि लक्षण होते हैं इसके अतिरिक्त प्रलापादि और भी अनेक उपद्रव होते हैं ॥

चिकित्सा ।

प्रथम बलानुसार एक दो अथवा तीन दिन उपवास कराना, तीन दिन से अधिक उपवास बल हानि कारक होगा और तीन दिन तक कोई औषध न खावे बाद तीन दिन के निम्नलिखित क्वाथ को दोनों समय पीवे ॥

धनिया	२ तोला	मुलेठी	१ तोला
पद्माख	२ तोला	उन्नाब	१० दाना
लाल चन्दन	२ तोला	मुनक्का	१२ दाना
गुलबनफ्शा	२ तोला	गुर्च	२ तोला
हंसराज	२ तोला	निम्ब छाल	२ तोला

उक्त सब औषधियों को ले अधकचरा कर ८ मात्रा बना ले, मृत्तिका पात्र में एक मात्रा दवा को पावभर जल में डाल मंदाग्नि में पकावे जब

आधपाव से कुछ अधिक जल बचजाय अग्नि पर से उतार शीतल कर छ मासा मिश्री डाल के पिला देवै इसीप्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावै और जब तक भूख न लगे खाने को न देवै। भूख लगने पर प्रथम साबूदाना पानी में पका मिश्री मिला के खिलावे, या मूंग की जूस देवै क्योंकि एकबारगी पेटभर खालेने से दुबारा ज्वर हो जाता है। उपरोक्त क्वाथ को पांच छ दिन बराबर पीने से निस्सन्देह ज्वर सिर दर्द निद्रा नाश अङ्ग वेदना वमन आदि आराम होता है ॥

इनफ़्लुएञ्ज़ा से बचने की उपाय।

इसमें सन्देह नहीं कि यह ज्वर ऋतु के परिवर्तन में सर्वदा हुआ करता है इसीसे इस ज्वर को ऋतु परिवर्तनीय या कुआर कार्तिक मास में होने से शारदीय ज्वर कहा जाता है रहा कि, अब की यह अधिक और से सब देशों में एकबारगी फैलगया और यूरोपीय चिकित्सकों ने इसका नाम इन्फ्लुएञ्ज़ा रक्खा। उर्दू (डिक्शनरी) में इन्फ्लुएञ्ज़ा के माने औबा लिखा है हिन्दी में वबामारी की बिमारी कहते हैं ॥

इससे बचने की सहज उपाय यह है कि जिस समय ज्वर का आगमन देश में आरम्भ हो, निम्नलिखित नियमों को शीघ्रही धारण करने से इन्फ्लुएञ्ज़ा के बाप को भी शक्ति नहीं है कि जो उसका एक बाल भी बांका करसके ॥

सब से प्रथम यह है कि जल बहुत विचार के साथ पिये, जैसे अनेक कूपों का जल पीना, तीन चार दिन का रक्खा हुआ जल, खालीपेट या सोते से शीघ्रही उठकर या कच्चा फलहरी खाके जल पीलेना। कहीं से थका हुआ आके जल पीना इत्यादि त्याग करै। एक कूप या नदी का जल छान के या जल को एक उबाल गर्म करके छान ले तब जल को भोजनान्तमें या आवश्यकमें थोड़ा २ पिये। भोजन सबेरे नौबजेके भीतर और रात को आठ बजे करै। स्नान सात आठ बजे सबेरे गर्म जल से करै भोजन के उपरान्त या संध्या समय कदापि स्नान न करै। बदन में

कोई वस्त्र जरूर पहिरे रहै नग्न शरीर न रहै। खानेमें मूंग की दाल पुराने चावल का भात गेहूं जवे की रोटी गौ का दूध घी लौकी तेनुआ परवर की तरकारी सेंधानोन होना चाहिये ॥

तेल मिर्चा मांस शराब उर्द आलू भांटा बहुत गरम मसाला साग पात इत्यादि भोजन तथा जून बजून भोजन क्रोध शोक मैथुन रात का जागरण यह सब त्याग करे ॥

वीर्य्य उत्पन्न करनेवाली औषधैं और उपाय।

तत्काल का दुहा गौ का दूध ऊंटनी का दूध मिश्री पियाज दोनों बहमन तोदरी मरसी बादाम पिस्ता इन्द्रजौ नारियल कहौला केशर जेठी-मधु दालचीनी सतावरी असगन्ध खूब पका आम को खा के दूध पीना मीठा अनार सेब तालमखाना गुलसकरी लालधान उरद दूध गेहूंकी रोटी मक्खन घी मलाई छोटीलायची समय पर शीत भोजन मुलायम सेज प्रातःकाल वायु सेवन सुगन्धित तेल लगा के स्नान करना, और प्रसन्न कारक विहारों से वीर्य्य उत्पन्न होता है ॥

वीर्य्य को गाढ़ा और पुष्ट करनेवाली औषधियां।

सफेद मूसली स्याह मूसली एक वर्ष के सेमर वृक्ष का मूल सेमर का गोंद, गोंदबबूल कामराज बीजबन्द मखाना मोचरस पातालकुम्हड़ा वंशलोचन शतावर कालीतिल असगन्ध सिंघाड़ा सालिबमिश्री लसोड़ा रूमीमस्तगी इत्यादि ॥

हिकमत से प्रसंग की चाहना को बढ़ानेवाले द्रव्य।

गौ का घी गौ अथवा भेड़ के दूध में छुहारा पका के पीना एकवर्ष का बकरे का मांस मुर्ग तीतर बटेर गोरया का मांस मछली बदाम का हलुआ पिस्ता चिलगोजा सालब सकाकुल फुलीजन शकरकरहा गोखुरू केवाचबीज और बहमन सोंठ तगर कस्तूरी मोती अंगूर नारियलकी गरी शलगम गाजर मूरीकीजड़ प्याज और इन्हीं के बीज फिन्दक हब्बुस्समना सूरीदान हालो दारफिलफिल खशखाशसफेद सोंठ उसना करफस बस-

यासा मायासुलर जिरजीर सुरंजान फिस्तक हिमयून के बीज इत्यादि लेकिन सिर्फ यही नहीं कि उपरोक्त दो एक द्रव्यही के खाने से विषय चाह बढ़जाय इसके और भी उपाय हैं जैसा सुश्रुत में वाजीकरण विधि में लिखा है ॥

भोजनानिविचित्राणियानानिविविधानिच । वाचः श्रोत्रानुगामिन्यस्त्वचःस्पर्शसुखास्तथा ॥

यामिनीसेन्दुतिलकाकामिनीनवयौवना । गीतश्रोत्रमनोहारिताम्बूलंमदिराःस्रजः ॥

मनसश्चाप्रतीघातोवाजीकुर्वन्तिमानवम् ।

चित्र विचित्र भोजन (दूध खीर मालपूवा मांस रोटी एवं सुगन्धित मसालों से धूपित दाल तरकारी आदि) तरह २ के पीने के पदार्थ जैसे अर्क गुलाब केवड़ा खस पक्के अनार का रस पौंडूस इत्यादि । कानों को आनन्द देनेवाले वचन स्पर्श सुख (जिस चीज के छूने में त्वचा को सुख मिले) स्त्री कुचादि चांदनीरात नवयौवना स्त्री मनोहर गान बाजा पानका बीड़ा उत्तमशराब पुष्पों की माला और मन का अप्रतीघात अर्थात् जिससे मन को दुःख न हो वह कर्म ये सब पुरुष के वीर्य्य युक्त और विषय चाह वृद्धि करने वाले हैं ॥

बहुतसे लोग ऐसे धातुक्षीण पुरुषार्थ विहीन हैं जो सर्वदा इधर उधर से दवा मँगा कर खाया करते हैं परन्तु उन्हें फायदा नहीं करता है और वह अक्सर कहा करते हैं कि हमने सबोंका दवाखाया कुछफायदा न हुआ सब झूंठे विज्ञापन छपते हैं यह नहीं विचारते कि सबेरा होतेही नोन लकड़ी की फिकर पड़ती है दिन में दो घंटे भी आराम नहीं मिलते विषय चाह वृद्धि क्या पत्थर हो औषधि पथ्य के साथ सेवन करने से फायदा करता है ॥

कर्षंमधुकचूर्णस्यघृतक्षौद्रसमांशिकं। प्रयुक्तेयःप-यश्चान्नंनित्यवेगःसनाभवेत् ॥

मुलेठी का चूर्ण दशमासा, मक्खन या गौ का ताजा घृत दशमासा शहद पांच मासा इन सबों को एकत्रित कर चाट के ऊपर से गौ का दूध मिश्री डाल कर कुछ दिन पीने से और उत्तम पथ्य रखने से वीर्य्य स्त्री प्रसङ्ग करने लायक निस्सन्देह हो जाता है ॥

गरीबी लटका।

अश्वत्थफलमूलत्वक् शुंगासिद्धंपयोनरः। पीत्वा-सशर्कराक्षौद्रं कुलिंगइवहृष्यति ॥ विदारीमूलकल्कंतु घृ-तेनपयसानरः। उदुम्बरमितंभुक्त्वा वृद्धोपितरुणायते ॥ माषाणांपलमेकंतु संयुक्तंक्षौद्रसर्पिषा। अवलिह्यपयःपी-त्वा तेनवाजीभवेन्नरः ॥ क्षीरपक्वांस्तुगोधूमा नात्मगुप्ता-फलैसह। शीतान्घृतयुतान्खादेत्ततःपश्चात्पयःपिबेत् ॥ स्वयंगुप्तेक्षुरकयोः फलचूर्णंसशर्करम्। धारोष्णेननरःपी-त्वा पयसानक्षयंव्रजेत् ॥

इन दवाइयों में कोई भी एक औषध नियमानुसार पथ्य सहित तीन चार महीने निरन्तर सेवन करनेसे निस्सन्देह वीर्य्य पुष्ट हो साधारण क्लीवत्व नाश होता है ॥

पीपर वृक्ष जो गठीला और जिसमें लाही आदि कोई रोग न हो उसका फल जड़का छाल दुनगा और अन्तरछाल सब मिलाके दो तोला पावभर गौ के दूधमें पकाय ले बाद छान उसी दूधमें थोड़ा सक्कर शहद मिला कर पीने से प्रसङ्ग करने का पुरुषार्थ बढ़ता है। या पीपर वृक्षके

फल आदि चारो चीजों को ले छायामें सुखाय कूट कपरछान कर एक२ तोलाकी पुड़िया बनाले और नित्य सबेरे एक पुड़िया दवा खाके ऊपर से पाव आधसेर गौ का दूध मिश्री युत पी जावै ॥

दो तोला ताजा पातालकुम्हड़ा को शिल पर महीन पीस लुगदी बना लेवै, पावभर दूध में एक तोला घी और एक तोला चिनी मिला लुगदी मुख में रख उसी दूध से उतार जावै। अगर एकबारमें सब लुगदी न निगला जावै तो दो तीन बार करके उसी दूध से उतार जावै तो कैसाहू वीर्य्य क्षीण क्यों न हो गया हो अवश्य कुछ काल सेवन करनेसे स्त्री का प्यारा बन सक्ता है ॥

उर्द का छिलका दूर कर चूर्ण कर लेय। उर्द का चूर्ण ४ तोला अथवा दो तोला बराबर के घी में चाम चाट कर ऊपर से दूध मिश्री पीने से बल वीर्य्य का वृद्धि होता है ॥

गेहूं और केवाछ की बीज दो दो तोला दोनों को आधसेर दूधमें मन्दाग्नि से पकावै जब मानिंद खीरके हो जावै दो तोला घी और चार तोला मिश्री मिला के खा जावै तो कभी वीर्य्य क्षीण न होय ॥

बनकेवाछ का बीज और तालमखाना दोनों को बराबर ले चूर्ण कर एक तोला अथवा छ मासा के अन्दाज खाकर ऊपरसे तत्काल दुहा दूध पीने से धातुक्षीण मनुष्य वीर्य्यवान होता है ॥

भांग खानेवाला वीर्य्य क्षीण बल हीन अथवा बुढ़ापा हो अर्थात् शीतल पदार्थों के सेवन से हानि पहुंचती हो उसके लिये यह मोदक राम बाण है ॥

कामेश्वर मोदक।

चूर्णांशंगगनंघनाद्रुविमलं गंधंचकुष्टामृता। मेथी मोचरसोविदारिमुसलीगोक्षुरकंचेक्षुरः ॥ भीरुश्चैवकसेरुकं यमनिकातालांकुरंधान्यकम्। यष्टीनागवलातिलामधुरि-

वानरी चूर्ण।

जो नवीन प्रमेह को दूर कर वीर्य्य को पुष्ट करता है।

वनकेवाछ के बीज की गरी, तालमखाना का बीज, सफेद मुसली, उटङ्गन का बीज, मोचरस, उटकटेरा की जड़ का छाल, बीजबन्द, बहुफली, कमरकस शतावर, समुद्रशोष और सूखासिंघाड़ा सबको बराबर भाग ले महीन चूर्ण करले इसका मात्रा २ माशा से ६ माशा तक है चूर्ण की आधी मिश्री चूर्ण में मिला मुख में रख पावभर गौ के दूध से पीजावे सिर्फ सवेरे अथवा दोनों समय खानेसे निस्सन्देह उपरोक्तगुण होता है॥

धातु पुष्ट पर माषादि मोदक।

उरद की धुली हुई दाल का चूर्ण। गेहूं का सत्त, जव का सत्त, यह तीन चीजें एक एक पाव, साठी चावल का चूर्ण आधपाव छोटीपीपल गौ दुग्ध से शुद्ध चूर्ण एक छँटाक घी तीन पाव, चिनी ऽ।॥ सेर, प्रथम सब चूर्णों को एकत्रित कर घी में खूब भूंजे जब सुरखी आजाय और सुगन्ध उठनेलगे अग्नि पर से उतारलेय। चिनी की चासनी बनाय उसी भूंजा चूर्ण और बदाम पिस्ता किसमिस चिरौंजी आध २ पाव कतर कर डाल दे और एक २ छँटाक का लड्डू बांध ले। सांझ सवेरे एक २ लड्डू खाकर ऊपर से दूध पीवे। तेल मिर्च खटाई आदि गरम चीजों से परहेज रक्खे धातु गाढ़ा और पुष्ट हो और शारीरक बल की वृद्धि हो॥

अथ काम मर्दनो मोदक।

तालमखाना का बीज, नागौरीअसगन्ध, पच्छाहीं शतावर, मुलेठी, वनकेवाछ का बीज की गरी, नागबला और अतिबला के जड़का छाल उक्त आठों चीजों को एक २ छँटाक ले कूटकर महीन चूर्ण करलेय चार सेर गौ का दूध से कड़ाई में डाल चुरवे जब एक हिस्सा दूध जल जाय उक्त आठों चीजों का चूर्ण उसी दूध में डाल दे और करछुल से चलाता जाय जब दूध खोवा के समान हो जाय अग्नि पर से उतारले, बाद कड़ाई मांजकर डेढ़पाव घी डाल खोवाको खूब भूंजे, जब सुरखी आजाय

और सुगन्धि उठने लगे दो सेर चिनी की चासनी बनाय उसीमें खोवा और थोड़ा बहुत मेवा मिला के एक २ छटांक के लड्डू बनाय ले सांम सबेरे एक लड्डू खा कर ऊपर से दूध पीने से नष्ट हुआ भी कामदेव उत्पन्न होताहै, यह मोदक प्रायः आजमानेमें आया है तीन मास पर्य्यन्त सेवन करने से यथार्थवीर्य्य की ताकत झलक उठता है परन्तु गरम चीजों और स्त्री प्रसङ्गादि से पहरेज रखना होगा॥

गुप्ताफलंगोक्षुरकाञ्चबीजंतथोच्चटांगोपयसाविपाच्य।
खाजाहतंशर्करयाचयुक्त पोत्वानरोहृष्यतिसर्वगात्रं॥

केवाछ की बीज ६ मासा, बड़ा गोखुरू ६ मासा, उटंगन का बीज ६ मासा तीनोंको महीन चूर्णकर १ सेर गौके दूधमें डाल मन्दाग्निमें पचावै जब एक हिस्सा दूध जलजाय अग्नि से उतार ले और शीतल होने पर मथानी से खूब मथे और ३ तोला चिनी डाल के पीवै इसीप्रकार रोज ५ या ६ दफे संध्या समय पीने से वीर्य्य प्रसंग में अति हर्ष प्रगट करने वाला होता है॥

अहिफेन।

भाषामें अफीम और अंगरेजी में (ओपियम) कहतेहैं इसकी उत्पत्ति स्थान भारत भूमि है। आज भारत में अफीम खानेवाले चौथाई मनुष्य से कम न होंगे और इसको लोग कई प्रकार से सेवन करते हैं, गोली, घोल के, बर्श (यह शब्द हिकमत का है) चण्डू मदक इत्यादि। भूतपूर्व समय में सिवाय औषध विधिके भोकिया लोग नहीं खाते थे मुसलमानों के वक्त से भारत में आज इसका बहुत कुछ प्रचार बढ़गया है यहां तक कोई रोग क्यों न हो अथ देखा की नहीं आराम होता है तो अफीम खाने लगजाते हैं, प्रायः विषयी लोग स्तंभन के लिये और बहुतसे लोग जाड़े भर खाते हैं लेकिन अफीम किस प्रकार किस योग के साथ और कैसे प्रकृतिवाले को खाना चाहिये, यह न जाननेसे अक्सर अफीम खाने वाले निकम्मे और बेकाम हो जाते हैं इसलिये हम पाठकगणोंके उपकारार्थ अफीम खाने की कुछ विधि लिखते हैं॥

अफीम की प्रथम विधि।

आधी छँटाक अफीम को पावभर पानी में घोलकर फिलायटिंग-पेपर में अथवा बहुत गफ वस्त्र का दो तीन परत करके छान लेवे तत्पश्चात् उसे चूल्हे पर चढ़ाय मन्दाग्नि में पकावे जब खूब गाढ़ा लेई के समान हो जाय अग्नि पर से उतार लेय और वंसलोचन २ तोला, छोटी लायची का दाना १ तोला, अकरकरहा ६ मासा, बहिमनसुर्ख ६ मासा छोटी पीपर ३ मासा, कपूर ३ मासा, जायफल ३ मासा, जावित्री १॥ मासा, कस्तूरी ६ रत्ती, चांदी का वर्क २५ ताव, सोने का वर्क ५ ताव सब दवाइयों को चूर्णकर उस अफीम में मिला अपने खाने के अन्दाज से गोली बनाले परन्तु कैसाहू अधिक खानेवाला हो ३ मासे अधिक न खावे और सर्व साधारण के लिये आधे मूंग से ले कर चने बराबर गोलियां बनावे। एक गोली शाम को खाकर ऊपर से पाव भर दूध पका हुआ मिश्री या बताशा डालकर पीने से—सरदी नजला कान के शब्द लकवा कम्पवायु मिर्गी कमलवायु सर्वांगदर्द मसूड़ों का सूजन, मुख दुर्गन्धि मुख से लार बहना जिगर की निर्बलता और शीघ्र वीर्य पात हो जाना इत्यादि रोगों को नाश करता है अगर मिजाज बहुत गर्म हो या रक्त आदि का कुछ विकार होवे तो निम्नलिखित रूप से अफीम बना के खावे॥

अफीम की दूसरी विधि।

आधी छँटाक अफीम को एक पाव अर्क गुलाब और एकपाव अर्क केवड़ा दोनों को एक में मिला उसी में अफीमको घोल फिलायटिंगपेपर अथवा पूर्वोक्त प्रकार कहे हुये कपड़े में छान अग्नि पर चढ़ाय धीमी आंच से पकावे जब अफीम शहद के समान गाढ़ा हो जावे अग्नि परसे उतार नीचे लिखे हुये दवाइयों को मिला के गोली बांध लेवे। बंसलोचन २ तोला छोटीलायची के दाने १ तोला, सफेदचन्दन १ तोला, खस ६ मासा, शीतलचीनी ३ मासा, कपूर ३ मासा, चांदी का वर्क २५ ताव सब को महीन पीस उसी में मिला पूर्वोक्त प्रकार गोली बना लेवे इस

गोली को भी खाकर ऊपर दूध पीने से प्रथम विधि के कहे हुये समस्त रोगों का नाश होता है ॥

डाक्तरी मत से अफीम के गुणाऽगुण के लक्षण ।

डाक्तरी मत में अफीम से अनेक औषधियां बनती हैं और अनेक रोगों पर अनेक विधि से दी जाती है । अफीम का प्रत्यक्ष गुण है, मस्तिष्क उत्तेजक निद्राकारक, दर्द नाशक, थकाई को दूर करनेवाला, पसीना लानेवाला और मादक है । थोड़ी अफीम खाने से प्रथम उसकी गरमी समुदाय शरीर में फैलकर तब शिर में नशा पहुंचता है और पूर्ण मात्रा अफीम के सेवन से दशही १५ मिनट के बाद माथे में कुछ भारीपन, और शरीर चैतन्य बोध होती है किसी प्रकार दर्द वगैरह हो वह भी हलका हो जाता है, मनोवृत्ति, बुद्धि वृद्धि धर्म प्रभृति आदि समुदाय मानसिक धर्म उत्तेजित और प्रसारित होता है, बात बनानेवाली, बात करनेवाली, और बुद्धि धारण करनेवाली नाड़ियां बलवती होती हैं, साहस, पराक्रम और चातुरी बढ़ती है, अनेक मनोरम पदार्थों का अच्छा मालूम होना और सम्पूर्ण शरीर के जोड़ पुष्ट होते हैं परन्तु मद्यपान से शरीर की संधियां पुष्ट न हो के और शिथिल हो जाती हैं ॥

इस रूप अवस्थाके आध घंटाबाद अथवा उस्से कुछ अधिक काल के बाद निद्रा का समागम होने लगता है वह निद्रा सुषुप्ति के समान स्वप्न हीन ८ । १० घंटा पर्य्यन्त रहता है बाद अग्नि मन्दतादि उपद्रव होते हैं । अगर नींद लाने के लिये कम मात्रा अफीम खिलावे तो पूर्ण निद्रा न होके अर्द्ध निद्रा होगा और नाना प्रकार के स्वप्न देखेगा परन्तु वह स्वप्न सुन्दर मनोहर और कहीं २ भय अनक भी होगा जैसे अति शोकग्रस्त मनुष्य को देख पड़ता है ॥

प्रकृति भेद से अफीम के गुण भी भिन्न देखा जाता है जैसे किसी को अफीम से उत्तेजन क्रिया अधिक हो, किसी को मादकता अधिक हो किसी को कोष्ठबद्ध किसी का कोष्ठ परिस्कार हो, कम उमरवाले को अफीम अधिक नशा करता है, रोग विशेष खासकर दर्द रोग में कम

नशा होता है, सन्निकट मृत्यु अवस्था में अल्प मात्रा भी अफीम शीघ्र मृत्यु कारक होताहै । इपेकाकूआनाके साथ अफीम पसीना लानेवाला और कलोमिल संघटित कोष्ठबद्ध का नाशक होता है ॥

अफीम सेवन का अभ्यास करनेमें यदि मात्रा वृद्धि न हो तो शारीरिक अथवा मानसिक कोई विशेष हानि नहीं किन्तु अफीम की यह मोहनी शक्ति है कि प्रथम नियमित मात्रा किसी प्रकार रह नहीं सक्ता क्रमशः अवश्य ही बढ़ता जायगा इसी से अफीम खानेवाला अन्त होने से आलस्य ग्लानि उदासीनता नेत्रस्राव और जँभुआई आने लगती है जब तक अफीम न खावे ऐसाही दशा रहती है ॥ शेषमये—

हरिद्रा ।

संसार में जितनी वातें प्रचलित हैं और जो जो वस्तु अथवा द्रव्य दिन रात हम अपने काम में वर्त रहे हैं खापी रहे हैं वे सब किसी न किसी ऋषियों का अनमूहाहै पृथ्वीभर में ऐसाही कोई देश वया होगा जहां हरदी काम में न आती हो हम लोग पाक समय तरकारी दाल और मांस में हरदी डालते हैं यह तो साधारण हरिद्रा का व्यवहार है परन्तु हरदी को महत उपकारी वस्तु जानना चाहिये । वैद्यक में हरदी को रजनी, गौरी, वरवर्णिनी, वर्णवती, निशा और वर्णविलासिनी कहते हैं । गुण में कडुवी, तेज, रूखी और गर्म है त्रिदोषनाशक त्वचारोग प्रमेह सूजन पांडुरोग फोड़े फुंसी को नाश करती है । राजवल्लभ ग्रन्थ में शोथरोग पर हरिद्रा को पानी में घिस कर लेप करने से शोथरोग नाश होना लिखा है । डाक्टर लोग भी आज कल शोथरोग में हरिद्रा का व्यवहार करते हैं । इसमें कृमि नाश करने की एक आश्चर्य शक्ति है कि जिसे प्रायः ग्रामीण जन भी जानते हैं बालक के कृमि होने से स्त्रियां अक्सर कच्ची हरदी को गुड़ के साथ खिला देती हैं बंगाल में अनेक स्त्री पुरुष साबुन के तरह समस्त शरीर में लेपन करके स्नान करते हैं इस प्रान्त में भी विवाह के पूर्व लड़कों को हरदी तैल लगाते हैं इसमें

सन्देह नहीं कि तैल के साथ-अथवा कोई लेपन वस्तुके साथ हरदी को शरीर में लगा के स्नान करने से शरीरका वर्ण उज्वल सुन्दर शोभायमान होता है इसी से हरदी का नाम ऋषियों ने वर्णवती वर्णबिलासिनी लिखा है ॥

डाक्टरी किताबों को देखिये तो उसमें भी हरिद्रा के अनेकांश गुण लिखे हैं डाक्टर नफिस साहब अपनी किताब में चर्म रोग पर हरदी को उत्कृष्ट महौषध लिखा है और किसी के मत में बहुमूत्र रोग में हरिद्रा अति उपकारी लिखा है ॥

विलायत के वैज्ञानिक डाक्टर लोगों ने हरिद्रा के सहायता से एक प्रयोजनीक विषय परीक्षा करने के लिये उपाय निकाला है (टारमेरिक) नामक एक विलायती कागज़ है उसे हरदी में तर कर लेय अर्थात् हरदी को पानी में खूब महीन पीस कागज़के चारोंतरफ लेपन कर छाया में वायु द्वारा सुखालेय । उस कागज़ को किसी वस्तु में डालने से यदि वह कागज़ लाल वर्ण हो जाय तो जानना कि उसमें क्षार पदार्थ है । डाक्टर लोग प्रायः इसी उपाय से औषध अथवा कोई खाने की वस्तुहो, जल और मूत्र को परीक्षा कर लेते हैं कि इसमें क्षार पदार्थहै कि नहीं विख्यात डाक्टर रईल साहब ने भी हरदी का बहुत कुछ गुण लिखा है हकीमी मत से भी हरदी का गुण पीड़ा शान्तिकारक और प्रमेह रोग का परम औषध लिखा है ॥

वैद्यक में लिखा है कि हरदी के चूर्ण को कच्चे आंवले के स्वरसके साथ खाने से प्रमेह रोग नाश होता है । यह तो प्रसिद्ध है जिस स्थान में चोट लगी हो हरदी को चूने के साथ जल में पीस गरम कर लेप करनेसे दर्द और शोथ आराम होताहै । कुछ शारीरकही उपयोगी नहीं है हरदी में और भी अनेक गुण हैं । रोली भी हरदीही से बनती है हम लोगों के यावत शुभ कार्य्य हैं सबों में हरदी की आवश्यकता होती है । हरदी का गुण केवल रोग ही पर निर्भर नहीं है किसी २ जीवोंके लिये विष है जैसे किसी प्रकार घड़ियाल के शरीर में १ हरिद्रा प्रवेश

करने से घड़ियाल शीघ्रही मर जाता है। अक्सर शिकारी लोग गोली के जगह हरदी को भर कर घड़ियाल को मारते हैं। हमने सुना है कि सर्प को हरदी की गन्ध अच्छी नहीं मालूम होती। गुलाब आदि वृक्षों के जड़ में हरदी का चूर्ण डालनेसे फूल में कृमि नहीं लगता। सड़ाघाव भी हरदी से साफ होता है। यही कारण है जो चमंकार लोग चमड़े के काम में हरदी का अधिक प्रयोग करते हैं। भांग को जरा सा हरदी के साथ घोंट कर पीनेसे जहर के समान नशा करता है॥

दीपन पाचन आदि नाम।

वैद्यक के ग्रन्थोंमें बहुत से नाम ऐसे आते हैं जो बिना खुलासा किये कोष देखने से भी बोध नहीं होता जैसे दीपन पाचन वमन और अनुलोमन आदि।

दीपन।

जो औषध आंव को न पचावे परंतु अग्नि को दीप्त करे तिसे दीपन कहते हैं जैसे (सौंफ) यह सौंफ का विशेष गुण है लेकिन सौंफ अपने साधारण गुण से पित्तवर्द्धक एवं ज्वर वायु कफ उदरशूल आंव और नेत्र रोग को नष्ट करता है। आमवात पांडु और ग्रहणी रोग में प्रायः वैद्य लोग (तक्र) माठा के साथ औषध सेवन कराते हैं यदि तक्र के बदले में सौंफ के अर्क से लवणभास्कार आदि उत्कृष्ट चूर्ण सेवन करावें और पानी की जगह सौंफ का अर्कही पीने को देवें तो बहुत अधिक फायदा करता है। एवं भांग को सौंफ के संग घोट कर पीने से भांग का उष्ण वायु वर्द्धक बिकार जाता रहता है परंतु जो लोग सौंफ का गुण नहीं जानते सौंफ को शीत कारक समझ कर केवल भांग और मिर्चही घोंटकर पीते हैं सो उनकी भूल है इसे भांग प्रकर्ण में लिखेंगे।

पाचन।

आंव को पाचन करें और अग्नि वृद्धि न करें उसे पाचन कहते हैं

जैसे (नागकेशर) यह प्रधान गुण है परन्तु नागकेशर खाज, वमन शरीर की दुर्गन्धि और अधिक पसीना आना इन रोगों को नाश करता है ॥

और किसी दवा में दीपन पाचन दोनों गुण रहते हैं जैसे (चीता) यह गर्म है कटु है शोथ, कृमि रोग और बादी बवासीर को नाश करता है ॥

समन ।

जो औषध पेट शुद्ध करै और पतले मल को बांध न सके परन्तु बढ़े हुये दोषों को समन करै उसे समन कहते हैं जैसे (गुरच) भारत के सभी स्थानों में गुडूची मिलसक्ती है और प्रसिद्ध नाम इसका गुर्च या गिलोय है। यह गर्म और स्वाद में कटु है ज्वर, संनिपात, प्रमेह, वात-रक्त, कोढ़ और पांडुरोग नाशक है बलकर तथा रसायन है। कोई रोग क्यों न हो गुर्च सब को समन करती है यही कारण है जो वैद्य लोग अक्सर गुर्च के के स्वरस में औषध देते हैं। इसीको अमृता भी कहते हैं वैद्यक में इसकी उत्पत्ति यों लिखी है कि जब वानरों की सेना सहित श्री रामचन्द्र जी ने रण में रावण को मारा तब राक्षसों के हाथ से मारे हुये वानरों पर इन्द्र ने अमृत की वर्षा की तो अमृत के प्रभाव से सब वानर उठ खड़े हुये उनसे अतिरिक्त जो पृथ्वी में अमृत की बून्दें गिरीं तिनसे गिलोय उत्पन्न हुई इसी से इसका नाम अमृता पड़ा है ॥

अनुलोमन ।

जो औषध अजीर्ण मलको पचावे और बँधेहुये मलको तोड़के अधोमार्ग से नीचे गिरावे वह अनुलोमन कहाता है जैसे (हड़ या हर्रें) इसकी उत्पत्ति वैद्यक शास्त्र में दो प्रकार से लिखी है धन्वन्तरि आदि निघण्टों में तो यह लिखा है कि धन्वन्तरि महाराज हाथ में हर्रें लियेहुये समुद्र से निकले हैं और हरीतक्यादि निघण्ट में लिखा है कि एक समय इन्द्र स्वर्ग में अमृत पान करते थे उसमें कुछ बून्द पृथ्वी में गिरा उसी से हरीतकी

उत्पन्न हुई जिसके पृथक् नाम सातप्रकार हैं जैसे विजया, १ रोहणी, २ पूतना, ३ अमृता, ४ अभया, ५ जीवन्ती, ६ चेतकी, ७ (लक्षण) ॥

(१) जिसका तूंबी के समान गोल आकार होता है वह विजया कहाती है सब प्रकार की हड़ों में विजया नाम हड़ अतिश्रेष्ठ है किसी औषध के प्रकर्ण में किसी हड़ का नाम खोल के न लिखा हो सिर्फ हरीतकी या हड़ लिखा हो तो इसी को लेवें क्योंकि ग्रन्थों में इस हड़ को सब रोगों में देना लिखा है ॥

(२) जो बिलकुल गोल न हो वह रोहणी है, फोड़ा फुन्सी और घाव में फायदा करती है इसीसे इसे व्रणरोपिणी भी कहते हैं ॥

(३) जिसके भीतर गुठली हो लेकिन बहुत मोटी गुठली न हो (छोटी हर्रें) वह पूतना है इसको प्रलेप आदि में योजन करना उचितहै ॥

(४) जिसमें बहुत गूदा हो वह अमृता कहलाती है दस्तावर है रेचन कर्म में इसी को लेना उचित है ॥

(५) जिसमें पांच लकीरें हों वह अभया है नेत्र रोग में अञ्जनार्थ इसी को लेना चाहिये ॥

(६) पीले रंग की जीवंती होती है, नाश लेने के तेल आदि में अधिक गुण दायक है ॥

(७) जिसमें तीन लकीरें हों वह चेतकी दो प्रकार की होती है। एक सफेद रंग ६ अङ्गुल की लम्बी जो कम मिलती है किसी किसी को उसके देखने छूने या सूंघने से दस्त होता है दूसरी १ अंगुल की लम्बी काली होती है ॥

(उत्तम हड़ की पहचान)—जो हड़ नवीन चिकनी गोल भारी जल में डालने से डूब जाय वह बहुत गुणदायक होती है। (अन्यपक्ष) जो हर्रें का फल तौल में १ तोला ८ मासा हो उसे भी अति गुणदायक समझना (हरीतकी का साधारण गुण) हर्रें को चबाकर खाने से अग्निवृद्धि होती है पीसकर खाने से मल शुद्ध होता है, अर्क खींचकर

पीने से मोटी शरीर दुबली होती है (परन्तु जिसे धातु की बिमारी न हो) और भूंजकर खाने से त्रिदोष का नाश होता है (अन्य प्रकार) हरीतकी भोजन के साथ खानेसे बुद्धिबल और इन्द्रियों को चैतन्य करती है। भोजन के पीछे खाने से अन्न तथा पानी के दोषों को दूर करती है (ऋतुगाम भेद से गुण) सेंधव अथवा सोंचर लवण के साथ खाने से कफ दूर करती है, मिश्री के साथ पित्त को और गुड़ के साथ बात को नाश करती है ॥

बांजे बांजे लोग हर्रे को बारों महीना खाते हैं उन्हें नीचे लिखित प्रकार पर खाने से अतिलाभ होगा जैसे, वर्षाऋतु में सेंधव लवणके साथ, शरदऋतु में मिश्री के साथ, हेमन्तऋतु में सोंठ के साथ, बसन्तमें छोटी पीपल के साथ, ग्रीष्म में शहद के संग, और प्रावृट्ऋतु में गुड़के साथ ॥

निषेध—मार्ग से अति थकित, अति दुर्बल, रूखा, कमजोर, पित्तरोग युक्त, गर्भवती, उपवासी और जिस के शरीर से रक्त निकला हो इतने प्रकार के मनुष्य हड़ न खांय ॥

हरीतकी कल्प में हड़ का बहुत कुछ माहात्म्य लिखा है परन्तु संक्षेप रूप से यह वाक्य प्रसिद्ध है ॥

श्लोक—यस्यमातागृहेनास्ति तस्यमाताहरीतकी ।
कदाचित्कुपितामाता नोदरस्याहरीतकी ॥ १ ॥

अर्थात् जिसको माता घर में नहीं है उसकी माता हड़ है कदाचित् माता खफा हो जाय पर पेट में पड़ी हुई हड़ कभी कोप को नहीं प्राप्त होती अर्थात् विकार नहीं उपजाती ॥

स्रंसन और भेदन।

जो भोजन किया हुआ पदार्थ अनपच होकर कोठे में लपटके रह गया हो (जिसे हिकमत में गोंटे पर जाना कहते हैं) उसे फोड़ कर जो औषध नीचे गिरावे उसे स्रंसन कहतेहैं, जैसे अमिलतासकागूदा। यद्यपि

अमिलतास के गूदे में कुछ भी मलशोधन गुणहै परन्तु मल फोड़कर नवी गिरानेमें प्रधान औषध है जो मल वातादि दोषसे बँधाहो या न बँधा हो या सूख गया हो उसे फोड़ के जो अधोमार्गसे गिरावे उसे भेदन कहतेहैं जैसे (कुटकी) यह प्रसिद्ध औषध है, गुण में शीतल तीती कडुई हलकी भेदनी कफ पित्तज्वर प्रमेह श्वास कुष्ठ और कृमि रोग नाशक है और मुख का तीतापन नाश करनेमें भी कुटकी एकहीहै । जाजे २ ज्वर रोग वाले का मुख बहुत दिन तक कटु बना रहता है वह कडुआई कुटकी क्वाथ से जाती रहती है जैसा कि लोलिम्बराज कवि ने परिहास पूर्वक कडुआई पन की चिकित्सा बतलाईहै और एक श्लोक भी कहाहै ॥

ममद्वयंविस्मयमातनोति तिक्ताकषायोमुखतिक्तताघ्नः ।
निपीड़ितोरोज सरोजकोषा योषाप्रमोदं प्रचुरंप्रयाति ॥

लोलिम्बराज कवि कहते हैं कि मुझे दो बिस्मय होते हैं एक यह कि जिसका नाम तिक्ता अर्थात् कुटकी है उसके क्वाथ से मुख की कडुआहट दूर हो जाती है दूसरे स्त्री लोगों के कमल के समान कोमल स्तनों के मर्दित होने से उन्हें बहुत अधिक हर्ष होताहै । इसमें बिस्मय की बात यह है कि अति तीता तिक्ता सो तीतापन का नाश करे और अङ्ग विशेष के पीड़ित होने से प्रमोद की अधिकता हो उसका कारण "विषस्य विषमौषधम्" दिखलाया है ॥

रेचन (जुलाब)

मल दोषों से विशेष पक गया हो या न पका होय या कुछ दिन का सञ्चित हो जो औषध उसे अपने प्रधान गुणसे एकत्रित और पतला कर के नीचे बहावे उसे रेचन कहते हैं जैसे (निशोथ) इस औषध पर पाठकगण को अधिक ध्यान रखना चाहिये क्योंकि रेचन कर्म में निशोथ अत्यन्त गुणकारी औषध है सुश्रुतमें इसकी बहुत कुछ प्रशंसा लिखीहै ॥

सुश्रुत सूत्र स्थान ४४वां अध्याय—विरेचन औषधों में जड़ किञ्चित लालवर्ण निशोत का (निशोतके जड़का छाल) कालों में (छोटीलोधका)

फलों में (हड़) तेलों में (ऐरण्ड तेल) दूधों में थूहर का दूध दस्त लानेमें श्रेष्ठ है । निशोत का मात्रा एक मासा से एक तोला पर्य्यन्त है, निशोत सेंधानोन शोंठ आदि के सङ्ग सेवन करने से वायु का, ऊख के रस या मीठे अनारके रस अथवा दूध के सङ्ग पीनेसे पित्तका और गुर्च त्रिफला आदि औषधों के संग खाने से कफ रोग को नाश करता है ॥ शो०—

वमन ।

कच्चा पित्त और कच्चा कफ (जो कफ पित्त पक जाते हैं वे आप निकल जाते हैं) को जो औषध अपने बलसे ऊर्द्धमार्ग अर्थात् कै कराने के द्वारा बाहर निकाले उसे वमन कहते हैं । जैसे (मैनफल) यह औषध कै कराने के लिये अति उत्तम है । मैनफल गुण में उष्ण रूखा हलका कै लाने वाला, पीनस और फोड़ा फुन्सी रोग का नाशक है ॥

शरीर शोधन ।

जो औषध अपने बल से कुपित मल, पित्त और कफ को कुपित-स्थान से छुटायके उसे ऊर्द्धमार्ग या अधोमार्ग से गिरावे उसे शरीर शोधन कहते हैं । जैसे (देवदाली) इसको कहीं २ घघरबेलि, या सोनैयाबेलि, बंदाली और बंदाल भी कहते हैं । वैद्यक में इसके नाम हैं । ककोंटी, गरागरी, देवताड़ी, मृदंकोश और जीमूत । यह एक प्रकार की लता है, तोरई के समान फल होता है उसमें भी दो भेद हैं, एक चिकना दूसरा पीतवर्ण और खरखरा होता है किसी २ वैद्यक ग्रन्थके टीकाकारोंने इसे बनतुरई करके लिखाहै देवदाली स्वाद में तीखी चरपरीहै वमन कराने वाली कफ, बवासीर, शोथ पांडु, कृमि और ज्वर को नाश करती है । इसके फल का गुण—उपरोक्त रोग नाशक वमन है अर्थात् मलों को पतला करके बहानेवाला है । दूसरा फल जो पीत वर्ण और खरखरा है उपरोक्त गुण के अतिरिक्त विष का नाशक है । इस फल का एक परीक्षा हमने और किया है, शिर में बलगम जम गयाहो और नासिका द्वारा कफ न निकलता हो इसे पानी में भिजोय निचोड़कर रस निकाल नास देने से सब कफ पानी होकर बह निकलता है लेकिन यह निश्चय कर

लेना चाहिये कि बलगम शिर में जमा है । पित्त कामला (कँवल) रोग में भी इसके द्वारा पीले रंग का दूषित पानी नाशिका के द्वारा बहाया जाता है ॥

छेदन ।

जो औषध बँधे हुये कफ आदि के दोषों को अपनी शक्ति से फोड़ कर बाहर निकाले उसे छेदन कहते । जैसे जवाखार, सोंठ मिर्च और पीपर ॥

लेखन

रस रक्त मांस आदि धातु और मल मूत्रादि, जो औषध इन्हें सुखा के शरीर को दुर्बल करे उसे लेखन कहते हैं । जैसे—शहद, गरम जल और यव । यही कारण है जो गर्म मिजाजवाले को शहद और गर्मजल का सेवन निषेध किया है परन्तु पाठकगण को इस बात का आश्चर्य होगा कि यव धातु शोषक है तो दाह रोग में यवमन्थ (जौ का सत्तू) पीने को क्यों लिखा है ? इसका कारण यह है कि समस्त औषध पांच रूप से गुणकारी होते हैं जैसे वीर्य्य विपाक और शक्ति आदि कोई औ-षध रस से कोई वीर्य्य से और कोई विपाक से गुण करते हैं जैसे यव पीने में शीतल दाह नाशक है परन्तु विपाक में गर्म हो धातु को दुर्बल और मूत्राशय के जल को शुष्क करता है ॥

ग्राही—जिन औषधियोंमें दीपन और पाचन गुण दोनोंहैं परन्तु अपने उष्ण शक्ति से कफ धातु और मल इनके रस को सुखावै उसे ग्राही कहते हैं । जैसे—सोंठ श्वेत जीरा और गज पीपर । इन तीनों औषधों का प्रयोग कफ, अतीसार और ग्रहणी आदि रोगोंमें करना उचितहै ॥

स्तम्भन—जो औषधी रूखी और प्रकृति में शीतल तथा कषायल हो और पाचन शक्ति जिसमें बहुत कमहो परन्तु वातकृत अर्थात् बात कारी हो उसे स्तम्भन कहते हैं । जैसे कुरैया का छाल और सोहनपत्र । इस स्तम्भन शब्द को धातु स्तम्भन में न समझना यह मल स्तम्भन है

बहते हुये मल (अतीसार) को जो बांधे उसे स्तम्भन कहते हैं। कुरैया को वैद्यक में कुटज कहते हैं कुटज वृक्ष दक्षिणमें बहुत होतेहैं इस वृक्ष में लम्बी छीमी निकलती है उसके भीतर के बीज को इन्द्रजव कहते हैं। कुटज अतीसार रोग में प्रधान औषध है। डाक्टरी में भी इस औषधका व्यवहार है ल्याटिन में (राईटिया एंटिम्हिसेन्टेरिका कारटेक्स) और अंगरेजी में (कनेसाई बार्क कहते हैं॥

रसायन—जो औषध मनुष्यको शीघ्र वृद्ध होने न देय अर्थात् जिस औषध को नित्यशः सेवन करने से जल्दी बुढ़ापा न होय उसे रसायन कहते हैं। जैसे-मुर्च, रुद्रवन्ती, गूगुल, और हरीतकी॥

वाजीकरण—जिस औषध के सेवन से स्त्रियों के साथ मैथुनमें अधिक हर्ष उत्पन्न हो तिसे वाजीकरण कहते हैं। जैसे—वरियारा का जड़ गुलसकरी और केवाछबीज वीर्य्य में हर्षोत्पन्न करनेमें यह तीनों प्रधान औषध हैं॥

शुक्रल—जो औषध धातु को बढ़ावे उसे शुक्रल कहते हैं। जैसे असगन्ध, दोनों मूसली और शतावर, यह औषध वीर्य्यको वृद्ध और पुष्ट भी करते हैं परन्तु असगन्ध विशेष कर स्त्रियों के रज को अधिक बढ़ाता है। दूध, उर्द और आंवला ये भी धातु को बढ़ाते हैं इसी से रेतजन्य कहे जाते हैं॥

बड़ी भटकटैया का फल स्त्रियों के धातुको रेचन करता है, जायफल वीर्य्य स्तम्भक है, वीर्य्य शोषक बड़ाहड़ और सर्वूज है, विशेष हाल आगे मालूम होगा॥

सूक्ष्म-शरीर के महीन रोम मार्ग कूपों के द्वारा, सैंधवनोन, सहत निम्ब और ऐरण्ड तेल देह में पैठते हैं इससे वे सूक्ष्म कहाते हैं, यही कारण है जो उक्त चारों औषध बातरोगाधिकार में श्रेष्ट कहे गये हैं॥

व्यवायि—जो द्रव्य पहिले समस्त शरीर के नाड़ियों में प्राप्त हो, तब उसका परिपाक होवे तिसे व्यवायि कहते हैं जैसे भांग और अफीम॥

विकाशि-उस द्रव्य को कहते हैं जो शरीर के बन्धन को ढीले करे और रसादिक धातु और शुक्र को क्षीण करें जैसे सुपारी और कोदों का चावल ॥

मादक-द्रव्य वह है जो बुद्धि को लोप करे और तमोगुण प्रधान हो जैसे मद्य आदि ॥

विष-व्यवायि और विकाशि हो छोटे २ नसों के द्वारा मद कर अग्नि वर्द्धन (समस्त शरीर में व्याप्तः करदे) मृत्यु कारक यह सब द्रव्य जिस औषध में (योगवाहि) संग पावे सगुण करे, जैसे संखिया और सींगिया आदि ॥

प्रमाथी-वे द्रव्य कहलाते हैं जो अपने से संचित दोषों को आंतों से निकाल डाले जैसे मरिच और बच ॥

अभिष्यन्दी-जो द्रव्य अपनी चिक्कनता गुण करके रस वाहिनी नाडियों को निरोध कर शरीर को जड़ करे उसे अभिष्यन्दी कहते हैं । जैसे (दही) यद्यपि जीव भेद से दही के गुण और रूपान्तर होने से प्रकृत औरही हो जाती है तथापि दही अपने साधारण गुण से श्लेष्म प्रकृति वाले को दुर्गुणही है इसीसे सुश्रुत ने रात को दधि खाना निषेध किया है "रात को दही न खाना और न बिना घी के पिनी" ॥

आह्निक कर्म्म ।

बहुत से आर्य्य हैं जो आजकल अपने नित्य कर्मसे ऐसे च्युत होगये हैं कि जिसका कुछ कथन नहीं है । अभिनिवेश चित्त से ध्यान देकर देखते हैं तो भूतपूर्व ऋषियों के कहे हमलोगों के लिये यावत् आचार हैं वे निश्चय आयु इच्छित सन्तान और धन वृद्धि करनेवाले हैं इस में सन्देह नहीं वेद के न जानने से आचार के छोड़ने से, आलस्य से मृत्यु आर्यों को मारने की इच्छा करती है । कारण यह कि आचार न पालने से मनुष्य अल्पायु होताहै, सर्वदा रोग ग्रस्त रहताहै मन दौर्बल्य ग्लानि

और शोकयुत रहता है इस लिये शारीरिक स्वास्थ्य लाभार्थ आचार पालन करना सब को उचित है ॥

वसिष्टः, आचारःपरमोधर्म्मःसर्वेपामितिनिश्चियः।

वसिष्ट जी कहते हैं कि आचार यह परम धर्म ऋषियों का मत है ॥

पराशरः दक्षः।

चतुर्णामपिवर्णानाम्आचारोधर्मपालनम्। आचार-भ्रष्टदेहानांभवेद्धर्मपराङ्मुखः ॥ दुराचारोहिपुरुषोलोके-भवतिनिंदितः।दुःखभोगीचसततंरोगीचाल्पायुषोभवेत्॥

पराशर और दक्ष कहते हैं कि चारोवर्णों को आचारसे रहना धर्म है आचार से भ्रष्ट मनुष्य धर्म से वञ्चित रहते हैं, दुराचारी पुरुष लोकमें निन्दित हमेशा दुःखका भोगनेवाला औरशीघ्र मृत्युको प्राप्त होता है। हे। कोट पतलून धारी होटलमें महाप्रसाद खानेवाले इधर देखो तुम्हारे भूतपूर्व ऋषीगण क्या कहते हैं ॥

प्रातरुत्थानकालः॥

वेद से लेकर पुरान तक में यही वचन मिलेंगे मनुष्य को उचित है कि ब्राह्म मूहूर्त (चारघड़ी के तड़के) में उठकर प्रातः स्मरण करै। विष्णु पुराण में प्रातःकाल का प्रमाण लिखा है ॥

पञ्चपञ्चउपःकालः सप्तपञ्चारुणोदयः। अष्टपञ्चभ-वेत्प्रातस्ततासूर्योदयःस्मृतः॥

सूर्योदय से ५५ घड़ी पर ऊपःकाल (कितनो के मत से यही ब्राह्म-मूहूर्त है और बहुतों के मत में ऊषःकाल से एक घड़ी पूर्व ब्राह्ममूहूर्त कहाता है अर्थात् ३ घड़ी सूर्योदय होने को रहे उसे ब्राह्ममूहूर्त कहते हैं) ५७ घड़ी पर अरुणोदय और ५८ घड़ी पर प्रातःकाल होता है। सब

वणों के। चाहियेक्यों कि ब्राह्ममूहूर्त में ईश्वर का स्मर्ण कर अपने कृतकार्य को विचार कर तब शौच को जावे ॥

"ब्राह्मेमुहूर्ते यानिद्रासा बलक्षयकारिणी" ब्राह्ममूहूर्त की निद्रा बल के नाश करनेवाली है इसलिये स्वास्थ्य के चाहनेवाले जन अवश्य उक्त समय में उठने का अभ्यास करें ॥

स्वकरतलाद्यव लोकनम् ।

आचारप्रदीपे—कराग्रेवसतेलक्ष्मी प्रभातेकरदर्शनम् ।

अन्यच्च—भारद्वाजमयूराणांचापस्यनकुलस्यच। प्रभाते दर्शनंश्रेष्टं वामपृष्ठेविशेषतः ॥ श्रोत्रियंसुभगांगांच अग्निमग्निचितिंतथा। प्रातरुत्थाययःपश्येदापद्भ्यःसप्रमुच्यते॥

हस्त के अग्रभाग में लक्ष्मी का वास है इससे प्रातकाल उठ हाथ देखे, भारद्वाज (खञ्जरीट) मोर, टिटहरी, और नेवरा, इन्हें प्रातःकाल देखना शुभ है वामभाग और पीठ पीछे देखे तो अधिक शुभ है। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर यज्ञ करानेवाले, सुन्दर गौ यज्ञ के अग्नि का दर्शन करते हैं वह अनेक आपत्ति से छुटजाता है ॥

नामदेव जी कहते हैं प्रातःकाल पापी, दरिद्र, अन्धा, नकटा नग्न, केलावाकल, बहेरा, कौवा, बिल्ली, मूस, नपुंसक और गदहा इन्हें न देखे यदि अकस्मात देख पड़े तो पुनः आंख बंद करले ॥

ब्राह्ममुहूर्त में उठ पूर्वोक्त पदार्थों को देख जल से तीन कुल्लीकर नेत्र औ मुख धो पवित्र हो के परमात्मा का ध्यान करै तब निम्नलिखित श्लोक को पढ़ के पृथ्वी में पाद धरै ॥

समुद्रवसनेदेवि पर्वतस्तनमण्डले । विष्णुपत्निनमस्तुभ्यं पादस्पर्शंक्षमस्वमे ॥

विण्मूत्रोत्सर्ग विधिः ।

पारस्कर गृह्यसूत्रे–तिष्ठन्नमूत्रपुरीषे कुर्यात्स्वयं-प्रशीर्णेन काष्ठेनगुदंप्रमृंजीत । विकृतंवासोनाच्छादयात् मूत्रपुरीषेष्ठीवनंचातपेनकुर्यात् ॥

खड़ा होके दिशा पेशाब न करै, जल का अभाव हो अथवा जल दूर हो तो जीर्ण घास फूस से गुदा पोछ डाले तब आके शौच करै । जबतक जल से शुद्ध न हो वस्त्र न पहरे, धूप में सूर्य के सन्मुख दिशा पेशाब न करै कारण यह है कि इस्से प्रायः शिर में दर्द हो जाता है । बौधायन ऋषि कहते हैं (जलाशय से दश हाथ और तीर्थ नदियों से ४० हाथ त्याग के दिशा पेशाब करै (निषेध करनेका सबब यहहै कि प्रायः जलोंके समीप दलदल रहता है) पृथ्वी में तृण बिछा के मूत्र पुरीष त्याग करै (बिना तृण के मूत्र बिन्दु से पाद अङ्गादि अशुद्ध होजाते हैं) पराशर और यम महाराज कहते हैं सबेरे पश्चिम मुख दोपहर उत्तर मुख, संध्या समय पूर्व मुख, और रात्रिको दक्षिण मुख, बैठके दिशा पेशाब करै । अँधियारी रात में गृह में ही मल मूत्र त्याग करै यह मनु जी की राय है । इस्से स्पष्ट होता है कि पहले समय में आर्य्यावर्त्त बिलकुल जंगल या प्रायः शौचनार्थ बाहर जाना पड़ता था ॥ *

शौचेउपवीत (जनेउ) धारणप्रकारः ।

अङ्गिराः–मूत्रेतुदक्षिणेकर्णे पुरीषेवामकर्णके। उपवीतंसदाधार्यं मैथुनेतूपवीतिवत् ॥

पेशाब करने में दक्षिण और दिशा फिरने में बाम कर्ण में जनेऊ धारण करै और स्त्री प्रसङ्गमें यथावत् रहे । सायणाचार्य का मत है कि यदि दिशा पेशाब करते समय कान पर जनेऊ चढ़ाना भूलजाय तो नवीन जनेऊ धारण करै। किसी २ ऋषियों का मत है कि मूत्र पुरीष

षियों और वैद्यक का मत भी है । आ०द० के १ खण्ड प्रथम अंक में जो जो विधि दन्तधावन करने के वैद्यक मत से लिख आये हैं वही वाक्य मय ऋषियों के मत में पाये जाते हैं विशेष फर्क सिर्फ इतनाही है जैसा विष्णुपुराण लिखा है, प्राङ्मुखस्य धृतिःसौख्यं इत्यादि पूर्व मुख दन्तधावन करनेसे धृति सुख और शरीर आरोग्य, दक्षिण मुख कष्ट, पश्चिम मुख हानि, उत्तर मुख गो स्त्री और कुटुम्बों का नाश होता है इससे स्पष्ट हुआ कि पूर्वही मुख बैठ के दतुनि करना श्रेष्ठ है । व्यास जी के मत से प्रतिपदा अमावस्या षष्ठी नवमी और रविवारके दिन दतुनि करनेवाला सप्तकुल को दहन करनेवाला होता है । शुष्क काष्ठ की दतुनि करना ऋषियों ने निषेध किया है ॥

स्नान ।

स्नान करने की विधि तथा स्नान के द्वारा आरोग्यता प्राप्ति मानसिक उन्नति करना जैसा आर्य्यावर्त्त में है अन्य दीपों में नहीं है । वैद्यक मत से स्नान करने का लाभालाभ प्रथम खण्ड में दिया है अब जो कुछ ऋषियों की राय स्नान करने के विषय में है उसे भी प्रकाश करते हैं । इसमें शक नहीं कि जो स्नान और निर्मल वस्त्रादि से अपने शरीर को पवित्र नहीं रखते वे सर्वदा मन मलीन दुःखी विचार हीन आलसी और रोगार्त्त बने रहते हैं और उससे शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम कभी नहीं हो सकेगा ॥

स्नानात्पूर्वं भक्षणयोग्याः पदार्थाः चतुर्विंशतिर्मताः ।
इक्षुरापःफलंमूलं पयस्तांबूलमौषधम् । भक्षयित्वापिकर्तव्याः स्नानदानादिकाःक्रियाः ॥

सब ऋषियों का मत है कि (इक्षु) ऊख या पौंड़ा जल फल कन्द दूध तांबूल और औषध इन्हें भोजन करके भी मनुष्य स्नान दानादिक क्रिया कर सक्ता है परन्तु स्नान करके भक्षण करना अति उत्तम है ॥

स्नानकालः ।

हेमाद्रौ—अरुणकिरणयुक्तां प्राचींदिशमवलोक्य-स्नायादिति ॥

याज्ञवल्क्यः—अत्यन्तमलिनःकायो नवछिद्रसमन्वितः।
स्रवत्येवदिवारात्रौ प्रातःस्नानंविशोधनम् ॥१॥

किञ्चित् सूर्योदय देख स्नान करना उत्तम है। याज्ञवल्क्य का वचन है कि नवछिद्र सहित अत्यन्त मैली यह शरीर है दिन रात रस आदि धातुओं का मल बहता रहता है उसके शुद्ध के लिये प्रातःकालमें स्नान करना उचित है ॥

गुणादशस्नानपरस्यसाधो रूपंचतेजश्चबलंचशौचम्।
आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दुःस्वप्ननाशश्चयशश्चमेधा॥

ऋषियों ने स्नान का दश गुण लिखा है। रूप तेज और बल की वृद्धि पवित्रता आयु तथा आरोग्यलाभ एवं (मल) शरीर की मलीनता और दुःस्वप्न का नाश और बुद्धिवर्द्धक है ॥

स्नानार्थेउक्तंजलम्—वाप्यांकूपेतडागे वा नद्यांवाचो-ष्णवारिणा। प्रातःस्नानंसदाकुर्यादुष्णोनैवसदातुरः ॥

वृद्धमनुः—संक्रांत्यांरविवारेच सप्तम्यांराहुदर्शने। आ-रोग्येपुत्रमित्रार्थेनस्नायादुष्णवारिणा ॥

बावली कुआं तालाब और नदी में अथवा गरम जल से हमेशा सबेरे स्नान करना उत्तम है परन्तु गरम जल सिर्फ रोगियों को लिखा है अर्थात् जिन्हें अति ठंढे दिनों में शीतल जल से स्नान करने से शरीरमें दर्द आदि वायु का विकार होजाता है उन्हें गरम जल से स्नान करना निषेध नहीं है। मनु महाराज कहते हैं आरोग्यता पुत्र मित्र और धन

और मन को शुद्ध रखना (मनस्सत्येनशुद्ध्यति। मन सत्य बोलने से शुद्ध होता है) तीर्थों का भी तीर्थ कहा जाता है॥

मनोविशुद्धंपुरुषस्यतीर्थंवाचांयमस्त्विन्द्रियनिग्रहस्तपः। एतानितीर्थानिशरीरजानिस्वर्गस्यमार्गंप्रतिबोधयन्ति॥

भावार्थः—मन की शुद्धता पुरुषों का तीर्थ सत्य वचन और इन्द्रियों का अवरोध तप है यह सब शरीर से उत्पन्न तीर्थ स्वर्ग के मार्ग को दिखलाते हैं॥

चित्तमन्तर्गतंदुष्टंतीर्थस्नानान्नशुद्ध्यति। शतशोधजलैर्धौतंसुराभाण्डमिवाशुचि॥

भावार्थः—जिन लोगों का अन्तःकरण दुष्कर्मों से दूषित है वे तीर्थस्नान से भी नहीं शुद्ध होते जैसे मद्य पात्र सैकड़ों घड़े गङ्गाजल के धोने से भी नहीं शुद्ध होता॥ शेष आरोग्यदर्पण के चतुर्थखण्ड में लिखेंगे—

विशेष विज्ञप्ति।

आरोग्य दर्पण के तृतीय खण्ड के लेख को अब हम यहीं समाप्त करते हैं। आरोग्य दर्पण के चतुर्थ खण्ड में प्रथम ज्वर चिकित्सा लिखेंगे कि जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि देशीय रीत्यानुसार ज्वरचिकित्सा न जानने के कारण तथा अंगरेजी दवाइयां खा खा के असंख्य प्राणी अकाल कालग्रास होते जाते हैं। वह ज्वरचिकित्सा परीक्षित प्रणाली हम ऐसे सुगमता से लिखेंगे कि सर्वसाधारण जन ज्वर रोग से स्वयं बचेंगे और अनेक ज्वरार्तियों को आरोग्य कर सकेंगे। उस रीति का ज्वर चिकित्सा नामक अपूर्व ग्रंथ आजतक देखने में न आया होगा। पश्चात् योगविद्या (आध्यात्मिकशक्ति हठयोग य का आद्योपान्त वर्णन करेंगे कि जिसके द्वारा अनेक जन अनेक प्रकार के अपूर्व लाभ उठा सकें जो बड़े २ महात्माओं को दुर्लभ है। तत्पश्चात् भूत पूर्व महर्षियों के अनुमान किये हुये दिनचर्या का बयान करेंगे। इस स्थल में "भारतोन्नति का वैद्यक प्रथम अङ्ग है" लिखकर, इस आयुर्वेदोक्त औषधालय में जो परीक्षित औषधियां हैं उनके सूचीपत्र लिखते हैं॥

आप लोगों का शुभचिन्तक
जगन्नाथ शर्म्मा राजवैद्य
कानसेनगञ्ज
इलाहाबाद

भारत के उन्नति का वैद्यक प्रथम अङ्ग है ।

इस विषय में हमें बहुत लम्बा चौड़ा लेख देना अभीष्ट नहीं है क्या पाठकगण नहीं जानते जैसा कि ऊपर लिखा हुआ है "धर्मार्थकाम मोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम्" फिर यह भी प्रधान २ ज्ञाताओं को विदित है कि प्रतिदिन भारत का द्रव्य विलायत (इङ्गलिस्तान) को आकर्षण रूपी नदी की अनेक धारा से बहा चला जाता है, उनमें से अधिकांश धन वाहिनी धारा वही है जो अङ्गरेजी दवाइयों के मूल्य के द्वारा संचित होकर समुद्र पार की राह लेती है प्रायः देश हितैषी विज्ञ लोग उसी द्रव्य के लिये छटपटाय २ चारो ओर अनेक कामफरेंस (जातीय समाज) और भांति २ कमेटियां कर रहे हैं, उपाय सोच रहे हैं. देशी तिजारत शिल्प विद्या आदि का प्रचार कर रहे हैं तो बताइये बड़े २ भारद्वाजादि महर्षियोंकी उपार्जित वैद्यकविद्या आदि की और देशी औषधी जो लोगों के प्रकृति के अनुकूल गुण को देने वाली, पवित्र धर्म रखनेवाली, अति सस्ती सर्वत्र सुलभ सहज में बनने वाली, आपका क्या बिगाड़े हैं जिसको आप लोग दिन प्रति छोड़ते जाते हो, यह नहीं सोचते कि उसके छोड़ने के साथ ही साथ हमारे अर्थ धर्म काम मोक्षभी छूटते जाते हैं? अर्थ के माने धनहैं सो वह धन जैसा कुछ डाक्टरी औषधी में लगता है उसे वही खूब जानता है जिसको उनसे काम पड़ता है। यह धन इस प्रकार पर विदा हुआ जिसके साथही साथ पवित्रता भी जो धर्म का प्रधान अङ्ग है नष्ट हो जाती है, क्योंकि शूकरादि अनेक मलिन और अखाद्य जन्तुओंकी चर्बी और भांति २ के घृणित पदार्थ रचित मदिरा और आसव और अनेक जन्तु निर्जल रूप उन लोगोंकी बनाई हुई कि जिनके खान पान व्यवहार को स्मरण कर सच्चे धर्मशील को वमन की दशा आ जाती है। यह कौन नहीं जानता कि घृणित द्रव्य संयोजित मद्य से बनी हुई अंगरेजी औषधियां होती हैं जो पहले

कहीं स्वप्न में भी नहीं दिखलाई देती थीं और डाकृरों का कहीं नाम निशान भी नहीं था, तो क्या हम लोग रोग में मरही जाते थे? कभी नहीं। कितने यह कहते हैं "निर्बीजापृथिवी निरौषध रसा" यहां की पृथिवी निर्बीज होगई और औषधियों का रस जाता रहा, हम कहतेहैं जरा आंख खोल कर मेटीरिया मेडीका को देखो आधी औषधियां भारत वर्षकी हैं और शारीरक विद्या और अस्त्र चिकित्साके भी मूल सूत्र इसी भारतवर्ष से विदेश गये हैं। यह यूरोप के प्राचीन इतिहासों में स्पष्ट रूपसे लिखे हुये हैं उन्हीं सब बातों को खूब पैना के अंगरेजों ने परीक्षा पूर्वक प्रकाशित की है और अब उसी के द्वारा लक्षों रुपये घर बैठे भारत से खींचे लेते हैं, क्या उक्त श्लोक उन लोगों के लिये चरितार्थ नहीं हो सक्ता? उक्त श्लोक का अभिप्राय यह है कि पृथ्वी निर्बल हो जायगी अर्थात् जहां बड़े २ बलवान शूर और पैदा होते थे वहां निर्बल कायर कुपूत उत्पन्न होंगे क्योंकि पांच तत्त्वों में से पृथ्वी तत्त्व विशेष प्रधान है और सब का आश्रय भूत है और "निरौषधि रसाः निर्गता औषधि रसाःयेभ्यः" अर्थात् अच्छी २ संजीवनी औषधियोंका रस जाता रहेगा लोग आसुरी चिकित्सा और असुर प्रिय पदार्थ के लोलुप हो जांयगे क्योंकि "औषधसहरचंगता" यदि कोई यह कहे कि यहां के वैद्य लोग मूर्ख हैं दो चार भाषा की किताब देख लिया वैद्य बन गये, रोगी जहन्नम में जांय अपनी हथफेरोसी से चार पैसा पैदा कर लेना उनका मुख्य कर्तव्य है। तो हम कहते हैं कि इसमें विद्या और औषध का क्या दोष है राजा विदेशी ठहरा वह इस पर क्यों ध्यान देने लगे और न भारत में कोई ऐसा आयुर्वेद कालिज है कि जहां विद्यार्थी लोग पूर्ण रूप से शिक्षा पावें। अगर यह कहा जाय कि यथा राजा तथा प्रजा, मुसलमानोंके राज होनेसे हकीमीकी तरक्की हुई अङ्गरेजी राजमें डाक्टरी की इसी प्रकार जिसका राज्य होगा आयुर्वेदक तत् देशीय औषधों का प्रचार भी अवश्य होगा और होता ही है देखिये अभी लार्ड डफरिन की रानी श्रीमती लेडीडफरिन ने डाक्टरी फण्ड में लाखों रुपये का चन्दा एकत्र कर गईं और उनका भार वर्तमान वाइसराय की लेडी साहबा ने

अपनें ऊपर लिया है और प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर लफटेण्ट गवर्नर उस की वृद्धि में उद्यत हैं इस कार्य का प्रधान हेतु यह कहा जाता है कि डफ़लेडी साहबा को हिन्दुस्तानी स्त्रियों पर दयाआई है पर यह गूढ़ बात कोई नहीं कहता कि इङ्गलिस्तानी महाशयों (दवाइयों) के कारखानों पर अत्यन्त दया आई है आज तक किसी लेडी को हिन्दुस्तान की असंख्य क्षुधातुर अनाथ अबलाओं पर दया न आई न उनकी मूर्खता के निवृत्त करने का विशेष प्रयत्न हुआ हां पर विलियम न्यूटन की शिक्षा पर अधिक कंटाक्ष पास किया था सो बिलकुल ढीला हो गया सारे खर्च की कसर सरिश्ते तालीम से निकाली जाती है फ़ीस जाता है कि निर्धनों के बालक विद्या के भी निर्धनी बने रहैं।

ज़बरदस्त का ठेंगा सिर पर सो भी हम लोगों को सोचना चाहिये कि यूनानी औषधियों से हमें इतनी हानि नहीं हुई क्योंकि उनमें प्रायः वनौषधियों के सेवन का प्रयोग है परन्तु डाक्टरी औषधियों से शारीरिक मानसिक दौर्बल्यता और धन धर्म का नाश हो रहा है।

देखिये प्रथम तो अति हिम प्रधान वा लवणादि देशी मनुष्यों की प्रकृति के अनुकूल परीक्षित औषध इस षट्ऋतु सम्पन्न देशीय मनुष्यों के स्वभावानुकूल नहीं हो सक्ता है।

दूसरे–प्रत्येक गोली दवाइयां भांति २ के शराब से और मलहम वगैरह सुअर आदि की चर्बी से तैयार होती हैं।

तीसरे–औषध बनाने का यंत्र बरतन स्थान और किसतरह कौन २ चीजों के मेल से कौन औषध बनाया जाता है हम नहीं जान सके।

चौथे–अङ्गरेजी दवाइयों का दाम बहुत अधिक है जहां तक जिस्से लेते बन पड़े चाहे उसमें दमड़ी की भी लागत न हो अच्छी शीशी और अच्छे २ टिकट चिपका देने से और आतुरता की तारतम्य से दाम वोही हिसाब बढ़ सक्ता है

पांचवें–प्रायः अंगरेजी औषधों में ज़हर का मेल रहता है कि धोखे में जरा भी अधिक पी जाय तो रोगी को यमालय पहुंचना दूर

नहीं है और ऐसा प्रायः देखने में आता भी है। अभी इलाहाबाद में एक बड़े भारी ओहदेदार का प्राण सङ्कट में लग गया उसी रंगी चुंगी शीशी के धोखे में।

छठें—यह विंध्य प्रान्तीय उष्ण प्रधान देश है और अनेक देशान्तरीय लोगों के यहां आने से इतना गर्म हो गया कि है शीत ऋतुओं में भी बिना कुछ ठंढी चीज खाये उदर दाह शांत नहीं होता। अंगरेजी दवा और व्यवहारों से यहां के लोगों का बल बुद्धि पराक्रम इतना कमजोर हो गया है कि जिसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति शिर की शून्यता से स्वयं सिद्ध हो रहा है वर्णन की कुछ भी आवश्यक्ता नहीं है।

सातवें—यह बात तो प्रायः सभी जानते हैं तथा पुराणों के देखने से भी जाना जाता है कि भूतपूर्व आर्य्य सन्तानगण विषयी कम होते थे इसी से वे लोग बलवान् पुरुषार्थी अधिक होते थे जब से मुसलमानों का राज्य हुआ संस्कृत विद्या का सूर्य्य अस्त हो गया हिन्दू मुसलमानों में मेल मुलाकात अधिक बढ़जाने के कारण देखा देखी एतद्देशीय लोग भी इतने विषयी हो गये कि आज के समय में वीर्य्य सम्पन्न बलवान बिरलें पुरुष पाये जांयगे।

जो रहा सहा सो भी अंगरेजों की संगति और मेल मुलाकात से चुरट एकसा बन बरांडी गर्म दिनों में भी काले बनात का कोट पतलून से और होटल का महा प्रसाद इतना हमलोगों को वीर्य हीन करदिया है कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं उसी पर जहां अति तीक्ष्ण विषैली अंगरेजी दवा सेवन हुआ कि पच्चीसही तीस वर्ष की अवस्था में यमपुर वास करने का अवसर मिल जाता है॥

यह जो हमने लिखा है कि देशी औषधियों की अपेक्षा अंगरेजी दवाइयों के मूल्य बहुत अधिक हैं, उसका कारण दिखलाते हैं। आर्य्यावर्तमें अंगरेजी औषधियां नहीं तैयार होतीं और न बननेकी कोई आशा है क्योंकि कलोमिल, क्लोरोफार्म आदि औषध बनाने के स्थान और यंत्रादि यहां निरूपन करने में कई लक्ष रुपयों का खर्च तथा विलायत

से प्रकृया कुशल यूरोपियन वैद्यों का आना असम्भव है और यहां बनने से बहुत से भेद खुलजांय तो दाम भी घट जाय और जो भक्ष्याभक्ष्य अमेध्यामेध्य मिश्रित वस्तुओं का मर्म प्रगट हो जाय तो बहुत से रोगी कि जिनको परलोक का कुछ भी भय है उन औषधियों के सेवन की अपेक्षा मरनेहीं को अच्छा समझने लगें, स्पष्टहै कि अंगरेजी दवाइयों का मुख्य स्थान विलायत है और समस्त प्रधान औषध पुटास आदि जो आज यहां पर २ में जारी है विलायत से बन के आते हैं। विचार करने का स्थल है कि विलायत में इसका कैसा कुछ कारखाना होगा और कितने बड़े २ कल होंगे जिनके द्वारा हजारों मन दवाइयां धड़ाधड़ तैयार हो जाती हैं और उन वस्तुओंका भेद अभी यही जानते हैं कि जो उनको कूट छान गला के या सत्त निकाल के औषध के रूप में करते हैं उनमें से बहुत सी चीजें ऐसी हैं कि हिन्दुस्तान में सेंत में मिलती हैं केवल लेजाने में जो कुछ खरचा पड़ता हो, और बहुत से जीव जन्तु के तन सम्बन्धी पदार्थ उसी विलायत में मिल सक्ते हैं जो पहिले मिट्टी के मोल बिकते हैं पर औषध बन जाने और टिकट के चिपकाने पर सोने की कीमत को भी मात करते हैं बुद्धिमानोंके निकट सोचने पर यह बात साफ जाहिर हो सक्ती है कि वह वस्तु बहुत कम कीमत और कम कद्र और बेकदरवाली हैं फिर उन्हीं से कितने लोग नफा उठाते हैं प्रथम तो खुद इंगलिस्तान के बड़े २ सौदागर जो हिन्दुस्तान के बड़े शहर कलकत्ता और बम्बईमें कोठी रखते हैं और किस कदर नफा लेते हैं छिपा नहीं है * फिर हरएक शहर के थोकवाले दू-

* करीब ३ वर्ष हुये मैं श्री युत महाराजा डुमरांव की चिकित्सा करता रहा और उन्हीं के साथ कलकत्ते जाना पड़ा महाराजा साहब के खास मुन्शी मुं० रणधीर प्रसाद जी के दांत बनवाने के लिये साथ में मुझे भी कई अंगरेजों की दूकानों में जाना पड़ा पांच छः सौ रुपये से किसी ने दांत का चार्ज (मूल्य) कम न किया अन्त में वैसाई उत्तम दन्त स्वर्ण निर्मित एक बङ्गवासी महाशय ने १७५) में दिया ॥

में न रखते हों बल्कि खैराती अंगरेजी दवाई बटवाया भी करते हैं * फिर कौन ऐसा शहर है जहां दश बीस डाकृर और दो चार अंगरेजी दवाईखाना न हो, बस इसी से जान लीजिये कि आर्य्यावर्त में कैसा कुछ अंगरेजी दवाइयों का प्रचार है। इस समय २० कोटि भारतवर्ष निवासिनी प्रजा है जिसमें ५ कोटि हकीमी, और ३ कोटि वैद्यक की औषध खानेवाले होंगे १२ करोड़ अंगरेजी दवा के खानेवाले जानिये। हम कहते हैं २० करोड़ में सिर्फ एक करोड़ ऐसे मनुष्य हैं जो प्रायः अंगरेजी ही दवा खाते हैं यदि येतू पूर्वापर मिला के प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक मास में सिर्फ दो रुपये के औषध खाते होंगे तो एक रुपया प्रत्येक व्यक्ति का विलायत जाता है इस हिसाब से एक करोड़ रुपया महीना और १२ करोड़ रुपया साल हुआ अर्थात् प्रति वर्ष कम से कम भारतसे अंगरेजी दवाइयों का दाम १२ करोड़ रुपया विलायत जाता है॥

हे भारत देशहितैषियो भारत दुर्दशा प्रवर्तको भारत के मित्रो आर्य्यसमाजियो ब्रह्मसमाजियो और हिन्दूसमाजियो क्यों आप लोग

* काशी में सरकारी हास्पिटल के अतिरिक्त कई महाराजों के तर्फ से भी अंगरेजी दवाइयां बटती हैं बल्कि इसी विषय में थोड़े दिन हुये कि हमने विशुद्धानन्द स्वामी (जो काशी में एक प्रसिद्ध संन्यासी हैं जिसे भारतके प्रायः महाराजे मानते हैं) से कहा कि यह काशी परम पुण्यमई नगरी में प्रायः धार्मिक गण वास करने के अर्थ आते हैं जल दोष से जहां बीमार हुये वहीं मद्यमिश्रित औषध उन्हें सेवन करना पड़ता है यदि आप ऐसे धर्मशील महात्मा चाहें तो राजाओं के ओर से एक आयुर्वेदीक औषधालय खोल दिया जावे तो बहुत कुछ धर्म की रक्षा हो सक्ती है उसका उत्तर यही दिया कि अंगरेजों का राज है तो जिसका राज उसी की विद्या कोई राजा हमारी क्यों सुनने लगे अब बतलाइये जब ऐसे २ महात्माओं की यह दशा है भांग अफीम का गोला खाने और लाखों रुपये राजों से लेकर मौज उड़ाने से काम, चाहे भारत जहन्नुम में जाय॥

घोर निद्रा में सो रहे हो ? आप लोगों की इस पर दृष्टि क्यों नहीं पड़ती ? इसका आन्दोलन और विचार आप लोग क्यों नहीं करतेहो ? इसमें केवल धन सम्बन्धी हानि नहीं है कि जिसको सब कोई जानतेहैं, बरन धर्म सम्बन्धी हानि बड़ी भारी है हाय, आप लोग देवता और ऋषि मुनि की सन्तान होकर राक्षसी क्रिया और महा घृणित वस्तुओं से मिली हुई औषधियां कि जिनका नाम लेने और सुध करने से भी स्नान हो जाय दाम देकर खरीदते हो और कैसा दाम कि बारंबार हमीं को देना पड़ता है लोकल टैक्स के अनुसार हमीं सब से रुपया लेकर शहरों और कसबों में छोटे बड़े हस्पताल जारी हैं तिसपर भी हाकिम लोग दबाव डाल कर बड़े २ आदमियों से चन्दा लिया करते हैं क्या आप लोगों की कौम में इतनी सामर्थ्य नहींहै कहो कि हम लोगों की चिकित्सा के लिये अच्छे २ वैद्य और हकीम नियत किये जांय कि जिनके औषध सेवन से हमारा लोक परलोक दोनों बनता है इसके कहने से किसी को कांसी नहीं हो सक्ती, यह बात सब कोई जानता है इस धर्म के मूल सिद्धान्त पर ध्यान दो बड़ी भारी हानि है बल्कि प्रकृति के विपरीति दैवी सृष्टि के लोगों को आसुरी सृष्टि की औषधियों के सेवन से बुद्धि की मन्दता आयुर्बल की घटती शारीरिक पुष्टता का विनाश होता जाता है जैसा कि ऊपर में लिख चुका हूं कि अति ठंढी विलायत की औषधियां इस गरम मुल्क वालों के स्वभावानुकूल गुणकारी नहीं हो सक्तीं ॥

सोचने की बात है कि जिन हंस पक्षियों का आहार दूध और मोती प्रभृति उत्तम २ पदार्थ हैं उनके बच्चों को बगुलों का अथवा गृद्धादि मलिनाहारी पक्षियों का भोजन दिया जाय तो क्या उन्हें लाभ होगा, यदि इस लेख पर कोई तर्क करै कि इस देश के वैद्य हकीम अंगरेजी औषधियों की बड़ाई द्वेषभाव और हाह बुद्धि से नहीं करते और न करेंगे ? यह बात ठीक नहीं है उत्तम पदार्थ को कोई भी बुराई नहीं कर सक्ता और न हो सक्ती है हम न्याय पूर्वक कहते हैं केवल भारतीय व्यवहार को देखिये तो कारण हमारे प्राचीन आर्य्य महर्षि गण निर्दृष्ट

कर गये हैं बड़े २ पण्डिताभिमानी इउरोपीय चिकित्सक गण अद्यावधि कुनैन को सेवाय मेलेरियां फीवर के एवं कुईनाइन व्यवहार के कणमात्र अधिक कुछ कह सके हैं ? इसमें कोई सन्देह नहीं कि कूईनाईन ज्वर दमन करने में एक अपूर्व औषध है परन्तु इस पर आर्य्य सन्तान गण को आश्चर्य न होना चाहिये, यह तो आयुर्वेद ही कहता है "तिक्त द्रव्यंज्वरांजयेत्" अर्थात् कटु चीज ज्वर को जीतता है तो कूईनाईन के सेवन से ज्वर छुटही गया तो कौन आश्चर्य हुआ लेकिन ज्वरादि कोई रोग क्यों न हो। अधिक तिक्त औषध का सेवन करना आयुर्वेद विरुद्ध है और कूईनाईन के सेवन से भारत की कैसी दशा हो रही है और इस से फल की अपेक्षा अफल क्या है कोई भी दृष्टि नहीं देता है ॥

अति तिक्त द्रव्य के अधिक मात्रा व्यवहार से निम्न लिखित रोग हो जाते हैं ॥

चरक सूत्र स्थान अध्याय २६ में लिखा है। अधिक तिक्त औषध के खाने से वह तिक्त अपने रुक्षादिस्वभाव से रस रुधिर मांस मेद अस्थि मज्जा और शुक्र में रुक्षता और शिरासमूहों में खरता उपस्थित करता है, शारीरक बल नाश, ग्लानि मोह भ्रम मुखशुष्कता एवं अनेक वात-रोग उत्पादन करता है ॥

यही दोष भावप्रकाश के पूर्वखण्ड और सुश्रुतादि ग्रन्थों में भी पाये जाते हैं। अगर कोई कहे कि शुक्र तारल्य धातु की दौर्बल्यता आदि रोग भारतवासियों को कुईनाईन के खाने से हुआ है इसका पुष्ट प्रमाण उपरोक्त ग्रन्थों से कैसे हो सक्ता है ? क्योंकि हिन्दुस्तानी लोग लाल मिर्चादि तीती वस्तु बहुत खाते हैं उसमें भी यही दोष होना सम्भव है ? हम कहते हैं उसे न मानिये अधिक कूईनाईन सेवन से यही सकल कुफल सम्बन्ध में, विलायत और अमेरिका के प्रसिद्ध २ डाक्टरों ने जो अपनी किताबों में परीक्षा पूर्वक लिखा है जिसे मैं संक्षेप से नीचे लिखता हूं उसे तो मानेंगे ॥

ए० वी० गारड एम० डि० एफ० एस ने अपने पुस्तक के द्वादश संस्करण २६ पृष्ट में लिखा है कि अधिक मात्रा कूईनाइन का सेवन

हृदय संबन्धी क्रिया की जड़ता भाव करता है जिससे रक्त का गमनागमन अर्थात् कम होने में आक्षेप रोग मृत्यु पर्य्यन्त हो सक्ता है ॥

एम, डी, ने अपनी पुस्तक के ११ चाप्टर के ५११ पेज में लिखा है कि कुईनाईन अधिक दिन सेवन करने से निम्नलिखित उदर व्यथा उपस्थित होती है जैसे पेड़ू में उष्णता और भारी मालूम होना सूखी आंकी आना या जी मचलाना यह क्या और भी प्रबल उदररोग हो जाता है।

कुईनाईन की क्रिया संबन्ध में और बातों के अतिरिक्त यह विषय ध्यान देने लायक है कि जो कुईनाईन का विकार शरीर में व्याप्त हो थीव २ में देखा गया है एवं म्यलेरिया विष शरीर में जो संपूर्ण उपद्रव उपस्थित करे. उसके द्वारा शरीर में रक्त का परमाणु कम और विकृत भावापन्न हो शरीर रक्त हीनता पांडु वर्णता प्रभृति रोग सर्वाङ्गिक दुर्बलता अन्त में अभ्यागत की आरस देशा प्राप्त करता है ए, सी, कार्ड, पार, खोपेट, एम, डी, पीएच, डी, एल, एल, ४ एडीसन ११७ पेज देखो ॥

कूईनाईन अधिक दिन सेवन करने से प्रसंग करने की शक्ति केवल घटही नहीं जाती किन्तु मैथुन शक्ति का एक बारगी लोप हो जाता है और रात को स्वप्नावस्था स्वप्नदोष प्राय घेरता है। टी, एफ, एलेन, एम, एमडी, तृतीय चाप्टर के २३२ पृष्ट में देखो ॥

प्लीहा और यकृत वृद्धि एवं शूल होता है हेनरी यक एम, आर, सी, एम, १०२ पृष्ट में देखो ॥

रिचार्ड हिउजेस एल, आर, सी, पी, ने अपने ४०९ पृष्ट में क्या लिखा है देखो ॥

अधिक कूईनाईन सेवन से दृष्टि में एक विलक्षण दोष उत्पन्न होता है यहां तक कि अंधे हो जाते हैं एवं शिरपीड़ा घूर्णायते शिर भारी होना और धिनाई फूटता है ॥

इस स्थल में मीतिष्ठ देश वासी पुरुषों को विचार करना चाहिये कि अति हिम प्रधान देशीय अंगरेज लोग जो शरीर से अति दृढ़ मद्य मांस खाने वाले और बलवान हैं उन लोगों को कूईनाईन

पूर्वोक्त प्रकार पर हानिकारक है तो उष्ण देशीय क्षीण देही शाकान्न भोजी नाना प्रकार के शोच ग्रस्त आर्य्य सन्तानों को अधिक तर अव-गुण करता है इसमें अणु मात्र भी सन्देह नहीं है ॥

अन्त में हम अपने प्रिय देशी भाइयों से निवेदन करते हैं कि यदि आप लोग उक्त भयङ्कर विपद् से उद्धार पाने की इच्छा रखते हो और अपना धन धर्म और अमूल्य जीवन को नष्ट न करना चाहते हो तो भूतपूर्व ऋषियों की परीक्षित उपदेश और नियमावली का पालन करो इसी में आप लोगों का कल्याण है ॥

पाठकगण, आप सत्य जानिये कि सनातन वैदिकधर्मके परम वैरी मजहबी तास्सुब से भरे हुये कट्टर अत्याचारी यवनों के राज्य होने से भी जो धर्म नष्ट नहीं हुये वे सब धर्म कर्म आज नीतिज्ञ अंगरेजी राज में सिर्फ विलायती अमेध्य दवाइयों के सेवन से धन और मानसिकशक्ति तथा शारीरक बल समेत प्रतिदिन धर्मकर्म नष्ट और निर्मूल होते जाते हैं, अंगरेजी औषधियों की बहुतायत और गोरस की अल्पता ही का कारण है कि छोटे बड़े के तन में प्रमेह और धातुक्षीण का डङ्का बज रहा है पन्द्रह सोलह वर्ष की अवस्था में गाल चुचुक जाते हैं जिस देश के पुरुष लोहे के कवच (बख्तर) अंगरखे की भांति पहनते थे वहां अब लोगों को अच्छे मजबूत गाढ़े मोटे सूत की धोती बोझ मालूम पड़तीहै जो कई कोस बराबर दौड़े चले जाते थे सो उन्हें अब बीघा दो बीघा चलने से भी सांस फूलती है लड़कों के शक्ति बाप दादे लोग खुद अपनी शक्ति हीनता के विचार पर शिक्षा देते हैं कि भैया पांव धीरे २ रक्खा करो कहीं गिर न पड़ो। सच है कि निर्बल कुतिया को पूंछ ही भारी पड़ जाती है ॥

कोई २ कहतेहैं कि "औषधंजाह्नवीतोयं वैद्योनारायणोहरिः", तो इसका यह अभिप्राय नहीं है कि जान बूझकर महा अपवित्र तन धन धर्मनाशक मलिन पदार्थ खा लेय और यह भी कोई प्रमाण नहीं है कि खाद्य अखाद्य वस्तु जैसे बिष्टा और महामांस की बनी हुई दवा बिना विचारे खालेवे "अकर्तव्यं नकर्तव्यं प्राणैःकंठ गतैरपि" सो खाने योग्य

कभी नहीं रस सक्ते हैं हमारे लिये वही देशीय जड़ी बूटी श्रेयस्कर है, जो हमारे प्रकृति के अनुकूल हैं। मनुष्य का जन्म पञ्च विकार से होता है जिस देश को जैसी हवा जल पृथ्वी आदि के गुण हैं उसीके अनुसार मनुष्य का रंग अंग प्रकृति इन्द्रियं बोल चाल होता है (जैसे विलायत और काश्मीर के मनुष्य गौरांग, मदरास के काले, नैपाल के चपटे मुख वाले उत्तरीय पहाड़ों में अश्वमुखवाले होते हैं और वहीं के मिट्टी में जो धान्यादि उत्पन्न होते हैं उन्हीं को खाकर वे लोग जीवन काटते हैं और बिमार होने पर वही देशीय जड़ी बूटी के सेवन से तन्दुरुस्त हो जाते हैं। देखिये पश्चिम के लोग प्रायः उर्द की दाल खाते हैं उन को कोष्ठ बद्धादि कोई बिकार उत्पन्न नहीं होता है पूर्ववाले एक दिन भी खावें तो बीमार हो जाते हैं परन्तु चावल रोज खाते हैं और पश्चिम के लोग चावल बहुत कम खाते हैं। इसका मुख्य कारण देश है पश्चिम में चावल की उत्पत्ति कम है पूर्व में उर्द कम होता है वैसाही औषधों को भी जानिये। ईश्वर ने जिस देश में जिसे उत्पन्न किया है उसके शरीर रक्षा के अर्थ समस्त पदार्थों को भी वहीं उत्पन्न कर दिया है तो फिर हम लोग जान बूझ कर अपने धन धर्म को नाश करते हैं तो सिवाय मूर्खता के और क्या है॥

अंगरेजी दवाइयों के खाने से धर्म नाश होने के अतिरिक्त एक बड़ीभारी हानि और भी है कि जिसपर किसी देशीय चिकित्सक ने अब तक ध्यान नहीं दिया वह यह है कि अंगरेजी दवाइयों में अधिकांश औषध खट्टी (सलफिउरिक एसिड टार्टरिक एसिड और साइट्रिकएसिड वगैरह) क्षारद्रव्य (कार्बोनेट आफ सोडा आदि) निमक (पुटासादि) और तीक्ष्ण (लायकर आदि) हैं और हेर फेर कर सब रोगों में प्रायः दवाइयों के साथ इन्हीं का योग रहता है और सोडा एसिड अर्थात सोडावाटर लेमनेट का तो आज भारत में घर २ गंगा जल के समान वर्ताव हो रहा है और एसिड आदि याने अम्ल क्षार तीक्ष्ण और लवण, धातु को दुर्बल सत्वहीन और फाड़ कर बहानेवाले हैं और वीर्यही आयु का मूल है तो जिन औषधों से मूलही का नाश है उसके सेवन से

हम लोग आरोग्य और दीर्घजीवी कैसे हो सके हैं ? कदापि नहीं इस विषय पर सर्वसाधारण धार्म्मिक जनों को अवश्य दृष्टि देनी चाहिये अब पाठकगण इतनाही से जान सके हैं कि हम को अंगरेजी दवा खाना चाहिये या नहीं ॥

सम्बन्धी प्रश्न पत्र द्वारा पूछ सके हैं। जवाबी कार्ड या जवाब के लिये टीकट रख देवें नहीं तो जवाब बैरंग दिया जायगा ॥

भूमिका।

प्रायः लोगों के मुख से शिकायत सुनने में आती थी कि वैद्यक मत की औषधियां उत्तम और ताजी कहीं नहीं मिलतीं और यह तो सभी जानते हैं, बनियों के दूकानों में तो अक्सर सड़ी घुनी दवाइयां मिलती हैं इस अभाव को दूर करने के अर्थ यद्यपि यह दूकान तीस वर्ष से जारी है परन्तु संपूर्ण कार्य्य लोगों के रुचि पर निर्भर है, जब लोगों के चित्त में यह असर पैदा हुआ कि इस देश के स्वभाव पर इसी देश की औषध अधिक गुणकर है क्योंकि जिस देश में जो रोग उत्पन्न होता है उसी देश में उस रोग की औषधियां भी उत्पन्न हुआ करतीं हैं और अंगरेजी दवाइयां सिर्फ बनावटमात्र प्रकृति विरुद्ध हैं और भारत से प्रतिवर्ष जो १२०००००० रुपया अंगरेजी औषधोंके मूल्य विलायत जाता है क्यों जाय, जब हमारे प्रकृति के अनुकूल देशी औषध मौजूद हैं। दूसरे प्रायः गोली अंगरेजी दवाइयां शराब से और किसी २ गोली में साबुन पड़ता है और विलायती साबुन गाय सुअर आदि जीवों की चर्बी से बनती है तो जब तक हम देशी औषध से आराम हो सक्ते हैं तो क्यों अपने धन धर्म को नाश करें। तब से हम लोगों ने भी दृढ़ प्रतिज्ञ हो उपरोक्त औषधालय की वृद्धि करना आरम्भ किया है। यहां सब प्रकार की औषधियां शास्त्रोक्त रीति और सफाई से बनाई जाती हैं। जड़ी बूटी जिसका मिलना तो कठिन हुई है लोग पहिचानते तक नहीं वे सब भिल्लों के द्वारा जंगलों से मंगाई जाती हैं जैसे सरिवन, पिथवन श्योनाक गम्भारि बिधारी गुलसकरी दातुनि बिलाईकन्द ब्राह्मी रुद्रवन्ती आदि इस लिये मांग आने पर जंगली औषध भी भेज सक्ते हैं। लेकिन यह बात अवश्य याद रहे कि तैल वगैरह या अधिक दवा रेलमें मंगाने से बहुत कम महसूल में पहुंच जाता है और शीशी टूटने का भय नहीं रहता॥

यदि कोश दो कोश पर भी रेल का स्टेशन हो तो स्टेशनका नाम और किस लैन में है अवश्य चिट्ठी में लिख देवैं ॥

नियमावली ।

जिन महाशयों को विज्ञापन के अनुसार मँगाई हुई दवा माफकत न करै वह औषध लक्षण सहित लिखकर लौटा देनेसे दूसरी दवा भेजी जायगी परन्तु दवा के आने जानेका डांक महसूल रोगीको देना होगा॥

उचित है कि दवा का दाम पहले भेज देवैं वेल्यूपेबुल में मँगाने से पोष्टकमीशन अधिक देना पड़ता है । पोष्टआफिस द्वारा डांक महसूल निम्नलिखित हिसाब से लिया जाता है एक पाव तोलमें हो तो ।) आधसेर का ॥) इसके उपरान्त फी आधसेर पर ।) महसूल लगताहै अंक होने पर तौल लेवैं॥

जो लोग चार आने की भीतरही दाम की दवा परीक्षार्थ मँगावै और तेल न हो ।)॥ का टिकट भेज देने से उनके पास थैलीमें बन्द दवा पहुंच जायगी परन्तु टिकट ऐसे ढंग से बन्द करके भेजैं कि ऊपर से दिखलाई न दे क्योंकि अक्सर पोष्टमैन लोग निकाल लेते हैं ॥

जो महाशय पारसल में दवा मँगाय के (बिना किसी ऐसे कारणके जैसे पारसल टूट गया हो) वापस कर देंगे वह महा पापी समझे जांयगे और उनका नाम दगाबाजों की श्रेणी में छपा दिया जायगा । क्योंकि यह औषधालय देशोद्धार के लिये जारी हुआ है ॥

जगद्विख्यात नारायण तैल ।

इस तेल के मर्दन से या नाश देने से या गुदा में पिचकारी देनेसे लकवा आदि सब प्रकार के वायु रोग आराम होतेहैं एक पावका दाम १॥) डाकव्यय ॥)

विषगर्भतैल—शीत वायु रोग के लिये इससे बढ़कर अन्य तैल नहीं है यह तैल बहुत गर्म है जिनको अति शीतसे गठिया आदि वात

रोग हुआ हो या जोड़ों में दर्द या सूजन आगया हो इस तेलके लगाने से बहुत जल्द आराम होता है पावभर का दाम १) डाकव्यय ॥)

माषादितैल—रक्त विकार से हो या शीत से हो दोनों प्रकार के वायु रोग गठिया आदि आराम होते हैं और जिसका शरीर सूखगया हो या सूखा जाता हो थोड़े ही दिन इस तेल के लगाने से मोटा हो जाता है और लड़कों का सिठवा रोग भी छुट जाता है। पाव भर का दाम १) डाकव्यय ॥)

लाक्षादितैल—इस तेल के लगाने से कैसाहू पुरानी खांसी बुखार क्यों न हो बहुत जल्द आराम होताहै पावभरका दाम १) डाकव्यय ॥)

कामलाक्षादितैल—इस तेल के लगाने से शरीर में ताकत और धातु बढ़ता है और बदन का पीलापन जाता रहता है. पावभर. तेल का दाम २) डाकव्यय ॥)

चन्दनादितैल—इस तेल के लगाने से शरीर में सुरखी आती है बल बढ़ता है शिर की गर्मी हाथ पैर का चलना उन्माद इत्यादि छुट जाते हैं पावभर तेल का दाम १) डाकव्यय ॥)

त्रिफलादितैल—इस तेल के लगाने से बदन की खजुली जलन लाल २ चट्टे पड़ जाना नसों में सुरसुराहट होना खून बिगड़ जाना ये सब बहुत जल्द आराम होता है और जो खून की बीमारी पुटास सालसा आदि के पीने से न आराम हो तो इस तेल के लगाने से आराम होता है इस तेल से हजारों बीमार अच्छे हुये हैं एक पाव का दाम ॥।) डाकव्यय ॥)

अनुभूतदन्तरोगाशनि चूर्ण—इस चूर्ण को दांतों में रगड़ने से दन्त-शूल दांत से रक्त आना दांतों में पानी का लगना हिलना और मुख की दुर्गन्धि निस्सन्देह जाती रहती है। एक डिब्बी का दाम ।) डाक व्यय ।)

वृहत्अपामार्ग क्षार तैल—इस तेल के साम सवेरे ५ विन्दु कान में डालने से निस्सन्देह कर्णशूल कर्णस्राव कर्ण शब्द और थोड़े दिन का बहिरापन आराम होता है एक शीशी तैल का दाम ।-) डाकव्यय ।)

व्याघ्रीतैल—इस तेल के नाश लेने से कैसीहू पीनस की बिमारी क्यों न हो अर्थात् जिसके नाक से मवाद और दुर्गन्धि आने लगती है एक पक्ष में आराम होता है दाम ॥) डाक व्यय ।)

कुमारकल्पद्रुल वटी—अर्थात् (मिठवा की गोली) कैसाहू बालक मिठवा रोग से क्यों न सूख गया हो अनुपान पत्र लेखानुसार इस गोली के खिलाने से बालक आरोग्य हो तैय्यार हो जाता है दाम ॥) डाक व्यय ।)

प्रमेहारि चूर्ण ।

आज कल आर्य्यावर्त में एक भी मनुष्य ऐसे न मिलेंगे कि जिन्हें धातु की शिकायत न हो, बालक से बूढ़े तक इस रोग में ग्रस्त हैं, बहुतेरों के मालूम भी नहीं सिर्फ इतनाही कहेंगे कि हम इतना खाते पीते हैं बदन में नहीं लगता है, फिर धातु रोग यह ऐसा खराब रोग है कि शीघ्र यत्न न करने से जड़ थाम लेता है और कुछ दिन बना रहने से दूसरी बिमारी खड़ी हो जाती है जैसे नजला, जीर्णज्वर, तपेदिक खांसी, दमा, अतीसार, कोष्टबद्ध, अग्निमन्द, नेत्र, दांत रोग इत्यादि और भी जितने रोग हैं सब धातु की कमजोरी से होते हैं। धातु दुर्बल होने का लक्षण यह बहुत ठीक है, कैसा ही उमदा खाना खावे शरीर तैयार चिकना ताकतवर न हो, शरीर मोटा भी हो तो आलस्य से भरा रहै, भीतर खफीफ गरमी बनी रहै, पढ़ने लिखने में चित्त न लगें, मन फिकर मन्द और उदास रहै, जैसे बहुत रास्ता चलने में शरीर थक जाती है वैसा ही शरीर ढीली और सुस्त कभी २ हो जाया करै प्रसंग की की इच्छा कम हो, हो भी तो शीघ्रही वीर्य्यपात और आनन्द रहित हो, ऐसे लोगों का धातु भी कई प्रकार से जाता है जैसे दिशा के प-

हिले या पीछे गिरना, दिशा फिरते समय मल उतरने के लिये कांखने से मूत्र मार्ग से धातु का ढरक आना; मूत्र सफेद जम जाना; स्वप्न दोष होना, या सफेद शीशो में मूत्रको एक दिन रात काग से बन्द कर रखने से मूत्र में जाला २ सा या गदला नीचे जम जाना इत्यादि किसी प्रकार से धातु क्यों न जाता हो मनोहारिचूर्ण समूल नष्ट कर धातु को गाढ़ा करता है। अगर छ महीने से रोग हो तो १ डिब्बी चूर्णसे आराम होता है १ वर्ष से हो तो २ डिब्बी चूर्ण से और ५ डिब्बी चूर्ण के खानेसे कैसाहू पुराना धातु रोग हो आराम होता है। सुजाक आराम होने के बाद इस चूर्ण के खाने से फिर सुजाक नहीं उभड़ता। कैसा ही दुबला मनुष्य हो बदन की हड्डी तक दिखाती हो ५ डिब्बी तक चूर्ण खानेसे दूनी शरीर हो जाती है। मुख से या दिशा से खून का गिरना, सूखी खांसी का सदा बना रहना, नजला आदि जो धातु से सम्बन्ध रखते हैं सब आराम होते हैं तारीफ इसमें यह है कि इस चूर्ण के सेवन से दस्त कब्ज न हो के और दस्त खुलासा होने लगता है। १ डिब्बी चूर्ण का दाम ।।=) डाक महसूल ।)। और ।।।) महसूल में डिब्बी चूर्ण जा सक्ता है चूर्ण खाने का विधान पत्र छपा हुआ दवा के साथ है॥

कामदेवचूर्ण।

इस चूर्ण के सेवन करने से धातु अत्यन्त गाढ़ा और पुष्ट होताहै। धातु पुष्ट करने वाला इससे बढ़कर अन्य औषध नहीहै। कैसाहू पतला पानी के समान धातु क्यों न हो गया हो ४० दिन के खाने से धातु गाढ़ा हो जायगा, हम शपथ पूर्वक कहते हैं चाहे उमर भी कुछ ज्यादा होगई हो कभी लड़के नहीं हुये हों, अगर स्त्री पुरुष दोनों छ मास पर्य्यन्त परहेज सहित कामदेव चूर्ण का सेवन करें तो निस्सन्देह गर्भाधान रहेगा और ताकतवर लड़का पैदा होगा अगर फर्क पड़े तो १००) दण्ड देवें। अगर तीन डिब्बी तक इस चूर्ण को बराबर खाता जावे तो उसका वीर्य्य अत्यन्त गाढ़ा पत्थल के समान बनजाी, कपूर के समान श्वेत, पात होने पर गोलाकार जमा हुआ जो विभाग करनेसे भी अलग

न हो और मस्तक में आनन्द का देनेवाला हो। शर्त यह कि पथ्य से रहे एक डिब्बा चूर्ण का दाम १) डाक महसूल ॥) दो डिब्बा ।।।) महसूलमें जा सक्ता है॥

नयनामृतसलाई--चश्मा लगाने की जरूरत जाती रही। यह सलाई शास्त्रीय क्रम से अनेक नेत्र गुणकारी औषधियों के स्वरस में संशोधन कर बरसों में बनायी है नेत्रों में केवल सलाई के, फेरनेही से धुन्ध, माड़ा, जाला, आंसू का बहना खुजली और रतौंधी जाती रहती है इस सलाई को प्रतिदिन एक दफे आंख में फेरने से आंख में किसी किस्म की बिमारी न होगी और कुछ रोज के अभ्यास से चश्मा लगाना छूट जाता है। एक सलाई १० वर्ष के लिये काफी है हर एक सलाई के एक डिब्बी अमृताञ्जन के दाम ।॥) डाकव्यय ।) में कई एक सलाई जासक्ती है॥

विशूचिकान्तक वटी--अर्क कपूर से भी बढ़ कर यह बड़ी गुणदायक है निश्चय है कि यदि हैजा के प्रारम्भ होतेही अनुपान पत्र लिखानुसार वटी खिला दिये जाय (भाग्य की बात तो दूसरी है) तो कभी हैजे से रोगी न मरे। इस गोली से असंख्य बिमार अच्छे हुये हैं सार्टिफिकट भी मौजूद हैं। ५० गोली का दाम ॥) डाकव्यय ।)

सुजाक की दवा--कैसाहू पुराना सुजाक हो २० रोज में अवश्य आराम होगा दाम ३) डाकव्यय ॥)

कोष्टवद्धारि चूर्ण--इस चूर्ण को रात्रि में सोते समय खाने से सबेरे खुलासा दस्त होगा २० मात्रा का दाम ।) डाकव्यय ।)

आश्चर्य्यबालकों की औषध--हजारों लड़के मरने से बच गये हैं इस दवा के खाने से पसुरी का चलना खांसी बुखार पेट में दर्द होगा इत्यादि जितने बालकों के रोग होते हैं आराम होते हैं, दाम ॥) डा० ।)

गर्भ चिन्तामणि रस--जिन स्त्रियों का कच्चा गर्भ गिर जाता है उनके वास्ते यह अमृतही है। इस औषध के प्रभाव से पूरे महीने

में आरोग्य लड़का पैदा होता है परंच गर्भाधन से लेकर जब तक लड़का पैदा न हो बराबर दवा खाना होगा पहरेज के साथ दाम १।) डा० ।)

उदरशूलघ्न वटी--यह उस पेट के दर्द को आराम करती है है जो प्रायः लोगों को महीने दूसरे महीने चौथे छठे महीने बड़े ज़ोर शोर से दर्द उठता है यहां तक कि मरने की नौबत आजाती है यह बिमारी औरतों को बहुत होती है इस गोली के खाने से चार पांच घंटे में दर्द जाता रहता है एक शीशी दवा का दाम ॥) डा० ।)

कामोत्पादक वटी--इस गोली को संध्या समय खाकर ऊपर से गर्म दूध पी लेने से शरीर में एक उत्तेजना आजाती है और प्रसङ्ग में कुछ स्तंभन और आनन्द होता है। परंच अति गर्म प्रकृत वाले को फायदा नहीं करती एक शीशी जिसमें ४० गोली हैं दाम ॥) डा० ।)

नपुंसकार वटी और तिला--इस वटी के खाने से और तिला के लगाने से ४० रोज़ में पन्द्रह बीस वर्ष तक का नपुंसक जो नस मारी गई हो आराम होता है तेल से छाले आदि नहीं पड़ते पूर्ण मात्रा दोनों औषध का दाम २) डा० ।)

बुद्धिवर्द्धक अर्क--इस अर्क के पीने से बातों का भूलना शिर का घूमना जी मचलाना आंखों के सामने अँधियारा होना पेट या छाती का जलना बुद्धि का भ्रम ये सब आराम होते हैं एक शीशी का दाम ॥) डाकव्यय ।)

अर्क खूनसफा--यह अर्क मुण्डी आदि औषधियों से खींचा गया है इसमें सालसापरैला आदि से सौ अधिक गुण है १ बोतल का दाम ॥) परन्तु यह अर्क रेलद्वार जा सक्ता है और ४ बोतल से कम न मँगावें ॥

अपूर्व दाद की दवा--निस्सन्देह इस महोपकारी देशी औषध के समान कोई अंगरेजी औषध भी ऐसा उम्र नहीं है कैसीहू

पुरानी दाद तमाम शरीर में क्यों न फैल गई हो ५ दिन के लगाने से समूल नष्ट हो जायगा और तारीफ इसमें यह है कि लगता बिलकुल नहीं । एक डिब्बी का दाम ।) डाकव्यय ।)

अमृतार्णवचूर्ण—कैसाहू पुराना अतीसार या आंव खून का दस्त हो इस चूर्ण के सेवन से अवश्य आराम होता है यदि इस चूर्ण से आराम न हुआ तो फिर आराम होना मुशकिल है । दाम ॥) डाकव्यय ।)

खुश्क खांसी की गोली—जिसमें मुशकिल से कफ आता है और खांसते २ मनुष्य वमन कर देता है कुक्षिमें पीड़ा होने लगती है और गरमी से जी घबड़ा उठे इस गोली के सेवन से जाती रहती है दाम ।≈) डाकव्यय ।)

तर खांसी की गोली—वह खांसी जिसमें बलगम आता हो इस गोली को मुख में डाल कर चूसने से आराम होगी एक डिब्बी का दाम ।≠) डाकव्यय ।)

जूड़ीबुखार की अपूर्व वटी—कैसाहू जाड़ा दे के बुखार बासों से क्यों न आताहो दैनिक (रोज २) अंतरा तिजारी और चौथिया शीघ्र ही छुट जाता है इसकी बहुत तारीफ करना निष्फल है सिर्फ अर्ज यह है कि जो बुखार कुईनाईन आदि किसी दवा से न छुटा हो उस ज्वर वाले को यह वटी अवश्य खिलावें एक डिब्बी जिसमें २०० सौ गोली हैं ।) डाक महसूल ।) में ४ डिब्बी जा सक्ती है, जो लोग ५) को इकट्ठा मँगावेंगे उनको ६।) का याने २५ डिब्बी भेजी जायगी । जो लोग इस गोली को धर्मार्थ बांटना चाहैं उन्हें फी डिब्बी ≠) में दिया जायगा परन्तु ५) रुपये से कम न मंगावें ॥

१ **खड़बिन्दु तैल**—यह प्रसिद्ध तैल है प्रायः लोग जानते हैं कि इसके नाश लेनेसे समलवायु शिर दर्द शिर का घूमना शिर धप २ करना

शिर में जैसे कुछ चल रहा है या काटता है ऐसा मालूम होना आंखों का हमेशा सुर्ख रहना या जलन मालूम देना आंखों से कम सूझना इत्यादि अवश्य आराम होता है दाम १ शीशी का ॥) डाकव्यय ।)

मस्तिष्कवल्लभ तैल—बहुत दिनोंसे आलोचना करते २ यह महोपकारक शिर का प्यारा तैल तैय्यार हुआ है । यथा विधि इस तेल को शिर में लगाने से निश्चय शिरदर्द या घुमरी मस्तिष्क शून्यता ऊंघ-लाहट आंखों के सामने अँधियारा हो जाना आदि और यावत् शिर के रोग हैं आराम होते हैं तथा मस्तिष्क सुशीतल और आंखोंकी ज्योति बढ़ती है इसकी सुगंध अतीव मनोहर राजा महाराजाओं के सर्वदा लगाने योग्य है । विदेशी तैलों की अपेक्षा यह तैल भारतवर्ष में विशेष फल प्रद है । एक शीशी का दाम १) डाकव्यय ।) इकट्ठी १२ शीशी का दाम १०) डाकव्य २)

पामारि चूर्ण—कैसाहू खजुरी तमाम शरीर में क्यों न फैलगई हो चाहे गीली हो या सूखी इस चूर्ण के लेपन से शीघ्रही आराम होती है दाम एक डिब्बी का ॥) डाक महसूल ।)

लवणभास्कर चूर्ण—यह प्रसिद्ध चूर्णहै प्रायः वैद्यकके ग्रन्थों में लिखा है तारीफ इसमें यह है कि और चूर्णों की अपेक्षा सातदिन है स्वादिष्ट है खाने से मन प्रसन्न होता है सम्पूर्ण प्रकार की उदर की बीमारी कैसाहू पुरानी क्यों न हो कुछ दिन इस चूर्ण के सेवन करने से आराम होजाती है अगर इससे आराम न हुआ तो फिर आराम होने में कठिन समझना एक डिब्बी का दाम ॥) डाकव्यय ।)

चन्दनादि चूर्ण—स्त्रियों के रक्त रोग पर अनुभूत औषध है मासिक खून का अधिक बना रहना या बिना मासिकके रक्त का आना अर्थात् रक्त प्रदर रक्तातिसार और खूनी बवासीर को भी आराम करता है दाम ॥) डाकव्यय ।)

महाज्वरांकुश वटी--यह वटी अति शुद्ध पारा, गन्धक, सींगिया आदि तीक्ष्ण द्रव्यों से बनी है खाने में बिलकुल गरमी नहीं करती शीत पूर्वक ज्वर एकाहि अँतरिया तिजारी चौथिया चाहे जितने दिनसे आते हों एक सप्ताह के अन्दर निश्चय छूट जाता है एक शीशी जिसमें १०० गोली हैं दाम ॥) डा० ।)

अभ्रक भस्म एक सौ आंच का--यह रस का गुण गर्म नहीं है कैसाहू छोटी अवस्था के लोग इसे खावें यदि फायदा न करैगा तो नुक्सान भी न करैगा, विशेष कर वीर्यो प्रमेह का नाशक धातु वर्द्धक आयु वर्द्धक है। जिस मनुष्य को धातु रोग हो और कोई दवा फायदा न करती हो और अवस्था भी ४० वर्ष से ऊपर हो तो इसी रस को खावे दाम फी तोला ६) डा० ।)

क्षारादि चूर्ण--यह चूर्ण अति मातदिल अनेक रोगों को हटाने वाला जैसे पेट का दर्द दाह वमन गले में जलन खट्टी डकार आना गले में कफ सूख कर लपट जाना इत्यादि अजीर्ण को तो पेट में जातेही भस्म करता है एक डिब्बी का दाम ।) डा० ।)

परीक्षित बवासीर की दवा--(तेल और चूर्ण) इस चूर्ण के खाने और मसों पर तेल के लगाने से दोनों प्रकार के बवासीर रोग को फायदा पहुंचाता है दोनों का दाम ॥०) डा० ।)

पञ्चामृतकल्याणचूर्ण--इस चूर्ण के सेवन से पेट का जलन हौलदिल (कलेजा धक २ करना) जी घबड़ाना मन का उदास रहना अकस्मात् चित्त का डवाडोल होना डरना रात को भयानक २ स्वप्नों का देखना बहुत बात भूलना घुमरी आंखों के सामने अँधियारा होना मलमूत्र जल कर होना इत्यादि आराम होते हैं गर्म दिनों में इसे प्राण रक्षक जानना चाहिये पूर्णमात्रा का दाम १) डा० ।)

कासविजयभैरो चूर्ण--जब किसी औषध से खांसी न छूटे इस चूर्ण का सेवन करे क्या तब भी खांसी बनी रहेगी दाम ।) डा० ।)

इस औषधालय में और भी अनेक प्रकार की वैद्यक मत से बनी हुई गोलियां चूर्ण अवलेह आसव पाक तैल रस शुद्धधातु उपधातु विष उपविष तैयार रहते हैं और जो लोग वैद्यक मत से कोई दवा बनवाना चाहैं अथवा सोना चांदी आदि धातु अथवा उपधातु भस्म कराना चाहैं हुकुम आने से बहुत उत्तमता के साथ तैयार करके भेजा जायगा ॥

प्रशंसापत्र ।

महाशयो—सांसारिक जितने कर्म हैं जब तक प्रत्यक्ष नहीं देखे जाते लोग उनपर विश्वास नहीं लाते पं० जगन्नाथ शर्म्मा राजवैद्य इलाहाबाद में बीस पच्चीस वर्ष से चिकित्सा का काम करते हैं और कितनों बिमारों को आराम किया होगा करीब दस बारह वर्ष के लगभग हुआ कि हमारे लड़के की बारात झूंसी में साधोप्रसाद जी के यहां गई जैसाही बारात दरवाजे पर लगी कि दुलहा के भाई छेदीलाल को महा घोर हैजा हो गया कि जिसको देख के हम खुद घबड़ा गये, और पं० जगन्नाथ जी वैद्य को बुलाया उन्होंने बड़े साहस से रातभर में आराम कर दिया जिसका कि धन्यवाद हम अब तक देते हैं। हाल में हमारे समधी ला० कन्हैयालाल जी उदर रोग से ऐसे पीड़ित हुवे कि जिसका दुःख वही जान सक्ता है जिसको वह दुःख हो अनेक उपाय किये कुछ भी लाभ नहीं देख पड़ा अन्त में पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य जी ने एकही दिन रात में रोग समूल नष्ट कर दिया उस चमत्कार औषध और पं० जगन्नाथ जी शर्म्मा वैद्य को जहां तक धन्यवाद दियाजाय थोरा है आशा कि और

लोग भी जो डाकूरों को धन्वन्तरि का अवतार मान बैठे हैं अवश्य पं० जी की विद्या बुद्धि और औषध की चमत्कारी देख आश्चर्य करेंगे ॥

ठाकुरप्रसाद वैद्य
महगनी टोला–प्रयाग

श्रीयुत वैद्यवर पं० जगन्नाथ शर्म्मा महाराज जी–
नमस्ते

मेरा पुत्र विद्या माता का जो देढ़ वर्ष का था ऐसी बीमारी दस्त आदि में प्रसित हुआ और उस समय इसकी विथा देख पत्थरका हिया भी दाड़िम सा दरकता था कदापि आशा बचने की न थी और वैद्य हकीम डाकूर आदि भी जवाब दिये बल्कि जन्मपत्री देख ज्योतिषियों ने भी निराश किया वास्तव में ऐसाही था बाद इसके जब मैंने आप को समाम लक्षण रोग का लिखा और आपने जभी दवा भेजी बस औषधी खाते ही सारी बीमारी अल्प ही काल में जाती रही और तब से इस बालक को कोई रोग न हुआ पुष्ट खेलता बोलता आराम में है–इसका कहां तक धन्यवाद दूं कुछ बही नहीं ॥

सावन सम्वत् १९४५ में मुझे ऐसी बीमारी रातों दिन हिचकी की हुई कि आशा बचने की न थी और वैद्य हकीम डाकूर अताई आदि जब न अच्छा करसके तब भी आपही ने इस पापी मर्ज को भी अच्छा किया तब से मैं आप की उत्तम शिक्षा ग्रहण कर मांस मदिरा छोड़ दिया बल्कि हमारे खानदान के जो कि इस देहात में सैकड़ों घर हैं इस कुरीति को दिलोजान से एकबारगी उठादिये सुभ ॥

आप का एक दास
सुदायल दारादानगर
इलाहाबाद

लोहरडगा से

मित्रवर,

अभ्रक सेवन करते हुये मास से अधिक दिवस बीते रोग में हिताहित बोध नहीं होता पर वीर्य्य तो अवश्य बलवान प्रतीत होता है। हमारे रोग दूर करने के निमित्त यदि आप दूसरी दवा तजवीज करेंगे तो भी हम अभ्रक को न छोड़ेंगे। १ तोला अभ्रक शीशी में बन्द करके भेजिये पुड़िये में नहीं और मस्तिष्क वल्लभ द्वारा हमको आनन्द अनुभव होता है दूसरे के हृदयस्थ नहीं करा सके कभी अवसर पाकर लिखेंगे॥

पारसलपाने को उत्साही
श्वेताम्बरराय—रईस
चिकोर्दे पालकोट लोहरडगा

श्रीयुत पं० जी महाराज

महाशय!

जो चूर्ण आप से लाया हूं खांसी पर रामबाण सा गुण प्रगट किया है सो कृपा कर वही चूर्ण शीघ्र भेज दीजिये॥

रामप्रसाद—दारानगर

श्री।

भोमहानुभाव श्रीयुत वैद्यराज—नमस्ते

आप की दवा के इस्तेमाल से बहुत फायदा हुआ और चूर्ण (अर्शोनाशक) थोड़ासा खतम होने पर है सो कृपा करके एक डिबिया पेवूपेबुल पारसल द्वारा जल्दी भेज दीजिये तेल न भेजना। चूर्ण ने बहुत फायदा किया है और आप को चूर्णही काफी समझा जावे या तेल भी जरूरी है॥

टीकम सिंह मवां डाकखाना
जिला अलीगढ़ अमृतसर पंजाब कटड़ा जैमलसिंह

१८ अप्रेल १० ।

प्रिय महाशय

आप की दाद की दवा से मरीज को बहुत फायदा भया आप दया करके ४ डिब्बी दाद की दवा और बे० पे० भेज दीजिये ॥

पं० हरप्रसाद असिस्टेंट सरजन—पञ्जाब

जौनपुर से ता० १७ । ४ । ०१

श्रीयुत पं० जगन्नाथ शर्म्मा राजवैद्य महाशय जी नमस्ते ।

आपको कोटानुकोटि धन्यवाद है ईश्वर ने हम लोगों के उपकारार्थ अनेक चीजें बना दी है लेकिन दुष्ट पापी, लोभी मनुष्यों ने नष्ट भ्रष्ट कर डाला है आप सरीखे विद्वानों के हाथ लग जाने से अब दुनिया के उपकार होने में कोई सन्देह नहीं हम आप की रचित आरोग्य दर्पण पढ़ कर बहुत प्रसन्न हुये और मेरा दिल बहुत २ ईश्वर को धन्यवाद दिया करता है जो आपने आ० द० में आचार घटी लिखा है उसे तैयार कर के बिना मूल्य बांटा करता हूं तिजारी चौथिया ६ गोली से दूर होजाती है ॥

आप का कृपाकांक्षी

शीतलसिंह शर्म्मा पोष्ट० बरई जौनपुर

ॐ पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य ने हमे और हमारे परिवार को ४ वर्ष से दवा कर रहे हैं । हमने सब से उनका दया और योग्यताका अनेकानेक परिचय पाया है । उन्हें बीमार का नाडी ही से मर्ज मालुम हो जाता है और बीमारियों के इलाज में प्रायः चमत्कारी दिखाते है । वैद्यक के अलावा उन्होने बँगला भाषा में मेटिरीया मेडीका आदि ग्रन्थों को भी अच्छी तरह से पढ़ा है । उनके दवाइयों के दाम भी बहुतही सस्ते हैं ॥

तारिणीचरणघोष

गवर्नमेंट पेन्सेनर—इलाहाबाद

२६ अक्टूबर १८८२,

पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य ने बहुत दिनों में हमारी बहुत पुरानी आंख की उठने की बीमारी आराम किया। हमने बहुत दिनों तक अनेक दवाइयों का सेवन किया लेकिन किसी से कुछ भी फायदा नहीं हुआ। आखीर में हमने उनकी इलाज किया और थोड़े ही दिन में हमारी आंख की दर्द और ललाई जाती रही। अब हम बिलकुल आरोग्य हैं॥

मनमोहनलाल

इलाहाबाद

१० अप्रैल १८८५,

हम अपनी तजरुबासे कह सक्ते हैं कि कानपुर लखनऊ और बनारस में हमें जितने वैद्य मिले पं० जगन्नाथ शर्म्मा को हमने सबसे उत्तम पाया। थोड़े दिन हुये कि हमारी बहू को हैजा हुआ था और वह बिलकुल बेहोश थी उन्होंने दवा किया और आध घंटे ही में वह होश में आई और ८ रोज में वह संपूर्ण रूप से आराम हो गई॥

मोहनलाल

जानसेनगंज इलाहाबाद

ता० १५ जुलाई १८८७,

हमें पं० जगन्नाथ शर्म्मा के वैद्यक के लियाकत पर अपनी राय लिखने में बहुत खुशी है। करीब छ महीना से हमारे पिता जो कि ८० वर्ष के हैं ज्वर और खांसी से पीड़ित थे और कोई दवा से उनको फायदा नहीं मालूम होता था अन्त में हमने उनको पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य जी से इलाज करवाया। उन्हों ने ऐसा दिलभरा के उनका दवा किया कि वह बिलकुल आराम हो गये। वैद्य जी सिर्फ हमारे पिता ही को नहीं आरोग्य किया बल्कि हमारे भाई की स्त्री को जो कि अंगरेज डाक्टर के इलाज में भी मरणापन्न अवस्था में थीं उनको इलाज से आरोग्य हुईं। उनमें हमने यह गुण सर्वोपरि पाया कि वह मरीजपर अपना पूरा ध्यान

देते और मेहनत करते हैं जो कि और २ वैद्यों में मुशकिल मे पाया जाता है । यह हरवक्त रोगों को देखने के लिये मुस्तैद रहते हैं और २ वैद्यों के माफिक लोभी नहीं हैं । उनके सामने गरीब और धनवान बराबर है ॥ चिन्द्रामसाद

कोर्ट इन्सपेक्टर—इलाहाबाद

ता० १४ अपरैल १८८७,

हम बहुत खुशी के साथ अपनी राय पं० जगन्नाथवैद्य के लियाकत पर लिखते हैं हमारे छात्र फिदाहुसैन बहुत दिन से बुखार और छाती के जलन से पीड़ित था । वह बहुत दिन तक अंगरेज डाक्टरों का इलाज करता रहा लेकिन उसको कुछ फायदा नहीं हुआ । बीमारी बढ़ती गई और उसकी बचने की कोई उम्मेद नहीं थी । उसका बाप निराश हो कर अन्त में पं० जगन्नाथ शर्म्मा से दवा कराना आरम्भ किया और इतना फायदा हुआ कि दूसरे ही दिन उसकी हालत बदल गई । उनका दवा बराबर होता रहा जब तक वह अच्छा न हो गया । सिवाय इसके हमने अपने पड़ोस में दवा करते देखा है और उनको अपने काम में निहायत चालाक और लायक पाया ॥

महम्मद जहूरुद्दीन सेक्रेटरि
गवर्नमेण्ट हाई स्कूल इलाहाबाद

हमारे दहिने पैर में हाथीपांव हुआ था और हमने इस बीमारी के आराम करानेके लिये बहुत हकीम डाक्टरों का इलाज किया लेकिन किसी से फायदा न हुआ । आखीर में हमने पं० जगन्नाथ वैद्य की दवा किया और हमको बहुत जल्द आराम किया । हम इस तजरबे से कह सक्ते हैं कि वह बहुत चालाक और लायक चिकित्सक हैं—हर किस्म की सख्त बीमारियां आराम कर सक्ते हैं ॥

इलाहाबाद, दः जे० एच पेटरीज,
ता० १५-मार्च — फायरमैन ई० आई० आर०-

ता० १ नवम्बर १८८०

वैद्यराज पं० जगन्नाथ शर्म्मा ने हमें दो दिन में हैजा से आरोग्य किया—वह हैजा इस कदर बिगड़ गया था कि हमें जीने का कुछ भी आशा नहीं था हमने उनको अपने काम में बहुत होशियार और चालाक पाया ॥

-नारायणराव क्लर्क इलाहाबाद

---

१ फरवरी १८८१

पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य ने हमारे लड़कों को हैजे की बिमारी में चिकित्सा किया इसमें कुछ सन्देह नहीं कि पं० जी अपने काम में बहुत लायक हैं ॥

कन्हैयालाल

सुपरइन्टेन्डेन्ट बोर्ड इलाहाबाद

ता० ८ फरवरी १८८१

हम पांच महीने से जुलाक के रोग से पीड़ित थे—अनेक हकीम और डाक्टरों के चिकित्सा कराने के बाद हमने पं० जगन्नाथ जी वैद्य की दवा किया और बहुत थोड़े अर्से में आरोग्य हुये ॥

जगन्नाथप्रसाद क्लर्क

बहादुरगञ्ज—इलाहाबाद

ता० ८ मार्च १८८५

हमको यह लिखने में बड़ी खुशी है कि हमें पं० जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य ने पुराने जुलाक से दो हफ्ते में बिना किसी तकलीफ के आराम किया सिवाय इसके हमने अपने भाई को भी चिकित्सा उनसे करवाया जो कि खांसी और बुखार से पीड़ित थे उनको भी पं० जी ने एक सप्ताह में आराम किया। जो कुछ हमने देखा और जाना प० जी को अपने काम में बहुत चालाक और परिश्रमी और वैद्यक में पूर्ण पाया ॥

हमें यक़ीन है कि कोई आदमी जो कि पं० जी से चिकित्सा करवा येगा कभी निराश न होगा विशेषकर गरीब रोगी जिन पर वह अधिक ध्यान देते और परिश्रम करते हैं ॥

जगन्नाथ प्रसाद तिवारी
पि० डबलु० डी० एकजामिनर्स
आफिस इलाहाबाद

ता० १६ अपरैल १८८१ ।

हमारी स्त्री को इस क़दर एक सख़्त बिमारी हुई थी कि हमे उनका जीवन का कोई भी भरोसा नहीं था हमने उनको आराम करवाने के लिये बहुत रुपया खर्च किया और अनेक डाक्तरों से इलाज करवाया लेकिन सब निष्फल हुआ । इस नाजुक मौके में हमने पं० जगन्नाथ वैद्य के नाम सुनकर उनसे अपनी स्त्री का इलाज करवाया और वह बहुत थोड़े दिन में आराम हो गई । वह बहुत यशवान और मरीजों के ओर ध्यान देते हैं—और उनकी दवाओं का फायदा खिलातेही मालूम हो जाता है ॥

युगलकिशोर
इलाहबाद

---

८ नवम्बर १८८१ ।

पं० जगन्नाथ शर्म्मा ने हमारे लड़के का इलाज किया जिसे आमाशय कि बिमारी बहुत दिन से थी पं० जी बहुत ध्यान से बिमारी का इलाज करते हैं ॥

हीरालाल—आर—एम—एस
इलाहाबाद

बरेली से ता० १७,। ५ ९१

महाशय

मुझे ३ वर्ष से आंख की बिमारी थी यहां आप की दूकानमें नयनामृत सलाई कई आदमियों ने लिहा सभों को आराम होगया परन्तु हम को अब तक पूरा फायदा नहीं हुआ और कोई दवा हो तो भेजो।

गोबिन्दराम बजाज
बरेली

फतहगढ़ से

महाशय,

आप ने जो चन्दनादि चूर्ण प्रदर रोग के वास्ते भेजा था उससे आराम हुई।

पं० शिवानन्द मदर्स पटवारी स्कूल
फतहगढ़

बांसबरेली से ता० २३ जुलाई

श्रीयुत् वैद्य शिरोमणि महाशय परिडत जगन्नाथ जी शर्म्मा पालागन, निवेदन यह है कि आप के अर्क खूनसफा का २० बोतल मैं ने पिया जो मेरे शिर और चेहरे के बालों की जड़ में फुंसियां निकलती और खुजलाती थीं सो अब निकलना बन्द होगया मैं आप को बहुत २ धन्यवाद देता हूं मैं ने डाक्टर अंगरेज और हिन्दुस्तानी वा हकीम यूनानी वगैरह का इलाज किया परन्तु कुछ फायदा न हुआ तो आप की दवा से आराम हुआ इसलिये आप अधिक धन्यवाद के योग्य हैं परमात्मा आप को यश कीर्त्ति लाभयुक्त करें॥

आप का कृपाभिलाषी
ठाकुर लाखन सिंह वर्म्मा रईस
मु० बुधौली बांसबरेली

जिला हजारीबाग से

महाशय

आप का बुखार का दवा भेजा हुआ मिला सो बहुत बढ़िया था उससे तीन आदमी को आराम होगया बल्कि बड़ी शीशी में दवा कुछ बच भी गया है अब कृपा कर एक आदमी के लिये बुखार की दवा वेल्यूपेबुल पारसल में बहुत जल्द भेज दीजिये ॥

श्री शम्भूराम गनपतराम

गोमीआवा जिला हजारीबाग

——:•:——

मित्रवर आप का दवा विषगर्भ तैल बहुत फायदावन्द है इसलिये फिर एक शीशी पावभर का वी० पी० पार्सल द्वारा हमारे नाम जल्द वापसी डांक भेजिये देरी न कीजियेगा दवा ठीक होने के सबब हम उम्मेद करते हैं कि बहुत दवाइयां आप की दूकान से हम मँगावेंगे ॥

धन्य है क्यों न फायदा हो जब कि वेद की रीति से बना है ॥

आप का कृपाकांक्षी

बाबू रामसिंह—रेवती बलिया

——

हरदोई से

महाशय नमस्ते

दाद की दवा आप का अत्यन्त उत्तम है मुझको उसके लगाने से अतिलाभ हुआ । वृहत्अपामार्गक्षार तैल की भी एक शीशी वेल्यूपेबुल द्वारा भेज दीजिये ॥

झब्बूलाल भजनलाल दूबे

बावनहरदोई

फरुक्खाबाद से

महाशय

पश्चात् नमस्कार के विनय यह है कि शिवानन्द मिश्र की मार्फत जो दवा दस्तों की हम अपने वास्ते आप के यहां से अमृतार्णव नामक चूर्ण मंगवाया यह तो रामबाण होकर हमारे वक्त शत्रु रोग को भगा दिया अब इस समय दस्तों के बारे में हमको शिकायत बाकी नहीं है हमने दस्तों में बहुत हकीम व वैद्यों की औषधी सेवन की मगर किसी की औषधी से कुछ भी फायदा न हुआ अब आपको अन्तःकरण से धन्यवाद देते हैं आप बुखार की दवा वेल्यू पेबुल द्वारा निम्नलिखित पते से भेज दीजिये ॥

बद्रीप्रसाद चौबे रावेश—निवासी ग्राम
माधोनगर—फरुक्खाबाद



आरोग्यदर्पण ॥

विविध वैद्यक विषयक सम्बन्धी अपूर्व्व पुस्तक

चतुर्थखण्ड

जिसमें आयुर्वेद मत से ज्वरचिकित्सा और आध्यात्मिकशक्ति
प्रकाशार्थ योगशास्त्र का सम्पूर्ण अङ्ग पण्डित जगन्नाथ
शर्म्मा राजवैद्य सम्पादक प्रयाग समाचार ने सर्व
साधारणके उपकारार्थ रचकर प्रकाश किया

जगद्विख्यात

आयुर्वेदोक्त औषधालय जानसेनगञ्ज

(प्रयाग)

"धार्म्मिकयन्त्रालय" में मुद्रितहुआ ॥

द्वितीय बार १००० —— मूल्य फी पुस्तक ।।।)

सन् १९०१ ई०

सूचीपत्र।

ज्वर।

भाषा में इसे बुखार, अङ्गरेजी में फिवर (Fever) और यूनानी में तप कहते हैं। ज्वर वह रोग है जिसका अधिकार देश मात्र पर सर्वदा सर्व काल में बनाही रहता है, किसी २ वर्ष में सर्व देशों में अथवा एक दो देशों में ज्वर का इतना प्रचंड वेग बढ़ता है कि मनुष्य मात्र को जड़ी भूत कर देता है उस समय लोगों की यह दशा होती है कि कोई किसी को पानी तक देने लायक नहीं रहता। इसके रोकने के लिये आयुर्वेदविद् विद्वानों ने तथा यूरोपीय चिकित्सकों ने अनेक उपाय और यत्न किया परन्तु कोई अत्यन्त उपयोगी तथा लाभ दायक यत्न न निकला और न कोई ऐसी औषधी किसी से निकाली जो मनुष्य मात्र के ज्वर को एक मात्र दूर कर देय, यही सबब है कि जो प्रत्येक खण्ड के चिकित्सकों ने ज्वर कोही सब से बड़ा और भयानक रोग समझ कर अपने २ ग्रन्थ और चिकित्सा कर पुस्तकों में ज्वर का विस्तार और विशेष वर्णन और प्रतीकार लिखा है इस लिये अधिकांश ग्राहकों के अनुरोध से आज हम भी भूत पूर्व आर्य्य चिकित्सकों के मतानुकूल ज्वर रोग की प्रधानता और पूर्व रूप, नाम, आदि कारण और परीक्षित चिकित्सायें लिखते हैं आशा है कि देशहितैषी गण अवश्य हमारे इस प्रमाणित वर्णन पर ध्यान देंगे और निम्नलिखित लक्षणों से पूरा २ निदान एवं चिकित्सा करके महा कराल ज्वर रोग ग्रसित रोगियों के दुःख को दूर करेंगे॥

"ज्वरोत्पत्तिः"

पूर्व काल के महर्षियों ने ज्वर को सब रोगों का स्वामी और रुद्र कोप करके माना है और इसी को मृत्युराज और प्राण नाशक ठहराया है और महादेव जी के उस अर्द्ध नयन से इस की उत्पत्ति लिखी है कि जिस के स्पष्ट खोलने से प्रलय होती है—

"ज्वरो रोगपतिः साक्षान्मृत्युराजोऽशनोऽन्तकः।
क्रोधो दक्षा ध्वंर ध्वंसी रुद्रोर्द्ध नयनोद्भवः॥"

जैसा कि सुश्रुत में लिखा है॥

सन्निपात (सरसाम) या एक प्रकार के नवीन लक्षण युक्त जिसे अङ्गरेजी में (एपोप्लेक्सि) कहते हैं हो जाता है और उस रोगको न थामने से रोगी बहुत जल्द मर जाता है. लेकिन वैद्य लोग इस पर बहुत कम ध्यान देते हैं यहां तक कि आम ज्वर पर (कच्चा बुखार) में भी उष्ण क्वाथ या रस देके पित्त बिगाड़ देते हैं, हां, कुछ २ हकीमों का ध्यान इधर रहता है लेकिन वे भी पित्त में ठण्ढक अधिक पहुंचा देते हैं। जैसे मूढ़ वैद्य लोग शीतसे डरा करते हैं, कहीं शीत न आ जाय, वैसाही अज्ञान हकीम लोग भी गरम से डरते हैं कि कहीं गरमी शिर पर न चढ़ जाय, इसलिये ज्वर की चिकित्सा बहुत विचार के साथ करना चाहिये ॥

ज्वर संप्राप्ति हेतु (ज्वर होने का सबब)

मिथ्याहार विहाराभ्यां दोषाह्यामाशयाश्रयाः ।
वहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यू रसानुगाः ॥

(मिथ्याहार) ऋतु की प्रकृतिके विरुद्ध भोजन, ऊन कजून भोजन, विना भूख में खाना, भूख लगने पर न खाना, कच्चे फलों को खाकर पानी पीना वासी भात माठा या तेलका वरा खाना अथवा तेल दूध, दूध या दही मूली एक साथ में खाना इत्यादि (मिथ्या विहार) बहुत धूप में अथवा अग्नि के सन्मुख रहना वाद अति काल तक पानी में भीजना, वर्षा में बहुत बौछार में रहना, रास्ते से बहुत थके हुये आना तत्क्षण जल पी लेना या स्नान कर डालना, कभी छाया कभी ओस में सोना, जुखाम की रक्षा न करना, मर्भार काल में स्त्री प्रसङ्गादि, इन्हीं सब कारणों से आमाशय में स्थित जो वातादिक दोष बिगड़ कर रस धातु में मिल के जठराग्नि (जिससे खाना पचता है) को वाहर निकाल ज्वर रोग को उत्पन्न करता है ॥

"ज्वर पूर्व रूपम्"

श्रमोरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयन प्लवः ।
इच्छाद्वेषौ मुहुश्चापि शीतवाता तपादिषु ॥
जृम्भांग मर्दोगुरुता रोमहर्षो ऽरुचिस्तमः ।

अप्रहर्षश्च शीतं च भवन्त्युत्पत्स्यति ज्वरे॥
सामान्यतो विशेषात्तु जृम्भात्यर्थं समीरणात्।
पित्तान्नयनयोर्दाहः कफान्नान्नाभिनन्दनम्॥

निम्नलिखित लक्षण यदि किसी व्यक्ति में पाये जांय तो जानना कि उसे ज्वर आनेवाला है जैसे विना चले फिरे थकाई मालूम होना, किसी बात में मन न लगना (विवर्णत्व) शरीर का रङ्ग और का और होना, अक्सर ज्वर के पहले शरीर का रङ्ग कुछ बदल जाता है। मुख बे स्वाद, नेत्र में आंसू भरि आना (जैसे अभी सो के उठा हो) शीत, हवा और घाम कभी किसी को अच्छा लगे कभी बुरा मालूम हो, जँभुआई शरीरमें दर्द देह भारी, रोम खड़े होना या जाड़ा मालूम देना, अरुचि, आंख में गरमी, मन उदास और ठण्ढ का लगना यह सब लक्षण उपस्थित हो या दो चार लक्षण कम भी हो निस्सन्देह यह लक्षण ज्वर आने के पहले होता है यह सामान्य लक्षणहै॥

अब विशेष लक्षण सुनिये—अत्यन्त जँभुआई और शरीर में दर्द वा ऐंठन हो तो जानना कि इस को वातज्वर होगा। नेत्र में दाह कुछ शिर दर्द पित्त ज्वर आनेवाले के पहिले और अन्न पर अनिच्छा कफ ज्वर आनेवाले के पहिले होता है॥

ज्वर का सामान्य रूप केवल इतना ही है कि पसीना का न आना, शरीर बहुत गरम, सम्पूर्ण शरीर जकड़ सी जाय या दर्द करै बस॥

वातज्वर लक्षणम्।

वेपथुर्विषमो वेगः कंठोष्ठ मुख शोषणम्। निद्रानाशः क्षवःस्तम्भो गात्राणां रौक्ष्यमेव च॥ शिरो हृदात्र रुक् वक्र वैरस्यं वद्धविट्कता। शूलाध्माने जृंभणं च भवत्यनिलजे ज्वरे॥

वातज्वर में इतने लक्षण रहते हैं। शरीर में कम्प, ज्वर, कभी बहुत जादा तेज हो जाय कभी कुछ कम हो जाय, गला, ओठ और मुख सूखे, नींद और छींक न आवै, शरीर रूखी शिर छाती और हाथ पैर वगैरह में

दर्द या फाटन हो, मुख का जायका खराब, कोष्ठबद्ध (दस्त न हो हो भी तो सूखा और थोड़ा सा) पेट में कुछ हलकी पीड़ा और पेट फूला सा रहे एवं जमुहाई आना, इतने सब लक्षण अथवा कुछ कम लक्षण होने से वातज्वर जानना ॥

पित्तज्वर लक्षणम् ।

वेगस्तीक्ष्णो ऽतिसारश्च निद्राल्पत्वं तथा वमिः । कंठोष्ठ मुखनासानां पाकः स्वेदश्च जायते ॥ प्रलापो वक्त्र कटुता मूर्च्छादाहो मदस्तृषा । पीत विण्मूत्र नेत्र त्वक् पैत्तिके भ्रम एव च ॥

बुखार बहुत तेज हो, दस्त पतला, नींद कम, गला, ओठ, मुख और नाक इनसे गरम भाफ निकले और वे सुर्ख हो जांय, पसीना बहुत आवे या कम आवे परन्तु कुछ न कुछ आता ही रहै, प्रलाप (बड़बड़ाना, आनतान बकना) मुख कडु, बेहोशी पेट में जलन या समस्त शरीर में दाह, नेत्र में जलन या नशासा मालूम हो, पिपासा बहुत, दिशा, पेशाब, आंख और शरीर कुछ पीले मालूम दे और घुमरी, यह लक्षण पित्तज्वर वाले के होते हैं ॥

श्लेष्म (कफ) ज्वर लक्षणम् ।

स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यं मधुरास्यता । शुक्ल मूत्र पुरीषत्वक् स्तंभस्तृप्तिरथापि च ॥ गौरवं शीतमुत्क्लेदो रोमहर्षोऽतिनिद्रता । प्रतिश्यायोऽरुचिः कासःकफजेऽक्ष्णो-श्चशुक्लता ॥

अब कफ ज्वर का लक्षण कहते हैं । बहुत मन्द ज्वर रहै, देह चिपचिपाय, आलस्य, मुखमीठा, मल मूत्र का रंग सफेद, शरीर जकड़ी सी रहै,जैसे खूब खाये हुये का पेट भरा रहता है वैसे पेट भरा रहै शरीर भारी, जाड़ा मालूम होना, जी मचलाना, रोम खड़े होना, नींद अधिक आना, नाक बहना, अरुचि, खांसी और आंख सफेद हो तो जानना कि कफ ज्वर है ॥

द्वन्द्वज ज्वर के लक्षण का श्लोक न लिख कर खुलासा रीति पर दिखलाये देते हैं कि जिस ज्वर में कुछ वात ज्वर के लक्षण और कुछ पित्तज्वर के लक्षण मिले तो वात पित्त ज्वर जानना ॥

वात कफ ज्वर में—वात ज्वर और कफ ज्वर के कुछ २ लक्षण और जोड़ों में दर्द एवं शिर का जकड़ना यह विशेष लक्षण मिलते हैं ॥

पित्त कफ ज्वर—जिस ज्वर में मुख लसलसा और कड़ुआ, नेत्र में झांपी सी लगी रहै, बेहोसी, खांसी, पियास, कभी दाह कभी जाड़ा लगे उसे पित्त कफ ज्वर जानना। अब उपरोक्त कहे हुये ज्वरों की चिकित्सा लिख कर बाद सन्निपातादि के लक्षण लिखेंगे ॥

ज्वर रोग में लंघन विचार।

ज्वर चिकित्सा का पहला अङ्ग यही है ॥

तिसमें प्रथम लोलिंव राज का बचन लिखते हैं।

अधुना शृणुतन्विलंघनं ज्वरितानां प्रथमं प्रशस्यते। हेतन्वंगि, अधुना इदानीं, त्वंशृणु, ज्वरितानां ज्वरयुक्तानां, प्रथमं लंघनं उपवासं, प्रशस्यते, सप्त दश द्वादश दिनानि, वात पित्त कफ क्रान्तानां, (वातिकः सप्त रात्रेण दशरात्रेण पैत्तिकः। श्लेष्मिको द्वादशाहेन ज्वरपाकमुपैतिह) इति वाक्यात, आदौज्वरीतुलंघनं कुर्यात ॥

हे सूक्ष्मांगि! इस समय तुम सुनो ज्वर वाले मनुष्य को प्रथमही (ज्वरारम्भ) में लंघन (उपवास) कराना उत्तम है क्योंकि वातज्वर सात दिन में पित्त ज्वर दश दिन और कफ ज्वर बारह दिन में पचता है, इस बचन से प्रथम ज्वरवाले को उपवास करानाही अच्छा है ॥

अन्यच्च—ज्वरादौ लंघनं कुर्य्याज्ज्वर मध्येतु पाचनं—

सं० आ० द०—हमारे वैद्यों में ज्वर में उपवास कराने की परिपाटी ऐसी बिगड़ी है जिसका कुछ ठिकाना नहीं, बरसों से ज्वर क्यों न आता हो वैद्यराज पहुचतही डाटेंगे कि खाने को क्यों दिया उपवास कराओ, रोगी

भूख से चिल्ला रहा है कहा खबरदार अभी खाने को न देना, यह वायु की भूख है, बस पाठकगण, इतनाही में जान सक्ते हैं, वैद्य लोग आयुर्वेदविद् विद्वानों के लेख पर भी ध्यान नहीं देते हैं ॥

लंघन कराने का कारण ॥

बाग्भट्टश्चाह—आमाशयस्थो हत्वाग्निं सामो मार्गान् पिधाय येत् । बिदधाति ज्वरंदोष स्तस्माल्लंघन माचरेत् ॥

अस्यान्वयः—आमयुक्तोदोषः आमाशये स्थित्वामार्गान् आच्छाद्य अग्निंहत्वा ज्वरंविदधाति तस्मात् लंघनं आचरेत् ॥

चक्रदत्तः—तरुणंतुज्वरं पूर्वं लंघनें न क्षयं नयेत्, अन्यच्च—ज्वरितं षड्हतीते लंघनं प्रति भोजितं ॥

लंघनार्थमुक्त सुश्रुतेन—शरीर लाघवकरं यद्द्रव्यंकर्मवा पुनः, तल्लंघनं इतिज्ञेयं (कर्मोपवासः लघ्वाहाराद्यै)

तथाच धन्वंतरिः—ज्वराभिभूतः षड्हे व्यतीते विपक्क दोषः क्षत लंघनादि । योभेषजं स्वादति वैद्यवर्य्यो निः संशयं हंत्यचिरात्सरोगान् ॥ आदिशब्दात्परिपाक वारिपान निवात सदन वासादि ॥

भावार्थः—महर्षि वाग्भट्ट कहते हैं कि दोष (वातादि) आम में स्थित हो के जठराग्नि को ढांप और स्रोतों के मार्गों को रोकता हुआ ज्वर को उत्पन्न करता है इस वास्ते लंघन कराना उचित है । चक्रदत्त—कहते हैं कि तरुण ज्वर में प्रथमही उपवास कराने से दोष पच जाते हैं और छं दिन ज्वर गत होने पर लंघन युक्त रोगी को पथ्य देना चाहिये । लंघन के विषय में श्री महर्षि सुश्रुत जी कहते हैं, कि जिस औषध से अथवा जिस कर्म से दोष पचकर शरीर हलकी हो उसको भी लंघन जानना, क्योंकि जो फायदा लंघन में है वही हलके भोजन में है—

यथा—ये गुणाः लंघनप्रोक्ता ते गुणा लघु भोजने—

धन्वंतरि जी की राय है की ज्वर आये हुये छ रोज हो जाय और लंघन कराने से दोष पच गये हों उस समय औषध खिलाने से निस्सन्देह शीघ्रही ज्वर दमन होता है॥

अन्यच्च—सर्वज्वरेषु सप्ताहं मात्रावत् भोजनं हितम्।
अन्नकालेह्यभुंजानः क्षीयते म्रियतेथवा॥

संपूर्ण ज्वरों में सात दिन तक बहुत हलका भोजन देना क्योंकि भूख लगने पर भोजन न देने से रोगी कम जोर हो या मर जाय, इत्यादि अनेक प्रमाण मिलते हैं ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से नही लिखा इन सब वचनों से ठीक साबित होता है कि विना आद्योपांत विचारे रोगी को अधाधुन्ध लंघन न करावै, भूख लगने पर हलका भोजन अवश्य देवै॥

अस्नेहनीयोऽशोध्यश्च संयोज्यो लंघना दिना।

जो ज्वर रोगी, स्नेह पान और वमन विरेचन कराने लायक नही है उसको लंघनादि कराना, इस्से स्पष्ट होता है कि यदि रोगी बलवान हो तो दोषाधिक्य देख के वमन जुलाब से मल निकाल कर ज्वर आराम करना चाहिये ऐसी अवस्था में उपवास कराना निस्फल है यदि उक्त कर्म लायक न हो तो दो चार दिन उपवास करा के दोष पचाय देना उचित है—

अन्यच्च—आनद्ध स्तिमितैर्दोषैर्यावंतः कालमातुरः।
कुर्यादनशनं तावत्ततः संसर्गमाचरेत्॥

जब तक वात पुरीष (हवा का छूटना दस्त का होना) बन्द रहै और दोष बढ़े हों तब तक उपवास करावै बाद उसके मिश्रित उपाय करना उचित है॥

अन्यच्च—ज्वरस्य प्रथमोत्थाने लंघनं च दिनत्रयं।
न देयं क्वथितं वारि न च भैषज्य दापयेत्॥

ज्वर के आराम्भ में पहले तीन दिन लंघन करावै, न क्वाथ का जल

पीने को दे और न किसी किस्म की औषध खिलावे। जैसे जल के अधिक उद्वेग में मेंड़ बांधना उस की शक्ति को नहीं रोक सक्ता और क्रोध की तरुणावस्था में उपदेश और शान्ति कारक वचन क्रोध को अधिक भड़काता है ऐसे ही ज्वर की अति तरुणावस्था में औषध क्रिया उस के वेग को कई गुना बढ़ती है॥

सं० आ० द० ज्वररोग में उपवास कराने का नियम सिर्फ वैद्यक शास्त्र में है यूनानी और डाक्टरी में इस का कुछ नियम नहीं है और वे लोग इस पर कुछ ध्यान भी नहीं देते हैं कैसाहू ज्वर तेज हो रोगी के मांगने से पथ्य दे देते हैं इसी से वे लोग ज्वर रोग बहुत कम आराम कर सक्ते हैं ज्वर के आरम्भ में यदि ज्वर तेज बना हो तो दो तीन दिन तक रोगी के मांगने से भी खाना न देना चाहिये लेकिन उस के बल को देख के, जब देखे की ज्वर धीमा हो गया और दोष भी कुछ पच गये हैं एवं रोगी भी खाने को जिद्द कर रहा है तो शाम को साबूदाना या मूंग का जूस देवै। यह नियम सब से उत्तम है कि जब तक रोगी को खूब तेज भूख न लगै खाने को न देय। क्योंकि " नहिदोपक्षये कश्चित् सहते लंघनादिकम् " दोप के पच जाने पर उपवास आदि रोगी से नहीं सहा जाता शाम को जूस क्यों देय इस का कारण आगे दिखलावें गे॥

सन्निपात में लंघन विचार॥

त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा दशरात्रमथापिवा।
लंघनं सन्निपातेषु कुर्य्यादारोग्य दर्शनात्॥

तीन दिन, पांच दिन अथवा दश दिन सन्निपात में उपवास करावे जब तक आरोग्यता न दीख पड़े। कोई २ " आरोग्य दर्शनात् " का यह अर्थ करते हैं कि जब तक रोगी आराम न हो उपवास कराता जावे, यद्यपि पञ्चम्यंत शब्द से ऐसा अर्थ हो सक्ता है, परन्तु ग्रन्थ कर्ता का अभिप्राय यह नहीं है, यदि यह अभिप्राय होती तो " त्रिरात्रं पञ्चरात्रं " वा ऐसा न लिखते इसका अभिप्राय यह है कि यदि दश दिन के भीतर ही कुछ फुरसत देख पड़े तो पथ्य दे देय, क्योंकि उपवास कराने से, रोगी, कमजोर हो

बहुत उपवास कराने से बल का नाश (कमजोरी) पिपासा दिल दिमाग का कमजोरी, टकटका अधिक निद्रा (झांप) घुमरी, ओकाई और दमा आदि उपद्रव अति लंघन कराने से होता है इस लिये बिना विचारे अधाधुन्ध लंघन न कराना चाहिये ॥

सम्यक् लंघन का फल ।

ज्वरघ्नंदीपनं कांक्षा रुचिलाघव कारकं । सृष्टिमारुत विण्मूत्रं क्षुत्पिपासाऽसहं लघुम् ॥ प्रसन्नात्मेन्द्रियं क्षामं नरं विद्यात्सुलंघितम् ।

लंघन कराने से दोष पचता है और दोष पचने से जब सब लाभ देख पड़ें तब जानना कि लंघन इस रोगी का अच्छा बन पड़ा है—जैसे अधो वायु खुले, डकार साफ आवे तथा दिशा और पेशाब खुलासा हो, क्षुधा लगने पर बिना खाये और पियास लगने पर बिना पानी पिये रहा न जाय और शरीर हलकी मालूम हो, मन एवं इन्द्रियां सब प्रसन्न हों और शरीर ढीली आसक्त हो जाय तो जानना कि इसका लंघन ठीक हो चुका है ॥

ज्वर में जल पान विचार ।

चाहे कोई बिमारी हो खास कर ज्वर और हैजा आदि बिमारियों में बहुत जरूर है कि रोगी को साफ पानी (परिष्कृत जल) पीने को देय, क्योंकि अधिकतर यह रोग जल विकार से होता है, और यही सबब है जो वैधक शास्त्र में गरम पानी पिलाने को अधिक अनुरोध किया है, पानी गरम करने का कोई विशेष सबब नहीं है, पानी गरम करने से पानी के कीड़े मर कर पानी से अलग हो जाते हैं, और छान लेने से वह पानी कृमि रहित साफ और अग्नि वर्द्धक होता है । वैधक शास्त्र में जहां तक हमने देखा है नव ज्वर में शीतल जल का पान निषेधही पाया है । यथा ॥

दिवास्वप्नं व्यवायश्च व्यायामं शिशिरं जलम् ।
क्रोधप्रवात भोज्यानि वर्जयेत्तरुण ज्वरी ॥

दिनमें सोना, स्त्री प्रसङ्ग, मेहनत, शीतल जलपान, क्रोध, अधिक हवा का सेवन और भोजन नया ज्वर वाला रोगी त्याग करे ॥

अन्यच्च—पार्श्वशूले प्रतिश्याये वातरोगे गलग्रहे । आध्माने स्तिमतेकोष्ठे सद्यशुद्धो नवज्वरे ॥ अरुचि ग्रहणीगुल्मः श्वासकासेषु विद्रधौ । हिक्कायां स्नेहपानं च शीताम्बु परिवर्जयेत् ॥

पसुरी की दर्द, जुखाम, वात रोग (सर्वाङ्ग दर्द आदि) गलग्रह, पेट फूला हो, अग्निमन्द हो, शीघ्र ही जुलाब लिया हो, नये बुखार में अरुचि, (भोजन पर अरुचि) ग्रहणी (दस्त से कच्चा अन्न गिरता हो) वायगोला आदि, दमा, खांसी, विद्रधि (गोल या लम्बी एक तरह के सूजन शरीर में पड़ जाते हैं और वही सूजन पक भी जाता है उसे विद्रधि कहते हैं) हुचकी रोग और स्नेह पान में शीतल जल पीने को न देना चाहिये ॥

जल गरम करने की विधि ।

दिन में पीने के लिये सूर्योदय में पानी गरम कर और रात में पीने के लिये सूर्यास्तमें पानी गरम करे। वर्षा और वसन्त में कूप (कुआं) जल, हेमन्त और शिशिर ऋतु में कूप अथवा साफ तालाव का पानी ॥

अभाव में सब ऋतों में कूप का जल लेवे क्योंकि कुंयें का जल पान किसी ऋतु में निषेध नहीं है इसलिये न मिलने पर कूपही का जल लेना। रोगी के पीने के माफिक जल लेकर चांदी अथवा मृत्तिकापात्र में गरम करें एक दो उफान आ जाय अथवा जितना गरम करना है गरम हो जाय तो पात्र को अग्नि पर से उतार ले और कुछ देर तक उसी पात्र में जल रहने दे जब जल स्थिर हो जाय और देखे कि मल नीचे जम गया होगा आइस्ते से दूसरे मिट्टी के वर्तन में चौपरता खूब गफ कपड़ा पात्र के मुखपर देके तीन हिस्सा पानी छान ले और एक हिस्सा जो नीचे का मैला पानी है फेंक दे,

नहीं देते हैं, डरते हैं कि शीत करेगा यह उन की महा मूर्खता है क्योंकि " तृषितो मोहमायाति मोहात् प्राणं विमुञ्चति " पियासे को पानी न मिलने से बिहोसी आती है और मोह से प्राण छूटने का भय है इस लिये पियास लगने पर पानी अवश्य पीने को देय परन्तु थोड़ा २ जल पिलाना शास्त्रोक्त विधि है ॥

ज्वर में गृहादि विचार ।

नवज्वरी भवयत्ना गुरुणा वसनावृतः । सामान्यतो ज्वरापूर्वं निर्वाते निलये वसेत् ॥

नये ज्वरवाले को याद करके कोई भारी वस्त्र से ढांप देना । यद्यपि ज्वरवाला भारी वस्त्र के ओढ़ने से घवड़ावै गा लेकिन वस्त्र के ओढ़ने से कुछ भी पसीना निकल आने से ज्वर बढने का भय जाता रहता है, अगर देखे कि भारी वस्त्र के उढ़ाने से रोगी बहुत घवड़ाता है और स्वेद बिलकुल नहीं निकलता तो भारी वस्त्र न उढ़ा के सिर्फ एक दोहर उढ़ाय दे और पित्त ज्वर वाले को और जिस के शिर में अधिक दर्द हो बहुत गरम और भारी कपड़ा न उढ़ावै । नव ज्वरी कहने से यह मतलब है कि पुराने ज्वर में रोगी को कभी कपड़े में ढांक न रखना चाहिये ॥

यह सामान्य बात है कि बुखार वाले को हवादार मकान में न रखना, इससे यह मत समझना कि रोगी को एक अन्ध कोठरी में बन्द कर देओ कि अच्छा भी आदमी घवड़ाकर मर जावै । रोगी को एक साफ मकान में जिस्में बड़ा केवाड़ और शुद्ध वायु आने जाने के लिये खिड़कियां लगी हों, हां, यदि उन खिड़कियोंसे बाहरी अधिक हवा आती हो तो परदा डाल देवे (मवातसेवा) प्रथम ही कह दिया गया है कि रोगी को तेज हवासे बचाना चाहिये ॥

इस बात को खूब याद रखना चाहिये, अगर रोगी को बहुत गर्मी लगै और वह पंखा हांकने को कहै और जिसके बारम्बार पसीना आता हो और उस पसीना के आने से ज्वर को कुछ भी फायदा न पहुंच कर, उलटा रोगी सुस्त और कमजोर होता जावै तो, उसके गरमी, पसीना,

विहोशी शांति के लिये रोगी के मुखपर बराबर पंखा हांकता रहे कभी बन्द न करे। किस पंखेकी हवा देवे प्रमाणके लिये सद्ग्रन्थोंका श्लोक लिखतेहैं॥

व्यजनस्यानिलस्तृष्णा स्वेदमूर्च्छा श्रमापहः। (व्यजनं खर्जूरीपत्रभवंश्रेष्ठं) तालवृंतभवोवातस्त्रिदोष शमनोमतः॥ वंश व्यजनजः सोष्णो रक्तपित्त प्रकोपनः॥ चामरो वस्त्र संभूतो मायूरो बेत्रजस्तथा। एतेदोषहरावातास्निग्धा हृद्यः सुपूजिताः॥

पंखे की हवा पियास, पसीना, विहोशी और थकाई को दूर करता है। पंखा खजूर पत्र का अच्छा होता है, ताड़ के पंखे की हवा तीनों दोष को नाश करता है, बांस के पंखे की हवा गरम, रक्त पित्त को विगाड़नेवाला है, चामर, कपड़े के पंखे, मयूरपंख और बेंत के पंखे की हवा, दोषों को हरने वाला, चिकना, दिल को ताकत देनेवाला और ऋषियों करके प्रशंसनीयहै॥

ज्वर रोग में दूध खाने की विधि।

वैद्यक में तीन अङ्ग हैं निदान, निघंट, चिकित्सा–निदान पूर्व कारण को कहते हैं कि रोग किस सबब से होता है और उसका पूर्व रूप और साध्यासाध्य का विचार निदान से जाना जाता है और निघंट में औषधियोंकी उत्पत्ति लक्षण गुण विकार आदि वर्णन रहता है, निदान और निघंट यह दोनों प्रकर्ण चिकित्सा के सहायकहैं–"चिकित्सा" यह शब्द 'कित" धातु से बना है जिसका अर्थ है रोगों को दूर करना हटाना, भगाना, चिकित्सा यह बड़ा कठिन काम है क्योंकि जैसे किले में अथवा राज्य में दुश्मन दखल कर लेता है तो उसका निकालना बहुत कठिन हो जाताहै उस अवस्था में राज नीति विशारद पुरुष–साम, दाम दण्ड भेद, चार उपाय से शत्रु को निकालते हैं यह चारों उपाय किसी राजा के पास होते हैं कि जिसका राज्य सप्तांग से पूर्ण रहता है जिसका विस्तार वर्णन नीति शास्त्र में लिखाहै ऐसा ही पूरी चिकित्सा वह वैद्य कर सक्ता है जो आयुर्वेद के समस्त अङ्ग और शाखा प्रशाखा के विज्ञान में दक्ष होता है और न केवल दक्षताही काम

देता है किन्तु सब प्रकार की सामग्री और सामान भी होना चाहिये जैसे नीति विशारद पुरुष किले से दुश्मन को निकालना चाहता है और निकालने की सब विधि भी जानता है पर उसके पास—साम, दाम, भेद, दण्ड चारों सामान नहीं तो कहिये किस तरह निकाल सकेगा अथवा सब सामान है पर उसको काम में लाने की क्रिया नहीं जानता तो भी वह शत्रु के हटाने में असमर्थ रहता है—बस इसी दृष्टान्त के मूल पर सज्जनों को सोचना चाहिये कि चिकित्सा कर्म बड़ा सूक्ष्म और पूर्ण विद्या और शुद्ध बुद्धि के द्वारा ठीक किया जा सक्ता है जैसे शत्रु संकट में नीति विशारद लोग शान्ति के द्वारा अथवा कुछ दे लेकर अथवा शत्रुओं के आपस में भेद उपजा के शत्रु पक्ष को निर्बल करते हैं पर जब यह तीनों यत्न नहीं चलते तो अस्त्र शस्त्र के द्वारा लड़ते हैं कि जिसके लिये बहुत सामर्थ्य और साहस चाहिये यदि राजकीय युद्ध से रोग और चिकित्सा की लड़ाई का मिलान किया जाय तो प्रत्येक बात मिल सक्ती है परन्तु लेख बढ़ने के कारण वह नहीं लिखा जा सक्ता है पर बुद्धिमानों के निकट इतनाही उपदेश बहुत है कि चिकित्सा कर्म बहुत गंभीर और बुद्धि विद्या साध्य है इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि चिकित्सा शास्त्र के न जानने ही से भारत की बड़ी हानि है, क्योंकि आरोग्यता ही जीवन का एक मात्र फल है और विधिवत् आयुर्वेद के जाने बिना आरोग्यता की रक्षा नहीं हो सक्ती है ।। हमारे इस देश में वैद्य लोग बुखार में दूध खाने को नहीं देते चाहे ज्वर नया हो या पुराना, और डाक्टर लोग नये ज्वर में भी दूध खाने को बता देते हैं अब हम किन की बातों पर ध्यान देंय, किसकी सम्मति से ज्वर में दूध खिलावें अब हम को वास्तविक धर्म है कि कुछ वैद्यक शास्त्र देखें सुने अपनी स्वास्थ्य रक्षा खुद करें ॥

दूध देने का प्रमाण ।

कृशोऽल्पदोषो दीनश्च नरो जीर्णज्वरार्दितः । विबंधा सृष्ठ दोषश्च रूक्षः पित्तानिलज्वरी ॥ पिपासार्तः सदाही वा

पयसा स सुखीभवेत् । तदेव तु पयः पीतं तरुणी हन्ति मानवम् ॥

इतने लोगों को दूध अमृत के समान गुण करता है। अति दुर्बल, अल्प दोप युक्त, दीन अर्थात् घबड़ाया हुआ या डरा हुआ, और जीर्ण ज्वर से दुखित (पुराना ज्वर) जिस रोगी को दस्त न होता हो रूखा और पित्त वात ज्वर वाला, तृपा एवं दाह रोग वाले को दूध फायदा करता है और वही दूध नये ज्वर में पिया भया रोगी को मार डालता है॥

अन्यच्च—जीर्णज्वरे कफेक्षीणे क्षीरंस्यादमृतोपमम् । तदेवतरुणेपीतं विषवत्हन्ति मानवम् ॥ धारोष्णं वा पया शीतं पीतंसद्यो ज्वरंजयेत् ।

पुराने बुखार वाले को और जिस्का कफ सूख गया हो उसे दूध अमृत के समान गुण करता है और नये बुखार में पिया भया, दूध विप के समान रोकी को मार डालता है। धारोष्ण अर्थात् सद्यही का दुहा हुआ गरम दूध जो पृथ्वी पर न रक्खा गया हो अथवा शीतल दूध पीने से शीघ्रही वह दूध ज्वर को नाश करता है। इस्से स्पष्ट हुआ कि नवीन ज्वर में पांच सात दिन दूध न देना चाहिये बाद दूध पिलाना गुण दायक है इस में महर्षि सुश्रुत का भी वचन प्रमाण है॥

सूत्र स्थान अध्याय ४५

वातपित्त शोणित मानस विकारेष्वविरुद्धम् जीर्णज्वर कासस्वास शोषक्षय गुल्मोन्मादोदर मूर्च्छा भ्रम मद दाह पिपासा हृद्वस्ति पाण्डुरोग ग्रहणी दोपार्शः शूलोदावर्त्तातिसार प्रवाहिका योनिरोग गर्भास्राव रक्त पित्त श्रमक्लम हरं।

वात पित्त रक्त और मन के विकार में दूध पिलाना मना नहीं है, तथा जीर्णज्वर जो चिरकाल से ज्वर न छूटा हो दमा खांसी (शोष) शरीर का प्रति दिन सूखते जाना (क्षय) तपेदिक, गोला, उन्माद, बिहोसी, घुमरी,

नेत्र में नसा सा बना रहे, शरीर में जलन होना पियास हृदय का दर्द नाभि के नीचे दर्द होना, पांडु, ग्रहणी, वाताष्ठीला, पेट का दर्द, उदावर्त, अर्शागार, प्रवाहिका, योनिरोग गर्भ का न ठहरना, रक्त, पित्त, थकाई (क्रम) विना परिश्रम किये शरीर का थकित हो जाना इत्यादि रोगों को दूध नाश करता है ॥

ज्वर में औषध खिलाने का नियम ।

ज्वर में औषध देने का नियम लोग बिलकुल नहीं जानते ज्वर पका हो या न पका हो शीघ्रही दवा लिख देते हैं इसी से ज्वर न छुट के दूना हो जाता है क्योंकि ॥

आमज्वरस्य लिङ्गानि न दद्यात्तत्र भेषजम् । भेषजंह्याम दोषस्यभूयो वर्द्धयतिज्वरं ॥ शोधनं शमनीयंतु करोतिविष ज्वरम् ।

कच्चे ज्वर में औषध न देय क्योंकि आम (कच्चा) ज्वर में औषध देने से और भी ज्वर बढ़ता है, और कच्चे ज्वर में शोधन अथवा शमनीय औषध दे तो मानों ज्वर को विषम करना है इस लिये कच्चे बुखार में कभी धोखे से भी औषध न देय ॥

मृदौज्वरे लघौदेहे प्रचलेषु मलेषुच । पक्वं दोषं विजानीयाज्ज्वरे देयं तदौषधम् ॥

जब देखे कि ज्वर कुछ धीमा हुआ है और शरीर हलकी हुई है तथा वातादिक दोष यथा स्थित हुये हैं तब जानना की अब दोष पचा है उस अवस्था में दवा देनें से ज्वर का नाश होता है । लेकिन इस विषय को हकीम साहब और डाक्तर बाबू बिलकुल नहीं जानते हैं, जाने कहां से, इस बात को तो हम कई स्थलों में दिखला चुके हैं कि वैद्यक विद्या देश काल पर निर्भर है, तो बिलायत और अर्ब देश की वैद्यक विद्या के बल से, इस देशवाले की चिकित्सा करना बिना इस देश की परीक्षा किये लाभ दायक हो सक्ता है ? कदापि नहीं, इस लिये डाक्तर हकीमों को भी वैद्यक शास्त्र पढ़ना चाहि ॥

अपक्व ज्वर लक्षण।

सुश्रुत उत्तर तन्त्रम् अध्याय ३९

हृदयोद्वेष्टनं तंद्रा लालास्रुतिररोचकः। दोषाप्रवृत्तिरालस्यं विबंधो बहुमूत्रता॥ गुरूदरत्वमस्वेदो न पक्तिः शकृतोऽरतिः। स्वापः स्तंभो गुरुत्वं च गात्राणां वन्हिमार्द्दवम्॥ मुखस्याशुद्धिरग्लानिः प्रसंगी बलवान्ज्वरः। लिंगैरेभिर्विजानीया ज्ज्वरमामं विचक्षणः॥

यद्यपि दोष पचने का यह पुरा साबूत है कि वात ज्वरादि में वात ज्वरादि के लक्षण कम न हुये हों तथापि अधिक चेत कराने के लिये फिर दिखलाया जाता है कि जब तक निम्नलिखित लक्षण ज्वर रोगी में पाया जावे तो जानना कि दोष अभी नहीं पचा उस अवस्था में औषध कदापि न देवै। जैसे–जिस ज्वर में छाती जकड़ी सी मालूम हो, नेत्रोंपर झपकी, मुख से लार गिरना या पंच्छा छुटना, अन्न पर अरुचि, वातादि दोषों का स्वाभाविक काम में अप्रवृत्ति हो, सुस्ती दस्त का न होना और मूत्र जादा होना, पेठ भराता मालूम हो तथा पसीना न आवे, कल न पड़े, नींद न लगे, शरीर जकड़ी हो या दर्द हो, अग्निमन्द, मुख का स्वाद खराब और बुखार खूब तेज हो तो जानना कि दोष अभी नहीं पचा। अगर कोई यह कहे कि बहुत लोग ऐसे कोमल मिज़ाज के होते है कि अङ्ग मर्दादि ज्वर के लक्षण से घबड़ाय जाते हैं, हाय २ मचाने लगते हैं, बस उसी अवस्था में वैद्य लोग घबड़ाय के दवा देदेते हैं, तो उस समय उपद्रव शांत्यर्थ कोई औषध देय या नहीं? (उ०) रोगी को अचैतन्य देख वैद्य का घबड़ाना शास्त्र सम्मति नहीं है अन्ततोगत्वा जब किसी प्रबल उपद्रव से रोगी को अत्यन्तही क्लेशित देखे तो ऊपरी प्रयोग से सिर्फ उस उपद्रव को शांत करे, दोष पचने की औषध न दे, यदि कहो कि बिना दोष पचाये उपद्रव कैसे शांत होंगे क्योंकि उपद्रव दोष के अङ्ग हैं (उ०) ठीक है बिलकुल शांति नहीं हो सक्तेहैं कुछ वेग कम हो जायगे और ज्वर में विघ्न भी न होगा, जैसे अङ्ग दर्द में अङ्ग मर्दन, क-

राना (वात नाशाय मर्दनं) उससे दर्द निश्शेष न हो के क्लेश कम हो जायगा और इससे ज्वर में कुछ बाधा नहीं हो सक्ता, जैसे शिर के दर्द में दर्द नाशक लेप माथे में लगाना यद्यपि वह लेप बिना दोष पचे शिर दर्द समूल नष्ट नहीं कर सक्ता है तथापि हानि भी नहीं पहुंचाता इस लिये ऊपरी प्रयोग करना कोई हर्ज नहीं है परन्तु बिना दोष पचे दोष पाचनार्थ औषध कभी धोखे से भी न देवे । ज्वर रोग विशूचिका आदि रोगके समान भयंकर नहीं है यदि विचार सहित चिकित्सा की जावे तो ज्वर रोग से एक भी रोगी न मरै केवल भूल होने से ज्वर रोग में रोगी मर जाते हैं ॥

औषध दान कालः ।

मृदौज्वरे लघौदेहे प्रचलेषु मलेषु च । पक्वंदोषं विजानीया ज्वरे देयं तदौषधम् ॥ दोषप्रकृति वैकृत्यादेकेषां पक्व लक्षणम् । सप्तरात्रात्परं केचिन्मन्यन्ते देय मौषधम् ॥ दशरात्रात्परं केचिद्दातव्य मिति निश्चता ॥

ज्वर रोग में जो औषध देने का नियम ऋषियों ने कहा है उसे दिखलाते हैं । जब बुखार धीमा हो और शरीर हलकी हो और देखें की वातादिक दोष यथा स्थित हो गये हैं उस अवस्था में दोष पचा जान कर औषध देवै । किसी २ विद्वान की राय है कि वातादि दोष जैसे ज्वर में बेगमाल रहते हैं यदि उसमें फर्क पर जांय या उलटे हो जांय तब भी जानना कि दोष पच गये हैं औषध देना उचित है और भी किसी आचार्य का मत है कि सात दिन पीछे और किसी के मत से दश दिन पीछे ज्वर रोगमें औषध देने का काल है । परन्तु सिद्धान्त मत यही है कि ज्वर के आदि में लंघन से दोष अवश्य ही पचैगा बस कुछ भी दोष पचा देखे क्वाथादि औषध देवै इसमें हमारी पूरी सम्मति है कि ज्वर रोग में बटी चूर्णादि न देके केवल कषाय पिलाना अत्यन्त लाभदायक होता है । परीक्षा द्वारा यहां तक देखा गया है कि यदि ज्वर रोगवाले को क्वाथादि कोई औषध न देके लंघनादि ठीक उपचार सहित रखनेहीं से ज्वर रोग छुट जाता है, उपचार बिगड़ जाने से अमृत समान भी औषध पिलाने से ज्वर नहीं छुटता बल्कि बढ़ जाताहै ॥

(अभया) बड़ा हड़ आधा भाग (जलं) सुगन्धवाला १ भाग सब दवाइयों को ढाई तोला ले पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय क्वाथ पिलाने से त्रिदोसी (शोष) गल तालु जीभ का सूखना (निदाघ) ग्रीष्म कलोष्मणा जनिता ज्वरोनिदाघः (तृट्) बारम्बार पियास का लगना (प्रलपनं) अनर्थक बात बकना और बुद्धि भ्रांति इत्यादि उपद्रव युक्त पित्तज्वर शांति होता है उसी तरह (दुरालभा) यवासा (प्रमदा) प्रियंगु-प्रियंगु मालकगुनी को भी कहते हैं, यहां पर प्रियंगु नामक फूल लेना (किरात) चिरायता, कुटकी (तिक्ताख्य) आरूसा (रेणुः) पित्तपापड़ा इन सब औषधों का काढ़ा में (शर्करान्वितः सितायुक्तः) एक तोला मिश्री या चिनी डाल के दोनों समय पिलाने से, पियास (दाहः) वन्हिस्पर्शवद्दुःखः-जैसा अग्नि से जलने से दुख होता है वैसाही जलन शरीर में होने को दाह कहते हैं इत्यादि उपद्रव सहित रक्त पित्तज्वर आराम होता है । यह हम प्रथही कह चुके हैं कि पित्तज्वर में दाह अधिक होता है, पित्तज्वर अथवा कोई ज्वर दाह युक्त हो तो निम्नलिखित क्वाथ को पिपावें ॥

जलजल जल्द वाहरेणु विश्वौषध शिशिरैः शिशिरं जलं शृतंस्यात् । सपदि सुखकरं सदा सदाहज्वर तृषियोज्य-मिदं नवज्वरेपि ॥

श्रीमता चरकेणाप्युक्तम्-मुस्त पर्पट कोशीर चन्दनो-दीच्य नागरैः शृतंशीत जलं दद्यात्पिपासा ज्वरशान्तये ॥

(जल) खस (जल) सुगंधवाला (जलवाहो) मोथा (रेणु) पित्तपापड़ा (विश्वौषध) शोठ (शिशिरं) लालचन्दन उक्त सब औषधों को समान भाग ले अधकचरा कर ढाई तोला ले एक पाव जल में पकावै जब आधा रहै मल छान कर खूब शीतल कर अथवा उस काढ़े के पात्र को वर्फ पर रख देय १ तोला मिश्री मिला के पिलावें एक ही दो रोज के बाद देखे कि दाह शांत नहीं होता तो काढ़ा न पका के सिर्फ रात को भिजा के ओस में रख देय और प्रातःकाल मल छान कर १ तोला मिश्री मिला के पिला देवै इसी प्रकार सबेरे भिजा के किसी शीतल स्थान में रख देय और साम को मल छान के

मिश्री मिला के पिलाने से अति पिपासा सहित भी पित्त ज्वर शांत होता है इसी पर चरक महाराज भी कहतेहैं। नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लाल चन्दन, सुगन्धवाला और शोंठ इनका काढ़ा बहुत शीतल करके पिलाने से पिपासा सहित पित्त ज्वर शांत होता है ॥

दाह ज्वरे दाहशमनोपायाः ।

सुश्रुत उत्तर तन्त्रम् ॥

दाहाभिभूते तु विधि कुर्य्याद्दाह विनाशनम् । मधुफाणित युक्तेन निम्बपात्राम्भसापि वा ॥ दाहज्वरार्त्तं मतिमान् वामयेत् क्षिप्रमेव च । शतधौत घृताभ्यक्तं दिग्ध्याद्यवच शक्तुभिः ॥ कोलामलक संयुक्तैः शूक धान्याम्ल संयुतैः । अम्लपिष्टै सुशीतैश्च फेणिला पल्लवैस्तथा ॥ अम्लपिष्टैस्तु शीतैर्वा पलाशतरुजैर्दिहेत् । बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टकस्य च ॥ लिप्तेऽङ्गे दाहतृण् मूर्च्छासर्वथैव प्रशाम्यति ।

नया ज्वर हो अथवा प्राचीन हो जिस ज्वर में दाह अधिक हो उस दाह की चिकित्सा अवश्य करनी चाहिये। अगर रोगी कुछ भी बलवान हो तो दो तोला निम्बपत्र को महीन घोंट पाव भर जल में छान उसमें, छः मासा शहद और दो तोला मंगरा सकर मिला के रोगी को पिला के तुरंत बमन कराना। या शतवार का धोया भया घृत को शरीर में मर्दन कराना। या धान जौ गेहूं तीनों को पाव भर ले एक सेर पानी में दो या तीन दिन भिजा रखना जब पानी खट्टा हो जाय पानी को छान लेय. तब उसी पानी में जव का सत्तू बेर. और आंवले को महीन पीस सम्पूर्ण अङ्गों में अथवा जिन २ अङ्गों में दाह हो लेप करना. या बेर के पत्र को पानी में बांट पांच सेर पानी में घोल के मंथना उसमें जो फेन उठे उसे दाहजनित अङ्ग में लेप करना उसी प्रकार रीठे के फेन का लेप करना इत्यादि उपाय से दाह, पियास, और मूर्च्छा शांत होते हैं ॥

दाह पर प्रह्लादन तैल।

यवार्द्धकुडवंपिष्ट्वा मञ्जिष्ठार्द्धपलंतथा। अम्लप्रस्थ शतोन्मिश्रं तैलप्रस्थं विपाचयेत्॥ एतत्प्रह्लादनंतैलं ज्वर दाह विनाशनम्॥

जव एक पाव, मंजीठ दो तोला, काले तिल का तैल १ सेर, दही का तोड़ २॥ मन। तेल को चांदी की कढ़ाई या कलईदार कढ़ाई में चढ़ाय जव और मंजीष्ठ को पानी में महीन पीस तेल में डाल दे और दही का तोड़ थोड़ा २ डाल मंदाग्नि में पचावै जब सब पानी जलजाय तेल मात्र रहजाय अग्नि से उतार छान बोतल में भर दे इस तेल को शरीर में लगाने से दाह ज्वर शीघ्रही शांत होताहै। अगर श्लोकानुसार ७॥ मन दहीका तोड़ डाल के तैय्यार करै तो एकही बार उस तेल के लगानेसे दाहज्वर शांत होताहै॥

हमारे कविवर लोलिम्बराज महाशय ने दाह के शांत्यर्थ जो उपाय लिखे हैं, पाठकगणों के मनन्नार्थ उसे भी प्रकाशित करता हूं और काव्य का अर्थ भाषा में लालित नहीं होता इस हेतु से संस्कृतमें अन्वय लिखे देताहूं॥

श्रीखंड मण्डित कलेवर वल्लरीणां मुक्ताफलाकुल विशाल कुचस्थलीनां। वैदग्ध्य मुग्ध वचसां सुविलाशिनी नामालिंगनं सकल दाह मपाकरोति।

श्रीखंडेति—विलाशिनी नामालिंगनं सकलदाहं अपाकरोति दूरीकरोतीत्यर्थः कीदृशीनाम् श्रीखंडैर्मंडिता कलेवर वल्लरीयासां, श्रीखंड स्वेतचन्दनं, कलेवर शरीरं, वल्लरीलता, तनुलतेत्यर्थः, मुक्ता फलैराकुलानि विशालानि कुचस्थलानियासां, कुचस्थलो वक्षजः, वैदग्ध्यं चातुर्य्यं, तेनमुग्धवचसां॥

भावार्थः—अति रूपवती स्त्री षोडश वर्ष की जिनके कोमल अङ्ग और कठोर कुचों में चन्दन लगे एवं मोतियों के हार से कुच शोभित एवं जिसकी चातुर्य्यता भरी मन्द मुसुकानि मन को मोहित कर रहा है ऐसी स्त्रियों को अपने अङ्ग में लपटाने से महा दाह शांत होता है॥

शय्यापल्लव पद्मपत्र रचिता वासोवयस्यैः समं कान्तरे कुसमस्फुरत्तरुवरे वीणान्वितं गायनम्। आलापाश्च शुकालि कोकिलकृताः कान्ताश्चकान्ताः कथा वाताश्चामल वालक व्यजनजा दाहं निरा कुर्वते ॥

शय्येति—पल्लवा वा लक्षदाः विभक्ति विपरिणामे न योज्यं पल्लवो स्त्री क्रिशलयमित्यमरः कदल्यादीना वा पद्मपत्रे (कमलपत्रे) रचिता शय्या दाहंनिरा कुर्वते दूरीकरोति, वयस्यैः समंवासः वयस्यै समान कालिकैः सहवास इत्यर्थः, कथंभूतं—कुसुमस्फुरत्तरुवरे प्रफुल्लपुष्पयुक्ते वृक्षे, कांतारो महावनं. कांतारो स्त्री महारण्ये इतिमेदिनी, वीणावाद्येन युक्तं गायनं (वीनाशितारलोके) शुकालि कोकिलकृता, आलापाः अलिपरिभाषणे इत्यस्यरूपं, शुकः प्रसिद्धः, अलिर्भ्रमरः कोकिलः पिकः आलापाः वचांसि, कान्ता नवीननार्य्यः कांता मनोहरा कथा भरतादि ग्रंथोक्ता शृङ्गार भेदा, अमल वालक व्यजन जनिताः वाताः वालको वीरणमूलं खस इतिलोके, दाहं निराकुर्वते—प्रत्येकमसंबध्यते ॥

भावार्थः—कदली (केला) पत्र अथवा कमल पत्रोंका पलंगपर बिछाय उस शय्या पर दाह युक्त रोगी को सुलाने से दाह शांत होता है ॥

(कान्तारे वासः) जो, वन प्रफुल्लित पुष्पों से युक्त वृक्षों से शोभायमान हो रहाहै ऐसे वन में रहने से (कांतार महा जंगल और स्त्री दोनों का बोधक है परन्तु इस स्थल में महावन लेना।) शितार हारमोनियम् एवं वीन आदि बाजाओं करके संयुक्त गान भी दाह रोग को नाश करता है। तोता, कोयल की आवाज, भ्रमर गुंज, रूपवती युवा स्त्री का स्पर्श, मनोहर कथा और कहानियों का सुनना, नवीन खस के पंखे की हवा, पित्त ज्वर जनित दाह को नाश करता है ॥

शेष पित्त ॥

पित्त ज्वर शांत होने पर भी यदि कुछ पित्त का शेष देखे तो उसे शान्ति

कर दे क्योंकि कुछ भी पित्त बाकी रहने से पुनः ज्वर होने का सम्भव है प्रायः पित्त रह जाने से विषम ज्वर हो जाता है उसे डाक्टरी में (इन्टर मिटेन्ड फीवर) कहते हैं इस लिये शेष पित्त को शान्ति करना बहुत जरूरी है।

हतावशेषं पित्तं तु त्वकस्थं जनयति ज्वरम्। पिबेदिक्षुरसं तत्र शीतं वा शर्करोदकम्॥ शालिषष्टिकयोरन्नमश्नीयात्क्षीरसंप्लुतम्।

जो पित्त शान्त भये पर कुछ शेष रह के त्वचा में रह जाय तो वह पित्त निस्सन्देह ज्वर पैदा करता है उस अवस्था में उसे पौंड़े का रस या चिनी का शरवत पिलाना चाहिये जब तक पित्त की शान्ति न हो॥

वैद्यक न जानने के सबब से चिनी के शरबत आदि शीतल चीजों से इतना लोग डरते हैं, रोगी को कौन कहै आरोग्य भी पीनेमें डरते हैं कि कहीं शीत न आजाय, देखिये भाव प्रकाश में क्या लिखा है॥

शर्करोदकस्य गुणाः॥

जलेन शीतले नैव घोलिता शुभ्र शर्करा। एला लवँग कर्पूर मरिचैश्च समन्विता॥ शर्करोदक नाम्नै तत् प्रसिद्धं विदुषां मुखः शर्करोदक माख्यातं शुक्लं शिशिरं सरं॥ वल्यं रुच्यं लघु स्वादु वात पित्तास्त्र नाशनम्॥ मूर्छा छर्दि तृषा दाह ज्वर शान्ति करं परम्॥

शीतल जल में साफ चिनी अथवा मिश्री की शरवत बनाय उसमें छोटी लायची कपूर लवँग और काली मिर्च पीस के मिलाने से शर्करोदक ऐसा नाम पण्डितों के मुख द्वारा सुना गया है। यह शर्करोदक वीर्योत्पन्न कारक, उदर दाह निवारक और दस्तावर है बलकर, रुचिकर हलका स्वादिष्ट वात पित्त और रुधिर विकार का नाश करने वाला, बिहोशी शिर की घुमरी वमन पियास और दाह ज्वर शांति करने में परम श्रेष्ट है। इसलिये पित्त शेष नाशार्थ चिनी का शरवत अवश्य पिलाना चाहिये॥

और भी लिखा है (शर्करा सहितं नीरं कफ कृत्पवनापहम्) सफेद शक्कर (चिनी) का सरवत कफ को बढ़ाता है परन्तु वायु को नाश करता है, जिस ज्वर में कफ का कुछ लेश न हो और पित्त का महा कोप हो तो उस अवस्था में मिश्री का सरवत देना कदापि हानि कर न होगा, बल्कि शीघ्रही रोगी को तसल्ली होगी।

वात पित्त ज्वर पर फांट।

मधूक पुष्पम्मधुकं चन्दनं सपरूषकम्। मृणालं कमलं लोध्रं गम्भारी नागकेशरम्॥ त्रिफलां सारिवान्द्राक्षां लाजाःन कोष्णे जले छिपेत्। सितामधु युतः पेयः फांटो वा सौ हिमोऽथवा॥ वातपित्त ज्वरं दाहं तृष्णा मूर्छा रतिभ्रमान्। रक्तपित्त मदं हन्यान्नात्र कार्य्यविचारणा॥

यह फांट वातपित्त मिश्रित कज्व को और वातज्वर तथा पित्तज्वर को निस्सन्देह आराम करता है। महुआ का फूल, मुलेठी, लालचन्दन, (परूषक) फालसा के जड़ का छाल, कमल वृक्ष की डंठी, (न मिलने पर कमल-गट्टे का बीज), ' कमलं' कमलगट्टा, लोध, खम्भारि, नागकेशर, त्रिफला, सरिवन, मुनक्का और धान का लावा। इन सब दवाइयों को ३ तोला ले अधकचरा कर अथवा कलई दार पात्र में एक पाव पानी एक मृत्तिका पात्र में खूब गरम कर अग्नि पर से पानी को उतारं उसी में औषध को डाल कर ढांप देवै जब शीतल होजाय मल के छान लेय और एक तोला मिश्री २ मासा सहत डाल के पीजावै अथवा हिम बना के पीवै अर्थात् दवा को रात में भिजा देवे सवेरे मल के छान कर मिश्री मिला के पिये। इस फांट के पीने से वातपित्त ज्वर, दाह, पियास, मूर्छा (बेहोसी) ग्लानि, घुमरी, रक्तपित्त और नेत्रों में नशा सा मालूम देना आदि सबों को आराम करता है।

कफ ज्वर की चिकित्सा।

इस बात को खूब याद रखना चाहिये कि जब तक रोगी में ठीक २

चिभ्रमः ॥ परिदग्धा खरस्पर्शा जिव्हा स्रस्तांगता परा । ष्ठी-
वनं रक्त पित्तस्य कफेनोन्मिश्रितस्य च ॥ शिरसो लुण्ठनं
तृष्णा निद्रा नाशो हृदिव्यथा । स्वेद मूत्र पुरीषाणां चिरा-
द्दर्शनमल्पशः ॥ कृशत्वं नाति गात्राणां सततं कण्ठ कूज-
नम् । कोठानां श्यावरक्तानां मण्डलानां च दर्शनं ॥ मूक-
त्वंस्रोतसांपाको गुरुत्वमुदरस्य च । चिरात्पाकश्च दोषाणां
सन्निपात ज्वरा कृतिः ॥

अर्थ–सन्निपात ज्वर में कभी जाड़ा लगे और कभी दाह मालूम हो; ह-ड्डियां, सन्धियों और शिर में दर्द हो, आंखों से आंसू बहे, नेत्र लाल या धू-मिल रंग के हों और भीतर को बैठे जान पड़े, कानों में सनसनाहट एवं दर्द हो, गला सूखा और गले में कांटेसे पड़ गयेहों, झपकी, बेहोसी आनतान बकना खांसी, हांपी, खाने पर मन न चलना और घुमरीहो। जीभ ऐसा हो जैसा अग्निसे जल गया हो और छूने में खरखरी मालूम हो, संपूर्ण शरीर सुस्त वा ढीली हो जाय जो करवट लेने में भी आलस्य लगे, मुख से थूंक ललाई लिये हुये कफ पित्त के सहित निकले, शिर में ऐसा दर्द या बेचैनी हो कि शिर को इधर उधर हिलाता रहै, पियास की आधिक्यता, नींदका न पड़ना और छातीमें दर्दहो। पसीना बहुत कम निकले और दिशा पेशाव भी बहुत देर में और बहुत कम हो ललाई लिये । यहांपर पाठहै "कृशत्वंनातिगात्राणां" और कहीं २ ऐसा भी पाठ मिला है "कृशत्वंचातिगात्राणां" अर्थात् शरीर बहुत दुर्बल होजाय (लेकिन देखने में दोनों आते हैं हमने कई सन्निपात ज्वरी को बहुत दुर्बल देखा है और किसी२ को अतिदुर्बल भी नहीं पाया) रोगी हरसमय कांखता रहे और पीत, काली अथवा लाल रंगके गोल २ चट्टे या फुंसियां संपूर्ण शरीर में निकल आवें विशेषकर कोखा और जांघोंमें। अच्छीतरह बोल न सके या बिलकुलही न बोले न कानसे सुने और न आंखोंसे देखे और नाक कान पक जांय, पेट भारी और फूला सा रहे और उत्तम चिकित्सा करनेपर भी दोष बहुतदिनोंमें पचें इत्यादि लक्षण युक्त रोगीको सन्निपातज्वरी समझना। उक्त

संपूर्ण लक्षण उपस्थित होने पर असाध्यही समझना चाहिये। यद्यपि सन्निपात रोग एक प्रकार का है परन्तु दोषों के न्यूनाधिक से तेरह भेद कहा है—जैसे एक २ दोष की अधिकता से, अर्थात् किसी सन्निपात ज्वर में वात का जोर अधिक रहता है, और वह इस वजे से मालूम होता है कि वात के जितने उपद्रव हैं स्वास, खांसी, घुमरी, आनतान बकना अंगों में दर्द, जभुआई अधिक आना इत्यादि होने से इसी प्रकार पित्ताधिक से शरीर में लाल२ दाने पड़जाना, मुख पाक, अतीसार अंतरदाह आदि, कफाधिक से अंग की जड़ता, वाणी की स्तब्धता आदि इसी प्रकार लक्षणों की आधिकता से दोष की आधिकता जानी जाती है। इस तरह वातादि से तीन, द्वंदज से तीन, सन्निपात से एक तथा वातादि दोष के अधिक मध्य और हीन होने से सब तेरह भेद कहे हैं शास्त्रज्ञ वैद्य लोग तत्लक्षण अनुमान कर लेते हैं। अब वैद्यों के नाम करण किये हुये तेरह प्रकार के सन्निपात ज्वर के नाम और लक्षण लिखते हैं॥

त्रयोदश सन्निपात के नाम॥

सन्धिकश्चान्तकश्चैवरुग्दाहश्चित्तविभ्रमः। शीताङ्गस्तान्द्रिकः प्रोक्तःकण्ठकुब्जश्चकर्णकः॥ विख्यातोभुग्ननेत्रश्च रक्तष्ठीवीप्रलापकः। जिह्वकचेत्यभिन्यासःसन्निपातास्त्रयोदशः

सन्धिक १ अन्तक २ रुग्दाह ३ चित्तविभ्रम ४ शीताङ्ग ५ तन्द्रिक ६ कण्ठकुब्ज ७ कर्णक ८ भुग्ननेत्र ९ रक्तष्ठीवी १० प्रलापक ११ जिह्वक १२ और अभिन्यास यही तेरह नाम सन्निपात के हैं। अब हम तेरहा सन्निपात के अवधि लिखते हैं कि कौन सन्निपात कितने दिनतक रहता है॥

१३ सन्निपात की अवधि॥

सन्धिकेवासरःसप्तचान्तकेदशवासराः। रुग्दाहेविंशतिर्ज्ञेया वन्हाष्टौचित्तविभ्रमे॥ पक्षमेकन्तुशीताङ्गे इत्यादि॥

उक्त तेरहो सन्निपात के आयु के दिन श्लोक में पूर्ण न लिखके भाषा

में लिखे देते हैं। सन्धिक सन्निपात की मर्यादा सात दिन है अन्तक के दश दिन, रुग्दाह के २० दिन, चित्तविभ्रम के २४ दिन, शीतांग के १५ दिन, तन्द्रिक के २५ दिन, कण्ठकुब्ज के १३ दिन, कर्णक के तीन मास, भुग्ननेत्र के ८ दिन, रक्तष्ठीवी के १० दिन, प्रलापक के १४ दिन, जिह्वक के १६ दिन और अभिन्यास के भी १६ दिन की मर्यादा है परन्तु यथार्थ रक्षा अर्थात् चिकित्सा न होने से रोगी तत्काल मर जाता है इस का कोई नियम नहीं है, उत्तम उपाय द्वारा रक्षा करने पर भी उक्त दिन पर्यन्त मर्यादा रहती है। अब तेरहों सन्निपात के विशेष २ लक्षण लिखते हैं॥

संधिक–सन्निपात उसे कहते हैं, जिस ज्वर के पूर्वरूप ही में संधि २ (जोड़) में वात पीड़ा की अधिकता, कफ, संताप, बलहानि और नींद न पड़े। इस ज्वर का वेग सात दिन रहता है और सातदिन चिकित्सा करने से आराम होता है॥

अंतक–उस ज्वर को कहते हैं जिस में अति दाह, शरीर आग सी जली जाय, बिहोशी, शिर दर्द कंपन, और हिचकी हो, इस ज्वर की अवधि दश दिन है लेकिन असाध्य है रोगी मुश्किल से बचता है॥

रुग्दाह–इस ज्वर का लक्षण यह है कि रोगी आन तान बहुत बके, ज्वर का जोर अधिक हो बिहोशी, घुमरी, जो बात पूछो ठीक २ जवाब न दे सके, कंठ और गले में दाह, पियास बहुत, कुछ २ खांसी और स्वास हो। इस ज्वर की मर्यादा बीस दिन की है, कष्टसाध्य है अर्थात् उत्तम चिकित्सा करने पर आराम हो॥

चित्तविभ्रम–नाम ही से समझ सक्ते हो, जिस ज्वर के वेग से मनुष्य पागल हो जाय, कभी हंसे, कभी गावे, कभी नाचे, कभी रोवे और आन तान बकता रहे, इस बुखार की आयु आठ दिन की है उपाय करने से आराम हो जाता है, चिकित्सा हौलदिल रोग के समान करना उचित है–

शीताङ्ग—समस्त शरीर बरफ के समान शीतल हो, देह कांपै, हाथ पैर सब ढीले हो गये हों किसी की बात न सुने, नेत्र में जलन, खांसी, वमन, और दस्त पतले हों, यह ज्वर पन्द्रह दिन रहता है ऐसा शास्त्रकारों ने कहा है परन्तु जल्द खून में गरमी न पहुंचाने से रोगी शीघ्र मर जाता है। यदि इसी ज्वर में अन्तस में अधिक दाह और पियास हो तो निस्सन्देह रोगी मर जायगा क्योंकि प्रायः ऐसा देखने में आया है कि भीतर अधिक दाह और ऊपर शीत होने से रोगी नहीं बच सका॥

तन्द्रिक—ज्वर में अकसर रोगी एक टक निहारता है, शरीर बहुत गरम हो और वारम्वार गले में कफ आ जाय, जीभ में कांटे पड़जांय जीभ काली और मोटी हो जाय, दस्त पतले, कानों में दर्द, गला अत्यन्त खुश्क जो बोलने में तकलीफ हो, ऐसी बिहोशी हो मालूम हो कि रोगी सो रहा है। यह ज्वर पच्चीस दिन में पीछा छोड़ता है वह भी यदि सद्वैद्य चिकित्सा करने वाला हो कहीं मूर्खों के हाथ लगा तो वस ही यमालय का रास्ता लिया॥

कण्ठकुब्ज—इस बुखार में पहले ही गला रुन्ध जाता है और पानी पीने में रोगी को निहायत तकलीफ होतीहै, जैसे पागल कुत्ताके काटने के जहर से पीड़ित रोगी से पानी नहीं पिया जाता, वैसा ही कण्ठकुब्ज ज्वर वाले से पानी नहीं पिया जाता, एक घूंट पानी पीने से प्राण छूटने का सा दुःख होता है, इस ज्वर में यद्यपि दाह, मोह, विलाप आदि और लक्षण रहिते हैं पर गला का पकड़जाना इस ज्वर में विशेष लक्षण है। वैद्यों ने इस ज्वर को कष्ट साध्य कहा है परन्तु असाध्य ही समझिये दश रोगी में एक दो आराम होता है। इसकी चिकित्सा नारायण तैल गले में मालिस करके अथवा राई के पलस्तर आदि से गला खोलने का उपाय बहुत जल्द करै, अगर किसी उपाय से गला का खुलना न जान पड़े तो गले में दो तीन जोंक लगाके खून निकलवाय देय और शीतल जल आदि

पीने को न देवे और न कोई बहुत गर्म्मही दवा देवे जहां तक हो किञ्चित उष्ण गौ का दूध अधिक पीने को देय ॥

कर्णकज्वर—इस ज्वर में रोगी कान का बहरा हो जाताहै यह विशेष लक्षण हैं। प्रलाप, कण्ठरुन्ध, दमा, खांसी मुखसे लार का बहना आदि लक्षण रहते हैं। इस ज्वर की आयु वैद्यवरों ने तीन महीना लिखा है और अत्यन्त कठिनता से आराम होता है ऐसा कहाहै। किसी २ रोगी को देखा भी गया है॥

भुग्ननेत्र—इस बुखार में नेत्र टेढ़े हो जाते हैं, यह विशेष लक्षण है। तथा ज्वर की आधिक्यता, बुद्धि का नाश, मोह, प्रलाप, श्रम और कहीं २ कूजन यह भी लक्षण होते हैं। इस ज्वर की आठ दिन की मर्यादा है परन्तु असाध्य है॥

रक्तष्ठीवीज्वर—इसमें जीभ अतिशय काली अथवा लाल, उसमें चकत्ते पड़ गये हों जीभ तथा ओंठ भी फट गये हों और उसमें रुधिर बहता हो यह विशेष लक्षण है, इस के अलावा वमन, पियास, मोह, पेट में दर्द, दस्त पतला, हिचकी, पेट का फूलना, घुमरी, और चित्तभ्रम आदि लक्षण होते हैं। रक्तष्ठीवी दश दिन रहता है परन्तु रोग असाध्य है, चिकित्सा इस में बहुत गरम नहीं करनी चाहिये॥

प्रलापक—यह ग्यारहवां सन्निपात ज्वर है कि जिस में रोगी दिन रात बकताही रहे, अपनी बड़ाई की बातें करै पवित्रता में चित्त राखै, हर एक प्राणी को चिन्ता करै, बुद्धि स्थिर न रहै और चित्त महा व्याकुल रहे। इस ज्वर की अवधि चौदह दिन है परन्तु यमालय का रास्ता प्रत्येक समय निहारता रहता है॥

जिह्वक—सन्निपात उसे कहते हैं जिस में अति कठिन कंटक युक्त जिह्वा होय, इस ज्वर में प्रायः रोगी बहिरा और गूंगा हो जाता है, स्वास

कास आदि और भी उपद्रव होते हैं । इस ज्वर की मर्यादा सोलह दिन और कष्ट साध्य है ॥

अभिन्यास—, अथ तेरहवां सन्निपात का लक्षण कहा जाता है । रोगी के मुख पर चिकनाई हो, निद्रा अधिक हो, इन्द्रियां शिथिल बल का नाश और बोलना कम आय एवं स्वास रुक २ के आवै तो अभिन्यास ज्वर जानना, यह सन्निपात केवल मृत्यु तुल्य है । इस के आगे अब तेरहो सन्निपात के साध्यासाध्य का निर्णय करते हैं ॥

अथ साध्यासाध्य निर्णयः ॥

संधिकस्तंद्रिकश्चैव कर्णकः कंठकुब्जकः । जिह्वकश्चित्त विभ्रंशः षट्साध्याः सप्तमारकाः ॥

सन्धिक, तन्द्रिक, कर्णक, कण्ठकुब्ज जिह्वक और चित्त विभ्रन्श यह छ सन्निपात साध्य अर्थात् सत् वैद्य द्वारा देशकाल पात्र के अनुसार उत्तम चिकित्सा होने से आराम हो सक्ता है । अन्तक, रुग्दाह, शीतांग भुग्ननेत्र रक्तष्ठीवी, प्रलापक और अभिन्यास यह सात प्रकार के सन्निपात प्राण के हरने वाले हैं । हिकमत में सन्निपात को सरसाम कहते हैं और डाक्टरी में सन्निपात का लक्षण प्रायः एपोप्लेक्स रोग में मिलता है और डाक्टर लोग उसी के अनुसार चिकित्सा भी करते हैं इसी से सन्निपात ग्रसित रोगी को कम आराम कर सकते हैं क्योंकि इस रोग में डाक्टर लोग शिर पर वर्फ रखाते हैं और सन्निपात में शीतल जल से सिंचन करना निषेध किया है । लिखा भी है—सन्निपातेतु दाहार्तं ■ः सिंचेच्छीत वारिणा । आतुरःसकथं जीवेद्भिषग्वा सकथंभवेत्" जो वैद्य सन्निपात के दाह में शीतल जल से सिंचन करता है अर्थात् शिर या छाती वगैरह में वर्फ या शीतल जल लगाता है वह वैद्य रोगी को कैसे आराम करेगा किंतु मारडालेगा उस को वैद्य कैसे कहना चाहिये । पाठकगण

को स्मरण होगा, पूर्व में हम लिख आये हैं कि ज्वर रोग में गरमी प्रधान रहती है उस गरमी से और मस्तिष्क से पूरा संबन्ध है उस पर ध्यान रखना चिकित्सक मात्र को जरूरी है ज्वर रोग में उस के निवारण के उपाय न कर के उलटी चिकित्सा जैसे आमज्वर (कच्चा बुखार) में दवा देना * अथवा खाने को देना, या मर्यादा से अधिक लंघन कराना, वात पित ज्वर वाले को एकाएकी कोठरी के भीतर बंद रखना, या पियास लगने पर पानी पीने को न देना, अथवा गरम २ औषधियों का काढ़ा या रस खिलाना इत्यादि उटपटांग उपायों से ज्वर रोग में सन्निपात हो जाता है और इस रोग से विरले रोगी आराम होते हैं देखिये लोलिम्बराज क्या कहते हैं ॥

सन्निपातस्य कालस्य कश्चिद्भेदो न विद्यते। चिकित्सको जयेद्यस्तं तस्मात्कोस्ति प्रतापवान ॥

सन्निपात रोग और काल (मृत्यु) में कुछ भी भेद नहीं है जो वैद्य उस सन्निपात को जीते अर्थात् अपनी अनुभव प्रक्रिया के द्वारा उस काल रूपी रोग से रोगी को बचावै तो उस से बढ़कर संसार में और कौन प्रतापी है ॥

---

*कषायं यः प्रयुंजति नराणां तरुणज्वरे। ससुप्तंकृष्णसर्पंतु कराग्रेण परामृशेत् ॥

जो वैद्य नये बुखार में अर्थात् कच्चे ज्वर में काढ़ा आदि दवा पीने को देता है वह मूर्ख वैद्य मानों सोते हुये काले सांप को उंगलियों से छू कर जगाता है। तात्पर्य यह कि ज्वरारंभ में दवा खाने को देने से अथवा अन्य कुपथ्य के होने से सन्निपात हो जाता है जिस रोग से विरलाही लोग बचते हैं ॥

सन्निपात ज्वर में कर्णमूल ॥

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः । शोथः स जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥

सन्निपात ज्वर के अन्त में कान की जड़ में खून जम कर महा दुख-दायक एक सूजन पैदा होती है, उस सूजन से ऐसा ही कोई भाग्यशाली हो तो आरोग्य होता है क्योंकि यह सूजन मनुष्य के मारने को होती है यह सूजन भी बुखार बिगड़ने के कारण से होती है क्योंकि ज्वर में जब आभ्यान्तरिक वात पित्त की गरमी अधिक बढ़ती है और अजान वैद्य उसे शान्ति नहीं कर सके तो वही गरमी मस्तिष्क में पहुंच तत् सम्बन्धी नसों के खून को अत्यन्त उष्ण कर पतला कर देती है तब वही खून वहां से टपक कर कान के नीचे नस में आ के जम जाता है उससे जो सूजन पैदा होती है उसी को कर्णमूल कहते हैं (सन्निपात ज्वरस्यान्ते) इस पाठ का तात्पर्य यह है कि ज्वर के अन्त में ही प्रायः कर्णमूल होता है, किन्तु ज्वर के आदि मध्य में भी कर्णमूल होता है जिसका प्रमाण देते हैं ॥

ज्वरस्यपूर्वं ज्वरमध्यतोवा ज्वरान्ततोवा श्रुतिमूलशोथः । क्रमादसाध्यः खलुकष्टसाध्यः सुखेनसाध्योमुनिभिःप्रदिष्टः॥

भावार्थः—अगर सन्निपात रोग के पूर्व ही में कर्णमूल शोथ उत्पन्न हो तो असाध्य जानना, मध्य में कर्णमूल होने से कष्ट साध्य और अन्त में कर्णमूल होने से सुख साध्य जानना, यह बड़े २ वैद्यवरों का अनुभव किया हुआ है । सन्निपात रोग में कर्णमूल क्यों होता है उसका ठीक कारण यही है कि मस्तिष्क में जो रक्त है गरम होने से पतला हो के नीचे को आता है किन्तु कर्णस्थ मूल नाड़ी के गाढ़ रक्त के सम्बन्ध से वह भी गाढ़ा हो के जम जाता है और उसी से कान के पीछे नीचे की तरफ फूल आता है, फिर रक्त ऊपर को नहीं जा सक्ता इसी से वैद्यवरों ने

उसके निकाल देने की राय प्रगट की है । बहुत से मूर्ख वैद्य जो सुश्रुतादि ग्रन्थ को देखा सुना नहीं है डर से कर्ण का रक्त नहीं निकालते जिससे रोगी मर जाता है ॥

अहियापुर में एक प्रयागवाल के स्त्री को सन्निपात ज्वर पश्चात् कर्ण मूल हुआ और यहीं के एक नामी वैद्य की चिकित्सा होती थी, वैद्य महाराज डर से अथवा और किसी विचार से उस रक्त को मोक्षण न करके टिंचर आइयोडिन लगाना आरंभ किया, वह भला आराम कब हो सक्ता था अन्त में एक डाकृर ने आ के चीरा, करीब देढ़ ढाई सेर के मवाद निकला किन्तु जियादा दिन होने से वह मवाद ऐसा सड़ गया था कि जिस के विष से स्त्री मर गई । लिखा है:—

शांतेत्रिदोपे श्रुतिमूलजातः शोथस्य रक्तं प्रविमोचयेत् प्राक्, पश्चान्मुहुर्कटफलकृष्णजीरा विश्वाकुलत्थोत्भव लेपनंसत् ॥

त्रिदोष अर्थात् सन्निपातज्वरके शांत होने पर कर्णमूल में उत्पन्न शोथ से पहिले जलौका (जोंक) या नस्तर द्वारा रक्त निकाल बाद कायफल, कालाजीरा, सोंठ और कुरथी इन सबों को पानी में खूब महीन पीस के मोटा लेप करै या अपनी विचार से अन्य लेपादि लगावै, जोंक लगाने कि उपरान्त एक दिन निम्ब पत्र बांध के तब कोई लेप लगावै ॥

सन्निपात ज्वर की चिकित्सा ॥

बुद्धिमान वैद्य को प्रथम ही यह निदान कर लेना बहुत उचित है कि १३ प्रकार के कहे हुये सन्निपातों में इसे कौन सन्निपात है और इसे ज्वरारंभ ही में सन्निपात हुआ है अथवा अपथ्य से ज्वर बिगड़ कर सन्निपात हुआ है । रोगी की प्रकृति अवस्था बल, देशकाल, इसके कोई प्रमेहादि अन्य रोग तो नहीं थे या ज्वर के अतिरिक्त पूर्वोपार्जित अन्य रोग

भी उपस्थित है इत्यादि सब बातों को दवा देने के पूर्व ही जांच लेना चाहिये क्योंकि विना सब बातों को जांचे दवा देना महा पाप है॥

यदि अपथ्य से ज्वर रोग बिगड़ कर सन्निपात हुआ हो तो उसे लंघन नहीं कराना, हलका पथ्य देता जावे और बढ़े हुये रोगों को कोमल चिकित्सा से शांत करे, यदि प्रारंभही से सन्निपात हुआ हो तो बिचार के साथ १०-११ पृष्ठ के अनुसार लंघन करावे, जल प्रकर्ण को देख के गरम जल पीने को देय, सन्निपात रोगी को ऐसे मकान में रखना चाहिये जो बहुत साफ, खुलासा, जिसमें दो तीन दरवाजे हों, जादा हवा होतो परदा डाग दे किवाड़ न बन्द करे और न रोगी के समीप बहुत भीड़ रहे अगर रोगी की होश हवास दुरस्त हो तो वैद्य तीन,२ घन्टे पर अथवा दोनों समय उस्से भीतरी दुख पूछ लिया करे और वैसाही चिकित्सा करे अगर बतलाने की सामर्थ्य जाती रही हो तो बड़ी बुद्धिमानी के साथ चिकित्सा करनी चाहिये॥

यदि रोगी की चैतन्यता जाती रही हो अथवा कण्ठ का अवरोध हो तो वैद्य इस बात की कोशिश सबसे पहले करे जिससे रोगी कुछ होश में आवे और गला खुले जिससे वह अपना सुख दुख बयान कर सके। इस स्थल में यह जता देना बहुत ही उचित है कि बिना शिर पर अधिक गरमी पहुंचे न रोगी विहोश होता है और न कंठ बन्द होता है इस लिये मूर्छित रोगी की चिकित्सा रसादिक से कभी न करे अर्थात् रस खाने को न देय॥

संज्ञानाश की उपाय॥

कम्पःप्रलपनंयस्य संज्ञानाशश्चदारुणः। रसैश्चला-ववर्तैश्च कुलिङ्गैःशशतित्तिरैः॥तर्पयेत्प्राक्पुराणेन सर्पिषाभ्यां-जयेन्नरं। बलारास्नागुडूच्याद्यैस्तैलैश्चपरिषेचयेत्॥

जो सन्निपाती रोगी के शरीर में कम्पन अधिक हो, या किसी को न चीन्हें आनतान बकता हो अथवा इन्द्रियों की चैतन्यता बिलकुल जाती

रही हो उस रोगी को लवा, बटेर, चिड़ा, खरगोस और तीतर इनके मांस रस अर्थात् शुरुवा को पहले पिलाय के फिर समस्त शरीर में पुराने घी की मालिस करै अथवा बरियारा कि जड़ की छाल, रासन और गुर्च के क्वाथ से सिद्ध किया तैल को मर्द्दन करै। अगर इस क्रिया से मूर्छित न जागै अर्थात् संज्ञा चैतन्य न हो तो निम्नलिखित औषध का प्रयोग करै ॥

मूर्छित सन्निपात पर लघु सूचिकाभरण रस ॥

विषंपलमितं सूतः शाणकश्चूर्णयेद्द्वयम् । तच्चूर्णं संपुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशरावयोः ॥ मुद्रांदत्वाच संशोष्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् । वन्हिं शनैःशनैः कुर्यात् प्रहरद्वय संख्यया ॥ तत उद्घारयेन्मुद्रामुपरिस्थांशरावकात् । संलग्नो यो भवेत्सूतस्तंगृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥ वायुस्पर्शो यथा नस्यात्तथा कुप्यांनिवेशयेत् । यावत्सूच्यामुखेलग्नः कुप्यांनि यातिभेषजं ॥ तावन्मात्रा रसो देयो मूर्छिते संनिपातिनि । क्षीरेण प्रास्थितेमूर्द्धि तत्रांगुल्या च घर्षयेत् ॥ रक्त भेषजसं पर्कान्मुर्छितोपिहि जीवति । तथैव सर्प दृष्टस्तुमृताव- स्थोपि जीवति । यदातापो भवेत्तस्य मधुरं तत्रदीयते ॥

यह श्लोक शारङ्गधर के द्वितीय खण्ड का है। (विषं) शींगिया इसी को मीठा तेलिया भी कहते हैं २ तोला (सूत) पारा ४ मासे दोनों को एक में मिला कि खूब महीन चूर्णकर, दो रकाबी जिस में कांच का लुक हो (यह रकाबी सौदागरों के दूकानों में मिलती भी हैं) उस में चूर्ण को धर दूसरी रकाबी ऊपर से ढक पांच कपरौटी करके सुखाय लेय बाद निर्वात कोठरी में उस प्याले को चूल्हे पर चढ़ाय दोपहर पर्य्यन्त बहुत धीमी आंच से पकावे, उस के बाद सम्पुट को ठंढाकर आहस्ते से रकाबी को अलग कर लय, ऊपर की रकाबी में जो पारा लगा हो उसे निकाल किसी

कांच की सीसी में रस लाग से फौरन उस का मुख बंद कर दे, ताकी हवा न लगने पावैं । मूर्छित रोगी का बीच में थोड़ा सा शिर मुड़ाय महीन नस्तर मार के जरा सा घाव कर देय जब उस में से रुधिर निकले, जितना सूचीका मुख होता है उतना सीसी में से रस लेके उस घाव में छोड़ अंगली से घिसे और थोड़े से दूध से धो डाले, यह रस रक्त से मिल मस्तिष्क में जाके जमे रुधिर और कफ को ठीक करता है-इस से मूर्छित जाग उठता है। उसी प्रकार सर्प दंशित (सर्प से काटा हुआ) मूर्छित (मरे के समान) के शिर पर उक्त रस का प्रयोग करने से आराम होता है । पूर्वोक्त प्रयोग द्वारा मूर्छित के जागने पर अथवा न जागने पर ताप आवैं अर्थात् शरीर ज्यादा गरम हो जाय या नाड़ी देखने से भीतर गरमी अधिक बोध हो तो उसे पौंडे का रस अथवा मीठे अनार का रस पिलावैं यदि दोनों चीजों में से एक भी न मिले तो गौ के ताजे दूध में मिश्री मिला के अथवा केवल मिश्री का शरबत पिलावै । भूत पूर्व वैद्यगण ऐसे ही ऐसे क्रियायों के द्वारा यश लाभ करते थे आजकल के वैद्यों में कठिन क्रियायों का प्रयोग करना तो दुष्कर हुई है, यथार्थ औषध तक नहीं बना सके तो रोगी कैसे आराम कर सकें ॥

सन्निपात पर उन्मत्त रस का नस्य ॥

रसगंधौ समानांशौ धत्तूरफलजै रसैः । मर्दयेद्दिनमेकंच तत्तुल्यंत्रिकटुक्षिपेत् ॥ उन्मत्ताख्यो रसोनाम नस्येस्यात्सन्निपातजित् ॥

पारा और आमलासारगंधक दोनों को समान भाग ले धतूर के फल के रस में एक दिन अर्थात् चार प्रहर बराबर खरल करै, उस कजली के बराबर त्रिकटु (सोंठ पीपर मिर्च) महीन पीस के मिलावै इस का नाम उन्मत्त रस है इस का मात्रा आधी रत्ती से दो रत्ती तक है इस रस को नास देने से (सूंघाने से) भी सन्निपात मूर्छित जागता है ॥

सन्निपात पर अंजन॥

निस्त्वक्जैपालबीजंच दशनिष्कंविचूर्णयेत्। मरिचंपिप्पलीसूतं प्रतिनिष्कंविमिश्रयेत्॥ भाव्योजंबीरजैर्द्रावैः सप्ताहं संप्रयत्नतः। रसोयमंजनेदत्तः सन्निपातं विनाशयेत्॥

छिला हुआ जमालगोटे के बीज १० मासा मिरच छोटीपीपर और पारा यह सब चार २ मासा ले के सबों को महीन चूरन कर खरल में डाल जंभीरी नींबू के रस में सात दिन घोटे पश्चात् सुखाय के खूब महीन चूर्ण कर किसी काग़दार सीसी में रख दे। इस चूर्ण के अंजन देने से सन्निपात मूर्छित-जागता और सन्निपात रोग विनाश को प्राप्त होता है—

अगर कोई प्रश्न करे कि यहां पर मूर्छा खास रोग नहीं है सन्निपात रोग का उपद्रव है तो सन्निपातही का इलाज बगैरह क्यों न देवें मूर्छा आप ही जाती रहेगी? यह ठीक है, किन्तु यह वैद्यों का सिद्धान्त मत है, कोई रोग क्यों न हो जिस रोग में जो उपद्रव अधिक बढ़ा हो खासकर मूर्छा आदि जो शीघ्र ही प्राण हरण करने वाले हैं उन्हें विशेष चिकित्सा द्वारा जहां तक हो सके जल्द शांत करे। (शिक्षा) अंजनादि पूर्वोक्त प्रयोग करने के पूर्व ही वैद्य को यह जांच लेना बहुत उचित है कि रोगी को वर्तमान रोग के पहले सुजाक, गरमी, प्रमेह, अतीसार, शिररोग हौलदिल, उन्माद, रक्तजबवासीर, तृष्णा, वमन, धातुशोष और उन्मवायु आदि कोई रोग तो नहीं था अथवा वातपित्त प्रकृति युक्त महा निर्बल तो रोगी नहीं है यदि हो तो ऐसे रोगी के साथ उपरोक्त दवाइयों के प्रयोग न करके साधारण और मातदिल औषधों के द्वारा मूर्छा को दूर करे क्योंकि ऐसे रोगियों का मस्तिष्क निहायत निर्बल रहता है अति उग्र औषधों के प्रयोग करने से रोगी के मर जाने का खौफ है। उपरोक्त रोग युक्त सन्निपात रोगीकी मूर्छा इस प्रकार दूर करे॥

मूर्छा की मातादिल उपाय।

रोगी का शिर मुंड़ाय देय अथवा बाल महीन कतराय देय काह्नेलिल का तेल १ छँटाक, अंगूर अथवा ऊख का शिरका जिसमें मसाला वगैरह कुछ न पड़ा हो २ तोला, पानी डेढ़पाव सबों को एक में मिला लेय और उसी में कपड़ा तर कर के शिर पर रक्खे जब कपड़ा सूख जाय फिर उसी पानी में कपड़े को तर करले और शिर पर रक्खे लेकिन कपड़ा डुबाते समय हरबार पानी को हिला के तेल पानी को एकदिल कर लिया करे। इसी प्रकार जब तक होश न हो बरावर रखता जावे, पानी चुकजाय उसी प्रकार दूसरा पानी तैयार कर लेय। चार पांच सेर पानीको ऐसा गरम कर लेय जो शरीर पर डालने से क्लेश न हो, उसी पानी को एक टोंटीदार बरतन में भर एक आदमी रोगी के पैर के गांठ के नीचे तरेरा देवे और एक आदमी आहस्ते २ पैर को धोवे, जैसे गाय दुही जाती है उस प्रकार धोवे नीचे से ऊपर को हाथ न लेजावे। पैर धोने के बाद पैर पोछ के ऊनी या सूती हो मोजा पहनाय देय अगर मोजा न मिले तो पैर में कपड़ा लपेट देय और घन्टा दो घन्टे के बाद खोल देय, इसी प्रकार दो तीन दफे करने से निस्संदेह मूर्छा जाती रहती है। हमारे देशी वैद्य प्रथम तो ऐसी चिकित्सा जानते नहीं यदि कोई हकीम या हिकमत का जानने वाला यह उपाय करे भी तो झट कह देंगे कि शीत आजायगी। हम कहते हैं दूध घी के कमी के वजे से, बाल विवाह से, मांस भक्षियों के इस देशमें अधिक भर जाने से, आजकल देश की दशा ऐसी बिगड़ गई है, कि समस्त भारत के लोग धातुक्षीण हो रहे हैं और धातु की निर्बलता के सबब से अत्यन्त गरम दवाइयां लोगों को कम माफकत करती हैं, हम ३० वर्ष से चिकित्सा का काम करते हैं जितने सन्निपात रोगी साधारण मातदिल औषधों के प्रयोग से आरोग्य किया है उग्र और अत्यन्त उग्र औषध द्वारा नहीं॥

संधिक सन्निपात की चिकित्सा।

नागरमोथा, देवदारु, गुरुच, रास्न, शतावर, यह सब एक २ तोला। रेड़ की जड़ का छाल, कचूर कुटकी रूसा की पत्ती और सोंठ यह सब

छः छः मासा ले अधकचरा कर चार पुड़िया बनाय एक पुड़िया को एक मृत्तिका पात्र में पावभर जल डाल के धीमी आंचसे पकावे जब एक छँटाक जल रह जाय शीतल कर मल के छान लेय और एक मासा शहद डाल के पिलाय देय इसी प्रकार दोनों समय पिलावैं ॥

जिस कमरे में रोगी हो उसके बाहर निर्गुण्डी, गूगल, पीली सरसों, निम्बपत्र और रालधूप इनकी धूनी देय । इससे संधिक सन्निपात का नाश होता है ॥

संधिक सन्निपात में हलका लंघन कराना और पसीना न आता हो तो पसीना लाके शरीर हलकी करना और यवागू आदि का पथ्य देना ॥

अंतक सन्निपात ॥

यद्यपि अन्तक सन्निपात त्याग करने को लिखा है क्योंकि यह सन्निपात मनुष्य को मारनेही के लिये आता है तथापि कंठगत प्राणवालों की भी चिकित्सा करना ऐसा शास्त्रकारों ने आज्ञादी है ॥

बड़ की बकल, तुलसी की पत्ती, अमलतास का गूदा, देवदारु, कुटकी, रासन, गुरच और कुलीजन सब को समान भाग ले अधकचरा कर एक २ तोला की पुड़िया बनावे पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे ॥

अन्तक सन्निपाते रोटिका बंधनं ॥

यह प्रयोग अनेक वैद्यों का अनुभव किया हुआ है । राई के चूर्ण को लहसुन के रस में सान के रोटी बनावे और तवे पर रख घी का पुचारा दे के सेंके बाद गरमागरम शिर पर बांध देय और तीन चार घंटे के बाद खोल देय एवं दोपहर के बाद दूसरा तैय्यार कर के फिर बांधे. इस रोटी के बांधने से मनुष्य के अन्तक सन्निपात की मृत्युकारक व्यथा निस्सन्देह दूर होती है । लेकिन यह बात याद रहै कि यदि रोटी बांधने से होस वाला रोगी न बरदास्त कर सकै अथवा होस रहित रोगी अपना शिर झटके तो रोटी १५ मिनट रख के खोल लेय और एक दफे में फायदा न जान पड़े तो उसी रोटी

को ५ या १८ मिनट में फिर सिर पर रक्खे अगर रोटी सूख गई हो तो दूसरी रोटी तैय्यार करले किन्तु दश पन्द्रह मिनट से अधिक न रक्खे । अन्तक सन्निपात में गरम जल और मांस जूस इत्यादि पीने को देय किन्तु ज्वरनाश कर्ता महामृत्युञ्जय मंत्र का जप और शिवार्चन विद्वान ब्राह्मणों के द्वारा अवश्य करावै क्योंकि अन्तक सन्निपात का आरोग्य होना अति दुष्कर है इसी से वैद्यों ने हार कर यह श्लोक कहा है ॥

भिषग्भिरितिनिर्णीतं सन्निपातेंऽतकाभिधे । भेषजंजान्हवी नीरं वैद्यो गोविन्द एवहि ॥

अन्तक सन्निपात में वैद्यों ने यह ठीक निश्चय कर के कहा है कि इस रोग में रोगी की औषधी गंगाजल है और वैद्य विष्णु भगवान हैं ॥

रुग्दाह सन्निपात की चिकित्सा ॥

घलधर मलयजनागर सवालकोशीर पर्प्पटैःक्वथितं । यः पिवतिपयः सुशीतंशाम्यति रुग्दाहकस्तस्य ॥

नागरमोथा, लालचन्दन, सोंठ, सुगंधवाला, खस और पित्तपापड़ा इन सब दवाइयों को समान भाग ले कर अधकचरा कर के दो २ तोले की पुड़िया बना के पूर्वोक्त प्रकार से ३ माशा मिश्री डाल के दोनों समय काढ़ा पिलावै यदि रोगी के अन्तःकर्ण में दाह अधिक होतो यह काढ़ा न दे के निम्न लिखित-क्वाथ पिलावे ॥

उशीर चन्दनोदीच्य द्राक्षामलक पर्पटैः । शृतं शीतं जलं दद्याद्दाहतृड्ज्वर शांतये ॥

सुगंधवाला, लालचन्दन, खस, मुनक्का बीज रहित, सूखाआवला बीज रहित और पित्तपापड़ा इन का काढ़ा बना शीतल कर मिश्री मिला के पिलाने से दाह पियास और बुखार शांत होता है ॥

धूप, अगर, कपूर, सलाकी, नख, तगर, नेत्रवाला सफेदचन्दन और राल। धूप सब को एक में मिला के किसी पात्र में रख दे और दिनमें कई दफे रोगी के मकान के बाहर धूनी देय। अगर रोगी के शरीर में दाह अधिक हो खास कर ऊपर का चमड़ा जला जाता हो तो इस लेप को तैयार करके समस्त शरीर में लेपन करे। बेर के पत्तों को दही में खूब महीन पीस के अथवा कपूर, सफेदचन्दन और नीम पत्र सब को दही में पीस लेप करे। यदि समस्त शरीर में दाह न हो सिर्फ हाथ पैर के तलुए में जलन हो तो उसी में लेपन करे और धान के लावा का यूष बना के उसमें कुछ मिश्री और मात्रा देढ़ मासा शहद डाल के पिलावे, या साबूदाना गौ के दूध में पका के मिश्री मिला के पिलावे। रुग्दाह ज्वर और पित्तज्वर की चिकित्सा एक समान जानना ॥

चित्तविभ्रम सन्निपात की चिकित्सा ।

इस सन्निपात में विशेष लक्षण, चिड़ोसी, किसीको न चीन्हना पागल सरीखा आनतान बकना, हँसना गाना रहता है। गंवार लोग इसी को भूत प्रेत की बाधा समझ सतवैद्यों के द्वारा उत्तम चिकित्सा न कराके झाड़ फूंक में लग रोगी को यमपुरी की यात्रा करा देते हैं। चिकित्सक को चाहिये कि साधारण प्रयोग द्वारा मूर्छा को प्रथम शांति करे लेकिन शिर में किसी प्रकार का विघ्न न पहुंचने पावे ॥

पथ्यापर्पटकटुका मृद्वीका दारुजलद भूनिम्बाः ।
शम्याकपटोलशिवा क्वाथश्चित्तभ्रमंहन्ति ॥

बड़ा हड़का बक्कल, पित्तपापड़ा, कुटकी, मुनक्का, देवदारु, नागरमोथा, चिरायता, अमलतास का गूदा, पटोलपत्र (परवल का पात) और खुश्क आंवला सब को समान भाग ले २ तोला मात्रा का पूर्वोक्त प्रकार काढ़ा बना के पिलावे यदि रोगी के पतले दस्त आते हों तो अमलतास का गूदा और हड़ काढ़े से निकाल देव ॥

चित्तविभ्रम पर अंजन।

पीपर, कालीमिर्च, सोंठ, हींग, पीलीसरसों, हड़, बहेरा, आंवला, हल्दी, कंजा के बीज, दुधियावच और सेंधानोन सबों को एकत्रित कर कूट कपड़छान कर बकरा के मूत्र में खरल कर के गोली बांध ले और छाया में सुखाय ले। इस गोली को जल में घोट कर अंजन लगाने से चित्त विभ्रम, मृगी, भूतोन्माद और शरदी से शिर का दर्द आराम होता है ॥

शीताङ्ग सन्निपात की चिकित्सा।

इस बुखार में विशेष लक्षण शरीर का अत्यन्त शीतल हो जाना, शरीर का कांपना और भीतर दाह रहताहै और इसीको प्रथम शांत करना श्रेयस्कर है ॥

मदार के जड़ की छाल, सफेद जीरा, त्रिकुटा (सोंठ पीपर मिर्च) भारङ्गी भटकटैयाका पञ्चाङ्ग, ककड़ासिंगी और पुहकरमूल। इन सब दवाइयों को समान भाग लेय, मात्रा १ तोला से २ तोला तक पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे। इसके पीने से शीताङ्ग सन्निपात, मूर्छा, श्वास और कफ वृद्धि इनका नाश होताहै ॥

शीताङ्ग पर धुरा।

पित्तपापड़ा, कुलथी, पीपल, बच, कायफर, कालाजीरा, चिरायता, चीता, कडुई तूम्बीको बीज और हड़ इनका समान भ गले कूट कपड़छान करले। इस चूर्ण को देह में मलने से शीताङ्ग सन्निपात का नाश होताहै ॥

तन्द्रिक सन्निपात की चिकित्सा।

इस ज्वर की स्पष्ट परीक्षा यह है कि हर समय आंखों के सामने अंधियारा मालुम हो या आधी पलक ढपी रहे। इस ज्वर में शिर को तिलों के द्वारा तर रक्खे और निम्नलिखित दवाइयों का अंजन नेत्र में देवै ॥

सेंधानिमक, कपूर, मैनसिल, छोटीपीपर इन चारों चीजों को घोंटे

की लार और शहद में महीन घोट कर नेत्रों में अंजन लगाने से तन्द्रिक सन्निपात का नाश होता है ॥

काढ़ा ।

भार्गीगुडूची घनकराटकारि हरीतकी पौष्करनागराणां ।
कृतःकषायस्त्रिदिनं निपीतो घोरज्वये तन्द्रिकसन्निपातं ॥

भारङ्गी, गुर्च, नागरमोथा, भटकटैया को पञ्चाङ्ग, हड़ का बक्कला, पुष्करमूल और सोंठ इनका काढ़ा ३ दिन पीने से घोर तंद्रिकसन्निपात नाश (आराम) होताहै अगर यह काढ़ा अधिक गर्मी करे या प्यास की आधिकता हो तो इस क्वाथ को पिलावे । नीम पर की ताजी गुर्च ४ तोला, परवरका डाल पात २ तोला, रूसा की पत्ती १ तोला इन तीनों चीजोंको अधकचरा कर ४ पुड़िया बनाले और पूर्वोक्त प्रकार शाम सबेरे काढ़ा बनाके पिलावे।

कराठकुब्ज सन्निपात की चिकित्सा ।

इस बुखार में शिर का दर्द कण्ठ का अवरोध और मूर्छा विशेष कर लक्षण हैं इस ज्वर में निम्नलिखित क्वाथ को पिलावे । (स्पर्यादि क्वाथ) कंकड़ासिंघी, नागरमोथा, सुर्पकआंवला, देवदारु, बहेड़ा और कुरैआ की छाल दो २ तोला, भटकटैया का पञ्चाङ्ग, रूसा की पत्ती और हड़ का बक्कल एक २ तोला, कचूर, चिरायता, भारङ्गी, हल्दी कुटकी, पुष्करमूल चीता, कालीमिर्च, चाव, सोंठ, पीपल और कायफल इन सबों को समान भाग ले अधकचरा कर डेढ़ २ तोले की पुड़िया बना ले और पूर्वोक्त प्रकार दोनों समय काढ़ा पिलावे और किसी प्रकार का बलकारक यूस भी देता जावे कि जिससे रोगी का बलक्षीण न होने पावे और न कण्ठ सूखे ॥

कर्णक सन्निपात की चिकित्सा ।

इस ज्वर में विशेष कर के बहिरापन, मुख से लार का बहना, कान और गालों में पीड़ा इत्यादि होता है ॥

रास्नाश्वगंधा घनकंटकारी भार्गीवचापौष्करोहिणीनां ।
क्वाथःकृतः शृंगभयायुतानां पीतोजयेत्कर्णकसन्निपातं ॥

कर्णक सन्निपात में यह काढ़ा देने से प्रायः लाभ देखने में आया है, रासन, भटकटैया की जड़, असगंध, नागरमोथा, भारङ्गी दुधियावच, पुहकरमूल, कुटकी, ककरासिंगी, और सूखा आंवला इन सब चीजों को समान भाग ले डेढ़ तोले की मात्रा को पावभर जल में क्वाथ बनाय दो मासा शहद डाल दोनों समय कई दिन पिलाने से निस्सन्देह कर्णक सन्निपात दूर होता है। वैद्य को यह भी उचित है कि वात पित्तादि दोषों को न्यूनाधिक देख के औषधियों की मात्रा को कम जादा कर देवै अथवा औषधको घटा बढ़ा देय बिलकुल किताब के भरोसे से दवा करना उत्तम नहीं है। कर्णक सन्निपात में कर्णमूल जरूरही होता है। उसमें इस लेप को लगाना अच्छा है ॥

कुलथी, कायफल, सोंठ, और सौंफ इन चारों चीजों को समान भाग ले पानी से खूब महीन पीस कुछ गरम कर लेप करै, इस लेप से एक दो दिन में फायदा दृष्टि गोचर न हो तो नीचे लिखे हुये लेप को लगावै। गेरू (लाल मृत्तिका) गोपुर, सोंठ, कायफल औ घुड़वच सबोंको सिरका में खूब महीन गरम कर लेप करै, यदि इससे भी लाभ न देख पड़े तो जलौका द्वारा उस जगह का खून निकलवाय देय बाद इस लेप को लगावै। पीली सरसो, सेंधा नोन, वच, धुवां का करखा, सोंठ, हलदी सबों को पानी में पीस लेप करने से सूजन सहित व्रण आराम होता है अगर गले में सूजन हो तो भी इस लेप के लगाने से आराम होता है। सेंधानोन और छोटी पीपल दोनों को गरम पानी में पीस नास देने से भी फायदा होता है ॥

भुग्ननेत्र सन्निपातकी चिकित्सा ॥

इस ज्वर में दृष्टि का तिरछापन और स्मरण शक्ति का नाश विशेष लक्षण है, इसी को प्रथम शोधन करना मुख्य काम है। जिस में दिल दि-

माग को शुद्ध करके स्मरण शक्ति को चैतन्य करना और अञ्जन के द्वारा टेढ़ी दृष्टी को ठीक करना चाहिये॥

अवलेहादि॥

भूनिम्बमाक्षिकवचा सहितंचकुर्या ल्लेहंकणोपण रसोनक राजिकाभिः। नेत्राञ्जनञ्च लवणोत्तम पिप्पलीभ्यां नस्यंवचा मरिचहिङ्गु मधूकसारैः॥

चिरायता, शहत, दुधियावच, छोटी पीपल, काली मिर्च, लहसुन और राई इन सबों को समान भाग ले महीन चूर्ण कर एक एक मासा की पुड़िया बना ले और दिन में दो या तीन दफे शहत में गोला करके चटावै। सेन्धा नोन और छोटी पीपल पानी से खूब महीन घोंट अञ्जन करे और वच, मिरच, हींग, मुलेठी इन सबों को मीठे अनार के रस में महीन घोंट नास देवै॥

रक्तष्ठीवी सन्निपातकी चिकित्सा॥

X इस ज्वर में थूक के साथ खून आता है और वमन भी हो जाता है यह विशेष लक्षण है॥

पित्तपापड़ा, जवासा, रोहितघास इनका काढ़ा बनाय मिश्री मिला के पिलावै अथवा मुलेठी १ तोला, कतीरा गोंद १ तोला दोनों को महीन चूर्ण कर २८ पुड़िया बनावै और दिन में चार दफे अथवा छ दफे अर्थात् दो दो घंटे पर शहत के साथ चटावै। और कंकोल मिर्च को चूर्ण कर के नास देय इससे मुख से रुधिर का आना बन्द होता है। यदि इससे रुधिर न बन्द हो तो यह काढ़ा देय। नागरमोथा, पद्माख, पित्तपापड़ा, सफेदचन्दन, लालचन्दन चमेली की पत्ती, शतावर, मुलेठी, नींब की छाल और सुगन्धवाला इन सबों को समान भाग ले दो तोलां की मात्रा का क्वाथ बनाय दो मासा शहत डाल के पिलावै। इसी प्रकार दोनों समय

पिलाने से रक्तष्ठीवी सन्निपात आराम होता है। इस्से भी फायदा न देख पड़े तो यह क्वाथ पिलावै।

महुआ, मुलेठी, फालसा की छाल, लालचन्दन, तेजपात, देवदारु, और सागवन वृक्ष का फल अथवा छाल सब समान भाग ले दो तोला की मात्रा डेढ़पाव पानी में पकावै एक छँटाक पानी जल जाय मल के छान लेय और दो तोला मिश्री मिला के किसी बोतल में भर देय और दो २ घण्टे पर पिलावै। तथा दूब और अनार के फूल के रस की नास देवै॥

प्रलापक सन्निपात की चिकित्सा॥

इस ज्वरमें अत्यन्त शिरमें दर्द, बुद्धिका नाश, और आन तान बकना विशेष लक्षण है। यह क्वाथ पिलावै नागरमोथा, सुगन्धवाला, पित्तपापड़ा, लालचन्दन, धौ की छाल सबों को समान भाग ले पूर्वोक्त प्रकार क्वाथ बना के दोनों समय पिलावै॥

जिव्हक सन्निपात की चिकित्सा।

इस सन्निपात में विशेष लक्षण–रोगी सन्ताप करके महा व्याकुल तथा कठिन कंटक युक्त जिह्वा एवं गूङ्गापन आदि होता है। इसकी चिकित्सा रक्तष्ठीवी के समान करनी चाहिये किन्तु जिह्वा को ऊपरी चिकित्सा से कोमल करना उचित है। और श्भिन्यास सन्निपात की चिकित्सा प्रलापक सन्निपात के समान करना इत्यादि॥

सन्निपात ज्वर तथा साधारणज्वर के उपद्रवों (तृष्णादि) की चिकित्सा विषमज्वर एवं जीर्णज्वर आदि के लक्षण लिख के तत्पश्चात् लिखेंगे॥

अथ विषमज्वर लक्षणम्॥

यःस्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यांतथैवच। वेग तश्चापिविषमोज्वरःसविषमस्मृतः॥

जो बुखार सरदी तथा गरमी करके अनियत समय में चढ़े और उतरे जिसका वेग विषम हो अर्थात कभी कम और कभी जादा हो जाय, उसको विषमज्वर कहते हैं। तात्पर्य्य यह कि प्रथम ज्वर वात पित्तादि किसी किस्म का आया हो और वह ज्वर कुपथ्यादि कारण से रसादि में बना रहा हो और ऊपर से मालुम हुआ हो कि ज्वर बिलकुल छुट गया कुछ काल के बाद पुनः ज्वर आजाय उसे विषमज्वर कहते हैं। इस ज्वर में एक प्रकार का बुखार शरीर में बना रहता है किन्तु मालुम नहीं होता ऊपरी विकार से वही ज्वर तेज हो जाता है, इस ज्वर में पित्त प्रधान है. लेकिन इस बुखार का कोई समय नहीं है जभी आजाय और यह. ऐसा दुष्कर ज्वर है कि लोगों को बरसों नहीं छोड़ता यदि उत्तम औषध मिले तो एकही दिन में छुट भी जाता है। इस विषमज्वर का पांच भेद है जैसे:-

सन्ततःसततोऽन्येद्युस्तृतीयकचतुर्थिकौ ॥

सन्तत ज्वर, सततज्वर, अन्येद्युः ज्वर तृतीयक ज्वर और चातुर्थिक ज्वर इन सबों के लक्षण नीचे प्रकाश करते हैं ॥

सप्ताहंवादशाहंवा द्वादशाहमथापिवा। सन्तत्यायोऽविसर्गीस्यात् सन्ततः सनिगद्यते ॥ अहोरात्रेसततको द्वौकालावनुवर्तते। अन्येद्युष्कस्त्वहोरात्रादेककालंप्रवर्तते ॥ तृतीयकस्तृतीयेन्हि चतुर्थेऽन्हिचतुर्थकः ॥

सन्ततज्वर-उसे कहते हैं जो सात दिन किम्वा दश दिन या बारह दिन तक एक समान ज्वर बना रह के उतरे सात दिन से वातप्रधान ज्वर दश दिन से पित्त प्रधान ज्वर और बारह दिन से कफ प्रधान ज्वर जानना चाहिये ॥

सततज्वर-एक दिन रात भर में दो बखत चढ़ता और उतरता है ॥

अन्येद्यु ज्वर-एक दिन रातभर में एकही बार चढ़ता और उतरताहै ॥

तृतीयक ज्वर-उसे कहते हैं जो तीसरे दिन ज्वर चढ़े अर्थात् जिस दिन ज्वर उतर गया उसके तीसरे दिन फिर चढ़े अर्थात् एक दिन बीच में खाली देके और इसी ज्वर को कोई अंतरिया और कोई तिजारी कहते हैं ॥

चातुर्थिक ज्वर-उसे कहते हैं जो बुखार दो दिन बीच में छोड़ के चौथे दिन आवै जिसे लोक में चौथिया कहते हैं ॥

तृतीयकज्वर का भेद ॥

कफपित्तात्त्रिकंग्राहीपृष्टाद्वातकफात्मकः। वातपित्ताच्छिरोग्राहीत्रिविधःस्यात्तृतीयकः॥

तिजारी बुखार अगर प्रथम कमर के पिछाड़ी जहां तीन हाड़ है उस में दर्द होके अथवा उसे जकड़ के चढ़े तो कफ पित्त से जानना, यदि पीठ में दर्द वगैरह होके उष्ण शीतल होके चढ़े तो वात कफ से और जो प्रथम शिर में दर्द वगैरह उत्पन्न कर के चढ़े उसे वात पित्त से जानना चाहिये, जिस ज्वर में जिस दोष का अधिक कोप देखे उसी के अनुसार चिकित्सा करे ॥

विषम ज्वर में जाड़ा और गरमी मालुम होती है उसका कारण दिखलाते हैं ।। जो विषम ज्वर में वायु कफ के साथ मिल के जब रगों में बहती है तब ज्वर के प्रारंभ में जाड़ा मालुम होता है और बाद उस के जब वायु कफ से अलग हो जाती है अन्त में पित्त दाह पैदा करता है यही कारण है जो जाड़ा से ज्वर आने के अन्त में पियास अधिक लगती है । इसी तरह जब वायु पित्त के साथ रगों में गमन करती है तब ज्वर के आरंभ में दाह और शीत होने के बाद यानी अन्त में श्लेष्मा अपने स्वभावज गुण से शीत उत्पन्न करता है और जाड़ा मालुम होता है । यह दोनों दाहादिक और शीतादिक ज्वर संसर्गी हैं अर्थात् द्विदोषज हैं, इन में शीत पूर्वक सुख साध्य और दाह पूर्वक कष्ट साध्य है ॥

चातुर्थिक ज्वरका भेद ॥

चातुर्थकोदर्शयति प्रभावंद्विविधंज्वरः । जङ्घाभ्यांश्ले-

ष्मिकःपूर्वं शिरसोनिलसम्भवः ॥ मध्यकायन्तुगृन्हाति पूर्वंयस्तुसपित्तजः। विपमज्वरएवान्यश्चातुर्थिकविपर्ययः॥ समध्येज्वरयत्यहन्यादावन्तेचमुञ्चति ।

चातुर्थिं ज्वर दो प्रकार का प्रभाव देखाता है। जो चातुर्थिक कफ जन्य है सो पहिले पिंडरिन से चढ़ता है और जो वातोत्पन्न है सो शिरसे शुरू होता है । जो चातुर्थिक में पित्त प्रधान है वह मध्य शरीर अर्थात् पेट से चढ़ता है। एक प्रकार का विषम ज्वर और है जो चातुर्थिक ज्वर से विपरीत याने उलटा रूप से आता है यह कि बीच से दो दिन बराबर ज्वर बना रहता है और आदि का एक दिन अन्त का एक दिन छोड़ देता है। एक प्रकार का विषम ज्वर और कहते हैं जिसे किसी २ ग्रंथ में नरसिंह ज्वर नाम लिखा है॥

विदग्धेऽन्नरसेदेहेश्लेष्मपित्तव्यवस्थिते। तेनार्द्धंशीतलं देहमर्द्धमुष्णंप्रजायते ॥ कायेदुष्टंयदापित्तंश्लेष्माचान्तेव्यवस्थितः। तेनोष्णत्वंशरीरस्यशीतत्वंहस्तपादयोः ॥ कायेश्लेष्मायदादुष्टः पित्तंचान्तेव्यवस्थितम् शीतत्वं तेन गात्रस्यादुष्णत्वंहस्तपादयोः ॥

शरीर में जब भोजन किया हुआ आहार का रस न पचने से (विदग्ध) जल गया तब कफ और पित्त दुष्ट होके कोप करते हैं उस अवस्था के ज्वर में आधी शरीर शीतल और आधी शरीर गरम रहती है॥

जब पेट में पित्त दूषित होके प्राप्त हो और हाथ पांव में कफ रहे उस से जो ज्वर उत्पन्न हो उसमें पित्त से शिर से पेट पर्य्यन्त गरम रहता है और कफ से हाथ पांव शीतल रहते हैं। इसी प्रकार जब कोष्ट में कफ दूषित हो और (अन्त) हाथ पांव में पित्त, तब शिर से पेट तक शीतल और हाथ पांव गरम रहते हैं ॥

प्रलेपक ज्वर का लक्षण।

प्रलपन्निवगात्राणिघर्मेणगौरवेणच। मन्दज्वरविलेपी च सशीतःस्यात्प्रलेपकः॥

जिस ज्वर में पसीना और शरीर भारीपन के वजे से शरीर के ऊपर का चमड़ा लिपासा अर्थात् ओढ़ा सा मालूम हो और ज्वर बहुत तेज न हो एवं जाड़ा मालूम हो उसे प्रलेपक ज्वर कहते हैं। सुश्रुत जी कहते हैं। (ज्वराश्चविषमाः सर्वप्रायः क्लेशापशोषिणाम्) अक्सर करके जितने विषमज्वर हैं सब क्लेश सहनेवाले और धातुक्षीणवाले को होते हैं। पाठकगणको यह भी याद रखना चाहिये कि ज्वर बिना किसी धातु से अपना पूरा सम्बन्ध किये अधिक दिवस पर्य्यन्त शरीर में रह नहीं सक्ता इस लिये जब देखे कि उत्तम औषध के भी योग से बुखार नहीं छोड़ता तो निम्नलिखित लक्षणों में मिला ले कि यह ज्वर किस धातु में प्राप्तहै उससे अलग कर देने ही से ज्वर जाता रहेगा। वे सात धातु है रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, (हाड़) मज्जा, और शुक्र॥

सप्तधातुगत ज्वर लक्षण।

रसगतज्वर—शरीर में भारीपन, जी का मचलाना, शरीर में आलस्य अरुचि और उदासीनता यह लक्षण रस गत ज्वर में होते हैं॥

मांसगतज्वर—में विशेष लक्षण, पैर में ऐंठन, पियास, पेशाब और दस्तों का अधिक होना, भीतर दाह और बेचैनी होती है॥

मेदगतज्वर—में अतिशय पसीना, पियास, बिहोसी, आनतान बकना, वमन, शरीर में दुर्गन्धि, अरुचि, ग्लानि और बेचैनी आदि लक्षण होतेहैं।

रक्तगतज्वर—का लक्षण मुह से रक्त थूकना, दाह, बिहोसी, वमन घुमरी, प्रलाप, शरीर में फुन्सियां या लाल २ दाग पड़जाना और पियास वगैरह होता है॥

अस्थिगतज्वर–में हड्डफूटन, कल न पड़ना, हाथ पांव का पटकना, वमन, दस्त और श्वास का फूलना यह लक्षण होते हैं ॥

मज्जागतज्वर–इसमें आंख के सामने अंधियारा मालूम होना, हुचकी, महाश्वास, खांसी, जाड़ालगना, वमन, अन्तर्दाह और मर्मस्थान में दर्द यह सब महा असाध्य लक्षण होते हैं ॥

शुक्रगतज्वर–(मरणंप्राप्नुयात्तत्र शुक्रस्थानगतेज्वरे) शुक्र गत ज्वर होने से मनुष्य निस्सन्देह मर जाता है। इसमें विशेष लक्षण अत्यन्त प्रसंगेच्छा और अकस्मात वीर्य्यपात होते हैं ॥

उक्त सर्व धातु गत ज्वरों की चिकित्सा मुख्य यह है कि बढ़ेहुये उपद्रवों का दमन करना तथा क्षीण धातुओं को बढ़ा के सम करना और बढ़े हुओं को घटा के सम करना जिसकी विधि कुछ आगे लिखेंगे भी। अब जीर्णज्वर के लक्षण कहते हैं ॥

जीर्ण ज्वर ।

योद्वादशेभ्योदिवसेभ्यऊर्ध्वं दोषत्रयेभ्योद्विगुणेभ्यऊर्ध्वं। नृणांतनोतिष्ठति मन्दवेगोभिषग्भिरुक्तोज्वरएषजीर्णः ॥

जो बुखार बारह दिन के ऊपर निरन्तर बना रहे विशेष करके वात ज्वर चौदह दिन के उपरान्त, पित्तज्वर बीस दिन के उपरान्त और कफज्वर चौबिस दिन के ऊपर बना रहे एवं बुखार बहुत तेज न हो किन्तु मन्द वेग से बना रहै उसको जीर्णज्वर कहते हैं ॥

जीर्ण ज्वर के भेद से एक ज्वर का लक्षण और कहते हैं ।

वातवलासक ज्वर ।

नित्यंमन्दज्वरोरूक्षः शूनःकृच्छ्रेणसिद्ध्यति। स्तब्धांगः श्लेष्मभूयिष्ठो नरोवातबलासकी ।

धीमा ज्वर निरन्तर शरीर में बना रहै. शरीर रूखी, हाथ पैर या समस्त शरीर में कुछ सूजन, तमाम वदन में दर्द अथवा शरीर के नसें जकड़ी सी मालूम हो कफ की अधिकता यह लक्षण होते हैं और ऐसे रोगी बहुत मुस्किल से आराम होते हैं।

अथ आगंतुक ज्वर के लक्षण।

अभिघाताभिषंगाभ्यामभिचाराभिशापतः। आगंतुर्जायतेदोषैर्यथास्वंतं विभावयेत्॥

आगंतुक ज्वर उसे कहते हैं जो बुखार मिथ्याहार मिथ्या विहार द्वारा न हो के अकस्मात् उत्पन्न हो जैसे अभिघात अर्थात् चोट लगने से (अभिषंग) भूतादिकों के लगने से * (अभिचार) मंत्र यंत्र तंत्र के योग से इस में भी वही बात है, अभिशाप अर्थात् गुरु ब्राह्मणादिकों के शाप से यथा दोष सो ज्वर होता है उसे आगंतुक ज्वर कहते हैं। भूत बाधा से उत्पन्न ज्वर के लक्षण नीचे लिखते हैं॥

---

* असिल में भूत प्रेत कोई वस्तु नहीं है सिर्फ भय है, किसी कारण से क्यों न हो हृदय कंपित होने ही से (हास्य रोदन कंपनं) इत्यादि उपद्रव उठ खड़े होते हैं उसी को अज्ञानी लोग भूत प्रेत की बाधा मानने लगते हैं और इस वजे से लोगों का विस्वास और भी जम जाता है कि इस प्रकार से रोग कपटी टोटका आदि उपायोंसे छुट भी जाता है यद्यपि यह सब उपाय वैद्य विद्या से संबन्ध रखते हैं जैसे (वातोन्मादे त्रासनं) जैसे वायु के उन्माद में (पागल) की भायनक तस्वीरें अथवा रूपोंको दिखलाना, धमकाना (यह भी हो सक्ता है जैसे रोगी के सामने दीपक जला के माला फूल धूनी आदि दे के डाटना कि बतला तू कौन है इसे छोड़ दे नहीं तो तुझको आग में जला दूंगे) विष रहित सर्प से कटवाने का भय देखाना इत्यादि उपायोंसे (विषस्यविषमौषधं) जैसे (भयात् वायु) डर में वायु बिगड़ जाता है वैसा ही डर दिखानेसे वायु शुद्ध होता है किन्तु अज्ञानात् लोगोंको विस्वास हो जाता है कि अमुक आदमी झाड़ने फूकने से आराम हुआ है। इस लेख से

भूताभिषंगादुद्वेगो हास्यरोदनकंपनं। केचिद्भूताभिषंगोत्थं ब्रुवतेविषमज्वरं ॥

अब भूताभिषंग ज्वर के लक्षण दिखाते हैं—जैसे चित्त का उच्चाट होना, हँसना, रोना और शरीर का कांपना और कितने आचार्य्य विषम ज्वर को भी भूत बाधा से उत्पन्न मानते हैं। मानने का कारण यह जान पड़ता है कि विषम ज्वर में खास कर, तिजारी चौथिया आदि ज्वर यंत्र मंत्र टोटका आदि प्रयोग से भी छुट जाता है। इन सब लेखों से जाना जाता है कि पूर्व भूताचार्य्य पदार्थ तत्वज्ञान (किमस्ट्री सायन्स आदि) में अभ्यास कम रखते थे अथवा उसे वाहियात समझते थे। तभी तो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध बातों को भूत बाधा मान लेते हैं। यंत्र या कोई जड़ी बुटी हाथ की कलाई या बाहु, गले में बांधना ठीक रक्त के साथ उस का सम्बन्ध कराना है क्योंकि रोग पुराना होने से रुधिर के साथ उन का पूरा सम्बन्ध हो जाता है इसी से जल्द आराम नहीं होते आज कल के विद्वान दर्शियों ने इसी लिये बिजुली की चीजें निकाली है कि जिस के पहरने अथवा बांधने से रुधिर, रोग से अपना सम्बन्ध छोड़ के विद्युत के साथ कर लेता है ॥

हमे लोग नास्तिक न समझें क्योंकि यह हमारा कथन परीक्षित है, हम ने कितने रोगियों को आरोग्य किया है, उनमें से एक दो रोगियों का हाल इस स्थल में लिखे भी देते हैं ॥

जानसेनगञ्ज में सूर्यदीन ठठेरी का पुत्र जिसकी अवस्था २८ वर्ष की थी दो बजे रात को बोतलों के गिरने की आवाज से चौंक उठा और डर कर पागल हो गया, तीसरे दिन दोपहर को सूर्यदीन हमको बुला ले गया, वहां हम जाके यह देखा कि चंद झाड़ने फूकने वाले डफाली लोग डफला बजा रहे हैं और यह लड़का अलग एक चटाई पर सफेद नई धोती और गले में फूलों का गजरा पहने बैठा है कहता है कि हम फलाने दरगाह के मरेद हैं, हमारे साथ बहुत पलटनें हैं देखो दो आदमी हमारा वह ताल पर

ज्वर के दश उपद्रव।

श्वासोमूर्छाऽरुचिश्छर्दिस्तृष्णातीसार विड्ग्रहः।
हिक्काकासोऽङ्गदाहश्च ज्वरस्योपद्रवादश॥

१ (श्वास) अधिक हांफी या गले में कफ का घुरघुराहट अथवा सांस कष्ट से लिया जाय २ (मूर्छा) बेहोसी या अधिक सुस्ती ३ (अरुचि) खाना पीना अच्छा न मालूम हो अर्थात् किसी वस्तु का ज्ञायका यथार्थ बोध न हो ४ (छर्दि) वमन पानी के होना अथवा जी मचलाना या मुख से पंछा छूटना ५ (तृषा) अधिक प्यास अर्थात् पानी से शांति न हो ६ (अतीसार) दस्त पतले होना ७ (विड्ग्रह) या दस्त बिलकुल ही न होना। (हिक्का) हुचकी का आना, खांसी और तमाम शरीरमें जलन मालूम होना यह दश उपद्रव ज्वर में होते हैं॥

बैठा है। हम ने सब झाड़ने वालों को हटा दिया और लड़के को डांट के कहा कि लाओ हाथ तुम्हारी नाड़ी देखें उसने हाथ देदिया, उस समय उस की नाड़ी की गति अति वेगवान थी जैसे तीव्र ज्वर वाले की होती है हम उसे ब्रोमाईड आफ पुटासियम् पानी में घोल के पिला दिया और सबों को वहां से हटा दिया सिर्फ दो आदमी नियत कर दिया कि जब तक यह सो न जाय हाथ पैर धीरे २ दबाते रहो और यह उठ के भागने न पावे, यह लड़का आध घंटे के बाद सो गया और ५ बजे सांझ को जब वह सो के उठा तो हम उसे आरोग्य पाया॥

सन् ८८ में हम श्रीमान् राजा साहब के छोटी रानी जी की चिकित्सा कर रहे थे, एक दिन की बात है कि राजा साहब के एक भयवाद जिन का नाम याद नहीं है पहुंस पर तीतिल चराने गये और वहीं डरकर पागल हो गये राजा के सिपाह लूटे उन्हें ढूंढ़ के पकड़ लाये और राजा साहब के मुसाहब पं० भगवान दत्त के दालान में बैठाया चार पांच आदमी उन्हें थांभे थे तौभी उस का वाहियात बकना, लोगों पर थूकना, दांत काटना आदि बंद नहीं था, राजा साहब की आज्ञानुसार हम और राजधानी के डाक्टर दोनों ने जाके उन्हें देखा और दोनों जने राजा साहब से आके बयान किया कि डर गये हैं और उसी से इन के सिर पर गरमी चढ़ गई

ज्वर के साध्य लक्षण ।

बलवत्स्वल्पदोषेषु ज्वरःसाध्योऽनुपद्रव ।

जो मनुष्य बलवान हैं, और जिन के वातादि दोष स्वल्प हैं अर्थात् दोष बहुत बढ़े नहीं है (उपद्रव से दोष बढ़े हुये जान पड़ते हैं) और जो ज्वर के दश उपद्रव ऊपर लिखे गये हैं उन में से स्वासादि कठिन उपद्रव न हो तो साध्य जानना । सुख साध्य उसे कहते हैं जो शरीर के बाहरी भीतरी कुछ भी उपद्रव न हो सिर्फ ज्वर मात्र हो वह सुख साध्य है । सुख साध्य ज्वर स्वल्प ही चिकित्सा से आराम हो जाता है ॥

जिस बुखार में भीतर दाह और पियास जादे हो, कुछ आन तान बकता हो, हांफी, घुमरी, शरीर में दर्द, पेट में शूल, पसीना न आता हो, न दस्त हो और न हवा छूटे उसे कष्ट ज्वर जानना इसीको वैद्य लोग अन्तरवेगी ज्वर कहते हैं ॥

है, राजा साहब ने कहा कि पंडित जी आप नहीं जानते इन को एक दो बार पहले भी इसी तरह हो चुका है और बड़े २ झाड़ने वाले आये हैं तब आराम हुए हैं, यह एक दफे पहाड़ पर लाल फँदाते थे एक लाल इन के पिंजड़े में फंदा और थोड़ी देर के बाद मांस का लोथड़ा सा बन गया यह देख पिंजरा फेंक भगे और बीमार हो गये और बड़ी मुश्किलों से आराम हुये । राजा साहब से हम ने कहा कि हमारे पास एक पलीता है यदि आप कहें तो उसे सुंघा के भूत उतार देंय, राजा साहब ने कहा अवश्य आराम करना चाहिये । हम ने चूना और नौसादर को मिला के एक पोटरी बनाया और रोगी के पास आके बैठ गये और दो आदमियों से कहा कि तुम लोग थांभे रहो और सब लोग छोड़ दो हम ने एक हाथ से रोगी की चोटी थांभ के पूछा कि सच कह तू कौन है छोड़ के चला जा नहीं तो अभी महावज्र पलीता सुंघाता हूं तू जल जायगा इतना कह के नाक में पोटरी लगा दी (किसकी नाक है जो अमोनिया की झार एक मिनट भी बरदास्त कर सके) बस फिर क्या बहादुर बोल उठे कि

अथ ज्वरस्य असाध्य-लक्षण ॥

ज्वरःक्षीणस्यशूनस्यगम्भीरोदैर्घ्यरात्रिकः । असाध्यो बलवान्यश्चकेशसीमन्तकृज्ज्वरः ॥

अब असाध्य ज्वर का लक्षण लिखते हैं। जो मनुष्य बुखार में अति दुबला हो गया हो, सम्पूर्ण शरीर अथवा हाथ पैरों में सूजन आगयेहों, ज्वर पीछा न छोड़ता हो, शिर में चांद की जगह का बाल उड़ गये हों और बुखार के दुष्कर लक्षण मिलते हो तो असाध्य जानना ऊपर के श्लोक में जो गम्भीर शब्द आया है वह एक प्रकार का ज्वर होता है जिसे वैद्यक में गंभीर ज्वर कहते हैं, उसके लक्षण यह हैं जैसे अन्तर्दाह, पियास, अतिशय वातदोष से मल का विबन्ध तथा कास श्वास का प्रादुर्भाव हो उसे गम्भीर कहते हैं इसे भी असाध्यही समझना और भी ज्वरों के असाध्य लक्षण लिखते हैं ॥

असाध्य लक्षणानि ॥

हेतुभिर्बहुभिर्जातोबलिभिर्बहुलक्षणः । ज्वरःप्राणान्तकृद्यश्चशीघ्रमिन्द्रियनाशनः ॥ योहृष्टरोमारक्ताक्षोहृदिसङ्घातशूलवान् । वक्त्रेणचैवोच्छ्वसितितंज्वरोहंतिमानवम् ॥ हिक्काश्वासतृपायुक्तंमूढंविभ्रांतलोचनम् । सन्ततोच्छ्वासिनं

छोड़ दो मैं जाता हूं हम ने भी जोर से ताली पीटा कहा चल दे, रोगी चैतन्य हो गया उसी समय वह दूध पिया और घर में जाके भोजन किया इस क्रिया से लोग बड़े आश्चर्यित हुये किन्तु हम ने सब लोगों को वह पलीता बता दिया और शिक्षा दिया कि प्रेत की बाधा बिलकुल झूंठ है सिर्फ हृदय में भय का समाजानाही भूत प्रेत का बाधा है, इसी तरह हमने सैकड़ों मनुष्यों को आरोग्य किया है और सबों का हाल रजस्टर में दर्ज है किन्तु स्याना भाव से नहीं लिखा ॥

क्षीणंनरक्षपयतिज्वरः ॥ आरम्भाद्विषमोयस्तुयस्यवादैर्घरात्रिकः । क्षीणस्यचातिरूक्षस्यगम्भीराहन्तिमानवं ॥

जो ज्वर वलवान हो और अनेक कारणों करके उत्पन्न भया हो और अपने मर्यादा के भीतर ही आंख कान आदि इन्द्रियों की शक्ति को नाश कर दिया हो वह ज्वर निस्सन्देह प्राण नाशक होता है ॥

जिस ज्वर में रोगी के वारम्वार रोम खड़े होते हों, नेत्र सुर्ख, छाती में दर्द, नासिका बन्द मुख से श्वास लेता हो तो जानना कि वह ज्वर रोगी को जरूर मारेगा ।

जो ज्वर रोगी, हुचकी, श्वास और पियास कर के अतिशय दुखित हो, संज्ञा रहित अर्थात् जिस के होस हवास दुरुस्त न हों, जिस के नेत्र बैठ गये हों या किसी को चीन्हता न हो और मुख से श्वास लेता हो तथा अतिक्षीण हो गया हो उस को समझना कि अब यह यमलोक की यात्रा करेगा ।

जो ज्वर आरम्भ काल ही से विषम हो गया हो और असाध्य के चिन्ह दृष्टिगोचर होते हों ऐसा गंभीर ज्वर दुर्बल मनुष्य को नहीं छोड़ता अर्थात् मारता ही है । चीरपाणि महाराज के मत से एक प्रकार का ज्वर मंथर नामक होता है उस का लक्षण श्लोक न लिख के सिर्फ भाषा में नीचे प्रकाश करते हैं ।

मन्थर ज्वरस्य लक्षणम् ।

प्रथम ज्वर उत्पन्न हो के तब सब निम्नलिखित लक्षण आमिले अथवा अतीसारादि अन्य रोग में मिले अवश्य असाध्य जानना जिस रोग में ज्वर, घुमरी, बेहोसी, अतीसार, कै, पियास निद्रा का न आना, मुख लाल, तालू और जीभ सूखे तथा मुख पाक और कण्ठ में सरसों सरी से फुंसियां हों इत्यादि लक्षण युक्त रोग को मंथर कहते हैं । इस का कारण विशेष कर तरुण ज्वर में घी खाने तथा पसीना रोकने से होता है । हमारे हारीत मुनि कुछ औरही कहते हैं । जिस मनुष्य के ज्वर टकटका, दांत और ओठों में श्यामता,

नाक, जीभ, मुख और कण्ठ में ललामी, नेत्र बकरे के नेत्र के समान निकल आये हों ऐसे रोगी को जो सात दिनों में मोतियों की माला गले में न पहरावै तो २१ दिन के भीतर उस के सम्पूर्ण अङ्ग में सरसों के समान छाले पड़ जांयगे और मुश्किल से आराम होंगे।

विषमज्वर की चिकित्सा।

वह विषमज्वर जो दिवा रात्रि में सिर्फ एक बार आता हो, या दूसरे दिन, तीसरे दिन अथवा चौथिया आदि हो इसमें बहुत पहरेज कराने की जरूरत नहीं है, इतना अवश्य ध्यान रहे कि यदि कोष्ठबद्ध हो तो मुलायम रेचन दे देवे या ज्वर किसी औषध से न छूटे तो अन्त में स्नेहादि क्रिया के बाद देश काल के अनुसार वमन विरेचन करा देनेही से ज्वर निर्मूल हो जाता है॥

अब जाड़ा दे के जो विषमज्वर आता है जिसे शीत पूर्व ज्वर कहते हैं उसकी उत्तम २ परीक्षित औषधियां जिनसे असंख्य रोगी आराम हुये हैं नीचे लिखते हैं॥

शीतपूर्व ज्वर पर काढ़ा॥

भटकटैया (कटेरि वा कंटकारि) धनियां, सोंठ, निम्ब वृक्ष परके गुरच (गिलोय) मोथा, पद्माप, लालचन्दन, चिरायता, पटोल, (परवर का पत्र) रूसा, पुहकरमूल, कुटकी, इन्द्रजव, नीम की अतर छाल, भारङ्गी, पित्तपापड़ा, इन सब दवाइयों को सम वजन ले अधकचरा कर दो तोला लेकर पावभर जल में रात को भिजा देय सवेरे औटा देवे जब एक छँटाक पानी रह जाय शीतल कर मल छान के पी जाय, इसी प्रकार सबेरे भिजावै सांझ को औटा देके पिये यह पूर्ण मात्रा का बयान है, उमर कम हो अथवा रोगी कमजोर हो या रोगी के मिजाज में गरमी अधिक हो या गरमी अधिक पड़ती हो तो मात्रा कम कर देय। पथ्य-दूध भात अथवा मूंग की दाल पुराने चावल का भात, गेहूं की रोटी, लौकी की तरकारी आदि। इस प्रकार दोनों समय पिलाने से कैसाहू पुराना विषम ज्वर हो छुट जाता है ऐसा कितनो बार

आजमाया गया है। अगर रोगी के पेट में (दाह) जलन हो सिर में घुमरी आदि वातपित्त के उपद्रव हो तो इस अर्क को पिलावे ।

विषमज्वर पर अर्क ।

यह अर्क शीतपूर्वज्वर और उष्णपूर्वज्वर दोनों को आराम करता है तथा अन्तर दाह, घुमरी, जीमचलाना, हाथ पैर के जलन आदि को भी शांति करता है ।

धनियां, गाजवां के फूल, वर्गगाजवां (गाजवां के पत्ते) लालचन्दन, सफेदचन्दन, कासनी, खीरा ककड़ी का बीज, काहू का बीज, कुलफा का बीज, वर्गबनप्सा (वर्ग पत्ते को कहते हैं) गुलनीलोफर, गुलाब के फूल यह सब एक २ छँटाक, लौकी (घीया) ३ पाव पेठा (श्वेत कूष्मांड) २ पाव, कपूर छ मासा, घीया और पेठे को छोड़ और सब दवाइयों को ३० सेर पानी में रात को भिजा दे सवेरे घीया और पेठे को टुकड़े २ कर सब को डेगभभके में भर १५ सेर अर्क खींच ले। साम सवेरे और दोपहरको आध २ पाव अर्क उसमें जरासा मिश्री डाल के पिये। थोड़े ही दिनों के पीने से विषमज्वर छूट जाता है पथ्य वही जो ऊपर लिख आये हैं । यदि पन्द्रह दिन के पीने से ज्वर न छुटे तो इस अर्क को पिला के दो चार दिन फिर ऊपर लिखे हुये काढ़े को पिलावे । ज्वर आते २ रोगी निर्बल पड़ गया हो और ज्वर भी न छूटता हो तो ज्वर छूटने की दवा देता जावे और जिस्से रोगी का बल न घटे उपाय करे। अगर गर्म मिजज वाला हो तो यह अर्क पिलावे ॥

अर्क गाजर ।

गाजर छुरी और छिलका दूर किया हुआ १० सेर, किस्मिस २ सेर दोनों को एक डेग में सब २५ सेर पानी के डाल डेग का मुह ढांपके पकावे जिस्से धुवां न निकलने पावे बाद चार घंटे के डेग को उतार, शीतल कर लेंय और नीचे लिखी हुई दवाइयों को कुचल के उसी में डाल और ५ सेर

गौ का दूध डाल १५ सेर अर्क खींच लेवै। दवा यह है। दालचीनी, गुलाब के फूल नागरमोथा, बिजौरे का छिलका, चोबचीनी, बहिमन सफेद यह सब चार २ तोला सफेद चन्दन दो तोला। इस अर्क के पीने से मन प्रसन्न, कोठों में ताकत, धातुपुष्ट और मन बलवान होता है अगर मिजाज सर्द अर्थात् बलगमी हो तो इस चूर्ण को दोनों समय शहद के साथ चटावै॥

बन्सलोचन ४ तोला, छोटीलायची २ तोला, सत्त गिलोय २ तोला, बहिमन सफेद १ तोला, छोटीपीपर शुद्ध ६ मासा, दखियी तज ६ मासा, अकरकरहा ३ मासा, रूमीमस्तगी ३ मासा सब को महीन चूर्ण कर डेढ़ २ मासे की पुड़िया बना ले और शहद के साथ चाटै॥

विषमज्वरे ज्वारांकुशो रसः।

ताम्रतोद्विगुणंतालं मर्द्दयेत्सुपवोरसैः। प्रपुटेत्भूधरेशीते वज्रीक्षीरेणमर्द्दयेत्॥ प्रपुटभूधरेपश्चात्पंचगुंजामितंभजेत्। आर्द्रकस्यरसेनैव सर्वज्वरनिकृंतनः॥ एकाहिकं द्व्याहिकंच त्र्याहिकंचतुराहिकम्। विषमंचापि शीताढ्यं ज्वरंहन्तिज्वरांकुशः॥

शुद्ध तामा से दूना शुद्ध हरताल लेके करेले के रस में घोंटके भूधरयंत्र में आंच देवै (भूधरयंत्र की क्रिया रस प्रकर्ण में लिखेंगे और वैद्य लोग प्रायः जानते भी हैं) शीतल होने पर निकाल के सेहुड़ के दूधमें घोंटके फिर उसी प्रकार भूधरयंत्र की आंच देय बाद निकाल महीन चूर्ण कर शीशी में रख देय। इस ज्वरांकुश की मात्रा एक रत्ती से पांच रत्ती तक है। दोनों समय अदरख के रस के साथ खाने से एकाहिक, अंतरिया, तिजारी और चौथिया ज्वर आराम होता है॥

महाज्वरांकुशोरसः विषमज्वरे।

शुद्धसूतोविषंगंधः प्रत्येकंशाणसंमितः। धूर्तबीजं

कूईनाईन।

यद्यपि हमने आरोग्यदर्पण के दूसरे खण्ड में अनेक द्विपान्तरीय चिकित्सकों के मत द्वारा कूईनाईन का भलीभांति खण्डन किया है और यथार्थ में कूईनाईन से बहुत हानि पहुंचती है। ज्वर को छूटा देता है यह प्रसिद्ध है किन्तु उसी के साथही लोगों को अन्धा लङ्गड़ा लूला नपुंसक तक बना देता है, इसमें एक कारण और भी है कि डाकूर लोग एतद्देशीय वैद्य विद्या के न जानने से यहां के मनुष्यों के प्रकृति से अपरचित रहते हैं। सर्व साधारण को ज्वर रोग में कूईनाईन और धड़ाधड़ चिरायते का अर्क पिलाना शुरू कर देते हैं। बुखार तो जरूर छुट जाता है लेकिन कलेजे पर ऐसी गरमी जमजाती है कि बरसों नहीं हटती। लेकिन जिस प्रकार हमने कूईनाईन के द्वारा लोगों का असाध्य शीतपूर्व ज्वर छुटाया है पाठक गणों के उपकारार्थ प्रकाश करते हैं।

ज्वर आने के दो घंटे पहले कूईनाईन को इसतरह देने से ज्वर छुट जाता है। कूईनाईन २ रत्ती, टाटारिक ऐसिड (इमलीका सत्त) १० रत्ती, मिश्री २ तोला। पहले मिश्री को पत्थल की कूड़ी में आधपाव पानी में सरबत बनाय उसी में कूईनाईन और इमली के सत्त को घोल के पिला देव अगर इमिली का सत्त न मिले तो एक या दो नीबू का रस डाल दे। अगर पारी टर जाय तो दो तीन घंटे पर फिर पिलावै। जिस ज्वर का कोई नियम न हो जून कजून आवै तो उस में पूर्वोक्त प्रकार से कूईनाईन को दिन में तीन बार पिलावै, दोही तीन दिन में ज्वर नष्ट हो जाता है। सिवाय तेल कच्चे फलों के और सब पथ्य है।

विषम ज्वर, यंत्र मन्त्र टोटका आदि से भी नष्ट हो जाता है ऐसा अनेक बार अनुभव किया गया है। पन्द्रह अथवा वीसा यंत्र को मङ्गल रविवार के दिन अष्टगंध से पीपल पत्र पर लिख कर लाल सूत्र में लपेट पुरुष के दक्षिण बाहु और स्त्री के वाम बाहु में बांधने से ज्वर नष्ट हो जाता है। किन्तु यन्त्र लिखने वाला आचारशील ब्रह्मचारी, या कुमारी कन्या या पतिव्रता धर्मवती स्त्री होनी चाहिये।

ज्वराधिकारे मूलिका धारणम्।

द्रव्यों में अनेक गुण हैं और उनका रक्त मांसादिकों के साथ ऐसा सूक्ष्माति सूक्ष्म सम्बन्ध रहता है जिसका जानना बड़े २ विज्ञानदर्शियों को दुर्लभ है किन्तु सम्बन्ध वशात् प्रत्यक्ष फल दर्शन होने से मान लिया जाता है कि अमुक औषधि अमुक रोग को नाश करती है और बहुत सी ऐसी भी दवा हैं जो अपने प्रभाव से कार्य सिद्ध कर देती हैं जैसे (ज्वरं हन्ति शिरोबद्धा सहदेवी जटायथा) शिर में बांधी सहदेई की जड़ ज्वर को नष्ट करती है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है किन्तु अज्ञानी लोग ऐसे २ प्रभावों को देख गुरुओं के वशीभूत और प्रेत बाधा मानने लगते हैं।

एकाहिक ज्वरे मूलिका धारणम्।

काकजंघाबलाश्यामा ब्रह्मदंडीकृतांजलिः। पृश्निपर्ण्यपामार्गस्तथाभृङ्गरजोऽष्टमम्॥ एषामन्यतमंमूलं पुष्येणोद्धृत्ययत्नतः। रक्तसूत्रेणसंवेष्ट्य बद्धमैकाहिकंजयेत्॥ औलूकंदक्षिणंपक्षंसितसूत्रेणवेष्टयेत्। बन्धयेद्वामकर्णेतु-हरत्यैकाहिकंज्वरम्॥ कर्कटस्यबिलोद्भूतमृदातुतिलकंकृतं। एकाहिकंज्वरंहन्ति नात्रकार्याविचारणा॥

काकजंघा जिसको चकसेनी और मसी भी कहते हैं, बरियारा, काली तुलसी, ब्रह्मदण्डी, कृतांजलि, पिठिवन, अपामार्ग जिसे चिचरा तथा लटजीरा भी कहते हैं और भंगिरा इन आठो चीजों में से चाहे जिसे पुष्य नक्षत्र में विधिपूर्वक पवित्र होके उखारि लावे और उसकी जड़को लाल सूत्र में लपेट कर हाथ या गले में बांधने से एकाहिक ज्वर जिसे अन्तरा कहते हैं छूट जाता है। घुग्घू चिड़िया के दाहिने तर्फ का पंख सफेद धागे में लपेट के बायें कान में बांधने से अन्तरा ज्वर नष्ट हो जाता है। कर्कट अर्थात् केकड़ा के बिल की माटी का तिलक करने से भी एकाहिक ज्वर जाता रहता है॥

तृतीयज्वरे मूलिका वन्धनं ॥

अपामार्गजटाकट्यांलोहितैःसप्ततन्तुभिः। बद्धांवारेरवेस्तूर्णंज्वरं हन्तितृतीयकं॥ कर्णस्यमलजालेनवर्तिंकृत्वांप्रयततः। ज्वालयेत्तिलतैलेनकज्जलंग्राहयेच्छनैः। अञ्जयेन्नेत्रयुगलंत्र्याहिकंज्वरशान्तये ॥

अपामार्ग (लटजीरा) की जड़ को रविवार के दिन उखाड़ के उसे सात तार के लाल धागे से बांध बांह या गले में बांधने से तिजारी ज्वरका नाश होता है। कान का मैल रुई में लपेट के बत्ती बनावे और कालीतिल कि तेल से कज्जल पार के नेत्रों में लगाये तो तिजारी ज्वर का नाश हो॥

चातुर्थिक ज्वरोपायः ॥

चातुर्थिकोगच्छतिरामठस्य घृतेनजीर्णेन युतस्यनस्यात्। लीलावतीनां नवयौवनानां मुखावलोकादिवसाधुभावः॥ अखण्डितशरत्काल कलानिधिसमानने। चातुर्थिकहरं नस्यं मुनिद्रुमदलांवुना॥

भावार्थः—(रामठ) हींग को पुराने घृत * में घोंट कर नाश लेने से चातुर्थिक ज्वर अर्थात् चौथिया बुखार कैसे नष्ट होता है जैसे (लीलावती) क्रीड़ा करनेवाली नवयौवना + स्त्रियों के मुख देखनेसे साधु पुरुषोंका साधु भाव (धर्म्मशीलता) नष्ट हो जाता है॥

* जीर्णघृतो दशवर्षादूर्द्धः—दश बर्ष के ऊपर होने से पुराना घृत कहा जाता है।

+ नव (तरुण) यौवनानाम्—प्रसूतानां—प्रसूतागतयौवना—नवयौवना स्त्री तभी तक कहाती है जब तक लड़का न हो, लड़का वाला होने से गत यौवना हो जाती हैं॥

लोलिम्बराज वैद्य रत्नकला को समझा के कहते हैं कि हे शरतकाल के पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली (मुनिद्रुम) अगस्तवृक्षके पत्तों का केवल रस सूंघने से याने नास लेने से चौथिया ज्वर नष्ट हो जाता है॥

अन्यच्च—"वसतिशिरसि मेघनादमूले, व्रजतितरांविषमोविलासदृष्टे।" हे विलास दृष्टे, मेघनाद मूल अर्थात् चौराई की जड़ को शिर में बांधने से विषम ज्वर शीघ्रही नाश होता है। सिर्फ मूलही की क्या बात है मंत्रादिकों के झाड़ने तथा उतारा आदि करनेसे भी विषम ज्वर नष्ट हो जाता है और उसका कारण रक्त को रोग से सम्बन्ध छोड़ाना है॥

तिलजलांजलि।

तन्वङ्गिगङ्गोत्तरतीर भूमौ ममारहाकोप्य सुतस्तपस्वी।
जलांजलिं तस्यकृतेददातु सैकाहिकस्यादृदितेनुजन्मा॥

भावार्थः—गङ्गा जी के तट की उत्तर भूमि पर कोई पुत्र हीन तपस्वी मरा था उस तपस्वी को वह मनुष्य जिसे अँतरा बुखार आता हो यदि तिल के सहित अथवा सिर्फ जल की अंजुलि दे अर्थात् उस तपस्वीके नाम तर्पण करे तो एकाहिक ज्वर जाता रहे। यही वचन दालभ्य में भी लिखा है * (गङ्गायामुत्तरेतीरे अपुत्रस्तापसोमृतः। तस्मैतिलोदकंदद्यात् मुच्यते सन्ततज्वरात्॥ तन्त्रान्तरेतु—वानरस्याकृतिंलिख्य पटिकायांपुनःशृणु। गन्ध पुष्पाक्षतैर्धूपै रचयेत्तांभिषग्वरः) अन्य तन्त्रों में लिखाहै कि तरते से वानर के आकार एक मूर्त्ति लिखकर चन्दन अक्षत पुष्पादिसे पूजन करे और इस मन्त्र को पढ़े ज्वरागमन समय में तो ज्वर का विनाश हो (मन्त्रः) ओं ह्रां ह्रीं श्रीं सुग्रीवाय महाबलपराक्रमाय सूर्य्यपुत्राय अमित तेज से एकाहिक द्व्याहिक त्र्याहिक चातुर्थिक महाबल-भूतज्वर भयज्वर शोकज्वर क्रोध-

* दालभ्य नामक एक बहुत प्राचीन स्तोत्र है उसके द्वारा मार्जन करने से विषमज्वरादि रोग छुट जाते हैं। हमारे पुराने पण्डित लोग तो उसका प्रभाव ऐसाही वर्णन करते हैं। कहां तक सत्य है नहीं कह सक्ते किन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि मंत्र यन्त्रादि सर्वथा मिथ्या नहीं हैं॥

ज्वर वेतालज्वराणां दहदह पचपच अवतर अवतर कालिहरय महावीर वानर ज्वराणां बन्धबन्ध ह्रां ह्रीं ह्रुं फट स्वाहा और भी लिखा है "समुद्रस्योत्तरेकूले कुमुदोनामवानरः। तस्यस्मरणमात्रेणज्वरोयाति रसातलम्॥

ज्वर नाशक माहेश्वर धूपः।

हिंगुलंदेवकाष्ठंच श्रीवेष्टघृतमेवच। गव्यास्थीनि तथा श्यामं निर्माल्यंकटुरोहिणी॥ सर्षपनिम्बपत्राणि पिच्छाहि कंचुकं तथा। मार्जारविष्ठा गोशृंगं मदनस्यफलानिच॥ द्वेवृहतीवचाचैव कार्पासास्थि तुषास्तथा। छागगोमायुविट्चैव हस्तिदंतस्तथैवच॥ एतत्सर्वं समाहृत्य छागमूत्रेणभावयेत्। उदूखलेतुसंकुट्य स्थापयेन्मृन्मयेशुभे॥ घ्राणमात्रेणधूपोयंदीयते यत्रवेश्मनि। नतत्रसर्पास्तिष्ठन्ति नपिशाचानराक्षसाः॥ एषमाहेश्वरो धूपः सर्वज्वरविनाशनः। एकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकंच चतुर्थकम्॥ एवमादीन् ज्वरान्सर्वान् नाशयेन्नात्रसंशयः॥

हिंगुल, देवदारु (श्री वेष्ट) जिस का धुप, बंगदेश में सरल वृक्ष और कहीं २ रालाधूप कहते हैं इसी से तारपीन तैय्यार होता है। घी गौ की हड्डी रोहिस घास बेलपत्र, कुटकी, पीलीसरसों, नीम के पत्र, मुरेले का पंख, सांप की केंचुल, बिलार का विष्ठा, गौ की सींग, मैनफल, छोटी भटकटैया, और बड़ी भटकटैया जिसे बनभांटा कहते हैं दोनों का पंचाङ्ग, बच, बेनउर (कपास का बीज) धान की भूसी, बकरी और सियार का विष्ठा, हाथी दांत इन सब चीजों को एक में मिला के बकरी के मूत्र की भावना अर्थात् उसी में तरों का तर कर के सुखाय लेय, बाद खरल में कूट महीन कर के किसी अच्छे बरतन में रखदे और समय पर धूप देवे इस माहेश्वरधूप के प्रभाव से घर में सर्प पिशाच राक्षस रह नहीं सके और अन्तरा आदि सब ज्वरों का नाश होता है। धूप देते समय इस मंत्र को पढ़े—ओं नमो भगवते रुद्राय उमापतये सम्पन्नाय नन्दिकेश्वराय स्वाहा। अपराजित आदि और भी अनेक ज्वर नाशक धूप हैं जिन्हें पांचवें खण्डमें बयान करेंगे। इस बयान से हमारे नवशिक्षित गण जो प्राचीन पुरुषों के इतिहासों को कभी नहीं देखा सुना

है और न उनके हृदय में ऐसी शक्ति है कि जो स्वयं अनुभव कर सकें हां यदि कोई अंगरेज आ के लिकूचर में यही बात कहे तो निस्संदेह ग्रहण की बात समझी जायगी ।

ज्वरनाशक दीपः ॥

कृष्णोरगोन्मत्तवीजगन्धगोश्रृङ्गतैलजः । मृतकर्पटवर्त्याच दीपःसर्वज्वरापहः ॥ कृष्णसर्पवसा, धत्तूरवीजतैलं, वृषभश्रृङ्ग तैलं एभिर्मृतक वस्त्रवर्त्यादीपः, सर्वज्वरापहः ॥

काले सांप की चर्बी, धतूर के बीज का तेल गन्धक और बैल के सींग का तेल सब को एकत्रित कर मुरदे के ऊपर के कपड़े (कफ़न) की बत्ती बनाय उक्त तेलों में दीपक जला कर गृह में रखने से सम्पूर्ण विषम ज्वरों का नाश होता है । यह क्रिया भीम विनोद ग्रंथ में लिखा है ।

जीर्ण ज्वर की चिकित्सा ॥

जीर्ण ज्वर में दोनों समय गुर्च का काढ़ा पिलाने से बहुत फायदा देखा गया है अथवा शितोपलादि चूर्ण को सहत में चटाय के ऊपर से गुर्च का काढ़ा पिलाने से और भी जल्द फायदा होता है । लाक्षादि तैल को मर्दन करने से भी लाभ देखा गया है ।

उपद्रव शमनोपायः ।

ज्वर रोग में जो उपद्रव बढ़े हों उन के शांति करने के उपाय अब संक्षेप से प्रकाश करते हैं क्योंकि बढ़े हुये उपद्रव अत्यन्त क्लेशदायक होते हैं बिना उन्हें शांति किये रोगी को चैन नहीं मिलता इस लिये जिस प्रकार से शमन हों उसी तरह की चिकित्सा करना किन्तु इतना अवश्यमेव ध्यान में रहे कि कोई क्रिया ज्वर का विरोधी न हो ।

कोष्टबद्ध ।

पित्ताधिकारी ज्वर में तो कुछ दस्त होता ही है, किन्तु वाताधिकारी ज्वर में तो मल सूख जाता है, और बिना मल उतरे ज्वर नहीं घिसाता इस लिये यह दवा देना जरूरी है ।

बड़ा हड़का वक्कल, हरीसनाय, सोंठ, और कालानोन सबों को बराबर ले कूट कपर छान कर लेय छ माशा अथवा कुछ अधिक चूर्ण को रात में गरम

जल के साथ मिला देने से सबेरे खुलासा दस्त आ जाता है। अगर मिज़ाज में गरमी अधिक हो तो दो तोला गुलाब का गुलकन्द और दो तोला सीरखिस्त दोनों को जल में पीस गुनगुना कर के पिलाय देवें दस्त अवश्य होगा।

पिपासा।

अगर रोगी को पियास अधिक हो तो इस पानी को पिलावे। धान का लावा ४ तोला, बरोह (बरगद के वृक्ष में जो जटा सा लटकता है) २ तोला, कमलगट्टे को गरी १ तोला, तीनों चीज़ों की पोटरी पानी में डाल दे और उसी पानी को पिलावे, यदि रोगी गरम पानी पीता हो तो गरमही जल में पोटरी को डाल दे अथवा बारम्बार शीतलचिनी को मुख में डाल के कुचले और जल से उतार जावे। अथवा आवला, कमलगट्टे की गरी, कूट, धान का लावा, बरोह सबों को बराबर ले महीन पीस शहदमें सान के गोली बांध लेंय, इस गोली को मुख में रखनेसे पियास की आधिक्यता और मुख का सूखना नाश होता है। रोगी की शरीर में दाह की आधिक्यता हो तो पित्त ज्वराधिकार में जो दाह शान्तिकारक उपाय लिख आये हैं उन्हीं के द्वारा शान्ति करना॥

मस्तक पीड़ा।

मुलेठी, हरदी, नागरमोथा, अनारका फल वा छाल, अमरबेल, काला सुरमा, तिन्तरीक, खस, तेजपात, कमलगट्टे की गरी, दालचिनी, नख, इन सब दवाइयों को महीन चूर्ण कर बिजौरा नींबू का रस, शहद और मधुसूक्त तीनों चीजों में महीन घोंट ज्वरार्त मनुष्य के शिर पर लेप करने से, शिर का दर्द, बिहोसी, जी का मचलाना, हुचकी और देह का कांपना यह सब शान्ति होते हैं। और जो मनुष्य पियास और अन्तर् दाह करके अत्यन्त पीड़ित हों तो बिदारीकन्द अनार, लोध, कैथेका छाल नींबू का छिलका सबों को महीन पीस शिर पर लेप करने से शान्ति होता है। ज्वर चिकित्सा का शेष प्रकरण पञ्चम खण्डमें प्रकाश होगा अब ज्वर के अन्तिम नियम को लिखते हैं॥

ज्वरान्ते पथ्यं।

परिषेकावगाहांश्च स्नेहान् संशोधनानिच। स्नाना भ्यंगदिवास्वप्न शीतव्यायाम योषितः॥ नभजेतज्वरो-

त्सृष्टो यावन्नोबलवान् भवेत् । त्यक्तस्यापि ज्वरेणाशु दुर्बलस्याहितैर्ज्वरः ॥ प्रत्यापन्नोदहेद्देहं शुष्कवृक्षमिवानलः । तस्मात्कार्यःपरीहारो ज्वरमुक्तेन देहिना ॥

ज्वर छुट जाने के बाद मनुष्य को चाहिये कि जब तक शरीर बलवान न हो जाय निम्नलिखित कर्म्मों से पहरेज रक्खे, जैसे—श्रम से शरीर को सींचना, बहुत पानी में रहना या डुब्बी मार के नहाना घृतादि का पीना, शोधन करना स्नान करना, उबटन तेल लगाना, दिन को सोना, बहुत शीतल पदार्थों का खाना, कसरत अथवा बहुत दौड़ धूप करना स्त्री प्रसङ्ग आदि । कारण यह कि जिस का ज्वर छुट भी गया है कुपथ्य करने से पुनः वही ज्वर रक्त मांसादि में घुस कर मनुष्य के शरीर को ऐसा दग्ध करता है जैसे सूखे वृक्ष को अग्नि, इस लिये ज्वर छुट जाने पर भी जब तक ताकत न आवे ज्वर नाशक उपाय करते रहना अगर ज्वर छुट जाने के बाद अरुचि अङ्ग की शिथिलता, विवरणता और मलादिक वृद्धि हो तो शोधन उपाय करना, क्योंकि शोधन न करने से अन्य रोग उत्पन्न हो जाने का डर है और ज्वर छुट गया हो उसका कोई विकार भी दृष्टिगोचर नहीं होता किन्तु शरीर निर्बल है तौभी उसको एकाएकी पौष्टिक द्रव्य (पाकादि) न सेवन कराना चाहिये क्योंकि बिना बल आये अग्नि नहीं खुलती और बिना अग्नि के पौष्टिक द्रव्य न पचैगा बल्कि जठराग्नि नष्ट हो के ज्वर का पुनरागमन होना सम्भव है ।

हतावशेषंपित्तंतुत्वक्स्थंजनयतिज्वरम् । पिबेदिक्षुरसं तत्र शीतं वा शर्करोदकम् ॥

पित्त ज्वर शान्ति होने के बाद यदि चमड़े में कुछ पित्त का अंश रह गया हो तो उसे ऊख का रस अथवा चिनी का शरबत पिला के ठीक करना क्योंकि वह पित्त फिर ज्वर को उत्पन्न कर सक्ता है ॥

आध्यात्मिक शक्ति ।

आध्यात्मिकशक्ति जिसका कुछ २ बयान आरोग्यदर्पण के प्रथम और द्वितीय खण्ड में कर चुके हैं । उसको पढ़ के किसका चित्त चाहता रहा होगा कि हृदय विद्युत प्रकाशक सम्पूर्ण क्रियायें दृष्टिगोचर हों इसलिये हम अपने प्रिय पाठकगणों के मङ्गलार्थ योगाभ्यास का सम्पूर्ण सिद्ध अङ्ग जिस प्रकार घेरण्ड महाराज चण्डकपालि से वर्णन किया है प्रकाश करते हैं और आशा करते हैं कि लोग इसमें अभ्यास बढ़ाय के अपने जीवन को सुफल करैंगे ॥

सूचीपत्र ।

आरोग्यदर्पण—पञ्चमखण्ड ॥

—————:○:*:○:—————

मन्तव्य ।

आयुर्वेद क्या वस्तु है, आयुर्वेदीय चिकित्सा हम लोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी है, डाक्टरी दवाइयां हमारे प्रकृति के अनुकूल नहीं हैं और न कभी होना सम्भवहै इत्यादि बातोंकी आलोचना आरोग्यदर्पण के प्रथम तथा द्वितीय आदि खण्डों में भलीभांति कर चुके हैं इस पांचवें खण्ड के आरोग्य दर्पण में सिर्फ इस कदर कहना जरूरी समझते हैं कि जब तक आयुर्वेदीय चिकित्सा का प्रचार भारत में न फैलाया जायगा, राजा महाराजा आयुर्वेदके उद्धार की ओर दृष्टि नहींदेंगे भारत का कल्याण होना अति दुष्कर है और यह जो अंगरेजी दवा के प्रभाव से हमारे देशी राजा महाराजा सेठ साहूकार अमीर महाजन थोड़ी ही अवस्था में यम लोक की यात्रा करते जाते हैं बन्द नहीं होगा ॥

यह तो हमारे भारत का एक लड़का भी कह सक्ता है कि चिकित्सा शास्त्र के आचार्य अश्वनी कुमारादि अनेक महर्षि हुये हैं कि जिनकी रचित चिकित्साशास्त्रद्वारा भारतकी सन्तान हजारों पुस्तहापुस्तसे आरोग्य और दीर्घायु होती आई है और हो सक्ती है, कहते हुये रोमांच होते हैं वेही पुस्तकें और उन्हींदवाइयोंका प्रभाव कुछपहिले इस भारतवर्षमें कैसा प्रदीप्तमान था छिपा नहीं है आज वही चिकित्सा शास्त्र किस दशा को और दुर्गति को प्राप्त है सभ्यों में वह भी छिपा नहीं है ॥

वैद्यक की ऐसी दुर्गति क्यों है ? इस ओर राजाओं की दृष्टि न पहुंचने से, अंगरेजी राज और अंगरेजी शिक्षा प्रचार होने पर भी जब तक वैद्य और वैद्यक पर राजाओं की प्रीति थी, हरएक राजधानी में दो चार वैद्य और एक दो छोटा मोटा चिकित्सालय था कुछ २ सम्मान था,

जब से राजा महाराजाओं ने वैद्यों को तिलांजुली ही दे दिया, देशी दवा खाने से कसम खा गये डाक्टरों की मान मर्यादा बढ़ चली, दोनों समय चाय सोडावाटर एक्सायन सामपीन की रंगीली रंग मे रंगीन हो गये, दुधपिये बच्चे तक कुईनाईन सिनकोना की घूटी पीने लगे जो कुछ रहा सहा तब से और भी रसातल को चल गया । रहे हमारे प्रभु वर अंगरेज महाराज वह क्यों ध्यान देने लगे, थोड़े दिन हुये यह आन्दोलन हुआ था कि देशी वैद्य एक नियम के द्वारा देशी लोगों की चिकित्सा करने से रोक दिये जावें अर्थात् जब तक वह सार्टिफिकेट नहीं प्राप्त करलें तब तक चिकित्सा न करने पावें, यद्यपि उसमें भी अनेक सन्देह उत्पन्न हुये थे कि कौन परीक्षा लेगा, किस प्रकार परीक्षा ली जायगी, जो लोग उत्तीर्ण नहीं होंगे उनको पुनः पढ़ाने के लिये कोई कालिज खुलैगा या जन्म के लिये निकम्मे कर दिये जायगे तथापि यह आशाबंध चलीथी कि इसका कुछ परिशोधन अवश्यहोगा परन्तु "स्वप्नलब्धं यथाधनं" के समान सब आन्दोलन मिट गया यदि कुछ काल पर्य्यन्त इस वैद्य विद्या पर और भी ध्यान न दिया जायगा तो आयुर्वेद का भारत से समूल नष्ट हो जाना कोई सन्देह जनक बात नहीं है, सो धार्म्मिक देश हितैषी सत्पुरुषों को चाहिये कि इस ओर भी कुछ २ ध्यान दें और उसका सहज उपाय यह है कि आयुर्वेद के जानने वाले सत् वैद्यों को सहायता देकर उनकी औषधियों के सेवन से आरोग्यता लाभ कर उनको उत्साहित करें और अपने नव शिक्षित सन्तानों को जो इस ओर से उलट रहे हैं ध्यान दिलाना चाहिये ॥

क्रमशः—

विज्ञप्ति।

पाठकगण को स्मरण होगा कि हमने चतुर्थखण्डके प्रारम्भहीमें ज्वर रोग का प्रायूप निदान और चिकित्सा देश कालानुसार अनेक वर्षों में जैसा परीक्षा से सिद्ध देखा गया सर्वसाधारण गणों के उपकारार्थ प्रकाश किया और उसका अङ्ग जो कुछ बाकी रह गया है इस पञ्चमखण्ड में उसे तथा अन्य २ विषय भी क्रमशः प्रत्येक मास के आदि में प्रिय पाठकगणों की सेवा में अर्पण करते रहेंगे। हम निस्सन्देहकहसक्तेहैं यदि सम्यक्रोग उसे पढ़ पूर्वापर विचार करके द्रव्योपार्जनार्थ अथवा धर्मार्थ लोगों की चिकित्सा करेंगे तो अवश्य देश का मंगल एवं वैद्यक का पुनरुज्जीवन होना कोई कठिन बात नहीं है। किसी को कुछ दवा बतादेना या चूर्ण बटी बनी बनाई दे देना लोग साधारण बात समझते होंगे लेकिन यह ऐसे ज़िम्मेदारी का काम है जो लौकिक पारलौकिक दोनों से सम्बन्ध रखता है याने दवा देने वाले के हाथ में रोगी अपना प्राण अर्पण करता है तो कहिये बिना जाने बूझे अटकरपच्चू दवा देने से रोगी की शारीरक दशा कुछ भी बिगड़ गई तो चिकित्सक इस बातके ज़िम्मेदार हुवा कि नहीं जो मूर्ख वैद्यों के लिये संसार में राजकीय दण्ड, लोक निन्दा आदि और पारलौकिक बिगति। सो हे मित्रवर्गो चिकित्साकर्म बहुतकठिन और ज़िम्मेदारीका कामहै। इसी सबबसे मूर्ख वैद्योंकेलिये हमारे सुश्रुत महाराज ने बधकरना लिखा है॥

यस्तुकर्मसुनिष्णातो धाष्ट्यार्च्छास्त्रबहिष्कृतः। ससत्सु पूजांनाप्नोति वधमर्हतिराजतः॥

जो वैद्य कर्म में तो निपुण है अर्थात् काढ़ा चूर्ण अवलेह आदि उमदा बनालेताहै या रोगीको ठीकसमयपर दवा खिलापिला सक्ताहै किन्तु शास्त्र को नहीं जानता केवल ढिठाई से काम करता है वह विद्वानों में

मान प्रतिष्ठा नहीं पावता किन्तु राजा करके वध करवे योग्य है अर्थात् ऐसे वैद्य को राजा मरवाय डाले ॥

तात्पर्य्य यह है कि बहुतसे लोग ऐसे किस्म के भी हैं जो वैद्यविद्या को नहीं जानते इधर उधर किसी से दो चार प्रकार की दवा सीख कर दवाकरनेलगतेहैं जहां बिचारेरोगीने कहा कि तुम्हें हम तीनदिनमें चङ्गा कर देवेंगे "गरजमन्दा बावला होता है" झट बिस्वास कर लेते हैं यह नहीं सोचते कि मूर्ख वैद्य के हाथ का औषध नहीं खाना चाहिये अन्त में धन प्राण दोनों से हाथ धो बैठते हैं । इसी लिये मूर्ख वैद्यों के लिये वध की आज्ञा राजा को ऋषियों ने दिया है ॥

भेषजंकेवलंकर्त्तुं योजानाति नचामयं। वैद्यकर्मसचेत्कुर्यांद्वधमर्हति राजतः ॥

जो वैद्य सिर्फ दवा देना जानता है किन्तु यह नहीं जान सक्ता कि इस रोगी के भीतर कौन सी बिमारी है और वह किस धातु के साथ अपना पूरा सम्बन्ध किये है, देश कालानुसार कौन दवा से आरोग्य हो सक्ता है ऐसा न जानने वाला वैद्य यदि चिकित्सा करै तो उसे राजा अवश्य फांसी देदेवै । सो इस विषय में गवर्नमेंट का ध्यान न पड़ने से आज कल जिसे देखिये चिकित्सक का काम करने लगे इससे हजारों मनुष्य बिना मौत के मर जाते हैं ॥

यद्यपि बिना शास्त्र के जाने चिकित्सा करना महा दुष्कर पापप्राप्त होना लिखाहै किन्तु लोगलोभवस पापको कुछभीनहींसमझते और ब्रह्महत्यादि अनेक पाप किया करते हैं लेकिन जब राजा की ओर से दंड मिलता है तब कुछ मानते हैं क्योंकि घी में सुअर गौ आदि की चर्बी मिलाने वाले हमारे हिन्दू भाई मारवारी ही लोग हैं, जुर्माना पर जुर्माना देते जाते हैं परन्तु चर्बी मिलाने से बाज़ नहीं आते मुख्य कारण

यह है कि कसूर के माफिक दंड नहीं मिलता, हमारे हिन्दू शास्त्र में लिखा है कि जो कोई किसीका नियम धर्म बिगाड़े राजा उसके शरीर में छेद कराके सब रुधिर निकलवाय लेय, वैसाही दंड इन अधर्मियों को दिया जाय तो स्वप्न में भी वह काम न करैं। प्राचीन काल में यहां (आर्य्यावर्त्त में) पाप बहुत कम था ऐसा पुराणों में लिखा है उसका सबब यही मालूम होता है कि पाप करने वालों को एक तो यथार्थ दंड मिलता था दूसरे विद्या वृद्धि के प्रभाव से लोग पाप करने से डरते थे जैसा कि धर्मशास्त्र में लिखा है॥

प्रायश्चित्तं चिकित्सांच ज्योतिषं धर्मनिर्णयम्। विनाशास्त्रेणयोब्रूयात्तमाहुर्ब्रह्मघातम्॥

प्रायश्चित अर्थात् पापी पुरुषकेलियेचान्द्रायणआदि प्रायश्चित्त बतलाना (चिकित्सा) रोगी को आराम करने को दवा खिलाना (ज्योतिष) ग्रहादिकों का फल तथा चौरादि प्रश्न बतलाना (धर्मनिर्णय) व्रतादिकों का बतलाना एवं दाय भागादि का विभाग कराना इनको जो बिना शास्त्र के जाने कहता है उसको बड़े २ मुनीश्वरों ने ब्रह्म घातक कहा है॥

अथ जीर्णज्वर चिकित्सा।

जीर्ण ज्वर का आदि कारण, निदान और कुछ चिकित्सा चतुर्थ खंड में लिख चुके हैं इस स्थल में पूर्ण रूप से चिकित्सा लिखते हैं। पाठक गण को याद होगा कि जो ज्वर २१ दिन व्यतीत होने पर शरीर में सूक्ष्म रूप हो कर बना रहे और रापतिल्ली मन्दाग्नि आदि उपद्रव को उत्पन्न करै उसे जीर्णज्वर अर्थात् पुराना ज्वर कहते हैं इस बुखार वाले को उपवास, वमन, जुलाब और गरम दवा का उपचार कदापि न करै क्योंकि पुराने ज्वर में मनुष्य का रक्त मांसादि सब क्षीण हो जाते हैं और लंघन आदि कराने से और भी क्षीण हो रोगी के मर जाने का

दूर रहता है । यदि ऐसाही वातादि कोई उपद्रव बढ़ा देखे तो उसके दमन के लिये सिर्फ एकदो लंघन चाहे भलेही करा दे । इसमें वचन है ।

जीर्णज्वरीनरःकुर्य्यान्नोपवासंकदाचन । ज्वरक्षीणस्यन-हितं वमनंनविरेचनं ॥ कामंतुपायसंतस्य निरूहैर्वाहरेन्म-लान् ।

पुराने बुखार वाले को उपवास, वमन और विरेचन नहीं कराना बल्कि उसको इच्छा पूर्वक गौ का दूध पिलाना और दस्त न होता हो तो निरूह वस्ति याने पिचकारी के जरिये से संचित मल को निकाल देना चाहिये ॥

पुराणज्वरे पथ्यम् ॥

मूंग अथवा अरहर की दाल, पुराने चांवल का भात, गेहूं या जवे की रोटी, गाय बकरी का दूध घृत भातदिल और हलकी तरकारी, धनिया, सफेद जीरा, कालीमिर्च, बड़ीलायची आदि मसाला, यदि खांसी न हो तो आलूबुखारा, जरेवन या आंवला कैथे की चटनी जीरा मिर्च पुदीना सेंधानोन मिलाके देय और खांसी आती हो तो खटाई कोई भी नहीं देनी चाहिये । शीतल दवाइयों का उपचार, शरीर में उपटन आदि तथा औषधियोंका बनायाहुआतेलको शरीरमें लगाके स्नान करना, सफेद चन्दन, कपूर, केशर गुलाबजल में घिस कर अंग में लेप करना, पुष्पों का माला पहिरना, गंगाजल या पहाड़ी झरणों का जल या आसुद जल अथवा परिस्रुत जल (फिल्टरवाटर) का पीना शाम सबेरे शुद्ध वायु का सेवन, चन्द्र की चांदनी प्रियाका आलिङ्गन सब पुरानेज्वर वालों को हित है ॥

जीर्णज्वरपर स्वर्णमालिनीवसन्त ॥

स्वर्णंमुक्तादरदमरिचं भागवृद्ध्यागृहीतं खर्प्परयष्टौप्रथम मखिलं मर्द्दयेन्मृचणेन। यावत्स्नेहोव्रजतिविलयं मर्द्दनेदौयतेसौ गुञ्जाद्वंद्वमधुमगधया मालिनीप्राग्वसन्तः॥

शुद्ध सोने का वर्क (तबक) १ मासा, अनवेधी छोटीं मोती दो मासा, मक्सूदा यादी शुद्ध सिंगरफ तीन मासा, काली मिर्च छिलका रहित चार मासा, शुद्ध खपरिया, इसको रसक * और सङ्गमिश्री भी कहते हैं आठ मासा, सबों को कुचल खूब महीन पीस एक तोला मक्खन और सब दवा को खरल में डाल एक प्रहर तक घोंटे बाद उसके कागदी नीबू के रस डाल कर घोटे जब तक मक्खन की चिकनई दवा से बिलकुल न निकल जाय, बाद उसके तीन २ मासे की टिकिया बनाय के सुखाय लेय। इनका मात्रा एक रत्ती से ४ रत्ती पर्य्यन्त हैं। इस स्वर्ण मालती बसन्त को दोनों समय एक मासा गुर्च का सत्त २ छोटी लायची और एक रत्ती छोटी पीपर मिलाय के शहत के संग चाटने से जीर्ण ज्वर का नाश होता है किन्तु खाने को कुछ दूध और रात में मलाई मिश्री मिला के अवश्य देवे॥

* रस दो प्रकार का होता है १ दर्दुर यह मोटा दलदार, दूसरा कारवेल्लक नामक रसक पतला होता है। जो खपरिया रंग में पीली वजनदार है सो उत्तम है। खपरिया शुद्ध करने की वैद्यक में अनेक विधि लिखी है, जिसे इस प्रकरण में लिखेंगे। खपरिया क्या वस्तु है इसकी उत्पत्ति स्थान कहां है कैसे होती है अब तक किसी ग्रंथ में दृष्टि गोचर नहीं हुआ। लोग कहते हैं टकसाल घर में जिसमें सोना चांदी गलाया जाता है उसी घरिया को खपरिया कहते हैं। नागार्जुन आचार्य कहते हैं कि काला पीला लाल खपरिया किसी २ पृथ्वी में दीख पड़ता है॥

वसन्तमालिनी।

रसकयुगलभागं वह्निजंभागमेकं द्वितयमपिसुखल्वे मर्द्दयेन्मृचणेन। भवतिघृतविमुक्तो निंवुनीरेण यावज्ज्वरहर मधुकुल्यामालिनी प्रवसन्ता॥ जीर्णज्वरेधातु गतेऽतिसारे रक्तान्विते रक्तजवेष्ट रोगम्। घोरव्ययेपित्तकृतेच दाहेवलप्रदो दुग्धयुतंचपथ्यं॥ प्रदरंनाशयत्यासौ तथादुर्नाम सोनिता। विषमंनेत्ररोगंच गजेन्द्रमिवकेशरी॥

सोधी खपरिया १० तोला, काली मिर्च ५ तोला दोनों को महीन पीस ५ तोला मक्खन डाल के एक प्रहर घोटैं बाद नींबू के अर्क में घोटैं जब तक मक्खन की चिकनई दूर न हो, अगर एक दो दिन के घोटने से चिकनई अच्छी तरह न निकले तो टिकरी बना के सुखाय लेय और फिर नींबू के रस में घोटैं इसी प्रकार तीन चार मरतबे घोटने से बिलकुल चिकनई निकल जाती है। तीन २ मासे की टिकिया बना के सुखा लेय यह बसंत मालिनी काले रंग का होगा॥

दूसरी रीति—अगर खपरिया अच्छा न मिले तो उसकी जगह शुद्ध जस्ते का भस्म लेवै, किन्तु वह भस्म किसी औषध के द्वारा न हुआ हो पूर्वोक्त प्रकार उसे भी घोंट कर तैय्यार कर लेय यह बसन्त मालिनी सफेद रंग की होगी, इसकी तासीर शीतल है, मात्रा एक रत्ती से चार रत्ती पर्य्यन्त इसको गुर्च का सत्त छोटी लायची और सहत के सङ्ग चाटने से गरमी से उत्पन्न जीर्णज्वर, फिनाहू पुराना हो आराम होता है। कुरैया के छाल के काढ़ा अथवा अवलेह के साथ चाटने से रक्तातिसार, रक्त पित्त से अथवा पीनस रोग से नाक के भीतर लोहू की प-

पड़ी जमती हो तो यह बसंतमालिनी सहत के साथ या आमले के मुरब्बा के साथ खाने से निहायत फायदा होता है। इसको सहत के साथ चाट कर ऊपर से गौ के कच्चे दूध में मिश्री मिला के पीने से रक्त विकार से या पित्त से अथवा धातुक्षय से उत्पन्न अन्तःकरण का दाह शांत होता है। दो रत्ती बसन्तमालिनी और एक मासा रसवत दोनों को सहत में मिला के खाने से खूनी बवासीर से लोहू का आना, गुदा की जलन आदि उपद्रव दूर होता है। इसको चिकने पाथर पर पानी से महीन घोंट आंखों में अञ्जन देने से धुन्ध, जाला, नाखूना, आंखों से पानी का बहना बन्द होता है और नेत्र की ज्योति बढ़ती है॥

जीर्ण ज्वर की गरमी से रोगी की शरीर रूखी हो जाती है उसका कारण वायु का कोप है ऐसी अवस्था में जब तक वायु शमन नहीं किया जाता बिमारी नहीं छुटती इसलिये वायुशांति होनेकेवास्ते घृत दुग्ध पान करावे क्योंकि जैसे जलते हुये घर में जल डालने से अग्नि की शांति होतीहै वैसाही रूखे शरीर में घृत दुग्ध के डालने से वायु की शांति होती है इसमें वचन भी हैं—"लवणेन कफंहन्ति पित्तंहन्ति सशर्करा। घृतेनवातजानरोगान् सर्वरोगानगुडान्वित।" नमक से कफ का नाश, मीठी चीजों से पित्त का नाश, वायु में उत्पन्न जितने रोग हैं घृत पान से शांति होते हैं और प्राचीन गुड़ मिश्रित औषधियों के द्वारा प्रायः सर्व रोगों का नाश होता है। यह सिद्ध हुआ कि पुराने बुखार (जीर्ण ज्वर) में घृत पान कराना श्रेष्ट है किन्तु किस बिधि से पिलाना सो कहते हैं।

अगर बिमार बहुत दुर्बल बल हीन हो गया हो, खाना न पचता हो या दस्त पतले आते हों तो आधा तोला घृत से प्रारम्भ करावै, सो घृत आधा तोला, सहत ३ मासा, मिश्री ३ मासा तीनों को एक में मिला के पहले ४। ५ दाना गोल मिर्च मुख में कुचल कर ऊपर से घृत पीजावै और उस समय पानी न पीवै। अथवा आधा तोला मक्खन

बराबर की मिश्री मिला के रोज सबेरे खिलावे और क्रम २ पचता जाय मात्रा बढ़ाता जावे । अगर रोगी का मल मूत्र बंधा हो तो आधपाव गरम पानीमें आधा तोला घृत और ३ मासा सेंधानोन डालके पिलावे॥

वासादि घृत ॥

वासांगुडूचीत्रिफलां त्रायमाणांदुरालभां । सक्वाथेनकषायेण पयसोद्विगुणेनच ॥ पिप्पलीमुस्तमृद्वीका चन्दनोत्पल नागरैः । कल्कीकृतश्च विपचेत् घृतंजीर्णज्वरापह ॥

जिस जीर्णज्वर वाले को खांसी सहित ज्वर बना रहता हो और शरीर सूखी जाती हो तो वासादि घृत पिलावे । बनाने की विधि- रूसा की पत्ती, गुरिच, त्रिफला, त्रिपारा और जवासा इन पाचों चीजों को एक २ छँटाक ले अधकचरा कर एक मृत्तिका पात्र में चार सेर पानी में रात को भिजा देय सबेरे पकावे जब चौथाई पानी रह जाय शीतल कर मल के छान लेय । गौ अथवा बकरी का दूध २ सेर । छोटी पीपर, नागरमोथा, मुनक्काबीजरहित, लालचन्दन, कमलगट्टे की गरी बीच में हरी पत्ती रहती है उसे निकाल डाले और सेतरासोंठ सबों को एक २ तोला ले शिल पर पानी डाल के खूब महीन पीस लुगदी बनाय लेय, गौ अथवा बकरी का घृत १ सेर रांगे की कलई की हुई कढ़ाई को चूल्हे पर चढ़ाय घृत लुगदी दूध और काढ़ा को छोड़ धीमी आंच में पकावे जब दूध काढ़ा वगैरह सब जल जाय घृत मात्र रह जाय चूल्हे पर से उतार शीतल कर छान के अमृतबान में रख दे इसका मात्रा छ मासा से दो तोला तक है । सबेरे रोगी को पिलावे ऊपर से पानी पीने को न देय गलेसे चिकनाई दूर करनेके लिये सेंधानोन जरा सा खिलावे या एक दो पान का बीड़ा खावे १५-२० मिनट के बाद पानी पीनेमें हर्ज नहीं है अगर रोगी को दोनों समय पूर्ण मात्रा घृत निर्विघ्न पच जाय तो

और अधिक घृत भी पी सक्ता है यह वासादि घृत जीर्णज्वर को निस्सन्देह नाश करता है । अगर घृत पान से खांसी कुछ बढ़ जाय तो घृत पिलाना बन्द नहीं करना चाहिये खांसी शमन होने का भी उपाय करता जाय घृत पचन होने लगने पर खांसी स्वय शान्ति हो जायगी ॥

पिप्पल्यादिघृत ॥

यह घृत भी जीर्णज्वर को नाश करता है ऐसा कईवार अनुभव किया गया है । यदि उपरोक्त घृत पान करने से रोग में कुछ शमन न देखपड़े तो उसके बाद पिप्पल्यादि घृत अवश्य पिलावे रामआसरे पर बैठा न रहै । छोटी पीपर, लाल चन्दन, नागरमोथा, सुगन्धवाला, कुटकी, इन्द्रजौ, आंवला, वरियन, अतीस, मुनक्का, भटकटैया का पञ्चाङ्ग इन सभोंको तीन २ तोला ले सभोंको अधकचरा कर पूर्वोक्त प्रकार पांच सेर जल में भिजावे दूसरे दिन काढ़ा बनाय गौ या बकरीका घृत एक सेर, दूध ऽ२॥ सभों को कढ़ाई में चढ़ाय मन्दाग्नि में पचा लेवे इस घृत का भी मात्रा वही है जो वासादि घृत का है । उपरोक्त दोनों घृतों को रोगी रोटी दाल के साथ भी खा सक्ता है यदि अच्छा लगे तो ॥

क्षीरघृत प्लीहाधिकारे ॥

अगर जीर्णज्वरी को खांसी ज्वरके अलावा प्लीहा भी हो जिसे कडुई, तिल्ली और बरवट भी कहते हैं तो इस घृत को अवश्य पिलावे ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः। ससैन्धवैश्चपलिकै घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ क्षीरञ्चतुर्गुणंदत्वातत्सिद्धंप्लीहनाशनम्। विषमज्वरमन्दाग्निहरंरुचिकरंपरम् ॥

छोटी पीपर, पिपरामूल, चाब, चीता, चैलरा सोंठ और सेन्धानोन

इन पांचों औषधों को एक २ छँटाक ले पूर्वोक्त प्रकार क्वाथ बनाय एक सेर गौ के घृत में चार सेर गौ या बकरी के दूध के सहित मन्दाग्नि में पचाय घृत सिद्ध करलेय इसका भी मात्रा छ मासा से दो तोला तक है। यह घृत प्लीहा रोग, जीर्णज्वर विषमज्वर और मन्दाग्नि को नाश कर रुचि को बढ़ाता है ॥

जीर्णज्वरे दुग्धयोगः ॥

चीणेकफज्वरेजीर्णेचल्पदोषोपिपासते। दाहार्तेतुपयोयो-
ज्यंतेनैवतुविषभ्रवेत् ॥

चौथे खण्ड के ज्वर चिकित्सा में यद्यपि ज्वर में दूध खाने की विधि निषेध लिख आये हैं प्रसंगवश इस खण्ड में भी दुग्ध योग पुनः लिखते हैं ॥

जिसे प्रमेह या प्रदर रोग होके ज्वर रोग हुआ हो और वह ज्वर पुराना हो गया हो, अथवा जिस पुराने ज्वर में कफ सूख गया हो अथवा अल्प दोष होने के कारण पियास और दाह अधिक बढ़ा होतो उस रोगीको अवश्य दूध पिलावे चाहे आरोग्य दूध पिलावे या निम्नलिखित और पाक बनाके पिलावे फायदा निःसन्देह करेगा ॥

पञ्चमूली क्षीरपाक ॥

सर्वज्वराणांजीर्णानांचीरमौषध्यमुत्तमं। श्वासात्कासाच्छि
रःशूलात्पार्श्वशूलात्सपीनसात् ॥ मुच्यतेज्वरितःपीत्वापञ्चमू-
लीशृतंपयः ।

जो जीर्णज्वर वाला रोगी अत्यन्त दुर्बल हो गया हो कि जिसे अत्यन्त दाह रहने पर भी बलगम बढ़ने अथवा पसुरी में दर्द होने का डर हो तो पंचमू-

लो और पिलावे। पंचमूली अर्थात् पांच वृक्ष की जड़ वह यह है सालपर्णी (सरिवन) पृष्टपर्णी (पिथिवन) दोनों कटेरी (छोटी भटकटैया, बड़ी भटकटैया) और बड़ा गोखुरू इन पांचों वृक्षों की जड़ पांच तोला ले अध-कचरा कर एक मृत्तिका पात्र में आधसेर दूध और दो सेर पानी डाल के धीमी आंच में पकावे जब पानी जलजाय दूध अकेला रह जाय अग्नि पर से उतार शीतल कर छान लेय और उसी दूध को थोड़ा २ कर दिन भर रोगी को पिलावे, अगर फीका दूध पीने में रोगी अरुचि प्रगट करे तो थोड़ीसी मिश्री दूध में मिलादेय। किन्तु प्रथम उपरोक्त विधि से सिर्फ आधपाव दूध तैय्यार करके पिलावे फिर जब २ पचता जाय क्रमशः बढ़ाताजावे। इस दूधके पिलाने से स्वास, खांसी, शिरदर्द, पसुरी का दर्द, जुकाम और पुराने ज्वर को फायदा होता है॥

शितादिक्षीर॥

सिताढ्यविश्वखर्जूरीमृद्वीकाभिःशृतंपयः। पृथ्वीचबिल्व-वर्षाभूपयश्चोदकमेवच॥ क्षीरावशिष्टतत्पीतंतद्धिसर्वज्वरापहं।

सोंठ, छुहारा और मुनक्का बीज रहित तीनों चीजें को पूर्वोक्त प्रकार तौलमें ले उसमें दूधको पानीकेसहित तैय्यारकर थोड़ीमिश्री और सहत डाल के पिलावे, इस के पीने से ज्वर का नाश, कोठ परिस्कार और मेदे में ताकत आती है। अगर मल पतला अथवा आम का कुछ उपद्रव हो तो यह दूध पिलावे। बेल की गरी २ तोला, सोंठ ६ मासा दोनों को एक पाव गौ के दूध में एक सेर पानी डाल के पकावे जब दूध अकेला रहजावेतो थोड़ा २ कर के कई वार रोगी को पिलावे॥

वर्धमानपिप्पली ॥

त्रिवृध्यापञ्चवृध्यावासप्तवृध्याथवाकणाः । गव्यक्षीरेणसं-पिष्टाःपिबेद्दशदिनानिह ॥ एवविंशद्दिनैसिद्धंपिप्पलीवर्धमा-नकम् । अनेनपांडुवातास्रकासश्वासरुचिज्वराः ॥ उदरार्शः क्षयश्लेष्मवाताभग्नन्त्युरोग्रहाः ॥

यद्यपि यह वर्धमान पीपल का योग विशेष कर पाण्डुरोग परहै किन्तु अनेक वार देखा गया है कि श्लेष्म युक्त जीर्ण ज्वर को भी नष्ट करता है। एक छोटो पीपल को एक २ तीन २ अथवा पांच २ कर के जैसो ताकत हो अर्थात् जहां तक पच सके गरमी, दाह, जलन, पियास की अधिकता उत्पन्न न करे, सेवन करे और उसके सेवन करने की दो विधि है, प्रथम यह कि पीपल को गो के दूध में पीस लुगदी बनाय मुख में रख दूध से उतार जावे अथवा पीपल को टुकड़े २ कर पाव आधपाव दूध में चौगुना पानी दे के पकावे जब पानी जल जाय दूध मात्र रह जाय, पीपल निकाल के फेंक देय और दूध पीजावे और कितने वैद्य पीपल भी खिला देते हैं यद्यपि उसका खिला देना कोई हानिकर नहीं है किन्तु वह पीपल सत्त रहित है। पूर्वोक्त प्रकार पीपर चाहे जिस रीति से खावे दश दिन तक बराबर बढ़ाता जावे। जैसे एक पीपल से आरम्भ करे तो दूसरे दिन दो तीसरे दिन तीन, इसी प्रकार अगर तीन पीपल से आरंभ करे दूसरेदिन छ तीसरेदिन नौ ऐसाही दश दिन तक बराबर बढ़ाता जावे और दश दिन के बाद क्रमशः वैसाही घटाना आरंभ करे इस प्रकार बीस दिन पर्यन्त निरन्तर पीपल सेवन से जीर्ण ज्वर पांडु-रोग, खांसी, स्वास, मन्दा[illegible] र कफ का नाश होता है ॥

जीर्णज्वरे दुग्धफेनम् ॥

गोदुग्धप्रभवं किम्वाछागीदुग्धमथापिवा। भवेत्फेणंत्रिदोषघ्नंरोचनंबलवर्द्धनम् ॥ वन्हिवृद्धिकरंपथ्यंसदाम्लानिकरंलघु। अतिसारेऽग्निमांद्येचज्वरजीर्णेप्रशस्यते ॥

इस बात को हम कह चुके हैं कि जीर्णज्वरी रूक्ष रोगी को घृत अथवा दूध पिला के उसकी रूक्षता दूर करना नितान्त आवश्यकता है और इसी लिये कई क्रियायें घृत दूध की भी लिख दी गई हैं अब इस बात को दिखलाना है कि अधिक दिन शरीर में बिमारी के रहने से मेदा ऐसा कमजोर हो जाता है कि घी दूध को कौन कहे रोटी दाल का पचना मुस्किल पड़ जाता है, दूसरे आज कल के हमारे सहयोगी वैद्यगण जीर्ण ज्वरी को सिर्फ रूखी अरहर की दाल और रोटी खिला के रोग आराम करने के पलटे रोगी के आंत रक्त मेदादि को इतना सुखा डालते हैं कि हजम होना तो दूर है दो तोला भी अन्न पेट में जाने से दस्त हो जाता है तो ऐसी अवस्था में रूक्षता निवार्णार्थ सिवाय दुग्ध फेन सेवन कराने के अन्य उपाय नहीं। जब देखे कि रोगी निहायत निर्बल और कमजोर हो गया है और अग्नि निहायत हद्दर्जे की दुर्बल है, तो दुग्ध फेन पिलाना प्रारंभ करै जब दूध का फेन पचने लगे तब खीर पाक अथवा घृत पिलावे ॥

दुग्धफेन बनानेकीविधि यहहै कि जैसे भांग छाननेवाले भांगको दो लोटोंमें वारम्वार मिलातेहैं उसीप्रकार तातकालिकदुहा गौ अथवा बकरी के दूध को दो लोटों में ले वारम्वार एकसे दूसरेमें ऊपरकी धारसे उड़ेले उसमें जो फेन उत्पन्न हो उसे किसी वर्तन में निकालता जावे जब फेन आना बन्द होजाय दूध अलग करदेय. दूधकाफेन दूधके मथने से भी नि

फल सकता है किन्तु मथानी के मथने से फेन के साथ मक्खन (घृत) भी आ जाता है इसलिये मथन की अपेक्षा दूध को फेंट के फेन लेना उत्तम है । इस गर्म फेन में जरासा मिश्री डालके रोगी को पिलावे इसी प्रकार दोनों समय पिलावे यह दुग्ध का फेन त्रिदोष नाशक, रुचिकारी, बलवर्द्धक, जठराग्निवर्द्धक और एक प्रकार का पथ्य है तथा शीघ्रही तृप्ति कर एवं हलका है । इस दूध के फेन को अग्निमन्द, अतीसार और जीर्णज्वर में अवश्य पिलाना चाहिये ॥

लाक्षादि तैल ।

लाक्षाढकंक्काथयित्वा जलस्यचतुराढ़कैः । चतुर्थांशशृतं नीत्वा तैलप्रस्थंविनिक्षिपेत् ॥ मस्त्वाढकंचगोदध्न स्तत्रैवविनियोजयेत् । शतपुष्पामश्वगन्धां हरिद्रांदेवदारुच ॥ कटुकीं रेणुकांमूर्वां कुष्टंचमधुयष्टिकाम् । चन्दनंमुस्तकंरास्नां पृथक्कर्षप्रमाणतः ॥ चूर्णयित्वानिक्षिप्य साधयेन्मृदुवह्निना । अस्याभ्यंगात्प्रशाम्यन्ति सर्वेऽपिविषमज्वराः ॥ कासश्वासप्रतिश्यायत्रिकपृष्ठग्रहास्तथा । वातपित्तमपस्मार मुन्मादंयचराक्षसान् ॥ कंडूंशूलंचदौर्गंध्यं गात्राणांस्फुरणंजयेत् । पुष्टगर्भाभवेदस्य गर्भिण्यभ्यंगतोभृशम् ॥

इस लक्षादि तैल का गुण विषमज्वर नाशक लिखा है और श्लोक में जीर्णज्वर का नाम नहीं है लेकिन यह तेल जीर्णज्वर को भी नष्टकरताहै ऐसा अनेकबार परीक्षाकरके देखा गयाहै । अनेक ग्रन्थोंमें लाक्षादि तैल अनेक विधि सहित लिखे हैं किन्तु उपरोक्त औषधों के सहित यह तैल सब तैलों से उत्तम और गुणकर है ॥

पीपर की लाही तीन सेर १६ तोला ले के १२ सेर तीनपाव ४ तोला पानी में एक दिन रात भिजा रक्खे अगर मट्टी के घड़े में भिजावे तो १ सेर पानी अधिक देवे दूसरे दिन मन्दाग्नि से पचावे चौथाई जल बाकी रहै शीतल कर छान लेय, काली तिल का तेल तीनपाव चार तोला कढ़ाई में डाल उसी में लाही का पानी और गौ के दही का तोड़ तीन सेर तीन तोला डाल के पचावे और निम्नलिखित औषधों की लुगदी बना के उसी तेल में डाल दे। सौंफ, असगन्ध, हलदी, देवदारु, कुटकी, रेणुका बीज, मुर्रा, कूट, मुलेठी, सफेदचन्दन, नागरमोथा और रासन इन सब दवाइयों को ले पानी में खूब महीन पीस लुगदी बनाय तेल में डाल के धीमी आंच से पचावे जब पानी बिल्कुल जल जाय तेल मात्र रह जाय अग्नि पर से उतार शीतल कर कपड़े में छान बोतल में भर कर रख देय। इस तेल को रोज सबेरे रोगी के समस्त शरीर में धीरे२ दो तीन घंटा तक मालिश करै अगर रोगी सबल हो और स्नान करने की इच्छा प्रगट करै तो तैल लगाने के एक घंटे के बाद स्नान करा देवे, अगर रोगी कमजोर हो शरीर पर जल पड़ने से जाड़ा मालूम होता हो तो स्नान न कराके बदन पोछ लिया करै। इस तेल के लगाने से जीर्णज्वर, विषमज्वर, खांसी, स्वास, जुकाम, कमर पीठ का जकड़न, वात पित्त, मृगीरोग; उन्माद भूतबाधा, खुजुरी पेट का दर्द शरीर की दुर्गंधता और अङ्गों का फरकना आदि नाश होता है इस तेल के मालिश करने से गर्भिणी का गर्भ पुष्ट होता है।

अगर निम्नलिखित रूप से लाही का रस तैय्यार करके लाक्षादि तैल बनावे तो और भी अधिक गुण कर हो और सिद्धान्त ग्रंथों का मत भी यही है॥

दशांशंलोध्रमादाय तद्दशांशंचसर्ज्जिकां। किंचिन्नवदरीपत्र वारिषोड़श वा मतं॥वस्त्रपूतोरसोग्राह्यः लाचायाःपादतोषितः॥

लाक्षादि तैल यह ज्वर रोग पर प्रसिद्ध तैल है और प्रायः सभी वैद्य इसे बनाते हैं परन्तु लाही का रस किस प्रकार निकाला जाता है इसे विरलाही लोग जानतेहैं इसकाकारण यहहै कि एक दो पुस्तक पढ़ा बस वैद्य बन गये यह सब बातें अनेक ग्रन्थों के अवलोकन से होता है। लाह का रस निकालने की विधि यह है कि जितनी लाह हो उसका दशवां भाग लोध लेवे और लोध का दशवां भाग सज्जी और अन्दाजन थोड़ी सी बेर की पत्ती। पहले लाही को एक दो पानी से धो डाले ताकी लाही का गरदा मैल निकल जाय और लाही से सोलह गुना पानी डाल के एक रात दिन भिजा रक्खे दूसरे दिन लोध वगैरह डाल चूल्हे पर चढ़ाय धीमी आंच से पकावे जब चौथाई जल रह जाय उतार कर कपड़े से छान लेय इस लाह के रस से लाक्षादि तैल बनाना उत्तम होगा॥

जिस जीर्ण ज्वर में दाह अधिक हो हाथ पैर के तलुवे बहुत जलते हों, गर्मी से बेचैन हो तो निम्नलिखित तैल को मालिश करे॥

षट् तक्र तैल।

सुवर्चिकानागरकुष्ठमूर्वा लाक्षानिशालोहितयष्टिकाभिः।
सिद्धंहरेत्षट्गुणतक्रपक्व तैलंज्वरंदाहसमन्वितंच॥

सज्जीखार, सोंठ, कूट, मूर्वा, लाही, हरदी, सफेदचन्दन और जेठी मधु इन सब दवाइयों को समान भाग करके एक सेर ले अधकचरा कर सोलहसेर पानी में रात को भिजा दे सबेरे अग्नि पर पकावे जब चौथाई पानी रह जाय तब के छान लेय और एक सेर काले तिल का तेल, और तेल से छ गुना गौ का माठा या गौ के दही का तोड़ (पानी) सबों को कड़ाई में चढ़ाय धीमी आंच से पकाय लेय जब तेल सिद्ध हो जाय छान कर बोतल में भर के रख देय, इसके मालिस करने से दाह ज्वर और

शीतज्वर अर्थात् जीर्णज्वरी को चाहे जलन मालूम होता हो अथवा जाड़ा मालूम होता हो दोनों शांति होते हैं।

दुष्ट जल जनित ज्वर चिकित्सा।

बहुत दिनों का रक्खा हुआ जल के पीने से, रास्ते में तालाब, कुएं, सोता के जल के पीने से; जिस जल में फूल पत्ती पड़के सड़ गये हों या मेढ़क आदि कीड़े पड़े हों उस जल के पीने अथवा उसमें स्नान करने से, बारम्बार बहुत जल के पीने से, अथवा कहीं से थका आया हो उसको बिना शांति किये ही अधिक जल पी लेने से प्रायः लोगों को ज्वर हो आता है और जो लोग कोमल प्रकृति के हैं, जिनका खाना पीना एक समय में अन्दाज से बन्धा है, हमेशा एकही कुआं का जल जिसके पीने में आताहै उन्हें दूसरे देशमें जानेसे जुकाम या ज्वररोग प्रायः हो जाता है इस लिये विदेश जानेवाले को चाहिये कि रास्ते में जल बहुत विचार के पिये या निर्मली आदि चीजों से जल को रोज शुद्ध कर लिया करे अथवा निम्नलिखित औषध को खाता जाये तो जल का विकार न हो॥

माषार्द्रक यवक्षारौ पीत्वाचोष्णेनवारिणा। नानादेश समुद्भूतं वारिदोषमपोहति॥

अदरख अथवा सोंठ चार माशा, जवाखार चार माशा, दोनो को एक में मिलाय दो मात्रा करे एक मात्रा सबेरे और एक मात्रा सामको गरम जल के साथ पीता जावे तो विदेश गमन के रास्ते में चाहे जहां का जल पीता जावे पानी का दोष न होगा॥

भोजनादौनरैर्भुक्तं शुंठीराज्यभयोन्वितं। कल्कंतुभयतेनित्यं नानादेशोभ्दवंजलं॥

शोंठ, राई और कुड़ा का वक्कल तीनों को बराबर तीन चार मासा लेकर शिल पर पानी के साथ पीस के लुगदी बनाय लेव, बाद लुगदी को मुख में रख पानी से उतार जावे । इस लुगदी को जो मनुष्य हमेशा भोजन के पहले खाता रहै उसे किसी देश का जल विकार नहीं करैगा यह अनुभूत है । अथवा रोज सबेरे थोड़ी सी नींव की पत्ती पीस के जल के साथ पीता जावे तो भी किसी देश के जल का विकार नहीं हो गा । अगर दुष्ट जल के पीने से ज्वर आगया हो तो इस चूर्ण को शहद के साथ चाटने से निस्सन्देह ज्वर जाता रहता है ॥

किरातादि चूर्ण ।

कटुचिरायता,काली निशोथ, नागरमोथा, वायुबिरंग, कूट और शोंठ यह सब एक २ तोला, छोटी पीपल छ मासा सब को कूट कपरछन कर दो दो मासे की पुड़िया बनाय लेव दिन में तीन दफे याने चार २ घंटे पर अर्थात् सबेरे, दोपहर और सांझ को शहत के साथ चांटे तो दुष्ट जलजनित ज्वर रोग बहुत जल्द आराम हो ।

ज्वर खांसी की उपाय ।

खांसी बहुत कारणों से लोगों को आने लगती है किन्तु ज्वर रोग में अधिक शीतल जल पीने से, शरीर में अधिक सर्द हवा के लगने से, खट्टी चीजों के खाने से, अथवा यकृत अर्थात् कलेजे पर शोथ होने से खांसी आने लगती है । क्षयकास का लक्षण जैसा आयुर्वेद में लिखा है वही सम्पूर्ण लक्षण जीर्ण ज्वर में जब कलेजे में शोथ हो के खांसी आने लगती है मिलते हैं फर्क यह होता है कि जीर्ण ज्वर होने के बाद खांसी आने लगती है और क्षयकासमें पहले खांसी आनेलगती है पीछे ज्वर होता है ॥

साधारण ज्वर से लेकर जीर्णज्वर तक किसी ज्वर में खांसी हो तो

प्रथम इस बात को अवश्य विचार लेना चाहिये कि यह खांसी सुष्क है या तर और उसका पहिचान यही है कि सुष्क खांसी में बलगम मुसकिलसे निकलता है, और पतला बलगम आता है। तर खांसीमें बिना परिश्रम खांसी आतेही बलगम अंठा का अंठा झट से बाहर निकल आता है और खांसी बन्द हो जाती है। अगर तर खांसी आती होतो इस दवा को चटावे ॥

कासेयणाकणामूलं कलिद्रुमफलंरजः । सविश्वभेषजं-लिह्यान्मधुनावावृषारसं ॥

छोटीपीपल, पिपलामूल, बहेराकाछिलका और बैतरासोंठ इन चारों चीजों को समान भाग ले महीन चूर्ण कर दो दो मासे की पुड़िया बनाय लेय, एक पुड़िया में तीन मासा रूसे की पत्ती का रस और तीन मासा शहत मिला के चटा दे इसी प्रकार शाम सबेरे चटावे अगर रात को खांसी की तकलीफ अधिक हो तो नौ दस बजे रात कोभी इसी प्रकार एक पुड़िया चटा देय अगर रूसे का रस न मिले तो केवल शहतके साथ चटावे और निम्न लिखित गोली को तैयार कर रोगी को चुसने देय अर्थात् गोली रोगी के मुख में पड़ी रहे ॥

तरखांसी पर गोली ॥

तुल्यालवङ्गमरिचाक्षफलत्वचःस्युः सर्वैसमोनिगदितःखदिरस्यसारः। वब्बूलत्वक्क्वाथयुतंचचूर्णं कासान्निहन्तिगुटिका घटिकाष्टकान्ते ॥

लौंग, काली मिर्च, बहेरा का छिलका तीनों को समान भाग लेव और तीनों चीजों के बराबर खूब साफ पपरिया कत्था अर्थात् जिसे हाथीपांव कत्था कहते हैं लेय सभों को महीन चूर्ण कर बबूर इसे छाल

के काढ़े में खूब घोट कर मटरके बराबर गोली बना लेय जब खांसीआवे एक गोली मुख में डाल के चूसे इसी प्रकार दिन रात में एक रोगी १०-१२ गोली तक चूस सक्ता है किन्तु इस बात पर अवश्य ध्यान रहे कि बलगम सूखने न पावे । उपरोक्त अवलेह तथा गोली अगर रोगी को गरमी करै याने पेट में जलन मालूम हो, पियास बढ़े, गला सूखे तो अव लेह और गोली की मात्रा कम कर देय और इस अवलेह को बना के दिन में कई बार चटावे ताकि बलगम गीला बना रहे और निकलता जावे ॥

कफार्द्रकर अवलेह ॥

हंसराज १ तोला, मुलेठी १ तोला, सुरमिखतमी ८ मासा, उन्नाव १॥ तोला, और जूफा ६ मासा इन सब दवाइयों को अधकचरा कर आधसेर जलमें रातको भिजादे, सबेरे मन्दाग्निमें पकावे जब आधापानी जलजाय शीतल कर मल के छानलेय और आधपाव मिश्री डालके अवलेह बनाय लेय दिन रात में रोगी को जरा २ सा कई बार चटावे। इस अवलेह के चटाने से कफ सूखने नहीं पाता । उपरोक्त वटी चूर्णादिकों के देने से खांसी में कुछ शान्ति न देख पड़े तो इस चूर्ण को शहत के साथ दोनों समय चटावे । यद्यपि यह चूर्ण ग्रहणी रोग पर प्रधान है किन्तु खांसी और स्वास में भी इस चूर्णका सेवनकराके देखा गयाहै कि बहुत फायदा करता है ॥

जातीफलादि चूर्ण ॥

जातीफललवंगैला पत्रत्वङ्नागकेशरम् । कर्पूरचन्दन-तिल त्वक्क्षीरीतगरामलैः ॥ तालीसपिप्पलीपथ्या स्थूलजीर-कचित्रकैः । शुंठीविडङ्गमरिचान् समभागानिचूर्णयेत् ॥

यावंत्येतानिसर्वाणि कुर्याद्भागांचतावतीम् । सर्वचूर्णसमादेया शर्कराचभिषग्वरैः॥कर्षमात्रंततःखादेन मधुनाप्लावितंसुधीः। अस्यप्रभावात्ग्रहणी कासश्वासारुचिक्षयाः ॥ वातश्लेष्मप्रतिश्याया: प्रसमंयांतिवेगतः।

जायफल, लौंग, छोटीइलायचीकेदाने, तेजपात, दालचिनी, नागकेशर, कपूर, * सफेदचन्दन, कालीतिल, बंसलोचन, तगर, सूखाआंवला, तालीसपत्र, छोटीपीपल, बहेड़ेकाबक्कल, कालाजीरा, चीतेकीछाल, सोंठ, वायभिरंग, और कालीमिर्च इन सब औषधियों को समान भाग ले कूट कपड़छन कर उतनाही अर्थात् सब चूर्ण के बराबर धुलीहुई भांगके चूर्णको मिलाय, सबोंके बराबर मिश्री मिलाय देय इसीका नाम जातीफलादि चूर्ण है इसका एक कर्ष † का मात्रा लिखा है और

* कपूर के तीन भेद हैं जैसे चीनियाकपूर, पत्रकपूर आदि किन्तु यदि कपूर लिखने से भीमसेनी कपूर समझना, लेकिन कहीं मिलता तो है नहीं—बजार में मामूली कपूर जो बिकता है उसी को खूब साफ निर्मल देख के लेदेय॥

† वैद्यक शास्त्र में कर्ष के पर्याय १२ नाम लिखे हैं और वित्पत्ति से वे सब सार्थक समझ पड़ते हैं। जैसे अक्ष नाम भी कर्ष के हैं और अक्ष बहेड़ा को कहते हैं तो बहेड़ा के बराबर दवा के तौल कर्ष समझना इसीप्रकार (पाणितल) गहेरोभर (तेंदुक) तेंदू के फल के बराबर (षोड़षिका) इन नाम से कर्ष का प्रमाण १६ मासा का माना गया है। आज कल के दिगर कर्ष का मात्रा एक तोला मानते हैं किन्तु अप्रमाणिक है॥

एक कर्ष १६ मासा का होता है (जो वैद्य अनभिज्ञ हैं, किताबी नुसखा से रोगियों को दवा करते हैं उनसे रोग का आराम होना दूररहा और बिमारी बढ़ जाती है और अन्त में लोग वैद्य और वैद्यक की निन्दा करते हैं । क्योंकि १६ मासा के मात्रा में ४ मासा भांग हुआ सो जो कभी भांग नहीं खाते उनके लिये ४ मासा भांग बहुत अधिकहै किन्तु जो एक एक मुद्दत से बिमार है जिसका दिल दिमाग मिहृयत कमजोर हो रहा है ४ मासा उसके लिये किस कदर हानिकर होगा ? एक छोटीसी बुद्धि रखने वाला भी कह सक्ता है कि निस्सन्देह नुकसान करैगा) इस चूर्ण की मात्रा एक मासा से ३ मासा पर्य्यन्त है और जो लोग भांग खातेहैं उन्हें भी ६ मासा से अधिक मात्रा नहीं देनी चाहिये । इस चूर्ण को शहत के साथ, या सरबत गुलबनप्सा या सरबत उन्नाब के साथ चाटने से ग्रहणी, अतीसार, खांसी, स्वास, अरुचि, कफसर्द, बात कफ की वृद्धि और जुकाम आराम होता है । बहेरा का छिलका, अनार का छिलका, मुलेठी, खैर की डली मुख में रख कर चूसने से भी खांसी में फायदा होता है । दिन में कई बार गुदा में तेल लगाना भी खांसी को फायदा करता है ॥

खुश्क खांसी की दवा ।

कतीरागोंद २ तोला, गोंद बबूल १ तोला, मुलेठी का चूर्ण १ तोला वंसलोचन १ तोला मीठीलौकीकेबीजकीगरी १ तोला सबों को महीन चूर्ण कर तीन २ मासे की पुड़िया बना लेय, दिन में तीन दफे बराबर की मिस्री मिलाय जरासा पानी डाल के गीला कर दो मासा शहत मिला के चटावे और निम्नलिखित बटी तैय्यार कर चूसने को देय ।

पथरिया कत्था १ छँटाक, खतमी के बीज २ तोला, गोंद बबूल १ तोला, कतीरागोंद १ तोला, बहेरा का छिलका १ तोला मुलेठी २ तोला, कपूर ६ माशा। इन सब दवाईयों को खूब महीन चूर्ण कर बिहीदाना के लुआब में महीन घोट के मटर बराबर गोली बनाय ले, जब खांसी आवै एक गोली मुख में डाल के चूवे, एक दिन रात में एक रोगी ८ १० गोली तक चूस सक्ता है। गोली चूसने की रीति यह है कि गोली मुखमें पड़ी रहै कुचल कर खा न जावे, जिह्वा के रस (थूंक) से गोली स्वयं पिघलेगी, जब २ पिघलतीजाय कुछ तो बीच उसका निगल जाय कुछ थूक दिया करै। इस गोली के चूसने से खांसी में छाती पर का जमाहुआ कफ पक के निकल जाता है और खांसी जाती रहती है॥

अगर खांसी प्रतिश्याय याने नजले के साथ हो अर्थात् पहले जुकाम हुवा हो, इसमें भी लोग बिना समझे बूझे गरम दवा खिला देते हैं यहां तक कि उसे बड़ी भारी सरदी समझ रसतक देदेते हैं जिससे कि छाती का कफ सूख गला सांय २ करने लगता है और फिर भी बिना कारण समझे रस की बढ़ती कियेही जाते हैं अंततो गत्वा उस बिचारे पराधीन रोगी को यमालय का रास्ता तका देते हैं।

पाठकगण यह सब अमूल्य विषय जो हमने बड़े परिश्रम और तजुर्बे से हासिल किया है आप लोगों की सेवा में अर्पण करते हैं आशा है कि आप लोग इस ग्रन्थ के अनुसार रोगियों की चिकित्सा कर के अवश्य यश के भागी होंगे, सम्पादक को भी यश और धर्म के भागी बनायेंगे।

याद रहै अगर जुकाम से ज्वर हुआ हो तो कोई गरम औषध न दे के निम्नलिखित एकोनो फान्ट को पिलावै।

—:-:○:*:○:-—

जुकाम पर फान्ट ।

गुलबनफ्शा, ६ मासा, मुलेठी ३ मासा, तुख्मखतमी २ मासा, मुनक्का ६ दाना, उन्नाब ४ दाना और मिश्री १ तोला । आधपाव जल को एक गिलास में खूब गरम करै जब उफान आनेलगै अग्नि पर से गिलास को उतार ऊपर की सब दवाईयां कुचलकर मै मिश्री के उसी गिलास में डाल के ढांप देय, जब शीतल हो जल को छान कर पिला देय, इसी प्रकार दोनों समय पिलावे, ७ सात दिन इस फांट के पिलाने से जुकाम बिलकुल पच कर आराम हो जायगा । बहुत से लोग जो इस बात को नहीं जानते कि जुकाम के रोकने से शरीर को क्या हानि पहुंच सक्ता है, जुकाम होतेही गरम दूध गुड़, या गुड़ अजवायन, अथवा अफीम या शराब पीलेते हैं लेकिन इन चीजों के पीने से नजला रुक कर बलगम सूख के छाती और मस्तिष्क में लपट जाता है जिससे श्वासादि बिमारी लोगों को हो जाती है इस लिये मनुष्य को चाहिये कि जुकाम को गरम दवाईयो से कभी न रोंके ।

४ श्वासोपद्रव ।

ज्वर रोग में प्रथम उपद्रव श्वास का है सो छाती पर कफ सूखजाने से होता है । यह भी उपद्रव ऐसा दुष्कर है कि शीघ्र यत्न न करने से शीघ्रही प्राण हरण करता है । प्राण हरण रोग तो बहुत से हैं परन्तु जितना शीघ्र श्वास और हिचकी प्राण हरण करते हैं अन्य नहीं ।

+ छोटी पीपल, कायफल और ककड़ासिंगी तीनों को समान भाग ले महीन चूर्ण कर एक मासा अथवा आधा मासा चूर्ण को सहत में मीला कर के दिन रात में तीन चार बार चटाने से श्वास दब जाता है । अगर बलगम का जोर बहुत अधिक हो और इस चूर्ण के चटाने से एक दो रोज में श्वास दबा न देख पड़े तो ।

दत्तंमृगमदचूर्णं गुंजैकच्चार्द्रकरसेन । अपहरतिशीघ्रमेव-श्वासं श्लेष्मोल्वणात्वस्य ॥

कस्तूरी आधी रत्ती अथवा एक रत्ती को दो मांसे आदी के रस में घोट के पिला दे अगर रोगी कमजोर हो तो एकही दफे में न पिलावै एक २ चावल या दो २ चावल भर तीन चार दफे कर के आदी के रस में घोट के पिलावै अगर इस्से भी स्वास दबा न देख पड़ै तो ।

धतूरमूलमादाय छायाशुष्कंप्रकल्पयेत् । तत्त्वचोधूमपानेनश्वासोनश्यतिसत्वरम् ॥

धतूर के जड़ की छाल को छाया में सुखाय तीन मासा के अंदाज चिलम में भर रोगी को धूमपान करावै, यदि रोगी धूमपान करने में असमर्थ हो तो न पिलावै । छाती को धुरा अथवा पोटली से सेंक करै ।

उद्धूलनप्रकर्तव्यं शुंठोभांर्धोश्चवक्षसि । तेनसाम्यतिशीघ्रेन श्वासंपरमदारुणम् ॥

वालुकापुटकैःस्वेदोलवणंवापियत्कृति । श्वासकासेप्रकर्तव्यंकफस्तम्भप्रवृत्तिये ॥

धैतराशोठ को तवे पर अधभूंजा कर महीन चूर्ण बनाय छाती पर मलने से बहुत जल्द श्वास दब जाता है यदि शोठ के धुरा से न दबै तो निम्नलिखित पोटली से सेंक करै ।

भरभूंजे के भार का बालू और सेंधानोन दोनों को एकत्रित कर दो पोटली बनावै, एक तवे को अग्नि पर धर उसी पर पोटली को

गरम कर आहिस्ते २ छाती गला और गले के रगों को सेंकें । अब अगर उपरोक्त उपायों से श्वास का दबना दृष्टिगोचर न हो तो गरम दवाईयों का देना बिलकुल बन्द कर देना चाहिये क्योंकि इससे अधिक गरम दवाईयों के व्यवहार से निस्सन्देह रोगी मर जायगा, उस अवस्था में जान लेना चाहिये कि इसे श्वास का जोर सरदी से नहीं है बल्कि गरमी से है और उसे जुकाम और खुश्क खांसी की चिकित्सा जो ऊपर लिख आये हैं उन प्रयोगों के द्वारा श्वास के वृद्धि को शांति करे । ऐसी अवस्था में लोग छाती पर पलस्तर लगा देते हैं अथवा एक प्रकार का ऐन्टमेन्ट है लिन्ट में लगा के चपका देते हैं । इससे भी कहीं २ लाभ देखने में आया है किन्तु श्वास के लिये यह उपाय जो ऊपर हम लिख आये हैं निहायत परीक्षित हैं विना किसी विशेष कारण के निष्फल नहीं जाता है ॥

मूर्छाचिकित्सा ॥

ज्वर का दूसरा उपद्रव मूर्छा है, मूर्छा बिहोशी को कहते हैं, जिसके वेग से रोगी की चैतन्यता जाती रहे उसी को मूर्छा, मोह, बिहोशी गफलत और असंज्ञता कहते हैं । यह भी उपद्रव ऐसा दुष्कर है (प्राणैर्विमुच्यतेशीघ्रं मुक्त्वासद्यःफलाक्रियां) कि यदि उसमें तत्काल सिद्धि दायक चिकित्सा न की जाय तो मनुष्य शीघ्रही मरजाता है ॥

मूर्छा को संस्कृत में असंज्ञता कहते हैं (असंज्ञतासंज्ञोपघातः) असंज्ञता उसे कहते हैं जिसमें संज्ञाका नाशहो । मूर्छा याने बिहोशी अन्य रोगों के बढ़ने में भी होता है किन्तु ज्वर रोग की गरमी मस्तिष्क में पहुंचने से अकसर मूर्छा हो जाता है इसी को वैद्य लोग मौत में डूबा समझ रसों की भरती कर रोगी को यमालय पहुंचाय देते हैं । मूर्छावस्था में वैद्य को चाहिये की बड़ी बुद्धिमानी के साथ चिकित्सा करके रोगीके प्राण की रक्षा करे क्योंकि जरा भी विपरीत चिकित्सा होने से रोगी बहुत जल्द मर जाता है ॥

इस स्थल में हमें यह भी बतलादेना बहुत जरूरी है कि मूर्छा दो प्रकार का होता है, एक तो मस्तिष्क (शिर का मध्य भाग) का खून प्रथम गरम हो जाताहै बाद श्लेष्माके साथ मिल के जम जाताहै यह प्रायः सन्निपात ज्वर में होता है और उसका लक्षण यह है कि ज्वर होने लगता है और मूर्छावस्था में आंखें खून के समान लाल हो जातीहैं, आंखे बिलकुल ढपी रहती हैं अथवा कुछ खुली भी रहें, इसमें शीतल चिकित्सा जैसे शिर पर बरफ रखा देना अथवा शिर पर शीतल जल का धार देना मना है ऐसी चिकित्सा करनी चाहिये जिससे रक्त बलगम से अलग हो अधोगामी रगों में फैल जाय। दूसरा हृदय से वात पित्तकी गरमी उठ कर मस्तिष्क में जाके भर जाती है जिससे रोगी बदहोश हो जाता है॥

चिकित्सा॥

प्रथम प्रकार की मूर्छा में जो सन्निपात रोग में अञ्जनादि लिखे हैं उन उपायों से हटाना अथवा निम्नलिखित अञ्जन लगा के रोगी को सचेत करना॥

शरीषवीजंगोमूत्रंकृष्णामरिचसैंधवैः। अञ्जनंस्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः॥

सिरसा के बीज, छोटी पीपर, काली मिर्च और सेन्धानोन एक२ रत्ती मैनसिल आधी रत्ती, लासुन का टुकड़ा दो चावल भर सबों को चिकने पत्थर पर गोमूत्र में खूब महीन काजलके समान घोंट रोगीके आंख में अंजन लगावे निश्चय है कि इससे रोगी चैतन्य होगा। लेकिन मूर्छावस्था में खानेके लिये कोई गरम दवा नहीं देना चाहिये। छोटी पीपर का चूर्ण १ माशा शहद के साथ चटाना, मीठे अनार का रस पिलाना, अथवा मुनक्का, छोहारा, खस, नागकेशर, कमलगट्टे की गरी सब दवा-

इयों को समान भाग ले क्वाथ बना मिश्री डालके दिनमें कई बार पिलाने से फायदा देखा गया है ॥

जो सिर्फ शिर पर गरमी पहुंचने से मूर्छा हुआ हो तो उसे निम्नलिखित उपायों से शान्ति करै ॥

अंगूर अथवा ऊख का सिरका जिसमें कुछ मिला न हो २ तोला, गुलाबजल अथवा सिर्फ जल, १ पाव, रोगनगुल अथवा गरी का तेल दो तोला तीनों को एकमें मिला उसीमें एक सफेद कपड़ा तर करके शिरपर रक्खे और जब सूखजाय फिर भिंगा दे, इसी प्रकार जबतक होश न आवे बराबर रक्खा रहै और सूंघने को हरा खीरा काटके या खस का अँतर सूंघने को देय अगर देखे कि कई दिनोंसे दस्त नहीं हुआहै तो मुलायम रेचन द्वारा अथवा पिचकारी के जरिये से बहुत जल्द दस्त करा दे ऐसी २ बिमारियों में मल मूत्र पर प्रथमही दृष्टि देनी चाहिये क्योंकि मल मूत्र में गरमी पहुंचने से भी मनुष्य को वमि, मूर्छा, प्रलाप, हृदकम्प आदि उपद्रव उठ खड़े होते हैं और उन्हें साफ करने से निवारण हो जाते हैं ॥

अगर बहुत दस्त आने से मूर्छा हुआ हो तो बहुत शीतल उपचार न करै, नाभी पर गरम तेल मलै और सोंधी चीज सुंघावै तथा दस्त बन्द करने का उपाय करै । अगर हिचकी आते २ बिहोसी हुई हो तो मुलेठी मैनफल का पानी पिला के वमन करावै इत्यादि किन्तु ऐसी अवस्था में विद्वान सत् वैद्य की सहायता लेना बहुत जरूरी है ॥

अरुचि ।

किसी चीज का स्वाद न मालूम हो उसे अरुचि कहते हैं यह सर्व साधारण ज्वर में हो जाता है और जब तक ज्वर पूर्णरूप से निर्गत नहीं

होता अरुचि नहीं जाती । अगर खांसी तेजी के साथ न हो तो कागजी नींबू में जरा सा कालो मिर्च और काला नोन का चूर्ण भर आग पर भून रोगी को चटावै ॥

वमन ।

रोगी के पीने वाले पानी में थोड़ा सा पुराना चावल भिजा दे आध घंटे के पश्चात मल के छान ले और उसी जल को थोड़ा २ पिलावै इससे वमन बन्द हो जायगा, शायत इससे न बन्द हो तो कमल गट्टे की गरी एक तोला पावभर पानी में पकावै जब आधपाव पानी रह जाय मल के छान लेय और उसमें ६ माशा मिश्री मिला के दो २ घंटे पर पिलावै इससे जरूर वमन सूखी ओंकी का आना बन्द होगा ॥

हिचकी ।

ज्वर रोग में हिचकी का आना आकाश यात्रा के लिये मानों यमराज का पुकारना है, ठीक हिचकी रोग वैसा ही है इसमें कोई संदेह नहीं है । वैद्य को चाहिये कि हिचकी प्रारम्भ होते ही चिकित्सा करना शुरू करे ॥

नीरेणसिंधुत्थरजोतिसूक्ष्मं नस्येतिनूनं विनहंतिहिक्कां ।
शुंठीदृढाह्वासितयासमेता धूपोथवा हिंगुसमुद्भवश्च॥

दो तोला पानी में तीन माशा निमक खूब महीन घोंट नाश देने से अथवा ६ माशा सोंठ को आधपाव पानी में पकाय मल छानकर एक तोला मिश्री मिलाय उसे कईबार पिलाने से अथवा हींग की नाक में धूनी देने से सिर्फ एकही प्रयोग अथवा तीनों प्रयोग से हिचकी रोग का नाश होता है ॥

शिर लेप ।

विशेषमपरंचात्र शृणुपद्रवनाशनम् । मधुकारजनीमुस्तं दाड़िमत्वाम्लवेतसं ॥ अंचनंतिन्तिरीकञ्च नलदंपत्रमुत्पलं । त्वचंव्याघ्रनखंचैव मातुलुङ्गरसोमधु ॥ दिद्यादेभिज्वरार्त्तस्य मधुशुक्तयुतैशिरः । शिरोभितापसंमोह द्रमिहिक्काप्रवेवथून् ॥ प्रदेहोनाशयत्येष ज्वरितानामुपद्रवान् ॥

सुश्रुत महाराज कहते हैं कि इसके आगे विशेष औषध ज्वर के उपद्रवों को नाश करनेवाली सुनो, महुआ के वृक्ष का फल वा अंतर-छाल, हलदी, नागरमोथा, अनार का फूल वा छाल, अमलबेत, अमिली की छाल, सुरीला, बालछड़, तेजपात, कमलगट्टे की गरी, दालचीनी (व्याघ्रनख) नख नामक सुगन्धद्रव्य, बिजौरा नींबू का छिलका इन सबों को ले महीन चूर्ण कर थोड़ा सा सहत और अंगूर अथवा जामुन का सिरका मिलाय ज्वर पीड़ित वाले के शिर और माथे पर लेप करने से शिर की तीव्र पीड़ा, शिर का जलन, बिहोशी, वमन अथवा जी का मचलाना या मुख से फेन छूटना, हिचकी और बदन का कांपना नष्ट होता है । बस अब ज्वर के उपद्रवों की चिकित्सा समाप्त करके ज्वर छुट जाने के बाद क्या पहरेज करना चाहिये सो लिखते हैं ॥

ज्वर छुट जाने का लक्षण ।

मघुत्वंशिरसःस्वेदो सुखमापाण्डुपाकिच । च्ववथूश्चान्नकांक्षाच ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥

शरीर हलकी हो, शिर में लफीफ पसीना आवै, मुख की पियराई या मलीनता जाती रहे मुख कुछ पक जाय अथवा न भी पकै, छींक आवै, और भूख लगे तो जानना की ज्वर छुट गया ॥

ज्वर छुट जाने पर परहेज।

परिषेकावगाहस्नेहान् संशोधनानिच। स्नानाभ्यङ्गदिवास्वप्न शीतव्यायामयोषितः। गर्भजेतज्वरोत्सृष्टो यावन्नोबलवान्भवेत्॥ त्यक्तस्यापिज्वरेणाशु दुर्बलस्याहितैर्ज्वरः। प्रत्यापन्नोदहेद्देहं शुष्कवृक्षमिवानलः॥

झरना या बौछार से भीजना, नदी या तालाबादि गम्भीर जल में डुब्बी लगाना, तेल घी का पकवान खाना अथवा स्नेहादि पीना, वमन विरेचनादि शरीर शुद्ध करना, खूब शिर से स्नान करना, तेल उपटन लगाना, दिन में सोना, अधिक शीतल पदार्थ का सेवन, कसरत और स्त्री प्रसंग आदि कर्मों से ज्वर छुट जाने के पश्चात् जब तक शरीर खूब बलवान न हो जाय परहेज करे क्योंकि ज्वर से छुटा दुर्बल मनुष्य को उपरोक्त अपथ्यों से पुनः ज्वर आके ऐसे दग्ध करता है जैसे सूखे वृक्ष को अग्नि ॥

यावन्नप्रकृतिस्थः स्याद्दोषतःप्राणतस्तथा। ज्वरेप्रसोहोभवति स्वल्पैरप्यवचेष्टितैः॥ निषण्णंभोजयेत्तस्मान्मूत्रोच्चारौ चधारयेत्। चारोषकेगात्रसादे वैवर्ण्येऽङ्गमर्दादिषु॥ शांत ज्वरोपिशोध्यस्यादनुबंधभयान्नरः॥

इस लिये ज्वर से छुटे मनुष्य के जितने दोष हैं और इन से बचने

स्वभाव में स्थित न हो ले तितने अहित पदार्थ का परिहार करना उचित है क्योंकि थोड़े भी विरुद्ध चेष्टा अर्थात् बल से अधिक खाना पीना चलना फिरना आदि भी कर्म करने से ज्वर सहित विहोशी आने लगती है इस लिये वैद्य को चाहिये ज्वर से छुटे रोगी को जब तक यथार्थ बलाधान न हो बैठेही रक्खे अर्थात् रोगी से कोई भी शारीरक काम न कराके उसे दोनों समय अग्नि दोष के अनुसार भोजन करावै और ऐसी बलकारक औषध दे जिससे मल मूत्र भी साफ हो जावै ॥

अगर अरुचि, बदन में दरद, मुख की विरसाई, या रूखापन और शरीर का मैलापन ज्वर के छुट जाने पर भी बना रहै तो वैद्य को चाहिये कि फिर ज्वर होने के भय से उसके दोषों को शोधन करै ॥

नाजातुतर्पयेत्प्राज्ञः सहसाज्वरकर्षितम्। तेनसन्दूषितोह्यस्य पुनरेवभवेज्ज्वरः ॥ चिकित्सेच्चज्वरान्सर्व्वान्निमित्तानां विपर्य्ययः। श्रमक्षयाभिघातोत्थे मूलव्याधिमुपाचरेत् ॥

बुद्धिमान वैद्य, ज्वर से दुबले हुये रोगी को उसकी इच्छानुसार एक बार किसी चीज से कदाचित् तृप्त न करे क्योंकि एक बारगी तृप्त कर देनेसे दूषित ज्वर उस मनुष्य को फिर हो जाता है। हमेशा निदानों के व्यतिक्रमों से सम्पूर्ण ज्वरों की चिकित्सा करे और खेदज्वर, क्षयज्वर, अभिघातज्वर, इन ज्वरोंमें वैद्यको चाहिये कि मूल व्याधि को दूर करे ॥

स्त्रीणामपप्रजातानां स्तन्यावतरणेचयः। तत्संशमनं कुर्य्याद्यथादोषं विधानवित् ॥

जिन स्त्रियों का बालक मर जाय और दूध के उतरने में जो ज्वर उत्पन्न हुआ हो उस ज्वर को आयुर्वेद विधानदर्शी दोष अनुसार शांत करै। इति ज्वराधिकारः समाप्तः ॥

इसके आगे अब हम राजयक्ष्मा रोग का निदान, कारण और चिकित्सा लिखते हैं। यद्यपि प्राचीन ग्रन्थोक्तानुसार ज्वर रोग के आगे अतीसार रोग का प्रकर्ण कथन करना उचित है लेकिन यक्ष्मा के अनेक लक्षण जीर्णज्वरादि में मिलते हैं और जीर्णज्वरादि के अनेक लक्षण यक्ष्मा में मिलते हैं इस हेतु से इस स्थल में अतीसार रोग का प्रकर्ण न दे के यक्ष्मा रोग का निदानादि लिखते हैं॥

———:-○:*:○-:———

राजयक्ष्मा (शोष) रोग।

अनेकरोगानुगतो बहुरोगपुरोगमः। दुर्विज्ञेयो दुर्निवारः शोषोव्याधिर्महाबलः॥ संशोषणाद्रसादीनां शोषइत्यभिधीयते। क्रियाक्षयकरत्वाच्च क्षयइत्युच्यतेपुनः॥ राज्ञश्चन्द्रमसोयस्मादभूदेष किलामयः। तस्मात्तंराजयक्ष्मेति केचिदाहुर्मनीषिणः। रोगेषुराजतेयस्मा त्तस्मायंरोगराडिति॥

भावार्थः—अनेक रोगों के पहले और बहुत प्रकार के रोगों के पश्चात् होने वाला, बड़ी कठिनता से जाना जावे अर्थात् जिसका निदान एकाएकी बहुत जल्द न मिल जाय, अत्यन्त दुःख से दूर कियाजावै ऐसा महा बलवान शोषरोग मनुष्योंके शरीर में हो जाता है। यह रोग निरन्तर रस रक्त आदि सातों धातुओं को सुखाता है इस लिये शोष नामक रोग संज्ञा पड़ा है और सम्पूर्ण इन्द्रियों के कर्मों को क्षय करता है इस वास्ते क्षय रोग भी कहाता है। एक समय बड़े तेजस्वी प्रतापी चन्द्रमा नामक राजा को यह रोग हुआ और उसे निर्मूल नष्ट करने में वैद्यों को अति परिश्रम पड़ा तब से वैद्य लोग शोष रोग को यक्ष्मा रोग

कहने लगे और सम्पूर्ण रोगों में उग्रत्व से बिराजमान है इस कारण से रोगराज या राजरोग भी कहते हैं ॥

इतने प्रचलित शोष रोग के पर्य्याय नाम हैं, जैसे शोष, राजयक्ष्मा क्षई या ककक्षई, राजरोग, दिक सपेदिक आदि ॥

राजयक्ष्मा निदान ।

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसाद्विषमाशनात् । त्रिदोषोजा-यतेयक्ष्मा गदोहेतुचतुष्टयात् ॥

अब यक्ष्मा रोग का निदान कहते हैं, निदान आदि कारण को कहते हैं, याने जिन अपथ्यों से रोग उत्पन्न होता है उसे निदान कहते हैं । (वेगरोधात्) वेग १३ प्रकार के हैं जैसे मल, मूत्र, छींक, जंभुआई, आदि कि जिन्हों के रोकने से उदावर्त रोग होता है लेकिन यहां अधोवात मल मूत्र तीनहीं वेग का ग्रहण किया है । इसमें भरद्वाज का वचन है । "वातमूत्रपुरीषाणां क्षोभयाद्येदामराः । वेगंनिरोधयेत्तेन राजयक्ष्मादिसंभवः" मनुष्य प्रायः किसी २ स्थान में भय अथवा लज्जा वश केवल अधोवायु को रोक लेते हैं वैसाही मल मूत्र को भी कहीं २ रोकना पड़ता है किन्तु उससे यक्ष्मा रोग होने का सम्भव है (क्षयात्) धातुक्षय से यह धातुक्षय अतिमैथुनादि से होताहै, बहुतसे विषयी कामोन्मत्ततासे दिनरात मैथुन क्रिया में लिप्त हो जाते हैं अन्तिम परिणाम उसका यह होता है कि यक्ष्मा रोग द्वारा यमालय को यात्रा करना पड़ता है (साहसात्) जो भार अथवा परिश्रम या कसरत अपने शरीर से करने लायक नहींहै उसे करना या लोभ वश दिन रात कामहीं में लगे रहना उसे साहसात् कहते हैं इससे भी यक्ष्मा रोग होता है (विषमाशनात्) विषम भोजन उसे कहते हैं जैसे कभी कम कभी ज्यादा, कभी सबेरे कभी दुपहर के भोजन करना, कभी खानाही नहीं (व्रत) कभी कई वार लो-

पान करना । अक्सर औरतों को जो दिक का आरजा हो जाता है विषम अशनही से उन्हें खाने पीने पर बिलकुल लिहाज नहीं रहता और पुरुषों की अपेक्षा व्रत भी बहुत करती हैं । यह चार कारण तीनों दोषों करके यक्ष्मा रोग होने को वैद्यवरों ने दिखलाया है किन्तु इसके अतिरिक्त और भी छः कारण हैं जैसे अतिशोक, जराशोषि, अध्वशोषि, व्यायामशोषि, उरक्षत और व्रणशोषि जिसके लक्षण आगे लिखेंगे ।

राजयक्ष्मा संप्राप्ति ।

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषुरसवर्त्मसु । अतिव्ययवायिनोवापि क्षीणेरेतस्यनन्तरा । क्षीयन्तेधातवः सर्वेततःशुष्यतिमानवः ॥

अथ राजयक्ष्मा का सम्प्राप्ति अर्थात् शरीर के भीतर क्या बिगड़ कर शोष उत्पन्न करता है उसे दिखलाते हैं । प्रथम शरीरकी रक्षा या बनावट रक्तादि अनेक वस्तुओं से है किन्तु शरीर में कफ प्रधान है । हम लोगों का चलना, फिरना, बोलना तथा भीतर समग्र नस तथा आशयों का काम भी कफ की चिकनाहट से होता है। सो वातादिक कुपित होने से यथार्थ कफ न बन के स्थान से कफ च्युत हो मुखमार्ग से रेचन होने लगता है, उस अवस्था में रस की बहने वाली नाड़ी बन्द हो जाती है, तब भोजन का रस न खिंच कर वहभी कफ हो जाता है इससे प्रतिदिन शरीर सूखता है । दूसरा अति मैथुन से जब वीर्य क्षीण होता है तो उसके क्षीण होने से दूसरे भी मांसादिक धातु क्षीण होने लगते हैं । इस वजे से मनुष्य नित्यप्रति सूखने लगता है, बस यही शोष या यक्ष्मारोग कहाता है । लेकिन जहां तक हमने परीक्षा किया है अधिक तर धातु क्षीण से यक्ष्मारोग पाया है, खास कर जो लोग बाल्यवय में अतिमैथुन या हस्तमैथुन करते हैं उन्हें और जो माता पिता धातुक्षीणावस्था में अ-

यथा सुजाक आदि धातु सम्बन्धी रोगातुरावस्था में गर्भ स्थापन करते हैं उस गर्भ से उत्पन्न पुत्र या कन्या को दश बारह अथवा सोलह बरस की अवस्था में अवश्य यक्ष्मा रोग हो जाता है ॥

यक्ष्माकापूर्वरूप॥

श्वासांगसादकफसंस्रवतालुशोष वम्यग्निसादमदपीनस कासहिक्का। शोषेभविष्यतिभवन्तिसचापिजन्तुः शुक्लेक्षणोभवतिमांसपरोरिरंसुः ॥

जब मनुष्य को यक्ष्मारोग का आरंभ होता है तब निम्नलिखित लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं जैसे (श्वास) दम का फूलना (अंगसाद) अंगों की शिथिलता याने हाथ पैर निहायत ढीले और सुस्त (कफ संस्रव) कफ का गिरना (तालु शोष) गला सूखना या गले में कांटा सरीखा गड़ना (वमि) जी मचलाना या के होना (अग्निसाद) भूख का न लगना, किसी २ को इस रोग में अधिक भूख वाला देखा है (मद) नेत्रों में नशा सा मालुम होना (पीनस) नाक बहना याने जुकाम (कास) खांसी, किसी को सूखी खांसी आती है और किसी के खांसी में खांसते ही अंठा के अंठा कफ गिरपड़ता है * (हिक्का) हिचकी यह लक्षण होते हैं तथा उस मनुष्य के नेत्र सफेद § मांस खाने की इच्छा और मैथुन की चाह रहा करती है । किसी बिमार में यह सब लक्षण मिलते हैं और किसी में कुछ कम किन्तु कम लक्षण से भी बिमारी अवश्य समझी जायगी ॥

* इस जगह दो पाठ है हिक्का हिचकी आना और निद्रा अधिक नींद आना और दोनों लक्षण मिलते हैं ॥

† मांस खाने की इच्छा उसी मनुष्य को होगी जिसे पूर्व में मांस का स्वाद मिल चुका है ॥

त्रिरूपक्षयके लक्षण ॥

अंसपार्श्वाभितापश्चसन्तापःकरपादयोः । ज्वरःसर्वाङ्गक-श्चेतिलक्षणंराजयक्ष्मणः ॥

त्रिरूपक्षय अर्थात् तीनों दोषों से जो साधारण यक्ष्मा के लक्षण हैं उसे कहते हैं । कन्धे और पसुरी में दर्द हाथ और पावों में दाह तथा समग्र शरीर में ज्वर ये राजयक्ष्मा के लक्षण हैं । इतने लक्षणों से जानना कि यक्ष्मा अभी प्रथम दर्जे पर है अच्छा हो सक्ता है ॥

षट् रूपक्षय के लक्षण ।

भक्तद्वेषोज्वरःश्वासःकासःशोणितदर्शनम् । स्वरभेदश्चजा-यंते षड्रूपेराजयक्ष्मणि ॥

(भक्तद्वेष) खानेको कौन कहै भोजन देखनेकी भी इच्छा न हो, ज्वर से शरीर तपा करै, दम फूले, खांसी, थूंक के साथ लोहू का गिरना और स्वर भंग अवाज का बैठ जाना, यहां तक यक्ष्मा दूसरा दर्जा समझना अच्छे २ सत् वैद्य के द्वारा कोई २ आराम हो जाता है किन्तु तीसरा और चौथे दर्जे का यक्ष्मा आराम नहीं होता ॥

सर्वैरर्द्धैस्त्रिभिर्वापि लिंगैर्मांसबलक्षयैः । युक्तोवर्ज्यश्चिकि-त्स्यस्तु सर्वरूपोप्यतोऽन्यथा ॥

हमारे भूत पूर्व वैद्यवरों ने उपरोक्त लक्षण युक्त तथा मांसादि क्षय को असाध्य कहा है । लिखते हैं सब लक्षण युक्त अथवा तीन लक्षण युक्त तथा मांस और बलक्षय लक्षण युक्त यक्ष्मा रोगी हो तो उसकी चिकित्सा न करना, किन्तु जो रोगी मांसादि क्षय रहित हो और रोग के संपूर्ण

लक्षण भी मिलते हों तो उसकी चिकित्सा ईश्वर भरोसे पर करना क्योंकि यह ऐसा दुष्कर रोगहै कि ईश्वर ही आरोग्य करै । लिखाहै कि अगर सत् बैद्य यक्ष्मावाले को आरोग्य भी कर देय तौ भी वह मनुष्य एक हजार दिन से अधिक न जियेगा क्योंकि हजार दिन के बाद फिर उसी रोग में ग्रसित हो मनुष्य इस असार संसार को परित्याग करता है । एक स्थल में लिखा है कि जो यक्ष्मा रोगी औषध से आराम हो जाय तो जानना कि उसे यक्ष्मा का रोग नहीं था । सो हे मेरे प्यारे पाठक बरै जहां तक हो सके वीर्य्य को रक्षा करो क्योंकि यक्ष्माही पर क्या निर्भर है यावत् रोग हैं सब वीर्य क्षय से होतेहैं । अब हम धातु क्षयादि षट् कारण से जो यक्ष्मा होने को पूर्व में लिख आये हैं उसके लक्षण सुश्रुत से दिखलाते ॥

शोक शोषि लक्षण।

प्रध्मानशीलः स्रस्तांगः शोकशोष्यपिताहृशः । विनाशुक्रक्षयकृतै विकारैरूपलक्षितः ॥

अति चिन्ता शोक करने से जो यक्ष्मा रोग होता है उसमें यह लक्षण होते हैं अंग का ढीलापन और धातुक्षयके बिना भी जो धातुक्षय के लक्षण हैं सब मिलते हैं । शोक वह है कि शरीर के रक्त मांसादि सभी को दहन कर देता है, जैसा किसी कवि ने कहा है "चिताचिन्ता समाख्याता ततोचिन्ता गरीयसी । चितादहति निर्जीव सजीवोदहति चिन्तयः" चिता (जिस चुनी हुई लकड़ियों पर मुरदा रख के फूका जाता है) और चिन्ता (शोक, फिकर रंजआदि) इन दोनों में कवियों ने समानत्व दिखलाया है और अन्त में चिता से चिन्ता को बड़ा माना है इस लिये कि चिता बिना जीव के शरीर को जलाती है और चिन्ता जीव सहित इस स्थूल शरीर को दहन करती है तो भला कहिये जब

चिन्ता में ऐसी दाहकता शक्ति है कि बिना रोग ही रक्तमांसादि सभी को जला देती है तो इस स्थल में रोग एक नाम मात्र समझना चाहिये ऐसी अवस्था में (स्वयोनिवर्द्धन द्रव्यापायेवप्रतीकारः) क्या होगा? चिन्ता को दिल से हटाना । यदि कोई सन्देह करे कि चिन्ता कारण है उसका कार्य यक्ष्मा रोग है और प्रायः स्थलों में कार्य दृश्यमान होने से कारण नाश हो जाता है तो चिन्ता कारण है उसका यक्ष्मा रोग हुआ और उसके लक्षण अंग शिथिलतादि उपस्थित हैं उसके ऊपर ध्यान देके सिर्फ नाशमान कारण का शांतोपाय करने से यक्ष्मा रोग का नाश कैसे होगा? यद्यपि कारण नाशमान सा देख पड़ता है किन्तु आभ्यन्तरिक उसका दोष बना रहता है इसलिये बिनाकारणके नाशकार्यका नाश नहींहोता, चिकित्सकगणों को चाहिये कि कारण पर ध्यान अवश्य रक्खा करें ॥

जराशोषि लक्षण ।

जराशोषीकृशोमन्द वीर्य्यबुद्धिबलेन्द्रियः । कम्पनोऽरुचि-मान्भिन्न कांस्यपात्रहतस्वरः ॥ ष्ठीवतिश्लेष्मणाहीनं गौरवा-रुचिपीड़ितः । संप्रस्रुतास्यनासाक्षः शुष्करूक्षमलच्छविः ॥

एक प्रकार का यक्ष्मा बुढ़ापा होने से होता है जिसमें शरीर दुबली अल्प वीर्य बुद्धि और इन्द्रियों का काम शिथिल, शरीर अथवा हाथ मुख का कांपना, खाना अच्छा न लगना और जैसा फूटा कांसे का बरतन बजाने से बजता है वैसा गले से शब्द निकले, खांसते २ पसीना निकल आवे, व्याकुल हो जाय तो भी कफ न निकले, शरीर में बोझापन, मुख का जायका खराब, मुख, नाक और आंखोंसे पानीका बहना, सूखा और रूखा दस्त का होना इत्यादि लक्षण होते हैं ॥

यह यक्ष्मा उस बुढ़ापे में बहुत कम होता है जो क्रमशः अपनी अवस्था पर आके बुढ़ापा होते हैं खास कर उस बुढ़ापे में होता है जो

अकाल वृद्ध हुये हैं अधिक तर ४० वर्ष की कम अवस्था वाले को यक्ष्मा रोग होता है ॥

अध्व शोषि का लक्षण ।

अध्वप्रशोषी स्रस्तांगः संभ्रष्टपरुषच्छविः । प्रसुप्तगात्राव-
यवः शुष्कक्लोमगलाननः ॥

तीसरे प्रकार का यक्ष्मा रोग अधिक रास्ता चलने से होता है । जिसका लक्षण यह है, सम्पूर्ण शरीर का शिथिल होना, कान्ति शरीर की जाती रहै, हाथ पैर शून्य हो जाय याने चुटकी काटने से बोध न हो (क्लोम) जो पिपासा स्थान है वह और गला मुख सूखता रहै इत्यादि ।

व्यायाम शोषि लक्षण ।

व्यायामशोषीभूयिष्ठ मेभिरेवसमन्वितः । लिंगैरुरःक्षत-
कृतैः संयुक्तश्चक्षतंविना ॥

अधिक कसरत या अन्य प्रकारकी मेहनतकरनेसे जो यक्ष्मारोग है उसमें बहुधा करके अध्वशोषी के लक्षण मिलते हैं और क्षत रोग के बिना जो उरक्षत रोग के लक्षण हैं वह भी मिलते है । कसरत करने की जैसी विधि प्रथम खण्ड के आरोग्य दर्पण में लिखी है उसके बरखिलाफ करने से निस्सन्देह यक्ष्मा का रोग होता है ॥

रक्तक्षय शोषी व्रण शोषी और उरक्षत के लक्षण ।

रक्तक्षयाद्वेदनाभिस्तथैवाहारयंत्रणात् । व्रणितस्यभवेच्छोषः
सचासाध्यतमस्त्वतः ॥ व्यायामभाराध्ययनै रभिघातानि-

मैथुनैः। कर्म्मणाचाप्युरसोन बचोयस्यविदारितम् ॥ तस्योरसिचतीरक्तं पूयःश्लेष्माचगच्छति। कासमानच्छर्दयेच्च पीतरक्ता सितारुणम् ॥ सन्तप्तवक्षाःसोऽत्यर्थं दूयनात्परिताम्यति। दुर्गंधवदनोच्छ्वासो भिन्नवर्णस्वरोनरः ॥

शरीर से लोहू के निकल जाने से अथवा अन्य किसी कारण वशात् रक्तक्षय से, अत्यंत अंग दर्द से, भोजन के कुपथ्य से और व्रण (फोड़ा) वाले पुरुष के भी यक्ष्मा रोग हो जाता है यह अत्यंत असाध्य होता है अत्यंत कसरत करने से, बोझा उठाने से, बहुत दिन रात पढ़ने से, चोट के लगने से, अत्यंत मैथुन करने से, छाती के जोर से ज्यादा काम करने से जिसका हृदय फट जाता है। उसके फटे हुये हृदय में रक्त के साथ पीव और कफ दौड़ता है और उसके खांसी में लोहू और पीला, काला लाल रंग का वमन होता है। उस रोगी का हृदय अत्यन्त गरम, पीड़ा से युक्त और कांपता है और मुख से दुर्गन्ध आती है और ऊपर को स्वास चलती है और स्वर भंग याने गला बैठ जाता है ॥

मैथुन शोषि के लक्षण।

व्यवायशोषीशुक्रस्य चयलिंगैरुपद्रुतः। पांडुदेहोयथापूर्वं क्षीयंतेचास्यधातवः ॥

अति मैथुन करने से जो यक्ष्मा होता है उसके लक्षण यह है। देह की रंगत पीली हो जाय, और सात धातु जो हैं वे क्रमशः उलटे क्षीण हों जैसे वीर्य से मज्जा, मज्जा से हड्डी और हड्डी से मेद इसी प्रकार रस पर्य्यन्त क्षीण होता जाय तथा शुक्रक्षय के लक्षण भी मिलें जो हमने इस ग्रा० द० में लिख आये हैं ॥

असाध्य लक्षण ।

महाशिनंक्षीयमाण मतीसारनिपीड़ितं । शूनमुष्कोदरंचैव यक्ष्मिणंपरिवर्जयेत् ॥ शुक्लाक्षमन्नद्वेष्टार मूर्ध्वश्वास निपीड़ितं । कृच्छ्रेणबहुमेहंतं यक्ष्माहंतीहमानवं ॥

जो राज रोगी भोजन अधिक करै और रोज २ दुबला होता जावे दस्त पतले, अंडकोश और पेट पर सूजन होने से वैद्यवरों ने असाध्य कहा है सुन्दर यश का चाहनेवाला वैद्य ऐसे रोगी को त्याग करै । जिसके नेत्र सफेद, अन्न पर ग्लानि, ऊर्ध्व श्वास करके पीड़ित और प्रमेह सहित बहुत कठिन से बारम्बार मूतता हो एतादृश लक्षण युक्त यक्ष्मा रोगी को अवश्य मारता है ॥

अथ चिकित्सा योग लक्षण ।

ज्वरानुबंधरहितं बलवंतंक्रियासहं । उपक्रमेदात्मवंतं दीप्ताग्निमकृशंनरं ॥

अब जो यक्ष्मा रोग आराम होने लायक है उसका लक्षण कहते हैं। जिस रोगी के शरीर में ज्वर का तपन न रहता हो, चलने फिरने की कुछ ताकत बनी हो, तेज दवा को सह सकता हो और पथ्य करनेवाला हो जिसको खाना पच जाता हो और बहुत दुबला न हो सो उसकी चिकित्सा करना क्योंकि यहां तक प्रथम दरजा है रोगी निस्सन्देह आराम हो सक्ता है ॥

यक्ष्मा रोग में पथ्याऽपथ्य ।

यक्ष्मा रोग वाले के लिये प्रथम पथ्य लिखते हैं । पुराने धान का चावल, अथवा साठी के चावल का भात, छिलका रहित मूंग की दाल,

संध्या समय भोजन के पहले थोड़ा सा बल कारक शराबका पीना, मांस खानेवालों के लिये जवान बकरे के मांस का जूस और जिस रोगी का मांस सूखता जाता हो उसे केवल मांस खाने वाले जानवरोंका मांस (जैसे गिद्ध आदि) जीरा के साथ बना के खिलाना हितकारी है । गौ तथा बकरी का दूध, घी, मक्खन, तरकारी में केला, कटहर, परवर, आलू किन्तु रोज २ नहीं । रामतेतुआ, (कद्दू) और सहिजन की छीमी, फलों में पक्का केला, पक्का खूब मीठा आम, आंवला, छुहारा, मीठा फालसा, ताजा नारियल, नवीन ताड़ का फल और मुनक्का, मसाला में सौंफ, जीरा, कालीमिर्च, लौंग, दालचिनी और पिआज । कर्म-शाम सवेरे हवा खाना, औषधियों का बनाया उत्तम तेल शरीर में मर्दन करा के जाड़े में गरम जल से और गरमी में शीतल जल से स्नान करना, गरमी में खुले छत या मैदान में, जाड़े में पटे मकान में और वर्षा काल में हवादार कोठे पर सोना, चन्द्रमा की रोशनी में रहना, उत्तम सुगंधित पुष्पों का माला पहरना, गान सुनना, रूपवती स्त्रियों से हँसी दिल्लगी करना किन्तु संभोग नहीं करना इस प्रकार स्त्री भी रूपवान पुरुषों से । यदि शरीर की सामर्थ्य न थकी हो तो होम, दान, देव पूजा और विद्वान ब्राह्मणों का रोज २ सतकार करता रहै और कोई किस्म का शारीरक तथा मानसिक परिश्रम न करै, रंज शोक फिकिर क्रोध मन से भुला दे यदि संसार में कुछ दिन जीने की आशा रखता है ॥

अपथ्य ।

दस्त लाने की बहुत दवा खाना, दिशा पेशाब को रोकना, स्त्री प्रसंग करना, शरीर से पसीना निकालना, बन्द मकान में या जहां अत्यन्त गरमी पड़तीहो जिस स्थानमें चित्त अप्रसन्न हो वहां रहना, नेत्रों में रोज अंजन लगाना, बहुत जागना, किसी प्रकार का अधिक परिश्रम करना, रूखा अन्न जैसे बाजरा जोनरी, अरहर चने का बर्तन आदि,

एक भोजन न पचा हो दूसरा भोजन कर लेना, अधिक पान का बीड़ा चबाना, कुम्हड़ा, सेम ककड़ी, कुलथी, उरद, लहसुन हींग लाल मिरचा, खटाई अचार साग पात दही तेल की बनाई चीजें, सिरका रैतुआ वहुत कटु वस्तु, इन सबों के। क्षय रोग वाला पुरुष सावधानी से त्याग करै॥

राजयक्ष्माचिकित्सा।

सर्वस्त्रिदोषजोयक्ष्मा दोषाणांतुबलाबलं। परीक्ष्यावस्थितंवैद्यः शोषिणंसमुपाचरेत्॥

चरक का मत है कि किसी किस्म का राज यक्ष्मा हो सबही त्रिदोषज हैं इसलिये वातादिक दोषों का बलाबल विचार कर शोषवाले की चिकित्सा करना उचित है।

बलिनोबहुदोषस्य पञ्चकर्माणिकारयेत्। यक्ष्मिणःक्षीणदेहस्य तत्क्षतंस्याद्विषोपमम्॥ शुक्रायत्तंबलंपुंसां मलायत्तंहिजीवितं। तस्माद्यत्नेनसंरक्षेद्यक्ष्मिणोमलरेतसी॥

अगर राजयक्ष्मा रोग वाला मनुष्य हो और उसके वातादिक दोष बढ़े हों तो वमनादि पञ्च कर्म अर्थात् स्नेह, स्वेद, वमन, विरेचन और बस्ति क्रिया द्वारा रोगी के शरीर को शुद्ध करना क्योंकि उत्तम प्रकार पञ्चकर्म कराने से सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं। यदि रोगी रक्त मांसादि से क्षीण हो तो उसे कभी पञ्चकर्म नहीं कराना चाहिये क्योंकि क्षीण देहवाले को पञ्चकर्म विष के समान मारता है। इसका सबब यह है कि मनुष्योंका बल धातुके आधीनहै और जीवन मल (दस्त) के स्वाधीन है [इसी से प्रमेह और हैजा रोग में जीव जल्द मरजाते हैं] तिस वास्ते यक्ष्मा रोगी के मल और वीर्य की रक्षा यत्न से करनी चाहिये।

पञ्चकर्म।

बलवान रोगी हो याने चलने फिरने की अच्छी ताकत हो, भोजन का यथार्थ परिपाक होना आदि ठीक हो और रोग के लक्षण मिलते हों तो पञ्चकर्म अवश्य कराना।

स्नेहकर्म।

स्नेह क्रिया की विधि अनेक प्रकार की है जिसे पञ्चकर्म में लिखेंगे इस स्थल में साधारण प्रकार से लिखे देते हैं। मनुष्य के रक्त या वायु वाहनी नसों में मैल चिपक जाता है जिससे रक्त वायु के गमनागमन में हर्ज पड़ता है, स्नेह क्रिया से सब मैल फूल जाते हैं और स्वेद कर्म द्वारा, वही सब मैल रोम मार्ग से बाहर निकल आते हैं जिससे समस्त नाड़ियां शुद्ध हो जाती हैं।

यक्ष्मा रोग प्रायः त्रिदोषज होता है किन्तु जिस दोष को बढ़ा देखे उसी के शमनार्थ स्नेहपान करावे।

केवलंपैत्तिके सर्पिर्वातकेलवणान्वितं। देयंबह्कफेवन्हि व्योमक्षारसमन्वितं॥

यदि पित्ताधिक हो तो केवल घृत पान करावे, वाताधिक में लवण युत घृत पान करावे और कफाधिक में चीता, सोंठ, पीपर, मिर्च और जवाखार के साथ घृतपान करावे। उसकी तरकीब यह है कि पित्ताधिक्य में आधपाव गरम पानी में दो तोला घी डाल के पिलावे, वाताधिक में आधपाव गरम जल में दो तोला घी ६ मासा सेंधानोन डालके पिलावे, कफाधिक में आधपाव गरम जलमें घी दो तोला, चीता १ मासा, सोंठ २ मासा, छोटीपीपर आधी, मिर्च १० दाना और जवा-

खार ४ मासा सबों को महीन चूर्ण कर घृत समेत गरम जल में डाल के पिलादेवै ।

"शीतकालेदिवास्नेह मुष्णकालेपिवेन्निशि"—शीतकाल हो तो दिनमें प्रातःकाल और गरम दिनों में दीपक जलने के बाद स्नेह पान करावै । अगर स्नेह न पचे तो थोड़ा २ कई बार गरम जल पिलावै । जिन को स्नेह पीने में रुचि न हो तो उसी स्नेह को गरम भात में मिला के खिलावै । अथवा भात के साथ भी जिन्हे न पसन्द हो तो निम्निलिखित स्नेह पान करावै ।

शर्करा चूर्णसंयुक्तं दोहनस्थघृतेनुगां । दुग्धा चौरंपिवेद्रूचः सद्यःस्नेहनमुत्तमं ॥

वह बर्तन जिसमें दूध दुहा जाता हो उसी बर्तन में घी और मिश्री डाल के उसीमें गौ को दुह के तत्क्षण गरमागरम उस दूध के पिलाने से तत्काल स्नेहन याने स्नेह का काम होताहै । इसी प्रकार पांच सात अथवा दश दिन जब तक उत्तम प्रकार से स्नेह न हो पान करावे, खाने को मुलायम खिचरी आदि खिलावै । स्नेह पान करने वाला बहुत मेहनत, फल फलहरी अतिशीतल पदार्थ का सेवन, दिशा पेशाब का रोकना, रात को जागना दिन को सोना, कफकारक और रूखे अन्न इत्यादि त्याग करै ।

स्नेह का फल ।

दीप्ताग्निःशुद्धकोष्टः पुष्टधातुर्दृढेन्द्रियः । निर्जरोवलवर्णाढ्यः स्नेहसेवीभवेन्नरः ॥

स्नेह पान करने से अग्निप्रदीप्त, कोष्टपरिस्कार, धातुपुष्ट, बल उत्-शाह की वृद्धि और शरीर का पीलापन नाश और वातादि यथा स्थान स्थित होता है। जब देखे कि स्नेहित रोगी का मल स्निग्ध और अङ्गों में कोमलता तथा स्निग्धता, शरीर हलकी और इन्द्रियां निर्मल यह लक्षण देखपड़े तो साधारन प्रकार से स्वेद क्रिया द्वारा शिराओं के मैल निर्गत कर देय। लेकिन यदि रोगी दुर्बल हो और निम्निलिखित लक्षण मिलते हों तो स्वेद कर्म नहीं करना, जैसे—प्रमेह; घाव, अतीसार वमन, जीघुमना, शिरदर्द होलदिल, अधिक पीयास। ऐसाही जरूरत जानपड़े तो मृदु स्वेद कराना।

स्वेद कर्म विधिः।

सर्वान्स्वेदान्निवातेच जीर्णान्नेवाऽवचारयेत्। स्वेदाद्धातु-स्थितादोषाः स्नेहक्लिन्नस्यदेहिनः॥ द्रवतांप्राप्यकोष्ठांतर्गत्वा यांतिविरेकतां।

जितने प्रकार के स्वेद हैं सबों को निवात स्थान (जिस घर में हवा न जाता हो) में करना चाहिये। स्नेहपान से लिप्त हुये रोगी के त्वचा आदि और धातुओं में जमेहुये जो दोषहैं वे पतले होके कोठेमें प्राप्त होते हैं वे ही सब पसीना से निकल जाते हैं॥

स्वेद॥

स्वेद भी चार प्रकार का है जिसका बयान स्वेद प्रकर्ण में करेंगे इस स्थल में पढ़ना वाले को जो स्वेद की जरूरत है उसे लिखते हैं। स्वेद कर्म इसलिये कराया जाता है कि जो स्नेह कर्म से शिराओं के भीतर का मैल फूल आये हैं वे रोम मार्ग (बाल के रास्ते) होके निकल जांय

जिससे नसों के मुख खुल जांय जिससे प्रायः रोगी को सुस्ती, जकड़न, ऐंठन, भारीपन मालुम होता है न हो । एक बात इस समय हमको और कह देना चाहिये, वह यह है कि पञ्चकर्म में दो मत है, कितनों का मत है कि स्नेह, स्वेद, वमन, विरेचन और बस्ति क्रिया क्रमशः कराना और केचित् आचार्यों का मत है कि "प्रथमं वमनं पश्चाविरेकश्चानुवासनं । एतानि पञ्च कर्माणि निरुहो नावनं तथा" पहले वमन, फिर जुलाब, फिर अनुवासन, निरुह और नावन । इसमें हमारी सम्मति नहींहै क्योंकि इससे यथार्थ शरीर संशोधन नहीं होता क्योंकि शार्ङ्गधरमें साफ लिख दिया है:—

येषांनस्यंविधातव्यं बस्तिश्चापिहिदेहिनां । शोधनीयाश्च येकेचित्पूर्वंस्वेद्यास्तेमताः ॥

नस्य अर्थात् नाक में दवा सुङ्घाने के लायक मनुष्य को, बस्ति कर्म याने पिचकारी देने के योग्य और जुलाब दिवाने के योग्य पुरुषों को पहले शरीर से पसीना निकलवाय के पीछे नस्य आदि दिवाने का प्रयोग करना उत्तम है । और यह सिद्धान्त है कि बिना स्नेह के स्वेद उत्तम नहीं होता तो इन्हीं सब वजूहातों से सिद्ध होता है कि शरीर शुध्यर्थ स्नेहादि पञ्चकर्म बड़ी लाभदायक है ॥

द्रवस्वेद ॥

यक्ष्मा वाले को सिवाय द्रव स्वेद के अन्य स्वेद कदापि न देय वह भी सूक्ष्म, कारण यह है कि अजीर्ण वाला, बहुत कमजोर, प्रमेह रोगी, घाव वाला अथवा जिसके मुख से खून आता हो, बहुत प्यास से युक्त, जिसे दस्त पतले आते हों इत्यादि उपद्रव संयुक्त रोगी को स्वेद न कराना, सो यक्ष्मारोग बिना धातुरोग के होताही नहीं इसलिये बहुत सूक्ष्म स्वेद कराना चाहिये ॥

साधारन स्वेदविधि ॥

अलसी, पीली सरसों, कुरथी, सौंफ, देवदारु, सफेद जीरा, अरण्ड की जड़, सहिजन की छाल, असगन्ध, बेल की छाल, सम्हालू की पत्ती और सेन्धानोन, उक्त सब औषधों को एक २ छँटाक ले एक बड़े घड़े भर जल में रात को भिजा देय, सबेरे पकावे, घड़ा का मुख ढपा रहै जब पानी खूब पक जाय चूल्हे से उतार लेय जब थोड़ा गरम सहने लायक जल हो जाय, रोगी के समस्त शरीर में लाक्षादि अथवा नारायण तैल या काडलिवर का तेल मालिश करके निवात स्थान में जहां हवा का नाम न हो एक गहरी कठौती अथवा कोई चौकोन बासन जिसमें से पानी न बहै उसी में रोगी को बैठाय ऊपर से दोनों कान्धों से उसी काढ़े को महीन धार छोड़े उसी प्रकार एक दिन बीच में नागा दे के तीसरे दिन फिर स्वेद करै इसी तरह तीन या चार बार करै जब तक शरीर हलकी न हो ॥

शिरामुखैरोमकूपैर्धमनीभिश्चतर्पयेत् । शरीरेबलमाधत्ते युक्तःस्नेहावगाहने॥नातःपरतरःकश्चि दुपायोवातनाशनः। शीतशूलाद्युपरमे स्तम्भगौरवनिग्रहे ॥ दीप्तेग्नौमार्दवेजाते स्वेदनाद्विरतिर्मता।

इस अवगाहन स्वेद से सब नसों का और रोमों का मुख खुल कर शरीर की तृप्ति होती है याने नाड़ियों के मुख जो बालों के छिद्र हैं उन में अवगाहन का भाप प्रवेश होके फिर रक्तादिकों के बहने वाली नाड़ियों में पहुंच कर शरीर को शुद्ध और बल को प्राप्त करता है। इससे बढ़कर दूसरा वायु नाशक उपाय नहीं है, जब शीत और शूल की शांति हो एवं शरीर का जकड़न और भारीपन जाता रहै, भूख का लगना

और शरीर मुलायम हो तब स्वेद कराना बन्द कर देय और स्वेद कराने के पश्चात् रोगी के शरीर में हवा नहीं लगने पावे क्योंकि खुले हुये नसों में शीघ्रही हवाप्रवेश हो जाता है किन्तु स्वेदके बाद रोगी के नेत्र और हृदय को केवड़ा जल या गुलाब जल से धो देना चाहिये ॥

सम्यक्स्विन्नंविमृदितं स्नानमुष्णांबुभिःशनैः । भोजयेचान मिष्यन्दि व्यायामंचनकारयेत् ॥

स्वेद कराने के थोड़ी ही देर पीछे रोगी के समस्त शरीर में तैल मर्दन करके गरम जल से शनै २ स्नान करा दे और कफ न पैदा होने पावे ऐसा भोजन करावे किन्तु परिश्रम किसी किस्मका न करने दे ॥

वमन ।

स्वेद कराने के दो तीन दिन के बाद वमन कराने की क्रिया करै अगर कफ पित्त सूखा हो तो पहिले उसे तर कर लेय तब वमन करावे, यदि बढ़े हों तो उसी दिन वमन करावे किन्तु निम्न लिखित लक्षण युक्त रोगी को वमन न करावे जैसे—वमना के लक्षण के अतिरिक्त रोगी को नेत्र से कम दिखाता हो, पेट में कोई बिमारी हो, बहुत दुबला हो, अति वृद्धि, गर्भिणी स्त्री, बालक, शरीर में फोड़ा फुन्सी हो या मुख से रुधिर गिरता हो या आप ही वमन होता हो, दस्त में कीड़े आते हों और बोलने की शक्ति न हो तो उसे वमन नहीं कराना चाहिये और यह जो लिखा है ॥

शरत्काले वसन्तेच प्रावृट्कालेच देहिनाम् । वमनं रेचनंचैव कारयेत्कुशलोभिषक् ॥

(शरत्) कार्तिक एगहन (बसन्त) फाल्गुन और चैत (प्रावृट) आषाढ़ और श्रावण इन महीनों में चतुर वैद्य वमन करावे और जुलाब देवै, सो यह नियम आरोग्य-पुरुषोंके लिये बांधा गयाहै जो सालियाना जुलाब लिया करते हैं रोगियों के लिये नहीं क्योंकि रोगियों के लिये समय परखा जाय तब तक रोगीही चल बसे, रोगियों के लिये हर समय हर महीना जुलाबादि देने के लिये शास्त्रकारों ने कह दिया है॥

वमन कराने के एक दो दिन पहले मुलायम मूंग की खिचरी, यवागू या दूध भात अथवा अन्य कोई कफ कृत पदार्थ भोजन करावे और जिस दिन कै कराना हो उस दिन भी दो तीन घंटे पहले मूंग की पतली दाल बना के पिलावे॥

कफ का वेग अधिक हो तो छोटी पीपर २ मासा मैनफल ६ मासा सैंधानोन ६ मासा एक सेर पानी में जोश देव जब तीन पाव पानी रह जाय मलकर छान लेय कुछ गरम रहे तब पिला दे बाद पिलाने दवा के रोगी को गोड़े मोड़ि के बैठावे जैसे ऊंट बैठते हैं अर्थात् ऊंट के आसन बैठाय के तब कै करावे। रोगी चाहे गले में अँगुली डाल के कै करै अथवा एरंड पत्र की डंडी गले में प्रवेश कर वमन करै क्योंकि बिना किसी वस्तु से गले में सुरसुराहट पहुंचाये वमन अच्छी तरह नहीं होता और एक आदमी शिर को और एक आदमी दोनों पसलियों को सहराता रहै। वैद्य वहां अवश्य मौजूद रहै क्योंकि शायत रोगी घबड़ाकर कै करनेसे हिचक जाय क्योंकि अच्छी तरह वमन न होनेसे मुखसे लार गिरने लगता है, हृदय में पीड़ा और कोष्ट में खजुली होने लगती है तथा अधिक वमन होने से भी पियास, हिचकी, बिहोसी, जीभ निकलना, नेत्र का चञ्चलपना, ठोड़ी अकड़ जाना, मुख से रुधिर थूंकना, कण्ठ में पीड़ा आदि उपद्रव हो जाते हैं इस लिये वमन कराते समय वैद्य का रहना बहुत लाजमी है॥

थोड़े दिन की बातहै कि यहां शाहगंज में लाला बाबूलाल कोठीवाल के छोटेदमाद लालाजोखईलालजी सवेरे सिर्फ भीतरी गर्मी निवारणार्थ वमन किया, अधिक वमन होने से ठोड़ी जकड़ गई और जीभ घुस गई विहोश हो कर गिर पड़े, वाका बंद हो गया, लोग कोठो में उठा लाये, गौ दान होने लगा, ब्राह्मणगण पूजन पाठ करने लगे बड़ा हाहाकार मच गया हमारे बुलाने को कोठी का मुख़्तार दौड़ा आया हम भी गये, देखा कि मौ० फजले-हसन शहर के एक नामी हकीम बैठे हैं कपड़े की दो मोटी बत्ती बनाये छींक लाने के लिये नाक में प्रवेश कर रहे हैं, और दो कपड़ा गुलाब में तर कर छाती और पेट पर रक्खे हैं और बारम्बार गुलाब जल पिलाते हैं, किन्तु गुलाब जल मुख में देत ही रोगी अन्धाकार हो जाता था हम भी बैठ गये और लोगों से विहोश होने का कारण पूछा तो मालूम हुआ कि वमन किया उसी के साथ ही विहोश होकर गिर पड़े और वाका बंद हो गया, हकीम से हमने कहा आप यह क्या करते हो, इनके सिर पर गरमी चढ़ने से ठोड़ी नहीं जकड़ी, गले का नस ढीला करिये और जीभ तो पानी खाइये अधिक की होने से जीभ भीतर चली गई है। वैद्यों की चिकित्सा हकीमों को कहां पसन्द, हकीमने कोठीके गुमास्ता मुं० हनुमान प्रसादसे कहा आप वैद्यजी की दवा कीजिये हमको दारागंज जानाहै और यह रोगी तीन चार घंटे में मर जायगा, कैसाह लोगों ने समझाया कुछ भी न सुना चल दिया, हमने गुलाब जल की जगह उष्ण गौ का दूध पिलाना शुरू किया, गले के रगों में विषगर्भ तैल मर्दन कराय द्रव स्वेद करा दिया और थोड़ा सा नींबू का अचार मगाय जैसा ही उसका गूदा मुखमें दिया कि झट रोगी बोल उठा और कहा कि जरा सा यही दवा और खिलाओ, सब लोग अचंभेमें आ गये, रोगी कहने लगा कि गुलाब जल मुख में देत ही मालुम होता था कि मानों छूरी

से किसो ने छाती को चाक कर दिया, बोलने को बहुत चाहते थे मुख नहीं उठता था होश हवाश हमारा सब दुरुस्तथा, जब से आप दूध पिलाना शुरू किया उस्से कुछ चैन मालुम होने लगाथा इस प्रकार के खिलाते ही हमारा बाक खुल गया और हम बोलने लगे अब हम मजे में हैं। इससे पाठकगण मालुम कर सक्ते हैं कि चिकित्सा का कर्म करना सहल बात नहीं है कितने जुम्मेदारी का काम है कि यदि बिमारी पहचान में आगई और ठीक दवा दिया गया तो रोगी जलूर अच्छा हो गया न समझ में आया तो रोगी को यमालय पहुंचा देना कठिन नहीं है इस लिये बिना शास्त्र का अध्ययन दवा करना महा हत्या का काम है ॥

वमनान्तः प्रविष्टायां जिह्वायां कवलग्रहः।

अगर अधिक वमन होने से जीभ भीतर घुस जाय तो कवलग्रह अर्थात् खट्टे पदार्थ का गोला बना के मुख में दे अथवा रोगी के सामने बैठ के अन्य मनुष्य खट्टे फलों को खावे तो उनके देखनेसे रोगीकी जीभ में पानी छुटे जिस्से जीभ कोमल हो जावे ॥

वमनपर पथ्य ॥

वमन कराए हुये रोगी को तीसरे पहर जब तेज भूख लगे तब धुली मूंग और पुराने चावल का यूष या साबूदाना या जङ्गली देश के जीवों के मांस का यूष रुचि के अनुसार देवे और जिस दिन वमन करावे गरिष्ट भोजन, शीतल जल, तेल की मालिश करना आदि वर्जित करै ॥

उत्तमवमन के लक्षण ॥

हृत्कण्ठशिरसांशुद्धिं दीप्ताग्नित्वञ्चलाघवम्। कफपित्तविनाशश्च सम्यग्वान्तस्यचेष्टितम् ॥

अच्छी तरह वमन होजाने से यह लक्षण देख पड़ते हैं—हृदय, गला और सिर की शुद्धि अर्थात् कफ पित्त के उपद्रवों का पूर्ण रूप से शान्त होना, भूख का लगना, शरीर का हलकापन और कफ का नाश हो तो जानना चाहिये कि वमन अच्छा हुआ है। यह वमन कराने का साधारन नियम कहा गया है विद्वान लोग इसके अतिरिक्त भी अपनी बुद्धि मता के अनुसार देश काल अवस्था रोगी की प्रकृति की परीक्षा करके अन्य औषधियों के द्वारा अथवा उपायों के द्वारा वमन करा सक्ता है ॥

विरेचनविधि ॥

वमनान्ते विरेचनं याने वमन कराने के बाद दस्त लाने की दवा जरूर देनी चाहिये। यह बात हम पहलेही कह चुकेहैं कि रोग विशेषमें समय परखने की जरूरत नहीं है सिर्फ थोड़ी सी बुद्धि खरच करने का काम है, सो शास्त्रकारों ने लिख भी दिया है:—

स्निग्धस्विन्नस्यवान्तस्य दद्यात्स्यद्विरेचनम् । अन्यतस्य त्वधःस्रस्तो ग्रहणींछादयेत्कफः ॥ मन्दाग्निंगौरवंकुर्य्याज्जन येद्वाप्रवाहिकां ।

पहले स्नेह पान, फिर स्वेदकर्म बाद वमन कराके जो जुलाब दिया जाता है वही उत्तम जुलाब होता है और जो लोग बिना के किये जुलाब दे लेते हैं तो उनका कफ नीचे को जाके ग्रहणी को आच्छादित कर लेता है जिससे अग्नि की मन्दता, देह में भारीपन और बड़ा भारी अतीसार का रोग होता है सो प्रायः देखने में भी आता है कि जोलोग अटकलपच्चू जुलाब ले लेते हैं उनकी बिमारी औरभी बिगड़जाती है। अबहम जुलाब के योग्य और अयोग्य रोगों को दिखलाते हैं ॥

जुलाबके योग्य रोगी ॥

जीर्णज्वरीगरव्याप्तो वातरक्तीभगन्दरी। अर्शःपांडूदरग्रंथि हृद्रोगारुचिपीड़िताः॥ योनिरोगप्रमेहार्ता गुल्मप्लीहव्रणार्दिताः। विद्रधीछर्दिविस्फोट विषूचीकुष्टसंयुताः॥ कर्णनासाशिरोवक्त्र गुदमेढ्रामयान्विताः ॥ यकृच्छोथाक्षिरोगार्ताः क्रमिक्षारानिलार्दिताः। शूलिनोमूत्रघातार्ता विरेकार्हानरामताः॥

इनने रोगियों को जुलाब देना लाभदायक है (जीर्णज्वरी) पुराना बुखार जीर्णज्वर और यक्ष्मा वालेको (गरव्याप्त) जहर खालिया हो या जड़ रीली चीजोंके खानेसे अग्नि वगैरह जिसका बिगड़ गया हो, बात रक्तरोगी, भगन्दर रोगी (अर्शः) बावासीरवाला, पांडुरोगी, उदररोगी, ग्रंथिरोगी जिसके हृदय में दर्द और खाना अच्छा न मालूम होता हो। योनिरोग से पीड़ित स्त्री, प्रमेह रोगी, गुल्म आदि उदर विकार से पीड़ित, पिलही रोग वाला और जिसके शरीर में फोड़ा फुन्सी हो, विद्रधीरोगी, वमनरोगी, (विस्फोटक) माता की बिमारी वाला (विशूचिका) हैजा यहां पर लोग सन्देह करेंगे कि जिसे खुदही दस्त जारी है उसे जुलाब देना कैसा? इस में जुलाब देने की विधि इस लिये कहा है कि विष दूषित मल मलाशय में न रहजाय क्योंकि उसके रहने से अन्ततोगत्वा रुधिर पानी हो के मलद्वारा निर्गत होने लगता है।

कुष्ट रोग से पीड़ित। कान, नाक, शिर, मुंह, गुदा, लिङ्ग, रोगवाला, यकृत्, शोथरोग, नेत्ररोग, क्रमिरोग और वायुरोगवाला, शूले याने उदर दर्द अथवा अङ्ग दर्दवाला (मूत्राघात) सुजाक रोगवाला इन रोगियों को जुलाब देना लाभदायक है।

जुलाब के अयोग्य रोगी।

बालवृद्धावतिस्निग्धः क्षतक्षीणोभयान्वितः। श्रांतस्तृष्णार्त्तः स्थूलश्चगर्भिणी च नवज्वरी ॥ नवप्रसूतानारी च मंदाग्निश्च मदात्ययी । शल्यार्दितश्चरूक्षश्च नविरेच्या विजानता ॥

निम्नलिखित मनुष्यों को जुलाब नहीं देना चाहिये, जैसे—बालक, बुढ़ापा (अति स्निग्ध) अति स्नेह पानवाला * (क्षत क्षीण) कफ के साथ खून या पीब जाने वाले को, भय युक्त तथा रास्ते से थका, अधिक पियास से दुखित, बहुत मोटा आदमी, गर्भिणी तथा ज्वर वाला, जल्दी ही जिसके लड़का पैदा हुआ हो ऐसी स्त्री, जिसको मुतलक भूख न लगती हो (मदात्ययी) नशीली चीजोंके खाने पीने वाला जिसके शरीरमें हथियार लगे हों, (रूक्ष) जिसकी शरीर धातु क्षीण वायु के बढ़ने से सूख गई हो ऐसे लोगों को चतुर वैद्य कभी जुलाब न देवें यदि ऐसा ही जरूरत आ पड़े तो सोते समय कोई मृदु रेचन दूध मिला के सबेरे एक दस्त करा दे। जुलाब तीन प्रकार का होता है। मुलायम, मध्यम और कड़ा, पित्त प्रकृति वाले को मुलायम, कफ प्रकृति वाले को मध्यम और वात प्रकृति वाले को कड़ा जुलाब देना वैद्य वरों की सम्मति है किन्तु यक्ष्मा वाले को मध्यम जुलाब देना चाहिये . क्योंकि यह रोग त्रिदोष जनित होता है ॥

* इस स्नेह से पंच कर्मवाला स्नेह नहीं समझना यहां अति स्नेहसे तात्पर्य अधिक घृत तेल, खुरचा चरबी आदि से है मतलब यह है कि ज्यादा चिकनी चीज पीने वाले को यदि पचा गया तो समस्त नाड़ियों को और मल की सुखी आप भी रहती है और न पचा तो दस्त जारी होता है ग्रहणी कमजोर रहती है इस लिये जुलाब का निषेध किया है ॥

मुञ्जिस।

जुलाब के पहले सर्व साधारण को, प्रकृति के अनुसार मुञ्जिस ज़रूर देना चाहिये यद्यपि स्नेहादि कर्म से मल मुलायम रहते हैं तथापि आँतों रेचनार्थ मल को आंत से अलग करना बहुत उत्तम है॥

इसी हेतु से हकीमों ने मुञ्जिस निकाला है और निहायत लाभदायक है। मुञ्जिस पिलाने से एक बड़ाभारी लाभ यह है कि यदि जुलाब प्रकृत के अनुसार न पड़ा, दस्त जैसा होना चाहिये न हुआ तौ भी कुछ नुकसान नहीं होता इसी लिये अमीर लोग हकीमी जुलाब प्रायः पसन्द करते हैं और हकीम लोग इसका घमंड करते हैं कि हमारे यहां जुलाब देने की जैसी उमदा रीति है, वैद्यक और डाक्टरी में नहीं है। जैसी युनानी जुलाब से रोगी के मल की सफाई होती है, चित्त प्रसन्न रहताहै, बल नहीं घटता यह बात वैद्यकके जुलाबों नहीं है (आ० द०) हकीमों के इस बात को सर्वथा मिथ्या नहीं कह सक्ते किन्तु इतना तो अवश्य कहेंगे कि जिस बिमार से दवा अधिक न पिया जाता हो और कफ मिजाज वाले को हकीमी जुलाब कम गुण कारक है॥

यक्ष्मापर मुञ्जिस।

खीरा का बीज १ तोला, गुलाब का फूल २ तोला, मुलेठी ६ माशा, सौंफ ३ माशा उन्नाब १॥ तोला, मुनक्का बीज रहित २ तोला, इन सब दवाईयों को अधकचरा कर ३ पुड़िया बनाले एक पुड़िया को यथायोग्य जल में रात को भिजा देय सवेरे मन्दाग्नि मे पकावै जब डेढ़ छँटाक जल रहजाय मल के छान लेय और १ तोला गुलकन्द गुलाब, गुलकन्द न मिलेतो आधातोला मिश्री मिला के पिलाय देय, अगर मिजाज में सर्दी याने कफ के अधिक लक्षण मिलते हों तो खीरा के बीज की जगह रेह की जड़ का छाल डाले और गुलकन्द की जगह २ माशा सेंधानोन डाले

इसी प्रकार सबेरे तीन दिन मुञ्जिव पिलावै, और मूंग की खिचरी, या, मूंग की दाल पुराने चावल का भात घी डाल के खिलावै । बाद चौथे दिन पित्ताधिक्य प्रकृत वाले को आरोग्य दर्पण प्रथम खण्ड के ४३ सफे में जो हकीमी जुलाब लिखा है पिलावै सिर्फ अवस्था और रोगी का बलाबल देख मात्रा को घटा बढ़ा लेना काफी है और क्रिया सब वही है । उसीके नीचे डाकूरी जुलाब लिखा है यह जुलाब भी निहायत उमदा और सब प्रकृति के लिये लाभ दायक है वैद्य चाहै तो पिला सक्ता है । एक एक दिन बीच में खाली देके जुलाब देय, जिस दिन जुलाब देय, उस दिन घृत रहित मूंगकी खिचरी खिलावै और निम्नलिखित अपथ्यों से बचावै ।

प्रवातसेवांशीताम्बु स्नेहाभ्यङ्गमजीर्णता । व्यायामंमैथुनंचैव न सेवेतविरेचितः ॥

तेज हवा में बहना, बहुत शीतल जल का पीना, घी मलाई आदि का खाना, शरीर मे तेल उबटन का मर्द्दन करना, खूब पेटभर कर भोजन करना, किसी प्रकार का मेहनत करना, और स्त्री प्रसङ्ग जुलाब के दिन कदापि सेवन न करै ।

खाली दिनों में अर्थात् जिस दिन जुलाब का नहीं है खिचरी या भात के साथ घी खाना निषेध नहीं है ।

श्लेष्माधिक्य प्रकृतिवाले को यदि डाकूरी जुलाब देना राय न पड़े तो यह जुलाब देना ।

पिप्पलीनागरंसिंधु श्यामात्रिवृतयासह । लिहेत्क्षौद्रेणशिशरेवसन्तेचविरेचनम् ॥

छोटी पीपर १ माशा, सोंठ २ माशा, सेंधानोन ३ माशा, निसारा

के जड़ की छाल ६ मासा और निशोत ६ मासा सब को महीन पीस एक तोला शहतमें साग के खिलादे और ऊपरसे थोड़ासा गरमजल पिला दे यह दवा पूर्णमात्रा है बलाबल देखकर चिकित्सक मात्रा घटा बढ़ा सक्ता है ।

रेचन पर अभया मोदक ।

अभयामरिचंशुण्ठी विडंगामलकानिच। पिप्पलीपिप्पली मूलं त्वक्पत्रंमुस्तमेवच॥ एतानिसमभागानि दंतीचद्विगुणा भवेत्। त्रिवृदष्टगुणाज्ञेया षड्गुणाचात्रशर्करा॥ मधुना मोदकंकृत्वा कर्षमात्रप्रमाणतः। एकैकंभक्षयेत्प्रातः शीतं चानुपिवेज्जलम्॥ तावद्विरेच्यतेजंतु यावदुष्णंनसेवते। पानाहारविहारेषु भवेन्नियंत्रणांसदा॥

अभया मोदक का गुण ।

विषमज्वर मन्दाग्नि पांडुकासभगंदरान। दुर्नामकुष्ठ गुल्मार्शो गलगंड भ्रमोदरान्। विदाहप्लीहमेहांश्च यक्ष्माणं नयनामयान्। वातरोगंतथाध्मानं मूत्रकृच्छ्राणिचाश्मरीम्॥ अभयामोदकाह्येते रसायनवराःस्मृताः। पृष्टपार्श्वोरुजघन कम्युदरुजंजयेत्॥ सततंशीलनादेष पलितानि विनाशयेत्॥

(अभया) बड़ा हड़ जो पानी में डूब जाता है अच्छा होती है।

जो सब वृक्षों से बड़ा और दस्तावर होता है १ तोला, काली मिर्च १ तोला, वैतरा शोठ १ तोला, वायबिडंग १ तोला, आंवला बीज रहित १ तोला, शुद्ध छोटी पीपर १ तोला, पीपलामूल १ तोला, दालचिनी १ तोला, तेजपात १ तोला, मोथा १ तोला, जमालगोटे के जड़ की छाल (इसी को लोग दानूनि भी कहते हैं) २ तोला, निशोत चाहे काली हो या सफेद ८ तोला, और मिश्री या चिनी ६ तोला । सब दवाइयों को कूट कपरछन कर ऊपर से मिश्री मिला सहत में सान के चार २ मासे की गोली बनाय लेय, यह पूर्ण मात्रा है, ताकत के अनुसार वैद्य मात्रा को घटा बढ़ा सक्ता है । प्रातःकाल एक गोली खा के ऊपर से शीतल जल पीने से दस्त आते हैं । शीतल जल इस जुलाब का लाग है, बीच २ में थोड़ा २ शीतल जल रोगी बराबर पीता जाये, गरम जल पीने से दस्त बन्द होता है इस लिये जब दस्त बन्द करना मंजूर हो तो गरम जल पी लेवे । किन्तु मुञ्जिस के बाद इस जुलाब का लेना बहुत अच्छा होता है । एक २ दिन बीच में खाली दे के यह जुलाब लेवे, अभया मोदक से निम्नलिखित रोग नष्ट होते हैं ॥

विषमज्वर, मंदाग्नि, पांडु रोग, खांसी, भगन्दर, सब प्रकारका कोढ़, गोला, बवासीर, गलगंड, फोड़ा फुन्सी, उदर रोग, दाह रोग, पिलही, प्रमेह, यक्ष्मा रोग (जिसके प्रकर्ण में लिख रहे हैं) और नेत्र रोग, बात रोग, पेटका फूलना, सुजाक एवं पथरी रोग, यहसब आराम होतेहैं, अभया मोदक उत्तम रसायनहै याने हमेशा इसी मोदकका जुलाब लिया करै तो वह मनुष्य जल्द बुढ़ापा न हो, इसके अलावा पीठ, पशुरी, जांघ, पिंडरी, कमर और पेट इनके दर्द को अभया मोदक बहुत जल्द आराम करता है अगर इस मोदक के द्वारा मनुष्य अपने कफको सर्वदा दूर करता रहै तो बाल उसके बहुत जल्द न पकें किन्तु यहां श्लोक के ठीक माने हैं (सततंशीलनादेव पलितानि विनाशयेत्) निरन्तर इस मोदक के सेवन करने से सफेद बाल काले हो जाते हैं यह बात असम्भव जान पड़ता है

हों मल साफ लाने के लिये अगर जुलाब न भी दे के अभया मोदक खिलावै तो कोई हर्ज नहीं है ॥

इसके अलावा और भी अनेक प्रकार के उत्तम जुलाब है जिन्हें विरेचन प्रकर्ण में लिखेंगे ।

अगर जुलाब की तेजी मेदे पर पहुंच ने से दस्त अधिक आवैं या दस्त न रुकै अथवा पेट में दर्द आदि उपद्रव हो तो दो तोला आंब के छाल को पानी में महीन पीस लुगदी बनाय दही में सान नाभी पर लेप कर देय और खानेको बकरी का दूध भात मिश्री या मूंग की खिचारी खिलावै और थोड़े से चावल के धोवन में मिश्री मिला के पिलावै और गुलाब जल अथवा जल से बारम्बार नेत्र मुख धोदिया करै।

जुलाब के देने से दस्त खुलासा न आवै अथवा जुलाब पचजाय तो बिना दस्त कराये रोगी को अन्य औषध न देय और घबड़ा के चुप चाप न हो जाय उसको खूब बिचार करै कि जुलाब क्यों पच गया दस्त खुलासा क्यों नहीं आया ? अगर रोगी की प्रकृति गरम है और गरमही जुलाब दिया गया है इस कारण जुलाब नहीं हुआ हो तो गुलकन्द गुलाब सीरखिस्त वगैरह शीतल जुलाब पिला के दस्त करावै और सरद मिजाज वाले को सरद जुलाब के देने से दस्त न आया हो तो हड़ सनाय वगैरह देके दस्त करावै अगर खुश्कीके वजे से न हुआ हो तो पुनः स्नेहपान या मुनजिस अथवा आरग्वधादि क्वाथ पिला के मल को गीला करै और उसको फिर जुलाब देवै । जुलाब देने के दो तीन दिन बाद तब बस्ति क्रिया याने पिचकारी की विधि प्रारंभ करै ॥

बस्ति कर्म ।

गुदा के भीतर पिचकारी देने को बस्ति कर्म कहते हैं, यह पंच

कर्म की अन्तिम क्रिया है इन क्रिया से मेदे की सफाई, वायु का नाश, दिल दिमाग में ताकत धातु और आयु की वृद्धि होती है । सो बस्ति दो प्रकार की है एक अनुवासन बस्ति, द्वितीय निरूहण बस्ति ॥

यःस्नेहैर्दीयते सस्यादनुवासन नामकः । कषायक्षीरतैलै-र्योनिरूहः सनिगद्यते ॥

जिसमें घी तैलादि स्नेह युक्त पिचकारी दिया जाता है उसको अनुवासन बस्ति कहते हैं और जिसमें काढ़ा दूध तैल इत्यादि मिश्रित करके पिचकारी देते हैं उसको निरूह बस्ति कहते हैं ॥

पिचकारी के ज़रिये से गुदा द्वारा मलाशय में औषध प्रवेश कर मल साफ करने को क्रिया डाक्टरी में बहुत अधिक है । वैद्यक में भी है किन्तु वैद्य लोग पहरेज के मारे किसी को अत्यावश्य पड़ने पर भी पिचकारी नहीं देते और न अपने किसी शिष्य को सिखाते हैं कि उसी से काम लिया करे इसी से और भी वैद्य विद्या प्रतिदिन नष्ट भ्रष्ट होती जाती है । पिचकारी की क्रिया ऐसी सहज है कि जरूरत पड़ने पर मनुष्य अपने लिये आप खुद कर सक्ता है और आज कल कब्ज अधिक रहने के कारण लोग प्रायः पिचकारी अपने व्यवहार में लाते हैं । कितने गरम जल से रोज मलाशय को धोते हैं । जुलाब लेने के बाद पिचकारी लेने से अवस्था की स्थिति आदि गुण जैसा की वैद्यक शास्त्र में लिखा है अवश्य होता है ॥

शरीरोपचयंवर्णं बलमारोग्यमायुषः । कुरुतेपरिवृद्धिं च बस्तिःसम्यगुपासितः ॥

अच्छे प्रकार बस्तिकर्म होनेसे शरीर पुष्ट और बलवान, चेहरेपर रौनक आरोग्यता और आयु की वृद्धि होती है । सुश्रुत महाराज भी चिकित्सा स्थान के पैंतीसवें अध्याय में लिखते हैं ॥

वीर्य्येणबस्तिरादत्ते दोषानापादमस्तकात्। पक्वाशयस्थोऽम्बरगो भूमेरर्कोरसानिव ॥

जैसे आकाश में उदय हुआ सूर्य्य अपनी किरणों के बल से पानी को खींच लेता है उसी प्रकार पक्वाशय में स्थिर हुई बस्ति अपनी ताकत से पैर से सिर तक के दोषों को नाश कर देती है ॥

सकटीपृष्ठकोष्ठस्थान्वीर्य्येणालोड्यसञ्चयान् । उत्खातमूलान्हरति दोषाणांसाधुयोजितः ॥

विधि पूर्वक दी हुई बस्ति (पिचकारी) अपने पराक्रमसे कमर, पीठ और कोठे में संचित दोषों को नाश कर देती है ॥

दोषत्रयस्यवस्माच्च प्रकोपेवायुरीश्वरः । तस्मात्तस्यातिवृद्धस्य शरीरमभिनिघ्नतः॥ वायोर्विहन्तुर्वेगं नान्यावस्तेर्ऋतेक्रिया । पवनाविद्धतोयस्य वेलावेगमिवोदधेः ॥

यह शरीर के सब दोषों में वायुही प्रधान है और वायुही के वशे से कफ और पित्त भी बिगड़ जाते हैं । जब वायु अत्यन्त बढ़ कर शरीर को नाश करने लगता है उस समय पिचकारी को छोड़ कर कोई दूसरा कर्म ऐसा नहीं है जो उसे शान्ति कर सके । जिस प्रकार वायु वेग से उछलती हुई समुद्र की तरङ्गों को वेला के सिवाय और कोई नहीं रोक सकता, ऐसेही उस वायु को सिवाय बस्ति (पिचकारी) के दूसरी क्रिया नहीं रोक सकीहै । सम्पूर्ण बस्तिक्रिया बस्तिप्रक्रियाके प्रकरणमें लिखेंगे ॥

इस स्थल में इतना कहना बहुत जरूरी है कि पिचकारी किसी जानकार (जैसे डाक्टर या शिक्षित कम्पौंडर आदि) से दिलाना उचित है अधिक अभ्यास पड़जाने पर आरोग्य पुरुष स्वयं पिचकारी भी ले सक्ता है और प्रायः लोग पेट साफ रखने के निमित्त तथा योग साधन करने वाले अभ्यास रखते भी हैं ॥

यह हम प्रथमही लिख चुके हैं कि वस्ति दो प्रकार की है अनुवासन और निरूह । निरूह वस्ति के बिना अनुवासन वस्ति ठीक नहीं है क्योंकि जैसे पहिले नालियों में से कूड़ा निकाल कर फेंकने से जल सुख से बहता है, ऐसेही निरूह वस्ति के द्वारा मार्ग शुद्ध होने पर स्नेह वस्ति देने से वह चिकनाई सुख से सब स्थानों में पहुंच जाती है तथापि पञ्चकर्म द्वारा शरीर शुद्ध होगया है तो निरूह वस्ति की कोई जरूरत नहीं है इस लिये विरेचनादि करा के दो तीन अनुवासनवस्ति दे ॥

अनुवासन वस्ति ।

विरेचनात्सप्तरात्रे गतेवातवलायच । कृतान्नायानुवासस्याय सम्यग्देयोऽनुवासनः ॥ उत्सृष्टानिलविण्मूत्रे नरेवस्तिं विधापयेत् । एतैर्हिविहितःस्नेहो नैवान्तःप्रतिपद्यते ॥ स्नेहवस्तिर्विधेयस्तु नाविशुद्धस्यदेहिनः । स्नेहवीर्यंतथादत्ते देहंचानु विसर्पति ॥

जब जुलाब को दिये हुये सात दिन बीत जाय, रोगी बलवान हो जाय और चलने फिरने की ताकत आजाय और देखे कि अनुवासन देने की आवश्यक्ता है, तब उचित रीतिसे अनुवासन वस्ति दे (विधिः) वस्ती देनेके पूर्व रोगी को मल मूत्र त्याग करादे क्योंकि शरीरमें मलमूत्र

के रहने से स्निग्धता याने चिकनाई भीतर जाने नहीं पाती, इसी लिये स्नेह बस्ती अशुद्ध शरीर वाले को कभी न दे क्योंकि अशुद्ध रोगी के शरीर के मलही चिकनाई के वीर्य को खींच कर अनेक रोग उत्पन्न करते हैं ॥

यक्ष्मा रोगमें देने लायक अनुवासनबस्ति यहहै—गधापुर्ना का जड़, देवदारु, खरियारा की जड़, शतावर, लाल चन्दन, रासन, मैनफल, जेठी मधु, कमलगट्टे की गरी, मदुमसाल, मोथा, पित्तपापड़ा, खस, शिशोय और सुगंधबाला, इन सब औषधों को दे दे तोला ले अधकचरा कर पांच सेर पानी में रात्रि को भिजा दे सबेरे चूल्हे पर चढ़ाय आंच देय जब चौथाई जल रह जाय, चूल्हे पर से उतार शीतल होने पर मल कर छान लेय, बाद एक सेर काले तिल का तेल कढ़ाही में भै उसी काढ़ाके डाल धीमी आंच में पकावै और तेल का चौगुना गौ का दूध सब को डाल धीमी आंच में पकावै, जब काढ़ा और दूध बिलकुल जल जाय तेल मात्र रह जाय छान कर बोतल में भर काग लगा के रख देय इसका मात्रा दो तोला से ५ तोला पर्य्यन्त है, रोगी के बल के अनुसार मात्रा को थोड़े गरम जल के साथ नियोग करै और प्रकृति के अनुसार भोजन देय । सुश्रुत में अनुवासन बस्ति की बहुत कुछ प्रशंसा लिखी है ॥

(१) बस्ती से मूत्राशय और अंडकोश चिकने होते हैं । (२) से मस्तिष्क का वायु दूर होता है । (३) से बल और तेज बढ़ता है । (४) से रस (५) से रुधिर (६) से मांस (७) से मेदा (८) से मज्जा (९) से शुक्र चिकने और सब दोष दूर होते हैं । जो मनुष्य विचार के साथ १८ बस्ती लेता है वह सब रोगों से रहित महा बलवान होकर १२० वर्षका जीने वाला होता है ॥

बस्ति क्रिया के पश्चात् शेष रोगों को निम्नलिखित दवाइयों से शांति करै ॥

इस बात को प्रथम ही लिख चुके हैं कि पंचकर्म बलवान रोगी को कराना क्योंकि क्षीण मनुष्य को पंच कर्म विष समान मारक होते हैं। कारण इसका यह है कि मनुष्यों का बल वीर्य के आधीन है और जीवन मल के आधीन है इसलिये क्षीण रोगी के वीर्य और मल की रक्षा यत्न पूर्वक करना चाहिये। इसी प्रकार औषध को भी जानना जितना बलवान औषध और मात्रा है बलवान रोगी के लिये दिया जाता है उससे आधी मात्रा तथा वैसाही अर्थात् औषध क्षीणरोगीको आधी देना उचितहै विपरीति होने से लाभ की अपेक्षा हानि पहुंचना सम्भव है ॥

—:○:*:○:—

लवंगादि चूर्ण यक्ष्माधिकारे।

लवंगंशुद्धकर्पूरं मेलात्वङ्नागकेशरम्। जातीफलमुशीरंच नागरंकृष्णजीरकम् ॥ कृष्णागुरुस्तुगाक्षीरी मांसीनीलोत्पलं कणा। चन्दनंतगरंवालं कंकोलंचेतिचूर्णयेत् ॥ समभागानिसर्वाणि सर्वेभ्योद्धासिताभवेत्। लवंगाद्यमिदंचूर्णं राजार्हं वन्हिदीपनम् ॥ रोचनंतर्पणंवृष्यं त्रिदोषघ्नंबलप्रदम्। हृद्रोगंकंठरोगंच कासंहिक्कांचपीनसम् ॥ यक्ष्माणंतमकंश्वास मतीसारमुरःक्षतम्। प्रमेहारुचिगुल्मांश्चग्रहणीमपिनाशयेत् ॥

पञ्चकर्म के पश्चात् इस चूर्ण को जिस की बिधि नीचे लिखते हैं, दोनों समय शहत के साथ या गुलबनफ्शा के सरबत के साथ चटा के ऊपर से आधपाव गौ का दूध में मिश्री मिला के पिलावे ॥

लौंग (शुद्ध कर्पूर*) बासकपूर (ऐला) छोटी लायची (त्वङ्) कलमी तज अर्थात् पतली दालचीनी, नागकेशर (जातीफल) जायफल (उशीर) खस (नागर) बैतरा सोंठ, कालाजीरा (कृष्णागुरु) काला अगर (तुगाक्षीरी) नीलकण्ठ बंसलोचन (मांसी) जटामासी (†नीलोत्पलं) कमलगट्टे की गरी (कणा) छोटी पीपर सफेद चन्दन (३ वालं) सुगन्धबाला और कङ्कोल इन सब दवाइयों को समान भाग ले कूट कपड़छन कर सब दवाइयों की आधी मिश्री मिलाय किसी अमृतबान अथवा काकदार बोतल में भर कर रखदेय । इस चूर्ण की मात्रा आधे माशा से २ माशा पर्य्यन्त है, इसको लवङ्गादि चूर्ण कहते हैं (राजार्हं) राजाओं के खाने योग्य है (वह्निदीपनं) अग्नि का खोलने वाला (रोचनं) स्वाद को बढ़ाने वाला (तर्पणं) हृदय को ताकत देता है (वृष्यं) शरीर को पुष्ट करता है त्रिदोष नाशक और बल का बढ़ाने वाला है (हृद्रोगं) छाती में दर्द या दिल पर घबड़ाहट मालूम होना (कंठ रोगं) गले में दर्द होना या गले में छाला वगैरह पड़जाना, खांसी, हुचकी (पीनसम्) जुकाम याने नाक का बहना (यक्ष्मा) कफसई, तमक नामक श्वास, अतीसार (उरक्षत) कफ के साथ रुधिर या मवाद का आना, प्रमेह, अरुचि गुल्म ग्रहणी आदि रोग को यह चूर्ण नाश करता है ॥

---

* भाफमें कपूर जमाय के शुद्ध किया जाताहै जिसकी क्रिया कठिन है उसे रस प्रकर्ण में लिखेंगे इस स्थल में खूब सफेद शीघ्र उड़ने वाला कपूर लेना वह भी शुद्धही है ॥

† नीलोत्पल—कृष्ण कमल को कहते हैं, जहां कमल के किसी अंगका वर्णन न हो वहां कमल के फल (कमलगट्टा) को लेना चाहिये, बजार में मनों बिकता है । यदि नीलकमल का फल न मिले तो मामूली कमलगट्टा बाजार सेलेकर भीतर की गरी निकाल, उसके भीतर की हरी पत्ती रहती है फेंक दे क्योंकि उसमें दोष है ॥

इस चूर्ण के खाने से गरमी मालूम हो और आठ दस दिनके खाने से कुछ भी फायदा न मालूम हो जैसो कि तारीफ ऊपर लिखी है तो व खेरे सिर्फ लवङ्गादिचूर्ण खावे और शाम को निम्नलिखित जातीफलादि चूर्ण को चटावे क्योंकि जातीफलादि में विशेष कर भूख को खोलना, खाना हजम करना, और दस्त की बिमारी को ठीक करना प्रधानगुण है ॥

जातीफलादि चूर्ण ।

जातीफललवंगैला पत्रत्वङ्नागकेशरान् । कर्पूरचन्दन तिलैस्त्वक्क्षीरीतगरामलैः ॥ तालीसपिप्पलीपथ्या चित्रक स्थूलजीरकैः । शुंठीविडंगमरिचान् समभागानिचूर्णयेत् ॥ यावन्त्येतानिसर्वाणि कुर्याद्भंगांचतावतीम् । सर्वचूर्णसमादेया शर्कराचभिषग्वरैः ॥ कर्षमात्रंततःखादेन्मधुनाप्लावितंसुधीः । अस्य प्रभावाद्ग्रहणी कासश्वासारुचिक्षयाः ॥ वातश्लेष्म-प्रतिश्यायाःप्रशमंयांतिवेगतः ॥

जायफल, लौंग, छोटीलायची तेजपात, दालचिनी, नागकेशर, कपूर, सफेदचन्दन, कालीतिल, बंसलोचन, तगर बीजरहितमूखाआंवला, तालीसपत्र, छोटीपीपर, छोटीहर्रे, चीता (स्थूल जीरक) कलौंजी, सोंठ, वायबिरंग और मिरच। इन सब औषधियों को समानभाग ले कूट कपरछान करलेय और जितना सब चूर्ण तौल में हो उसी के बराबर धुली हुई भांग को महीन चूर्ण कर मिला दे और जितना भांग सहित सब चूर्ण तौलमें हो उतनाही मिश्री मिलादे। इस को जातीफलादि चूर्ण कहते हैं । शार्ङ्गधर जी इस चूर्ण का मात्रा एक कर्ष अर्थात् १० माशा लिखा है किन्तु वर्तमान समय में जहां तक परीक्षा से विदित

हुआ है कि इस कदर मात्रा सिवाय गहिरी भांग छाननेवाले के यदि अन्य रोगी को दिया जाय तो बायत यमालय की रास्ता न पकड़े किन्तु तकलीफ निस्सन्देह भोगना पड़ेगा। इसका मात्रा आधा मासा से २ मासा पर्य्यन्त है। अगर नशा और गर्मी न करै तो ४ मासा तक भी खा सक्ता है। इस चूर्ण को संध्या समय सहत में चाट के ऊपर से गुन गुना दूध मिश्री मिला के पिये॥

जातीफलादि चूर्ण बिशेषकर ग्रहणी, खांसी, श्वास, अरुचि, छर्दि और बात कफ सहित जुकाम को बहुत शीघ्र आराम करता है और खोलता है। यक्ष्माधिकार में जो कुछ दवा हम लिख आये हैं और लिख रहे हैं, वे सब पंच कर्म से निवृत्त रोगी के लिये भी है और जिन्हों ने पंचकर्म नहीं लिया उनके लिये भी मुफीद है। अगर यक्ष्मावालेका मल शुद्ध न होता हो अथवा कफ के साथ कुछ खून या रंगीन और दुर्गन्धित कफ गिरता हो तो निम्नलिखित अरिष्ट उपरोक्त दोनों औषधों के अलावा दिन में दो तीन बार और सोते समय पिलावै अथवा केवल अरिष्ट पिलावै॥

द्राक्षारिष्ट उरःक्षति पर।

द्राक्षातुलार्धंद्विद्रोणे जलस्यविपचेत्सुधीः। पादशेषेकषा-येच पूतेशीतेविनिक्षिपेत्॥ गुड़स्यद्विगुणांतत्र त्वगेलापत्र केशरम्। प्रियंगुंमरिचंकृष्णां विडंगंचेतिचूर्णयेत्॥ पृथक्-पालोन्मितैर्भागै स्ततोभांडेनिधापयेत्। स्थापयत्वाततोमासं ततोजातरसंपिवेत्। उरःक्षतंक्षयंहंति कासश्वासगला-मयान्॥ द्राक्षारिष्टाह्वयःप्रोक्तो बलकृन्मलशोधनः॥

खूब उमदा बड़े २ दानों का मुनक्का कलकतिया तौल ऽ२॥ सेर ले भीतर का बीज निकाल ऽ२० सेर पानी में धीमी आंच से पकावे जब चौथाई जल बाकी रहे चूल्हे पर से उतार शीतल कर, मल कर छानलेय पश्चात् ऽ२॥ सेर मिश्री और दालचिनी, छोटी लायची, तेजपात, नाग-केशर, प्रियंगुफूल और बायबिरंग चार २ तोला। काली मिर्च और छोटी पीपर दो दो तोला सबोंको अधकचरा कर उक्त मुनक्के के काढ़ेमें डाल एक मृत्तिकापात्र अथवा चिनीके पात्रको चन्दन अगर और कपूरसे धूपित कर उस में भर उसका मुख प्याले और मट्टी से बन्द कर (जिसमे हवा भीतर न जाय) एक महीना तक ऐसे स्थान में रख दे जहां दिनमें धूप और रात में ओस लगे पश्चात् एक महीना के मल छान कर बोतल में भर लेय इसको द्राक्षारिष्ट कहते हैं, यह अर्क कभी बिगड़ता नहीं। इस का मात्रा छ मासा से दो तोला पर्य्यन्त है। अगर उपरोक्त दोनों चूर्णों को भी दिये जाय तो इस अरिष्ट को १२ बजे और ४ बजे दिन में और एक मात्रा सोते समय पिलावे। यदि कफ के साथ रक्त के छींटे बराबर आतेहों तो एक २ मात्रा अरिष्ट दिनभर से छ दफे याने दो २ घंटे पर पिलावे। यह अरिष्ट उरक्षतके अतिरिक्त बावासीर, उदावर्त, गुल्म, उदररोग, कृमिरोग, रक्तदोष, अनेक प्रकार के फोंड़ाफुन्सी, नेत्र रोग, शिररोग, गलरोग इन सबोंको नाश करता है, अग्नि को खोलता और अन्न को पचाता है एवं दस्त खुलासा लाता है ८

द्राक्षादि घृतं।

प्रस्थमेकंतुद्राक्षातोमधुयष्ट्याःपलाष्टकं। चतुःप्रस्थेजलेपक्त्वा
पादशेषंसमुद्धरेत्॥ पलंयष्टीपलंद्राक्षा कणाचूर्णपलद्वयं।
प्रदायसर्पिषःप्रस्थं पचेत्क्षीरेचतुर्गुणे॥ सिद्धेशीतेपलान्यष्टौ
शर्करायाःप्रदापयेत्।एतद्द्राक्षाघृतंसिद्धंक्षतक्षीणसुखावहं॥

मुनक्का बीज रहित १ सेर, मुलेठी डेढ़पाव दोनों को कुचल कर ५ सेर पानी में रात को भिजा देय, सवेरे जोश देवे जब चौथाई जल रहजाय चूल्हे पर से उतार शीतल कर छानलेय। बाद उसकी मुलेठी और बीजरहित मुनक्का दो दो तोले, छोटो पीपर ४ तोला तीनोंको मिलकर पानीसे पीस लुगदी बना लेय, गौ का घी एक सेर किसी कलईदार कढ़ाई में चढ़ाय तीनों दवाईयों की लुगदी और मुनक्का मुलेठी का काढ़ा दोनों को उसी कढ़ाई में डाल धीमी आंच से पकावे और ऊपर से ४ सेर गौ का दूध डालदे जब पुरसे२ पानी दूध सब जल कर घृत अकेला रह जाय चूल्हे, पर से उतार छान अमृतवान अथवा घी की नदियां में रख देय जिस रोगी को सिर्फ घी पिलाना हो तो उस घी में डेढ़पाव मिश्री पीस के मिला देय अगर घृत को भोजन के साथ खिलाने को राय हो तो सिर्फ दाल रोटी के साथ देवे और इसी घी से दाल तरकारी वगैरह छौंक भी सकते हैं क्योंकि मामूली घी प्रायः रोगी को नुकसान करता है खास कर जिस यक्ष्मावाले को खांसी अधिक रहती है क्या घी खांसी बढ़ाता है इसीसे वैद्यलोग ज्वर खांसी में घी खिलाना बन्द करदेते हैं जिससे रोगी के भीतर खुश्की पहुंच कर शरीर सुखजाती है। हकीम लोग इसी डर से घी की जगह बदाम का तेल खिलाते हैं और उसीसे तरकारी वगैरह भी पकवाते हैं॥

चन्दनादि तैलम्।

चन्दनाम्बुनखंवाप्य यष्टीशैलेयपद्मकं। मंजिष्ठासरलंदारु शट्येलापूतिकेशरं॥ पत्रशैलंसुरामांसी कंकोलंवनितांबुदं। हरिद्रेसारिवेतिक्ता लवंगागुरुकुंकुमं॥ त्वग्रेणुनलिकाचैवी भिस्तैलमस्तुचतुर्गुणं। लाक्षारसयमंसिद्धं ग्रहघ्नंबलवर्णकृत्॥ अपस्माररज्वरोन्माद कृत्यालक्ष्मीविनाशम्। आयुःपुष्टिकरं-चैव वशीकरणमुत्तमं॥ विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरंपरं। चन्दनाद्यमिदंतैलं नाम्नाख्यातंजगत्रये॥

यों से क्षयीवालों को आराम होता कुछ न देख पड़े तो जान लेना चाहिये कि सप्त धातुओंमें से जिससे यह शरीर रचित है अवश्य कुछ क्षीण होगये हैं क्योंकि धातुओं के क्षीण होनेही से क्षयी रोग असाध्य हो जाता है। वैद्य लोग इन विषयों पर कम विचार करते हैं॥

सप्त धातु यह हैं रस, रक्त, मांस, मेद, हड्डी, मज्जा और शुक्र याने वीर्य अथवा रज। इनके क्षय होने का लक्षण ग्रंथ बढ़ जाने के भय से श्लोकों में न लिख कर पाठक गणों के बोधार्थ भाषा में लिखे देते हैं॥

रस क्षय लक्षण।

रस के क्षय होने से अत्यन्त खुश्की, अग्नि की मन्दता, शरीर में कम्पन या शरीर का थर थराना शिरमें पीड़ा, उदासीनता, अकस्मात् रंज का होना और सुस्ती होती है॥

मांस क्षय का लक्षण।

मांस के क्षय होने से शरीर का अत्यंत दुबला होना, अङ्गोंकी शिथिलता, नींद का न आना अथवा अधिक नींद का आना, आंतों का भूलना और बल का नाश यह उपद्रव होते हैं॥

मेदः क्षय की लक्षण।

मेद के कमी होने से शरीर थकी सी, मनका कहीं न लगना, बदन का टूटना, चलने फिरने की ताकत कम हो, स्वास अत्यन्त खांसी, खाने पर मन का न चलना और न खाना हजम होना, इत्यादि लक्षण होते हैं॥

अस्थि क्षय के लक्षण।

हड्डी के क्षय होने में मन अति उदास, और धातु की कमज़ोरी, अधिक होती है तथा मेदा क्षय के जो कुछ लक्षण हैं वह भी मिलते हैं॥

वीर्य क्षय के लक्षण ।

वीर्य के कमी होजानेसे विचार का ठीक न रहना, अकस्मात् रंज करना या रोना अथवा अधीर्य होना और बारम्बार कहना की अब हम नहीं जीयेंगे, हाथ पैर मुख वगैरहमें सूजन होना, रात में नींद का न आना धीमा ज्वर का बना रहना अथवा दाह का होना इत्यादि लक्षण वीर्य क्षय के होने में होता है ॥

रस रक्तादि वृद्धि कारक उपाय ।

वैद्यों को तथा अन्य लोगों को जो साधारण चिकित्सा करते हैं उचित है कि मिज़ाज के ऊपर ध्यान अवश्य रक्खें । यक्ष्मा रोग वाले के शरीर में यदि रस और रुधिर की कमी का लक्षण मिलते हों तो जितनी दवाई उसमें रसरक्तका विरोधी कोई दवा न हो बल्कि जहांतक वृद्धिकारक औषधही जैसे गुरच चाहे किसी औषध के योग में हो अथवा गुरच का फान्ट या क्वाथ पिलाना या गुरच का सत्त अदरख के रस के साथ चटाना रस रक्त दोनों को बढ़ाता है और कालीमिरचों में पकाया हुआ गौ का दूध अथवा पका हुआ दूध मिश्री सहित दश पन्द्रह दाना गोल मिर्च चाब कर रात्री में पीना फायदा होता है अनेक बार देखा गया है कि यह प्रयोग से निस्सन्देह रसों की वृद्धि होती है और क्षय रोग छुट जाता है ॥

पथ्य ।

एक साल का पुराना गेहूं का भूसी सहित आटे की खमीर उठाकर रोटी अथवा जव की चूनी की रोटी, शाली संज्ञक पुराना चावल वैद्य जनों ने श्रेष्ट कहा है ॥

रक्त वृद्धि कारक उपाय।

घृतदुग्धसिताक्षौद्र मरिचानिचपिप्पली। पानंशस्तं मनु-ष्याणां रक्तवृद्धिकरंपरम्॥

यह योग सबई रोग में बहुत सरल और आजमाया हुआ है। घी, दूध, मिश्री, शहत और मिर्च इन्हों का पना बना कर पीना रक्त वृद्धि करने का श्रेष्ठ उपाय है। जैसे १ पाव गौ का दूध पका हो या कच्चा हो रोगी के मिजाज पर है उसमें ६ मासा शहत, दश मासा घी, एक तोला मिश्री २० दाना कालीमिर्च या आधी पीपर पीस के मिला कर सबों को एकदिल कर शाम सबेरे चाहे किसी दवा को खिला कर ऊपर से पिला दे अथवा केवल इसीको पिलावे यह योग अवश्य सूखे हुये रक्त को हरा भरा करता है॥ पथ्य॥ उपरोक्त पथ्य के अतिरिक्त मूङ्ग की दाल, सैंधव नोन और मातदिल खान पान वगैरह॥

मेद वृद्धि कारक उपाय।

जितने हलके अन्न याने जल्द हजम होने वाले हैं सब हित हैं। मक्खन, घी, दूध, मिश्री और मीठे शरबत वगैरह उत्तम हैं। कल्प सं-धाक एक प्रकार का शराब है जिसका बयान आगे करेंगे किसी २ को बहुतही फायदा करता है। जांगल देश के जीवों का रस याने शुरुवा पिलाना वैद्यवरों ने श्रेष्ठ कहा है किन्तु हमारी राय में जब किसी अन्न खान पान या दवा से लाभ न पहुंचे तो अन्तमें उपकारी पुरुषक आरोग्यार्थ मांस खिलाना अनुचित नहीं है। शितोपलादि चूर्ण शहतमें चटा कर ऊपर से पका हुआ बकरी का दूध मिश्री-सहित शाम सबेरे पिलाना भी मेद की वृद्धि कर सबई रोग को आराम करता है॥

अस्थि वृद्धि कारक उपाय।

मांसानिघृतशस्तानि क्षीराणि विविधानिच। अन्नानिच मधुरानि सर्वाणिच प्रयोजयेत्॥

अधिक दिन कई रोग रहने से अथवा जीर्णज्वर में मनुष्यकी अस्थि याने हड्डी पतली पड़ जाती है खास कर हाथ पैर कमर और पसुलियों की हड्डियां जरूर पतली और कमजोर हो जाती हैं इसमें बनाया हुआ अनेक प्रकारके घी दूध, और अनेक प्रकारके मीठेअन्न और जांगल देशों के जीवों का मांस हित है ॥

शुक्र वृद्धि कारक उपाय ।

शुक्रक्षयेप्रपानानि रसानिचविशेषतः। नवनीतंतथाक्षीरं मधुराणिच सेवयेत् ॥ काकोलीमूलपयसा विदारीकंदशाल्म-ली। सिताढ्यपानंच हितं शस्तेमधुराणिच ॥

वीर्य क्षय में अच्छे २ प्रकार के शरबत दूध का निकाला हुआ म-क्खन, तत्काल का दुहा हुआ दूध, और मालपुवा आदि बने हुये मीठे भक्ष काकड़ी के जड़ की छाल, बिदारीकंद और सेमल का मूसरा मिश्री मिला हुआ दूध के साथ पिलाने से अत्यंत फायदा करता है अथवा नीचे लिखी हुई दवाइयों को गौ को खिला कर उस गौ के दूध को भी पिलाने से अत्यन्त फायदा होता है और तारीफ इसमें यह है कि फिर रोगी को धातु वृद्ध कर औषध खाना नहीं पड़ता ॥

अश्वगंधादि चूर्ण ।

नागौरी असगंध १ छंटाक, शतावर २ छंटाक सफेदमूसली ३ छंटाक तालमखाना ४ छंटाक सलामा ५ छंटाक सेमर का मूसरा ६ छंटाक और मिश्री आधसेर सब दवाइयों को कूट कपर छान कर उसीमें मिश्री मिला अमृतबान में रख देय पहिले आधी छंटाक सवेरे और आधी छंटाक सांझ को आधसेर की एक रोटी बनाय रोटी को मल कर उसी में एक माला दूध और आधपाव शक्कर मिला खिलाय देय अथवा सानी में मिला दिया करै किन्तु सानीमें जवका भूसा और अलसी की खली रहै उसी में

दवा मिला दे और उस गौ को दोनों समय पेट भर चारो खिलावै, गौ भूखीन रहने पावै और गौशालेमें खास उस जगह जहां गौका मुख रहता है एक बड़ी डली सेन्धानोन की तार में बांध कर लटकाय देय ताकी गौ मृत्तिका वगैरह कोई चीज न चाट कर जब इच्छा हो तभी नोन की डली को चाटा करै इस्से गौ का हाजमा दुरुस्त रहता है और मृत्तिका आदि चीजों के चाटने से जो गौ के दूध में एक विकार पैदा होता है वह न होगा॥

इस दिन दवा खिलाने के बाद उस गौ का दूध रोगी को पिलाना शुरू करे और उसके पिलानेकी रीति यह है कि दूध दुहकर भूमिमें न रक्खा जाय उसी समय दूधमें थोड़ी मिश्री मिला रोगी को पिला देय इसी तरह दोनों समय कुछ दिनों तक पिलाने से अल्प वीर्य जनित यह रोग को बड़ा फायदा होता है। इसके अतिरिक्त प्रमेह, मूत्राघात दिल दिमाग की कमजोरी, फिर रोग आराम हो धातु अधिक पुष्ट होता है। धातु बढ़ाने और धातु को अति बलिष्ठ करनेका इस दूधसे बढ़ कर दूसरा उपाय नहीं है अगर मनुष्य इस रीति से दवा खाकर हमेशा दूध पीता रहै तो कभी कमजोर न हो और एक सौ बीस बरस तक जीने वाला हो।

हमको जहां तक आयुर्वेदके ग्रंथोंसे प्रमाण मिलेहैं यही पाया गयाहै कि प्रायः यक्ष्मारोग धातुक्षीण होने से होता है वह भी अकाल पतित वीर्य से तो अकसर होता है सो पाठकगण अवश्यही कम अवस्था वाले को इस रोग में ग्रसित देखते होंगे वह भी स्त्रियों का और भी अधिक। उसका सबब यह है कि एक तो कम अवस्था में ब्याही जाती हैं काम कला को जानतीही नहीं किसे कहते हैं तभी पति के घर आना पड़ता है इच्छारोधा से कहीं पति भी कमसिन हुआ तो जान बची तौभी सास नन्दको झिड़की डपटसे दुर्बल हुई जातीहै और कहीं पति जवानहुआ अथवा द्वितीयतृतीय विवाहित हुआ तो उसको रोग ढूंढ़नेकी जरूरतही नहीं पड़ती रातमें पतिको प्रसन्न करना, दिन में घरदारी का काम करना, सास नन्दकी लात गाली से खाली न

रहना, खाने पीने का कोई इंतजाम नहीं यही दोपहर की कमी नाम की य-ही सबब है जो एक२ पुरुष के चार पांच शादी होती जाती है, शादी पर शादी करते जातेहैं स्त्रियां मरती जाती हैं। हरीत महाराज यक्ष्माका निदान इस प्रकार कहते हैं।

क्षतक्षयाच्छूमाद्वापि सहसोपप्लवादपि । व्यवायाति प्रसङ्गेन तथा रूक्षाति सेवनात् ॥ तेन संक्षीयते गात्रं ज्वरो मन्दश्च जायते । ज्वरान्तेजायतेशोफो मलविट्चातिमूत्रता । अतिसारश्चभवति भक्षणेनातिशेषते । कासतेष्ठीवतेऽत्यर्थं शोषस्तुकुरुतेभृशम् ॥

(क्षत) उरक्षत अथवा अधिक दिल कमजोर होने से (क्षय) प्रमेह या प्रदर अथवा धातु पतला और कमजोर होने से अपनी ताकात से अधिक परिश्रम करने से, अत्यन्त प्रसंग करने से, रूखा भोजन करने से, मनुष्य कमजोर होजाता है और वही कमजोरी बनी रहने से भीतर थोड़ा२ धीमा ज्वर होने लगता है तथा उसी ज्वर के बने से मनुष्य बहुत दुबला हो जाता है अन्त में सूजन और दस्त पतला होने लगता है किसी२ को मूत्र बहुत बढ़ जाता है और थोड़ा भी खाया हुआ नहीं पचता, अत्यंत खांसी तथा बलगम अधिक निकलने लगता है। और भी कहते हैं।

व्यायामयानसुरता गतिपीडिताङ्ग रोगेणवा व्रणनिपीड़ितक्षीणदेहात् । क्रोधातिशोकानशनादि भयेप्रवासैः संजायते च मनुजस्यमहागदोऽयम ॥

हरीत महाराज अपने शिष्यों से कहते हैं कि हे पुत्र सुनो चारहेतुओं कर के निसन्देह यह यक्ष्मा रोग होता है जैसे—भोजन कम कसरत अधिक करना, दिनरात सवारी पर बैठ कर चलना, अधिक प्रसंग करना और बहुत रास्ता चलना इन चारो कारणों के अलावा भी फोड़ा फुन्सियों का अधिक दिन बना रहने से क्षीण देह होने से तथा क्रोध, शोक, लंघन, भय, प्रवासादि के करने से मनुष्य के शरीर में यक्ष्मा नामक महान रोग होता है।

कोई बिमारी क्यों न हो पहरेज कराना बहुत जरूरी है और खास कर बड़े २ रोगों में जैसे यक्ष्मा जलोदर आदि कि जिस की उत्पत्तिही असाध्य लिख दिया गया है उनमें तो पहरेज अवश्य ही कराना चाहिये क्योंकि बहुत सी बिमारियां हैं कि उस रोगी का चित्त उन्हीं चीजों के खाने पीने पर चलेगा कि जो चीजें उस रोग के विरोधी हैं हारीत महाराज यक्ष्मा के विषय में लिखते भी हैं।

यद्यदाहारमिच्छेद्वानरंवाराजयक्ष्मिणम्। तस्यतस्यास्यलाभेन क्षीयन्तेतस्यधातवः॥

यक्ष्मा रोगवाले को जिस २ भोजन पर इच्छा चलती है उसी २ भोजन से उस रोगी की धातुक्षीण होती है इसलिये यक्ष्मावाले का मन जिस २ चीजों पर चले उन चीजों का सेवन न करने पावे। जहां तक होसके खाने को वही चीज देवे जिससे धातु बढ़े और उसकी गरमी, हटै लिखा भी है।

यदन्नंयस्समाहारं याद्दशंप्रतियाचते। तत्तस्यचप्रदातव्यं मधुरंघनमेवच॥

जो जो अन्न आहारादि यक्ष्मा रोगवाले को दिया जावे वह मधुर और घन होना चाहिये क्योंकि मधुर और घन पदार्थ से धातु बनता है॥

यक्ष्मा रोगवाले की उमर।

सञ्जीवेच्चतुरोमासान्षण्मासंवावलाधिकः। उत्कृष्टैश्चप्रतीकारैः सहस्राहंतुजीवति॥ सहस्रात्परतो-

नास्ति जीवितंराजयक्ष्मिणः । गतंप्राणौजोवीर्य्यश्च क्षीणश्चविकलेन्द्रियः॥ नभवेत्पुरुच्छायो याप्यरोगश्च मुञ्चति। यस्तदायाससम्पन्नो भूयोऽपिकासिनाभवेत् ॥ तस्यप्राणापहारीस्याद्राजयक्ष्मानि दारुणः । त्रिभिर्मासैश्चषण्मासै वर्षैश्चापित्रिभिःपुनः ॥

हिक्मतवालों ने यक्ष्मा याने तपेदिक की आयु की मर्यादा इस प्रकार बांधा है कि दो दर्जे तक आराम हो सक्ता है, तीसरे दर्जेमें कष्ट साध्य और चौथे दर्जे में असाध्य माना है, जो आराम नहीं हो सक्ता है और यह चारो दर्जे लक्षणों पर निर्भर रक्खाहै किन्तु आयुर्वेद मतावलम्बियों ने इस प्रकार लिखा है । राजयक्ष्मा रोगवाला जिस्के सम्पूर्ण लक्षण मिलते हों चार महीने तक जीता है, यदि चेत् रोगी कुछ बलवान हुआ तो छ महीने तक जीता रहा, यदि चेत् रोगी कुछ बली भी रहा और सद्वैद्यों के द्वारा उत्तम चिकित्सा होती रही तो यक्ष्मा रोगवाला एक हजार दिनों तक जी सक्ता है अन्यथा नहीं । राजयक्ष्मा रोगवाला एक हजार दिन से अधिक इसलिये नहीं जी सक्ता कि उतने दिनोंके उपरान्त प्राण, बल, वीर्य यह सब क्षीण हो जाते हैं और इन्द्रियां सब विकल हो जाती हैं । और यह यक्ष्मा रोग जो बारम्बार घटता बढ़ता नहीं, एक समान बना रह के उत्तम दवा के योग से थोड़ा २ घटने लगता है और फिर नहीं बढ़ता वह रोग याप्य होता है अर्थात् उत्तम चिकित्सा होनेसे आराम होजाता है । तथा जो यक्ष्मा रोग बारम्बार खांसीसे युक्त हो जाताहै याने कभी खांसी कम होगई कभी फिर तेज होगई इसी तरह बलगम आना कभी बन्द होगया या कम आने लगा और कभी फिर बढ़ गया वह यक्ष्मा का रोगी तीन महीने अथवा छ महीनेसे अधिक नहीं जीता रहता अवश्य प्राणका नाश होताहै । अमृत पान कराने

से भी प्राणकी रक्षा नहीं होसक्ती क्योंकि अवधि का उल्लंघन करने की सामर्थ्य किसी में भी नहींहै दूसरे यक्ष्मा आदि महान रोग पूर्वोपार्जित अत्यन्त दुष्कर्मों के द्वारा होते हैं। लिखा भी है—

कुष्टंचराजयक्ष्माच प्रमेहोग्रहणीतथा। मूत्रकृच्छ्रं-इमरीकास अतीसारभगंदरौ॥ दुष्टंव्रणंगंडमाला पक्षाघातोक्षिनाशनं। इत्येवमादयोरोगा महापापोद्भवाः-स्मृताः॥

कोढ़ रोग, राजयक्ष्मा, प्रमेह, संग्रहणी, सुजाक, पथरी, खांसी, अतीसार और भगन्दर, नसूर, गण्डमाला, लकवा, आंखों का फूट जाना यह सब रोग महा अर्थात् बड़े २ पाप करने से होता है। यह सब रोग जो ऊपर कहआयेहैं प्राणके साथ जातेहैं आराम भी होगये तो जड़ नहीं जाती कुपथ्य बस फिर उभड़ आते हैं अन्ततोगत्वा अपने भयंकर लक्षणो को प्रगट कर मनुष्यके प्राणको हरण करते हैं यह महा पाप यहहैं जैसे-

देवानांप्रकरोतिभङ्गमथवा भ्रूणस्यसन्तापनं। गो पृथ्वीधरविप्रबालहननं मारामविध्वंसनम्॥ सोयं स्थानविनाशनंच कुरुते स्त्रीणांवधंयोनरस्तस्यैतैर्गुरुकर्मभिःक्षयगदो देहापहारीमहान्॥

जो पुरुष देवताओंके मूर्तिको तोड़ डालता है अथवा अनादर करता है, जीवोंको सन्ताप देताहै अर्थात् सतायता है, गौ, राजा, ब्राह्मन और बालको की जो हत्या करताहै, किसीके बाग बगीचा उजाड़ता है किसी ऋषि महात्मा गरीब दुखियोंके स्थानको विनाश करता है और

स्त्रियोंको मार डालता है ऐसे २ दुष्ट कर्म करने वाले को प्राण हरण करने वाला महान्क्षयी रोग होता है। हम कहते हैं पापों का प्रत्यक्ष फल शरीरमें अनेक रोगोंके द्वारा दुःख का भोगना देख पड़ता है यदि यह भी न होता तो ईश्वरको लोग और भी न मानते ।

यक्ष्मारोगे अमृत प्राशन घृतं ।

शतमूलीरसंप्रस्थं गुडूचीकल्कप्रस्थकम् । हरीतकी शतानांच कुटजस्यत्वचातुलां ॥ निष्काथ्यचपृथक्तेन पुनश्चैकत्रमिश्रयेत् । दार्वीप्रलेपनंकृत्वा गुडानांशत-पञ्चकम् । सिताचामलकीचूर्णं त्वगेलाचित्रकंशठी ॥ द्राक्षाकुष्ठंशिलाजिच्च शिलाभेदस्तुतालकं ॥ योज्यं-तत्राक्षमानेन भक्षयेच्छुद्धसर्पिषा । तस्योपरिपिवेत्क्षीरं भोजनञ्चततःपरम् ॥ राजयक्ष्मीलभेत्सौख्यं पाण्डुका मलकाञ्जयेत् । अतीसारंविनश्यति वलेनागवलो भवेत् ॥

ताजे शतावरीका रस ६४ तोला अगर शतावरी ताजी न मिले तो क्राथ बनाके रस लेय गुरिचका कल्क ६४ तोला, एकसौ बड़े हड़का वक्कल कुरैयाकी छाल ४०० तोले इनको अठगुना जलोंमें अलग २ काढ़ा बनावे पश्चात् सबों को एकत्रित कर पुनः अग्निपर चढ़ाय धीमी आंचसे पचावे जब पचते २ इतना गाढ़ा होजाय कि करछुल में चपकने लगे तब ५५ साफ सक्कर अथवा चिनी छोड़ कर अच्छी तरह पकालेय बाद आंवला,

दालचिनी, छोटी लायची, चीता कपूर मुनक्का फूट शुद्धशिलाजीत पाषाणभेद और हरताल भस्म इन सबों को दश २ मासाले कूट कपड़ छान कर उसीमें मिला अमृतबानमें रखदेय। इसका मात्रा ६ मासासे तीन तोला तक है। सांझ सबेरे मात्राकी आधा गोघृत अथवा मक्खन मिला कर खाके ऊपरसे गौ का दूध मिश्री मिला हुआ पीनेसे तथा उसके थोड़ी देरके बाद मीठी चीज भोजन करनेसे राजयक्ष्मा व लेकिन हुए लाभ होता है अर्थात् उक्त रोग से छूट जाता है इसके अतिरिक्त पांडुरोग कामला अतीसार रोगका नाश होता है और बल पुरुषार्थ बढ़ता है॥

इति क्षय रोग निदान चिकित्सादि विषयः समाप्तः॥

अथ उरःक्षत।

अब इसके आगे हम उरःक्षत रोगका बयान करते हैं क्योंकि उस रोगके लक्षण यक्ष्मा रोगमें मिलते हैं और आरोग्य न होनेसे उरःक्षत वाला भी हजार दिन से अधिक नहीं जीता। रहा यह कि जितना शीघ्र यक्ष्मा वाला दुर्बल बलहीन होजाताहै तितना शीघ्र उरःक्षतवाला नहीं, यदि चेत् मुखसे खून अधिक आने लगा तो अतिशीघ्र मर भी जाताहै॥

उरःक्षत होने का कारण।

धनुषायम्यतोत्यर्थं भारमुद्वहतोगुरुम्। युद्धमानस्य बलिभिः पततोविषमोच्चतः॥ वृषंहयंचाधावंतं दम्यं चान्यंनिगृह्णतः। शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान् क्षिपतोनिघ्नतःपरान्॥

उरःक्षतरोग उसीको होता है जो मनुष्य अपनी आत्माके बल से अधिक बल करता है उसकी छाती फटजाती है अर्थात् (लंक्स) जिसे शोधक यंत्र कहते हैं जिसके द्वारा होके समस्त शरीर में रुधिर जाता है उसका स्थान हृदय है जहां पर धक धक हुआ करता है वह नस फट कर मुख से खून आने लगता है वही जल्द उत्तम उपायों द्वारा उस फटे हुये नस को न पुराने से पक जाता है और उसीमें से मवाद होके मुख के राह से गिरने लगता है और फिर नहीं पुरता, अर्थात् नसूर हो जाता है इसीको उरःक्षतरोग कहते हैं इसमें और यक्ष्मा में बहुत कम भेद है । वैद्यों को सब से प्रथम उचित है कि रोगकी परीक्षा खूब करलेय तब चिकित्सा करै । मनुष्य के यकृत जिसे डाकृरी में (लीवर) और हिक्मत में (कलेजा) कहते हैं उसमें भी विकार पहुंचने से मुख से खून या मवाद आने लगता है जिसका बयान आगे करैंगे, जिस वजे से उरःक्षत होता है प्रथम उसे कहते हैं । धनुषादि जो मनुष्य धनुष चढ़ाने आदि में अति परिश्रम करता है, अथवा भारी बोझ लेके चलता है, अपने से अधिक जोरवाले से कुश्ती लड़ता है, टेढ़े मेढ़े जगह से और ऊंचे से गिरता है, घोड़ा बैल आदि दौड़ते हुये जानवरों को जो पकड़ता है, जो लकड़ी पत्थल, ईंट, भारी चीज हाथ में लेके फेंकता है अथवा दूसरे को मारता है उसके छाती में सदमा पहुंच कर छाती फटजाती है और जिन्हें इन सब बातों का अभ्यास है अर्थात् रोज २ उसी काम को करते हैं उनको उरःक्षत नहीं होता क्योंकि उनको अभ्यास पड़जाता है यदि इस तरह हो जावे तो सैकड़ों बोझा उठानेवाले मजदूर अपनी ताकत से दूनी भारी बोझ उठाले जाते हैं । फौजी सिपाहियों को युद्ध में हाथही से बन्दूक चलाना पड़ता है, भाला फेंकना पड़ता है सभी को हो जाया करै, सिर्फ दिलके कमजोर, मुलायम, कभी उस काम को न करनेवाले, एकाएकी उक्त कामों के करने से उरःक्षत रोग होजाता है ।

इसी तरह बहुत जोरसे पढ़नेसे अथवा गानेसे बहुत दूर तक अति

शीघ्रताके साथ चलनेसे बड़ी पाट वाली नदी को तैरकर पार करनेसे घोड़ेके साथ दौड़नेसे अथवा दूरसे कूदनेसे या नारा हांकनेसे बहुत जल्द २ नाचनेसे और किसी तरह छातीमें चोट लगनेसे उरःक्षत रोग होता है।

जो मनुष्य रूखा तथा थोड़ा भोजन करके जादा मैथुन करता है अर्थात् उत्तम खाने पीनेको समय पर नहीं खाता, दिवारात्रि मैथुनासक्त रहताहै उसकी छाती अति पीड़ित होती है उसके सुई छेदने अथवा फटनेसरीखे छाती फटने लगतीहै पसुलियोंमें दर्द होने लगताहै अंगसूखने और कांपने लगता है बस क्रमशः वीर्य्य बल वर्ण और जठराग्नि हीन होने लगताहै पश्चात् ज्वर शरीर में पीड़ा मनमें उदासी दस्त का पतला होना अग्नि मन्द खाना का न पचना खांसनेसे दुर्गन्धयुक्त पीला गठीला रक्त सहित कफ गिरने लगता है तब वह रोगी बहुत दुबला और निस्तेज होजाता है।

उरःक्षत का असाध्य लक्षण।

उरोरुक् शोणितेच्छर्दिः कासोवैशेषिकः क्षते । क्षीणेसरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥ (अन्यच्च) अल्प लिंगस्यदीप्ताग्नेः साध्योवलवतोनवः । परिसंवत्सरो-याप्यः सर्वलिंगंविवर्जयेत् ॥ परंदिनसहस्रंतु यदिजीवतिमानवः । सुभिषग्भिरुपक्रांतस्तरुणःशोषपीड़ितः ॥

अब उरःक्षत के असाध्य लक्षण कहतेहैं जिन लक्षणोंसे जाना जाता है कि यह रोगी अब नहीं जीवेगा।

मुखसे बराबर खून का गिरना याने खून का वमन होना खांसी अत्यन्त तकलीफ अधिक क्षीणताके कारण पेशाब के साथ रक्तका आना

पसुलियों में दर्द, पीठ और कमर का जकड़ना इन लक्षणों से उस को असाध्य जानना और भी कहते हैं । जिस रोगी के लक्षण कम मिलते हों, अग्नि तेज हो, भूख लगती हो खाना हजम हो जाता हो और थोड़े ही दिनों का रोग हो तो आराम हो जाताहै और एक वर्ष पीछे कष्टसाध्य और सब लक्षणों के मिलने से असाध्य हो जाताहै यदि किसी अच्छे सद् वैद्य की चिकित्सा हुई तो वह रोगी एक हजार दिनों तक जीता रहैगा अन्यथा मृत्युही समझिये ॥

अथ चिकित्सा ।

भूत पूर्व वैद्योंका यह सिद्धान्त मत है कि अगर उरःक्षत रोगी मनुष्य शोक, चिन्ता, क्रोध करना, स्त्री प्रसंग पराये को देख के जलना आदि कर्म्मों को त्याग देय और मन को प्रसन्न रखना पवित्रता से देव पूजन, ब्राह्मण अतिथियों का सत्कार, भगवत् भजन, वेद वेदान्त पुराण इतिहासादि ब्राह्मण के मुख से सुननेसे रोग बलवान नहीं होने पाता ॥

यक्ष्मारोग में जो जो दवायें लिखी हैं वे सब भी प्रकृति देश कालानुसार उरःक्षतवाले को फायदा कर सक्तीं हैं ॥

उरःक्षत पर एलादि वटी ।

एलापत्रत्वचोद्राक्षा पिप्पल्यर्धपलंपृथक् । सिता मधुकखर्जूर मृद्वीकाश्चपलोन्मिताः ॥ सचूर्ण्यमधुना युक्ता वटिकाश्चप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रास्ततश्चैव भक्षयेद्दिदिनेदिने ॥ क्षतक्षयंज्वरंकासं श्वासंहिक्कांवमिं भ्रमं ॥ मूर्छामदंतृषांशोषं पार्श्वंसूलमरोचकम् । प्लीहा

नमाढ्यवातंच रक्तपित्तज्वरंक्षतं ॥ एलादिगुटिकाहंति वृष्यासंतर्पणीपरा ॥

छोटीलायची, तेजपात, दालचिनी बीज रहित मुनक्का, दूधसे शुद्ध किया छोटी पीपर यह सब आधा २ पल अर्थात् दो दो तोले, मिश्री, मुलैठी, खजूर, कायफल, और किसमिस यह सब चार २ तोले, सबों को खूब महीन चूर्ण कर आधे २ तोले की गोली बनाय लेय, यह पूर्णमात्रा है, अवस्था के अनुसार मात्रा घटा बढ़ा सक्ते हैं। इस गोली को दोनों समय खाकर ऊपरसे बकरी अथवा गौ का ताजा दूध मिश्री मिला हुआ पीने से उरःक्षत रोग आराम होता है इसके अलावा लिखा है। क्षयी, ज्वर, खांसी, स्वास हुचकी, वमन, घुमरी, मूर्छा, मद, पियास शोष, पार्श्व शूल, अरुचि, प्लीहा, आढ्यवात और रक्त पित्त ज्वर आदि नाश होता है यह औषध कामोद्दीपन है। हमने जहां तक परीक्षा लिया है और रोगों की अपेक्षा उरःक्षतको कुछ दिनों तक लगातार पथ्य सहित सेवन करने से अवश्य आराम करता है। उरःक्षत रोग का पथ्य वही है जो राजयक्ष्मा रोग में कह आये हैं। उरःक्षत वाले को सरबत अनार, सरबत बजाय, सरबत गुलबनफ्सा आदि और भी तर पदार्थों को जो खून को शीतल और शुद्ध करनेवाले हैं सेवन करावे, दूध और मिश्री जहां तक हो पिलावे ॥

अगर खून का वमन होताहो और अनेक जतन करनेसे न रुका हो तो एक तोला फिटकिरी को एकसेर पानी में घोल अगर बरफ मिलता हो तो उसी पानीमें डाल खूब शीतल कर उसी जल में कपड़े को भिजा कर छाती पर रक्खे और जब कपड़ा सूखजाय फिर भिजालेय और पीने को बिहीदाने का लुआब निकाल मिश्री मिला के एक २ चम्मच पन्द्रह २ बीस २ मिनट पर पिलावे जब तक खून का आना बन्द न हो और समस्त शरीर में नारायन तैल, अथवा मासादि तैल या लाक्षादि

कृतेतत्र निःक्षिपेदौपधंभिपक् ॥ सितोपलाचतुःप्रस्थं चातुर्जातंपलंपलं । मृद्वीकापट्पलंचैव क्षिप्त्वामधुपलाष्टकम् ॥ धारासत्वंतवक्षीरी श्वेतजीरंपृथक्पृथक् । नागंवगंपलार्द्धंच सर्वमेकत्रकारयेत् ॥ कर्पूरंवल्लमात्रंच दत्वास्थाप्यसुकुंभके । भक्षयेनिष्कमात्रंतु प्रातरेवहि पथ्यभुक् ॥ जीर्णज्वरेक्षयेकाले अग्निमांद्येप्रमेहके । दिनरात्रिज्वरेचैव शिरोरोगप्रशस्यते॥प्रदरेरक्तजान्रोगान् कुष्टाशांसिचनाशयेत् । नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथासर्वान्मुखेस्थितान् ॥ नाशयेन्नात्रसंदेहो मंडलस्यचसेवनात् । महाकुमारीपाकोयं भरद्वाजविनिर्मितः ॥

शत पत्रिका अर्थात् यह सेवती पाक भारद्वाज मुनिका बनाया हुआ है । जो कुछ दिनों तक पथ्य सहित सेवन करने से उरक्षत और यक्ष्मारोग दोनों को आराम करताहै । खून बन्द होजानेके बाद अथवा कुछ २ खून का छीटा आता भी रहै तो भी इस पाक को पांच छ महीने तक बराबर सेवन करता रहै ।

सेवती का एक हजार फूल, ताजा हो तो निहायत उत्तम है न मिले तो सूखा फूल ले, डेढ़ पाव घी में खूब भूंजै, जब सुर्खी पर आजाय उसे अग्नि पर से उतार लेय और अढ़ाई सेर मिश्री की चासनी बनाय उसी में फूल को मिलाय बाद निम्नलिखित चीजों को कूट कपड़ छानकर उसीमें मिलाय देय । दालचिनी, तेजपात, छोटी लायची, नागकेशर यह सब तीन २ तोला, मुनक्का १८ तोला सहत २४ तोला गुरिच

का सत्व तबाशीर और सफेद जी॰र यह सब डेढ़ २ तोला। यदि उत्तम निहायत शुद्ध रांगे का भस्म अर्थात् बंगेस्वर और सीसे का भस्म याने नागेस्वर मिले ते यह भी एक २ तोला डाल देय किन्तु जिस रोगी के मिजाज में गरमी अधिक हो पेटमें जलन हो उसको दवामें रस न डाले क्योंकि सिवाय हानिके लाभ होना अति दुस्करहै। साफ कपूर एक मासा डालै क्योंकि जिस दवा की मिकदार अधिक है जादा कपूर डाल देने से इतना कडुआ हो जाता है कि रोगी बहुत कठिनतासे खाता है। सब दवाइयोंको एकमें मिला घृत पात्र अथवा अमृतवानमें रख देय। इस का मात्रा ३ मासा से ६ मासा तक है बल के अनुसार दोनों समय खाकर ऊपरसे दूध मिश्री पीनेसे उरक्षत और यक्ष्मा दोनों आराम होते हैं ऐसे तो लिखा है पुराना बुखार, क्षयी खांसी, मन्दाग्नि प्रमेह रात दिन बना रहने वाला ज्वर शिर दर्द प्रदर रक्त सम्बन्धी रोग कोढ़ बावाशीर नेत्र और मुख इन सब रोगों को यह पाक एक मण्डल अर्थात् उनचास दिन में आराम करता है॥

इति उरक्षत रोग सम प्तः॥

अब हम यकृति जिसे डाक्टरीमें लीवर और हिक्मत में कलेजा कहते हैं उसका बयान करते हैं यह मनुष्यके दहिने भाग पसुलियों के नीचे होता है इसमें अक्सर पुराना ज्वर खांसी होनेसे यक्ष्मा और उरक्षत रोग में भी वरम (शोथ) आजाता है और कलेजे पर वरम होनेसे उपरोक्त रोग असाध्य होजाते हैं, सबब यह है कि कलेजे पर वरम होते ही यत्न न करने से शीघ्र उस में मवाद आ जाता है और वही मवाद अथवा उसीमें से जरा २ सा खून कफके साथ मुखसे गिरने लगता है उसी को हकीम लोग सिल की बिमारी कहते हैं। हमारे वैद्य शास्त्र में इसका बयान बहुत कम है सिर्फ इतना लिख दिया है कि जो सीहाकी दवाहै वही यकृत की दवाहै और बंगसेनमें कुछ निदान भी लिखाहै। यथा—

मन्दज्वराग्निःकफपित्तलिङ्गै रुपद्रुतःक्षीणबलोतिपांडुः । सव्यान्यपार्श्वेयकृतप्रदुष्टे, ज्ञेयंयकृद्दाल्युदरं तथैव ॥

शरीर में धीमा ज्वर का बना रहना, भूख का न लगना, कफ पित्त का कोप रहना, बल का घट जाना, शरीर का रंग पीला होजाना तब जानना कि दक्षिण पशुरी के नीचे यकृत बिगड़ गया है अर्थात् इसमें बिमारी हुई है ।

प्लीहोद्दिष्टाःक्रियाःसर्वा यकृतःसम्प्रकल्पयेत् । कार्य्यंश्चदक्षिणेबाहौ तत्रशोणितमोक्षणम् ॥

जो जो क्रियायें तथा औषध प्लीहा अर्थात् पिलही आराम करने की हैं वही सर्व यकृत रोग में कल्पना करना चाहिये और दक्षिण हाथके रक्त मोक्षण याने फस्त खुलवादेवें । फस्त खुलाने की विधि हिक्मतमें भी है, इलाजुलगुरबा में लिखा है । सिल-फेफड़े के घाव को कहते हैं, इस रोगवाले को ऐसा ज्वर आवै जो कभी न उतरै, कभी खांसी से रुधिर भी निकलता है और रोगी दिन २ क्षीण पड़ता जाता है । यद्यपि यह रोग असाध्य है परन्तु इसलिये कि रोगी शीघ्र न मरजावे, बासलीक का फस्तखोले फिर ज्वर और खांसी का यत्न करै । यह रोग जैसा कठिन है वैसाही हमारे पुराने ढांचे के वैद्य उससे अनभिज्ञ भी हैं, बिलकुल नहीं जानते हैं कि कलेजा किस चिड़िया को कहते हैं । अगर रोगी कहै भी कि हमारे पेट में दहिने तरफ दर्द होता है और दहिने करवट लेटने में अधिक खांसी आती है तो आजकल के वैद्य कहैंगे कि तुम्हारे पेट में मल जमगया है ॥

यकृत ।

यकृत यानी जिगर जिस्को अंगरेजी में लीवर कहते हैं मनुष्य के शरीर में सब से बड़ा यंत्र है कि जिस्के बिगड़ जाने से मनुष्य को इस संसार में पादस्थित रखना महा दुष्कर हो जाता है अगर उसे हम मनुष्य का जीवन अथवा प्राण कहैं तो अनुचित न होगा । यह जिगर मनुष्य के दहिने तरफ पसुलियों के नीचे चौड़ाई में ४ इञ्च लम्बाई में १० या ११ इञ्च मोटाई में तखमीनन २ इञ्च का यह यंत्र है, जो तौल में एक सेर नौ छँटाक अथवा एक सेर दश छँटाक है उमर और शरीर की मोटाई अथवा दुबलेपन के हिसाब से छोटा बड़ा भी हो सक्ता है । इस का रंग भूरा अकसर सुरखी या किसी क़दर ज़रदी मायल होता है । और कभी स्याही मायल भी हो जाता है लड़कपन में बैंगनी रंग और मुलायम, बुढ़ापेमें अकसर फीका और पीले रंग का होता है, इस में दो पर्त हैं और दो किनारे हैं । ऊपर का परदा कुबड़ा और सामने को झुका है, नीचे के तरफ आड़ा और पीछे को धूमिल नज़र आता है । यकृत का मुख्य दो काम है पित्त और रुधिर को बनाना बाकी हाल शारीरिक स्थान देखने से मालूम होगा ।

यकृत का निदान ।

यकृत का सूजन अथवा उसमें मवाद पड़ जाना यकृत के छूने से मालूम हो जाता है । दहिने तरफ पसुली के नीचे दबानेसे कड़ा मालूम हो और दबाने से रोगी को कुछ दर्द मालूम हो, दहिने करवट लेटने से रोगी को तकलीफ हो अथवा खांसी अधिक हो और जब यकृत को दबाने से रोगी को फोड़ा सा दूखने का दर्द मालूम हो तो जानना चाहिये कि यकृत में मवाद आगया है ।

यकृत की चिकित्सा ।

चिकित्सक को चाहिये की पुराने ज्वर खांसी में यकृत की परीक्षा

अवश्य करै क्योंकि जब तक कलेजे पर शोथ नहीं होता, खांसी ज्वर को आराम करना कोई कठिन बात नहीं है किन्तु शोथ होनेही से असाध्य हो जाता है । जब देखे कि शोथ नवीन है और रोगी भी बलवान है और उमर १६ वर्ष से अधिक है, शीघ्र दहिने हाथ में फस्त खुलवादेय और निम्नलिखित दवाइयों का लेप सूजन पर लगावे तथा रोगी को खूब पहरेज के साथ रक्खे ।

सुपारी गुलाब का फूल, सफेद चन्दन, चिरायता यह सब चार २ मासे, जौ का मैदा १ तोला कपूर ३ मासा सबों को सिरकेमें खूब महीन पीस दिनमें तीन दफे कलेजे पर लेपकरै और जब चाहै गरम जलसे धो डाला करै यदि फस्त न खोलावे तौ भी इस लेप को लगावै ॥

अगर कलेजे पर सूजन गरमीके वजे से हो, उसकी पहिचान यह है कि यकृत में जलन हो या खजुरी मालूम हो, टोने से गरम लगे तो इस लेप को लगावे कपूर रूमामस्तगी, तेजपात तीन २ मासे गेरूमट्टी, गुल बनपसा गुलाब के फूल सफेद चन्दन, सूखा धनिया, छ छ मासे सबोंको जलमें खूब महीन पीस दिन में तीन बार दफे लेप करै ।

अगर यकृत का सूजन सरदीसे हो उस की पहिचान यह है कि सूजन बड़ा हो छूने में शीतल मालूम हो किन्तु यह परीक्षा कर लेना चाहिये कि पसीना निकलने से तो शीतल नहीं मालूम होता यदि हो तो इस लेप को लगावै ॥

बालछड़, सुगंधवाला और दालचिनी पांच २ मासे, केशर दो मासे सबों को बाबूने के तेल में पीस के दिनमें तीन दफे आहस्ते २ यकृतपर मर्द्दन करै और अधिक बढ़ी हुई बीमारी में किसी सत्वैद्य की भी राय लेवै क्योंकि चिकित्सा का काम बड़ा नाजुक है जरा भी चूकने में रोगी का प्राणान्त हो जाता है । दूसरे यक्ष्मा आदि रोग ऐसे कठिन हैं कि उत्तम दवा से तो अच्छे होतेही नहीं, कहीं अनाड़ी के हाथ में पड़े तो शीघ्रही परलोक यात्रा कर जाते हैं आप लोग सत्य जानिये वर्त्तमान समय में जहां तक हमने परीक्षा लिया है एक हिस्से रोगी रोगसे मरते हैं और दो हिस्से अटकलपच्चू प्रकृति विरुद्ध औषध के व्यवहारसे मरते हैं इसलिये चिकित्सा कर्म बड़े सावधानी से करनी चाहिये ॥

यक्ष्मा आदि रोगोंपर मोतीका सेवन।

और रसों की अपेक्षा मूंगा और मोती यह दो वस्तु अच्छेहैं और गुणकारी भी हैं रसों में बड़ा भारी दोष यह है कि उत्तम रस प्रकृति के अनुसार पड़ा तो अमृत के समान गुण करता है और बिपरीत में बिष के समान मनुष्य को मार डालता है। मोती मूंगे में यह बात नहीं है प्रकृति विरुद्ध होने पर भी अधिक कोप नहीं करते॥

मोती की उत्पत्ति।

शुक्तिःशंखोभजः क्रोडफणीमत्स्यश्चदर्दुरः। वेणुश्चाष्टौसमाख्याता सुज्ञैर्मौक्तिकयोनयः॥

जवाहिरातके जानने वाले विद्वानोंने मोतीकी उत्पत्ति आठ तरह से लिखी है। सीपी से १ शंखसे २ हाथी से (जिसे गजमुक्ता कहते हैं) ३ शुअरसे ४ सर्पसे ५ मछलीसे ६ मेढ़कसे ७ और बांससे ८ और सब मोतियोंकी पहिचान भी शास्त्रोंमें लिखे हैं ग्रन्थ बढ़जाने के भय से नहीं लिखा। जो मोती रङ्गमें फीकी, टेढ़ीमेढ़ी, चिपटी ललाई लिये मछली के आंखके समान, रूखी, ऊंची और नीची ऐसी मोती न पहरना चाहिये और न खाने लायक है।

जो मोती नक्षत्रके समान चमकीली गोल, चिकनी, मोटी, छिद्र रहित, चन्द्रमाके समान श्वेत निर्मल वजन में भारी वही मोती दामी हैं धारण करने तथा खाने लायक है निर्दोष मोतीकी परीक्षा वैद्यकशास्त्रमें इस प्रकार लिखी है।

लवणक्षारक्षोदिने पात्रेगोमूत्रपूरितेक्षिप्तं। मर्दित-
मपिशालितुषैर्यं दविकृतंमौक्तिकंजात्यं॥

एक पात्र में आधसेर गो मूत्र और आधी छंटाक सांभर नोन डाल उसीमें दो पहर मोती को दोला यन्त्र के विधि से लटकाय देय पश्चात् निकाल चावल की भूसी में डाल के मले और पानी से धो डाले यदि मोती का रूपान्तर न हो तो उस मोती को शुद्ध जानना वही मोती खाने लायक है।

मोती शोधन।

मोती को अग्निमें तपाय २ कर सात बेर घीकुमारके रसमें और ७ बार चौलाईके रसमें बुझावे अथवा एकही चीजमें बुझावे तो शुद्ध हो यही मोती मालतीवसन्त में भी डाले,

हकीम लोग मोती को गुलाब या केवड़े के अर्क में सिर्फ ४ पहर घोटायके चूर्णकर लेते हैं और यही रोगी को खिलाते हैं और यही चाल सर्वत्र फैलीहै न कोई परीक्षा लेता है और न कोई शोधन करके भस्म करता है यही कारण है कि वो रोगियों को फायदा नहीं करता।

मोती मारण विधि।

शुद्ध मोती ४ तोला, शुद्ध पारा ६ मासा औरशुद्ध आंवलासार गन्धक ६ मासा पहले गन्धक और पारे को मिलाकर कज्जली करे पश्चात् उसी मोतीमें डाल कर घीकुमार के रसमें खूब महीन घोटे ४ पहर तक बाद गोला बनाय शरावसम्पुट में रख कपर मिट्टी कर गजपुट में फूक देय स्वांग शीतल होनेपर मोती के भस्मको कांचकी [illegible] में रख [illegible] समें

गन्धक और पारा उड़ जाता है इस भस्म का मात्रा २ चावलसे १ रत्ती तक है मोती को लोग सोना माखी की तरह भी फूकते हैं।

मोती भस्म का गुण।

मौक्तिकंसमधुरंसुशीतलं दृष्टिरोगशमनंविषापहं। राजयक्ष्मपरिकोपनाशनं क्षीणवीर्य्यबलपुष्टिवर्द्धनं॥

मोती का भस्म मधुर और शीतल है नेत्र रोग विष रोग और राज यक्ष्मा उरःक्षत आदि रोगों को नाश करता है धातु की कमजोरी और बलकी कमजोरी को दूर करता है।

कफपित्तक्षयध्वंसी कासस्वासाऽग्निमान्द्यजित्।
पुष्टिदंवृष्यमायुष्यं दाहघ्नंमौक्तिकंपरम्॥

कफ पित्त कफक्षयी खांसी स्वास अग्निकी मन्दता को नाश करताहै पुष्टिकर शरीरमें तैयारी लानेवाला तथा उमर को बढ़ाता है।

मूंगा की उत्पत्ति लक्षण।

मूंगे का वृक्ष समुद्रमें लालरंग का होताहै उसी से मूंगा उत्पन्न होता है। पके कुंदुरू फल के समान लाल गोल, चिकना, चमकदार, छिद्र रहित मूंगा अच्छा होता है। वही मूंगा पहरने और खाने लायक होता है और जो मूंगा रंगमें पीतलके समान, अथवा फीके रंगका, टेढ़ा मेढ़ा, बारीक; छिद्र सहित, रूखा और कलौंच रंग का मूंगा अच्छा नहीं होता, ऐसे मूंगे को न पहरना चाहिये और न खाना चाहिये। आज कल के वैद्य लोग बिना शुद्ध किये डाली अथवा मूंगे की जड़को भस्म करके रक्खे

रहते हैं और असिल मूंगे के भस्म के नाम से वेच कर लोगों को ठगते हैं क्योंकि मूंगा और मूंगे की डाली का रंग एकही समान होता है सिर्फ गुण और भावमें फर्कहै अच्छा मूंगा २) तोलेसे कममें नहीं मिलेगा और मूंगे की जड़ ४) सेर अर्थात् तीन पैसा तोला बिकता है। पीसी दवा और मुरदा रोगी को विरलाही लोग पहचान सक्ते हैं, आज के समय में धर्म का डर तो नहीं रहा रोगी चाहे मरे या जिये यहां तो पैसा पैदा करने से काम—इसी तरह लोग सीपी को भस्मकर मोती भस्मके नाम से वेचते हैं, लोगों को नुकसान करने से वैद्यक नाम और भी डूबा जाता है। "मौक्तिकस्य विधिप्रोक्तः प्रवालेपि तथा विधिः"

जो जो विधि मोती शुद्ध करने और फूंकने की हैं वही क्रियायें मूंगे की समझनी चाहिये और यही खाने की भी विधि है।

मूंगा के भस्म का गुण।

प्रवालंमधुरंसाम्लं कफपित्तादिदोषनुत्। वीर्यकान्तिकरंस्त्रीणां धृतेःमंगलदायकं ॥ क्षयेपित्तास्त्रकासघ्नं दीपनंपाचनंलघु। विषभूतादिशमनं विद्रुमंनेत्ररोगहृत् ॥

मूंगा—मधुर, खट्टा, दीपन, पाचन तथा हलका, वीर्य और कांति को बढ़ानेवाला; एवं स्त्रियों के धारण करने से मङ्गल करता है। कफ, पित्त, त्रिदोष, यक्ष्मा, रक्तपित्त, खांसी, विषदोष और उन्मादादि दोषों को दूर करता है॥

इति यकृत रोगः

अथ कास रोगाधिकारः ।

यक्ष्मा रोग समाप्त करनेके बाद अब हम खांसी रोगका प्रकरण उठाते हैं क्योंकि इस प्रसंग में हम उन्हीं रोगों का बयान करना चाहते हैं जो खासकर धातु से सम्बन्ध रखते हैं । खांसी यह रोग भी ऐसा कठिन है, यदि कुछ दिन भी गफलत करै तो इस्से पीछा छुटना कठिन पड़ जाता है । लोग मिसरा कहते हैं (रोग का घर खांसी और लड़ाई का घर हांसी) क्योंकि विना धातु से सम्बन्ध खांसी रह नहीं सक्ती। जुकाम वगैरह से लोगों को खांसी आने लगती है अगर धातु शुद्ध है तो विना दवाके छुट जायगी, किन्तु धातु के विकार सेही खांसी जड़ पासती है अज्ञान लोग धातु पर ध्यान नहीं देते खांसी की दवा गर्म सर्द खिलाते जाते हैं और खांसी आवज्जीवन पीछा नहीं छोड़ती इसलिये हम पाठकगणोंके उपकारार्थ देशकालानुसार कासरोग का निदानादि कारण और चिकित्सा लिखते हैं ।

कांस रोग का आदि कारण ।

धूमोपघाताद्रजसस्तथैवव्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च ।
विमार्गगत्वादतिभोजनस्य वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव ॥
प्राणोह्युदानानुगतःप्रदुष्टः संभिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः । निरेतिवक्त्रात्सहसासदोषो मनीषिभिःकासइति-
प्रदिष्टः ॥

यह श्लोक भरद्वाज संहिता का है मुख और नाक में धुआं लगने से अथवा धूरि गरदा नाक मुखमें हो के ठसका लगने से अथवा कसरत

सते समय गरमी मालूम होना और कडुआ कफ का निकलना यह लक्षण होते हैं ।

कफ की खांसी में मुख में कफ लपटा रहता है, यह मालूम होता है कि गले में कफ भरा है, शिर में दर्द शरीर में भारीपन, भोजन अच्छा नहीं मालूम होना, शरीर में दर्द या शरीर जकड़ी सी मालूम हो, गले में खजुली अथवा शरीर में खजुली मालूम हो और अत्यन्त खांसने से गाढ़ा कफ निकलता है ।

क्षयकास के लक्षण और क्षतकास के यही हैं जो यक्ष्मारोग में और उरक्षत रोगमें लिख आये हैं दुबारा लिखनेका कोई प्रयोजन नहीं, ग्रन्थकारों ने खांसी प्रकरण में क्षयकास अर्थात् यक्ष्मा रोग क्षतकास याने उरक्षत रोग जिसे ऊपर लिख आये पुनः सैनिदान आदि कारणके लिख डालाहै किंतु वास्तव यहीहै ग्रन्थ बढ़जानेके भयसे हमने नहीं लिखा ॥

एक प्रकारकी खांसी कौवा की कमजोरी अर्थात् कौवा लटक जानेसे होती है । कौवा और भी कारणों से लटक जाता है उसमें भी खांसी आने लगतीहै और कमजोरी के वजेसे खांसते २ भी कौवा लटक जाता है और लड़कों का कौवा प्रायः गिरजाता है, उसमें हर समय गला सरसराता रहता है और खांसी आती रहती है, उस रोगी को खांसी जरा भी चैन नहीं लेने देती या मालूम होता है कि गले में कुछ रुका है । कौवे पर ध्यान न देकर लोग खांसीकी दवा देते जातेहैं किंतु खांसी और बढ़ती जाती है, इसके अतिरिक्त रोगों में भी खांसी होर जाती है जैसे–

पाण्डुरोगेतथायक्ष्मे गुल्मेवातिक्षतक्षये । शोफार्शसांप्रतिश्याये चावश्यंकाससम्भवः ॥ बालानांजायते कासो धात्रीवैकल्ययोगितः ॥

पांडु रोग में, यक्ष्मा (आगे लिख चुके हैं) रोग में, गुल्मरोग में, चोटलगने, धातु क्षय में, सूजन रोग में, बवासीरमें और जुकाममें अवश्य खांसी आने लगती है तथा धात्री अर्थात् माता के कुपथ्य से बालकों के भी खांसी आने लगती है।

अथ साध्याऽसाध्य लक्षण।

इत्येपक्षयजःकासः क्षीणानांदेहनाशनः। साध्यो वलवतावास्या द्याप्यस्त्वेवंक्षतोत्थितः॥ नवौकदाचित्सिद्धयोतामपिपादगुणान्विता॥ स्थविराणांजराकासः सर्वोयाप्यःप्रकीर्तितः। त्रीन्पूर्वान् साधयेत्साध्यान् पथ्यैर्याप्यांस्तुयापयेत्॥ पूयाभमरुणंश्यावं हरितंपीतनीलकं। निष्ठीवेच्छ्वासकासार्त्तोनजीवतिहतस्वरः॥

अब कास रोग का साध्य और असाध्य लक्षण लिखते हैं। जो खांसी यक्ष्मासे होतीहै वह तो बड़े बलवानके भी देहको नाशकर डालती है, कदाचित् बलवान पुरुषके अग्न्यादि प्रबलके कारण साध्य हो किन्तु पूरे विश्वास लायक नहीं है। इसी प्रकार उरःक्षत रोगसे भी उत्पन्न खांसी को जानिये, अगर यह दोनों रोग यानें राजयक्ष्मा और उरःक्षत नवीन हों और वैद्यादिक चारों चरण * युक्त हों तो शायद रोग छुट

---

* वैद्यादिक चारों चरण यह है (भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगीपाद चतुष्टयम्। गुणवत्कारणंज्ञेयं विकारव्युपशान्तये॥) (भिषग्) वैद्य जो शास्त्रज्ञ और देश काल का जाननेवाला हो प्रथम पैर है। (द्रव्य) उत्तम औषधी जो प्रकृति के मुवाफिक हो अथवा रोगी धनवान हो वैद्य जिस औ-

जाय, जो वृद्धमनुष्योंके खांसी होती है जिसे जराकास कहते हैं यह भी आपही समझिये जो प्रथम वातादि दोषों करके तीन प्रकारकी खांसी कह आये हैं सो साध्य हैं अर्थात् उत्तम चिकित्सा करनेसे छूट जाती है और याप्य हैं उन्हें यथार्थ पथ्यसे रखना चाहिये। जो खांसी वाला पीव सरीखा, लाल काला हरित, पीला और नीले रंग का कफ थूकता हो श्वास फूलता हो और गला पड़ गया हो ऐसा खांसी वाला बिमार कभी जी नहीं सक्ता॥

जुकाम से उत्पन्न जो खांसी है वह जुकामके शुद्ध करनेसेही आराम हो जाती है, अगर जल्द यत्न न किया जाय तो वह भी असाध्य हो सक्ती है॥

खांसी रोग में पथ्य।

जव तथा गेहूं की रोटी, सांठी तथा पुराने चावल का भात, उरद मूंग और कुरथीकी धुली दाल जिसमें छिलका न हो, परवर, नेनुआ खरबूजा, केला आदि की तरकारी, बथुआ मकोई चौपतिया और कोमल

पथ्य को बनाने अथवा मँगाने की इच्छा प्रगट करे शीघ्र आ जाय यह दूसरा पैर है। रोगी के पास रहने वाला वह भी ऐसा लायक हो कि जो वैद्य बतलाय जाय उस क्रिया में चावल मात्र फरक न पड़े और न रोगी का मुलाहिजा करे कि जो रोगी मांगे वही चीज मँगा के खिला देय यह तीसरा पैर है। और रोगी, रोगी भी कैसा हो (वैद्यभक्तोजितेन्द्रियः) वैद्य में भक्ती हो, हृदय में विश्वास कर लेय कि यह हमको अवश्य आरोग्यकर देयगी और वैद्य जो खाने पीने को बता दे उससे रत्ती मात्र अपनी मन मौजी न करे यह चौथा पैर है यह चारो पैर एकत्रित होने से असाध्य रोग भी साध्य हो के आराम हो जाता है और इनके बिना चिकित्सा कर्म नहीं हो सक्ता है॥

मूलीका साग, खूब मुलायम भांटाका भरता, गौ और बकरीका दूध घी और मलाई अर्थात् दूधके ऊपरकी मोटी साढ़ी (बालाई अथवा दूधके ऊपरकी मोटी मलाई साम को मिश्री मिला के खाना और ऊपरसे पानी न पीना खांसी को बहुत जल्द आराम करता है इसी प्रकार सवेरे माखन मिश्री का खाना भी बहुत फायदा करताहै, खांसी की बिमारी में पुराना घी खिलाना लिखाहै किन्तु इसमें हमारी सम्मति नहींहै क्योंकि पुराने घी से गलेमें जलन होने लगतीहै । सामको भोजनके साथ प्रकृति के अनुसार शराब पीना हुक्का पीना खटाई में बिजौरा नींबू की अथवा कैथेकी चटनी मसालामें सोंठ, अदरख, गोलमिर्च, सफेद जीरा छोटी लायची, लहसुन और पियाज खांसी की बिमारी में जल बहुत साफ और शुद्ध पीना चाहिये कुयें का जल जिसमें बहुत लोग पानी भरतेहैं उसे गरम करके उत्तम रीतिसे छानकर अथवा ताजा पानी पिये दिनमें सोना, शहद चाटना धान का लावा खाना हलके पेट रहना खांसी रोग के लिये पथ्य है ॥

खांसी रोग में अपथ्य ।

दिशा मार्गमें पिचकारी लेना सुंघनी सूंघना घाम और आंच के सामने रहना गरदा गुब्बार और धुयेंमें रहना बहुत रास्ता चलना स्त्री प्रसंग करना कब्ज करने वाली तथा बिदाही अर्थात् जो चीज खानेसे छाती पर जलन होती है और जितने प्रकारके रूखे अन्न हैं जैसे बाजरा आदि इनको न खावे दिशा पेशाब डकार खांसी और छींक इनके बेगों को रोकना मछली, विरुद्धअन्न, खराबजल, खांसी रोग वाला त्याग करे ।

खांसी रोग की चिकित्सा ।

प्रथम हम खांसी रोगकी साधारण दवा लिखते हैं जो सर्व साधारण जन बना सक्ते हैं ॥

विभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितं । स्विन्नमग्नौहरेत्कासं ध्रुवमास्यविधारितं ॥

बहेरे पर घी चुपरके ऊपरसे गौ का गोवर लपेटके आग में पकाय फिर उसको निकाल साफ करके रक्खे जब खांसी आवै एक टुकरा मुख में डाल कर चूसे और पथ्य से रहै तो अवश्य खांसी जाती रहेगी ॥

शठीशृंगीकणाभार्गी गुड़वारिदयासकैः । सतैलैर्वातकासघ्नो लेहोऽयमपराजितः ॥

कचूर, ककराशिंगी, छोटी पीपर भारंगी साफ गुड़, नागर मोथा और जवासा इन सब दवाइयों को कूट कपरछान कर उसमें गुड़ मिला देय, इसका मात्रा २ मासा है, काले तिलका तेलमें सानके दोनों समय अथवा तीन समय चाटनेसे वातज खांसी अर्थात् सूखी खांसी जिसमें बलगम नहीं आता आराम होती है यदि तेल पसन्द न होतो शहदके साथ चाटै किन्तु गुड़ न मिलावै ॥

लोग तेल का नाम सुनतेही चकृत होंगे कि खांसीमें तेल चाटना यह कैसी बातहै । वातज खांसी जब पुरानी होजाती है बिना तेल घी पिये आराम नहीं होती, शिव प्रसाद् नामक एक कायस्थ जिसकी उमर चौबीस पचीस बरसकीथी तीन बरससे उसे खांसीकी बिमारी रही कोई हकीम वैद्य डाक्टर न छूटाहोगा उसने सबोंकी दवाइयांकी किसीके दवासे फायदा न पहुंचा अन्तमें हमारे पास आया हमने भी चार महीने तक सैकड़ों तरहकी दवा खिलाई किसी से कुछ फायदा न पहुंचा अन्ततोगत्वा हमने पिप्पल्यादिघृत बनाके पिलाना शुरूकिया २ महीनेमें बिलकुल खांसी जाती रही चार महीने तक बराबर घी पिलानेसे उसकी दूनी शरीर होगई जिसे चार बरस हुये आरोग्य है ॥

यातज खांसीमें अलसी का तेल पीना बहुत फायदा करताहै किन्तु लोगोंसे तेल पिया नहीं जाता तेल पीने वालेको दूध नहीं खाना चाहिये ॥

हकीमी काढ़ा।

जो यातज खांसीको निस्सन्देह फायदा करताहै। गुलबनपसा ६ मासा हन्सराज ६ मासा मुलेठी ३ मासा खतमी का बीज ३ मासा अलसी ३ मासा उन्नाब ३ दाना सबोंको अधकचराकर मिट्टीके बर्तनमें एकपाव पानी में पकावै जब डेढ़ छंटाक पानी रह जाय मल छानकर ३ मासा मिश्री और तीन मासा शहद डालके पी जावे इसी प्रकार दोनों समय पीनेसे १५ दिनमें खांसी जाती रहैगी अथवा जबतक खांसी न आराम हो पीता जावै ॥

यातज खांसी वालेको शाम को बलाई मिश्री अथवा दूधके ऊपर की मोटी साढ़ी मिश्री मिलाकर खानेसे बहुत फायदा करता है जैसे सब प्रकारके पुरानी खांसी रोगमें माखन मिश्री ।

रोज दोनों समय गुदा पर किसी प्रकारका तेल हो मलना खांसी रोगमें फायदा करता है ॥

केलेके पक्की छीमी में आधी पीपर अथवा पांच चार दाना गोल मिर्च गाड़ कर ओसमें रखदेय और सबेरे छील कर पहले पीपर को खाके ऊपरसे छीमी को खाजाय या पीपर को खाय एक मनुष्य बल के अनुसार उसी तरह दो तीन छीमी तक खा सक्ता है । यह योग पित्त खांसी को भी आराम करता है ॥

पित्त कास चिकित्सा ।

द्राक्षामधुकखर्जूरं पिप्पलीमरिचान्वितं । पित्तकास हरंह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसर्पिषा ॥

बीज रहित मुनक्का मुलेठी और बीज-रहित छोहारा तीनों चीजों को समान भाग २ तोलाले आध पाव पानीमें पकावै जब आधी छटांक जल रहजाय खूब मलके छान लेय छोटी पीपर आधी और गोल मिर्च ५ दाना महीन पीस उसीमें मिलाकर चाटनेसे पित्तकी खांसी आराम होती है। इसी प्रकार दोनों समय चाटना चाहिये दवा चाटकर ऊपर से पानी न पिये पित्तकी खांसी में मीठी चीजें खाना फायदा करता है यदि पित्त अधिक बढ़ा हो तो मुलेठी का काढ़ा पिलाके वमन करा दे जिससे पित्त सब निकल जाय और मुन्जिस देके मुलायम रेचन द्वारा दो चार दस्त करादे तो औरभी उत्तम हो ॥

वासकस्वरसःपेयो मधुयुक्तोहिताशिना । पित्तश्लेष्मक्षतेकासे रक्तपित्तेविशेषतः ॥

पित्त कफ जनित खांसीवाला और रक्त पित्तवाला अगर दोनों समय रूसे की पत्ती का रस २ तोला, शहद ६ मासा दोनों को मिला के चाटै और खूब पथ्य से रहै तो आरोग्य हो। उसी प्रकार दिन में दो या तीन दफे चाटना चाहिये। यह बात चिकित्सक को हर समय ध्यान में रखना चाहिये कोई किस्म की दवा किसी प्रकृति के लिये क्यों न हो, रोगी से हमेशा पूछता रहै कि तुम्हें दवा गरमी तो नहीं करती अगर रोगी कहै कि यह दवा हम को गरमी करती है अर्थात् गला सूखता है और पेट में जलन होती है तो उस दवा का देना फौरन बन्द कर देय क्योंकि जो दवा रोगी को गरमी करैगी उस दवा से फायदा नहीं होगा।

कफ जनित खांसी की चिकित्सा ।

वलिनंवमनेनादौ शोधितंकफकासिनं । यवान्नैः कटुरूक्षोष्णैःकफघ्नैश्चाप्युपाचरेत् ॥ स्वरसंशृंगवेरस्य माक्षिकेणसमन्वितं । पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्याय-कफापहं ॥

कफकास वाला अगर बलवान हो तो उसको प्रथम लवण द्वारा वमन कराय के कफ को निकाल देय और खाने को जवका भात अथवा जवे की रोटी, कडुआ, रूखा और कुछ गरम पदार्थ जो कफ का नाशक है खानेको देय । अदरख का ताजा रस दो तोला और शहद ६ मासा दोनोंको एकमें मिला के पिलावे इसी प्रकार दोनों समय पिलाने से और पथ्य सहित रोगी को रखने से; श्वास, खांसी, जुकाम और कफ का नाश होता है ॥

मनःशिलालिप्तदलं वदर्याउपशोषितं । सक्षीरंधूम-पानंच महाकासनिबर्हणं ॥

शुद्ध मैनशिल को पानी में पीस के बेर के पत्तों पर लेप कर छाया में सुखाय, चिलिम में भर उसका धुआं पीके ऊपर से गौ का दूध मिश्री मिला कर पीने से कफ जनित कास रोग आराम होता है। अगर इसके पीने से शिर में घुमरी या शिर में दर्द अथवा जी मचलावै तो न पीवे । या बहुत थोड़ा २ पीने का अभ्यास करै । इसी प्रकार छोटी हर्रै को चिलिम में पीकर ऊपर से दूध मिश्री पीने से और दिन में कई दफे विहीदाने का लुआब और मिश्री पीने से सब प्रकार की खांसी आराम होती है ।

नजला के खांसी की दवा।

अगर नजला पुराना हो गया हो और खांसी पीछा न छोड़ती हो तो जातीफलादि चूर्ण जो पञ्चम खण्ड के ७७ पेज में लिख आये हैं दोनों समय शहद के साथ अथवा सरबत उन्नाव या सरबत गुलबनपसा के साथ चाट कर ऊपर से मिश्री सहित उष्ण दूध पिये या कुछ दिनों तक मोती का सेवन करे, और खूब पथ्य से रहे क्योंकि नजले की खांसी मनुष्य का पीछा बहुत दिक्कत से छोड़ती है खांसी अधिक उमर में जब नजले से खांसी आने लगती है ऐसही किसीको छोड़तीहै। ऐसी अवस्था में लोग अफीम खाने लगते हैं और सिवाय अफीम के दूसरी दवा है भी नहीं जब देखे कि रोगी की उमर चालीस, पचास से अधिक है और अनेक दवा दे के थक गये खांसी पीछा नहीं छोड़ती उस समय आ० द० खण्ड के पेज में जो अफीम बनाने की क्रियायें लिखी हैं तैय्यार कर के बहुत कम मात्रा रोगी को देना आरंभ करे और दूध अधिक खिलावे, अगर रोगी पथ्य से रहेगा तो अवश्य खांसी की बिमारी जाती रहेगी और थोड़ेही दिनों में रोगी रिष्ट पुष्ट हो जायगा।

अगर थोड़ेही दिनों की खांसी हो चाहे नजला भी जारी हो निम्नलिखित दवा को कुछ दिनों तक पथ्य सहित खाने से निस्सन्देह फायदा होगा।

बंसलोचन १ तोला, छोटीलायची १ तोला, गुर्च का सत १ तोला, तीखुर ६ मासा, गोंद बबूल का ६ मासा, छोटी पीपर ६ मासा, दालचीनी ३ मासा रूमीमस्तगी ३ मासा, सब को महीन पीस चूर्ण करलेय इसका मात्रा १॥ मासा से ३ मासा तकहै शहदके साथ अथवा उक्त सरबतों के साथ दोनों समय चाटकर ऊपर से यह जुशांदा को पिये। गुलबनपसा ६ मासा, उन्नाव ४ दाना, मुलेठी ३ मासा और मिश्री ६ मासा चारों चीजों को पावभर पानी में पकावे जब आधपाव रह जाय मल छान कर पी जावे, कुछ दिनों तक बराबर इस दवा को सेवन करने से नजले से उत्पन्न खांसी जाती रहती है।

बहेड़ा का बक्कल १ तोला, बहेरा का बक्कल २ तोला, सूखा आवला बीज रहित ४ तोला छोटी पीपर २ तोला सबों को महीन चूर्ण करलेय इस चूर्ण को अन्दाज माफिक दो समय अथवा तीन समय सहत के साथ चाटने से खांसी, श्वास और ज्वर का नाश होता है। यह चूर्ण दस्त का लानेवाला और अग्नि को जगाता है।

मरिचादि बटी।

मरिचंकर्षमात्रंस्यात्पिप्पलीकर्षसंमिता। अर्द्धकर्षो यवक्षारः कर्षयुग्मंचदाड़िमम्॥ एतच्चूर्णीकृतंयुंज्याद-ष्टकर्षगुड़ेनहि। शाणप्रमाणगुटिकां कृत्वावक्त्रेविधार-येत्॥ अस्याःप्रभावात्सर्वेऽपि कासायांत्येवसंक्षयम्॥

मिरच १ तोला छोटी पीपर १ तोला, जवाखार आधा तोला, अनारदाना दो तोला इन सब दवाइयों को चूरण आठ तोले साफ गुड़ में सान चार २ मासे अथवा दो दो मासे की गोली बनाय ले, जब खांसी आवै एक गोली मुख में डाल कर चूसे, इस गोली के चूसने से सब प्रकारकी खांसी नाश को प्राप्त होती है अथवा खदिरादि बटी जो आ० द० में लिख चुके हैं उसको भी चूसने से खांसी जाती रहती है।

बब्बुलारिष्ट।

तुलाद्वयंचबब्बूल्यंश्चतुर्द्रोणेजलेपचेत्। द्रोणशेषे रसेशीते गुड़स्यत्रितुलांक्षिपेत्॥ धातकींषोड़शपलां कृष्णांचद्विपलांतथा। जातीफलानिकंकोल मेलाल-

कृपत्रकेशरम् ॥ लवंगंमरिचंचैव पलिकान्युपकल्पयेत् । मासंभांडेस्थितस्त्वेष बब्बुलारिष्टकोजयेत् ॥ क्षयकुष्ट-मतीसार प्रमेहस्वासकासनुत् ॥

यह बब्बुलारिष्टशारङ्गधरकाहै यहमैंयारका परीक्षितहै, क्षईसे जोखांसी है अथवा धातुके सबब से यदि खांसी आतीहो तो अवश्य फायदा होगा। बब्बूलवृक्ष की अंतरछाल ८ सेर ले अधकचराकर अठगुने जलमें पकावे जब चौथाईजल रहजाय शीतलकर उसी में १२ सेर साफ गुड़ डाल देय धवका फूल १ सेर छोटीपीपर ८ तोला, जायफल कंकोल छोटीलायची दालचिनी तेजपात नागकेशर लौंग और मिर्चे ये सब चार २ तोले इन सबोंको एक मट्टी के चिकने घड़ेमें डाल परई और मृत्तिका से मुख बन्दकर १ महीना पर्य्यन्त खुले स्थानमें जहां दिनमें धूप लगै रातमें ओस में रक्खे १ महीने के बाद उसे छानकर बोतलमें भरदेय इसका मात्रा ६ माशासे दो तोला है दिनमें दो दफे अथवा तीन दफे पीनेसे कफक्षईसे खांसी कुष्टअतीसार प्रमेह श्वास और अनेक प्रकारकी खांसी आराम होती है किन्तु खास कर प्रमेहसे अथवा यक्ष्मासे उत्पन्न खांसीको नाश करता है॥

अथ द्राक्षारिष्ट ।

द्राक्षातुलार्द्धंद्विद्रोण जलस्यविपचेत्सुधीः । पादशे-षेकषायेच पूतशीतेविनिःक्षिपेत् ॥ गुड़स्यद्वितुलांतत्र-त्वगेलापत्रकेशरम् । प्रियंगुंमरिचंकृष्णां विडंगंचेतिचू-र्णयेत् ॥ पृथक्पलोन्मितैर्भागैस्ततोभांडेनिधापयेत् । स्थापयित्वाततोमासं ततोजातरसंपिबेत् ॥ उरःक्षतं-

क्षयंहंति कासश्वासगलामयान् । द्राक्षारिष्टोह्यःप्रोक्तो बलकृन्मलशोधनाः ॥

मुनक्का बीज रहित २ सेर २० सेर पानीमें बुद्धिमान् धीमी आंचसे पकावै, जब चौथाई जल बाकी रहै तब शीतल कर छान लेय । इसमें गुड़ ८ सेर लिखाहै लेकिन साफ गुड़ ४ सेर डाले, दालचिनी छोटीए लायची तेजपात नागकेशर, प्रियंगुफूल, गोलमिर्च, छोटीपीपर और वा यबिरंग यह सब चार २ तोले चूर्णकर डाल पूर्ववत् मृतिका पात्रमें एक महीना पर्य्यन्त धर रक्खे पश्चात् छानकर बोतलमें भर देय, इसका भी मात्रा ६ मासासे दो तोले पर्यन्तहै । इस द्राक्षारिष्टके पीनेसे उरःक्षत और क्षयीसे उत्पन्न खांसी श्वास, गले का दर्द गला सूज आना या बैठ जाना आदि रोग नाश होते हैं । यह द्राक्षारिष्ट बलको बढ़ाता है और मल को शुद्ध करता है ॥

भांग्र्यादि घृतं वात कासाधिकारे ।

भार्गीकल्कैर्घृतञ्चाथ पचेद्धिचतुर्गणे । भार्गीरसं द्विगुणितं वातकासहरंपरम् ॥

एक पाव भारंगी यदि ताजी मिले तो अति उत्तमहै नचेत् सूखी भारंगी एक पावले कुचलकर रातको पानीमें भिजादे सबेरे सिलपर पीस लुगदीकर एक कढ़ाई (जिसमें रांगेकी कलई हो) उसमें एकसेर घी और घीसे चौगुना दही का पानी और भारंगीकी लुगदी तीनोंको एकत्रितकर धीमी आंच से पकावै ऊपरसे पुनः भारंगी का दूना रस डाले । यहांभी उसी तरह समझिये यदि ताजी मिले तो कुचल कर रस निकाल लेय नचेत् सूखी भारंगी आधसेर ले कुचलकर ३६ सेर जलमें रातको भिजावे सबेरे धीमी

पिप्पली घृत।

यह घृत बनाने में बहुत सहज है और सब प्रकार के नई पुरानी खांसी को आराम करता है, यह निहायत परीक्षित है। छोटी पीपर एक पाव बकरी के दूध में पीस कर लुगदी बनालेय, गोघृत]२॥ ढाई सेर बकरी का दूध १० सेर तीनों को कढ़ाई में चढ़ाय धीमी आंच से पचाय कर घृत तैय्यार करलेय, इस घृत के सेवन से सब प्रकार की खांसी आराम होती है। अगर पचजाय तो रोगी इस घृत को चार तोले तकपी सक्ता है। इस बातको हम फिर भी कहते हैं कि घी के ऊपर पानी धोखे से भी न पिये पथ्य वही है जो ऊपर लिख आये हैं।

पारद की कजली।

कई रोगियोंके आराम होनेसे सिद्ध हुआ है कि जिनकी अवस्था अधिक है और बहुत दिनोंसे खांसी की बिमारी घेरे है तथा शीतल पदार्थों के सेवन से या शीत स्थान में रहनेसे खांसी अधिक होजाती है। जिनके कफ अधिक गिरता है लेकिन भीतर दाह गरमी नहीं मालूम होती है गरम चीजोंके खानेसे फ़ायदा मालुम हो उन रोगीके लिये पारदकी कजली अमृत है, जिन्हें जरूरत हो और वे न बना सकें तो किसी वैद्य से बनवाके रोगीको खिलावें और रसोंकी अपेक्षा यह पारदकी कजली निहायत उत्तम है। इसके बनानेकी बिधि यह है॥

कलांशंव्योपसंयुक्तं शुद्धगंधंविमर्दयेत् । अरत्निमात्रे वस्त्रेताद्विप्रकीर्यविवर्जयेत् ॥ सूत्रेणवेष्टयित्वाच यामंतैलेनिमज्जयेत् । धृत्वासंदशतोवर्तिं मध्येप्रज्वालयेच्चतां ॥ द्रुतोनिपतितोगंधो निर्दोषःकांचभाजने । तां-

द्रुतिंप्रक्षिपेत्पात्रे नागवल्यास्त्रिबिन्दुकान् ॥ चलेनप्रमितंशुद्धं सूतेन्द्रंचविमर्दयेत् । कासश्वासंचशूलानिगृहणीयादपिदुर्धरं ॥ आमंविशोपयत्याशु लघुत्वंप्रकरोतिच ॥

शुद्ध आंवलासार गन्धक १६ तोला लेकर उसमें एक तोला (व्योष) सोंठ पीपर और मिर्च मिलाके खूब महीन खरलकरै पश्चात् सवाहाथ सफेद कपड़ा ले उसी पर गन्धकको फैलाय देय और लपेटकर बत्ती बनावै और डोरेसे खूब लपेट देय ताकि दवा न गिरने पावै पश्चात् उसी बत्तीको पहरभर काले तिलके तेलमें भिजा रक्खे पीछे एक तरफसे चीमटासे पकड़ दूसरी तरफसे जलावै और बत्तीके नीचे एक कटोरा कांचका रखदे उसमें जो तैल टपकके गिरे उसे लेकर शीशीमें धरै जितना वह तैल हो उतनाही अथवा उसका आधा संस्कार किया हुआ पारा अथवा शुद्ध सिंगरफ का निकाला हुआ पारे को ले काला खरल जिसमें पत्थल न छूटताहो अथवा चीनी के खरलमें डाल जितने पहरमें सुन्दर कजली हो जाय बराबर घोंटता रहै। जब देखे कि निश्चन्द्र कजली होगई है कागदार शीशी में रखदे। इस कजली का मात्रा ४ चावलसे दो रत्ती तक है। इस कजली को दोनों समय अदरकके साथ चाटनेसे खांसी श्वास और शूलरोग असाध्य हो तो भी आराम होते हैं तथा आमरोग को दूरकर यह कजली शरीरको हलकी करती है।

इस कजलीके खाने वाला बहुत नमकीन पदार्थ खट्टे पदार्थ सागपात तैलमिर्चा आचार दही आदि न खावै स्त्री प्रसंग न करै रास्ता न चलै और विषकारी इन सब वस्तुओंको त्याग करै॥

शृंगाराभ्रकम् कासाधिकारे।

जिस रोगीकी अवस्था ४० वर्षसे अधिक है और मिजाज शीतल है

अर्थात् गर्मी चीजों से फायदा होता है उनके लिये यह अभ्रक अत्यन्त लाभ दायक है ॥

शुद्ध कृष्णा अभ्रक भस्म हजार पांच का अथवा सौ आंचका ४ तोला; कपूर, जायफल, सुगन्धवाला गज पीपल तेजपात लौंग जटामासी तालीसपत्र दालचिनी, नागकेसर, कूट, और धवका फूल, यह सब चार २ मासे बीजरहित हड़, बहेरा, आवला, सोंठ, पीपल, मिर्च प्रत्येक छ छ मासे छोटीलायचीके दाने और जायफल आठ ८ मासे सबों को खूब महीन चूर्णकर पश्चात् शुद्ध आंवलासारगंधक ८ मासे शुद्ध पारा ४ मासे दोनों को ८ पहर घोट कजली कर उसी में मिला पश्चात् सबोंको जल में घोट चनेके बराबर गोली बनाय छाया में सुखाय लेय इसका खोराक एक गोलीसे ४ गोली तक है इस गोली को शाम सबेरे दोनों समय खाकर ऊपर से पान और अदरख का रस एक तोला अथवा दो तोला पिये अन्त में थोड़ा जल पिये इस गोली के सेवन से पुरानी खांसी श्वास उदर रोग आदि कठिन बिमारियां आराम होती हैं। वैद्यक में तो इस बटी की बहुत कुछ तारीफ लिखी है जैसे—

हन्यादामाशयोत्थान् कफपवनकृतान् पित्तरोगान्
शेषान्। बल्योवृष्यश्चयोगस्तरुणतरकरः सर्वरोगेप्र-
शस्तः ॥ पथ्यंमांसैश्चयूपैर्घृत परिलुलितैर्गव्यदुग्धैश्च
भूयः। भोज्यंयोज्यंयथेष्टं ललितललनया दीयमानं-
मुदायत् ॥ शृंगाराभ्रेण कामीयुवतिजनशत भोगयो-
गादतुष्टः। वर्ज्यंशाकाम्लमादौदिन कतिपयचित्स्वेच्छ-
याभोज्यमन्यत् ॥ दीर्घायुःकाममूर्त्तिर्गतिवलिपलितो
मानवोऽस्यप्रसादात् ॥

आमाशयके विकारसे उठे जितने रोग हैं, कफ, वात और पित्त करके जितने रोगहैं वे सब इस बटीसे नाश होतेहैं। बल पुरुषार्थबढ़ा और बुढ़ेसे जवान बनाने वाली यही बटी है। इस दवा को सब रोगी में देना उत्तम है। इस पर मांसका यूष, गौ का घृत और दूध पथ्य है इसके अतिरिक्त और भी प्रकृतिके अनुसार उत्तम भोजन किसी रूपवतीस्त्री से बनवाय कर खावे। इस गोलीके खाने वाला पुरुष सौ स्त्रियों के साथ सहवास करने से भी संतुष्ट नहीं होता। इसका सेवन करने वाला शाक और खटाई कुछ दिनों के लिये त्याग देवे और सब प्रकृतिके अनुसार भोजन करे तो वह पुरुष दीर्घायु हो और कामदेवके समान दिव्य मूर्त्तिमान हो और उसके बाल कभी सफेद न हों इत्यादि तारीफ लिखीहै किंतु इतना तो हम अवश्य कह सक्ते हैं कि शीत मिजाज वालेको पुरानीखांसी में यह बटी निस्सन्देह फायदा करती है॥

छाती पर कफका सूखना।

खांसी रोगवाले के छाती पर कभी२गरम औषधों से अथवा गरम चीजोंके भोजन करने से कफ सूख कर जम जाता है कि जिस्से रोगी को खांसने में तकलीफ होती है छाती पर कफ का घरघर शब्द होता है और कफ मुसकिल से निकलता है और छातीसे कफ छुटते समय छाती में दर्द होता है ऐसी अवस्था में उस रोगीको कोई गरम औषध अथवा गरम वस्तु खाने को न दे जब तक कि बलगम छाती से छुट कर मुख अथवा दस्त से बिलकुल निकल न जाय क्योंकि ऐसे समय में थोड़ा भी गरम दवा खिलाने से रोगी यमालय का रास्ता लेता है। अज्ञान वैद्य लोग ऐसे रोगी को भी प्रायः रस खिलाकर मार डालते हैं। ऐसी अवस्था में चाहिये कि निम्नलिखित दवाइयों से बलगम को साफ करे।

लवणक्षार।

सेंधानोन आधपाव सांभर नोन आधपाव खुतिहा नोन आधपाव

अजवाइन आधपाव सुहागा आधपाव इन सब चीजों को १ मिट्टी के बर्तन में भर कपरौटी कर सुखाय हाथभरका गढ़ा खोद बीचमें रखदिया और चारों तरफसे कण्डा देकर फूंक दे शीतल होने पर उसमेंसे निकाल महीन चूर्ण कर बोतल में रख दे और दिनमें कई दफे चार २ रत्ती खावे इस्से बलगम ढीला होकर निकल जायगा यदि एक दो दिन इस औषध के सेवन से लाभ न हो तो फौरन दवाको छोड़कर निम्नलिखित औषधका सेवन करे। पावभर गेहूंकी भूसी लेकर आधसेर पानीमें १ घंटे तकभिजा के मलकर छान ले उसी पानीमें छिला हुआ दश बदाम और आधा तोला बबूल का गोंद और १ तोला मिश्री डालकर धीमी आंच से पकावे जब आधा पानी रहजाय तो उसी पानी को एक २ चम्मच कई दफे करके पीवे इसी प्रकार दोनों समय इस हरीरा को बना कर दो तीन दिन तक पीने से छाती पर का कफ छुटकर निकल जाताहै अगर इससे भी लाभ न हो तो १ तोला अलसी और १ तोला मिश्री दोनों को डेढ़पाव पानीमें पकाय छान छानकर एक २ चम्मच दिनमें कई दफे करके पिलावे जब तक कफ छाती से बिलकुल साफ न हो जाय रोज २ इसी तरह तैय्यार करके पिलाता रहे।

कौवा लटकने से खांसी।

अगर कौवा लटकनेसे खांसी हो उसका लक्षण यहहै कि हर समय गलेमें खांसीकी खुसखुसी लगी रहती है और यह मालूम होता है कि जैसे गलेमें कोई चीज अटकी हो। ऐसी अवस्थामें सिवाय कौवा उठाने के अन्य उपाय नहीं हैं।

माजूफल, बंशलोचन, छोटी लायची के दाने तीनों को बराबर ले महीन चूर्णकर उसीसे कौवे को उठावे अथवा टिंचरस्टील याने लोहे का अर्क, अंगरेजी दवाखानों में मिलता है फोहेमें बोरकर कौवे में लगाने

से भी लटका हुआ कौवा उठ जाताहै सैकड़ों बार परीक्षा लियागया है किन्तु यह ब्राह्मणादिकोंके लिये उत्तम नहीं है इससे कि वह स्पिरिट अर्थात् शराबसे बनता है ।

एतवारके दिन कौव्वेकी बीठ लेकर कपड़ेमें बांध बालकों के गलेमें बांधने से बालकों का कौवा उठ जाता है, तथा दो चार दिन इसी तरह कौवा उठाने से भी उठजाता है, प्रायः स्त्रियां उठा देती हैं ।

अथ श्वासाधिकार ।

खांसी रोग के बाद अब हम श्वास रोग का प्रकरण उठाते हैं । खांसीके बाद श्वास रोगके कथन का मुख्य प्रयोजन यही है कि कुछ दिनों तक खांसी बनी रहनेही से स्वास रोग होजाता है, दूसरे श्वासके कारण भी सब वहीहैं जो यक्ष्माके हैं । तीसरे धातुशुद्ध और अवस्था पूर्ण रहनेसे श्वास रोग नहीं होता, धातुकी दौर्बल्यता रहने पर, किसी कर्म अथवा खाद्याखाद्य द्वारा दिलपर खुश्की पहुंचनेहीसे रोग होजाता है । पाठकगण, श्वास रोग प्रायः वृद्ध पुरुषों में जिनकी धातु स्वयं कम हो जाती है, और गांजा, चरस चण्डू आदि नशाओं के खाने वालोंमें कि जिनकी धातु, अत्यन्त हृदयमें खुश्की पहुंचनेसे सूख जातीहै, देखते होंगे। आयुर्वेदके किसी २ ग्रन्थोंमें खांसी रोगके पश्चात् हिचकी रोगका बयान करके तब श्वास रोगका प्रकरण उठायाहै उसका कारण यहहै कि हिचकी और श्वास रोगका आदिकारण एक माना है और दोनों रोगों को असाध्य कहा है । लिखा भी है---

यैरेवकारणैर्हिक्का बहुभिःसंप्रवर्त्तते । तैरेवकारणैःश्वासो घोरोभवतिदेहिनां ॥ विहायप्रकृतिंवायुः प्राणोऽथकफसंयुतः । श्वासयत्यूर्ध्वगोभूत्वा तंश्वासंपरिचक्षते ॥

यह सुश्रुतका वचन है-जिन २ कारणों करके मनुष्यको हिक्का अर्थात् हिचकी रोग होता है । उन्हीं २ कारणों करके मनुष्यको श्वास रोग भी होता है । हृदयस्थ प्राण वायु जिस अवस्थामें कफ युक्त होवे अपने स्वभाव को याने जो उसका निजकाम है उसे परित्याग करके ऊर्द्धगामी होता है अर्थात् ऊपरको चढ़ता है, बस उसको बाहर निकालनेके लिये जो मनुष्य को वारम्बार मुख खोलना मूंदना पड़ता है उससे एक प्रकारकी हांफी आने लगती है उसी को वैद्य लोग श्वास (दमा) रोग कहते हैं । यद्यपि श्वास रोग एकही प्रकार का है किंतु निदानादिकारणों करके पांच प्रकार का कहागया है । यथा—

महोर्ध्वछिन्नतमक क्षुद्रभेदैश्चपंचधा । भिद्यतेस-महाव्याधिः श्वासएकोविशेषतः ॥

महाश्वास १ ऊर्ध्व श्वास २ छिन्नश्वास ३ तमकश्वास ४ और क्षुद्रश्वास ५ यह पांचश्वास महा व्याधि हैं किंतु असलमें है एकही श्वास । इसमें ३ श्वास असाध्य १ कष्ट साध्य और एक साध्य है सो लिखा भी है—

क्षुद्रःसाध्यतमस्तेषां तमकःकृच्छ्रउच्यते । त्रयःश्वा-सान्नसिद्ध्यन्ति तमकोदुर्बलस्यच ॥

जब तक श्वासकी और भी समस्त लक्षण प्रत्यक्ष नहीं होते रोग साध्य रहता है और वह साधारण रोग समझा जाताहै किंतु सब लक्षण उपस्थित होतेही साध्याऽसाध्य का निर्णय होजाता है जैसे क्षुद्र श्वास साध्य और तमक श्वास कष्ट साध्य और बाकी तीन श्वास रोग असाध्य हैं ॥

पूर्वरूप और संप्राप्ति ।

प्राग्रूपंतस्यहृत्पीड़ा शूलमाध्मानमेवच । आनाहो-वक्त्रवैरस्यं शंखनिस्तोदएवच ॥

यदास्रोतांसिसंरुध्य मारुतःकफपूर्वकः। बिष्वग्ब्रजतिसंरुद्धस्तदा श्वासान्करोतिसः॥

प्रथम २ जब मनुष्य को श्वासरोग होनेवाला होता है तो निम्नलिखित लक्षण उपस्थित होते हैं जैसे—हृदय में कुछ दर्द या भारीपन मालूम हो जैसे बलगम जमा हो, पेट अथवा शरीरमें दर्द, पेटका फूलना अथवा यह मालूम हो कि पेट भोजन से खूब भरा है अथवा पेट के नसें तन जांय, मुख का स्वाद फीका और, कनपटियों में दर्द का होना यह श्वास होने के पहिले होता है, इसी को प्राग् रूप कहते हैं।

श्वास की संप्राप्ति अर्थात् श्वास रोग शरीर के भीतर कैसे अपना घर करता है उसे लिखते हैं, प्रथम प्राणवायु कफके साथ मिलजाता है पश्चात् उसी की सहायता से अन्न और जल के बहनेवाली नाड़ियों को रोकलेता है और आप उस कफ कर के रुके भये नाड़ियों में चारो तर्फ फिर कर उर्द्धगामी हो के निकल ने लगता है अर्थात् श्वास को उत्पन्न करता है इसी का नाम संप्राप्ति है।

महा श्वास का लक्षण।

निम्नलिखित पांचों श्वासों के लक्षण श्लोकों के द्वारा न दिखला के सिर्फ भाषा में लिखे देते हैं। उसका कारण यह है कि एक २ लक्षणों को कई २ श्लोकों से पूरित किया है और इतने श्लोक किसी को उपस्थित रह नहीं सक्ते क्योंकि प्रथम तो श्लोकोंको रटन कर कंठाग्रकरना, दूसरे सर्वदा उपस्थित रहने के लिये पाठ किया करना बहुतही कठिन है, सिर्फ आशय हृदस्थ रहना चाहिये सो भाषा के द्वारा बाखूबी हो सक्ता है इसलिये हम श्लोकों को न लिख कर सिर्फ भाषामें लिखते हैं।

जिस मनुष्य का प्राणवायु शब्द करता हुआ ऊर्ध्वगति को प्राप्त

होता है उस श्वास से मनुष्य बहुतही दुखी होता है, वह श्वास कैसा चलता हुआ मालूम होता है जैसे कुछ दिनों का गौओं के साथ समागम न करनेवाला मस्त सांड श्वासें लेता है, वैसाही, महाश्वास वाले रोगी का श्वास फूलता है, उस अवस्था में उस रोगी का पठित शास्त्र, विज्ञान शास्त्र आदि सब विस्मृति हो जाते हैं, और नेत्र और मुख फैल जाता है, दिशा पेशाब कम उतरता है, स्वरभंग मन की उदासी और श्वास शब्द दूर से सुन पड़ने लगता है। यह महाश्वास के लक्षण हैं यह श्वासवाला रोगी बहुत कम जीता है।

ऊर्ध्वश्वास के लक्षण।

यह श्वासवाला रोगी ऊपर को लम्बी श्वास लेता है और वह श्वास नीचे को नहीं खींच सक्ता अर्थात् पेट में वायु नहीं समाता है कारण यह है कि ऊर्ध्वश्वास वायुके अधिक कोपित होने से होता है। उस रोगी के नेत्र स्थिर नहीं रहते ऊपर को इधर उधर देखता है, शरीर में दर्द, मुख का सूखना, बेचैनी अधिक होती है, और जब श्वास नीचे को रुक जाती है तब रोगी मूर्छित हो जाता है, ऐसाही बारम्बार होने से वह रोगी उसी श्वास से प्राण को परित्याग करता है।

छिन्नश्वास के लक्षण।

जो मनुष्य इन्द्रियों से शिथिल हो रहि रहि के स्वास लेताहै और हृदयादिक मर्मस्थानोंमें काटने या छेदने सरीखा दर्द हो श्वास लेते में, जिस दर्द के वजे से श्वास न लिया जाय, पेटका फूलना, पसीनाआना बदहोशी का होना, नाभी के नीचे बस्ति अर्थात् पेडू में अति दाह, नेत्रों में पानी सा भरा रहना, शरीर शिथिल तथा क्षीण होना, एक नेत्र लाल, मुख का सूखना, चेष्टा का बदल जाना कुछ आन तान बकना इन सब लक्षणों के संयुक्त छिन्न श्वास वाला रोगी व्याकुल हो के शीघ्र ही प्राण बिसर्जन करता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं जानना॥

तमक श्वास के लक्षण।

जब प्राण वायु अपना मार्ग छोड़ के कुमार्गी हो के नाड़ियों में प्राप्त होता है तब गरदन और शिर को जकड़ि के कफ को बढ़ाय पी-

नस जिसे नाक बहना कहते हैं उस रोग को पैदा करता है। तब वह प्राण वायु उस पीनस सम्बन्धी कफ से रुका गया कंठ घुरघुर करता है और अत्यन्त असहन दर्द जो सहने लायक नहीं है ऐसा दर्द प्राणस्थान जो हृदय है होके यह श्वास उत्पन्न होता है। तब वह रोगी उस श्वासके वेग से व्याकुलता तथा कष्ट एवं त्रास को प्राप्त होताहै जैसे अथाह जल में डूबते हुये को सहाई नौका न पाने वाला जन। बारम्बार श्वास का रुक जाना, खांसते २ बारम्बार मूर्छित हो जाना, छाती से कफ न छुटने की अवस्था में अति पीड़ित होना, कफ गिर जाने पर क्षण मात्र को आराम मिलना, सर्वदा गले में खसखसाहट बना रहना, और श्वास फूलते अवस्था में बोलने में कष्ट होना, नींदका नहीं आना (सबब यह है कि लेटे पर उसकी पसुरियोंको बायु भरकर जकड़ लेता है) तब रोगी झट उठ बैठता है तो चैन मिलता है, इसी से श्वास वाले सामने बड़ी तकिया धर उसी पर छाती को आड़ कर अपने समय को काटते हैं जिनका चित्र यह है) नेत्रोंका ऊंचा रहना, मस्तक में पसीना का आना, मुख सूखता रहना, श्वास फूलते समय जैसे हाथी पर बैठा हुआ पीलवान हालता रहता है वैसाही वह रोगी हालता है। प्रायः तमकश्वास मेघोंके उठनेसे, पानी बरसनेसे, ठंढे मकानमें रहने से और शीतल तथा कफकारक पदार्थोंके सेवनसे बढ़ताहै॰ यह तमक श्वास कष्टसाध्य है किंतु नवीन अवस्था में उत्तम चिकित्सा होने से आराम भी हो सक्ता है॥



खुरदाबादमें मुंशी रामलाल नामक एक कायस्थ रहते हैं और उन्हें बहुत दिनों से श्वास रोग नजला के बजे से है, कुपथ्य वश कभी २ उभड़ आता है। उनको बिमारी उभड़ने से एक अपूर्व लक्षण मिलता है, जिस दिन उनको श्वास उभड़ता है वह कहते हैं कि आज के तीसरे दिन बादल उठेंगे और पानी बरसेगा वैसाही होता है याने कई बेर देखा गयाहै आकाश साफ

प्रतमक श्वास के लक्षण।

जो तमकश्वासके लक्षण ऊपर कह आये हैं वही रोगी यदि ज्वर और मूर्छा करके युक्त होय तो उस श्वासको प्रतमक श्वास जानना और किसी २ का मत है कि नाकमें वो मुख में धूरि गरदा के जाने से, अजीर्ण से, अधिक देर तक पानीमें भीजनेसे तथा उदावर्त अर्थात् मलमूत्रादि वेगों के रोकनेसे प्रतमक श्वास उत्पन्न होताहै, यह श्वास शीतल उपायोंसे शांतिरहताहै क्यों कि प्रतमक श्वास वाले को भीतर ऐसी गरमी मालुम होती है मानों किसीने उष्णस्थान वा अंधियारेमें बन्द कर दिया है। प्रतमक श्वास ताता गरम औषधोंके उपचारसे शीघ्रही यमालयके रास्तेको वैद्यराज के यशको गाते हुये सुशोभित करता है॥

यदि कोई पूछे कि वैद्यराजके यशको क्या गावेगा सुनिये आज कालके प्रायः लंठाधिराज वैद्य लोग निदान तो विचारते नहीं किसी तरहका श्वास क्यों न हो झोंका झोंक दवाकी पुड़िया चटातेही जांयगे जिससे रोगी सर्वदा के लिये आरोग्य होजाता है। हमारे आयुर्वेदमें श्वास रोगका निदान यहीं तक कहा है किंतु डाक्टरोंमें कुछ अधिक कहा है इस लिये इस स्थलमें हम कुछ डाक्टरी मतानुसार भी श्वास का निदान कहते हैं।

है बादल कहीं नाम मात्रको नहीं देख पड़ते किंतु आकाश बादलोंसे आच्छादित होनेके तीन दिन पूर्वही उठता है इस से मालुम होता है कुछ आभार मेघोंके उसी दिनसे होताहै किंतु सूक्ष्म होनेके कारण अथवा अधिक दूर रहने के कारण देख नहीं पड़ते। अब पाठकगण इसी उदाहरणसे समझ सक्ते हैं कि बाह्य पंचतत्वों का शारीरिक पंचतत्वोंके साथ कितना घनिष्ट सम्बन्ध है इसीसे बहुत बिमारी हैं जो समयानुसार स्वयं उठा करती हैं और शान्त होती हैं॥

ASTHMA (श्वासकास)

डाक्टरी में इस रोग का बयान इस प्रकार लिखा है। इस रोग का विशेष चिन्ह यह है कि इसके उपस्थित समयमें श्वास बड़े कष्ट से लियाजाता है और जब स्राव दब जाताहै श्वास लेने में कुछ कष्ट नहीं होता, यह रोग पांच प्रकार है।

१ Humoral Asthma or Bronchial Ftuex (वायु पथाद्र श्वासकास) यह रोग कुछ दिनों तक श्वास नली दाह वर्धित रहने से पुनः सरदी पहुंचने से उत्पन्न होता है। इस श्वास का लक्षण तमक श्वास के साथ प्रायः मिलता है॥

२ Congestive Asthma (रक्त पूर्ण श्वास कास) इसका लक्षण प्रायः उरःक्षत रोग के साथ मिलता है॥

३ Spasmodic Asthma (दर्दयुक्त श्वासकास) इसी को स्नायु सम्बन्धीय श्वासकास कहते हैं इसका सबब यह है कि वायु स्नायुओं में प्रवेश कर नसों को खींचता है बस उन नसों में दर्द होने सेही श्वास खांसी होती है इसी से उक्त नाम पड़ा है॥

४ Hay Asthma (तृणाघात श्वासकास) यह रोग वायु नली अत्यन्त शुष्क होने से होता है अथवा बड़े घास का भाफ नाक में जाने से यह रोग होता है॥

५ Hysteric Asthma (गुल्म श्वास कास) यह रोग प्रकार स्त्रियों को गुल्मरोग होने से होता है अर्थात् औरतों को रक्त गुल्म कुछ दिनों तक बने रहने से खांसी श्वास रोग हो जाता है॥

वायु पथाद्र श्वासकास अर्थात् वायु वाहिनी स्नायुमें सरदी पहुंचने से जो श्वास रोग होता है उसका संक्षेप से विवरण करते हैं।

इस रोगके प्रारंभ के समय पेटमें बोझा मालुम होना, चेहरे का रंग फीका, तन्द्रा शिर दर्द होता है। संध्या को मालुम हो जैसे कोई छाती ज-कड़ दिया है इस प्रकार श्वास लेनेमें कष्ट मालुम हो और श्वास धीरे २ लियाजाय एवं गलः सांय २ करे और सूखी खांसी आवे और जैसे चेहरा मुरझाय जाता है और श्वास लेनेमें इतना कष्ट होता है कि जैसा हमने चित्र दिया है, बिना उसी तरह हुये रोगी क्षण मात्रको चैन नहीं पा सक्ता है क्योंकि श्वास लेते २ पेटकी नसे खिंच जाती हैं, मांस पेशी भयानक रूप से काम करने लगती हैं। किसी २ रोगी को सहसा अर्द्ध रात्रि समय में भी उक्त लक्षण सहित श्वासकास उठ खड़ा होता है जिससे एका एक घबड़ाकर उठ बैठता है।

छातीके ऊपर अंगुलियोंके अग्रभाग द्वारा आघात (ठोकनेसे) करने से टपटप ऐसा शब्द बोध होता है। किन्तु यही रोग जब कठिन रूप से आक्रमण करता है तब बोध होता है परन्तु इसी रोगकी प्रथम अवस्थामें छातीमें कान लगा कर सुने से श्वास नली में बहुविधि घड़घड़ाने का शब्द मालुम होता है पहले टकटक ठकठक एवं सांय २ तथा श्वास पथमें जैसे कोई वस्तु घिसता हो बोध होता है॥

शरीरके अभ्यन्तरस्थ इन्द्रियोंमें ह्रदय आंत आदि पीड़ितावस्था के नि-दान जाननेके सिर्फ एकही उपाय है एक तो छाती पर अंगुली ठोककर और कान लगाकर शब्द सुनना सिवाय इसके और नाड़ी आदिसे यथार्थ बोध क-रना बहुत कठिन है।

डाक्टरलोग श्वास रोग में निम्नलिखित रीतिसे बिमारी की परीक्षा करते हैं और इस प्रकारसे परीक्षा करना बहुत उचित है क्योंकि श्वास रोग छातीसे होता है और छातीमें अनेक आशय हैं जो श्वास रोग में विपरीत गुण वाले तथा अकृत एवं बलहीन होजाते हैं उन सबोंका हाल नाड़ी के द्वारा नहीं मालुम हो सक्ता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि डाक्टरीमें रोगों का निदान बहुत अच्छी तरह विधि से लिखा है और डाक्टर लोग उसी

तरह परीक्षा भी करते हैं डाक्टरी दवा लाभ दायक कम होती है इस में येय कारण है।

अंगुलियोंके अग्र भाग द्वारा ठोकनेसे अथवा एक छोटोसी पतली लकड़ीका टुकड़ा लेके छाती पर धरकर उसके ऊपर अंगुलियोंसे ठोके अथवा बायें हाथकी अंगुलियोंको धरकर ऊपर से दाहिने हाथ की अंगुली द्वारा आघात करने से एक शून्यमय वा टप टप शब्द अथवा गीचर होता है। जिस तरह खुखले बांस के ऊपर अंगुलियों के ठोकने से शब्द होताहै उसी प्रकार शब्दानुभव होताहै, तथा असमस्त इन्द्रियादि पीड़ित होनेसे उपरोक्त शब्द का परिवर्तन हो जाता है जिस तरह बाड़ वा जांघ के ऊपर ठोकनेसे शब्द होता है उसी तरह शब्द होने लगता है इत्यादि और अनेकशः परीक्षा है जिसे डाक्टरी प्रकर्ण में पूर्ण रीति से लिखेंगे।

श्वास रोग की चिकित्सा।

सर्वेषुश्वासरोगेषु वातश्लेष्मनिबर्हणं। विदधीत विधिंविद्वानादौस्वेदं मृदु ततः॥

सब श्वासकी बिमारी में पहले मृदुस्वेद अर्थात् शरीर से हलका पसीना निकलवायके पश्चात् वात और कफ नाश करने का उपायकरै।

(प्रश्न) इस श्लोकमें जो प्रथम पसीना निकालने का बयान किया है इसका क्या मतलब है रोग के प्रारम्भ में पसीना निकाला जावे या चिकित्सा के प्रारम्भ में किन्तु इस श्लोक का तात्पर्य यह है विदित होता है कि चिकित्साके प्रारम्भमें प्रथम हलका पसीना निर्गन्त द्वारा शरीर को हलका और कफको पतला कर लेय तब वात और कफ नाश करने का उपाय करे। यही आज कल के वैद्योंकी राय भी है॥

(उत्तर) आपका कथन भी ठीक है किन्तु इसमें यह आपत्ति आन पड़ेगी कि अधिक दिनों तक श्वास खांसी बने रहने से रोगी का रक्त मांसादि सब क्षीण हो जाते हैं और रक्तादि क्षीणावस्था में स्वेदकर्म्म निषेध कर दिया गया है कारण यह है उष्णादि क्रिया द्वारा जो कोई प्रयोग किया जाता है उसे सहन करने वाला रक्तादि सप्तधातु है जब वेही सब कम हैं तो सहन कौन करेगा उस अवस्थामें स्वेदादि क्रिया से रोगी को मूर्छा आना संभव है और मूर्छा से रोगी मर जाता है। स्वेदाध्याय देखो इस लिये रोगके प्रारंभ कालमें स्वेद करना उचित है॥

(उत्तर) इस लिये कि आभ्यन्तरिक समस्त नाड़ियों में और छाती पर कफ जम जाता है और उस कफ के जमने से श्वास के नली का रास्ता जिसमें हो के वायु गमन करता है रुक जाता है, इस लिये रोगी को बारम्बार श्वास लेना पड़ता है। स्वेद से कफ पतला पड़ जाता है और वात श्लेष्म नाशक औषध के देने से वही पतला बलगम दस्त के राह निकल जाता है। वात कफ नाशक औषध यह हैं। जैसे—

१, काकराशिंगी, वैतराशोंठ, मिर्च, छोटीपीपर, हड़, बहेड़ा, और आंवला यह तीनों बीज रहित, भटकटैया का पञ्चांग, भारंगी, पुष्करमूल और पांचों नोन सबों सो महीन चूर्ण कर तीन मासा अथवा ६ मासा दोनों समय गरम जल के साथ पीने से बलगम छुट श्वास रोग शांत होता है इसके अतिरिक्त यह चूर्ण हुचकी, श्वास, ऊर्द्धश्वास, खांसी और अरुचि रोग नाश करने में एकही है॥

श्वासाधिकारे घृत।

हमारे आयुर्वेदीय ग्रन्थों में श्वासाधिकार में घृत का प्रकर्ण बहुत अधिक दिया है और जहां तक परीक्षा द्वारा देखा गया है, अन्ततोगत्वा इसे की बिमारी में घृत अधिक फायदा करता है क्योंकि श्वास रोग देर

कारणों से कठिन और असाध्य हो जाता है । एक तो छाती पर कफ सूख कर जमजाने से, वह कफ सूख कर ऐसे मजबूती के साथ छाती में चिपक जाता है जिसका एकाएक उस स्थान से छुटा देना सहज दवा का काम नहीं है । उसी कफ के गांठ को कितने गवांर लोग छाती में छिपकिली तथा उसी आकार अन्य जानवरों का पैदा होना बतलाते हैं तथा उसकी दवा भी ऐसी २ तेज लोग बना कर रोगी को देते हैं जो रोगी बरदास्त न कर सका तो अपने जीवन से मानो हाथ धो चुका, हां उस श्वास रोग में घृत पिलाने से बहुत लाभ देखा गया है । दूसरे, श्वास रोग में जब यकृत अर्थात् लीवर बढ़ आता है अथवा कड़ा हो जाता है उस अवस्था में भी श्वास रोग अति दुष्कर हो जाता है किन्तु घृत पिलाने से इसमें भी फायदा देखा गया है, इसलिये इस स्थल में हम कुछ घृत का बयान करते हैं । एक प्रकार का घृत सर्व साधरन के प्रकृति के तुल्य हो नहीं सक्ता, इस हेत दो चार जो उत्तम २ फायदे मंद घृत हैं उसे लिखे देते हैं ।

कासेश्वासेचहिक्कायां हृद्रोगेचापिपूजितं । घृतं-पुराणंसंसिद्ध मभयाविड़रामठैः ॥

खांसीरोग, श्वासरोग, हिचकी, और हृदयरोग इन सब रोगों में अभया कहें बहाहड़, विड़ कहें विड़नोन जिसे मनियारीनोन भी कहते हैं और रामठ कहैं हींग इनसे सिद्ध किया हुआ पुराना घृत श्रेष्ठ अर्थात् लाभदायक है ॥

विधि—बहाहड़ जो जल में डूब जाता हो उसका बीजा निकाल के आधसेर लेय उसे ४ सेर जल में क्वाथ बनावे जब आधा जल रहजाय, पानी छान लेय, कलईदार कड़ाई में एक सेर एक वर्ष के ऊपर का घी छोड़ और उसी में हड़ का पानी डाल धीमी आंच से पकावे जब सूख

पके लगै तब आधपाव मनियारीनोन और एक तोला अधभूंजी उत्तम हींग उसी में डाल पका लेवै जब पानी सब जल जाय घृत मात्र रह जाय, अग्नि पर से उतार शीतल कर छान अमृतवान में रख ले इसका मात्रा एक तोला से १ छँटाक तक है रोगी अपनी ताकत के अनुसार दोनों समय पिये, ऊपर से पानी न पिये, पान लायची वगैरह खा लेवै तथा इस घी को भोजन के साथ दाल भात तरकारी आदि चीजोंमें भी मिला के खा सक्ता है, यह घृत आजमाया है कुछ दिनों तक लगातार बराबर इसे बना २ के पीता जावे । प्रथम २ घृत पीने से खांसी अथवा श्वास उभर आता है उससे यह न समझना चाहिये कि घृत नुकसान करता है उसको पीता जाव छोड़े नहीं श्वास दबाने के निमित्त कोई बटी जो ऊपर लिख आये हैं अथवा मुलेठी, खैर, अनार या बहेड़ा का छिलका मुख में डाल कर चूसै ॥

विल्वादि घृत।

सौवर्चलाभयाविल्वैः संस्कृतंवानवंघृतं ।

जिस श्वास वाले रोगी को दस्त पतले आते हों वह कालानोन, हड़ और बेल से सिद्ध किया हुआ नये घृत को पिये । इस घृत के बनाने की विधि यह है, ताजा घृत गौ का १ सेर, छोटे बेल की गरी १ पाव, हड़ आधपाव और कालानोन एक छँटाक । विल्व और हड़ को अठगुने जल में क्वाथ करै जब चौथाई रहै मलछान घृत में डाल धीमी आंच से पकावै जब आधा पानी जल जाय तब नोन छोड़ देय और धीमी आंच से पकाता जावै । पानी सब जल जाय, घृत मात्र रहजाय छान कर अमृतवान में रखदेय और पूर्वोक्त विधि से कुछ दिनों तक बराबर सेवन करता जावै ।

अन्यच घृत ।

हिंस्राविडङ्गपूतीक त्रिफलाव्योषचित्रकैः । द्विक्षीरंसाधितंसर्पिश्चतुर्गुणजलान्वितं ॥ कोलमात्रैः पिबेत्तद्धि श्वासकासौव्यपोहति । अर्शांस्यरोचकंगुल्म शकृद्भेदंक्षयंतथा ॥

बालछड़, वायविरंग, जंगीहरैं, त्रिफला अर्थात् हड़ बहेरा आंवला शोंठ, कालीमिर्च, छोटी पीपर और चीते का छाल सबों को एक २ छँटाक ले अधकचरा कर १२ सेर जल में रात को भिजा देय सबेरे पकावे जब ३ सेर जल रहजाय मलकर छान लेय। तीन सेर घी को च्ल्हे पर चढ़ाय उस तीन सेर काढ़े का पानी डाल धीमी आंच से पचाना शुरू करै और ३ सेर गौ का दूध ३ सेर बकरी का दूध इसे भी डाल के पचावे सबों के पश्चात् ४ सेर जल और छोड़ के पचा कर घृत तैय्यार करलेय इस घृत को भी पूर्वोक्त प्रकार सेवन करने की विधि समझना चाहिये। इस घृत के सेवन से दमा खांसी कुछ दिनों में अवश्य आराम होती है। इसके अतिरिक्त बावासीर, अरुचि, गुल्म, टूटकर दिशा का आना, और कफ क्षई को भी यह घृत हटाता है ऐसा कई बार देखा गया है।

अथ भृङ्गराज तैलम् ।

पाठकगण इस नाम को सुनकर चमत्कृत होंगे, कि जहां खांसी में खाने को कौनकहै तेल मुख पर नहीं धरते तहां खांसी में तेल पीने की विधि दी जाती है ? यह सब वे समझो है हां तीव्र ज्वर में तेल की चीज खा लेने से निस्सन्देह खांसी श्वास की बीमारी हो जाती है,

यदि ऐसा होता तो श्वास रोग में डाक्टर लोग मछली का तेल क्यों पिलाते । मछली के तेल के विधानपत्र में लिखा है कि इस तेल को तीन बरस तक बराबर पीता रहे । हम कहते हैं भृङ्गराज तेल को छही महीने पथ्य सहित पीकर देखें श्वासरोग को जड़ से उड़ा देता है या नहीं ॥

तैलंदशगुणेसिद्धं भृङ्गराजरसेशुभे । सेव्यमानंयथा न्यायं श्वासकासोव्यपोहति ॥ सुश्रुत उत्तरतंत्रम् ॥

काले तिल का तेल १ सेर को कड़ाई में चढ़ाय १० सेर भृङ्गराज अर्थात् भांगरे का ताजा रस थोड़ा २ डाल के पका लेय जब स्वरस जल जाय तब उतार कर छान लेय इसका मात्रा-६ मासा से दो तोला तक है, अपने बलाबल के अनुसार दिनमें दो या तीन दफे पिये । यदि यह देखे कि छाती पर बलगम बहुत सूखा है किसी तरह नहीं निकलता है तो कालेतिल के तेल की जगह अलसी के तेल में भृङ्गराजतैल तैय्यार करे । इस तेल को बराबर पीने से निस्सन्देह श्वास खांसी आराम होती है, अथवा ॥

हरिद्रांमरिचंद्राक्षां गुड़रास्नाकणांशठी । लिह्या-त्तैलेनतुल्यानि श्वासार्त्तोहितभोजनः ॥

हरदी, कालीमिर्च, मुनक्का, गुड़, रासन, छोटीपीपर और कपूर-कचरी सबों को समान भाग ले महीन चूर्णकर दो मासा या तीन मासा चूर्ण को काले तिल के तेल या अलसी के तेल में मिला के चाटने से भी श्वास को नाश होने को कहा है । किन्तु इससे ऊपरवाला तेल उ-त्तम है ॥

श्वासाधिकारमें कुछ रसों को प्रकर्ण जो माननीय और रम्य है इस स्थल में लिखते हैं । इसमें सन्देह नहीं यदि सब पदार्थ उत्तम मिलजांय और लालच त्याग द्रव्य खर्च कर उत्तम रीति से रस तैयार किया जाय तो शैत्यप्रकृति कि तथा शैत्याधिकार रोगाक्रान्त आतुरों के लिये अमृतही समझना चाहिये और विषमिश्रित अतितीव्र शीघ्रकार्यकारिणी अंगरेजी औषधियोंसे सहस्र गुण अधिक लाभदायक होताहै किन्तु आजके समय में न उत्तम धातु उपधातु मिलते हैं और न वन बूटियां मिलती हैं कि जिनके स्वरसके प्रभावसे कठिनसे कठिन धातु भी निश्चन्द्र भस्मी भूत हो जाते थे सो न वह समय रहा और न वह चीजें रहीं सिर्फ ठगविद्याई रहगई, न धर्मका ख्याल और न ईश्वरका डर चार पैसा पैदा कर पेट भरने से काम चाहा रस तैयार करना रोगियों को इस अपार संसार के दुःख से निर्मुक्त करना लोगों के हाथ रह गया ।

कालेश्वरोरसः श्वासाधिकारे ।

वंगलोहंतथाताम्र मभ्रकंपारदंमतम् । गन्धकंताप्य-दरदी हिंगुंजातीफलंतथा ॥ सूक्ष्मैलादालचीनीच केशरं-त्रिपकंस्मृतं । धूर्तबीजं वजैपालं टंकणंचसमंमतं । सर्वैभ्य-स्त्रिगुणांस्यामं क्षिपत्वाचूर्णीकृतंभिषक् । वृषापामार्गनि-र्गुण्डी भंगभृंगरसेनच ॥ मर्दयेद्दिनमेकैकं रसःकालेस्वरो भवेत् । एकगुंजंद्विगुञ्जंवा बलंज्ञात्वाप्रयोजयेत् । कासं-श्वासंनिहन्त्याशु कफरोगंचदारुणं ॥

यह कालेश्वररस निहायत उत्तमहै यदि सब चीजें उत्तम मिल जांय अथवा किसी चातुर वैद्य जो हस्तक्रिया मे चैतन्य हो उससे द्रव्य खर्च

कर बनाया जाय तो श्लेष्माधिक्य श्वास रोगके लिये अमृत की जरूरत नहीं है (कालेश्वर की विधि) दश आंच का बंगेश्वर, कान्तीसार भस्म, ताम्रेश्वर, सौ आंच का अभ्रक, चन्द्रोदय, शुद्ध आमलासार गन्धक, सुवर्णमाक्षी का भस्म, शुद्ध मकमूदाबादी सेमरिख इन, सबों को छः २ माशा ले खरल में खूब महीन चूर्ण कर रखदेय पश्चात लौंग, जायफल, छोटी लायची, दालचीनी, नागकेशर और शुद्ध भंगिया, शुद्ध धतूरे का बीज शुद्ध, जमालगोटे का बीज तैल रहित, और शुद्ध सोहागा उपरोक्त चीजों के समान लेवे और सबों की आधी शुद्ध छोटी पीपर ले चूर्ण कर एक एक दिन क्रमः के पत्तो के रस में चिचरी के रस में निर्गुण्डी के रस में भांग के रस में और चंगिरा के रस में भावना देने से कालेश्वर रस तैय्यार होता है। एक रत्ती अथवा दो रत्ती बलाबल के अनुसार महन के साथ रोगी को दोनों समय चटाने से कफ जनित कासश्वास रोग शीघ्रही नष्ट होता है। वायु पित्त जनित श्वास रोग में यदि अज्ञान वशात् दे दिया जाय तो यही रस रोगी को काल के समान मारता है।

वर्तमान समय के अनुसार इस रस की मात्रा १ चावल से ६ चावल तक है यही देना चाहिये इत्यादि और भी अनेक औषधियां हैं जो देश काल, अवस्था और रोगी के बलाबलके अनुसार दियाजाय तो लाभ हो सकता है किन्तु यह बात ध्यान देनेलायक है कि दवा को शीघ्रता के साथ परिवर्तन करना अच्छा नहीं होता क्योंकि श्वास रोग प्रथम तो यह आपही दुष्कर है, दूसरे कुछ काल पर्य्यन्त लगातार औषधि न खाने से, दवा का पूरा असर रोग पर नहीं होता, हां यदि किसी औषधि से कुछ हानि बोध हो तो प्रकृति विरुद्ध जान शीघ्रही त्याग दे तथा कभी २ आयुर्वेद विज्ञान दर्शियों से बिमारी के विषय में राय लेता रहे।

बालक श्वासरोग ।

इसी के साथही हम आज बालकों के श्वास और खांसी रोग का भी निदान और चिकित्सा लिखते हैं कारण यह है कि सयाने मनुष्यों की अपेक्षा बच्चों को यह रोग बड़ा भयानक और दुष्कर होता है हिन्दुस्तान में औरतों के अज्ञानता वशात श्वास और खांसी रोग से हजारों लड़के बिना मौत के मरते हैं क्योंकि बच्चों का रोग माता की बदपरहेजी से होता है और लड़कों के बिमार होने पर औरतें अपने बदपरहेजी पर तो ध्यान देती नहीं झाड़ फूक माला भगतों में पड़जाती हैं और अट-कलपच्चू अताइयों की दवाइयां देनेलगती हैं इससे अक्सर लड़के अकाल काल ग्रास हो जाते हैं। लड़के खांसी श्वास होने से हांफने लगते हैं, बस फिर क्या जहां बच्चों का पेट उछलते देखा जाना कि पसुरी चल रही है शीघ्रही उसके मारने की तदबीर में लग जाती हैं, इसलिये उन बच्चों के प्राणरक्षार्थ इस स्थान में हम कासश्वास का प्रकर्ण लिखते हैं।

पाठकगण आप निस्सन्देह समझिये। कासश्वास रोग से प्राय भारत के लाखों बालक बिनामौत के मरते हैं और जो बचजाते हैं किसी आयुर्वेद विज्ञानदर्शी के मदद से अथवा अपने भाग्य से, जिस प्रकार अनेक मनुष्य विष खिला देने से भी बचजाते हैं अर्थात् नहीं मरते उसी प्रकार बालकों को समझिये क्योंकि वाक्य रहित बालक बिचारों का प्राण माता पिता और चिकित्सक के हस्तगत रहता है। वह अपने मुख से अपने तकलीफों को बयान नहीं कर सक्ता और सिवाय रोने के न प्यास लगने पर पानी और न भूख लगने पर खाना मांग सक्ता है आपही बिचारिये ऐसी अवस्था में रोग के विपरीत दवा खिलाने से बालकों को कैसी तकलीफ होती होगी और किस संकट से उनका प्राण निकलता होगा। क्योंकि बच्चे सिवाय रोने के कुछ कह नहीं सक्ते इस स्थल में बच्चे का रोना, निस्सन्देह काटेजाने जानवरों के चिल्लाहट को चरितार्थ करता

है—जैसे कटते समय बकरियां मैं मैं करती हैं और कसाई उनकी मामूली आदत समझ कर उनके चिल्लाने पर ध्यान नहीं देता और छूरी रेतता जाता है, शायद वे यही कहती हों कि हम को बिनागुनाह के क्यों मारते हो हम बेकसूर हैं, तुमारा कुछ नहीं बिगाड़ा, परमेश्वर तुमारा भला करैगा तुम हमें छोड़दो लेकिन कसाई बकरियों की बातों न समझने के कारण कुछ भी ध्यान नहीं देता और उल्टे उसको खतम कर देता है। उसी तरह बच्चों की हालत समझिये, बच्चों का रोना लोग मामूली आदत समझते हैं और न समझने के कारण अटकलपच्चू जो जी में आता है दवा खिलाते और यत्न करते जाते हैं।

हाय २ जब हम कभी ऐसी दशा में बच्चों को देखते हैं तो छाती फटजाती है और सिवाय ईश्वर से प्रार्थना करने के कि हे दयानिधि, कृपासागर तू बालकों के सुख दुःख जानने और उनके अनुकूल आरोग्यसाधे औषधि देने तथा यत्न करने की बुद्धि सबों को क्यों नहीं दी, क्या तुझे यह बात पसंद है कि भारत के असंख्य जन सन्तान रहित कहलावें और अपनेको वृथाजीवन तथा हतभागी समझें और कुछ नहीं सूझता।

पठकगण हमारा कथन आप बहुत सत्य समझिये बालक रोग चिकित्सा एक भिन्न लिखनेवाले थे किन्तु अब की साल असंख्य बालकों को असामयिक काल ग्रास होने से चित्त न थँभा और इसी स्थल में बालकों के ख्यास रोग की चिकित्सा लिखने को लेखनी उठ खड़ी हुई।

इस साल अर्थात् सम्वत् १९५२के आखरी और ५३के आदिमें जितने लड़के चेचक (माता) और श्वास रोग से मरे हैं शायद ही कभी महाप्रलय के समय मरे हों॥

देखिये यह बहुत मोटी बात है कि भीतर गर्मी रहने से सर्द दवा और भीतर सरदी होने से गर्म दवा रोगी को देना चाहिये। गरमी रहने से गर्म दवा, सरदी रहने से सर्द दवा देने से रोग बढ़ जाने एवं

रोगी के मृत्यु का कारण होता है, अगर कोई कहे कि (विषस्यविषमौषधं) विष का विषही औषध है, गरमी गरम दवा से हटता है और यथार्थ में मूर्खों की बुद्धि भी ऐसी ही होती है । यह वचन विशेष रोग में जैसे जले में सेकना और बड़े घाव में मोम भर देना, यह वचन सर्व साधारण रोगों में संघटित नहीं होता ॥

बच्चों के भीतरी गर्मी सर्दी जानने को ऐसे तो अनेक लक्षण हैं किंतु सबों से सहज लक्षण यह है कि पेशाब करते समय मूत्रको हाथपर रोक लेने से, अगर पेशाब गरम हो तो गरमी समझे और शीतल हो तो सर्दी समझे जहां तक गरमे सर्द प्रण पावै उसी के अनुसार चिकित्सा करे । इस स्थल में एक बात और बता देने की जरूरत समझते हैं वह यह है कि शरद मुल्क और शरद ऋतु में प्रायः लोगों का मूत्र कुछ उष्ण होता है, वहां मूत्र के मिकदार पर भी ध्यान देना चाहिये, गरमी रहने से पेशाब गरम और बहुत कम होगा और सरदी होनेसे मूत्र बहुत होगा इसी प्रकार दिशा को भी जानना चाहिये, गरमीसे दस्त पतला या कम और सरदी से गाढ़ा और अधिक होता है ॥

अन्य लक्षण सुश्रुत से ।

अङ्गप्रत्यङ्गदेशेतु रुजायत्रास्यजायते । मुहुर्मुहुः स्पृशातितं स्पृश्यमाने च रोदति ॥ निमिलिताक्षोमूर्द्धस्थे शिरोरोगेनधारयेत । वस्तिस्थेमूत्रसङ्गार्तो रुजातृष्यतिमूर्छति ॥ विण्मूत्रसङ्गवैवर्ण्य च्छर्द्याध्मानान्त्रकूजनैः । कोष्ठेदोषानूविजानीयात् सर्वत्रस्थांश्चरोदनैः ॥

बालक के जिस स्थान में दर्द होता है उसी स्थान को वह बारंबार छूता है यदि ठीक स्थान पर हाथ नहीं पहुंचता तो इशारा उसी

सर्प का रहता है, अगर कोई उस स्थान को छुवे तो रोने लगता है। जब बालकों के सिर में दर्द होता है, तब वह अपनी आंखें बन्द कर लेता है। बस्ति (पेडू) में बीमारी होनेसे मूत्र बन्द हो जाताहै अथवा कांख कर मूतताहै और इन रोगोंमे तृषा लगतीहै और बेहोशी अर्थात लड़के सुस्त हो जाते हैं। यदि बालक का मूत्र बन्द हो जाय, मुख मुरझाय जाय, पेट फूल आवे, पेट में गुड़गुड़ शब्द हो तो जानना कि पेट में कोई रोग हुआ है अथवा मल रुक गया है और सम्पूर्ण देह में रोग होने से लड़के बहुत रोते हैं॥

श्वास रोग का लक्षण।

नाक का बहना, या नाक का सूज जाना और पपड़ी जम जाना, खांसी आना, छाती और गले में कफ का शब्द होना, हांफना और पेट का उछलना (इसी को गवांर लोग पसुरी का चलना बतलाते हैं और गरम २ दवा देके बच्चों को मार डालते हैं जिसका बयान हम आरोग्य दर्पण के प्रथम खण्ड में कर चुके है) मुख सूखना, पानी पर ज्यादा रुजू होना, घबड़ाना, चौंक उठना बदनपर कपड़ा का न रखना आंख निकाल देना, बेहोश हो जाना इत्यादि लक्षण होते हैं॥

बच्चों को भयानक यह क्यों है।

बालकों के लिये यह दुष्कर रोग क्यों होता है उसका विवरण— बड़े मनुष्यों की अपेक्षा यह रोग बच्चों को भयानक इस वजे से होता है कि श्वास लेनेकी नालियां बच्चों की बहुत ही छोटी होतीहैं और खांसी के वजे से बहुत जल्द फेफड़ोंके भीतर प्रदाह पहुंच जाताहै। बड़े मनुष्य की श्वास धमनी इतनी बड़ी होती है कि फेफड़ों तक श्वास का दोष बहुत कठिनतासे पहुंचा है। जब बच्चों के फेफड़े तक यह रोग पहुंचता है तब बड़ी तकलीफ होती है क्योंकि बारीक वायु मार्गमें रक्त भर जाता

है जिससे बच्चों का श्वास रुकने लगताहै जिससे मौत का डरहै। बयान कर चुके हैं कि इस रोग में पहले लड़कों का नाक बहता है जिसको जुकाम कहते हैं अगर उसी समय जुकाम पकाकर साफ कर दिया जाय तो कोई अंदेशे की बात नहीं है, यहां तो मूर्खोंने जहां बच्चोंकी नाक बही जाना कि महाराज सरदी ने आघेरा धुमाधुम गरम चीज देना शुरू कर देते हैं। बाद खांसी आने लगतीहै और खांसती समय एक झटका सा लगता है और घेफली बहती जाती तथा ज्वर भी होने लगता है और धौकनी सी श्वास जल्दी २ चलने लगतीहै तथा बच्चा पेटके द्वारा श्वास लेने लगता है यही कारण है जो श्वास लेने में पेट फूलता और दबता है और मालूम होता है कि बच्चे का दम निकलने चाहता है। खांसते समय मुख लाल हो जाता है, मुख बाय देता है और सुस्त हो कर आंख फाड़ देता है, कभी कुछ लासेदार कफ भी मुख पर आ जाता है किन्तु बच्चे थूकना नहीं जानते फिर निगल जाते हैं, खांसते २ कभी कै भी हो जाती है जिससे बच्चों को कुछ चैन मिलता है। भीतर ज्वर रहता है किन्तु खांसी और श्वास के तकलीफ के सबब से शरीर पसीनेसे तर हो जाता है जिसे बयांदल सरदी का जाना समझते हैं। इस में बालकों की भूख घट जाती है, दूध पीने वाले दूध नहीं पीते तालू शुष्क हो जानेसे माता का स्तन मुखसे दबा नहीं सकते और मारे प्यास के यहां तक अरुचि हो जाती है कि स्तन मुख में लगा देनेसे बच्चे मुख हटा लेते हैं। जब बीमारी बढ़ जाती है तो श्वास खांसी से विश्राम नहीं मिलता और बच्चा थोड़े ही देर में निर्बल पड़ जाता है, चेहरा पीला, होठ सूखा, मुख फटाहुआ और श्वास लेती समय नथुये फूलतेहैं और श्वास मुश्किल से लिया जाता है और जो भीतर से श्वास आता है अधूरा और कठिनता से आता है बस ऐसी अवस्था में अज्ञान लोग बढ़ी हुई सरदी समझ कर और भी गरम दवा खिला देते हैं, जितना ही गरम दवा दी जाती है उतनाही श्वास और बढ़ता और बदहोशी

आती जाती है तथा बच्चा पसीने से डूबा जाता है अन्ततोगत्वा मूर्छा में ग्रसित हो बच्चा प्राण को परित्याग करता है ॥

रोग घटने का लक्षण ।

जब बालक आराम होनेवाला होता है तो नाड़ी की गति धीमी, शरीर की उष्णता (भीतरीज्वर) न्यून तथा श्वास कष्ट और धौंकनी सी श्वास का चलना बन्द होती जाती है. खांसी देर देर में आती है नींद भरपूर और भूखभी लगने लगती है। बच्चा चैतन्य और खेलने लगता है ॥

चिकित्सा और यत्न ।

त्रिविधःकथितोबालः क्षीरान्नोभयवर्त्तनः । स्वास्थ्यंताभ्यामदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यांरोगसम्भवः ॥

दवा करने के पहले चिकित्सक को अवश्य जान लेना चाहिये कि बालक किस अवस्था का है क्योंकि बालक तीन प्रकार के होते हैं । एक तो केवल दूध पीनेवाला, दूसरा दूध और अन्न खानेवाला, तीसरा केवल अन्न खानेवाला होता है तहां बालक को शुद्ध दूध और अन्न मिलने से आरोग्य रहते हैं तथा अशुद्ध याने दोष सहित मिलनेसे रोगी होतेहैं । क्योंकि जिस कारण से रोग उत्पन्न हुआ है जब तक उस कारण के शांत का उपाय न किया जायगा रोगका छूटना अति दुष्करहै जैसे बालक माता का दूध पीताहै तो माताको दवा न देके सिर्फ बालकही को दवा खिलाना सम्भवहै कि बालक आरामहो इसलिये सबसे प्रथम यह देखना चाहिये कि बच्चा माताकी बदपरहेजीसे बीमार हुआहै या उसको ठीक खाना नहीं मिला । माता की बदपरहेजी दुग्ध परीक्षा और पूछने से मालूम हो सक्ता है ॥

क्षीरस्यौपधंधात्र्याः क्षीरान्नादस्यचोभयोः। अन्नादस्यशिशोरेव प्रदद्यात्कुशलोभिषक् ॥

यह वचन आत्रेयसंहिता की है इनका सिद्धान्त मत है कि जो बालक केवल दूध पीता है तो उस बालक को दवा न खिला के दूध पिलानेवाली माता अथवा दाई को दवा देना चाहिये ॥

(प्रश्न) यदि बालक सिर्फ गौ या बकरीका दूध पीता हो तो ऐसी अवस्था में बच्चे को दवा दे या बकरी गाय को दवा पिलावे ॥

(उत्तर) प्रथम तो गौ या बकरी का दूध पीनेवाला बच्चा बीमार नहीं हो सक्ता क्योंकि गाय बकरियां आदि जीवों के दूध शुद्ध रहते हैं, उसका मुख्य कारण यहहै कि उन लोगोंका खाना पीना मनमौजी नहींहै, बँधे अन्दाज या समय के घास पात पर निर्भर है. हां दूध पिलाने का नियम ठीक न रहने से, जैसे—दूध पकानेवाली दोहनी (नँदिया) दूध मांज धो कर सोंधई न गई हो, या अप्रमाण दूध पिलाया गया हो तो निस्सन्देह बालक बीमार हो सक्ता है—यदि उक्त कारण दृष्टिगोचर न हो तो धात्री दुग्ध परीक्षा की भांति गवादिके दूध की परीक्षा कर लेवे जिसका बयान सविस्तार वर्णन बालचिकित्सामें करेंगे, अगर दूध दूषित जान पड़े तो उनके भी दूध को औषध द्वारा शुद्ध करे। जो बालक दूध भी पीता हो और अन्न भी खाता हो तो बालक और बालककी माता दोनों को दवा देवे और जो बालक अन्नादि खाता हो माता का दूध न पीता हो तो केवल बच्चा ही को दवा देवे। आजकल के वैद्यों का ध्यान माता के दूध पर बिलकुल नहीं रहता झोंकाझोंक बच्चों ही को दवा देना आरंभ कर देते हैं इससे बच्चा शीघ्र ही मृत्युवश हो जाता है। इस स्थलमें अधिक वर्णन न कर ज्वरादिरोगपर दो चार औषध बच्चों के उपयोगी लिखते हैं जिससे असंख्य बच्चे आरोग्य हुये हैं पश्चात् उन

रोगों का वर्णन करेंगे जो धातु से पूरा सम्बन्ध रखते हैं और जिनकी चिकित्सा अति दुष्कर है ॥

केवल दूध पीनेवाले बच्चेको श्वास कासादि रोग हुआ हो तो बच्चे को बहुत गर्म स्थान में ढांप कर न रक्खे और न उसके शरीर में सरदी ही प्रवेश करने पावे पूर्वोक्तानुसार जिस प्रकार सूत्रद्वारा बच्चेकी भीतरी गर्मी सरदी जाय मरै उसी प्रकार स्थानादि का इन्तिजाम करै और दूध पिलानेवाली दाई को निम्नलिखित क्वाथ पिलावे। गुलबनप्सा ६ माशा, मुलैठी ४ माशा, उन्नाब ६ दाना, अलसी ४ माशा, इन सबों को जवकुटा कर एक पाव पानीमें एक तोला मिश्री डाल कर पकावे जब आध पाव पानी रह जाय, मल छान कर, किंचिन्मात्र गुनगुना रहे जैसे लोग चा पीते हैं उसीतरह दाईको पिलावे, इसी प्रकार दोनों समय काढ़ेको पिलाना चाहिये अगर सरदी अधिक बोधहो तो एक माशा छोटीपीपर का चूर्ण शहद के साथ चाट कर ऊपर से काढ़ा पीवे खानेको मातदिल चीजें देवें, तेल मिर्चा खटाई अचार दही, रायता आदि गरम और बादी चीजोंका खाना, उपवास करना, आग तापना, क्रोध करना आदि त्याग करे। अगर बालक माता का दूध भी पीता हो और कुछ ऊपर से अन्न भी खाता हो तो उपरोक्त काढ़े में से आधा चम्मच जैसी बालक की अवस्था हो बच्चे को भी पिला दे और बाकी दाई पी जावे, यदि बच्चा मा का दूध न पीता हो सिर्फ अन्नही खाता हो तो उसी पूर्वोक्त काढ़े को बालक के अवस्थानुसार मात्रा घटा के तैयार कर के पिलावे आठ दश दिन के दवा सेवनसे रोग नष्ट हो जायगा। ऐसे तो अनेक औषध हैं किन्तु इस औषध से असंख्य बालक आरोग्य हुये हैं, यदि इस प्रयोग से फायदा कम बोध हो तो किसी अच्छे लायक वैद्य हकीम को भी दिखला देव, किन्तु हम साहस पूर्वक कह सकेहैं कि इस्से बढ़कर बच्चोंके श्वास कास रोग पर बहुत कम औषध हैं बाकी रोगों का प्रकरण बाल

चिकित्सा खण्ड में लिखेंगे । इसके पश्चात् अब हम प्रमेह का प्रकरण प्रकाश करते हैं जो आज समस्त भारत को अपने आधीन किये है ॥

प्रमेहरोग ।

आस्यासुखंस्वप्नसुखंदधीनिग्राम्योदकानूपरसाःपयांसि । नवान्नपानंगुडवैकृतंच प्रमेहहेतुःकफकृच्चसर्वम् ॥

अब हम प्रमेहरोग होने का कारण अर्थात् जिस वजेसे मनुष्य को प्रमेहरोग होता है उसे दिखलातेहैं (आस्यासुखं) जिनको बैठा रहना ही परम सुख मालूम होता है, सिवाय बैठनेके चलना, फिरना अधिक काम काज करने में चित्त न लगना (स्वप्नसुखं) सोना ही जिनको बैकुण्ठ के सुख को भी हतास करनेवाला है अर्थात् कोई काम काज या किसी का डर न हो तो दिन रात सोता ही रहे अथवा शयन में अनेक रूपवती चारविलासिनियों के साथ रमण करना, जिनकी अवस्था कम होने के कारण वीर्य्य उत्तेजित हो रहा है, उस अवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की बारम्बार कन्दर्प की गरमी शान्ति करने की इच्छा बनी रहती है, उस अवस्था में मनोरमणी के अभाव में मनुष्य रात को स्वप्न में स्त्री प्रसंग करता है और वीर्य्यपात हो जाता है जिसको स्वप्नदोष कहते हैं ॥

(प्रश्न) इस श्लोक के अन्त पद में लिखा है कि (कफकृच्चसर्वम्) समस्त कफकारी पदार्थों के सेवन से प्रमेहरोग होताहै और यह परीक्षित है कि वातपित्तकारी द्रव्य यानी अति उष्ण द्रव्य सेवनसे निस्सन्देह स्वप्न दोष होता है तो परस्पर विरोध हुआ ॥

(उत्तर) कफकारी द्रव्य प्रायः प्रमेह के कारण होतेहैं किन्तु इनका अन्तिम परिणाम प्रमेहरोग का हेतु समझना चाहिये, दधि का अति से-

वन, ग्राम के रहनेवाले भेड़ बकरी आदि जीव, जल के संचारी मछली कछुआ आदि जीव और अनूप अर्थात् जल के समीप अथवा जल के किनारे रहनेवाले जीव जैसे हंस, बतक, चकई चकवा आदि ऐसे जीवों के मांस रस याने शुरुवा, दूध, नया अन्न और नया जल, (गुड़वैकृत) गुड़ के विकार से जो सिरका आदि बनता है उसके सेवन से अवसर प्रमेहरोग होता है और जितने कफकारक पदार्थ हैं सो सब प्रमेह होने के कारण हैं ॥

(प्रश्न) अगर जलचर मछली आदि, जल के किनारे रहनेवाले बतक आदि जीवों के मांस खाने से प्रमेह रोग होता हो तो बंगाली और कोंकनी इन दोनों जाति मात्र को प्रमेह रोग होना चाहिये क्योंकि बहुधा इन दोनों जातों का भोजन उन्हीं जीवों पर निर्भर है सो हम इन दोनों में प्रमेह रोग बहुत कम देखते हैं (उत्तर) इसका कारण यह है कि बंगाली लोग कडूतेल की भूंजीहुई मछली खाते हैं, इसलिये विकार नहीं करता क्योंकि तेल मछली के श्लेष्मकारी गुण को नष्ट करदेता है। और अंगरेजों को हंस आदि जल तटस्थ जीवों के मांस रस हानिकर इसलिये नहीं होता, सबब यह है कि प्रथम तो अंगरेज लोग इन्ही के मांस पर निर्भर नहीं हैं, दूसरे भोजन के साथ प्रायः मद्य निमलेट का सेवन रहता है उससे विकार नहीं करता। सब से असिल बात तो यह है कि जब तक मैथुनादि से वीर्यहीन नहीं होता चाहे जो खाया पिया करो कुछ भी नहीं होता, वीर्य निर्बल हुआ कि ज़रा भी कुपथ्य से बिमारी धरदबाया। प्रमेह रोग होने में सुश्रुत जी की राय।

दिवास्वप्नाव्यायामालस्यप्रसक्तं शीतस्निग्धमधुरमेद्यद्रवान्नपानसेविनं पुरुषंजानीयात्प्रमेहीभविष्यति ॥

यह मनुष्य जो ऋतु विरुद्ध दिन में बहुत सोता है, दण्ड कसरत

कुश्ती आदि शारीरक परिश्रम नहीं करता आलस में अत्यन्त ग्रस्त रहता है, अतिशीतल, अति चिकना घी आदि अतिमीठा और मेदा के बढ़ाने वाले भोजन और पानादिक करता है जानना चाहिये कि ऐसे मनुष्य को प्रमेह रोग होने वाला है अर्थात् प्रमेह रोग अवश्य होगा।

(प्रश्न) उपरोक्त कारणों से स्त्री के भी प्रमेह रोग होता है या नहीं। (उत्तर) स्त्रियों को प्रमेह रोग नहीं होता क्योंकि (रजःप्रसेकान्नारीणां मासिमासिविशुद्ध्यति। सर्वंशरीरदोषाश्चनप्रमेहन्त्यतःस्त्रियः) महीने २ स्त्रियों के रजोदर्शन द्वारा सम्पूर्ण शारीरक दोष शुद्ध हो जाते हैं इससे स्त्रियों को प्रमेह रोग नहीं होता, हां प्रमेह के स्थान में स्त्रियों को प्रदर और सोम रोग होता है और जो स्त्रियों में प्रमेह रोग मानते हैं उनका मानना युक्त नहीं है।

प्रमेह रोगों की संप्राप्ति।

मेदश्चमांसंचशरीरजंचक्लेदंकफोवस्तिगतःप्रदूष्य।
करोतिमेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेवपित्तंपरिदूष्यचापि॥
इत्यादि।

बस्ति जो मूत्र के थैली के समीप स्थान है जिसे पेड़ू कहते हैं उसमें गत अर्थात प्राप्त जो कफ वह बिगड़ कर मेद, मांस और शरीर के क्लेद को बिगाड़ कर कफज प्रमेह को उत्पन्न करता है, उसीप्रकार गरम पदार्थों के सेवन से पित्त कुपित होकर पूर्वोक्त मेद मांस को बिगाड़ कर पित्तज छ प्रकार के प्रमेह को उत्पन्न करता है। और वायु यह दोष क्षीण होने से धातू (कहिये यथा मज्जादिक) को ईंच कर (बस्ती के मुख पर लायकर) प्रमेह को प्रगट करता कफ से उत्पन्न दस प्रमेह साध्य है कारण

इसका यह है कि कफ दोष और मेदः प्रभृति दूष्य इन पर कटु तिक्तादि क्रिया समान है इस रोग में रोगग्राही प्रभाव ऐसा है कि इसमें तुल्य दूष्य को साध्यत्व कहा है और प्रमेह के बिना और रोगों को अतुल्य (असमान) दूष्यत्व साध्य का हेतु होता है पित्त के छः प्रमेह, विषम चिकित्सा करने से याप्य होते हैं अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जो शीत मधुर आदि द्रव्य वो मेद को बढ़ानेवाले हैं और मेद हरण कर्ता उष्ण कटुकादि द्रव्य वो पित्त कर्त्ता हैं ऐसे क्रिया विषम हैं । बादीसे प्रगट चार प्रमेह मज्जादि गंभीर धातु के आकर्षण करने से अत्यन्त पीड़ा करते हैं और इनकी विषमही क्रिया है इसीसे ए चार असाध्य हैं ।

इस स्थल में दोष और दूष्य दो शब्द कथित हुये हैं उनको स्पष्ट जानने के अर्थ नीचे श्लोक लिखा है ।

प्रमेह का दोष दूष्य संग्रह ।

कफःसपित्तंपवनश्चदोषामेदोस्रशुक्रांबुवसालसीकाः।
मज्जारसौजःपिशितंचदूष्याप्रमेहिणांविंशतिरेवमेहाः ॥

कफ पित्त और वायु यह तीनों दोष कहे जाते हैं और यही तीनों दोष कुपित हो रस एक धातु को छोड़ मेदादि छ धातों को दूषित करता है इससे मेदादि धातु दूष्य कहे जाते हैं। उक्त दोष मेदा, (अस्र) रुधिर (शुक्र) वीर्य (अंबु) जल अर्थात् जिससे शरीर में तरी रहती है; (वसा) चरबी जो हड्डी के भीतर रहती है (लसिका) मांस का जल, मज्जा रस, (ओज) पराक्रम और मांस इन सबों को दूष्य जानना, उक्त दोष और दूष्य इन दोनों से २० प्रकार के प्रमेह उत्पन्न होते हैं ।

तात्पर्य यह है कि अन्य रोगोत्पन्न में पूर्वोक्त धातु ऐसे दूषित

नहीं होते जो द्रवीभूत हों और इस रोग में द्रवीभूत हों मूत्रमार्ग द्वारा मूत्र के साथ मिल कर बहन करते हैं और जो ओज का नाम लिया गया है उसका कारण यह है कि जस २ मेदादि धातु कम होते जाते हैं उसीके साथही ताकत भी घटती जाती है।

प्रमेह रोग का पूर्वरूप।

दन्तादीनांमलाढ्यत्वंप्राग्रूपंपाणिपादयोः। दाहचिक्कणतादेहेतृट्श्वासश्चोपजायते॥

दांतों तथा आदि शब्द से जिह्वा तालू जानना इनमें मैलका अधिक जमना हाथ पैरों में जलन या बहुत गरम रहना, अंग का चिकनापन, प्यास की आधिक्यता, थोड़े से भी काम करनेसे हांफजाना अथवा श्वांस का होना, बालों में लटबंधना और नखों का अधिक बढ़ना समझना चाहिये यह प्रमेह के प्राग्रूप हैं अर्थात् ऐसे होने से जानना की प्रमेह रोग होनेवाला है। इसके बाद क्या होता है सो सुनिये।

प्रमेह का सामान्य लक्षण।

सामान्यंलक्षणंतेषां प्रभूताविलमूत्रता।

मूत्र कुछ अधिक और कईबार तथा कुछ गाढ़ा आना आरम्भ हो बस इसके बादही प्रमेह होता है और दोष दूष्य के संयोग वशात् मूत्रों का रंग बिरंगापन और उसके साथ आनेवाले पदार्थ दृष्टि गोचर होने लगते हैं।

विंशति २० प्रमेह के नाम ।

कफदोष से १० प्रमेह ।

१—उदकप्रमेह
२—इक्षुप्रमेह
३—सांद्रप्रमेह
४—सुराप्रमेह
५—पिष्टप्रमेह
६—शुक्रप्रमेह
७—सिकताप्रमेह
८—शीतप्रमेह
९—शनैःप्रमेह
१०—लालाप्रमेह

पित्तदोष से ६ प्रमेह ।

१—क्षारप्रमेह
२—नीलप्रमेह
३—कालप्रमेह
४—हारिद्रप्रमेह
५—मांजिष्ठप्रमेह
६—रक्तप्रमेह

वायुदोष से ४ प्रमेह होतेहैं ।

१—वसाप्रमेह
२—मज्जाप्रमेह
३—क्षौद्रप्रमेह
४—हस्तीप्रमेह

यह सब मिला के २० प्रकार के प्रमेह होतेहैं जिनका लक्षण यहहै॥

—:o:—

१० कफज प्रमेह के लक्षण ।

१—उदक प्रमेहवाले का मूत्र बहुत स्वच्छ सफेद, शीतल (मूत्र करते समय शीतल जल के समान मूत्रमार्ग में बोध हो) गन्ध रहित पानी के समान ॥

२—इक्षुप्रमेह में ऊख के रस के समान रंगत और मीठा होता है उसमें चींटें भी लगते हैं किन्तु रोग असाध्य नहीं होता ॥

३—सांद्रप्रमेहवालेका मूत्र रात को पात्र में धर रखने से गाढ़ा हो जाता है और नीचे गँदला जम भी जाता है ॥

४-सुराप्रमेह-यह मूत्र काफूरे में देखने से नीचे गाढ़ापन और ऊपर का भाग पतला रंगत मटमैला या कुछ सुरखी मायल होताहै ॥

५-पिष्ठप्रमेहवाले का मूत्र पिसेहुये चावल के पानी के समान होताहै ॥

६-शुक्रप्रमेह-इस रोग में मूत्र के साथ मिलकर वीर्य्य निकलता है ॥

७-सिकताप्रमेह-इस प्रमेह वाले के मूत्र के साथ बालू तथा नदी के रेत के समान वस्तु आता है और किसी को उसके निकलने में दर्द भी होताहै उसीको हिकमतवाले रेगमसाना रोगभी कहतेहैं ॥

८-शीतप्रमेह-इसरोगवाला मधुर तथा अत्यन्त शीतल ऐसा बारम्बार मूतता है। किन्तु सुश्रुत आदि कई महाशयों ने निज रचित संहिता में शीतप्रमेह को नहीं लिखा इस स्थल में उन्होंने लवणमेह लिखा है (विशदंलवणतुल्यंलवणमेही) लवणप्रमेहवाले का मूत्र विशद् लवण जल के समान होता है ॥

९-शनैःप्रमेह-इस रोग में बारम्बार और थोड़ा २ पेशाब होता है और उसमें किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होती जैसा कि मूत्रकृच्छ्र में होता है कहने का सबब यह है कि कितने लोग शनैः प्रमेह को मूत्रकृच्छ्र समझते हैं सो भूल है ॥

१०-लालाप्रमेह-जिसका मूत्र लार के समान तारयुक्त और चिकना होवै वह लालाप्रमेह है किन्तु इस प्रमेह का भी सुश्रुत में बयान नहीं है बल्कि इस स्थल में फेन प्रमेह कहा है (स्तोकंस्तोकंसफेनं फेनमेहीमेहति) बस्ति स्थान में थोड़ासा प्रतीत हो और मूत्र झागदार अर्थात् मूत्र के ऊपर फेन २ सा जमजाता है और प्रायः लालाप्रमेह और फेनमेही दोनों देखने में आते हैं ॥

---

६ पित्तज प्रमेह के लक्षण ।

१–क्षारप्रमेह–में खारीजल के समान गन्ध, वर्ण, रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है ॥

२–नीलप्रमेह–नीलेरंग का अर्थात् पपैया पक्षी के पंख के समान रंगका पेशाब होता है ॥

३–कालप्रमेह–इस प्रमेह में काली स्याही के समान मूत्र उतरताहै किन्तु सुश्रुत में इसकी गणना नहीं है इसके स्थल में उन्होंने अम्लप्रमेह को कहा है (अम्लरसगन्धअम्लमेही) जिसके मूत्र में खट्टी दुर्गन्ध आवै उसको अम्लमेही कहते हैं ॥

४–हारिद्रप्रमेह–इसमें गहरी हल्दी के रंग के समान और दाहयुक्त मूत्र होता है ॥

५–माञ्जिष्ठप्रमेह–इसमें मनुष्य मंजीठ के रंग के समान लाल और आम दुर्गन्धि सहित मुतता है ॥

६–रक्तप्रमेह–इस रोग में दुर्गन्धि युक्त, गरम, खारा, और रुधिर के समान लाल रंग मूत्र उतरता है ॥

वातज ४ प्रमेह ।

१–वसाप्रमेह–इस रोग में मूत्र के साथ चर्बी मिलकर आती है ॥

२–मज्जाप्रमेह–इसमें मज्जा के समान अथवा मज्जा मिला हुआ बार-म्बार पेशाब होता है ॥

३–क्षौद्रप्रमेह–शहद के समान रंगवाला, अथवा मीठा कसैला पेशाब होता है, जिसपर चींटी चींटे और मक्खियां बैठती हैं ॥

४–हस्तिप्रमेह–इस रोग में मस्त हाथी के माथे से जैसा मद बहता है उस मद के समान निरन्तर वेग रहित जिसमें तार निकले और आंदरते २ याने ठहर २ कर पेशाब होता है ॥

कफप्रमेह के उपद्रव ।

अविपाकोऽरुचिश्छर्दी ज्वरःकासःसपीनसः ।
उपद्रवाःप्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥

अन्न का यथार्थ न पचना अथवा कभी पचना कभी न पचना, याने भोजन पचने की शिकायत कुछ न कुछ बनी रहना, भोजन पर अरुचि, वमन याने कभी २ भीतर पित्त सञ्चित होने से जी मचलाना या वमन होना, हरारत खांसी बारम्बार जुकाम होना या जुकाम का बना रहना यह कफजप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

पित्तप्रमेह के उपद्रव ।

वस्तिमेहनयोःशूलं मुष्कावदरणंज्वरः ।
दाहस्तृष्णाम्लिकामूर्च्छा विड्भेदःपित्तजन्मनाम् ॥

वस्ति (पेडू) और लिंग में दर्द हो और किसी २ को लिंग में दर्द न होके सिर्फ पेडू में दर्द हुआ करता है अथवा ऐसा मालूम हो कि पेडू में कोई चीज भरा है यह भी कभी २ अंडकोशों का फूलना या पक कर फूटना और कभी २ हरारत का होना प्यास की आधिक्यता खट्टी डकार आना शिर में चक्कर या आंख तले अँधियारा होना दस्त पतला ये सब पित्त प्रमेह के उपद्रव हैं ॥

प्रमेह पिड़का।

सराविकाकच्छपिका जालनीविनताऽलजी। मसूरिकासर्षपिका पुत्रिणीसविदारिका। विद्रधिश्चेतिपिड़िकाः प्रमेहोपेक्षयादश। संधिमर्मसुजायन्ते मांसलेषुचधामसु ॥

१–सराविका–(अन्तोन्नताचतद्रूपा निम्नमध्यासराविका) जो पिड़िका ऊपर के भाग में कुछ ऊंची हो और बीच में बैठी सी हो जिस प्रकार मट्टी का पिआला होता है उसको सराविका कहते हैं ॥

२–कच्छपिका–(सदाहाकूर्मसंस्थाना ज्ञेयाकच्छपिकाबुधैः) जो पिड़िका कछुआ के पीठ के समान कुछ ऊपर को उभड़ी और दाह युक्त हो याने भीतर जलन हो उसे कच्छपिका कहते हैं ॥

३–जालिनी–(जालिनीतीव्रदाहातु मांसजालसमावृता) जो पिड़िका अधिक दाह से युक्त और मांस जाल में व्याप्त हो उसे जालिनी कहते हैं ॥

४–विनता–(अवगाढरुजोत्क्लेदापृष्ठेवाप्युदरेऽपिवा। महतीपिड़कानीला साबुधैर्विनतास्मृता) जो पिड़िका पीठ और पेटमें होती हैं अधिक पीड़ा करती है ठढी बड़ी और नीले रंग की होती है उसकी विनता संज्ञा है ॥

५–अलजी–(रक्तासितास्फोटवती दारुणात्वलजीभवेत्) जो फुड़िया लाल और काले रग की हो और उसके आस पास छोटी २ फुन्सियां भी हों तथा जलन आदि अनेक उपद्रव करके युतहो उसको अलजी कहते हैं यह पिड़िका बहुत क्लेशदायक होती है और बहुत कठिनता से आराम होती है और नहीं भी आराम होती ॥

६–मसूरिका–(मसूरदलसंस्थाना विज्ञेयातुमसूरिका) जो पिड़िका मसूर के दाल के समान हो जैसी मसूरिका नामक माता होती है उसको मसूरिका कहते हैं ॥

७–सर्षपिका–(गौरसर्षप संस्थाना तत्प्रमाणाचसर्षपी) जिन फुन्सियों का आकार सफेद सरसों के समान हो उनको सर्षपिका कहते हैं ॥

८–पुत्रिणी–महत्यल्पचिताज्ञेया पिड़िकाचापिपुत्रिणी) बीच में एक बड़ी फुन्सी हो और उसके आसपास चारोंओर छोटी २ अनेक फुंसियां हों उसको पुत्रिणी कहते हैं ॥

९–विदारिका–(विदारीकंदवद्वृत्ता कठिनाचविदारिका) जो फोड़ा विदारीकंद के समान बड़ा हो और करीब २ उसीके आकार भी हो किन्तु गोलाकार और छूने से बहुत कड़ा मालूम हो उसे विदारिका कहते हैं।

१०–विद्रधिका–(नामक फुन्सी विद्रधि नामक पिड़िका के समान होती है, प्रायः यह फूट के बिधर भी जाती है यह दश प्रकार की पिड़िका प्रमेह रोग के बढ़जाने से होती भी उन्हीं को है जिनका अन्त अवस्था यह संसार परित्याग करने का है। यह मत भावप्रकाश माधोनिदान आदि ग्रन्थों का है किन्तु भोजसंहिता और सुश्रुतसंहिता के मत से नौ ९ पिड़िका है और चरक के मत से सात ही है ॥

पिड़िका उत्पन्न होनेका मुख्य कारण।

येयन्मयाःस्मृतामेहास्तेपामेतास्तुतन्मयाः। विनाप्रमेहमप्येताजायन्तेदुष्टमेदसः। तावच्चैतानलक्ष्यन्तेयावद्वास्तुपरिग्रहः ॥

जो प्रमेह जिन २ दोषों के अधिक कोप होने से होता है उन्हीं दोषों के उत्पन्न होने से प्रमेहपिड़िकायें भी होती हैं और बिना प्रमेह रोग के भी दुष्ट मेद होने से पिड़िका होती है इस श्लोक के लिखने का मुख्य-प्रयोजन यह है कि पिड़िका होने ही से प्रमेह रोग नहीं जान लेना क्योंकि बिना प्रमेह के भी दुष्ट मेद से पिड़िका होती है (इसमें धन्वन्तरि जी की राय है कि जितने प्रकार के प्रमेह होते हैं उतने ही प्रकार की तज्जन्य पिड़िका भी होती है) और पिड़िकाओं की जब तक गांठ नहीं बंधती तब तक यह नहीं दिखलाई देतीं कहने का तात्पर्य यह है कि प्रमेह के अन्तमें प्रमेह पिड़िका होना आरंभ होजाती है किन्तु जब मेद में पूर्ण रूप से दोष उत्पन्न होता है तब पिड़िका की गांठ बंध जाती है ॥

असाध्य पिड़िका ।

गुदेहृदिशिरस्यंसे पृष्ठेमर्म्मणिचोत्थिताः ।
सोपद्रवादुर्वलस्यापिड़काः परिवर्जयेत् ।

जो पिड़िका गुदा याने पाखाने के स्थान में होती है नजानने से लोग इसी पिड़िका को जब वह फूटकर वहजाती है और फिर सर्वदा थोड़ा रसा करती है लोग भगंदर समझते हैं किन्तु भगंदर में और इस पिड़का में थोड़ा भेद है, भगंदर में कई छिद्र हो जाते हैं और यह पिड़का एकही छिद्रवाली रहती है । हृदि अर्थात् छाती या धुकधुकी के ऊपर अथवा यत्रु के ४ अंगुल नीचे होती है और इस स्थान के बाजे २ फुड़ियोंमें भुवासा एक प्रकार का गूदा निकलता है । कंधा और शिर तथा पीठ में और मर्मस्थान में पिड़िका होती है सो असाध्य होती है क्योंकि प्रायः उक्त पिड़कायें प्रमेह से दुर्वल और उपद्रव युत पुरुष को होती है और बिना प्रमेह आराम भये पिड़का आराम नहीं होती

वातजप्रमेह आराम नहीं होता इससे प्रमेह पिड़िकाभी आरामनहीं होती, उसे कहते हैं।

वातज प्रमेह असाध्य क्यों है ?

कृत्स्नंशरीरंनिष्पीड्यमेदोमज्जावसायुतः ।
अधःप्रक्रमतेवायुस्तेनासाध्यस्तुवातजाः ॥

वातजप्रमेह जब शरीर को दुर्बल कर और संपूर्ण शरीर को पीड़न करता है अर्थात् संपूर्ण शारीरिक धातुओं को मूत्र मार्गसे बाहर निकाल देता है और मेद मज्जा एवं चर्बी से युत होकर वायु जब उन सबोंको नीचे को प्रेरण करता है तब वातज प्रमेह असाध्य होते हैं। यही कारण है असाध्य होने का ॥

पिड़का के उपद्रव चरक से।

तृट्कासमांससंकोच मोहहिक्कामदज्वराः ।
विसर्पमर्मसंरोधाः पिड़कानामुपद्रवम् ॥

पियास का अधिक लगना, खांसी, मांस का सिकुड़ना जिसे झुर्री पड़ना कहते हैं जैसा अति वृद्धि पुरुषों के शरीर में सिकुड़न पड़ जाता है (मूर्छा) गशआना या बदहोशी, हिचकी, नेत्रमें नशा सरीखा मालुम होना सफीप ज्वर का बना रहना, विसर्प नामक फुड़िया, मर्म संरोध होना यह सब प्रमेह पिड़िका के उपद्रव हैं ॥

असाध्य होने का पूर्व ।

सचापिगमनात्स्थानं स्थानादासनमिच्छति ।
आसनादुत्रशुतेशय्यां शयनात्स्वप्नमिच्छति ॥

जब मनुष्य को प्रमेह रोग असाध्य होनेवाला होता है तो उसको क्रमशः ऐसी सुस्ती आने लगती है कि चलने फिरने की ताकत कम हो जाती है क्योंकि चलने से खड़ा रहना अच्छा लगताहै, फिर खड़ा रहने से बैठना अच्छा लगता है और बैठने से लेट रहना और लेट रहने से सोना अच्छा लगता है यह लक्षण क्रमशः होने से चाहे उपद्रव रहित भी रोगी हो अन्त में शय्यागत हो प्राण परित्याग करता है ॥

मनुष्य को उचित है, प्रमेह के निदान शरीरमें कुछ भी दृष्टि होने लगे उसके हटाने की चेष्टा प्रथमही से करना आरंभ कर दे क्योंकि बढ़ जाने पर प्रमेह रोग नहीं आराम होसता है, और मूत्र का कुछ अधिक आना दबैला या गाढ़ा पेशाब का होना तथा प्रतिदिन सुस्तीका घेरना आदि देखने ही से चिकित्सा शुरू कर दे और सर्वदा अपने खाने पीने प्रसंगादि का नियम ऐसे ढंग से रक्खे ताकि प्रमेह रोग शरीर में न होने पावे ॥

प्रमेह भेद ।

द्वौप्रमेहौसहजोऽपथ्यनिमित्तश्चभवतः । तत्रसहजो मातृपितृबीजदोषकृतः । अहिताहारजोऽपथ्यनिमित्तः । तयोःपूर्वेणोपद्रुतः कृशोरूक्षोऽल्पासीपिपासासुभृशं परिसरणशीलश्चभवति । उत्तरेणस्थूलोवहवाशीस्निग्धशय्या-

सनस्त्वप्रशीलःप्रायेणेति । तत्र, कृशमन्नपानप्रति संस्कृताभिः क्रियाभिश्चिकित्सयेत् । स्थूलमपतर्पणयुक्ताभिः ॥

सुश्रुतसंहिता से अब हम प्रमेह के दो भेद दिखलाते हैं । एक सहज दूसरा अपथ्य निमित्त । इनमें से जो माता पिता के दूषित वीर्य्य और रज से उत्पन्न हुआ बालक जिसको समय पाकर प्रमेह रोग होता है जिसका बयान हम ऊपर लिख आये हैं उसको सहज प्रमेह कहतेहैं, और जिसे मिथ्याहार और मिथ्या विहार अर्थात् अहिताचार से जो प्रमेह उत्पन्न होता है, उसको अपथ्य निमित्तिज प्रमेह रोग कहते हैं, जिस मनुष्य के सहज प्रमेह होताहै वह मनुष्य दुबला रुक्ष थोड़ा भोजन करनेवाला होता है और पियास उसे अधिक लगती है (परिसरणशील) अर्थात् बहुत चलने फिरने वाला होता है । सहज प्रमेह वालेको प्रायः यक्ष्मा रोग हो जाता है विशेषकर स्त्रियों को दश बारह वर्ष के आयु होने से ही रोग आरंभ हो जाता है और क्रमशः बढ़ कर अन्ततोगत्वा असाध्य हो जाता है । यथार्थ परीक्षित है कि माता पिताके वीर्य्यदोष से उत्पन्न बालक के उष्णता पाकर प्रायः पेशाब चूना सरीखा जम जाया करता है और चिकित्सा न होने से वही अवस्था पाकर घोर रूप से निदान उपस्थित करता है ॥

सहज प्रमेहवाले की चिकित्सा उत्तम अन्न पानादि से संस्कार की हुई क्रियाओं के द्वारा करे क्योंकि इस प्रमेहवाला स्वयं कृश रहता है यदि और भी कृश आदि क्रिया की गई तो रोगी अभ्यागत हो जायगा और अपथ्य जनित रोग में कृशकारक उपाय करना चाहिये क्योंकि उक्त रोगी स्थूलकाय होता है यद्यपि उसमें शारीरिक पुष्ठता नहीं है सिर्फ देखने में मोटा ताजा मालूम होता है किन्तु बिना कृशकारक क्रिया किये रोग समूल नष्ट होना अति दुष्कर है ॥

प्रमेह में बर्जित वस्तु ।

सर्वएवचपरिहरेयुःसौवीरकतुपोदकसुक्तमैरेयसुरासवतोय पयस्तैलघृतेक्षुविकारदधि पिष्टान्नाम्लपानकानि-ग्राम्यानूपौदकमांसानिचेति ॥

प्रमेह रोग प्राप्त होने पर रोगी को चाहिये की निम्नलिखित पदार्थों को परित्याग करे जैसे (कांजी) सिरका, रायता और आम्ल पदार्थ आदि जैसे मूली आदि का आचार जो गरम पानी तेल में तीन चार दिन धूप में रखने से खट्टा हो जाता है (तुषोदक) भूसी आदि का जल जो धूप के योग से खट्टा भया हो (शुक्त) कच्चे आदि का सिरका (मैरेय) यह भी मद्य विशेष है अर्थात् उक्त नाम का शराब है (सुरा) मामूली शराब (आसव) जो जमीन में गाड़ के बनता है कुमारी आसव आदि (तोय) अधिक जल का पीना (पय) दूध सहज रोग में अधिक निषेध नहीं है (तेल) तेल खाने में बिलकुल परित्याग मर्दन में लाभ दायक है (घृत) अधिक घी न खावे किन्तु दाल तरकारी बघार सक्ता है तथा सहज प्रमेहवाला कुछ अधिक घी भी खा सक्ता है (इक्षुविकार) ऊख का रस राब वगैरह, दही और पीसा अन्न सेतुआ आदि (अम्लपानकानि) अमली आम आदि खट्टे पदार्थों का सरबत तथाग्राम्य, औदक और आनूप पशुओं का मांस जिसका बयान ऊपर करचुके हैं, रोगी यदि आरोग्य की इच्छा रखता हो तो अवश्य त्याग करे ।

प्रमेह में सेवन वस्तु ।

ततःशालिषष्टिकयवगोधूमकोद्रवोद्दालकाननवान्भुञ्जीत। चणकाढकीकुलत्थमुद्ग विकल्पेनतिक्तकषायाभ्यां

शाकगणाभ्यांनिकुम्भेंगुदीसर्षपातसीतैलसिद्धाभ्यां यद्गमूत्रैर्वाजाङ्गलैमांसैरपद्घृतमेदोभिरनम्लैरघृतैश्चेति ॥

प्रमेह रोगवालों के सेवन योग्य यह वस्तु हैं. पुराना बासमती आदि चावल और शाठी के चावल का या कोदव के चावल का भात, जव और गेहूं की रोटी किन्तु सहजवाले को जौकी रोटी लाभदायक कम होगी और उद्दालक आदि पुराने अन्नों को सेवन करें तथा चना अरहर कुरथी और मूंग की दाल किन्तु सबों से उत्तम मूंग और अरहर की दाल दोनों को एक में मिला कर खाना अच्छा है. तरकारी में करेला आदि चरपरे कसायले साग जो गोंदी, सरसें, अलसी के तेल में अच्छे प्रकार भूंजेगये हों (किन्तु तेल की भूंजी तरकारी आदि सहज. प्रमेहवाले के लिये कदापि लाभदायक न होगा) अथवा जांगल जीओं के मांस के यूस के साथ भी रोटी का खाना उत्तम है किन्तु बलकारी मेद मज्जावर्द्धक द्रव्य अवश्य प्रमेह रोगवाले को उत्तम नहीं है यदि खाने की इच्छा हो तो मांस के भीतर से मेदा निकाल कर और जिसमें घी खटाई न पड़े बनाकर खावे ।

प्रमेह चिकित्सा ।

अब हम प्रमेह रोग के नाशनार्थ अनेक औषध लिखते हैं, जिनके द्वारा अनेक रोगियों को आराम किया और निदान पूर्वक चिकित्सा करने से आराम होने की पूरी सम्भावना है । आयुर्वेद में जिस तरह बीसों प्रमेह को कहकर पश्चात् सहज और अपथ्यजनित दो प्रकार का प्रमेह दिखलाया है किन्तु उन दोनों के लिये औषध भिन्न २ नहीं लिखा, यह विचार वैद्यों के बुद्धिपर छोड़दिया है, जो लायक हैं वे रोगी की प्रकृति अवस्था समय और औषधियों का गुण देख कर उत्तम औषध खिलाय रोगी को आराम करदेते हैं, अज्ञान वैद्य पुस्तक में लिखी हुई

तारोकी दवाईयों के गुणों को पढ़ मनी पर मोहित हो जाते हैं और झट उन्हीं दवाईयों को बनाय रोगी को खिलाते हैं जिससे रोग न घटकर और भी बढ़जाता है। इसलिये हम उन दवाईयों को लिखते हैं, जो दोनों प्रकृति के रोगियों को लाभ पहुंचा सक्ता है।

जब देखे कि रोग नवीन है अथवा कुछ २ निदान मिलते हैं तो रोगी को तेज दवा न देके साधारन दवा से आराम करै और पथ्य ठीक रक्खे क्योंकि पथ्य ठीक न रखने से रोग नहीं छूटता विशेषकर प्रमेह रोग, इसी से सुश्रुत जी ने बड़े आदमियों के खाने पीने में बुरी वस्तु मिला देने को लिखा है जिस्से घृणा उत्पन्न होने से वह अपथ्य वस्तुओं को त्याग दे. सुश्रुतसंहिता के चिकित्सा स्थान ग्यारहवें अध्याय में लिखा भी है।

कषायाणिवापातुं महाधनमहिताहार मौषधद्वेषिणमीश्वरं वा पाठाभयाचित्रक प्रगाढ़मनल्यमाक्षिक मन्यतममासवं।

प्रमेह रोगवाले को कषाय का पान कराना बहुत हित है किन्तु प्रायः धनवान रोगी अपथ्य करडालते हैं और कड़वी औषधों को भी पीना नहीं चाहते इसलिये राजाओं को पाढ़ी, हड़ और चीता के क्वाथ में बहुतसा सहत डालकर पिलावे अथवा मदकारक आसव बनाकर पिलावे।

मधुकपित्थमरिचानु सिद्धानिचास्मैपानान्युपहरेत् १ उष्ट्राश्वेतरखरपुरीषचूर्णानि चास्मैदद्याशनेषु। हिंगुसैन्धवयुक्तैर्यूषैः सार्षपैश्चरागैर्भोजयेत्॥ अविरुद्धानिचा-

रोग में वायु गरम हो के मेदा के साथ मिल जाता है जिससे शरीर तैयार होती जाती है और बल घटता जाता है उसके दमनार्थ कसरत अवश्य करना चाहिये क्योंकि शारीरक परिश्रम से शरीर दुबली होतीहै जो प्रमेह रोग में फायदा करता है। किन्तु प्रायः यह नियम अपथ्य जनित प्रमेह रोग का है ॥

बहुत लोगों को विश्वास है कि प्रमेह रोगमें कसरत करना निषेध है सो उनकी भूल है, क्योंकि कसरत न करने से प्रमेह रोग होता है, सिर्फ निम्नलिखित रोगों में कसरत न करना चाहिये ॥

रक्तपित्तकृतःशोषो श्वासकासक्षतातुरः ॥
भुक्तवान्स्त्रीपुचक्षीणोभ्रमार्त्तश्चविवर्जयेत् ॥

रक्तपित्ती, दुर्बल और जो किसी रोग से सूखा जाता हो दमा, खांसी, और घाव से पीड़ित या भोजन के उपरान्त अति स्त्री प्रसंग करनेवाला, क्षीण पुरुष और जो रास्ता चलनेसे थका हो इन मनुष्योंको कसरत नहीं करना चाहियें ॥

प्रमेह पर औषध ।

उदकप्रमेह—उदकप्रमेह वाले को चाहिये कम से कम एक मास पर्य्यन्त नीम के अंतरछाल का क्वाथ पिये । जैसे दो तोला नीम के छाल को एक पाव पानी में मृत्तिका पात्र में पकावे जब आधपाव या एक छँटाक जल रह जाय मल छानकर एक तोला शहद डाल कर पिये । यदि खुश्की अधिक रहती हो तो, क्वाथ न बना के आधपाव जल में नीम के छाल को डाल के भिंजाकर ओश में रख देय और सबेरे मल छानकर शहद डालकर पिये इसी प्रकार सबेरे भिगावे साम को पिये ॥

अथवा धव का फूल, अर्जुन वृक्ष और शालवृक्ष की छाल और सफेदचन्दन सबों को दो तोला ले क्वाथ बनाय शहद डाल के या रात में भिगा हिम बना कर शहद डाल के पिये, यह पूर्ण मात्रा है, रोगी बल हीन हो तो मात्रा कम कर लेना चाहिये ॥

२—इक्षुमेही को अरनी का काढ़ा या हिम पिलावे॥

३—चान्द्रप्रमेह वाले को सातला के जड़ की छाल का काढ़ा या हिम एक मास पर्य्यन्त पिलाना चाहिये॥

४—सुराप्रमेह वाले को नींब वृक्ष के अतरछाल का क्वाथ या हिम पिलावे॥

५—पिष्टप्रमेह रोगीको दोनों हरदी अर्थात् हरदी और दारु हरदी का काढ़ा या हिम पिलावे जबतक पेशाब से पिसान का आना बन्द न होय अथवा थोड़े दिनों तक पीने के पश्चात् आगे कही हुई औषधियां सेवन करावे॥

६—शुक्रमेही को सफेद दूब की जड़, शैवाल और कंशा की गरी का काढ़ा अथवा हिम पीना चाहिये॥

७—शिक्तामेह में चीते की जड़ के छाल का काढ़ा या हिम बहुत फायदा करता है। शिक्ताप्रमेह का निदान ठीक मिला लेना चाहिये क्योंकि शिक्ताप्रमेह के निदान से शर्करा रोग जो सुजाकके पके से होता है जिसको हिकमत में रेग मसाना कहते हैं और हकीम लोग शिक्ताप्रमेह को भी रेगमसाना कहते हैं। इन दोनों में भेद है शिक्ताप्रमेह मूत्र के साथ सफेद रंग का वालू आता है और शर्करा में लाल रंग का रेत आता है जैसा प्रायः नदी या नारों में पाया जाता है॥

८—शीतप्रमेह—सुश्रुत में शीतप्रमेह की जगह लवणमेह लिखाहै यह भी ठीक है क्योंकि निदान उसका भी मिलता है। अन्य ऋषियों ने जो शीतप्रमेह लिखा है उसका निदान प्रत्यक्ष में यह है। शीतप्रमेहवाला मूत्र करते समय कांप उठता है याने रोंगटे खड़े हो जाते हैं और कुछ जाड़ा सा बोध होता है। इस प्रमेहवालों को कुछ दिनों तक पाढ़ी और अगर का काढ़ा अथवा हिम अवश्य पिलाना चाहिये॥

९—शनैःप्रमेह वाले को खैर वृक्ष की छाल का क्वाथ या हिम पिलाना उत्तम है ॥

१०—लालाप्रमेह अथवा फेणप्रमेह दोनों एकही का नामहै इस प्रमेहवाले को सिर्फ त्रिफला का काढ़ा या हिम पिलाना उत्तम है । त्रिफला योग । हड़ का वक्कल १ भाग, बहेरा का वक्कल २ भाग, आंवला बीज रहित ४ भाग इसका नाम त्रिफला है ॥

उपरोक्त दशों प्रमेहों में क्वाथ या हिम में मिश्री की जगह शहद डालना चाहिये जिसकी मात्रा ३ मासा से लेकर एक तोला पर्य्यन्त है । कुछ दिनों तक यदि उपरोक्त क्वाथों के पीते हुये बीमारी आराम होते न देख पड़े तो आगे प्रमेह रोग पर जो बड़ी२ दवाइयां लिखीहै उसका सेवन करै ॥

क्वाथ और हिम का निर्णय ।

जाड़ा और वर्षा काल में क्वाथ और ग्रीष्मऋतु अर्थात् गरम दिनों में हिम बना के पीना चाहिये । दूसरे तरी और खुश्की पर निर्भर है, चाहे जो काल हो तर मिजाजवाले को क्वाथ और खुश्क मिजाज वाले को हिम पिलाना चाहिये ॥

पित्तज छः प्रमेह ।

१—क्षारप्रमेह वाले को भी त्रिफला का हिम पिलाना उत्तम है ।

२—नीलप्रमेह वाले को पीपल वृक्ष की छाल का क्वाथ वा हिम अथवा पीपल वृक्ष के पञ्चाङ्ग का चूर्ण गो दुग्ध के साथ पिलाने से लाभ होता है । अथवा खश, आंवला, नागरमोथा और हड़ इन्हों का क्वाथ या हिम पीने से फायदा होता है ॥

३—कालप्रमेह वाले को परवल का हार पात, नीम का अतरछाल, आंवला और गुर्च (गिलोय) इन चारों का क्वाथ या हिम मिश्री डाल के या शहद डाल कर एक मास पर्य्यन्त बराबर दोनों समय पथ्य सहित पीने से अधिक लाभ देखा गया है॥

४—हारिद्र प्रमेह रोग में मोथा, हड़, पद्माख और इन्द्रजौ इनका काढ़ा या हिम अथवा पठानीलोध, सुगन्धबाला, पीत चन्दन या श्वेत चन्दन और धव का फूल इन चारों का काढ़ा या हिम पीना श्रेष्ठ है। यदि हारिद्र प्रमेहवाले को दस्त साफ न आते हों तो अमिलतास के गूदे का काढ़ा देके रेचन करादे पश्चात् पुनः उपरोक्त काढ़े को पीने को देय।

५—माजिष्ट प्रमेह पर नीम का छाल, अर्जुन वृक्ष का छाल और कमलगट्टा इन तीनों का क्वाथ या हिम पिलाना निस्सन्देह फायदा करता है। अथवा शीतलचिनी जिस को कबाबचिनी कहते हैं, उसका चूर्ण कर दो दो मासे की पुड़िया बनालेय, दो दो घंटे पर एक २ पुड़िया मुख में रखकर थोड़े जल से उतार जाय, जल का कोई नियम नहीं है एक छँटाक से लेकर एक पाव तक जल मनुष्य पी सक्ता है। प्रमेह रोग में अधिक जल पीने का निषेध है यदि सन्देह हो तो समझलेय कि इस दवा के साथ में जल पीना हानिकर नहीं है दूसरे इस औषध के साथ मिलाकर वह मूत्र के द्वारा निकल जाता है। दूसरे अधिक जल का पीना वायु और श्लेष्मा जनित प्रमेह रोग में बहुत निषेध है।

६—जब तक पेशाब मूत्र निर्मल जल के समान न हो जाय बराबर दवा खाता जावै। मूत्र स्वच्छ निर्मल होने के बाद आगे बयान की हुई कोई धातु वर्द्धक औषध का सेवन करे जब तक प्रमेह का सन्देह बिलकुल जाता न रहै। यह औषध जो सिर्फ शीतलचिनी है दसों प्रकार के प्रमेह रोगों को मूत्रद्वारा वीर्य की गरमी बाहर निकाल वीर्य शीतल और प्रसन्न करता है। जैसे उदरस्थ रोगों के शांत्यर्थ वैद्यलोग प्रकृति के अनु-

धार रेचनद्वारा मलसाफ करके तब औषध का प्रयोग करते हैं उसीप्रकार प्रमेह रोगों में उपरोक्त द्रव्यद्वारा मूत्रमार्ग से वीर्य का विकार साफ कर के कोई उत्तम औषध सेवन करावें तो बहुत शीघ्र रोग जाता रहे।

७–रक्तप्रमेह में शीतलचिनी से मूत्र साफ करने की हिदायत जरूरत है क्योंकि इस प्रमेह में आभ्यन्तरिक उष्णता मनुष्य के शरीर में बहुत फैल जाती है और उसका दिल इस कदर कमजोर होजाता है कि विचार की स्थिरता जाती रहती है। प्रथम तो रोगी का विश्वास दवाइयों से कम होजाता है दूसरे औषध देर में गुण दिखलाती है, इस्से मूत्र साफ करदेने से रोगी का मिजाज शीतल हो जाता है और आराम होने का विश्वास आजाता है पश्चात् इस क्वाथ को देय।

८–प्रियंगु का फूल, लाल कमल का फूल, नील कमल का फूल और पलाश का फूल इन चारों को मिश्री मिला के चाहे काढ़ा पिलावे या हिम पिलावे अवश्य लाभ होगा।

अन्य प्रयोग।

अमृतायारसःक्षौद्र युक्तसर्वप्रमेहजित्। हारिद्रचूर्णायुक्तोवा रसोधात्र्याःसमाक्षिकः॥

ताजी गुर्चे को शिल पर कुचल दो तोला उसका स्वरस ले उसमें छः मासा शहद डाल कर पीजावै इसी प्रकार दोनों समय गुर्चे का स्वरस और शहद पीने से पित्त तथा वात जनित प्रमेह रोग आराम होता है इसी प्रकार ताजा आंवले का स्वरस ४ तोला, हलदी का चूर्ण एक माशा, और शहद छः मासा मिला कर दोनों समय पीने से सब प्रमेहों का नाश होताहै खासकर पित्तजनित प्रमेह रोगतो अवश्यही नाश होता है। किन्तु इस दवा को तीन महीने तक बराबर सेवन करना चाहिये।

घंटे पश्चात् चार आंवला घी और शहद के साथ खावे और दूध आदि स्निग्ध पदार्थों का सेवन करे किन्तु हलका भोजन करे ता कि अजीर्ण न हो क्योंकि रसायन में कोष्ठबद्ध और दस्त का पतला होना दोनों हानिकर है । इसतरह एक वर्ष पर्य्यन्त त्रिफला रसायन का सेवन करता रहै तो अजर (बुढ़ापा न हो के) और प्रमेहादि व्याधि रहित होकर सौ वर्ष पर्य्यन्त मनुष्य जीता रहै ॥

रसायनविधिभ्रंसाज्जायेरन्व्याधयोयदि । यथास्वमौषधन्तेषां कार्यंभुक्त्वारसायनम् ॥

रसायन विधि में गड़बड़ हो जाने से यदि रोग उत्पन्न हो जाय अथवा प्राचीन रोग उभड़ आवे तो रसायन बन्द करके अन्य औषधियों से रोग को शीघ्र शान्ति कर पुनः रसायन सेवन करना आरंभ करे ॥

रसायन सेवन करनेवाला झूठ बोलना, क्रोध करना, शराब पीना, स्त्री प्रसंग करना, जीव मारना, बहुत मेहनत करना, चिन्ता, शोक, जागरण, उपवास, निष्ठुरता आदि अपथ्यों को त्यागकर सत्यवादी, प्रियवादी, दयापरायण, उचित समय पर सोने, जागनेवाला, समय पर शौच दन्तधावन, स्नान, दान, संध्या, भोजन करनेवाला, जितेन्द्रिय और सिद्धानों का सेवक होना चाहिये क्योंकि ।

यथास्थलमनिर्वाह्यदोषान्शारीरमानसान् । रसायनगुणैर्जन्तुर्युज्यतेनकदाचन ॥

इसका अर्थ यह है कि जो मनुष्य शारीरिक और मानसिक दोषों के बिना दूर किये रसायन सेवन करता है उसको रसायन का बिलकुल फल नहीं मिलताहै तात्पर्य्य यहहै कि आरोग्यता प्राप्त करने में यथार्थ पथ्य सेवन करने की निहायत जरूरत है ॥

कफपित्त प्रमेह पर लोध्रासव ।

लोध्रंशठोपुष्करमूलमेला मूर्वाविड़ंगंत्रिफलायवानी । चव्यंप्रियंगुंक्रमुकंविशालां किराततिक्तंकटुरोहिणीं च ॥ भार्ङ्गींनतंचित्रकपिप्पलीनां मूलंसकुष्ठातिविषां च पाटाम् । कलिङ्गकंकेसरमिन्द्रसाह्वा नन्तासिपत्रंमरिचप्लवंच ॥ द्रोणेऽम्भसःकर्षसमांश्चपक्त्वा पूतेचतुर्भागजलावशेषे । रसार्धभागंमधुनःप्रदाय पक्षंनिधेयोघृतभाजनस्थः ॥ लोध्रासवोऽयंकफपित्तमेहान्क्षिप्रंनिहन्याद्द्विपलप्रयोगात् । पांडुामयार्शांस्यरुचिंग्रहण्या दोषंवलासंविविधंचकुष्ठम् ॥

(लोध्र) पठानी लोध (शठी) कचूर (पुष्करमूलं) पोहकरमूल (एला) छोटीलायचीके दाने (मूर्वा) मुर्रा (विडंगं) वायविरंग, त्रिफला, (यवानी) अजवायन (चव्यं) चाव, प्रियंगुफूल (क्रमुकं) दक्षिणी चिकनीसुपारी (विशाला) इंद्रायण के जड़ की छाल (किराततिक्तं) कडुआचिरायता (कटुरोहिणी) कुटकी (भार्ङ्गी) भारंगी (नत) तगर (चित्रक) चीतेकी जड़का छाल (पिप्पलीमूल) पिपरामूल (कुष्ठ) कूट (अतिविषा) अतीस और पाढ़ी (कलिंगकं) इन्द्रजव (केशरं) नागकेशर अर्जुन वृक्ष की छाल, जवासा, इलं कालीमिर्च और मोथा इन छब्बीस ओषधों को एक २ तोला ले अधकचरा कर १२ सेर जल में रात के भिजा देय मृत्तिकापात्र अथवा कलईदार वर्तन हो, सबेरे धीमी आंच से पकावें जब चौथाई जल याने ३ सेर पानी रह जाय शीतल कर मल के छान लेय और उसमें १॥ सेर शहद मिला किसी चिकने पात्र अथवा कुपाममें भर मुख बन्द कर दे ताकि भीतर हवा न जाने पावे १५ दिन घर रखे बाद १५ दिन के फिर उसे छान बोतलमें भर देय-इस आसव का मात्रा छः-मासासे दो तोला

सक्त है बल के अनुसार मात्रा बना लेय. इस आसव को दोनों समय परहेज के साथ पोने से कफपित्त जनित प्रमेह रोग आराम होता है। यह आसव पांडु और बादी बवासीर को भी फायदा करता है जिस प्रमेहवाले को इस आसव के पीने से दस्त जारी हो उसके दवा में इन्द्रायन न छोड़े ॥

देवदार्वारिष्ट बात कफ प्रमेह पर।

तुलार्द्धंदेवदारुस्याद्वासाचपलविंशतिः । मंजिष्टेन्दुयवादन्ती तगरंरजनीद्वयम् ॥ रास्नाकृमिघ्नंमुस्तंच शिरीषंखदिरार्जुनौ । भागान्दिशपलान् दद्याद्यवान्यावत्सकस्यच ॥ चन्दनस्यगुडूच्याश्च रोहिन्याश्चित्रकस्यच । भागानष्टपलानेतानष्टद्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥ द्रोणेष्टापेकपादेच पूतेशीतेप्रदापयेत् । धातक्याःषोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम् ॥ व्योषस्यद्विपलंदद्यात् त्रिजातस्यचतुःपलम् । चतुपलंप्रियंगुश्च द्विपलंनागकेशरम् ॥ सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्य घृतभांडेनिधापयेत् । मासादूर्ध्वंपिवेद्देनं प्रमेहंहंतिदुर्जयम् ॥ वातरोगान्ग्रहण्यर्शो मूत्रकृच्छ्राणिनाशयेत् । देवदार्वादिकोरिष्टोदद्रुकुष्टविनाशनः ॥

देवदारु तेलकी गांठ १०० तोला, (वासा) रूसा की पत्ती २० तोला मजीठ, इन्द्रजव, जयालगोटेकीजड़, तगर, हरदी, दारुहरदी, रासन, वायभिरंग, मोथा, शिरस की छाल, खैर वृक्ष की छाल, अर्जुन वृक्ष की छाल यह सब दश २ तोला, अजमोदा, कुरैया की छाल, सफेदचन्दन, गुरिच, कुटकी, चीतें के जड़ का छाल, यह छः औषध आठ २ तोला

लेय सब दवाइयों को अधकचरा कर सवामन जल में रात को भिजा देय सबेरे आंच पर चढ़ाय धीमी आंच से पकावे जब चौथाई जल अर्थात् १२ सेर जल बाकी रह जाय चूल्हे पर से उतार शीतल कर. छान लेय और उसे किसी घृत पात्र अथवा मुयाम में भर तब उसमें धव का फूल १६ तोला, शहद ३ सेर, सोंठ छोटीपीपर और कालीमिर्च यह तीनों दो तोला, दालचीनी, छोटीलायची और तेजपात यह तीन चीज ४ तोला लेय, प्रियंगुका फूल, और नागकेशर दोदो तोला लेय इन सब दवाइयों को अधकचरा कर उसी काढ़ेमें डाल देय किसी लकड़ी से सबों को मिला के बरतन का मुख बन्द कर दे ताकि हवा न जाने पावे एक महीने तक खुले मैदान में रख देय जो कि दिनमें धूप और रातको ओस लगे एक महीने के बाद पुनः उसे छान बोतल में भरकर रख देय। इस आसव का मात्रा १ तोला से चार तोला तक है. रोगी की अवस्था और बलाबल देख के मात्रा बना लेय। इस आसव को दिन में दो या तीन बार पीने से उपद्रव सहित श्लेष्मा और वात जनित प्रमेह रोग साध्य होता है इसके अलावा ग्रहणी, बवासीर और सुजाक भी इसके सेवन से आराम होता है किन्तु विशेषकर यह आसव प्रमेहरोग पर है॥

प्रमेह रोग पर बसन्तकुसुमाकर रस।

द्वौभागौहेमभूतेश्च गगनंचापितत्समम्। लोहभस्म त्रयोभागाश्चत्वारोरसभस्मतः॥ वङ्गभस्मत्रिभागंस्यात्सर्वमेकत्रमर्दयेत्। प्रवालंमौक्तिकंचैव रससात्म्येनदापयेत्॥ भावनागव्यदुग्धेन रसैर्द्दृक्षाटरूपकैः। हरिद्रावारिणाचैव मोचकंदरसेनच॥ शतपत्ररसेनापि मालत्यास्वरसेनच। पश्चान्मृगमदश्चन्द्रस्तुलसीरसभावितः॥ कुसुमाकरइत्येषवसन्तपदपूर्वकः। गुंजाद्वयंददीतास्य मधुनासर्वमेहनुत्॥ सिताचन्दनसंयुक्तश्चाम्लपित्तादिरोगजित्।

त्रिवृद्दंतीपत्रकंचत्वगेलावंशरोचना । प्रत्येकंकर्षमात्रंच कुर्यादेतानिबुद्धिमान् ॥ द्विकर्षंहतलोहंस्याच्चतुःकर्षासिता भवेत् । शिलाजत्वष्टकर्षस्यादष्टौकर्षास्तुगुग्गुलोः ॥ एभिरेकत्रसंक्षुण्णैः कर्तव्यागुटिकाशुभा । चन्द्रप्रभेतिविख्यातासर्वरोगप्रणाशिनी । प्रमेहान्विंशतिंकृच्छ्रं मूत्राघातं तथाश्मरीम् ॥ चन्द्रप्रभायांकर्षस्तु चतुःशाणोविधीयते ॥

(चन्द्रप्रभा) कपूर, दुधियावच, (मुस्तं) नागरमोथा (भूनिम्ब) चिरायता (अमृत) गुर्च या गिलोय, देवदारु, हरदी (अतिविषा) अतीस, (दार्वी) दारुहरदी, पिपरामूल, चीता की जड़ की छाल, धनिया, त्रिफला, चाव, वायविरंग, गजपीपर, (व्योषं) सोंठ मीपर और मिर्च (माक्षिक धातु) सुवर्णमाक्षिक का शुद्ध भस्म, (द्वौक्षारौ) जवाखार और सज्जीखार (लवणत्रय) सेंधानोन, कालानोन और बिडनोन इन चीजों को तीन २ मासा लेय (त्रिवृत) निशोथ, (दन्ती) जमालगोटे के जड़ की छाल, (पत्रक) तेजपात, (त्वग) दालचीनी, (एला) छोटी लायची के दाने और वंशलोचन इन सब दवाईयों को दश २ मासा लेय । खूब शुद्ध कांतीसार अथवा फौलाद भस्म जो जल पर उतराता हो २० मासा लेय सबों को चूर्ण कर तथा अढ़ाई तोला मिश्री और शुद्ध शिलाजीत पांच तोला उसीमें मिलादेय और शिलाजीत के बराबर सोधा उत्तम गुग्गुल मिलाय पानी का पुट दे चना बराबर गोली बनाय छाये में सुखाय बोतल में भर कर रखदेय इसको चन्द्रप्रभा गुटिका कहते हैं । इसको दोनों समय सेवन करने से कफ वात जनित प्रमेह रोग नष्ट होता है ॥

चन्द्रप्रभा गुटिका का गुण दन्त मेहादि रोगोंका भी नाशक लिखाहै किन्तु बिलकुल वाहियात है जो यथार्थ गुण है वह हमने लिख दियाहै ।

दूसरी बात यह है कि चन्द्रप्रभावटी की तौल एक कर्ष भर लिखा है (चन्द्रप्रभायां कर्षस्तु) यदि कर्षभर याने दश मासा की गोली बना के रोगी को खिलाई जाय तो बिमार बिचारे की क्या दशा होगी, रोग दूर होना तो दूर रहा उसे खुदी इस दुनिये को तिलांजुलि देना पड़े, मात्रा मिथ्या नहीं है क्योंकि उस जमाने में लोग वैसाही बलवान होते थे जिस जमाने में यह पुस्तक रची गई है, शोक वर्त्तमान के वैद्यों पर होता है जो नई पुस्तक रचने अथवा टीका बनाने में तो धन्वन्तरि के भी गुरू बनजातेहैं किन्तु देश समयके अनुसार मनुष्यके बलाबलपर बिल कुल ध्यान नहीं रखते। हमने ठीक देखाहै जिस औषधकी मात्रा छ मासा है आजकल के लोगोंको एक मासा दवा पचना मुस्किल पड़जाता है। यही सबब है जो आजकल लोगों को बिमारी म आराम हो के जस २ दवा खाते हैं और भी बिमारी बढ़ती है।

दूसरे आजकल के टीकाकारों में एक बड़ाभारी दोष और भी पाया जाता है, वैद्यक क्या चीज है जानते नहीं व्याकर्ण की शक्ति से शब्दार्थ निकाल कर रखदेते हैं वह भी औषधियों के नाम तो बड़ाही गड़बड़ करडालते हैं उदाहरण में सिर्फ एक दवा को दिखलाते हैं। जैसे—पत्रज जिसको प्रसिद्ध नाम तेजपात है मसाला में भी पड़ता है उसके परयाय नाम में एक नाम तमाल पत्र है और भारत में यह प्रसिद्ध है कि तमाकू को लोग तमाल पत्र कहते हैं तो यह समझ साधारन लोगों में नहीं होता, भाषा की किताबों को देख के प्रायः आयुर्वेद बिज्ञान रहित जन औषध बनाते हैं, तमाल पत्र को पढ़ कर तेजपात की जगह कहीं तमाकू छोड़ दिया तो रोगी की क्या गति होगी इसीसे पण्डितों की सम्मति आर्ष ग्रन्थों में रहती है और भी अनेक आपत्तियां हैं जिन्हें समय पा के दिखलावेंगे ॥

प्रमेह रोग पर शिलाजीत प्रयोग ।

बालक चार प्रमेह जो प्रायः असाध्य होता है क्योंकि यह रोग

मनुष्य के मारने के लिये आता है ऐसे दुष्कर रोग को यदि आराम करने की सामर्थ्य है तो शिलाजीतमें है यदि उत्तम शिलाजीत मिले और पथ्य सहित सेवन किया जाय तो निस्सन्देह प्रमेह रोग आराम हो जाय क्योंकि उत्तम औषध के अलाभ से रोग मनुष्य को मारता है। शिलाजीत में वैद्यों की सम्मति।

नसोऽस्तिरोगोभुविसाध्यरूपो योह्यस्यजेयंनजयेत्प्रसह्य। तत्कालयोगैर्विविधैः प्रयुक्तस्वास्थ्यंतनोत्यद्विपुलं ददाति॥

ऐसा कोई असाध्य रोग पृथ्वी पर नहीं है जो शिलाजीत के खाने से न जाय, अनेक योगों के साथ शिलाजीत को सेवन करने से बहुत शीघ्र शरीर में आरोग्यता लाभ होता है।

शिलाजीत की उत्पत्ति।

शिलाजीत की उत्पत्ति शास्त्रकारों ने इस प्रकार लिखा है समुद्र से अमृत निकालने के समय जब देवता और दैत्यों ने मिलकर मंदराचल पर्वत को समुद्र में डालकर मथा था, ऐसा कहा जाता है कि उस समय गरमाहट पाकर उस पर्वत में पसीना निकला और समुद्र में गिरा, मथने के समय वह भी देवतों को मिला, तब देवतों ने उस शिलाजीत को ब्रह्मा और इन्द्र की राय लेकर मनुष्यों के उपकारार्थ उसे समस्त पर्वतों को दिया अर्थात् सब पर्वतों में उसका लेहन डालदिया तभी से यह लोग, याने शिलाजीत अमृत कल्प के समान ग्रीष्म रितु में सूर्य की धूप से पर्वत तप्त होने से उसमें से बहता है जिस पर्वत में जो धातु होता है उसीके वर्ण के समान उस पर्वत से शिलाजीत निकलता है।

सोना, चांदी, रांगा, सीसा, तांबा और लोहे से शिलाजीत की उत्पत्ति है अर्थात् जिन पर्वतों में उपरोक्त धातुओं में से किसी धातु का

निदाघेघर्मसंतप्ता धातुसारंधराधराः । निर्यासवत्प्रमुंचन्ति शिलाजतुप्रकीर्चित्तम् ॥

सूर्य्य के किरणों की गर्मी से जब पर्वत तप्त होते हैं तब उनमें से धातुओं का सार रूप (निर्यासवत) याने गोंद के समान पतला पदार्थ जिसे शिलाजीत कहते हैं निकलता है और बहुत दिनों तक गोंद के समान लसदार बना रहता है। कहने का तात्पर्य्य यह है कि जो शिलाजीत बाज़ार में बनियों के यहां सूखा मिलता है दर हकीकत बन्दरों का विष्टा है, अज्ञान लोग उसी को शिलाजीत समझते हैं ॥

शुद्ध असिल शिलाजीतकी परीक्षा ।

वन्हौक्षिप्तन्तुनिर्धूमं पक्त्वालिङ्गोपमंभवेत् । तृणाग्रेणांभसिक्षिप्तमधोगलतितन्तुवत् ॥ गोमूत्रगन्धंमलिनं शुद्धं ज्ञेयंशिलाजतु ॥

जो शिलाजीत अग्नि में डालने से निर्धूम याने धुआं न देय और पकनेसे याने अग्नि पर रखने से लिङ्गके समान खड़ा होजाय तिनका के अग्रभाग पर रखकर जल में डालने से तार तार सा होकर जल में नीचे बैठ जावै, और उसमें गोमूत्र की सी दुर्गन्ध आवै, मलिन काले रंग का पतला गोंद के समान हो वही शुद्ध शिलाजीत जानना ॥

शुद्ध शिलाजीत के गुण ।

रसोपरससूतेन्द्र रत्नलोहेषुयेगुणाः । वसंतितेशिलाधातौः जरामृत्युजिगीषया ॥ शिलाजकटुतिक्तोष्ण कटुपाकंरसायनम् । छर्दिरोगन्तथाहन्ति कम्पमेहास्मशर्कराः॥

-मूत्रकृच्छ्रंक्षयंश्वासं वातमर्शांसिपांडुता । अपस्मारमथोन्माद शोफकुष्टोदरकृमीन् ॥

रस, उपरस, पारद, रत्न और लोहे में जो गुण हैं वह सब गुण शिलाजीत में हैं यह बुढ़ापा और मृत्यु को जीतनेवाला है शिलाजीत कडुआ, तीता, गरम, पाक में कटु और रसायन याने बुढ़ापापन को नाश करनेवाला है। वमन, कम्पवायु, बीसोंप्रमेहरोग, पथरी, रोगमसाना, सुजाक, कफक्षई, श्वासरोग, वादीबवासीर, पांडुरोग, मृगी, उन्माद, सूजन, कोढ़ और कृमिरोग को नाश करता है॥

शिलाजीत का सामान्य लक्षण।

यत्सर्वंतिक्तकटुकं कषायानुरसंसरम् । कटुपाक्युष्णवीर्यंञ्च शोषणंछेदनंतथा ॥ तेषुयत्कृष्णमलघु स्निग्धंनिःशर्करञ्चयत् । गोमूत्रगन्धियच्चापि तत्प्रधानंप्रचक्षते ॥

यह प्रकार के शिलाजीत स्वाद में चरपरे, कडुवे, कषायल होते हैं गुणों में दस्तावर कटुपाकी, उष्णवीर्य, (शोषी) रसादि धातुओं का सुखानेवाला और छेदी * है लेकिन उन सबों में से जो शिलाजीत काले रंग का भारी चिकना कंकड़ रेत रहित और जिसमें गोमूत्र किसी दुर्गन्ध आती हो वह शिलाजीत उत्तम होता है।

शिलाजीत शुद्ध करने की प्रथम विधिः।

गरमी के दिनों में जब आकाश मेघ और वायु कर के रहित हो उस समय उत्तम स्थान में लोहे के चार पात्र जो कटोरे के भांति हों

* जो औषध मिले हुये कफादि दोषों को अपने शक्ति से वहां से हटाकर बाहर करदे वह छेदी कहते हैं।

स्थापन करै उनमें से पहले पात्र में शिलाजीत को टुकड़े २ कर के डाल दे और शिलाजीत से उसमें दूना जल डाल दे और ऊपर से थोड़ा गरम जल डाल के हाथ से खूब गल के मोटे कपड़े से छानले, बस छने जल को दूसरे पात्र में डालकर धूपमें रखदेवै और उसके ऊपर जस २ मलाई जमतीजाय तीसरे पात्र में रखता जाय, जब मलाई का जमना बन्द हो जाय तब पानी को फेंक बरतन साफ करलेय और जिस बर्तन में मलाई रक्खी गई है उसमें भी गरम जल डाल के धूप में रखदे, जब उसमें भी मलाई जमना शुरू हो चौथे पात्र में रखताजाय जब मलाई जमना बन्द हो जाय तो उसका भी पानी फेंक बर्तन साफ करलेय और चौथे पात्र में फिर गरम पानी डाल के धूप में रखदेय और जस २ मलाई जमती जाय पुनः प्रथम पात्र में रखता जाय और गरम पानी डाल के धूप में रखदेय इस प्रकार पांच छ बार करने से जब देखै की अब मलाई नहीं जमती पानी स्वच्छ बना है तब जानना चाहिये कि शिलाजीत शुद्ध हो गया उसे निकाल किसी उत्तम पात्र में रखदेय, यह उत्तम शुद्ध शिलाजीत है।

द्वितीय विधिः।

शिलाजतुंसमानीय ग्रीष्मेतप्तंशिलाच्युतं। गोदुग्धैस्त्रिफलाक्वाथै भृंगद्रावैश्चमर्दयेत् ॥ आतपेदिनमेकैकं तच्छुष्कंशुद्धतांव्रजेत्।

ग्रीष्म ऋतु अर्थात् गरमी के दिनों में जब पर्वत अत्यन्त गरम हो जाता है तब पर्व्वतों से शिलाजीत चूता है। उस शिलाजीत से मलिन दूरी करणार्थ गौ का दूध, त्रिफला का काढ़ा और भांगरे का स्वरस में एक २ दिन भावना देके सुखालेवै शिलाजीत शुद्ध होजायगा। किन्तु यह शुद्धता मध्यम दर्जे का है यह शिलाजीत गरम करता है।

नष्ट होता है क्योंकि इस औषध का फल बहुत शीघ्र दृष्टिगोचर होता है । पथ्य_औषध पच जाय तब उत्तम भोजन करे ।

मधुमेह की चिकित्सा ।

सुश्रुत संहिता चिकित्सित स्थान: ।

मधुमेहित्वमापन्नं भिषग्भिःपरिवर्जितम् । योगेनानेनमतिमान् प्रमेहिणमुपाचरेत् ॥ मासेशुक्रेशुचौचैवशैलाः सूर्यांशुतापिताः । जतुप्रकाशंस्वरसं शिलाभ्यःप्रस्रवन्तिहि॥ शिलाजत्विितिविख्यातं सर्वव्याधिविनाशनम् । त्रप्वादीनान्तुलोहानां षण्णामन्यतमान्वयम् । ज्ञेयंस्वगन्धतश्चापि षड्योनिप्रथितंक्षितौ ॥ लोहात्भवतितद्यस्माच्छिलाजतु जतुप्रभम् । तस्यलोहस्यतद्वीर्यं रसञ्चापिविभर्तितत् ॥ त्रपुसीसायसादीन प्रधानान्युत्तरोत्तरम् । यथातथाप्रयोगेऽपि श्रेष्ठेश्रेष्ठगुणाःस्मृताः ॥

मधुमेहादि चार प्रकार के वातज प्रमेह रोग में सुश्रुत जी ने शिलाजीत को प्रधान औषध कहा है । सुश्रुत जी कहते हैं कि जिस मधुमेही को असाध्य जानकर वैद्यों ने त्याग दिया हो उसकी चिकित्सा निम्नलिखित उपाय से करना उचित है । ज्येष्ठ अथवा आषाढ़ के महीने में जब सूर्य की गरमी से पर्वत अत्यन्त तप्त हो जाते हैं तब पत्थरों के सन्धियों से पिघली हुई लाही के समान एक प्रकार का रस निकलता है, उसी रस को वैद्य लोग शिलाजीत कहते हैं, और उसी नाम से विख्यात है तथा शहरोंमें बिकता भी है । यह बात अवश्यहै कि जो रोग किसी

औषध से आराम न हो वह रोग शिलाजीत से दूर होता है अर्थात् शिलाजीत अनेक-प्रकार के योगों से अनेक रोगों को नाश करता है ।

रांगा, सीसा, तांबा, रूपा सुवर्ण और लोहा इन छ धातुओं में से किसी एक धातु कि सुगन्धि शिलाजीत में अवश्य आया करती है इसी से शिलाजीत को खट्योनि भी कहते हैं इसका मुख्य कारण यह है कि उपरोक्त छः धातुओं में किसी एक धातु की खान या अंश जिस परवत में होगा उसी परवत से शिलाजीत कि उत्पत्ति होगी अन्य परवतों से नहीं इससे जो परवत में जिस धातु का अंश होगा उसी धातु कि गन्ध शीलाजीत में आवेगी, और उसी धातु का वीर्य और उसीका रस भी शिलाजीत धारण करता है । रांगा, सीसा, तांबा, लोहा इत्यादि सब धातु गुणों में उत्तरोत्तर श्रेष्ट हैं उसी तरह शिलाजीत भी गुणों और प्रयोगों में श्रेष्ट है ।

तद्भावितंसारगणै हृतदोषोदिनोदये । पिवेत्सारोदकेनैव श्लक्ष्णपिष्टंयथोत्रलम् ॥ जाङ्गलेनरसेनान्नं तस्मिन्जीर्णेतुभोजयेत् । उपयुत्यतुलामेवंगिरिजादमृतोपमात् ॥ वपुर्वर्णवलोपेतो मधुमेहविवर्जितः । जीवद्वर्षशतंपूर्णम् जरोऽमरसन्निभः ॥ शतंशततुलायान्तु सहस्त्रंशतौलिके । भल्लातकविधानेन परिहारविधिःस्मृतः ॥ मेहंकुष्टमपस्मार मुन्मादंश्लीपदंगरम् । शोषंशोफार्शसोंगुल्मं पाण्डुतांविषमज्वरम् ॥ अपोहत्यचिरात्कालाच्छिलाजतुनिषेवितम् । नसोऽस्तिरोगोयन्नापि निहन्यान्न-

शिलाजतु॥ शर्करांचिरसम्भूतां भिनत्तिचतथाश्मरीम्।
भावनालोड़नेचास्य कर्त्तव्येभेषजैर्हितैः॥

पूर्वोक्त प्रकार से शुद्ध किया हुआ शिलाजीत को अथवा शालिसारादि द्रव्यों की भावना देकर वमन विरेचनादि द्वारा दोषों के दूर होने पर सूर्योदय के पश्चात् उसी शालिसारादि के जल में पीस के बल के अनुसार खाय उसके पचजाने पर जांगल पशुओं के मांस रस के साथ पुराने चावल का भात या जव की रोटी भोजन करे इस रीति से अमृत के समान गुणकारी इस शिलाजीत को जो पांच सेर खालेगा उसका देह सुन्दरवर्ण और बल से युक्त हो जायगा, और मधुमेह भी शान्त रहेगा। अजर अमर होकर सौ बरस की पूर्ण आयु को प्राप्त करैगा और एक पसेरी शिलाजीत सेवन करने से सौवर्ष आयु बढ़ती चली जायगी अर्थात् सवामन खालेने से सहस्र वर्ष की अवस्था को प्राप्त होगा। भिलाये के विधान के समानही इसमें आहार विहार का नियम है। शिलाजीत से प्रमेह, कोढ़, मृगी, पागलपना, फीलपाव, शोष, शोफ, अर्श, गुल्म, पाण्डु रोग, विषमज्वर इत्यादि सब रोग बहुतही अल्पकाल में नष्ट होजाते हैं। ऐसा कोई रोग नहीं है जो शिलाजीत से दूर न हो। बहुत दिवस के उत्पन्न हुये शर्करा और पथरी रोग हटजाते हैं। इसमें उत्तम २ औषधों की भावना देकर उत्तमही औषधों में इसे घोटै॥

तात्पर्य यह है कि भूतपूर्व ऋषियों ने जिन औषधियों को अधिक गुणकारी पाया है उसीको अधिक पुष्टता के साथ खिलाने को जोर दिया है सिर्फ भेद इतनाही है ऋषियों ने उसी समय के अनुसार औषधियों के गुण मात्रा और खाने का विधान लिखा है, जिस समय कि उन्हों ने अपनी २ संहिता रची है उन को यह मालूम नहीं था कि भविष्य में इस शुद्ध आर्य्यावर्त में म्लेच्छों का राज्य होगा और खान, पान,

व्यवहारादिक वर्तन से मनुष्यों की प्रकृति, बल, रोग, और समय का भी बहुत कुछ हेर फेर हो जायगा नहीं तो भविष्यत के लिये भी वही ऋषिगण औषधियों के मात्रा की न्यूनाधिक करने की विधि लिखजाते।

लिखा है कि इस शिलाजीत को एक तुला, याने पांच सेर जो खालेगा बिमारी आराम होने के बाद सौ वर्ष जीवेगा, इसी तरह प्रति पांच सेर से सौ २ वर्ष की आयु समझना चाहिये इस प्रकार से सवामन शिलाजीतखाने से मनुष्य एक हजार वर्ष जी सक्ता है। अगर यह बात सत्य हो तो कौन मनुष्य ऐसा है जो बहुत दिनों तक इस संसार में जीने की इच्छा न रखता हो। पाठकगण यह न समझें कि हम शिलाजीत के गुण का जो ऋषियों ने लिखा है असत्य समझते हैं नहीं बिलकुल सत्य है किन्तु अब मनुष्य में वह बल नहीं रहा जो दो तोला रोज खासके। पूर्व जमाने में जिन औषधियों की मात्रा एक तोला थी उसकी मात्रा आज के जमाने में एक मासा या अधिक से अधिक दो मासा समझना चाहिये, तो आज के समय में यदि ५ सेर शिलाजीत खाना चाहे तो उसके लिये १३ वर्ष ४ महीना की जरूरत है। आयु वृद्ध्यर्थ इतने दिनों तक किसी औषध का सेवन करना कठिन बात नहीं है, यहां तो लोग चाहते हैं कि एकही दिन के औषध सेवन से जन्म के रोग छुट जाय यही से आज भारत में १०० में ९५ वे मनुष्य रोग ग्रस्त हो रहे हैं। प्रमेहरोग पर शिलाजीत का सेवन करना हमारी पूरी सम्मति है क्योंकि इसे हम स्वयं सेवन करके परीक्षा लेचुके हैं।

इसी तरह एक और प्रधान औषध परीक्षित है जिसे छठवें खण्ड में प्रकाश करते हैं॥